नमो नमो निम्मलदंसणस्स

बाल ब्रह्मचारी श्री नेमिनाथाय नम:

पूज्य आनन्द-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर-गुरूभ्यो नम:

आगम परिभाषा कोष: [१]

आगम शब्दादि परिचय [अ..आ..]

सर्जन कर्ता

आगम दीवाकर डो.मुनि दीपरत्नसागरजी

[M.Com. M.Ed. Ph.D. श्रुतमहर्षि]

नमो नमो निम्मलदंसणस्स
बाल ब्रह्मचारी श्री नेमिनाथाय नम:
पूज्य आनन्द-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर-गुरूभ्यो नम:

आगम-परिभाषा-कोष: [१]

[आगम शब्दादि परिचय- अ, आ]

(6100 से ज्यादा शब्द और करिब 10600 व्याख्याए)

પ્રકાશન તારીખ --/--/202-   --વાર   તિથી- ----, ---,-

અનુવાદક અને સંપાદક

આગમ દિવાકર મુનિ દીપરત્નસાગરજી
[M.Com. M.Ed. Ph.D. श्रुतमहर्षि]

∞∞: સંપર્ક :∞∞

જૈનમુનિ ડૉ0 દીપરત્નસાગર [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

Email: - jainmunideepratnasagar@gmail.com   **Mobile: - 09825967397**

Web address:- (1) www.jainelibrary.org,   (2) Deepratnasagar.in

ફક્ત માહિતી માટે સંપર્ક

આગમ દિવાકર ડો. મુનિશ્રી દીપરત્નસાગરજી મ.સા.
‘પાર્શ્વવિહાર’ જૈન દેરાસરજી, ફોરેસ્ટ રેસ્ટ હાઉસ સામે, હાઈવે ટચ
Post: ઠેબા, Pin: 361120, Dis. જામનગર (ગુજરાત)

-: ટાઈપ સેટિંગ :- આસુતોષ પ્રિન્ટર્સ, 09925146223

-: પ્રિન્ટર્સ :-નવપ્રભાત પ્રિન્ટીંગ પ્રેસ, 09825598855

४५ आगम वर्गीकरण

क्रम	आगम का नाम	सूत्र	क्रम	आगम का नाम	सूत्र
०१	आचार	अंगसूत्र-१	२५	आतुरप्रत्याख्यान	पयन्नासूत्र-२
०२	सूत्रकृत्	अंगसूत्र-२	२६	महाप्रत्याख्यान	पयन्नासूत्र-३
०३	स्थान	अंगसूत्र-३	२७	भक्तपरिज्ञा	पयन्नासूत्र-४
०४	समवाय	अंगसूत्र-४	२८	तंदुलवैचारिक	पयन्नासूत्र-५
०५	भगवती	अंगसूत्र-५	२९	संस्तारक	पयन्नासूत्र-६
०६	ज्ञाताधर्मकथा	अंगसूत्र-६	३०.१	गच्छाचार	पयन्नासूत्र-७
०७	उपासकदशा	अंगसूत्र-७	३०.२	चन्द्रवेध्यक	पयन्नासूत्र-७
०८	अंतकृत् दशा	अंगसूत्र-८	३१	गणिविद्या	पयन्नासूत्र-८
०९	अनुत्तरोपपातिकदशा	अंगसूत्र-९	३२	देवेन्द्रस्तव	पयन्नासूत्र-९
१०	प्रश्नव्याकरणदशा	अंगसूत्र-१०	३३	वीरस्तव	पयन्नासूत्र-१०
११	विपाकश्रुत	अंगसूत्र-११	३४	निशीथ	छेदसूत्र-१
१२	औपपातिक	उपांगसूत्र-१	३५	बृहत्कल्प	छेदसूत्र-२
१३	राजप्रश्निय	उपांगसूत्र-२	३६	व्यवहार	छेदसूत्र-३
१४	जीवाजीवाभिगम	उपांगसूत्र-३	३७	दशाश्रुतस्कन्ध	छेदसूत्र-४
१५	प्रज्ञापना	उपांगसूत्र-४	३८	जीतकल्प	छेदसूत्र-५
१६	सूर्यप्रज्ञप्ति	उपांगसूत्र-५	३९	महानिशीथ	छेदसूत्र-६
१७	चन्द्रप्रज्ञप्ति	उपांगसूत्र-६	४०	आवश्यक	मूलसूत्र-१
१८	जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति	उपांगसूत्र-७	४१.१	ओघनिर्युक्ति	मूलसूत्र-२
१९	निरयावलिका	उपांगसूत्र-८	४१.२	पिंडनिर्युक्ति	मूलसूत्र-२
२०	कल्पवतंसिका	उपांगसूत्र-९	४२	दशवैकालिक	मूलसूत्र-३
२१	पुष्पिका	उपांगसूत्र-१०	४३	उत्तराध्ययन	मूलसूत्र-४
२२	पुष्पचूलिका	उपांगसूत्र-११	४४	नन्दी	चूलिकासूत्र-१
२३	वृष्णिदशा	उपांगसूत्र-१२	४५	अनुयोगद्वार	चूलिकासूत्र-२
२४	चतु:शरण	पयन्नासूत्र-१	---	---------------	-----

અમારા પ્રકાશનો ૩૦/૦૬/૨૦૨૦ સુધીમાં

ક્રમ	સાહિત્યનો પ્રકાર	બુક્સ	કુલપાના	બુક્સ	કુલપાના
1	આગમ સાહિત્ય મૂળ [૧ થી ૩] કુલ પુસ્તકો	--	-------	149	07,864
	1. આગમ મૂળ પ્રિન્ટેડ (સાઈઝ A- 5)	49	03510		
	2. આગમ મૂળ નેટ (સાઈઝ A- 4)	47	02832		
	3. આગમ મંજુષા નેટ	53	01522		
2.	આગમ અનુવાદ સાહિત્ય [૪ થી ૯] કુલ પુસ્તકો	--	--------	175	23,080
	1. આગમ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ- મૂળ, પ્રિન્ટેડ	49	03360		
	2. આગમ હિન્દી અનુવાદ-મૂળ, નેટ	48	02898		
	3. આગમદીપ ગુજરાતી અનુવાદ પ્રિન્ટેડ	07	02962		
	4. આગમ ઈંગ્લીશ અનુવાદ નેટ	11	00410		
	5. આગમ સટીક ગુજરાતી અનુવાદ પ્રિન્ટેડ	48	10340		
	6. આગમ હિન્દી અનુવાદ-મૂળ, પ્રિન્ટેડ	12	03110		
3.	આગમ વિવેચન સાહિત્ય [૧૦ થી ૧૬] કુલ પુસ્તકો	--	---------	171	60,888
	1. આગમ સૂત્ર સટીકં પ્રિન્ટેડ	46	13806		
	2. આગમ-મૂલં એવં વૃત્તિ- 1 નેટ	51	17992		
	3. આગમ-મૂલં એવં વૃત્તિ- 2 નેટ	09	02560		
	4. આગમ ચૂર્ણિ સાહિત્ય નેટ	09	02668		
	5. સવૃત્તિક આગમ સૂત્રાણિ-1, પ્રિન્ટેડ	40	18460		
	6. સવૃત્તિક આગમ સૂત્રાણિ-2, પ્રિન્ટેડ	08	02648		
	7. સચૂર્ણિક આગમ સૂત્તાણિ, પ્રિન્ટેડ	08	02754		
4.	આગમ ડિક્ષનેરી સાહિત્ય [૧૭ થી ૨૧] કુલ પુસ્તકો	--	---------	016	05,506
	1. આગમ સદ્દકોસો, પ્રિન્ટેડ	04	02184		
	2. આગમ કહા વ નામ કોસો, પ્રિન્ટેડ	01	00208		
	3. આગમ સાગર કોષ, નેટ	05	01126		
	4. આગમ બૃહત નામ કોષ, પ્રિન્ટેડ	02	00500		
	5. આગમ શબ્દાદિ સંગ્રહ, પ્રિન્ટેડ	04	01488		
5.	આગમ વિષયાનુક્રમ સાહિત્ય [૨૨ થી ૨૪] કુલ પુસ્તકો		-------	009	01,578
	1. આગમ વિષયાનુક્રમ પ્રિન્ટેડ + નેટ	02	00726		
	2. આગમ સટીક વિષયાનુક્રમ નેટ	04	00428		
	3. આગમ સૂત્ર + ગાથાનુક્રમ નેટ	03	00424		
	અમારા સાહિત્ય પ્રકાશનો ચાલુ.....				

અમારા પ્રકાશનો ૩૦/૦૬/૨૦૨૦ સુધીમાં

ક્રમ	સાહિત્યનો પ્રકાર	બુક્સ	કુલપા	બુક્સ	કુલપાના
6	આગમ અન્ય સાહિત્ય [૨૪ થી ૨૭] કુલ પુસ્તકો	--	---	15	03544
	1. આગમ સંબંધી લેખ, પ્રિન્ટેડ	3	0068		
	2. આગમ કથાનુયોગ, પ્રિન્ટેડ	6	2172		
	3. આગમ સંબંધી અન્ય સાહિત્ય, પ્રિન્ટેડ	4	1140		
	4. આગમ પૂજન સાહિત્ય, પ્રિન્ટેડ	1	0068		
	5. આગમ સંક્ષિપ્ત પરિચય,પ્રિન્ટેડ	1	0096		
	કુલ આગમ સાહિત્ય 1,02,460 પેજ	--	---	535	102460
	આગમ સિવાયનું અન્ય સાહિત્ય 09,080 પેજ	--	---	80	009140
1	તત્ત્વાભ્યાસ સાહિત્ય,પ્રિન્ટેડ	13	2090		
2	સૂત્રાભ્યાસ સાહિત્ય,પ્રિન્ટેડ	6	1480		
3	વ્યાકરણ સાહિત્ય,પ્રિન્ટેડ	5	1048		
4	વ્યાખ્યાન સાહિત્ય,પ્રિન્ટેડ	5	1300		
5	જિનભક્તિ સાહિત્ય, પ્રિન્ટેડ	9	1196		
6	વિધિ સાહિત્ય, પ્રિન્ટેડ	3	0256		
7	આરાધના સાહિત્ય, પ્રિન્ટેડ	4	0534		
8	પરિચય સાહિત્ય,પ્રિન્ટેડ	3	0136		
9	પૂજન સાહિત્ય, પ્રિન્ટેડ	1	0068		
10	તીર્થંકર સંક્ષિપ્ત દર્શન પ્રિન્ટેડ	25	0680		
11	પ્રકીર્ણ સાહિત્ય, પ્રિન્ટેડ	4	0246		
12	દીપરત્નસાગરના લઘુશોધનિબંધ,પ્રિન્ટેડ	2	0106		

આગમ સાહિત્ય	બુક્સ 535	કુલ પેજ	1,02,460
આગમેતર સાહિત્ય	બુક્સ 80	કુલ પેજ	0,09,140
કુલ સાહિત્ય નિર્માણ	બુક્સ 615	કુલ પેજ	1,11,600
'તત્ત્વાર્થસૂત્ર' એક વિશિષ્ટ સંકલનની DVD 84બુક્સ			0,27,930

કુલ સાહિત્ય નિર્માણ 615 બુક્સ + 1 DVD, કુલપાના 1,39,530

संक्षेप- आगम रत्न कोष:

संक्षेप	आगमनाम	संक्षेप	आगमनाम	संक्षेप	आगमनाम
अंत०	अंतकृत् दशा	जंबू०	जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति	पुप्फ०	पुष्पचूलिका
अनुओ०	अनुओगद्वार	जीत०	जीतकल्प	पुप्फि०	पुष्पिका
अनुत्त०	अनुत्तरोपपातिक	जीवा०	जीवजीवाभिगम	बुह०	बृहत्कल्प
आचा०	आचारांग	ज्यो०	ज्योतिषकरण्डक	भग०	भगवती
आतु०	आतुर प्रत्याख्यान	ठा०	स्थानांग	भत्त०	भक्तपरिज्ञा
आव.चू०	आवश्यक चूर्णि	तं०	तंदुलवैचारिक	मर०	मरणसमाधि
आव.म०	आवश्यक मलयगिरि	दश०	दशवैकालिक	महानि०	महानिशीथ
आव.वृ०	आवश्यक वृत्ति	दशा०	दशाश्रुतस्कंध	महाप०	महाप्रत्याख्यान
उत्त०	उत्तराध्यायनानि	देवि०	देवेन्द्रस्तव	रा०	राजप्रश्निय
उपा०	उपासकदशा	नं०	नंदीसूत्र	वव०	व्यवहार
उव०	उववाइय	नाया०	ज्ञाताधर्मकथा	विपा०	विपाकसूत्र
ओह०	ओघनिर्युक्ति	निर०	निरयावलिका	वि०	विशेषावश्यक
कप्प०	कल्पवतंसिका	निसी०	निशीथ	वीर०	वीरस्तव
कल्प०	कल्पसूत्र	पंच०चू०	पंचकल्पचूर्णि	वृ०	वृष्णिदशा
गच्छा०	गच्छाचार	पंच०भा०	पंचकल्पभाष्य	संथा०	संस्तारक
गणि०	गणिविद्या	पण्हा०	प्रश्नव्याकरण	सम०	समवायांग
चउ०	चउशरण	पन्न०	प्रज्ञापना	सूर०	सूर्यप्रज्ञप्ति
चंद०	चन्द्रप्रज्ञप्ति	पा०	पाक्षिकसूत्र	सूय०	सूत्रकृतांग
चंदा०	चन्द्रवेध्यक	पिंड०	पिंडनिर्युक्ति		

संक्षेप	विस्तार	संक्षेप	विस्तार	संक्षेप	विस्तार	संक्षेप	विस्तार
अ०	अध्ययन	ठा०	स्थान	प्रति	प्रतिपत्ति	श०	शतक
उ०	उद्देशक	द्वा०	द्वार	भा०	भाष्य	श्रु	श्रुतस्कन्ध
गा०	गाथा	नि	निर्युक्ति	व०	वर्ग	सम०	समवाय
चू०	चूर्णि	प०	पद	वक्ष०	वक्षस्कार	सू०	सूत्र
चूलि०	चूलिका	पाहु०	प्राभृत	वृ०	वृत्ति	--	------

मुझे कुछ कहेना है

***** मै ईस 'आगम परिभाषा कोष:' की कुछ मुख्य बाते बताना चाहता हुं ---**

[१] ४५ आगम मूल, उन की निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि और वृत्तिमे जो आगमिक शब्दो कि व्याख्याए कि गइ है, उसी को यहा 'आगम परिभाषा कोष' मे हमने स्थान दिया है.

[२] ईस कोषमे ४५ आगम, उस के साथ ४ वैकल्पिक आगम (पंचकल्प, पिंडनिर्युक्ति, चन्द्रवेध्यक और वीरस्तव), पाक्षिक सूत्र (जो १४वि सदीमे एक आगम के रुपमे स्विकृत हुआ था), ज्योतिष करण्डक (जो पयन्ना रूप से गिना जाता है), कल्पसूत्र (जो दशाश्रुतस्कन्ध का अध्ययन होते हुए भी विशिष्ट महत्त्व रखता है) और विशेषावश्यक भाष्य (जो की आवश्यक सूत्र के पहेले अध्ययन पर रचित है)का समावेश ईस कोषमे किया है.

***** ईस विराट कार्य की भूमिका—**

कोष रचना (डीक्षनेरी) के विषयमे हमारा अनुभव तो था ही. हमने पूर्वमे १.आगम सद्दकोसो, २.आगम कथाकोसो, ३. आगम सागर कोष, ४.आगम शब्दादि संग्रह, ५. आगम बृहत् नाम कोष. ये पांच डीक्षनेरी की रचना कि है, जिसमे 'आगम सागर कोष' के अलावा सभी डीक्षनेरी प्रिन्टेड स्वरुपमे भी मौजुद है.

मेरे मनमे ये 'आगम परिभाषा कोष' बनाने का बीज अंकुरित हुआ उस के दो प्रमुख कारण है-

(१) आगमो का मनोयोगपूर्वक वांचन करते हुए, एक बात दृष्टि संमुख आयी कि- हम किसी भी शब्द का कुछ भी विपरीत या अन्यथा अर्थ निकालते है अथवा पूर्वाचार्य कृत सही अर्थ नहि करते है तो प्रायश्चित्त आता है.

(२) आगम सम्बन्धी अलग अलग कोष का अवलोकन करते करते ये देखा की बहोत से शब्दोमे मैने देखा की कोइ कोइ शब्द अभिधान राजेन्द्रमे छुटे है, तो बहोत से शब्द अल्प परिचित शब्द कोषमे भी छुटे है, अर्धमागधी कोषमे एवं जैन लक्षणावलिमे भी अनेक शब्द नहि दिख रहे है. इस के अलावा दुसरे परिवर्तन भी हमारी नज़रमे आये है, जैसे की कोइ कोइ स्थानमें अकारादि क्रममे शब्द आगे-पीछे दिखे थे, किसी जगह व्याख्या के संदर्भ गलत थे वगैरेह; उन स्थानोमे मेरी शारीरिक स्थिति के हिसाब से जितने हो शके उतने परिवर्तनो को यहां स्थान देने कि मनीषा से हमने कार्य का आरम्भ भी किया. आगे-पीछे हुए शब्दो को अ-कारादि क्रममे कर दिये, प्रत्येक अर्थ, व्याख्या या परिभाषा को अलग पंक्तिमे रख दिये, आगम संदर्भमे आगमो के नाम भी लिख दिये है, बहोत शब्दो को शामिल भी किये; फ़िर भी मै यह कहुंगा की जो अभ्यासक संपूर्ण सूची की इच्छा रखते है, उन को तो हमारे jainelibrary.org मे तैयार होनेवाले 'डेटाबेझ' कि हि मदद लेनी पडेगी.

मेरे हिसाब से करिब ४८,००० जितने शब्दो और ९५,००० से ज्यादा आगमिक व्याख्याए ईस कोषमे शामिल है. जिस का स्वरुप ईस डीक्षनेरीमे ईस तरह प्रस्तुत है. पहेले बोल्ड टाइपमे दिया गया शब्द आगम का प्राकृत भाषा का शब्द है और जहां संस्कृत व्याख्या का हि शब्द मिला, वहां उन का प्राकृत शब्दमे रुपान्तर कर के भी दिया है. उस के बाद नोर्मल टाईपमे उन शब्दो की व्याकरणीय ओळख दी है, उस के बाद इटालिक टाईपमे उसी शब्दो के संस्कृत रुपान्तर दिये है; फ़िर शब्दो कि नीचे से उन कि आगमिक व्याख्याए आरंभ होती है, साथमे उन आगमो के संदर्भ भी बताये है. प्रत्येक व्याख्या 'आगम संदर्भ के साथ अलग अलग लाइनमे कंपोझ की हुइ है.

आप के करकमलोमे ये -- भागोमे तैयार किया हुआ आगम परिभाषा कोष: हम अर्पण कर रहे है .

डो. मुनि दीपरत्नसागर

[M.Com.,M.Ed.,Ph.D.,श्रुतमहर्षि]

अ-कारादि शब्द-परिभाषाः

अ- अव्य० *[अ]*

प्रतिषेधे, अमानोनाः प्रतिषेधे। आव०म०। सूय०।

अत्रोदाहरणम्–निदरिसणं अघडो, अकारस्य तद्भावप्रतिषेधे, निदर्शनं यथा– अघटोऽयमिति न घटो घटव्यतिरिक्तः पटादिकः पदार्थः इत्यर्थः। बुह० १ उ०।

अपच्छिममारणंतियसंलेहणाझोसणाहिं अत्र अपश्चिमाः पश्चात् कालभाविन्यः। अकारस्त्वमङ्गलपरिहारार्थ इति। सम०।

अआवालग- पुं० *[अजापालक]*

छागरक्षके, अजारक्षणप्रवृते भ्रष्टव्रते, वाचकभेदे ।बुह०३ उ०

अइ– त्रि० *[अयि]*,

आमन्त्रणे। उत्त० ३५४।

अइअच्च– [कृ] *[अतिगत्य]*

अत्येत्यतिक्रम्य। आचा० ।

अविगणय्य। आव०।

अइइ- स्त्री० *[अदिति]*

पुनर्वसुनक्षत्रस्याऽधिपतिर्देवता। ज्यो० ६ पाहु०।

पुणव्वसू अइइ देवयाए पन्नत्ते। सूर० १० पाहु०। चंद० १० पाहु० जंबू०।

दो अइइ। पुनर्वस्वोर्द्वित्वाददितिद्वित्वम्। ठा० २ ठा०।

अइआर पुं० *[अतिचार]*

** 'अइयार' शब्दे अस्य व्याख्या पश्य

अइउक्कस- त्रि० *[अत्युत्कर्ष]*

उत्कर्षमतिक्रान्तः। उत्कर्षरहिते, तवस्सी अइउक्कसो। तपस्वी साधुः अत्युत्कर्षः, 'अहं तपस्वी' इत्युत्कर्षरहितः। दश०५ अ०

अइं– [स०]

अमुना। बुह०।

अइंत- त्रि० *[अतियत्]*

प्रविशति, निसि० १६ उ०।

अइंताण– त्रि० *[अतियतां]*

आगच्छतां। वव०

अइंति– त्रि० *[अतियति]*

प्रविशन्ति। ओह० ।

आगच्छन्ति। पण्हा १२०।

अइंदिअ- त्रि० *[अतीन्द्रिय]*

अतिक्रान्तमिन्द्रियं तदविषयत्वात्। सम०।

अतीन्द्रिया अर्था आगमेन उपपत्त्या च ज्ञायन्ते, न केवलया युक्त्या। तदुक्तम्-आगमश्चोपपत्तिश्च, संपूर्णं दृष्टिकारणम्। अतीन्द्रियाणामर्थानां, सद्भावप्रतिपत्तये विशे०। अनु०।

अइकंडुइय- न० *[अतिकण्डूयित]*

अतिशयिते नखैर्विलेखने, सूय० १ श्रु० ३ अ० ३ उ०।

अइकाय-१ पुं० *[अतिकाय]*

अतिक्रान्तः कायात्। महोरगविशेषे, पन्न०१ पद०।

उग्गविसे चंडघोरविसे महाविसे अइकाये महाकाए, कायान्-शरीराणि शेषाहीनामतिक्रान्तोऽतिकायः अत एव महाकायः। नाया० ६ अ०।

अथवाऽतिकायानां मध्ये महाकायोऽतिकाय-महाकायः। भग० १५ श० १ उ०।

अइकाय-२ पुं० *[अतिकाय]*

दक्षिणनिकाये सप्तमो व्यन्तरेन्द्रः। भग०।

महोरगेन्द्र। ठा० २ ठा०। जीवा० १७४।

अइकुंडियं– पुं० *[अतिकुंडित]*

अतिबाधितम्। आव०।

अइकोहग्गहघत्थ– पुं० *[अतिक्रोधग्रहग्रस्तम्]*

अतीवोत्कटरोषग्रहाभिभूतम्। आव०।

अइक्कंत- त्रि० *[अतिक्रान्त]*

अतीते आचा०१ श्रु०४ अ०१ उ०।

तीर्णे, विशे०। आव०म०।

पर्यन्तवर्तिनि, जीवा० ३ प्रति०। उव०। पन्न०

अतिक्रान्तकरणात् । आव० । भग० ।

अइक्कंतजोव्वण- त्रि० *[अतिक्रान्तयौवन]*

अतीततारुण्ये, अपत्तजोव्वणा अइक्कंतजोव्वणा। ठा० ५ ठा०

अइक्कंतपच्चक्खाण- न० *[अतिक्रान्तप्रत्याख्यान]*

अतिक्रान्ते पर्वणि यत् क्रियते तदतिक्रान्तं तच्च तत् प्रत्याख्यानम्। प्रत्याख्यानभेदे। आव०।

एवमेवाऽतीते पर्युषणादौ करणादतिक्रान्तम्। आह च-
पज्जोसवणाए तवं, जो खलु न करेइ कारणज्जाए।
गुरुवेयावच्चेणं, तवस्सि-गेलण्णयाए व ।।१ ।।
सो दाइं तवोकम्मं, पडिवज्जइ तं अइच्छिए काले। एवं
पच्चक्खाणं, अइक्कंतं होइ नायव्वंति ।। ठा० १० ठा०।

अतिक्कंतं णाम पज्जोसवणाए तवं तेहिं कारणेहिं ण कीरति गुरुतवस्सिगिलाणकारणेहिं सो अतिक्कंतं करेति तहेव विभासा। आ०चू०। आव०।

अइक्कंता– त्रि० *[अतिक्रान्ता]*

जाता। उत्त० २१५।

अतीताः। आचा० १७८।

अइक्कम- पुं० *[अतिक्रम]*

अतिचारे, पाणाऽइवायस्स वेरमणे एस वुत्ते अइक्कमे। सूय०।

अतिलङ्घन, आचा०१ श्रु०७ अ०।
विनाशे, आचा०१ श्रु०२ अ०।
साधुक्रियोल्लङ्घने, आव०४ अ०।
पीडात्मको महाव्रतातिक्रमो वा मनोऽवष्टब्धतया परतिरस्कारं वा। सूय०

अइक्कमण- न० *[अतिक्रमण]*
लङ्घने, विराधने, । आव०।

अइक्कमणिज्ज- त्रि० *[अतिक्रमणीय]*
अतिलङ्घनीय, सूय० २ श्रु० ७ अ०।

अइक्कमित्तु- अव्य० *[अतिक्रम्य]*
उल्लङ्घनेत्यर्थ, तं अइक्कमित्तु न पविसे। दश० ५ अ०।

अइगच्छमाण- त्रि० *[अतिगच्छत्]*
प्रविशति । निसि० ९ उ०। नाया०। आव० ३४९।

अइगत- त्रि० *[अतिगत]*
प्रविष्टे, जे भिक्खू गाहावइकुलं अतिगते। निसि० ३ उ०।
प्राप्ते च। तं०। आव०।

अइगम- पुं० *[अतिगम]*
प्रवेशे, आव०म०।

अइगमण- पुं० *[अतिगमन]*
प्रवेशमार्गे, नाया० १ अ०।
उत्तरायणम्। भग०

अइगमणकहा स्त्री० *[अतिगमनकथा]*
राज्ञ आगमनसम्बन्धी विचारः, राजकथाया भेदः। आव०।

अइचार– पुं० *[अतिचार]*
स्खलना। ओह० ।
मिथ्यात्वमोहनीयकर्मोदयादात्मनोऽशुभः परिणामविशेषः । आव०।

अइचिंत- त्रि० *[अतिचिन्त]*
अतीव चिन्ता यस्मिन् तदतिचिन्तम् ।अतिचिन्तासहिते नाया०१

अइच्च- अव्य० *[अतीत्य]*
त्यक्त्वेत्यर्थे, सव्वाइं संगाइं अइच्च धीरे। सूय०१ श्रु०७ अ०।

अइच्छ– पुं० *[अतीच्छ]*
अदाने सत्यतिगच्छेति वचनम्। आव०

अइच्छंत- त्रि० *[गच्छत्]*
विचरति, अतिक्रामति, उत्त०१ ८अ०।

अइच्छपच्चक्खाण- न० *[अतिगच्छ]*
अदित्सा प्रत्याख्यान- प्रत्याख्यानभेदे, भिक्खाईणमदाणा अइच्छं। भिक्षणं भिक्षा प्राभृतिका आदि शब्दाद्वस्त्रादि परिग्रहः तेषामदाने अतिगच्छेति अदित्सेति वा वचनम् अतिगच्छ-प्रत्याख्यानमदित्साप्रत्याख्यानं वा। आव०म०।
अइच्छा पच्चक्खाणं बंभणसमणाणं। अइच्छंति। अदित्सा प्रत्याख्यानं-हे ब्राह्मण! श्रमण! अदित्सेति नाम दातुम् अनिच्छा न तु नाऽस्ति यद् भवता याचितं, ततश्चाऽदित्सैव वस्तुनः प्रतिषेधात्मिकेति कृत्वा प्रत्याख्यातमिति । आव०६ अ०।

अइजाय- पुं० *[अतिजाया]*
पितुः संपदमतिलङ्घ्य जातः संवृतो वाऽतिक्रम्य वा तां यातः प्राप्तो विशिष्टतरसंपदं समृद्धतर इत्यर्थः। इति अतिजातो-अतियातो वा ऋषभवत्। सुतभेदे, ठा० ४, ठा०।

अइट्ठिय- त्रि० *[अतिष्ठित]*
अतिक्रान्ते, उल्लङ्घितवति, उत्त० ७ अ०।

अइणिद्धमहुरत्त- न० *[अतिस्निग्धमधुरत्व]*
घृतगुडादिवत् सुखकारित्वरूपे एकोनविंशे वचनाऽतिशये, समo

अइत- त्रि० *[अतीत]*
अतिक्रान्ते, सूय० १ श्रु०१० अ०। आचा०। आव०म०। दश० विवक्षितसमयमवधीकृत्य भूतवति समयराशौ, ज्यो० १ पाहु० प्राक्कृते, अतिक्रान्तसमयभाविनि, विशे०। आतु०
दूरीभूते । उत्त०१ ५अ०।

अइतद्धा- स्त्री० *[अतीताऽद्धा]*
अतीतकाले आचा०१ श्रु०१ अ०१ उ०।
अतीतेषु अनन्तेषु पुद्गलपरावर्त्तेषु। अनु०।

अइतपच्चक्खाण- न० *[अतीतप्रत्याख्यान]*
पूर्वकालकरणीये प्रत्याख्यानभेदे, । आव०।

अइताण- न० *[अतियान]*
नगरादौ राजादेः प्रवेशे, ठा० ४ ठा०।

अइताणकहा- स्त्री० *[अतियानकथा]*
राजादेः नगरादौ प्रवेशकथायाम्, यथा-
सियसिंधुरखंधगओ, सियचमरो सेयपत्तछन्ननहो।
जणनयणकिरणसेओ, एसो पविसइ पुरे राया।।१ ।। इति। ठा० ४ ठा०।
राजकथाभेदे, (व्याख्या-रायकहा शब्दे द्रष्टव्यम्)

अइताणगिह- न० *[अतियानगृह]*
नगरादिप्रवेशे यानि गृहाणि तेषु, ठा०२ ठा०।

अइताणिड्ढि- स्त्री० *[अतियानर्द्धि]*
राजादेः नगरप्रवेशेसम्भवन्त्यां तोरणहट्ट शोभाजन सम्मर्दादि लक्षणायामृद्धौ, ठा० ३ ठा०।

अइताल- न० *[अतिताल]*
उत्ताले गेयदोषे, अनु०।

अइतिक्खरोस- त्रि० *[अतितीक्ष्णरोष]*
पुनः पुना रोषणशीले, दीर्घरोषिणि, बुह०२ उ० ।

अइतुट्टण- न० *[अतित्रुट्टण]*
अतिशयेनापनयने, सूय०१ श्रु०१ अ० ।

अइतेआ- स्त्री० *[अतितेजा]*
चतुर्दश्यां रात्रौ, जंबू०७ वक्ष० । कल्प० ।

अइदुक्ख- न० *[अतिदुःख]*
अतिदुःसहे, आचा०१ श्रु०९ अ० ।

अइदुक्खधम्म- त्रि० *[अतिदुःखधर्म]*
अतीव दुःखमसातवेदनीयं धर्मः स्वभावो यस्य तत्तथा ।
अत्यन्ता सातस्वभावे, सूय०१ श्रु०५ अ० ।
अतिदुःखरूपो धर्मः, स्वभावो यस्मिन्निति । इदमुक्तं भवति-
अक्षिनिमेषमात्रमपि कालं न दुःखस्य विश्राम इति ।
सूय० १ श्रु०५ अ० ।

अइदुद्दिण- न० *[अतिदुर्दिन]*
अतिशयेन मेघतिमिरे, पिंड० ।

अइदुल्लह- त्रि० *[अतिदुर्लभ]*
अतिशयेन दुष्प्राप्ये, गच्छा०२ अधि० ।

अइदुस्सह- त्रि० *[अतिदुस्सह]*
अत्यन्तदुरध्यासे, उत्त०१ ६अ०

अइदूर- त्रि० *[अतिदूर]*
अतिविप्रकृष्टे, रा० । उव० ।

अइदूसमा- स्त्री० *[अतिदुष्षमा]*
दुषमदुष्षमाऽऽख्ये अवसर्पिण्याः षष्टे, उत्सर्पिण्याश्च प्रथमे
अरके, एतद्वर्णनञ्च तत्रैव । नं० । ज्यो० ।

अइधमंत- त्रि० *[अतिधमत्]*
अतिशयेन शब्दकारके, निसि० १ उ० ।

अइधाडिय- त्रि० *[अतिध्राडित]*
भ्रामिते, अतिवर्तिते च । पण्हा० १ , ३ अ० ।

अइधुत्त- त्रि० *[अतिधूर्त]*
अतीव प्रभूतं धूर्तमष्टप्रकारं कर्म । यस्यसोऽतिधूर्तः । बहुल
कर्मणि, सूय०२ श्रु० अ०१ उ० ।

अइपंडिय- त्रि० *[अतिपण्डित]*
अतीव दुर्विदग्धे, बुह० १ उ० ।

अइपंडुकंबलसिला- स्त्री० *[अतिपाण्डुकम्बलशिला]*
मन्दरपर्वतस्य दक्षिणदिग्गतायामभिषेकशिलायाम्,ठा०२ठा०
दो अइपंडुकंबलसिलाओ । ठा०४ ठा० । आव० ।
पाण्डुम्बलशिलेत्यस्या नामान्तरमिति तत्रैव वर्णको वक्ष्यते ।
जंबू०२ वक्ष० ।

अइपडागा- स्त्री० *[अतिपताका]*
एकां पताकामतिक्रम्य या पताका साऽतिपताका ।नाया०१ अ०
पताकोपरिवर्तिन्यां पताकायाम् । दशा० । उव० । भग० ।

अइपरिणाम- पुं० *[अतिपरिणाम]*
अतिव्याप्त्या परिणामो यदुक्तार्थपरिणमनं यस्य स तथा ।
वव० १ उ० । निसि० ।

अइपरियट्टित्ता- स्त्री० *[अतिपरिवर्त्त्य]*
सामस्त्येन परिभ्राम्य । पन्न० ।

अइपास- पुं० *[अतिपार्श्व]*
भरतक्षेत्रजाऽरजिनसमकालजाते ऐरवतजे तीर्थकरे, अर
जिणवरो य भरहे, अइपासजिणे य एरवए । आव०चू० ।

अइपासंत- त्रि० *[अतिपश्यत्]*
अतीव असाधारणं पश्यति । सूय० १ श्रु०१ अ० ३ उ० ।

अइप्पमाण- न० *[अतिप्रमाण]*
वारत्रयाऽतीते भोजने, पिंड० ।
अतिक्रान्तः प्रमाणम् । प्रमाणाऽतिक्रान्ते, यस्य यत् प्रमाण-
मुचितं ततोऽधिकप्रमाणवति । सम०

अइबल- त्रि० *[अतिबल]*
पुरुषान्तरबलान्यतिक्रान्तोऽतिबलः । पण्हा० ४ अ० ।
अतिक्रान्ताऽशेषपुरुषाऽमरतिर्यग्बले । उपा० २ अ० ।
अतिशयबले, उव० । राय० । सम० ।
भविष्यति पञ्चमे वासुदेवे च । सम० ।
ऋषभदेवस्य चतुर्थभवे महाबलनाम्नो राज्ञः पितामहे
शतबलस्य पितरि, गंधसमिद्धे विज्जाहरनगरे अइबलरण्णो
णत्ता सयबलरायणो पुत्ते महाबलो राया जातो । आव० म० ।
चूर्ण्यां तु- गंधसमिद्धं नगर राया रायी च विबुद्धणयणो
जणवयहितो सतबलस्स रण्णो नगर नत्तुतो अतिबलसुतो
महाबलो नामं । आव०म०द्वि । आ०चू० ।
भरतचक्रिणः प्रपौत्रे च । ठा० ८ ठा० । आ०चू० ।

अइबहुय- न० *[अतिबहुक]*
अतिशयेन बहुनिजप्रमाणाऽभ्यधिके भोजने, पिंड० ।
बहुयातीयमइबहुं, अइबहुसो तिन्नि तिन्नि य परेणं ।
तिं वि य अइप्पमाणं, भुंजइ जं वा अतिप्पंतो । ।
बहुकातीतमतिशयेन बहु अतिशयेन निजप्रमाणाऽभ्यधिक-
मित्यर्थः । तथा दिवसमध्ये यस्त्रीन् वारान् भुङ्क्ते त्रिभ्यो वा
वारेभ्यः परतस्तद्भोजनमतिबहुशः, तदेव च वारत्रयाऽतीतम्
अति प्रमाण मुच्यते, अइप्पमाण० इत्यवयवो व्याख्यातः ।
अस्यैव प्रकारान्तरेण व्याख्यानमाह-भुङ्क्ते, यद्वा अतृप्यन् एषः,
अइप्पमाण० इत्यस्य शब्दस्याऽर्थः । । पिंड० ।

अइबहुसो- अव्य० *[अतिबहुशस्]*
दिवसमध्ये त्रीन् वारान् त्रिभ्यो वा परतो भोजने, पिंड०।

अइबल– पु० *[अतिवल]*
आगामिन्यां पञ्चमो हरिः। सम० ।
भरतसंताने तृतीयः। स्था०।

अइबेल- अव्य० *[अतिवेल]*
वेलामतिक्रम्याऽतिवेलम्।यो यस्यकर्तव्यस्य कालोऽध्ययनं वा तां वेलामतिलङ्घयेत्यर्थे, सूय० १ श्रु०१४ अ०।
नाऽतिवेलं उवाचरे, न मर्यादोल्लङ्घनमित्यर्थः कुर्यादिति। आचा० १ श्रु०८ अ०।

अइबेला- स्त्री० *[अतिवेला]*
अन्यसमयाऽतिशायिन्यां मर्यादायाम् साधुमर्यादायाम्। उत्त० ३ अ०।

अइभद्द- पुं० *[अतिभद्र]*
कस्यचिच्छ्रेष्ठिनः पुत्रे, येन स्त्रीकलहे सति भद्रनामभ्रातुः पृथग्भूय गृहाद्यर्द्धकरणं कृतम्। तं०।

अइभद्दा- स्त्री० *[अतिभद्रा]*
प्रभासनामगणधरस्य मातरि, आव० म०। आ०चू०।

अइभय- त्रि० *[अतिभय]*
ऐहलौकिकादीनि भयान्यतिक्रान्ते,पण्हा० १ अ०।

अइभार- पुं० *[अतिभार]*
अत्यन्तं भारः। गुरुत्वे, पिंड०।
अतीव भरणमतिभारः। प्रभूतस्य पूगफलादेः स्कन्धपृष्ठादिषु आरोपणरूपे, आव० ६ अ०।
तथाविधशक्तिविकलानां महाभारारोपणस्वरूपे,उपा०१ अ०।
प्रथमाऽणुव्रतस्य चतुर्थेऽतिचारे, अतिभारो न आरोवेयव्वो, पुव्विं चेव जा वाहणाए जीविगा सा मोत्तव्वा, न होज्ज अन्ना जीविगा, ताहे दुपओ जं सयं उक्खिवइ ओयारेइ वा भारं, एवं वहाविज्जइ बइल्लाणं, जहा साभावियाओ वि भाराओ ऊणो उ कीरइ, हलसगडेसु वि वेलाए मुयइ आसहत्थीसु वि एसेव विही। आव०चू० ६ अ०।

अइभारारोवण- न० *[अतिभारारोपण]*
अतिशयितो भारोऽतिभारो वोढुमशक्य इति यावत् तस्याऽऽ-रोपणं गो-करभ-रासभ- मनुष्यादेः स्कन्धे पृष्ठे शिरसि वा स्थापनम्। प्रथमाऽणुव्रतस्यचतुर्थेऽतिचारे। पण्हा०।

अइभूमि- स्त्री० *[अतिभूमि]*
एलुकात् परभागे, अननुज्ञाता गृहस्थैर्यत्राऽन्यभिक्षाचरा नाऽऽयान्तीत्यर्थः। दश०८ अ०।
अतिशयिता भूमिमर्यादा, सम०।

अइमंच- पु० *[अतिमञ्च]*
मञ्चोपरितने विशिष्टमञ्चे, मञ्चाइमञ्चकलियं। उव०। दशा०। नाया०।

अइमट्टिया- स्त्री० *[अतिमृत्तिका]*
कर्दमरूपायां मृत्तिकायाम्, जीवा० ३ प्रति०।

अइमहल्ल- पुं० *[अतिमहत्]*
वयसाऽतिगरिष्ठे। वव० ३ उ०।

अइमाण- पुं० *[अतिमान]*
अतीव मानोऽतिमानः। सुभूमादीनामिव महामाने, सूय० १ श्रु०८ अ०।
चारित्रमतिक्रम्य वर्तमाने कषायभेदे, सूय०१ श्रु० ११ अ०।

अइमाय- त्रि० *[अतिमात्र]*
मात्रामतिक्रान्तः। मात्राऽधिके, उत्त० १६ अ०। आ०चू०।

अइमाया- स्त्री० *[अतिमात्रा]*
उचितमात्राया अधिकमात्रायाम्, अइमायाए पाणभोयणं आहारित्ता भवइ। उत्त० १६ अ०। पण्हा०।

अतिमाया- स्त्री०
अतीव माया अतिमाया। चारित्रमतिक्रम्य वर्तमाने कषायभेदे, सूय० १ श्रु० ११ अ०।

अइमुत्तय-१ न० *[अतिमुक्तक]*
पुष्पप्रधाने वनष्पतौ, जंबू०१ वक्ष०।
वल्लीभेदे, पन्न० १ पद०।
अतिमुक्तमण्डपकाः। जीवा० ३ प्रति०। विशे०। पन्न०।
लताभेदे, आचा०१ श्रु०१ अ०। उव०।

अइमुत्तय-२ न० *[अतिमुक्तक]*
कंसभ्रातरि, पुं०। येन बाल्ये देवकी स्वस्वसा प्रोक्तात्वमष्ट पुत्रान् सदृशान् जनयिष्यसि। आव०म०। आ०चू०।

अइमुत्तय- ३ न० *[अतिमुक्तक]*
पोलासपुरवास्तव्ये विजयराजस्य श्रीनाम्न्यां देव्यां जाते पुत्रे, ठा० १० ठा०।

अइमुच्छिय- त्रि० *[अतिमूर्च्छित]*
विषयदोषदर्शनं प्रत्यभिमूढतामुपगते, पण्हा० अ० ४ ।

अइमोह- त्रि० *[अतिमोह]*
अतीव मोहो यस्मिन्, तदतिमोहम्। अतिकामाऽऽसक्तौ, अति-शयित मोहयुते, नाया० १ अ०।

अइयंचिय- अव्य० *[अत्यञ्च्य]*
अतिक्रम्येत्यर्थे, ठा० ५ ठा०।

अइयच्च- अव्य० *[अतिगत्य]*
अतिक्रम्येत्यर्थे। आचा०१ श्रु०६ अ०।

अइयण- न० *[अत्यदन]*
अतिभक्षणे, 'अणुकंपा साणाइयण-दुगुंछा'। वव० २उ०।

अइया- स्त्री० *[अजिका]*
छगलिकायाम्, बुह०१ उ०।

अइयात- त्रि० *[अतियात]*
गते, 'अइयाओ णराहिवो'। उत्त० २० अ०।

अइयायरक्ख- त्रि० *[अत्यात्मरक्ष]*
अतीवाऽऽत्मनः परैः पापकर्मभिः रक्षा यस्यासावत्यात्मरक्षः। अतीवाऽऽत्मानं पापै रक्षति, अइयायरक्खे दाहिणगामिए नेरइए। सूय० २ श्रु०२ अ०।

अइयार- पुं० *[अतिचार]*
अतिचरणमतिचारः लङ्घने, सूय० २ श्रु०७ अ०।
तृतीये अपराधे,। आ०चू०।
अतिक्रमे, अतिक्रम्य गमने, आव०४ अ०।
ग्रहणतो व्रतस्याऽतिक्रमणे, वव० १ उ०।
चारित्रस्खलन-विशेषे, आव०म०। आ०चू०।
पापम्। आव०४ अ० ।
स्खलना। ओह० ३८।
**'अइचार' शब्द अपि द्रष्टव्यः

अइरत्त- पु० *[अतिरात्र]*
अतिशयिता रात्रिस्ततोऽस्ति, अधिकदिने दिनवृद्धौ, ते च षट्, तद्यथा-
छ अइरत्ता पन्नत्ता। तं जहा-चउत्थे पव्वे, अट्ठमे पव्वे दुवाल-समे पव्वे, सोलसमे पव्वे, वीसइमे पव्वे,चउवीसइमेपव्वे (अइरत्तत्ति) अतिरात्रोऽधिकदिनं दिनवृद्धिरिति यावत् चतुर्थं पर्व आषाढ शुक्लपक्ष एवमिहैकान्तरितमासानां शुक्लपक्षाः सर्वत्र पर्वाणीति, ठा० ६ ठा०।

अइरत्तकंबलसिला- स्त्री० *[अतिरक्तकम्बलशिला]*
मन्दर-पर्वतस्योत्तरस्यां दिशि वर्तमानायामभिषेकशिलायाम्, 'दो अइरत्तकंबलसिलाओ'। ठा० २ ठा०।

अइरा- स्त्री० *[अचिरा]*
विश्वसेनभार्यायां शान्तिजिनेन्द्रस्य मातरि, । आव०। सम०।

अइरित्त- त्रि० *[अतिरिक्त]*
अतिशयिते, श्रेष्ठे, भिन्ने, शून्ये च। तत्र भेदे-अतिरिक्तमथाऽपि यद् भवेदिति। यस्य यावत्प्रमाणं युक्तं ततोऽधिकत्वे, आचा०
अधिके, ठा०२ ठा०१ उ०।
अतिप्रमाणे, सम०। सूय०।
अतिरेके, पण्हा० अ० १०।
अतिशये आधिक्ये च। निसि०।

अइरित्तसिज्जासणिय- पुं० *[अतिरिक्तशय्यासनिक]*
अतिरिक्ता अतिप्रमाणा शय्या वसतिरासनानि च पीठकादीनि यस्य सन्ति सोऽतिरिक्तशय्यासनिकः। चतुर्थेऽसमाधिस्थाने, स चाऽतिरिक्तायां शय्यायां घट्टशालादिरूपायामन्येऽपि कीटिका-दयः (कार्पटिकादयः) आवासयन्तीति तैः सहाऽधिकरणत्वाद् असमाधिस्थानमेव, सहाऽधिकरणसम्भवादात्मपरावसमाधौ योजयतीति। सम०। दशा०। आ०चू०। पण्हा०।

अइरुग्गय- त्रि० *[अतिरोद्गता]*
क्षणमात्रमुद्गते, रा०।
प्रथमोदिते अइरुग्गए वि सूरे। उत्त० ३ अ०।
अइरुग्गयसमग्गसुणिद्ध चंद-द्धसंठियणिडाला। तं०।

अइरूव- पुं० *[अतिरूप]*
भूतभेदे च। पन्न०१ पद०।

अइरेग- पुं० *[अतिरेक]*
अतिशये, जीवा० ३, प्रति०२, उ०। आधिक्ये, नाया०१ अ०।

अइरेगसंठिय- त्रि० *[अतिरेकसंस्थित]*
अतिरेकेण संस्थितं यस्य सः। अतिशायितया संस्थानवति, 'कयलीखंभाइरेगसंठिए'। जीवा० ३ प्रति०।

अइरेण- अव्य० *[अचिरेण]*
स्तोके काले, 'अचिरेण सिद्धिपासायं'। वव०८ उ०। विशे०।

अइरोववण्णग- त्रि० *[अचिरोपपन्नक]*
अचिरजाते, आव०५ अ०।

अइलोलुय- त्रि० *[अतिलोलुप]*
अतीव रसलम्पटे, उत्त० ११ अ०।

अइवइत्ता- अव्य० *[अतिपत्य]*
अतिक्रम्येत्यर्थे, नाया० ५अ०।
प्रविश्येत्यर्थे च। पण्हा० अ० ३ ।

अइवट्टण- न० *[अतिवर्तन]*
उल्लङ्घने, आचा०१ श्रु० ५अ० ६उ०।

अइवाइन्- त्रि० *[अतिपातिन्]*
अतीव पातयितं शीलमस्य। हिंसके, सूय०१ श्रु०५ अ०।

अइवाइत्ता- त्रि० *[अतिपातयितृ]*
प्राणिनां विनाशनशीले, 'णो पाणे अइवाइत्ता भवइ'। ठा० ३ ठा०, २ उ०।

अतिपात्य- अव्य० *[अति-पत्-त्त्वा-ल्यप्]*
प्राणिनो विनाश्येत्यर्थे, ठा० ३ ठा०१ उ०।

अइवाइय- त्रि० *[अतिपातिक]*
अतिपतनमतिपातः, स विद्यते यस्य सोऽतिपातिकः। प्राणि उपमर्दके, सूय०२ श्रु०१ अ०।

अइवाइया- स्त्री० *[अतिपातिका]*
अतिक्रान्ता पातकमतिपातिका, निर्दोषायाम्, पापाद् दूरीभूतायाम्, आचा०१ श्रु०९ अ० ।

अइवाएमाण- त्रि० *[अतिपातयत्]*
प्राणिन उपमर्दयति, सूय०१ श्रु०८ अ० ।

अइवाय- पुं० *[अतिपात]*
अतिपतनमतिपातः । प्राण्युपमर्दने, सूय०२ श्रु०१ अ० ।
विभ्रंशे, ठा०५ ठा० ।
विनाशे, सूय०१ श्रु० १० अ० ।
द्वादशशतके प्राणातिपातादिविषयः पञ्चमोद्देशकः । भग०
हिंसादिदोषः । ओह०

अइवालग– पुं० *[अजापालकः]*
वाचकविशेषः । बुह०

अइवास- पुं० *[अतिवर्ष]*
अतिशयवर्षे, वेगवद् वर्षणे, भग० ३ श०६ उ० ।

अइवाहड- त्रि० *[अतिव्याघ्रात]*
अतीव घ्राते, दुर्गन्धादिविशिष्टे, बुह०४ उ० ।

अइविज्ज- त्रि० *[अतिविद्वस्]*
विदितागमसद्भावे, तम्हाऽइविज्जो णो पडिसंजलिज्जा । आचा० १ श्रु०४ अ० ।

अइविसय- पुं० *[अतिविषय]*
प्रबलपञ्चेन्द्रिय लाम्पट्ये, तं०

अइविसाया- स्त्री० *[अतिविषादा]*
अतिविषादाः दारुणविषादहेतुत्वात् १ ,
यद्वा अतीत्यतिक्रान्तो गतोऽकार्यकरणे विषादः क्षोभो यासां तास्तथा २,
यद्वा अतीति भृशं विषमतिविषम् आ समन्ताद् ददति पुरुषाणां विरक्ताः सत्यः सूर्यकान्तावदिति अतिविषादाः ३,
यद्वाऽतीति भृशं वीति नानाविधः स्वादो लाम्पट्यं यासां ता अतिविस्वादाः ४,
तथा अतिविषयगा अतिविषयात् प्रबलला-म्पट्यात् षष्ठीं नरकपृथिवीं गच्छन्ति, चक्रवर्ति-स्त्रीरत्नवत्, सुसढमातृवद् वा, प्राकृतत्वात्तत्र यलोपे सन्धिः ५,
यद्वा अति-विषादा इष्टपुरुषाऽप्राप्तौ स्वेन्द्रियविषयाऽप्राप्तौ वाऽतिविषादो यासां ताः ६,
अतिकोपादत्युग्रं विषमदन्ति, भक्षयन्ति इति अतिविषादाः ७,
अतिवृषं महत्पुण्यं येषां तेऽतिवृषास्साधवः, तेषां कायन्ते यम इवाऽऽचरन्ति चारित्र-प्राणहरणेनेति ८,
यद्वा अतिवृषाणां कायन्ति, अग्नीयन्ति संयमगृहज्वालनेनेति अतिवृषाकाः ९,
यद्वा अतिवृषे लोकानां पुण्यरूपमहद्वने आ भृशं चायन्ते चौर इवाचरन्ति यास्ताः, तथोक्ताः १० ।
एता दश व्युत्पत्तयः । दुष्टस्वभावासु स्त्रीषु, तं० ।

अइवुट्ठि- स्त्री० *[अतिवृष्टि]*
अधिक-वर्षे, सम० ।

अइसंधाण- न० *[अतिसंधान]*
प्रख्यापने, आव०४ अ० ।

अइसंधाणपर- त्रि० *[अतिसंधानपर]*
असद्भूतगुणं गुणवन्तमात्मानं *ख्यापयति*, आव०४ अ० ।

अइसंपओग- पुं० *[अतिसंप्रयोग]*
गार्ध्ये, अतिशयेन द्रव्येण कस्तूरिकादिना परस्य द्रव्यस्य संप्र-योगः ।
अतिशयद्रव्येण द्रव्याऽन्तरस्य संप्रयोगे,सूय०२ श्रु०२ अ

अइसक्कणा- स्त्री० *[अतिष्वष्कणा]*
अग्निर्ज्वलत्विति इन्धनानां समीरणायाम् । निसि० २ उ० ।

अइसय- पुं० *[अतिशय]*
प्रकर्षभावे, नं० ।

अइसयणाणि- पुं० *[अतिशयज्ञानिन्]*
अवधिज्ञानादिकलिते, वव०१ उ० ।

अइसयमईयकाल- पुं० *[अतिशयातीतकाल]*
अतिशयेन योऽतीतः कालः समयः स तथा अतिव्यवहिते काले, सम० ।

अइसाइ- त्रि० *[अतिशायिन्]*
ऋद्धिमत्सु, केवल-मनःपर्यायाऽ–वधिमच्-चतुर्दशपूर्ववित्सु, आमर्षौषध्यादि-प्राप्तऋद्धिषु, आचा०२ श्रु० ३ चू० ।

अइसिरिहर- पुं० *[अतिश्रीभर]*
अतिशयिते श्रीभरे, शोभासमूहे, कल्प० ।

अइसीय- त्रि० *[अतिशीत]*
अतिशयिते शीते, ठा० ५ ठा० १ उ० ।

अइसेस- पुं० *[अतिशेष]*
अतिशये, ठा० ५ ठा०२ उ० । वव० ६ उ० ।
अवध्यादौ, उव० । दश०
अवध्यादिप्रत्यक्षं ज्ञानं । ओध०
कर्म्मणि प्रत्ययः अतिक्रान्ते, स्था ४ ठा० १ उ०

अइसेसइड्ढि- पुं० *[अतिशेषर्द्धि]*
अतिशेषा अवधिमनःपर्यायज्ञानामर्षौषध्यादयोऽतिशयास्ते तैः वा ऋद्धिर्यस्याऽसौ अतिशेषर्द्धिः । प्रथमे प्रवचनप्रभावके । निसि० । दश० ।

अइसेसपत्त- त्रि० *[अतिशेषप्राप्त]*
आमर्षीषध्यादिलब्धीः प्राप्ते, कल्प०।
अइसेसपहुत्त- न० *[अतिशेषप्रभुत्व]*
अतिशायिप्रभुत्वे, वव० ६ उ०।
अइसेसिय- त्रि० *[अतिशेषित]*
अतिशयिते, वव० ६ उ०।
अइहि- पुं० *[अतिथि]*
तिथिपर्वादिलौकिकव०हारपरिवर्जके भोजनकालोपस्थायिनि भिक्षुविशेषे,। आव०। आतु०। आचा०।
आगन्तुके, भग०१२ श०९ उ०।
अइहिपूआ- स्त्री० *[अतिथिपूजा]*
आहारादिदानेनाऽतिथेः सत्कारलक्षणे लोकोपचारविनयभेदे, दश० ५ अ०।
'बलिवइस्सदेवं करेइत्ता अतिहिपूयं करेइ, करेइत्ता तओ पच्छा अप्पणा आहारमाहारेइ'। भग० ११ श०९ उ०। निसी०।
अइहिबल- न० *[अतिथिबल]*
अतिथेः शक्त्युपचये, आचा०१ श्रु० २ अ०।
अइहिम- न० *[अतिहिम]*
अतिशयितहिमे, पिंड०।
अइहिवणीमग- पुं० *[अतिथिवनीपक]*
अतिथिमाश्रित्य वनीपकः। अतिथिदानप्रशंसनेन तद्भक्तात् लिप्स्यमाने याचकभेदे, ठा० ५ ठा०।
सांप्रतमतिथिभक्तानां पुरतोऽतिथिप्रशंसारूपं वनीपकत्वं, यथा साधुर्विदधाति, तथा दर्शयति –"पाएण देइ लोगो, उवगारिसु परिचिएसु झुसिए वा। जो पुण अद्धाखिन्नं, अतिहिं पूएइ तं दाणं।" इह प्रायेण लोक उपकारिषु यद्वा परिचितेषु यदि वा अध्युषिते आश्रिते ददाति भक्तादि, यः पुनरध्वखिन्नमतिथिं पूजयति, तदेव जगति दानं प्रधानमिति शेषः। पिंड०। निसि०
अइहिसंविभाग- पुं० *[अतिथिसंविभाग]*
तिथिपर्वादि- लौकिकव्यवहारत्यागाद् भोजनकालोपस्थायी श्रावक
स्याऽतिथिः साधुरुच्यते, तस्य संगतो निर्दोषो न्याया- गतानां कल्पनीयाऽन्नपानादीनां देशकालश्रद्धासत्कारक्रमयुक्तः पश्चात् कर्मादिदोषपरिहारेण विशिष्टो भाग आत्मानुग्रहबुद्ध्या दानमतिथिसंविभागः।
यथा संविभागाऽपरनामके चतुर्थे शिक्षाव्रते, आव०।
अईव- अ० *[अतीव]*
अईव सोमचारुरूवा, अतीव अतिशयेन सोमं दृष्टिसुभगं चारु रूपं येषां तेऽतीव सोमचाररूपाः। जीवा० ३ प्रति०२ उ०।

अईतेआ– स्त्री० *[अतितेजाः]*
चतुर्दशरात्रिनाम । जम्बू० ।
अउअ- न० *[अयुत]*
चतुरशीत्या लक्षैर्गुणिते, अनु०।
अयुताङ्गे, ठा० २ ठा०। अनु०। जीवा०। जंबू०।
दशसहस्रेषु, कल्प०।
अउअंग- न० *[अयुताङ्ग]*
चतुरशीत्या लक्षैर्गुणिते अर्थनिपूरे, जीवा० ३ प्रति०। जंबू०। कल्प०। ठा०। अनु०।
अउअसिद्ध- त्रि० *[अयुतसिद्ध]*
कारणकपालादेरपृथग्भूततया सिद्धे कायद्रव्ये घटादौ, तथा-भूते वैशेषिकोक्ते द्रव्याश्रिते गुणे, कर्मणि च। आव०म०।
अउज्झ- त्रि० *[अयोध्य]*
परैर्योद्धुमशक्ये, जीवा० ३ प्रति०।
दुर्गतत्वात्परबलैः संग्रामयितुमशक्ये, ठा० ४ ठा०।
अउज्झा- स्त्री० *[अयोध्या]*
विनीताऽपरनामके पुरीभेदे।
गन्धिलावतीविजये वर्तमाने पुरीयुगले च। दो अउज्झाओ। ठा०२ ठा०।
अउल- त्रि० *[अतुल]*
अनन्यसदृशे, । आव० ६ अ०। दश०।
निरुपमे उत्त० २० अ०।
अओघण- पुं० *[अयोधन]*
लोहघने, अयोमये घने, । सूय० ५ अ० २ उ०।
अओमय- त्रि० *[अयोमय]*
लोहमये विकारे, । सूय० २ श्रु० २ अ०।
अओमुह- त्रि० *[अयोमुख]*
अय इव मुखं यस्य लोहमुखे पक्ष्यादौ, 'पक्खीहिं खज्जंति अओमुहेहिं'। सूय० १ श्रु० ५ अ०२ उ०।
अयोमुखद्वीपनिवासिनि मनुष्ये, पुं०। ठा०५ ठा०।
अओमुहदीव- पुं० *[अयोमुखद्वीप]*
गोकर्णनाम्नोऽन्तरद्वीपस्य परतो दक्षिणपश्चिमायां विदिशि पञ्चयोजनशतव्यतिक्रमेणस्थिते पञ्चयोजनशतायामविष्कम्भे एकाशीत्यधिक-पञ्चदशयोजनशतपरिक्षेपे पद्मवरवेदिकावन-खण्डमण्डितबाह्यप्रदेशेऽन्तरद्वीपविशेषे, नं०। पन्न०। ठा०।
अंक-१ पुं० *[अङ्क]*
शुक्लमणि विशेषे, उत्त० ३४ अ०।
रत्नविशेषे, नाया० १ अ०। जंबू०। नाया०। रा०। सूय०। उत्त०। जीवा०। भग०। आव०म०। पन्न०। निसि०। ओह०

अंक-२ पुं० *[अङ्क]*
'पद्मासनोपविष्टस्योत्सङ्गरूपे आसनबन्धे, चंद० ५ पाहु० ।
उत्सङ्ग, वव०८ उ० । जंबू० । नाया० । सूय० आचा० ।

अंक- ३ पुं० *[अङ्क]*
चन्द्रबिम्बान्तर्वर्तिमृगावयवे च। यल्लोके मृगादिव्यपदेशं लभते। जंबू०२ वक्ष० । सूर० । चंद०
चिह्ने, चंद० २० पाहु० । सूर० २० पाहु०

अंक-४ पुं० *[अङ्क]*
लाञ्छने, उव० । जीवा० ।

अंककंड- न० *[अङ्ककाण्ड]*
अङ्करत्नमये योजनशतबाहल्ये रत्नप्रभायाः खरकाण्डस्य चतु-र्दशे भागे, ठा० १ ठा० ।

अंककरेल्लुअ- न० *[अङ्ककरेलुक]*
वनस्पतिविशेषे, आचा०१ श्रु० १ अ० ५ उ० ।

अंकट्ठिइ- स्त्री० *[अङ्कस्थिति]*
संख्यारेखाविचित्रस्थापनारूपायां त्रयश्चत्वारिंशत्-कलायाम्, कल्प० ।

अंकण- न० *[अङ्कन]*
तप्तायःशलाकादिना गवाऽश्वानां चिह्नकरणे, । पण्हा० १ अ० ।
श्वश्रृगालचरणादिभिर्लाञ्छनकरणे च। आव० ४ अ० ।

अंकधर- पुं० *[अङ्कधर]*
चन्द्रमसि, जीवा० ३ प्रति० । तं० । जंबू० ।

अंकधाइ- स्त्री० *[अङ्कधात्री]*
उत्सङ्गस्थापिकायां धात्र्याम्, नाया०१अ० । निसि० । आचा० धात्रीदोषे । निशी०

अंकपतिता– *[अंङ्कपतिता]*
दासी । उत्त० २६२ ।

अंकबणिय- पुं० *[अङ्कवणिज्]*
अङ्करत्नवणिजि, । रा० ।

अंकमुह- न० *[अंकमुख]*
पद्मासनोपविष्टस्य उत्सङ्गरूपासनबन्धाऽग्रभागे, सूर०५ पाहु० । चंद० ५ पाहु० ।

अंकमुहसंठिय- त्रि० *[अङ्कमुखसंस्थित]*
पद्मासनोपविष्टस्योत्सङ्गरूप आसनबन्धस्तस्यमुखमग्रभागोऽर्द्ध-वलयाकारः, तस्येव संस्थितं यस्य। अर्द्धवलयाऽऽकारसंस्थान संस्थिते, सूर० ५ पाहु० । चंद० ५ पाहु० । पन्न० ५६ ।

अंकलिवि- स्त्री० *[अङ्कलिपि]*
ब्राह्मया लिपेर्द्वादशे लेख्यविधाने । लिपिविशेषः । पन्न० १ पद० । सम० ।

अंकमय- त्रि० *[अङ्कमय]*
अङ्करत्नमये, अङ्करत्नविकारे, अङ्करत्नप्रचुरे वा 'अंकामया पक्खा पक्खवाहा' । उव० । रा० । प्रति० ।

अंकावई-१ स्त्री० *[अङ्कावती]*
महाविदेहरम्यविजये वर्तमानायां राजधान्याम् ।जंबू०४ वक्ष० ।
दो अंकावईओ । ठा०२ ठा० ।

अंकावई-२ स्त्री० *[अङ्कावती]*
रम्मे विजये अंकावई रायहाणी अंजणे वक्खारपव्वए ।
जंबू० ४ वक्ष० ।
मन्दरस्य पूर्वे शीतोदाया महानद्या दक्षिणे वर्त्तमाने वक्षस्कार पर्वते च। ठा० ५ ठा० ।

अंकिअ- त्रि० *[अङ्कित]*
लाञ्छिते, आव० ४ अ० । उव० ।

अंकुडग- पुं० *[अङ्कटक]*
नागदन्तके; जंबू० १ वक्ष० ।

अंकुत्तरपास- त्रि० *[अङ्कोत्तरपार्श्व]*
अङ्का अङ्करत्नमया उत्तरपार्श्वा यस्य तत् अङ्कोत्तरपार्श्वम् ।
अङ्करत्नमयोत्तरपार्श्वयुक्ते द्वारे । रा० । जीवा० ।

अंकुर- पुं० *[अङ्कुर]*
प्ररोहे, बुह० १ उ० ।
शाल्यादिबीजसूचौ, भग० ७ उ० ७ श० ।
कालकृतावस्थाविशेषभाजि प्रवाले, जीवा० ३ प्रति० । ठा० ।

अंकुस-१ पुं० न० *[अङ्कुश]*
अङ्कुशाकारे मुक्तादामावलम्बनाश्रयभूते चन्द्रोपके, जीवा० ३ प्रति० । ठा० । आव०म० ।

अंकुस-२ पुं० न० *[अङ्कुश]*
विमानविशेषे, सम० ।

अंकुस-३ पुं० न० *[अङ्कुश]*
देवार्चनार्थं वृक्षपल्लवाकर्षणार्थे परिव्राजकोपकरणविशेषे, उव० ।

अंकेल्लणपहार- पुं० *[अंकेल्लणप्रहार]*
अश्वादीनां तर्जकविशेषाघाते, अंकेल्लणपहारपरिवज्जियंगे अंकेल्लणप्रहारपरिवर्जिताऽङ्गः ।अश्ववारमनोऽनुकूलत्वादङ्केल्ल - णप्रहाररहितशरीरे अश्वादौ, जंबू० ४ वृक्ष० ।

अंकोल्ल- पुं० अंकोटब
एकाऽस्थिकवृक्षभेदे, गुच्छभेदे च। पन्न० १ पद० । कल्प० ।

अंग-१ अव्य० *[अङ्ग]*
आमन्त्रणे । भग० ९ श० ३३ उ० । दशा० । नाया० उव० ।
अलंकारे च । ठा० ४ ठा० ।

अंग-२ न० *[अङ्ग]*

देहावयवेषु, आ०चू०। पन्न०। निचू०। विशे०। उत्त०। अङ्गान्यष्टौ शिरःप्रभृतीनि, । रा०।
बाहू भुजद्वयम् ऊरू ऊरुद्वयं पृष्ठिः प्रतीता शिरो मस्तकमुरो वक्षः उदरं पोट्टमित्यष्टावङ्गान्युच्यन्ते। आव० म०।
गात्रे, उव०। ठा०। उत्त०।
अवयवे, ठा० ७ ठा०।

अंग- ३ न० *[अङ्ग]*

'अट्ठंगाइं' नाया० १ अ०। सम०। ठा०।
लौकिकानि वेदस्य षडङ्गानि तद्यथा शिक्षा १ कल्पो २ व्याकरणं ३ छन्दो ४ निरुक्तं ५ ज्यौतिषं ६ चेति। आ०चू० २ अ०। अनु०। आव०म०। आव०।
शिक्षादीनि षडङ्गानि। भग०

अंग-४ न० *[अङ्ग]* #

लोकोत्तराणि प्रवचनस्य द्वादश अङ्गान्याचाराङ्गादीनि। (तानि अंगप्पविट्ठशब्दे व्याख्यास्यन्ते)। ठा०।

अंग-५ पु० *[अङ्ग]*

ऋषभदेवस्य द्वादशे पुत्रे, कल्प०।

अंग-६ पु० *[अङ्ग]*

जनपदविशेषे, यत्र चम्पानगरी। नाया० ८अ० ।ठा०। बुह०। कल्प०। सूय०।

अंग-७ पु० *[आङ्ग]*

१ . अङ्गं शरीरावयवस्तद्विकार आङ्गम्। देहावयवविकारे,
२. दक्षिणपार्श्वे स्पन्दनमभिधास्ये, तत्फलं स्त्रिया वामे, पृथिवी लाभं शिरसि, स्थानविवृद्धिर्ललाटे स्यात्, इत्यादि।
३. शिरःस्फुरणादौ, ठा० ८ ठा०।
अङ्गे भवमाङ्गम्। शरीरोत्पन्ने, सूय०२ श्रु०२ अ०।
अङ्गविषयमाङ्गम्। आव० ४ अ०।
शरीराऽवयवप्रमाणस्पन्दितादिविकारफलोद्भावके महानिमित्त-भेदे, सम०।
आङ्गनाम्नो महानिमित्तस्य सूत्रादिमानम्। अंगस्स सयसहस्सं, सुत्तवित्ती य कोडि विन्नेया। वक्खाणं अपरिमियं इयमेव य वत्तियं जाण। आव० ४ अ०। आ० चू०। सम०।
शिरःप्रभृति। दश०

अंगअ- पुं० *[अङ्गज]*

अङ्गाज्जायते, पुत्रे। नाया०। आ० चू०।

अंगअ- न० *[अङ्गद]*

अङ्गं दायति शोधयति, बाहुशीर्षाभरणे, पन्न०२पद०। जीवा०। भग०। नाया०। ठा०। रा०। उव०।

अंगइ- पुं *[अङ्गजित्]*

श्रावस्तीवास्तव्ये गृहपतिभेदे, निसि०। ठा०।(स च पार्श्वजिन अन्तिके प्रव्रज्यां गृहीत्वाऽनशनेन मृत्वा चन्द्रविमाने चन्द्रत्वेन उपपन्न इति 'चंद'शब्दे वक्ष्यते।)

अंगइसि- पुं० *[अङ्गर्षि-अङ्गऋषि]*

चम्पावास्तव्ये कौशिकाऽऽर्यशिष्ये, तस्य भद्रत्वादङ्गर्षिरिति कौशिकार्येण नाम कृतम् । आव०म०। आव०। आ०चू०।

अंगचूलिया- स्त्री० *[अङ्गचूलिका]*

स्थानाङ्गसूत्रे तु संक्षेपिकादशायास्तृतीयाऽध्ययनत्वेनेयमुक्ता ठा० १० ठा०।

अंगच्छहिय- त्रि० *[अङ्गच्छिन्न]*

अङ्गेषु छिन्नः। कृत्ताङ्गे, 'इमं नक्कओट्ठसीसमुहच्छिण्णयं करेह वेयगच्छहियं अंगच्छहियं इमं पुक्खाफोडियं करेह'। सूय० २ श्रु० २ अ०।

अंगण- न० *[अङ्गन]*

अजिरे, पण्हा० संव० २ द्वा० ४ अ०।
गृहाग्रभागे, कल्प०।
'अंगणुं मंडवट्ठाणं'। निसि० ३ उ०।

अंगणा- स्त्री० *[अङ्गना]*

अङ्गे स्वशरीरे पयोधरनितम्बजघनस्मरकूपिकादिरूपे अनुरागो येषां ते अङ्गानुरागास्तान् अङ्गाऽनुरागान् कुर्वन्तीति अङ्गनाः। स्त्रीषु,। तं०। आचा०। निसि० ।

अंगप्पभव- त्रि० *[अङ्गप्रभव]*

अङ्गाद् दृष्टिवादादेः प्रभवः उत्पत्तिरस्येति अङ्ग प्रभवः। दृष्टि-वादादेरुत्पन्ने, यथोत्तराध्ययने परीषहाऽध्ययनम् 'कम्मप्पवाय पुव्वे सत्तरसे पाहुडम्मि जं सुत्तं। सणयं सोदाहरणं तं चेव इहं पि णायव्वं।' उत्त० १ अ०।

अंगप्पविट्ठ- न० *[अङ्गप्रविष्ट]* #

इह पुरुषस्य द्वादश अङ्गानि भवन्ति। तद्यथा- द्वौ पादौ द्वे जङ्घे द्वे ऊरुणी द्वे गात्रार्द्धे द्वौ बाहू ग्रीवा शिरश्च, एवं श्रुतरूपस्यापि परमपुरुषस्याचारादीनि द्वादशाङ्गानि क्रमेण वेदितव्यानि। तथा चोक्तम्- पायदुगं जंघोरु गायदुगद्धं तु दो य बाहू य। गीवा सिरं च पुरिसो, बारस अंगेसु य पविट्ठो।। श्रुतपुरुषस्याऽङ्गेषु प्रविष्ट मङ्ग प्रविष्टम्। अङ्गभावेन व०स्थिते श्रुतभेदे, नं० ।ठा०। अनु० गणधरदेवा हि मूलभूतमाचारादिकं श्रुतमुपरचयन्ति,तेषाम् एव सर्वोत्कृष्टश्रुतलब्धिसंपन्नतया तद् रचयितुमीशत्वात्, न शेषा-णाम्। ततस्तत्कृतं सूत्रं मूलभूतमिति अङ्गप्रविष्टमुच्यते। नं०। गणधरकृतं मातृकापदत्रयप्रभवं वा ध्रुवश्रुतं वा ।ठा० ।यत्पुनः श्रुतस्थविरैः तदेकदेशमुपजीव्य विरचितं तदनङ्गप्रविष्टम्। नं०।

इदमुक्तं भवति- गणधरकृतं पदत्रयलक्षण तीर्थकरऽऽदेश निष्पन्नं, ध्रुवं च यत् श्रुतं, तदङ्गप्रविष्टमुच्यते। तच्च द्वादशाङ्गीरूपमेव यत्पुनः स्थविरकृतमुत्कलार्थाभिधानं, चलं च तदावश्यकप्रकीर्णादि श्रुतमङ्गबाह्यमिति। विशे०।

से किं तं अंगपविट्ठं ? अंगपविट्ठं दुवालसविहं पन्नत्तं, तं जहा- आयारो १ , सुयगडो २, ठाणं ३, समवाओ ४, विवाहपन्नत्ती ५, नायाधम्मकहाओ ६, उवासगदसाओ ७, अंतगडदसाओ ८, अनुत्तरोववाइयदसाओ ९, पण्हावागरणाइं १०, विवागसुयं ११ , दिट्ठिवाओ य १२। नं ।

अंगबाहिर- न० *[अंगबाह्य]*

द्वादशाङ्गात्मकस्य श्रुतपुरुषस्य बहिर्व्यतिरेकेण स्थितमङ्ग-बाह्यम्अङ्गबाह्यत्वेन व्यवस्थिते श्रुतविशेषे, नं०।

स्थविरकृतं मातृकापदत्रयव्यतिरिक्त–व्याकरणनिबद्धमध्रुवश्रुतं वा उत्तराध्ययनादि।ठा०।

एतद्भेदाः, यथा- अंगबाहिरे दुविहे पन्नत्ते तं जहा आवस्सए चेव आवस्सयवइरित्ते चेव।ठा०१ठा०।नं०।अनु०।आव०चू०।रा०

अंगबाहिरिया- स्त्री० *[अङ्गबाह्या]* #

अङ्गान्याचारादीनि तेभ्यो बाह्या अङ्गबाह्याः। अनङ्गप्रविष्टायाम् चन्द्रसूरजम्बूद्वीपद्वीपसागरप्रज्ञप्तयः अङ्गबाह्याः। ठा०४ ठा०

अंगभंजण- न० *[अङ्गभञ्जन]*

शरीराऽवयवप्रमोटने, पण्हा० अ० ५।

अंगमंग- न० *[अङ्गाऽङ्ग]*

अङ्ग-प्रत्यङ्गेषु, 'रायलक्खणविराइयंगमंगा'। रा०। सम०।

शरीराऽवयवेषु, नाया० ९ अ०।

अंगमंदिर- न० *[अङ्गमन्दिर]*

चम्पानगर्या बहिर्विद्यमाने चैत्ये, 'अंगमंदिरंसि चेइयंसि मल्लरामस्स शरीरं विप्पजहामि'। भग० १ श० १ उ०।

अंगमद्दिया- स्त्री० *[अङ्गमर्दिका]*

शरीरमर्दनकारिण्यां दास्याम् 'अट्ठ अंगमद्दियाओ अट्ठ उम्मद्दियाओ' इहाऽङ्गमर्दिकानामुन्मर्दिकानां चाऽल्पबहुमर्दन-कृतो विशेषः। भग० ११ श० ११ उ०।

अंगरक्ख- न० *[अङ्गरक्ष]*

अङ्गं रक्षयति। वर्मणि, नाया० ३ अ०।

अंगविज्जा- स्त्री० *[अङ्गविद्या]*

शिरःप्रभृत्यङ्ग स्फुरणतः शुभाऽशुभसूचिकायां विद्यायाम्, अङ्ग स्फुरणफलशास्त्रे, यथा--

'शिरसः स्फुरणे राज्यं, हृदयस्फुरणे सुखम्।

बाहोश्च मित्रसंलापो जङ्घयोर्भोगसंगमः।। उत्त० ८ अ०।

स्वनामख्यातेऽङ्गादिनिमित्तफलदेशके ग्रन्थविशेषे च। स च ग्रन्थः कुतो निर्यूढः ? कति तत्राऽध्यायाः ? कियत्यो वा तत्र विद्याः ? इति तत्रैवाऽऽदौ प्रदर्शितं। यथा अङ्गानि च विद्याश्च अङ्गविद्या। अङ्गविद्याव्यावर्णितेषु भौमाऽन्तरिक्षादिषु हिलि हिलि मातङ्गिनि स्वाहा, इत्यादिषु विद्याऽनुवादप्रसिद्धासु विद्यासु च।

'अंगविज्जं च ते पउंजंति न हु ते समणा'। उत्त०८ अ०।

अंगवियार-१ पुं० *[अङ्गविकार]*

शिरःस्फुरणादौ, शरीरस्फुरणादितः शुभाशुभसूचके शास्त्रे, उत्त० १५ अ०।

अंगवियार-२ पुं० *[अङ्गविचार]*

शरीरस्पर्शनस्य नेत्रादीनां स्फूरणस्य वा विचारे। तद्विचारेण फलाऽऽदेशके शास्त्रे च। अंगवियारं सरस्स विजयं, जो विज्जाहिं न जीवई स भिक्खू। उत्त० १५ अ०।

अंगसंचाल- पुं० *[अङ्गसंचार]*

रोमोद्गमादिषु गात्रविचलन प्रकारेषु, 'सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं'। आव० ५ अ०।

अंगसुहफरिस- त्रि० *[अङ्गसुखस्पर्शक]*

देहसुखहेतुस्पर्शयुक्ते। भग० ११ श० ११ उ०।

अंगादाण- न० *[आङ्गादान]*

अङ्गं शरीरं शिर आदीनि वा अङ्गानि तेषामादानं प्रभवः प्रसूतिरङ्गादानम्। मेढ्रे, अङ्गादानस्य संचालनादि निषेधस्तत्र प्रायश्चित्तम्। निसि० १ उ०। ।

अंगार- पुं०न० *[अङ्गार]*

विगतधूमज्वालदह्यमानेन्धनादिके बादरतेजस्कायभेदे, उत्त० ३६ अ०। आचा०। पिंड०। जीवा०। जीवा०। पन्न०। भग०। उव०। ठा०। नाया०।

चारित्रेन्धनस्य रागाग्निनाऽङ्गारस्येव करणे, गच्छा० ।

स्वाद्वन्नं तद्दातारं वा प्रशंसयतो भोजने आपतति आहारदोष विशेषे, । उत्त०। आचा०।

तत्त्वं च – जे णं णिग्गंत्थे वा णिग्गंथी वा फासुयं एसणिज्जं असणं पाणं खाइमं साइमं पडिग्गहेत्ता सम्मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोवव-ण्णए आहारमाहारेइ। स णं गोयमा। सइंगाले पाणभोयणे। भग० ७ श० १ उ०।

अंगार- त्रि० *[आङ्गार]*

अङ्गाराणामयमाङ्गारः। अङ्गारसंबन्धिनि, 'इंगालं छारियरासिं ' । दश० ५ अ०।।

अंगारकड्ढिणी- स्त्री० *[अङ्गारकर्षिणी]*

अङ्गारोत्थापिकायामीषद्वकाग्रायां लोहमययष्टौ, भग० १६ श० १ उ०।

अंगारकम्म- न० *[अङ्गारकर्मन्]*
अङ्गारविषयं कर्माऽङ्गारकर्म।
अङ्गाराणां करणविक्रयस्वरूपे कर्माऽऽदानत्वादकर्तव्ये कर्मणि, एवमग्निव्यापाररूपं यदन्यदपीष्टकापाकादिकं कर्म तदङ्गारकर्मोच्येत।अङ्गारशब्दस्य तदन्योपलक्षणत्वात्।भग०८ श०५उ० समानस्वभावत्वात्। उपा० १ अ०।
यतो योगशास्त्रे- अङ्गारभ्राष्ट्रकरणं, कुम्भाय:स्वर्णकारिता। ठठारत्वेष्टकापाकाविति ह्यङ्गारजीविका। आव०।
इङ्गाले दहिऊण विक्किणेति, तत्थ छक्कायपाणवधो। तन्न कप्पति, अहवा लोहकारादि। आ०चू०६ अ।

अंगारकारिया- स्त्री० *[अङ्गारकारिका]*
अङ्गारान् करोतीति अङ्गारकारिका। अग्निशकटिकायाम्।
इंगालकारिए णं भंते ! अगणिकाए केवइयं कालं संचिट्ठइ ? गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिण्णि रायंदियाइं। अण्णवेत्थ वाउकाए वक्कमइ, ण विणा वाउकाइएणं अगणिकाए उज्जलइ।
अङ्गारान् करोतीति अङ्गारकारिका अग्निशकटिका। न केवलं तस्यामग्निकायो भवति। (अण्ण वेत्थत्ति) अन्योऽप्यत्र वायुकायो व्युत्क्रामति यत्राऽग्निस्तत्र वायुरिति कृत्वा कस्मादेवम् ? इत्याह – 'न विणेत्यादि'। भग० १६ श० १ उ०।

अंगारग- पुं० *[अङ्गारक]*
मङ्गलनामके तारग्रहभेदे, ठा० ६ ठा०। उव०। पण्हा०।
आद्ये महाग्रहे च। कल्प०। सूर० । चंद०भग०।
'दो इंगालगा'। ठा० २ ठा०।

अंगारडाह- पुं० *[अङ्गारदाह]*
अङ्गारा दह्यन्ते यत्र। यत्राऽङ्गाराणां दाहो भवति, तादृशे स्थाने, निसि० ३ उ०। आचा०।

अंगारपतावणा- स्त्री० *[अङ्गारप्रतापना]*
अङ्गारेषु प्रतापनाऽङ्गारप्रतापना। शरीरस्य शीतकालादौ अङ्गारेषु प्रतापनायाम्, पण्हा० अ० ५ ।

अंगारमद्दग- पुं० *[अङ्गारमर्दक]*
जीवाऽश्रद्धानतोऽङ्गाराणां मर्दनेनाऽङ्गारमर्दकेति प्रसिद्धिं गते रूद्रदेवाऽभिधे अभव्याऽऽचार्ये। आव०।

अंगाररासि- पुं० *[अङ्गारराशि]*
खदिराऽङ्गारपुञ्जे, सूय० १ श्रु० ५अ० १ उ०।आव०।आ०चू०।

अंगारवई- स्त्री० *[अङ्गारवती]*
धुन्धुमारनृपसुतायाम्, (तद्वक्तव्यता संवेगशब्दे वक्ष्यते)

अंगारसहस्स- न० *[अङ्गारसहस्र]*
लघुतराणामग्निकणानां सहस्रे, ठा० ८ ठा०।

अंगालसोल्लिय- त्रि० *[अङ्गारशूल्य]*
अङ्गारैरिव पक्वे, भग०११ श० ९ उ०।

अंगारायतण- न० *[अङ्गाराऽऽयतन]*
यत्राऽङ्गारपरिकर्म क्रियते,तस्मिन् गृहे,आचा०२श्रु०२अ० २उ०

अंगारिय- त्रि० *[अङ्गारित]*
विवर्णीभूते, आचा० २ श्रु० १ अ० ८ उ०।

अंगिरस- पुं० *[अङ्गिरस]*
गोतमगोत्रविशेषभूताऽङ्गिर:पुरुषाऽपत्ये, ठा० ७ ठा०।

अंगीकड- त्रि० *[अङ्गीकृत]*
स्वीकृते। ठा० ५ ठा०।

अंगुट्ठ- पुं० *[अङ्गुष्ठ]*
अङ्गौ पाणौ प्राधान्येन तिष्ठति, हस्ताऽवयवे, ठा० १० ठा०।

अंगुट्ठपसिण- न० *[अङ्गुष्ठप्रश्न]*
विद्याविशेषे, यथाऽङ्गुष्ठे देवताऽवतार: क्रियते, तत्प्रतिपादके प्रश्नव्याकरणानां नवमेऽध्ययने च, परमिदानींतने प्रश्नव्याकरण पुस्तके नेदमुपलभ्यते। ठा० १० ठा०।

अंगुल- पुं० *[अङ्गुल]*
अट्ठजवमज्झाओ से एगे अंगुले भग०३ श०७उ०।ज्यो०। ठा० से किं तं अंगुले ? अंगुले तिविहे पन्नत्ते। तंजहा – आयंगुले उस्सेहंगुले पमाणंगुले। ठा०

अंगुलपोहत्तिय- त्रि० *[अङ्गुलपृथक्त्विक]*
अङ्गुलमुच्छ्रयाऽङ्गुलं पृथक्त्वं हि द्विप्रभृतिरानवभ्य इति परिभाषा अङ्गुलपृथक्त्वं शरीरावगाहनामानमेषामस्तीति अङ्गुल पृथक्त्विका: अतोऽनेक-स्वरादितीक् प्रत्यय: ।जीवा०१ प्रति० अङ्गुलद्विकादिशरीरावगाहनामाने, पन्न० १ पद०।

अंगुलि- स्त्री० *[अङ्गुलि]*
करपादशाखायाम्, तं०। उव०।

अंगुलिकोश- पुं० *[अङ्गुलिकोश]*
अङ्गुलीनां रक्षार्थं ध्रियमाणे तदा-वरणे चर्मादौ, रा०। तद्धारणे। 'अंगुलिकोसे पणगं'। निसि०२ उ०।

अंगुलिज्जग- न० *[अङ्गुलीयक]*
अङ्गुल्याभरणविशेषे, । उव०। उपा०। आव०। कल्प०। आव०। आव०म०।

अंगुलिप्फोडण- न० *[अङ्गुलिस्फोटन]*
अङ्गुलीनां परस्परं ताडने, कढिकाकरणे च। तं०।

अंगुलिभमुहा- स्त्री० *[अङ्गुलिभ्रू]*
अङ्गुलीर्भ्रुवौ वा चालयत: कायो-त्सर्गस्थितिरूपे उत्सर्गदोषे।
अंगुलिभमुहाओ वि य, चालंतो तह य कुणइ उस्सग्गं।
आलावगगणणट्ठा, संठवणट्ठं च जोगाणं।१ । आव०५ अ०।

अंगुलिसत्थय – न० *[अंगुलिशस्त्रक]*
शस्त्रकोशविशेषः। निसी०

अंगुलीयग– न० *[अंगुलीयक]*
भूषणविधिविशेषः। जीवा०

अंगोवंग- नपुं० *[अङ्गोपाङ्ग]*
अङ्गानि शिरःप्रभृतीन्यष्टौ, उपाङ्गानि अङ्गावयवभूतान्यङ्गुल्या-दीनि, शेषाणि तत्प्रत्यवयवभूतानि अङ्गुलीपर्वरेखादीनि अङ्गो-पाङ्गानि। अङ्गानि च उपाङ्गानि च अङ्गोपाङ्गानि।अङ्गोपाङ्गस्य आदावसंख्येय इत्येकशेषः। इतरेतरयोगः। शिरःप्रभृतिषु, अङ्गुल्यादिषु, तत्पर्वरेखादिषु च। पन्न० २३ पद०।
नहकेसमंसु अंगुलिओट्ठा खलु अंगुवंगाणि। उत्त० ३ अ०।

अंगोवंगनाम- न० *[अङ्गोपाङ्गनामन्]*
अङ्गोपाङ्गनाम त्रिविधं मन्तव्यं तथाहि- औदारिकाङ्गोपाङ्गनाम वैक्रियाङ्गोपाङ्गनाम,आहारकाङ्गोपाङ्गनाम। तैजसकार्मणयोस्तु जीवप्रदेशसंस्थानानुरोधित्वात् नाऽस्ति अङ्गोपाङ्गसंभव इत्युक्तं त्रिविधमङ्गोपाङ्गनाम। पन्न०। आ० चू०।

अंचि- पुं० *[अञ्चि]*
गमने, भग० १५ श० १ उ०।

अंचि- पुं० *[आञ्चि]*
आगमने, भग० १ ५, श० १ उ०।

अंचअ-१ त्रि० *[आञ्चित]*
पूज्ये राजमान्ये पितृव्यादौ, वव० ४ उ०।
दात्रसन्धौ, निसि०२ उ०।

अंचअ-२ त्रि० *[आञ्चित]*
पञ्चविंशतितमे नाट्यभेदे, रा०। आव०म०। जंबू०।

अंचअ- ३ त्रि० *[आञ्चित]*
सकृद्गमने, भग० १५ श० १ उ०।

अंचिअंचिय- पुं० *[अञ्चिताञ्चिक]*
अञ्चिते सकृद्गते अञ्चितेन सकृद्गतेन वा देशेनाञ्चि पुनर्गमनम् अञ्चिताञ्चि। गतपूर्वदेशे तेन वा पुनर्गमने अञ्च्याञ्चि अञ्च्या गमनेन सह आञ्चिरागमनमञ्च्याञ्चि। गमागमे, 'णो कमइ, णो पक्कमइ अंचियंचियं करेइ'। भग० १ ५श० १ उ०। ठा०।

अंचिअरिभिय- न० *[अञ्चितरिभित]*
नाट्यभेदे, रा०। आव०म०।

अंचेइत्ता- अव्य० *[अंचयित्वा]*
उत्पाटयित्वेत्यर्थे, आव०म०। नाया०।

अंछ- धा० *[देशी०]*
आकर्षणे, । आव०म०। विशे०। भग०। कल्प०।

अंछण- *[देशी०]* आकर्षण, उव०। निसि० ।

अंजण-१ न० *[अञ्जन]*
नयनयोः कज्जलापादने, सूय०१ श्रु०९ अ०। तं०।
तप्तायः शलाकया नेत्रयोः दुःखोत्पादने, क्षारतैलादिना देहस्य म्रक्षणे च। सम०।
कज्जले, नाया० ९ अ०।
सौवीरादौ, सूय०२श्रु०१ अ०। जंबू०। आव०म०। उव० । जीवा० । पन्न०। आव०।
रसाञ्जने, दश० ३ अ०।

अंजण-२ न० *[अञ्जन]*
रत्नविशेषे, आव०म०।

अंजण- ३ न० *[अञ्जन]*
रत्नप्रभायाः खरकाण्डस्य दशमे भागे च। तद्दशयोजनशतानि बाहल्येन प्रज्ञप्तम्। ठा० १० ठा०।

अंजण-४ न० *[अञ्जन]*
वनस्पति-विशेषे, उव०। आव०म०।

अंजण-५ न० *[अञ्जन]*
चन्दसूर्याणां लेश्यानुबन्धचारिणां पुद्गलानं पञ्चमे पुद्गले, चंद० २० पाहु०। सूर०२० पाहु०।

अंजण-६ न० *[अञ्जन]*
मन्दरस्य पूर्वेण शीतोदाया महानद्या दक्षिणेन स्थिते वक्षस्कार पर्वतभेदे, ठा० ५ ठा०। ज०।
दो अंजणा। ठा० २ ठा०।

अंजण-७ न० *[अञ्जन]*
द्वीपकुमारेन्द्रस्य वेलम्बस्य तृतीये लोकपाले, भग० ३श० ६उ० उदधिकुमारेन्द्रस्य प्रभञ्जनस्य चतुर्थे लोकपाले, ठा० ४ ठा०

अंजण-८ पुं० *[अञ्जन]*
मन्दरस्य पुरतो रुचकवरपर्वते, सप्तमे कूटे च। ठा० ८ ठा०

अंजणई- स्त्री० *[अञ्जनिका]*
वल्लीभेदे, पन्न० १ पद०।

अंजणकेसिया- स्त्री० *[अञ्जनकेशिका]*
वनस्पतिविशेषे, आव०म० । जंबू०। रा०। पन्न०।

अंजणग-१ पुं० *[अञ्जनक]*
अञ्जनरत्नमयत्वादञ्जनाः। कृष्णवर्णत्वेन अञ्जनतुल्या अञ्ज-नकाः उपमाने कप्रत्ययः। जंबू० २ वक्ष०।
नन्दीश्वरद्वीपस्य चतुर्दिक्षु व०स्थितेषु पर्वतभेदेषु,ठा०४ ठा
दो अंजणा। ठा० २ ठा०।

अंजणग-२ पुं० *[अञ्जनक]*
वायुकुमारेन्द्राणां तृतीये लोकपाले, भग० ३ श० ८ उ०।

अंजणग- ३ पुं० *[अञ्जनक]*
वनस्पतिविशेषे, रा०।

अंजणगिरि- पुं० *[अञ्जनगिरि]*
कृष्णवर्णपर्वतविशेषे, नाया०८ अ०।
मन्दरपर्वते भद्रशालवने व्यवस्थिते चतुर्थे दिग्घस्तिकूटे, ठा० ८ ठा०।
तदधिपे देवे च। जंबू० ४ वक्ष०।

अंजणजोग- पुं० *[अञ्जनयोग]*
सप्तविंशकलाभेदे, कल्प०।

अंजणपुलण- पुं० *[अञ्जनपुलक]*
रत्नभेदे, रा०। आव०म०।
रत्नप्रभापृथिव्याः खरकाण्डस्य एकादशे भागे, ठा० १० ठा०
मन्दरस्य पूर्वे रुचकवरपर्वते व०स्थितेऽष्टमकूटे। ठा० ८ ठा०

अंजणरिट्ठ- पुं० *[अञ्जनरिष्ट]*
वायुकुमाराणां चतुर्थे इन्द्रे, भग० ३ श० ८ उ०।

अंजणसमुग्गग- पुं० *[अञ्जनसमुद्गक]*
सुगन्ध्यञ्जनाधारे, जीवा० ३ प्रति०। रा०।

अंजणसलागा- स्त्री० *[अञ्जनशलाका]*
अक्ष्णोरञ्जनाऽर्थं शलाकायाम्। सूय० १ श्रु० ५ अ०।

अंजणसिद्ध- पुं० *[अञ्जनसिद्ध]*
अक्ष्णोरञ्जनविशेषमक्षणेनाऽदृश्यतां गते, पिंड०। निसि०।

अंजणा- स्त्री० *[अञ्जना]*
तृतीयनरकपृथिव्याम्। जीवा० ३ प्रति०। ठा०।
जम्ब्वाः सुदर्शनाया अपरदक्षिणस्यां व्यवस्थितायां पुष्करिण्याम्। जंबू० ४ वक्ष०। जीवा०।

अंजणिया- स्त्री० *[अञ्जनिका]*
कज्जलाधारभूतायां नलिकायाम्। सूय० १ श्रु० ४ अ०।

अंजलि- स्त्री०पुं० *[अञ्जलि-पुं०]*
मुकुलितकमलाकारकरद्वयरूपे। जंबू० ३ वक्ष०।
हस्तन्यासविशेषे, रा०। भग०। चंद०।
दो वि हत्था मउलकमलसंठिया अंजली भण्णति।निसि०१ उ०
मुकुलितहस्तयोर्ललाटसंश्रये, 'एगेण वा दोहिं वा मउलिएहिं हत्थेहिं णिडालसंसितेहिं अंजली भण्णति'। निसि० ५उ०।
द्वयोर्हस्तयोरन्योन्यानन्तरिताङ्गुलिकयोः संपुटरूपतया एकत्र मीलने च। जीवा० ३ प्रति०। आव०म०।
प्रश्नादौ क्रियमाणे कायिकविनयभेदे,
अञ्जलिप्रमाणादौ, यदि पुनः कथमप्येको हस्तः क्षणिको भवति, तदैकतरं हस्तमुत्पा- ट्यनमः क्षमाश्रमणेभ्य इति वक्तव्यम्। वव०१ उ०। दश०।

अंजलिपग्गह-१ पुं० *[अञ्जलिप्रग्रह]*
हस्तजोडने, नाया० १ अ०।
अञ्जलिकरणरूपे विनयविशेषे, भग० १४ श० ३ उ०।

अंजलिपग्गह-२ पुं० *[अञ्जलिप्रग्रह]*
सम्भोगभेदे च। सम०। (संभोगशब्दे निरूपणम्)

अंजस्- न० *[अञ्जस्]*
प्रगुणे, न्याये, । विशे०।

अंजिय- त्रि० *[अञ्जित]*
कज्जलेन म्रक्षिते । निसि०१ उ०।

अंजु-१ त्रि० *[ऋजु]*
प्रगुणे, अकुटिले, 'अप्पणो य वियक्खाहिं अयमंजूहिं दुम्मइं'। आचा० १ श्रु० ५अ०।
मायाप्रपञ्चरहितत्वादवक्रे, 'अंजुधम्मं जहा तच्चं जिणाणं तं सुणेह मे' सूय० १ श्रु० ९अ०।
व्यक्ते, सूय० २ श्रु० १ अ०।
निर्दोषत्वात् प्रकटे, सूय० २ श्रु० ७ अ०।

अंजु-२ त्रि० *[ऋजु]*
संयमे प्रगुणे अव्यभिचारिणि। सूय०१ श्रु० १ अ०। आचा०।

अंजुआ- स्त्री० *[अञ्जुका]*
अरनाथस्य प्रथमशिष्यायाम्। सम०।

अंजू-१ स्त्री० *[अञ्जू]*
धनदेवसार्थवाहदुहितरि,(तद्वक्तव्यता विपाकश्रुते दुःखविपा-कानां दशमेऽध्ययने श्रूयते)। ठा०१० ठा०। विपा० अ०१०।

अंजू-२ स्त्री० *[अञ्जू]*
शक्रस्य चतुर्थ्यामग्रमहिष्यां च। ठा० ८ ठा०।

अंड- न० *[अण्ड]*
पिपीलिकादीनां डिम्बे, बुह० ४ उ०। आचा०।
चतुरिन्द्रियकीटविशेषनिर्वर्तितकोशाऽऽकारे, । विशे०।
काष्ठनिश्रितो जीवविशेषः। आचा०
ज्ञाताधर्मकथायाः प्रथमश्रुतस्कन्धस्य मयूराण्डकवक्तव्यता प्रतिबद्धे तृतीयेऽध्ययने। नाया० १ अ०। आव० ।पण्हा०। सम०। आव० चू०। ठा० १०, नाया० अ० ३।

अंडउड- न० *[अण्डपुट]*
स्वकीये अण्डके अण्डकस्य पुटम्। अण्डकस्य संबद्धदलद्वये, दशा० ९ अ०। सम०।

अंडक- न० *[अण्डक]*
जन्तुयोनिविशेषे, पण्हा० आश्र० २ द्वा०।

अंडकड- त्रि० *[अण्डकृत]*
अण्डाज्जाते, सूय० १ श्रु० १ अ० ३ उ०।

अंडप्पभव- त्रि० *[अण्डप्रभव]*
अण्डः प्रभव उत्पत्तिर्यस्य स तथा। अण्डादुत्पन्ने। जहा य अंडप्पभवा बलागा। उत्त० ३ अ०।

अंडय-१ पुं० *[अण्डज]*
अण्डाज्जायतेऽण्डजः। हंसादौ, खचरपञ्चेन्द्रिययोनिसंग्रहभेदे, भग० ७ श० ७ उ०। आचा०। विशे०।
'अंडया तिविहा पन्नत्ता। तंजहा- इत्थी पुरिसा नपुंसका' अण्डजास्त्रिविधा प्रज्ञप्तास्तद्यथा- स्त्रियः पुरुषा नपुंसकाश्च। जीवा० ३ प्रति०।
शकुनिगृहकोकिलसरीसृपादिषु, सूय० १ श्रु० ९अ०।
त्रसभेदेषु, सूय० १ श्रु० ७अ० । आचा०। दश०।
मत्स्यभेदेषु च। ठा० ३ ठा०।

अंडय-२ पुं० *[अण्डज]*
अण्डेभ्यो हंसाद्यण्डकेभ्यो यज्जायते, तदण्डजम्। *भेदे। न०।
यथा क्वचित् पट्ट*म्। उत्त० २६ अ०।
पञ्चेन्द्रियहंसगर्भसंभवम्। अनु०। विशे०। आव०म०।
शणकादिवस्त्रे, सूय० २ श्रु० २ अ०।

अंडय- ३ पुं० *[अण्डज]*
प्रतिबन्धभेदे च। अण्डजो हंसादिर्ममाऽयमित्युल्लेखेन वा प्रतिबन्धो भवति, अथवा अण्डकं मयूर्यादीनामिदं रमणक मयूरादि कारणमिति प्रतिबन्धः स्यादित्यथवा अण्डजं पट्ट*जमिति वा। ठा० ९ ठा०। सूय०।

अंडसुहुम- न० *[अण्डसूक्ष्म]*
अण्डमेव सूक्ष्मम्। मक्षिका-कीटिका -गृहकोकिला-ब्राह्मणी-कृकलाशाद्यण्डकरूपे सूक्ष्मभेदे, सूय० १ श्रु० ९अ०। दश०।

अंडु- न० *[अण्डु]*
काष्ठमयेषुलोहमयेषु वा हस्तयो-पादयोर्वा बन्धनविशेषेषु उव०

अंत-१ पुं० *[अन्त]*
अवसाने, विशे०। ठा०।
यस्मात् पूर्वमस्ति, न परं सोऽन्तः। अनु०।
पर्यन्ते, आव०म०। सूय०।
परिसमाप्तौ, विशे०।
पारे, नाया० १ अ०।
अवसानं गते, विशे०।
'दोहिं अंतेहिं अदिस्समाणो' आचा० १ श्रु० ३ अ०।

अंत-२ पुं० *[अन्त]*
समीपे, वव० १ उ०। नं०। ठा०।

अंत- ३ पुं० *[अन्त]*
परिच्छेदे, निर्णये, । ठा० ३ठा०। पन्न० ।

अंत-४ पुं० *[अन्त]*
देशे, एकान्तं विजनमन्तं देशमवक्रामन्ति। भग० ३श० २उ०।

अंत-५ पुं० *[अन्त]*
परमकाष्ठायाम्, सूय० १ श्रु० १५ अ०।

अंत-६ पुं० *[अन्त]*
अन्तहेतुत्वादन्ते रागद्वेषयोश्च। आचा० १ श्रु० ३ अ०।

अंत-७ पुं० *[अन्त]*
जीर्णे, अव०हरणीये, त्रि०। निसि०१ उ०।
क्षये, भेदे, व०च्छेदे, कल्प०।

अंत-८ न० *[अन्त्र]*
अन्त्र्यते देहो बध्यतेऽनेनेति। अतिबन्धने, देहबन्धने, नाडीभेदे, सूय०।
उदरमध्याऽवयवविशेषे च। तं०।

अंत-९ न० *[अन्त्र]*
प्रतिबोधार्थं भगवता वीरेण दृष्टे चतुर्थे स्वप्ने च। आव०म० ।

अंत-१० न० *[आन्त]*
अरसतया सर्वधान्यान्तवर्तिनि वल्लचणकादौ, भग०९ श० ३३ उ०। ठा०।
'णिप्पावमाइ अंतं' निष्पावा वल्लाश्चणकाः प्रतीताः आदि-शब्दात् कुल्माषादिकं च आन्तमित्युच्यते। बुह० १ उ०।
नाया०।

अंतक- पुं० *[अन्तक]*
मृत्यौ, 'समागमं कंखति अंतकस्स'। सूय० १ श्रु० ७ अ०।
पर्यन्ते, । सूय० १ श्रु० २अ०।
अन्तर्वर्तिनि च। सूय० १ श्रु० १५ अ०।

अंतकम्म- न० *[अन्तकर्मन्]*
अचलकर्मणि, उव०।

अंतकर- त्रि० *[अन्तकर]*
अन्तस्य करः। संसारस्य तत्कारणस्य वा क्षयकारिणि,
। सूय० १ श्रु० १५ अ०। आव०म० । भग०। ठा०।
भवच्छेदकरः। भग०।
कर्मणः संसारस्य वा अंतकरः। आव० ।

अंतकरभूमि- स्त्री० *[अन्तकरभूमि]*
अन्तं भवस्य कुर्वन्तीति अन्तकराः, तेषां भूमिः कालः, कालस्य चाऽऽधारत्वेन कारणत्वाद् भूमित्वेन व्यपदेशः। मुक्तिगामिनां काले, सा द्विधा युगान्तकरभूमिः पर्यायान्त-करभूमिश्च। जंबू० २ वक्ष०।

अंतकाल- पुं० *[अन्तकाल]*
मरणकाले, सूय० १ श्रु० ५ अ०।

अंतकिरिया-१ स्त्री० *[अन्तक्रिया]*
अन्तोऽवसानं, तच्च प्रस्तावादिह कर्मणामवसातव्यमन्यत्रा-ऽऽगमे अन्तक्रियाशब्दस्य रूढत्वात् तस्य क्रिया करणमन्त-क्रिया। कर्माऽन्तकरणे, मोक्षे, कृत्स्नकर्मक्षयात् मोक्ष इति वचनात्। पन्न० १५ पद०।

अंतकिरिया-२- स्त्री० *[अन्त्यक्रिया]*
अन्त्या च सा पर्यन्तवर्तिनी क्रिया अन्त्यस्य वा कर्माऽन्तस्य क्रियाऽन्त्यक्रिया। कृत्स्नकर्मक्षयलक्षणायां मोक्षप्राप्तौ, भग०१ श०२ उ०। आव०म०। सम०।

अंतकुल- न० *[अन्त्यकुल]*
शूद्रकुले, कल्प०। आव०म० ।

अंतक्खरिया- स्त्री० *[अन्त्याक्षरिका]*
ब्राह्म्यालिपेर्नवमे लेख्यविधाने, पन्न० १ पद०।
त्रिषष्टितमकलायाञ्च०। कल्प०।

अंतग- त्रि० *[अन्तक]*
विनाशकारिणि, सूय० १ श्रु० ९ अ० ।

अंतग- त्रि० *[अन्तग]*
अन्तं गच्छत्यन्तगः। दुष्परित्यजे, 'चिच्चा णं अंतगं सो य निरवेक्खो परिव्वए'। सूय० १ श्रु० ९ अ०।

अंतगड- पुं० *[अन्तकृत्]*
अन्तो विनाशः स च कर्मणः तत्फलस्य वा संसारस्य कृतो यैस्तेऽन्तकृताः। तीर्थकरादिषु, सम०। ठा०। अंत०। तं०। सूय०। अनु०। कल्प०।

अंतगडदसा- स्त्री० *[अन्तकृद् दशा]* । #
अन्तो भवान्तः कृतो विहितो यैस्तेऽन्तकृतास्तद्वक्तव्यता प्रतिबद्धा दशा दशाध्ययनरूपा ग्रन्थपद्धतय इति अन्तकृद्दशा। इह चाष्टौ वर्गा भवन्ति, तत्र प्रथमवर्गे दशाध्ययनानि इति तानि शब्दव्युत्पत्तेर्निमित्तीकृत्यान्तकृद्-दशाः। अष्टमऽङ्ग। अंत०। ठा०। सम०। पा०। नं०। अनु०।

अंतगत- न० *[अन्तगत]*
अन्तशब्दः पर्य्यन्तवाची, यथा वनान्ते। इत्यत्र ततश्चान्ते पर्यन्ते गतं व०स्थितमन्तगतम्।
अनुगामिकाऽवधिभेदे, इह अर्थत्रयव्याख्या अन्ते गतम् आत्मप्रदेशानां पर्यन्तेस्थितमन्तगतम् । नं०

अन्तगत- त्रि० *[अन्त्रगत]*
अन्त्रान्तर्वर्त्तिनि, सूय० २ श्रु० १ अ०।

अंतचरय- पुं० *[आन्तचरक]*
पार्श्वचारिणि, अभिग्रहविशेषधारके भिक्षाके, ठा० ५ ठा०। यो हि अभिग्रहविशेषात्क्षेत्रान्तरेषु चरति। ठा० ४ ठा०।

अंतचारि- पुं० *[आन्तचारिन्]*
अन्तेन भुक्तावशेषेण वल्लादिप्रकृष्टेन चरन्तीति। अभिग्रह-विशेषधारके भिक्षाके, ठा० १० ठा०। सूय०।
पार्श्वचारीति । ठा०३४२।

अंतजीवि- पुं० *[आन्तजीविन्]*
आन्तेन जीवितुं शीलमाजन्माऽपि यस्य स तथा। अभिग्रह-विशेषधारके भिक्षौ, ठा० ५ ठा०। सूय०।

अंतद्धाण- न० *[अन्तर्धान]* तिरोधाने,
अञ्जनविद्यादिनाऽदृश्यीभवने, निसि० १ उ०।
व्यवधाने च। वव० २ उ०।

अंतद्धाणपिंड- पुं० *[अन्तर्धानपिण्ड]*
आत्मानमन्तर्हितं कृत्वा गृह्यमाणे पिण्डे 'अप्पाणं अंतरहितं करेत्ता जो पिंडं गेण्हइ सो अंतद्धाणपिंडो भण्णति जो अंत-द्धाणपिंडं भुंजइ, भुंजंतं वा साइज्जइ' आज्ञादयोऽत्र दोषाः चतुर्लघु प्रायश्चित्तम्। निसि० २ उ०।

अंतद्धाणी- स्त्री० *[अन्तर्धानिका]*
अन्तर्धानकारिणी विद्याविशेषे, सूय० २ श्रु० २ अ०।

अंतद्धाभूय- त्रि० *[अन्तर्धाभूत]*
नष्टे, 'नट्ठेत्ति वा विगएत्ति वा अंतद्धाभूतेति वा एगट्ठा'।
आ० चू० १ अ०।

अंतब्भाव- पुं० *[अन्तर्भाव]*
प्रवेशे, विशे०।

अंतर- न० *[अन्तर]*
मध्ये, आचा० १ श्रु० ६ अ०।
सूरविशेषे, पानीयान्तरमिति *धारैर्यद् व्यपदिश्यते।
नाया०१ अ
व्यवधाने, जंबू० १ वक्ष०। ठा०।
अन्तं राति ददाति राक इति अंतर। वि०। तं०।
अवकाश, भग० ७ श० ८ उ०। सूय०। निसि०।

अंतरंग- पुं० *[अन्तरङ्ग]*
अन्तरङ्गबहिरङ्गयोरन्तरङ्ग एव विधिर्बलवान्। आव०म० ।
अभ्यन्तरे। तं०। विशे०।)

अंतरंजिया- स्त्री० *[अन्तरञ्जिका]*
नगरीभेदे, यत्र भूतगृहं चैत्यं बलश्री राजा, त्रैराशिकमतोत्पत्तिः
। उत्त० ३ अ०। वि० ।आव०म० ।कल्प० ।ठा०। आ०चू०।

अंतरंडगगोलिया- स्त्री० *[अन्तराण्डकगोलिका]*
अण्डकोशाभ्यन्तरस्य गोलिकायाम्। महा० ४ अ०।

अंतरकंद- पुं० *[अन्तरकन्द]*
अनन्तजीवात्मकवनस्पतिभेदे, पन्न० १ पद०।

अंतरकप्प- पुं० *[अन्तरकल्प]*
चारित्राणामन्तरस्वरूपे कल्पभेदे। पंच० चू०

अंतरगय- त्रि० *[अन्तर्गत]*
मध्यगते, पण्हा० ३ अ०।

अंतरगामंमि- त्रि० *[अंतरगामम्मि]*
अपान्तराल एव यो ग्रामस्तस्मिन् । ओह० ।

अंतरगिह- न० *[अन्तरगृह-गृहान्तर]*
गृहस्य गृहयोर्वा अन्तरं। राजदन्तादित्वात् अन्तरशब्दस्य पूर्वनिपातः। गृहस्य गृहयोर्वा अन्तराले, बृह० ३ उ०।

अंतरजाय- न० *[अन्तरजात]*
भाषाद्रव्यजातभेदे, यानि द्रव्याणि अन्तराले समश्रेण्यामेव निसृष्टानि तानि भाषापरिणामं भजन्ते। तान्यन्तरजातमुच्यते। आचा० २ श्रु० ४ अ०।

अंतरणई- स्त्री० *[अन्तरनदी]*
क्षुद्रनदीषु। यत्र यावत्योऽन्तरनद्यस्तत्प्रतिपादयति -ठा० ३ ठा०

अंतरदीव- पुं० *[अन्तरद्वीप]*
अन्तरशब्दो मध्यवाची अन्तरे लवणसमुद्रस्य मध्ये द्वीपा अन्तरद्वीपाः। पन्न० १ पद०।
लवणसमुद्रमध्ये अन्तरेऽन्तरे द्वीपः। जीवा०
अथवा अन्तरं परस्परं विभागस्तत्प्रधाना द्वीपा अन्तरद्वीपाः। एकोरूकादिषु अष्टाविंशतिविधद्वीपभेदेषु। ठा० ४ ठा०।

अंतरदीवग- पुं० *[अन्तरद्वीपग]*
अन्तरद्वीपेषु गता अन्तरद्वीपगाः। पन्न० १ पद०।
तेषु जाता वा अन्तरद्वीपजाः। नं०।
एकोरुकाद्यन्तरद्वीपवासिगर्भव्युत्क्रातिकमनुष्यभेदेषु, ते च एकोरुकादिनामानोऽष्टाविंशतिर्दाक्षिणात्यौत्तराहभेदेन भिद्य-मानाः षट्पञ्चाशत् । ठा०। आव०म० ।

अंतरदीविया- स्त्री० *[आन्तरद्वीपिका]*
अन्तरे मध्ये समुद्रस्य द्वीपा ये ते तथा तेषु जाता आन्तर-द्वीपास्त एवान्तरद्वीपिकाः। अन्तरद्वीपवास्तव्यमनुष्यस्त्रीषु, ठा० ३ ठा०। जीवा०।

अंतरद्धा- स्त्री० *[अन्तरद्धा]*
अन्तरकाले, आचा० १ श्रु० ८ अ०।

अंतरद्धा - स्त्री० *[अन्तर्धा]*
अन्तर्धाने, स्मृतेर्भ्रंशोऽन्तर्धानं, किं मया परिगृहीतं ? कया मर्यादया व्रतमित्येवमननुस्मरण मित्यर्थः। आव० ६ अ०।

अंतरप्पा- पुं० *[अन्तरात्मन्]*
अन्तर्मध्यरूप आत्मा शरीररूप इति। भग०२०श० २उ० जीवे, पण्हा० १ अ०।

अंतरभासा- स्त्री० *[अन्तरभाषा]*
गुरोर्भाषमाणस्य विचालभाषणे, । आव० २ अ०।
विहरन् साधुः चौरैः पृष्टः आयरिए उवज्झाए वा संभासेज्ज वा वियागरेज्ज वा आयरियउवज्झायस्स भासमाणस्स वा वियाग-रेमाणस्स वा णो अंतराभासं करेज्जा। आचा० २ श्रु० ३अ०।

अंतरहिय- त्रि० *[अन्तर्हित]*
व्यवहिते,'अणंतरहियाए पुढवीए' ।आचा०२श्रु०१अ० ।निसि०

अंतरा- अव्य० *[अन्तरा]*
अन्तराले, सूय० १ श्रु० ८ अ०। विशे०। आचा०।
मध्ये, 'इच्छाइयारमागंतु अंतराय विसीयइ'। सूय० श्रु० ३अ०
अर्वागर्थे च। कल्प०।

अंतराइय- न०पुं० *[अन्तराय]*
अन्तरा दातृप्रतिग्राहकयोरन्तर्भाण्डागारिकवद् विघ्नहेतुतया अयते गच्छतीत्यन्तरायम्। उत्त० ३३ अ०।
अन्तर्मध्ये दातृप्रतिग्राहकयोः विचाले आयातीत्यन्तरायः। जीवस्य दानादिविघ्नकारकेऽष्टमे कर्मभेदे,यथा-राजा कस्मैचिद् दातुमुपदिशति, तत्र भाण्डागारिकोऽन्तराले विघ्नकृद् भवति, तदन्तरायकर्माऽष्टमम् भवति। उत्त० ३३ अ०।
'जह राया दाणाइं, न कुणइ भंडारिए पडिकूलम्मि। एवं जेणं जीवो, कम्मं तं अंतरायंति'।। ठा०।
विघ्ने, सूय० १ श्रु० ११ अ०।
विघ्नकरणे, ठा०४ ठा०।
व०च्छेदे, 'जे अंतराअं चेएइ'। सम०।
शक्त्यभावे च। 'नन्नत्थ अंतराएणं परगेहे णिसीयए'। सूय० १ श्रु० ९ अ०।

अंतराइय- न० *[आन्तरायिक]*
विघ्ने, पण्हा० ३ अ०।
बहुप्रत्यवाये, आचा० १ श्रु० ६ अ०।

अंतरापह- पुं० *[अन्तरापथ]*
विवक्षितस्थानयोरन्तरालभागे, भग०२ श०१ उ०।

अंतरायबहुल- त्रि० *[अन्तरायबहुल]*
विघ्नप्रचुरे, तं०।

अंतरावण- पुं० *[अंतरापण]*
अन्तरे ग्रामादीनामर्द्धपथे आपणाः अन्तरापणाः। पण्हा० ३अ०।
राजमार्गप्रभृतिमध्यभागवर्तिषु हट्टेषु, विपा० १ श्रु० ३ अ०।
वीथीषु हट्टमार्गेषु, बृह० १ उ०।
'अंतरावणाओ घडपडए गिण्हंति' परिखोदकमार्गान्तराल-वर्तिनो हट्टात् कुम्भकारसम्बन्धिन इत्यर्थः। नाया० १२ अ०।

अंतरावणगिह- न० *[अन्तरापणगृह]*

गृहविशेषे, तद्यथा –

अह अंतरावणो पुण, वीही सा एगओ व दुहओ वा।

तत्थ गिहं अंतरावण-गिहं तु सयमावणो चेव।।

अथेत्यानन्तर्ये अन्तरापणो नाम वीथी हट्टमार्ग इत्यर्थः।

सा एकतो वा एकपार्श्वेन द्वाभ्यां वा पार्श्वाभ्यां भवेत्, तत्र यद्गृहं, तदन्तरापणगृहमुच्यते। बुह० १ उ०।

अंतराइयदोस– पुं० अन्तरायिकदोष],

अन्तर्भवो दोषः। आव०।

अंतराणि– न० *[अन्तराणि]*

उत्कर्षापकर्षात्मकविशेषरूपाणिनिवासभूतानि वा गिरिकन्दर -विवरादीनि । उत्त० ७०१।

अंतरावास- पुं० *[अन्तरवर्ष]*

अन्तरमवसरो वर्षस्य वृष्टेर्यत्रासावन्तरवर्षः। वर्षाकाले, भग० १५ श० १ उ०।

अंतरावास- पुं० *[अन्तरावास]*

अन्तरेऽपि जिगमिषतः क्षेत्रमप्राप्याऽपि यत्र सति साधुभिः अवश्यमावासो विधीयते, सोऽन्तरावासः। वर्षाकाले। भग० १५ श० उ०।

'अट्ठिये गामं नीसाए पढमं अंतरावासं उवागए'। कल्प०।

अंतरिक्ख-१ न० *[अन्तरीक्ष]*

अन्तर्मध्ये ईक्षा दर्शनं यस्य तदन्तरीक्षम्। भग० १७ श० १० उ०।

आकाशे, विशे०।

'अंतलिक्खत्ति णं बया, गुज्झाणुचरियत्ति य'। दश० ७ अ०

अंतरिक्ख-२ न० *[अन्तरिक्ष]*

अन्तरिक्षमाकाशं तत्र भवमान्तरिक्षम्। गन्धर्वनगरादौ, ठा० ८ ठा०। उत्त०।

मेघादिके, । सूय० २० श्रु० २ अ०।

ग्रहाणामुदयास्तादिपरिज्ञानात्मके, कल्प०।

उल्कापातधूमकेतुप्रमुखाणामुदयविचारविद्यालक्षणे, । उत्त० १५ अ० ।

आकाशप्रभवग्रहयुद्धभेदादिभावफलनिवेदिके वा चतुर्थे महा-निमित्तशास्त्रे, सम०।

अस्य सूत्रं सहस्रप्रमाणं, वृत्तिर्लक्षप्रमाणा, वार्तिकं कोटि-प्रमाणम्। सम० । आव०।

अंतरिक्खजाय- त्रि० *[अन्तरिक्षजात]*

स्कन्धमञ्चकप्रासादादौ, भुव उपरिवर्तिपदार्थजाते, आचा० २ श्रु० ५ अ०।

अंतरिक्खपडिवण्ण- त्रि० *[अन्तरिक्खप्रतिपन्न]*

आकाशगते, उपा० २ अ०। जंबू०।

अंतरिक्खोदय- न० *[अन्तरिक्षोदक]*

अन्तरिक्षे उदकमन्तरीक्षोदकम्। वर्षोदके, निसि० १ उ०।

यज्जलमाकाशात्पतदेव गृह्यते। उपा० १ अ०।

अंतरिज्ज- न० *[अन्तरीय]*

शय्याया अधस्तने वस्त्रे च। 'अंतरिज्जं णाम णियंसणं अहवा अंतरिज्जं णाम जं सेज्जाए हेट्ठिल्लं पोत्तं। निसि० १५ उ० । आचा० ।

अंतरिज्जिया- स्त्री० *[अन्तरीया]*

स्थविरात्कामर्द्धेर्निर्गतस्य वेषपातित (वेसवाडिय)गणस्य तृतीय शाखायाम्, कल्प०।

अंतरिय- त्रि० *[अन्तरित]*

व्यवहिते, विशे०। आव०म० ।

अंतरिया- स्त्री० *[अन्तरिका]*

अन्तस्य विच्छेदस्य कारणमन्तरिका। विवक्षितवस्तुनः समाप्तौ 'झाणंतरियाए वट्टमाणस्स' आरब्ध ध्यानस्य समाप्तिरपूर्व-स्यानारम्भणमित्यर्थः। जंबू० २ वक्ष०।

अंतरिया- स्त्री० *[आन्तरिका]*

अन्तरे, व्यवधाने, सूर० १० पाहु०। चंद० १० पाहु०।

लघ्वन्तरे च। रा०।

लघ्वन्तररूपा। जीवा०

अंतरुच्छुय- पुं० *[अन्तरिक्षुक]*

इक्षुपर्वमध्ये, आचा०२ श्रु०१ अ०।

'उभयोपेरुरहियं अंतरुच्छुअं होति'। निसि०१६ उ०।

अंतरेण- अव्य० *[अन्तरेण]*

विनार्थे च। उत्त० १ अ०।

आहारमंतरेण नाम आहाराभावेन। निसि०१ उ०।

अंतव- त्रि० *[अन्तवत्]*

अन्तोऽस्यास्तीति, अन्तवान्। परिमिते, अन्तवान् लोकः सप्त द्वीपाः वसुंधरेति परिमाणोक्तेस्ताद्दक्परिमाणेनेत्यर्थः। सूय० १ श्रु० १ अ०।

अंतवाल- पुं० *[अन्तपाल]*

अन्तं तच्चक्रिण आदेश्यदेशसम्बन्धिनं पालयति उपद्रवादिभ्य इत्यन्तपालः।

पूर्वदिगादिदेशलोकानां देवादिकृतसमस्तोपद्रव निवारके, जंबू० ३ वक्ष०। आव० म०।

अंतविकड्ढियंतमाल- त्रि० *[अन्तविकर्षितान्त्रमाल]*

श्रृगालादिभिरुत्पाटितोदरमध्यावयवे, तं०।

अंतसुह- न० *[अन्तसुख]*
परिणामसुखे, 'मासैरष्टभिरह्वा च पूर्वेण वयसाऽऽयुषा।तत् कर्त्तव्यं मनुष्येण, यस्यान्ते सुखमेधते'। सूय० १ श्रु० ४अ०।

अंतसो- अव्य० *[अन्तशस्]*
अन्त-शस् निरवशेषत इत्यर्थे, । सूय० १ श्रु० ८ अ०।
विपाककाले इत्यर्थः। सूय० १ श्रु० ८ अ०।
यावज्जीवमित्यर्थे, 'मणसा वयसा चेव कायसा चेव अंतसो'। सूय० १ श्रु० ११ अ०।
कथञ्चित्कार्य्यनिस्तारे, 'भत्तपाणे अ अन्तसो' भक्ते पाने चान्तशः सम्यगुपयोगवता भाव्यमिति। सूय० १ श्रु० १ अ०।

अंताहार- पुं० *[अन्त्याहार]*
अन्त्ये भवमन्त्यं जघन्यधान्यं वल्लादि आहारो यस्य। कृत-रसपरित्यागे, उव०। सूय०। ठा०।

अंति- त्रि० *[अन्तिन्]*
अन्तो जात्यादिप्रकर्षपर्यन्तोऽस्यास्तीत्यन्ती। जात्यादिभिरुत्तम-तया पर्य्यन्तवर्त्तिनि, ठा० १० ठा०।

अंतिअ- न० *[अन्तिक]*
समीपे, तं०। सूय०। उत्त०। ठा०। विशे०। उत्त०।
बुद्धाणं अंतीए ।उत्त०१अ० ।आव०म० ।निसि० ।भग०। रा०
पर्य्यवसाने, 'अह भिक्खू गिला-एज्जा आहारस्सेव अंतिया'। आचा० १ श्रु० ८ अ०।
पार्श्वे च 'देवानंदाए माहणीए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा' ।कल्प०
अन्तोऽस्यास्तीति अन्तिकोऽन्ते वा चरतीत्यन्तिकः। पर्य्यन्त-वासिनि, सूय० २ श्रु० २ अ०।

अंतिम- त्रि० *[अन्तिम]*
अन्ते भवमन्तिमम्। चरमे, ठा० १ ठा०।
यतः परं न किञ्चिदस्ति। विशे०।

अंतिमराइया- स्त्री० *[अन्तिमरात्रिका]*
अन्तिमाऽन्तिमभागरूपाअवयवे समुदायोपचारात् सा चासौ रात्रिका चान्तिमरात्रिका। रात्रेरवसाने, ठा० १० ठा०। भग०।

अंतिमसंघयणतिग- न० *[अन्तिमसंहननत्रिक]*
अर्द्धनाराचसंहननकीलिकासंहननसेवार्तसंहनरूपे संहननत्रिके, कल्प०।

अंतिमसारीरिय- त्रि० *[अन्तिमशारीरिक]*
अन्ते भवमन्तिमं चरमं तच्च तच्छरीरं चेत्यन्तिमशरीरं तत्रभवा अन्तिमशारीरिकी। चरमदेहभवेषु क्रियादिषु, ठा० १ ठा०।

अंतेउर- न० *[अन्तःपुर]*
अवरोधे, राजस्त्रीणां निवासगृहे, रा०। नाया०।
'चिय अंतेउर घरदारपवेसी'। उव०।

अंतेउरपरिवारसंपरिवुड- त्रि० *[अन्तःपुरपरिवारसंपरिवृत]*
अन्तःपुरं च परिवारश्च अन्तःपुरलक्षणो वा परिवारो यः सः। ताभ्यां तेन वा संपरिवृतः। अन्तःपुरलक्षणेन परिवारेण अन्तःपुरेण परिवारेण वा संपरिवृते, नाया० ८ अ०।

अंतेउरिया- स्त्री० *[आन्तःपुरिकी]*
अन्तःपुरे विद्या आन्तपुरिकी। रोगिप्रागुण्यकारके विद्याभेदे, यया आतुरस्य नाम गृहीत्वा आत्मनोऽङ्गमपमार्जयति आतुरश्च प्रगुणो जायते सा आन्तः-पुरिकी। वव० ५ उ०।

अंतेवासि- पुं० *[अन्तेवासिन्]*
अन्ते समीपे वस्तुं चारित्रक्रियायां वस्तुं शीलं स्वभावो यस्येत्यन्तेवासी। दशा० ४ अ०।
अन्ते गुरोः समीपे वस्तुं शीलमस्येत्यन्तेवासी। शिष्ये, ठा०। चंद०। जंबू०। सूर०। रा०। भग०।

अंतो- अव्य० *[अन्तर्]*
मध्ये, दशा० २ अ०।
'अंतो पडिग्गहगंसि'। आचा० २ श्रु० ६ अ०। ठा०। नाया०। पण्हा०। आव०। सूय०।
'एवामेव मायी मायं कट्टु अंतो अंतोज्झियाइ' अन्तरन्तःक्रियया ध्मायन्ति इन्धनैर्दीप्यन्ते। ठा० ८ ठा०।

अंतोअंत- पुं० *[अन्तोपान्त]*
सान्तमध्ये, 'तुमं चेव णं संतियं वत्थं अंतोअंतेण पडिलेहिस्सामि' त्वदीयमेवाहं वस्त्रमन्तोपान्तेन प्रत्युपेक्षितं गृह्णीयाम्। अन्तः सहितमन्तोपान्तकर पडिलेह्यादि ग्रहणकरे, आचा० २ श्रु० १ अ०।

अंतोकरण- न० *[अन्तःकरण]*
तच्चान्तःकरणं स्मृतिप्रमाण-वृत्तिसंकल्पविकल्पाहंवृत्त्याकारेण चित्तबुद्धिमनोऽहङ्कारशब्दैर्व्यवह्रियते। नं०।

अंतोखरियत्ता- स्त्री० *[अन्तःखरिका]*
नगराभ्यन्तरवेश्यात्वे, विशिष्टवेश्यात्वे च। 'दोच्चं पि रायगिहे नयरे अंतोखरियत्ताए उववज्जिहित्ति' ।भग० १५ श० १ उ०।

अंतोगिरिपरिरय- पुं० *[अन्तर्गिरिपरिरय]*
गिरेरन्तः परिक्षेपे, जीवा० ३ प्रति०।

अन्तोजल- न० *[अन्तर्जल]*
जलाभ्यन्तरे, बुह० ६ उ०।

अंतोणाय- त्रि० *[अन्तर्नाद]*
हृदये सदुःखमारटति। आव० ४ अ०।
अन्तोनादं, हृदयमदुःखमारसन्। आव०

अंतोणियसणी- स्त्री० *[अन्तर्निवसनी]*
निर्ग्रंथ्युपकरणविशेषः। ओह०।

आर्याणामौघिकोपधिभेदे, तत्स्वरूपम्:-अन्तर्निवसनी पुनरुपरि कटिभागादारभ्याधोऽर्धजङ्घा यावद् भवति सा च परिधानकाले लीनतरा परिधीयते मा भूदनावृता जनोपहास्येति'
बुह० ३ उ०। निसि० । पंच० चू०।

अंतोदहणसील- त्रि० *[अन्तर्दहनशील]*
हृदयस्य दुःखाग्निना दाहके फुंफकः करीषाग्निस्तद्वत् अन्तर्दहन -शीलाः पुरुषाणामन्तर्दुःखाग्निना ज्वालनत्वात्।उक्तं च- पुत्रश्च मुर्खो विधवा च कन्या, शठं च मित्रं चपलं कलत्रम्। विलास कालेऽपि दरिद्रता च, विनाऽग्निना पञ्च दहन्ति कायम्। तं०

अंतोदुट्ठ- पुं०न० *[अन्तर्दुष्ट]*
लुतादिदोषतो नवहीराद्यभावेन सौम्यत्वात् अभ्यन्तरदोषयुते व्रणभेदे, शठतया संवृताकारत्वाद् हृदयदुष्टे पुरुषभेदे च।
ठा० ४ ठा०।

अंतोधूम- पुं० *[अन्तर्धूम]*
अभ्यन्तरधूमे, गृहादिनिरुद्धधूमे, आव० ४ अ०।

अंतोमज्झोवसाणिय- पुं० *[अन्तर्मध्यावसानिक]*
लोकमध्यावसानिकाख्ये अभिनयभेदे, नाट्यकुशलेभ्योऽयं विशेषतो वेदितव्यः। रा०।

अंतोमुह- न० *[अन्तर्मुख]*
अभ्यन्तरद्वारे, । बुह० १ उ०।

अंतोमुहुत्त- न० *[अन्तर्मुहूर्त]*
मुहूर्त्तस्य घटिकाद्वयलक्षणस्य कालविशेषस्यान्तर्मध्येऽन्तर्मुहूतं निपातनादेवात्र अन्तःशब्दस्य पूर्वनिपातः। नं०।
भिन्नमुहूर्त्ते, आव० ५ अ०। भग० । उत्त० ।

अंतोलित्त- त्रि० *[अन्तर्लिप्त]*
अन्तर्मध्ये लिप्तमन्तर्लिप्तम्। मध्ये लेपेनोपदिग्धे, ।बुह०१ उ०

अंतोवट्ट- त्रि० *[अन्तर्वृत्त]*
मध्ये वृत्तसंस्थानसंस्थिते, ते णं णरगा अंतोवट्टा बहिं चउरंसा' बाहल्यमङ्गीकृत्यान्तर्मध्ये वृत्ता। सूय० २ श्रु० २ अ०।

अंतोवाहिणी- स्त्री० *[अन्तर्वाहिनी]*
मन्दरस्य पश्चिमे शीतोदाया महानद्या दक्षिणे प्रवहन्त्यामन्तर-नद्याम्, ठा० ३ ठा०। जंबू०४ वक्ष०

अंतोसल्ल- त्रि० *[अन्तःशल्य]*
अन्तर्मध्ये शल्यं यस्य अदृश्यमानमित्यर्थः तत्तथा। बहिरनुप-लक्ष्यमाणे व्रणभेदे, ठा० ४ ठा०।
अनुद्धततोमरादौ, भग० २ श० ५ उ०।
अन्तर्मध्ये मनसीत्यर्थः। शल्यमिव शल्यमपराधपदं यस्य सोऽन्तः शल्यः। अभि-मानादिभिरनालोचितातिचारे, सम० ५१ ।

अंतोसल्लमयग- त्रि० *[अन्तःशल्यमृतक]*
अनुद्धतभावशल्येषु मध्यवर्त्तिभल्लादिशल्येषु वा सत्सु मृतेषु, । उव०।

अंतोसल्लमरणे– त्रि० [अन्तःशल्यमरणम्]
अन्तः शल्यस्य द्रव्यतऽनुद्धततोमरादेः, भावतः सातिचारस्य यन्मरणं तत्। भग०। सम० ।

अंदू- स्त्री० *[अन्दू]*
निगडे, 'अंदू सुपक्खिप्पविहत्ते देहे'। सूय० १ श्रु० ५ अ०।

अंदोलग- पुं० *[आन्दोलक]*
यत्रागत्य मनुष्या आत्मानमान्दोलयन्ति ते आन्दोलकाः। हिण्डोल इति लोकप्रसिद्धेषु, जीवा० ३ प्रति०। रा०। जंबू०।

अंदोलण- न० *[अन्दोलन]*
हिण्होल इति प्रसिद्धे आन्दोलनयन्त्रे, सूय० १ श्रु० ११ अ०। यत्रान्दोलनेन दुर्गमतिलङ्घ्यते, तस्मिन् मार्गविशेषे, सूय० १ श्रु० ११ अ०।

अंध- त्रि० *[अन्ध]*
नयनरहिते, सूय०।
स चान्धो द्विधा जात्यन्धः पश्चाद्वा हीननेत्रोऽपगतचक्षुः। सूय० १ श्रु० १२ अ०।
अन्ध इवान्धः। अज्ञाने, ज्ञानरहिते, । भग० ७ श० ७ उ०।

अंध- पुं० *[अन्ध]*
देशभेदे, तद्देशोत्पन्ने जने च। वव० ७ उ०।
स च म्लेच्छत्वेनोक्तः। पन्न० १ पद०। पण्हा०। सूय०।

अंधकंटइज्ज- न० *[अन्धकण्टकीय]*
अन्धस्यावितर्कितकण्टकोपग-मनरूपेऽतर्कितोपगमने, आचा० १ श्रु० १ अ०।

अंधकार- पुं०न० *[अन्धकार]*
कृष्णभूतेष्वादिभवे, अरुणभवसमुद्रोद्-भवतमस्काये च। तं० बहुलतमोनिकुरम्बे, अनु०। ठा०। नाया०।
'कालं मइलं तं पि य वियाण तं अंधयारं ति' इत्युक्त-लक्षणः पुद्गलपरिणाम इति समयविदः। सूय०१ श्रु० १ अ०।
अन्यत्रापि 'सद्दंधयारउज्जोओ, पहाछायातवेइया। वन्नगंधर-साफासा, पोग्गलाणं तु लक्खणं'।। उत्त० २ अ०।
(अर्हति निर्वाणं गच्छति धर्मे व्युच्छिद्यमाने पूर्वगते वा व्युच्छिद्यमाने लोकान्धकार इत्यर्हच्छब्दे) तमसि, ठा० ३ ठा०।
अरुणवरसमुद्रोद्भूतमस्काये च। तं०।
तमोरूपत्वात्तस्य। भग०। ठा०।

अंधकारपक्ख- पुं० *[अन्धकारपक्ष]*
कृष्णपक्षे, सूर०। १३ पाहु०। चंद १३ पाहु०।

अंधग- पुं० *[अंह्रिप]*
वृक्षे, भग० १८ श० ४ उ०।

अंधगवण्हि-१ पुं० *[अंह्रिपवह्नि]*
अह्रिपा वृक्षास्तेषां वह्नयस्तदाश्रयत्वेनेत्यह्रिपवह्नयः। बादर तेजस्कायेषु। भग० १८ श० ४ उ०।

अंधगवण्हि-२ *[अन्धकवह्नि]*
अन्धका अप्रकाशकाः सूक्ष्मनामकर्मोदयाद् यं वह्नयस्ते अन्धकवह्नयः। सूक्ष्मतेजस्कायेषु।
जावइया णं भंते ! चरा अंधगवण्हिणो जीवा, तावइया परा अंधगवण्हिणो जीवा ? हंता ! गोयमा ! जावइया चरा अंधगवण्हिणो जीवा, तावइया परा अंधगवण्हिणो जीवा। सेवं भंते ! भंतेत्ति ।तत्परिमाणाः (परत्ति) पराः प्रकृष्टाः स्थितितो दीर्घायुष इत्यर्थः। इति प्रश्नः हन्तेत्याद्युत्तरमिति। भग० १८ श० ४ उ०।

अंधगवण्हि- ३ *[अन्धकवह्नि]*
यदुवंशजनृपभेदे, 'वारवतीए नयरीए अंधगवण्हि नामं राया परिवसइ, महया हिमवंतं वण्णओ। तस्स णं अंधगवण्हिस्स रण्णो धारणी नामं देवी होत्था'। अंत०।
अन्धकवह्नेर्दश पुत्राः 'समुद्दे १ सागरे २ गंभीरे ३ थिमिए ४ अयले ५ कंपिल्ले ६ अक्खोभे ७ पसेणई ८ विण्हुई ९ एते नव एतेषां प्रथमो गौतम इति दश। अंत० १ वर्ग०।
अहं च भोगरायस्स तं च चि अंधगवण्हिणो ।त्वं च भवसि अन्धकवृष्णेः समुद्रविजयस्य सुत इति गम्यते ।दश०२अ०। गच्छा०

अंधतम- न० *[अन्धतमस]*
अन्धकारे, तत्रान्धतमसस्तेजोरूपान्तरस्य संक्रमे, 'असूरियं नाम महाभितावं अंधतमं दुप्पतरं महंते।' सूय० १श्रु० ५अ०।

अंधतामिस्स- न० *[अन्धतामिस्र]*
तमिस्रा तमस्सन्ततिः। तमिस्रैव तामिस्रम्। अन्धयतीत्यन्धम् । सम०।

अंधपुर- न० *[अन्धपुर]*
नगरभेदे, यत्र अनन्धो राजाऽन्धभक्तः। बुह० ४ उ०।

अंधपुरिस- पुं० *[अन्धपुरुष]*
जात्यन्धे, यथा मृगापुत्रः। विपा० १ अ०।

अंधल- पुं० *[अन्ध]*
चक्षुर्द्वयहीने, बुह० ४ उ०। निसि० ।

अंधारूव- त्रि० *[अन्धरूप]*
अन्धाकृतौ, 'तए णं सामिया देवी तदा रूपं हुंडं अंधारूवं पासइ'। विपा० १ अ०।

अंधिया- स्त्री० *[अन्धिका]*
चतुरिन्द्रियजीवविशेषे, उत्त० ३६ अ०। पन्न०। जीवा०।

अंधिल्लग- पुं० *[अन्ध]*
अन्ध एवान्धिल्लकः। जात्यन्धे, पण्हा० १ अ०।
चक्षुर्विकले, पिंड०। पण्हा०।

अंधी- स्त्री० *[अन्ध्री]*
अन्ध्रदेशजस्त्रियाम्, आव० ४ अ०।

अंब-१ पुं० *[अम्ब]*
पञ्चदशासुरनिकायान्तर्वर्तिपरमाधार्मिकनिकायानां प्रथमे परमाधार्मिके, यो देवो नारकानम्बरतले नीत्वा विमुञ्चत्यसावम्ब इत्युच्यते। भग० ३ श० ६ उ०।

अंब-२ न० *[अम्ल]*
तक्रे, रसभेदे, । जंबू० ३ वक्ष०।

अंब- ३ त्रि० *[आम्ल]*
तक्रादिसंस्कृते, जंबू० ३ वक्ष०।

अंब-४ पुं० *[आम्र]*
चूतवृक्षे, । ठा०।

अंब–५ पुं० *[आम्र]*
अम्लवचनयोगाद् परुषवचनव्यवहारः। वव०

अंबक- न० *[आम्रक]*
चूतफले, पिंड०।

अंबकंजिय– न० *[आम्रकाञ्जिक]*
सुगंधिकाञ्जिकम्। ओह० ।

अंबगट्ठिया- न० *[आम्रकास्थि]*
आम्रकस्य फलविशेषस्यास्थीनि, आतपे दत्तेषु शुष्काम्रफलास्थिषु, अनु०।

अंबगपेसिया- स्त्री० *[आम्रकपेशिका]*
आम्रफलखण्डे, अनु०।

अंबचोयग- न०स्त्री० *[आम्रत्वच्]*
आम्रच्छल्याम्, आचा० २ श्रु०७ अ० २ उ०।

अंबट्ठ- पुं० *[अम्बष्ठ]*
ब्राह्मणेन वेश्यायां जातेऽवान्तरजातीये, सूय० १ श्रु० ९अ०। आचा०।
अयं जात्याऽऽर्यत्वेनेभ्यजातित्वेन चोपदर्शितः। ठा० ६ ठा०। पन्न०।

अंबड-१ पुं० *[अम्बड]*
ब्राह्मणपरिव्राजकभेदे ।उव०।

अंबड-२ पुं० *[अम्बड]*
परिव्राजकभेदे। ठा० ९ ठा०।

अंबडालग- न० *[आम्रडालक]*
आम्रसूक्ष्मखण्डेषु, आचा० श्रु० २ अ० ७।

अंबपलंबकोरव- न० *[आम्रप्रलम्बकोरक]*

आम्रःचूतस्तस्य प्रलम्बः फलं तस्य कोरकं तन्निष्पादकं मुकुलम् आम्रफलकोरकम्। कोरकविशेषे। एवं यः पुरुषः सेव्यमान उचितकाले उचितमुपकारकफलं जनयत्यसावाम्र-प्रलम्बकोरकसमान उच्यते, ठा० ४ ठा०।

अंबपल्लवपविभत्ति- न० *[आम्रपल्लवप्रविभक्ति]*

नाट्यविधिभेदे, रा०।

अंबपेसिया- स्त्री० *[आम्रपेशी]*

आम्रफल्याम्। आचा० २ श्रु० ७ अ० ७।

अंबफल- न० *[आम्रफल]*

रसालफले, वव० ९ उ०।

अंबभित्तय- न० *[आम्रभित्तक]*

आम्रार्द्धे। आचा० २ श्रु० ७ अ० २ उ०।

अंबर-१ न० *[अम्बर]*

अम्बेव मातेव जननसाधर्म्यादम्बा जलं तस्य राणाद्दानान्निरु-क्तितोऽम्बरम्, आकाशे। भग० २ श० २ उ०।

अंबर-२ न० *[अम्बर]*

वस्त्रे, निसि०१ उ०। आव०म०। सूय०। आव० पण्हा०।

अंबरतल- न० *[अम्बरतल]*

आकाशतले, रा०। नाया०।

अंबरतिलय- पुं० *[अम्बरतिलक]*

धातकीखंडस्थे पर्वतभेदे, यत्र मङ्गलावतीविजयवर्त्तिनन्दिग्राम-सन्निवेशस्थदरिद्रकुलजातनिर्नामिका नाम कन्या मातुः खाद्यम-नवाप्य तद्वचनेन गत्वा पक्वफलानि गृहीतवती। आव०म०। आ० चू०।

अंबरवत्थ- न० *[अम्बरवस्त्र]*

स्वच्छतया अम्बरतुल्यानि वस्त्राणि अम्बरवस्त्राणि-स्वच्छवस्त्रेषु। कल्प०।

स्वच्छतयाऽऽकाशकल्पवसनम्। भग०

अंबरस- न० *[अम्बरस]*

अम्बा पूर्वोक्तयुक्त्या जलं तद्रूपो रसो यस्मान्निरुक्तितोऽम्बरसम्, आकाशे, भग० २० श० २ उ०।

अंबरिस-१ पुं०न० *[अम्बरिष]*

भ्राष्ट्रे, भग० ३ श० ६ उ०।

कोष्ठके, लोहकाराम्बरीषे वा, जीवा० ३ प्रति।

अंबरिस-२ पुं० *[अम्बरिष]*

यस्तु नारकान् कल्पनिकाभिः खण्डशः कृत्वा भ्राष्ट्रपाकयोग्यान् करोतीत्यसावम्बरीषस्य भ्राष्ट्रस्य संबन्धादम्बरीष इति द्वितीय परमाधार्मिकः। भग०। सम०।

अंबरिसि- पुं० *[अम्बऋषि]*

उज्जयिनीवास्तव्ये ब्राह्मणभेदे, यस्य मालुक्या प्रिया, निम्बः सुतः। । आव०। आव० चू०।

अंबवण- न० *[आम्रवण]*

आम्रस्य वनम्। आम्रवृक्षसमुदायात्मके वने,। आचा०।

अंबसालवण- न० *[आम्रसालवन]*

आम्रफले। आम्रैः शालैश्चातिप्रचुरतयोपलक्षिते वने तद्योगादा-मलकल्पाया ईशानकोणस्थे चैत्ये च। पूर्णभद्रचैत्यवदस्य वर्णक। रा०। गच्छा०। आव०म०।। नाया०।आव० चू०।

आमलकल्पानगर्यां वनविशेषः। उत्त०

चैत्यविशेषः। आव०

अंबहुंडि- स्त्री० *[अम्बहुण्डि]*

देवीभेदे। महा० २ अ०।

अंबा- स्त्री० *[अम्बा]*

अम्ब्यते स्नेहेनोपगम्यते अम्बा। मातरि। उत्त० ३ अ०। ठा०।

अंबाडग- पुं० *[आम्रातक]*

शुष्काम्ररसनिर्मिते द्रव्यभेदे, यथा 'आम्रस्य सहकारस्य, कटेर्विस्तरितो रसः। धर्मशुष्को महर्दत्ते, आम्रातक इति स्मृतः'। । पन्न०। अनु०। आचा०।

अंबाडिय- त्रि० *[आम्लित]*

आम्ल इव कृतः खरण्टिते, आव०म०।

'चमढेति खरंटेति अंबाडेतित्ति वुत्तं भवति'। निसि० ४ उ०।

अंबावल्ली- स्त्री० *[अम्लवल्ली]*

वल्लीभेदे, पन्न०१ पद०।

आमलकल्पानगर्यां वनविशेषः। उत्त०

अंबिआ- स्त्री० *[अम्बिका]*

पञ्चमवासुदेवमातरि च। सम०। आव०

अंबिल- पुं० *[अम्बिल]*

अग्निदीपनादिकृति अम्लिकाद्याश्रिते रसभेदे, अम्लोऽग्निदीप्ति-कृत् स्निग्धः, शोकपित्तकफावहः। क्लेदनः पाचनो रुच्यो, मूढवातानुलोमकः। अनु०। जंबू०।

एगे अंबिले-आश्रवणक्लेदनकृदम्लः। ठा० १ ठा०।

तक्रादिसंस्कृते, नाया० १७ अ०।

काञ्जिके, ठा० १० ठा०।

सौवीरे, ठा० १० ठा०।

कल्पपालगृहेषु किलाम्लशब्दसमुच्चारिते सुरा विनश्यति अनिष्टपरिहारार्थमम्लं स्वादूच्यते, अनु०।

अंबिलरस- पुं० *[अम्लरस]*

अम्लरसश्च तक्रवत्। पण्हा० ५ अ०।

अंबिलरसपरिणय- पुं० *[अम्लरसपरिणत]*

अम्लवेतसादिवदम्लरसपरिनामं गते पुद्गले, पन्न० १ पद०।

अंबिलि– स्त्री० *[अम्बिली]*

आम्लभाजनम् चिञ्चिणिकापात्री। आव० । रब्बा। बृह० ।

अंबिलिआ- स्त्री० *[अम्लिका]*

१ तिन्तिडयाम् अत्राम्लीकेत्यपि, सा च, २ पलाशीलतायां, ३ श्वेताम्लिकायां ४ क्षुद्राम्लिकायाञ्च, । जंबू० ३ वक्ष०।

अंबिलोदग- न० *[अम्लोदक]*

काञ्जिकवत्स्वभावत एवाम्लपरिणामे, जले, जीवा० १ प्रति०।

आम्लोदकम् स्वभावत एवाम्लपरिणामं काञ्जिकवत्। पन्न०।

अंबुणाह- पुं० *[अम्बुनाथ]*

समुद्रे, वव० ६ उ०।

अंबुत्थंभ- पुं० *[अम्बुस्तम्भ]*

जलनिरोधरूपे त्रयोदशे कलाभेदे। कल्प०।

अंबुभक्खि- पुं० *[अम्बुभक्षि]*

जलमात्रभक्षके वानप्रस्थभेदे, उव०। निसि०।

अंबुवासि- पुं० *[अम्बुवासिन्]*

वानप्रस्थभेदेषु,। ये जलनिमग्ना एवासते। उव०।

अंस- पुं० *[अंश]*

विभागे, ठा० ३ ठा०।

भागे, भेदे, विशे०। आव० चू०। आचा०।

भेदाः विकल्पा अंशा इत्यनर्थान्तरम्। आव०म०। आव०।

पर्य्याये, विशे०।

स्कन्धे, नाया० १८ अ०।

अंसगय- त्रि० *[अंशगत]*

स्कन्धदेशमागते, विपा० १ श्रु० ३ अ०।

स्कन्धावस्थिते, नाया० १८ अ०।

अंसलग- पुं० *[अंश]*

स्कन्धे, तं०।

अंसहर– पुं० *[अंशधर]*

अंशं– प्रक्रमाज्जीवितव्यभागं धारयन्ति– मृत्युनानीयमानं रक्षन्ति । उत्त०

अंसि- स्त्री० *[अस्रि]*

कोटौ, ठा० ८ ठा०।

अंसिया-१ स्त्री० *[अंशिका]*

भागे, 'सागारियस्स अंसिया अविभत्ता' बृह० ३ उ०।

'अंसियाओ गामद्धमाईओ' अंशिका तु तत्र ग्रामस्यार्द्धम्। आदिशब्दात् त्रिभागं वा चतुर्भागं वा गत्वा स्थितः स ग्राम-स्यांश एवांशिका, निसि० ३ उ०।

अंसिया-२ न० *[अर्शस्]*

बलिकाकारे रोगभेदे, 'अंसिया अरिसा ता य अहिट्ठाणे णासाए वणेसु वा भवंति'। निसि० ३ उ०।

तस्स (आतापयतः) 'अंसिया ओलंबइ तं चेव विज्जो अदक्खु ईसिं पाडेइ, पाडेइत्ता अंसियाओ छिंदेज्जा' अर्शांसि तानि च नासिकासत्कानीति चूर्णिकारः, भग० १६ श० ३ उ०।

अंसु- न० *[अश्रु]*

अश्नुते व्याप्नोति नेत्रमदर्शनाय। 'गुरुदुक्खभर-कंतस्स अंसुणि वाएण जं जलं गालियं, तं अगडतलायणइसमुद्दमाईसु ण वि होज्जा'। महा० ६ अ०।

'अंसुपुण्णणयणे तित्थयरसरीरयं तिक्खुत्तो'। जंबू० २ वक्ष०।

'अंसुपण्णेहिं णयणेहिं उरं मे परिसिंचइ'। उत्त० २ अ०।

अंसुय- न० *[अंशुक]*

चीनविषये बहिस्तादुत्पन्ने सूत्रे, अनु०। आव०म०।

'अब्भंतरहीरे जं उप्पज्जति तं अंसुयं'। निसि०७उ०। आचा०

अंशुकं श्लक्ष्णपट्टस्तन्निष्पन्नमंशुकम्, बुह० २ उ०।

वस्त्र-विशेषे, नाया० १ अ०। जंबू०। जीवा०।

अकइ- त्रि० *[अकति]*

न कति, न संख्याता इत्यकति। असंख्यातेषु, अनन्तेषु, ठा० ३ ठा०। भग०।

अकइसंचिय- पुं० *[अकतिसञ्चित]*

न कति, न संख्याता इत्यकति। असंख्याता, अनन्ता वा। तत्र ये अकत्यकति असं-ख्याता असंख्याता एकैक समये उत्पन्नाः सन्तस्तथैव संचिता-स्ते अकतिसञ्चिताः। ठा० ३ ठा०।

एकसमयेऽसंख्यातोत्पादेनानन्तोत्पादेन च पिण्डितेषु नैरयिकादिषु। भग० २ श० १० उ०।

अकटंग- त्रि०। न०ब०। *[अकण्टक]*

कण्टकरहितेषु। न तेषु मध्ये बब्बूलादिवृक्षाः सन्तीति, । जीवा० ३ प्रति।

पाषाणादिद्रव्यकण्टकविकलेषु, आव० ५ अ०।

प्रतिस्पर्द्धिगोत्रजे (राज्ये) 'ओहयकंटयं मलियकंटयं अकंटयं'। नाया० १ अ०। ठा०। सूय०।

अकंड- न० *[अकाण्ड]* न०।

अप्रस्तावे, अनवसरे, आतु०।

'एत्थ मया अकंडे वि णच्चिया तं कारणं सुणह'। आव०म०।

अकाले, बुह० १ उ०।

अकंडूयग- पुं० *[अकण्डूयक]*

न कण्डूयते इत्यकण्डूयकः। ठा० ५ ठा०।

अकण्डूयनकारके अभिग्रहविशेषवति, पण्हा० १ अ०।

अकंत- त्रि० *[अकान्त]*
कान्तः कान्तियोगात्, ठा० ८ ठा० ।
न कान्तोऽकान्तः । जीवा० १ प्रति० ।
स्वरूपेणाक्रमनीये, उपा० ८ अ० । भग० । पण्हा० ।

अकंततर- त्रि० *[अकान्ततर]*
स्वरूपतोप्यकमनीयतरे, जीवा० ३ प्रति० । वि० ।

अकंतता- स्त्री० *[अकान्तता]*
असुन्दरतायाम्, भग० ६ श० २ उ० ।

अंकंतदुक्ख- त्रि० *[अकान्तदुःख]*
अकान्तमनभिमतं दुःखं येषां तेऽकान्तदुःक्खाः अनभिमताशा-तेषु । सूय० १ श्रु० १ अ० ।
'अंकतदुक्खं तसथावरा दुही अलूसए' । आचा० २श्रु० २ अ०
दुःखद्विट्सु, सूय० १ श्रु० ११ अ० ।

अकंतस्सर- त्रि० *[अकान्तस्वर]*
अकान्तियुक्तस्वरे, ठा० ८ ठा० ।

अकंदप्पि- त्रि० *[अकन्दर्पिन्]*
कन्दर्पोद्दीपनभाषितादिविकले, वव० १ उ० ।

अकंप- त्रि० *[अकम्प]*
अक्षोभ्ये, 'नाणंमि दंसणंमि य, तवे चरित्ते य चउसु वि अकंपे' अकम्पोऽक्षोभ्यो देवैरप्यचाल्य इत्यर्थे, आतु० ।

अकंपिय- पुं० *[अकम्पित]*
महावीरस्याष्टमे गणधरे, सम० ।कल्प० ।आव०चू० ।आव०म०

अकक्कसवेयणिज्ज- न० *[अकर्कशवेदनीय]*
अकर्कशेन सुखेन बेद्यन्ते यानि तानि अकर्कशवेदनीयानि भरतादीनामिव सुखवेदनीयेषु कर्मसु । भग० ७ श० ६ उ० ।

अकज्ज- न० *[अकार्य]*
अप्रशस्तं कार्य्यम् अप्राशस्ये कुत्सितकार्य्ये, निषिद्धकार्य्ये च । कर्त्तव्यभिन्न, । आचा० ।

अकज्जमाण- त्रि० । *[अक्रियमाण]*
वर्त्तमानकाले अनिवर्त्तमाने । भग० १ श० १० उ० ।

अकज्जमाणकड- त्रि० *[अक्रियमाणकृत]*
क्रियमाणं वर्तमानकाले कृतं चातीतकाले, तन्निषेधादक्रियमाण कृतं 'अकिच्चं दुक्खं अफुसं दुक्खं अकज्जमाणकडं दुक्खं' । भग० १ श० १० उ० ।

अकट्ठ- त्रि० *[अकाष्ठ]*
काष्ठरहिते अनिन्धने, । सूय० १ श्रु० ५ अ० ।

अकड- त्रि० । न०त० । *[अकृत]*
अविहिते । 'कडं कडित्ति भासिज्जा, अकडं नो कडित्ति य' । उत्त० १ अ० ।
'अकडं करिस्सामित्ति मण्णमाणे' यद्परेण न कृतम् । आचा० १ श्रु० २ अ० ।

अकडजोगि- पुं० *[अकृतयोगिन्]*
यतनया योगमकृतवति, वव० ३ उ० ।
अकृतयोगी अगीतार्थः त्रीन् वारान् कल्पमेषणीयं वा परिभाव्य प्रथमवेलायामपि, यतस्ततोऽकल्पमनेषणीयमपि ग्राही । वव० १० उ० ।
'अकडजोगत्ति दारं तिगुणं पच्छद्धंति तिसंखा तिण्णि गुणीओ तिगुणो असंथराणीसु तिन्नि वारा एसणीयं सण्णिसिओ जा ता ततियवाराए वि ण लज्जति तदा चउत्थपरिवाडीए अणेसणीयं घेत्तव्यं । एवं तिगुणं जोगं काऊण जोगो व्यापारः । बितिय वाराएच्चेव अणेसणीयं गेण्हति जो, सो अकडजोगी भन्नति । अकडजोगित्ति गयं' । निसि० १ उ० ।

अकडपायच्छित्त- त्रि० *[अकृतप्रायश्चित्त]*
न कृतं प्रायश्चित्तं येन अननुष्ठितविशोधः 'जे भिक्खू साहिगरणं अविउसवियपाहुडं अकडषायच्छित्तं' । निसि० १० उ० ।

अकडसामायारि- पुं० *[अकृतसामाचारि]*
अवितथा मण्डल्युपसंपत्सामाचारीमकुर्वति, बुह० ३ उ० ।
एवंविधां (सामाचारीशब्दे वक्ष्यमाणां उपसम्पन्नमण्डलीविषयां द्विविधामपि सामाचारीं यो न करोति सोऽकृतसामाचारीक उच्यते, बुह० १ उ० ।

अकढिण- त्रि० *[अकठिन]*
कोमले, जीवा० ३ प्रति० ।

अकण्ण- पुं० *[अकर्ण]*
सिंहमुखद्वीपस्य नैऋतकोणे अन्तरद्वीपशब्दोक्तप्रमाणे अन्तर-द्वीपे, तद्वास्तव्ये मनुष्ये च, ठा० ४ ठा० । पन्न० । नं० ।

अकण्णछिण्ण- त्रि० *[अकर्णच्छिन्न-अच्छिन्नकर्ण]*
न छिन्नौ कर्णो यस्य स तथा । अकृतश्रवणे, निसि० १४ उ० ।

अकत्तिम- त्रि० *[अकृत्रिम]*
न कृत्रिमः । कृत्रिमभिन्ने, स्वभावसिद्धे । जंबू० २ वक्ष० ।

अकप्प-१ पुं० *[अकल्प]*
अविधौ चरकादिदीक्षायाम् । अग्राह्ये, आव० । आव० चू० ।
अकृत्ये, अयोग्ये, आव० ४ अ० ।
दर्पादौ, वव० १ उ० ।
अभोज्ये, 'जहकम्मं अकप्पं तत्थिक्कं' । पिंड० ।
'अकप्पं पडिगाहेज्ज, चउत्थाइ जहाजोगं कप्पं वा । पडिसेहेइ उवट्ठावणं गोयरपविट्ठो उ' । महा० ७ अ० ।
दूषणीये । निसि० १५ उ० ।
अनाचारे, कल्प० ।

पिण्डशय्यावस्त्रपात्ररूपचतुष्टयेऽकल्पनीये, वव० २ उ०।
अकल्पः शिक्षकस्थापनाकल्पादिः। दश० ६ अ०।
सामायिकसंयमः, अस्थितकल्पश्चतुर्यामधर्मो वा। बृह०

अकप्प-२ पुं० *[अकल्प]*
अस्थितकल्पे च, बुह० ४ उ०।

अकप्प- ३ पुं० *[अकल्प]*
अकल्पः अमर्य्यादा अनीतिः अनुपदेश इत्यनर्थान्तरम्, पंच०चू

अकप्पट्ठावणाकप्प- पुं० *[अकल्पस्थापनाकल्प]*
अयोग्यानीतपिंडवर्जनम् (कल्प)। निसि०
अनेषणीयपिण्डशय्यावस्त्रपात्रलक्षणेऽकल्पभेदे, जीत०।

अकप्पट्ठिय- पुं० *[अकल्पस्थित]*
कल्पे दशविधे आचेलुक्यादौ संपूर्णे न स्थिताः अकल्पस्थिताः चतुर्णामधर्मप्रतिपत्तृषु, बुह० ४ उ०।
मध्ममद्वाविंशतिजिनसाधुषु महाविदेहजेषु च, जीत०।

अकप्पिय- पुं० *[अकल्पिक]*
अगीतार्थे, 'किं वा अकप्पिएणं, गहियं फासुयं तु तं होइ' । वव० १ उ०।
अनेषणीये, । 'अकप्पियं ण इच्छिज्जा, पडिगाहेज्ज कप्पियं' । दश० ५ अ०।।

अकप्पिय- त्रि० *[अकल्पित]*
अयोग्ये। गच्छा० १ अधि०।

अकम्म- न०। *[अकर्मन्]*
कर्मकरणाभावे, बुह० १ उ०।
आश्रवनिरोधे, सूय०१ श्रु०१२ अ०।
न विद्यते कर्मास्येति। आचा०१ श्रु० ५ अ० ६ उ०।
न विद्यते कर्मास्येति अकर्मा कर्मरहिते, वीर्यान्तरायक्षयजनिते जीवस्य सहजे वीर्य्ये,। सूय० १ श्रु० ७ अ०।

अकम्मओ- अव्य० *[अकर्मतस्]*
कर्माणि विनेत्यर्थे, 'णो अकम्मओ विभत्तिभावं परिणमइ'। भग० १२ श० ५ उ०।

अकम्मंस- पुं० *[अकर्मांश]*
न विद्यते कर्मांशो यस्य सोऽकर्मांशः। कर्मलवविप्रमुक्ते 'अप्पत्तियं अकम्मंसे, एयमट्ठम्मिगे चुए'। सूय० १ श्रु० १ अ० २उ०
विगतघातिकर्मणि स्नातकभेदे, भग० २५ श० ६ उ०।

अकम्मकारि- त्रि० *[अकर्मकारिन्]*
स्वभूमिकानुचितकर्मकारिणि, पण्हा० २ अ०।

अकम्मग- त्रि० *[अकर्मक]*
अविवक्षितकर्मका अकर्मका भवन्ति। यथा, पश्य ! मृगो धावति, आचा० १ श्रु० १ अ० ३ उ०।

अकम्मभूमग- पुं० *[अकर्मभूमक]*
कर्म कृषिवाणिज्यादि मोक्षानुष्ठानं वा तद्विकला भूमिर्येषां ते अकर्मभूमास्ते एवाकर्मभूमका । जीवा० १ प्रति।
अकर्मभूमिजेषु गर्भव्युत्क्रान्तिकमनुष्येषु, पन्न० १ पद०।
ते च त्रिंशद्विधाः। पन्न० १ पद०। जीवा०।

अकम्मभूमि- स्त्री०न० *[अकर्मभूमि]*
कृष्यादिकर्मरहिताः। कल्पपादपफलोपभोगप्रधाना भूमयो हैमवतपञ्चकहरिवर्षपञ्चक-देवकुरुपञ्चकोत्तरकुरुपञ्चक-रम्यक-पञ्चकैरण्यवतपञ्चकरूपास्त्रिंशदकर्मभूमयः। नं०।
इत्येतासु भोगभूमिषु, पण्हा० ५ अ०। ठा०।
जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं तओ अकम्मभूमीओ पन्नत्ताओ। तंजहा- हेमवए हरिवासे देवकुरा। जंबूदीवे दीवे मंदरस्स उत्तरेणं तओ अकम्मभूमिओ पणत्ताओ। तंजहा- उत्तरकुरा रम्मगवासे हेरन्नवए। ठा० ३ ठा० ४ उ०।
जम्बुद्दीवे दीवे देवकुरुउत्तरकुरुवज्जाओ चत्तारि अकम्मभूमीओ पन्नत्ताओ। तंजहा- हेमवए हेरण्णवए हरिवासे रम्मगवासे, ठा० ४ ठा०।
जंबुद्दीवे दीवे छ अकम्मभूमीओ पन्नत्ताओ। तंजहा- हेमवए हेरण्णवए हरिवासे रम्मगवासे देवकुरा उत्तरकुरा। धायइखंड-दीवपुरच्छिमद्धे णं छ अकम्मभूमीओ पन्नत्ताओ। तंजहा- हेमवए जहा जंबुद्दीवे तहा जाव अंतरणईओ जाव पुक्खरवर-दीवड्ढे पच्चत्थिमद्धे भाणियव्वं। ठा० ६ ठा०।
कइविहे णं भंते ! अकम्मभूमीओ पन्नत्ताओ ? गोयमा ! तीसं अकम्मभूमीओ पन्नत्ताओ। तं जहा- पंच हेमवयाइं, पंच हेरण्ण-वयाइं, पंच हरिवासाइं, पंच रम्मगवासाइं, पंच देवकुराइं, पंच उत्तरकुराइं। भग० २० श० ८ उ०।

अकम्मभूमिय- पुं० *[अकर्मभूमिज]*
अकर्मभूमिषु जाता अकर्मभूमिजा गर्भजमनुष्यभेदेषु, नं०।

अकम्मभूमिआ- स्त्री० *[अकर्मभूमिजा]*
अकर्मभूमिर्भोगभूमिस्तत्र जाता अकर्मभूमिजा भोगभूमिज-गर्भ्भ व्युत्क्रान्तिकमनुष्यस्त्रीषु, ठा० ३ ठा० १ उ०।
से किं तं अकम्मभूमियाओ?
अकम्मभूमियाओ तीसतिविधाओ पन्नत्ताओ। तंजहा- पंचसु हेमवएसु पंचसु हेरण्णवएसु पंचसु हरिवासेसु पंचसु रम्मगवासेसु पंचसु देवकुरुसु पंचसु उत्तरकुरुसु। से तं अकम्मभूमगमणुस्सीओ। 'जीवा०१ प्रति०।

अकम्मया- स्त्री० *[अकर्मता]*
कर्मणामभावे, उत्त० २९ अ०।
अप्रमादम्। सूय०

अकम्हा- अव्य० *[अकस्मात्]*
मगधदेशे गोपालबालाबलादिप्रसिद्धोऽकस्मादिति शब्दः। स इह प्राकृतेऽपि तथैव प्रयुक्तः। ठा० ५ ठा०।
कारणानधीने, अतर्कितोपनते वा, बाह्यनिमित्तानपेक्षे, ठा० ७ ठा०।
अनभिसन्धे, पण्हा० ५ अ०। आचा०।

अकम्हादंड- त्रि० *[अकस्माद्दण्ड]*
अकस्मादनभिसन्धिनाऽन्यवधा-र्थप्रवृत्त्या दण्डोऽन्यस्य विनाशो अकस्माद्दण्डः। सम० १३ सम०।
अन्यवधार्थप्रहारे मुक्तेऽन्यस्य वधलक्षणे चतुर्थे दण्डे, ठा० ५ ठा० २ उ०। पण्हा०। आव०।

अकम्हादंडवत्तिय- न० *[अकस्माद्दण्डप्रत्ययिक]*
अकस्माद्दण्डः प्रत्ययः कारणं यस्य। चतुर्थे दण्डसमादाने । सूय० २ श्रु० २ अ०।

अकम्हाभय- न० *[अकस्माद्भय]*
अकस्मादेव बाह्य निमित्तानपेक्षं गृहादिष्वेव स्थितस्य रात्र्यादौ भयमकस्माद्भयम्, आव० ४अ०। ठा०।
बाह्यनिमित्तनिरपेक्षे स्वविकल्पाज्जाते भयभेदे, सम०७ सम०। आव० चू०। । निसि० ।

अकय- त्रि० *[अकृत]*
कृतभिन्ने, अन्यथाकृते, बलपूर्वकृते, ऋण-लेख्यपत्रादौ, साध्वर्थं दायकेन पाकतोऽविहिते, पण्हा० १ अ०।
अकयमकारियमसंकप्पियमणाहूयं। भग० ७ श० १ उ०।
अकृतकरणे, अगृहीतप्रायश्चित्ते, वव० १ उ०।

अकयकरण- पुं० *[अकृतकरण]*
षष्ठाष्टमादिभिस्तपोविशेषैरपरिकर्मितशरीरे, प्रायश्चित्तयोग्य-पुरुष भेदे, वव० १ उ०।
अकयकरणा य दुविहा, अहिगया अणहिगया य वव०१ उ०।
अकृतकरणा द्विविधाः। अधिगता अनधिगताश्च। तत्र ये अगृहीतसूत्रार्थास्ते अनधिगताः। गृहीतसूत्रार्थस्तु अधिगताः, वव० १ उ०।

अकयण्णु- त्रि० *[अकृतज्ञ]*
कृतमुपकारं परसंबन्धिनं न जानातीत्यकृतज्ञः, ठा० ४ ठा० ४ उ०। नाया०।
असमर्थे। सम०।

अकयणुया- स्त्री० *[अकृतज्ञता]*
अकृतज्ञस्य भावस्तत्ता। कृतघ्नतायाम्, 'चउहिं ठाणेहिं संते गुणे णासेज्जा। तंजहा-कोहेणं पडिणिवेसेणं अकयण्णुयाए मिच्छत्ताहिणिवेसेणं'। ठा० ४ ठा० ४ उ०।

अकयपुण्ण- त्रि० *[अकृतपुण्य]*
अविहितपुण्ये, विपा० १ श्रु० ७ अ०।
'अकयपुण्ण जणमणोरहा विव चिंतिज्जमाणो'।नाया० ९ अ०

अकयप्प- त्रि० *[अकृतात्मन्]*
अयतेन्द्रिये, 'सुखमात्यन्तिकं यत्तद्, बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम्। तं हि मोक्षं विजानीयाद् दुष्प्रापमकृतात्मभिः, ठा०।

अकयमुह- त्रि० *[अकृतमुख]*
अकृतमक्षरसंस्कारेणासंस्कृतंमुखं यस्यासावकृतमुखः। बुह० ३ उ०

अकयसामायारीय- पुं० *[अकृतसामाचारीक]*
उपसंपद्विषयाया मण्डलीविषयायाश्च द्विविधाया अपि सामा-चार्या अकारके, बुह० १ उ०।

अकयसुय- पुं० *[अकृतश्रुत]*
अगीतार्थे। वव० ६ उ०।
अगृहीतोचितसूत्रार्थे, तदुभये, वव० ४ उ०।

अकरंडग- त्रि० *[अकरण्डक]*
करण्डको वंशग्रथितः समतलकस्तस्येवाकारो यस्य तत्करण्ड-कम् न करण्डकमकरण्डकम्, उव०।
करण्डकाकाररहिते दीर्घे, समचतुरस्रे, वा 'अकरंडयंमि भाणे, हत्थो उद्धं जहा न घट्टेत्ति'। बुह० ३ उ०।

अकरंडुय- त्रि० *[अकरण्डुक]*
अविद्यमानं मांसलतया अनुपलक्ष्यमाणं करण्डकं पृष्ठवंशा-स्थिकं यस्य देहस्यासौऽकरण्डकः। 'जीवा० ३ प्रति०।
मांसलतयाऽनुपलक्ष्यमाणपृष्ठवंशास्थिके, उव०।
मांसोपचितत्वादविद्यमानपृष्ठपार्श्वास्थिके, तं०। पण्हा०।
अकरंडुय-कणग-गरुयग-णिम्मल-सुजाय-णिरुवहय-देहधारी, । जीवा० ३ प्रति०।

अकरण- न० *[अकरण]*
अव्यापारे, आचा० १ श्रु० ९ अ० १ उ०।
अनासेवने, आव० ६ आ०।
परिहरणे, आव० चू०। १ अ०।
अकरणं च न्यायादिमते करणाभावः मीमांसकवेदान्तिमते निवृतिः अकरणीये मैथुने, । वव० ३ उ०।

अकरणया- स्त्री० *[अकरणता]*
करणनिषेधरूपतायाम्, भग० १५ श० १ उ०।
'अकरणयाए अब्भुट्ठित्तए' न पुनः करिष्यामीत्यभ्युपस्थातुम-भ्युपगन्तुमिति, ठा० २ ठा० १ उ०।

अकरणओ- अव्य० *[अकरणतस्]*
अकरणमाश्रित्येत्यर्थः।अकुर्वत् इति यावत्,। भग०१श०१ उ०

अकरणि- स्त्री० *[अकरणि]*

करणं माभूदित्याक्रोशात्मके शापे, । पण्हा० ।

अकरणिज्ज- स्त्री० *[अकरणीय]*

सामान्येनाकर्त्तव्ये, आव० ४ अ० । आव० चू० । ।

अकर्त्तव्ये, इहलोकपरलोकविरुद्धत्वादकार्य्ये, आचा० १ श्रु० १ अ० ७ उ० ।

असत्ये, 'मिच्छत्ति वा वितहत्ति वा असच्चंति वा असच्चयंति वा अकरणीयंति वा एगट्ठा,' । आव० चू० । १ अ० ।

अकलुण- त्रि० *[अकरुण]*

निर्दये, पण्हा० ३ अ० ।

अकलुस- त्रि० *[अकलुष]*

क्रोधादिकालुष्यरहिते, अनुत्त० ।

द्वेषवर्जिते, अंत०७ वर्गः ।

अकसाइ- पुं० *[अकषायिन्]*

कषाया विद्यन्ते यस्यासौ कषायी न कषायी अकषायी, सूय० १ श्रु० ६ अ० । आचा० ।

कषायोदयरहिते, पन्न० ३ पद० ।

अकसाय- त्रि० *[अकषाय]*

कषायरहिते, । उत्त० २८ अ० ।

अकषायाः अशान्त मोहादयश्चत्वारः सिद्धाश्च । ठा० ४ ठा० ।

अकसिणा- स्त्री० *[अकृत्स्ना]*

चतुर्थे आरोपणाभेदे, ठा० ५ ठा० २ उ० ।

यस्यां षाण्मासाधिकं झोष्यते, तस्यां हि तदतिरिक्तझाटनेन अपरिपूर्णत्वादिति,

ठा०५ ठा०२उ० । व्या० । निसि० ।

आचारप्रकल्पस्य अष्टाविंशतितमो भेदः । सम०

अकहा- स्त्री० *[अकथा]*

मिथ्यादृष्टिना अज्ञानिना लिङ्गस्थेन वा गृहिणा कथ्यमानायां कथायाम्, । तल्लक्षणम् ।

मिच्छत्तं वेयंतो, जं अन्नाणी कहं परिकहेइ ।लिंगत्थो व गिहीवा, सा अकहादेसिया समए ।।मिथ्यात्वमिति । मिथ्यात्वमोहनीयं कर्म वेदयन् विपाकेन यां कांचित् अज्ञानी कथां कथयति ।

अज्ञानित्वं चाऽस्य मिथ्यादृष्टित्वादेव । यद्येवं नार्थोऽज्ञानि-ग्रहणेन, मिथ्यावेदकस्याज्ञानित्वाव्यभिचारादिति चेन्न प्रदेशानु-भववेदकेन सम्यग्दृष्टिना व्यभिचारादिति ।

किंविशिष्टोऽसावित्याह-लिङ्गस्थो वा द्रव्यप्रव्रजितोऽङ्गार-मर्द्दकादिः गृही वा, यः कश्चिदितर एव । सा एवं प्ररूपक-प्रयुक्तया श्रोतर्यपि प्रज्ञापकतुल्यपरिणामनिबन्धना कथा देशिता समये । । दश० ३ अ० ।

अकाइय- पुं० *[अकायिक]*

नास्ति कायः (औदारिकादिः पृथिव्याषट्कायस्तदन्यो वा) येषां ते अकायास्त एवाकायिकाः । सिद्धेषु, भग० ८ श० २ उ० ।

अकाम- पुं० *[अकाम]*

कमनं काम इच्छा, न कामोऽकामः । अनिच्छायाम्, ।

सूय० २ श्रु० ६ उ० ।

उपरोधशीलतायाम् । दश० ५ अ० ।

इच्छामदनकामरहिते, आचा० ।

निर्जराद्यनभिलाषिणि, निरभिप्राये, भग० १ श० १ उ० ।

मोक्षे च, तत्र सकलाभिलाषनिवृत्तेः । उत्त० १५ अ० ।

अकामअण्हाणग- पुं० *[अकामास्नानक]*

अकामस्नानरहिते, 'अकामअण्हाणगसीयाऽऽयवदंसमसगसेय-जल्लमल्लपंकपरितावं' अकामानामस्नानादिभिर्यः परितापः परिदाहः स तथा । अकामा येऽस्नानकादयस्तेभ्यो यः परिदाहः, स तथा निर्जराद्यनभिलाषिणामस्नानादिभिः परितापे, उव० ।

अस्नानादिभिः परिदाहे, निरभिप्राये वा, भग० १ श० १ उ० ।

अकामकाम- त्रि० *[अकामकाम]*

कामानिच्छामदनकामभेदान् कामयते प्रार्थयते यः, स काम-कामो, न तथा अकामकामः । न विद्यते कामस्य कामोऽभि-लाषो यस्य स अकामकामः कामाभिलाषरहिते, अकामो मोक्षा भिलाषस्तत्र सकलाभिलाषनिवृत्तेः, तं कामयते यः स तथा (मोक्षार्थिनि) 'संथवं जहेज्ज अकामकामे' । उत्त० १५ अ०

अकामकिच्च- त्रि० *[अकामकृत्य]*

कमनं काम इच्छा, न कामोऽकामस्तेन कृत्यं कर्त्तव्यं यस्यासौ अकामकृत्यः । अनिच्छाकारिणि, सूय० २ श्रु० ६ अ० ।

अकामग- त्रि० *[अकामक]*

अनभिलषणीये, पण्हा० १ अ० ।

अनिच्छति, 'अकामगं परिकम्मं, को उ ते वारेउ मरिहति' । सूय० १ श्रु० २ अ० २ उ० ।

अनिच्छन्तं गृहव्यापारेच्छारहितं पराक्रमन्तं स्वाभिप्रेतानुष्ठानं कुर्वाणं कस्त्वां भवन्तं वारयितुं निषेधयितुमर्हति योग्यो भवति? यदि वा-(अकामगंति) वार्द्धक्यावस्थायां मदनेच्छा-कामरहितं पराक्रमन्तं संयमानुष्ठानं प्रति कस्त्वामवसरप्राप्तः कर्मणि प्रवृत्तं वारयितुमर्हतीति । सूय० १ श्रु० ३ अ०२ उ० । नाया० ।

विषयादि वाञ्छारहिते, तं० । पण्हा० ।

अकामछुहा- स्त्री० *[अकामक्षुधा]*

निर्जराद्यनभिलाषिणां प्रथमप-रिषहसहने, भग० १श० १उ० ।

अकामणिगरण- त्रि० *[अकामनिकरण]*

अनिच्छाप्रत्यय, भग० ७ श० ७ उ०

अकामणिज्जरा- स्त्री० *[अकामनिर्जरा]*
अकामेन निर्जरां प्रत्यनभिलाषेण निर्जरा कर्मनिर्जरणहेतुः बुभुक्षादिसहनं यत्सा अकामनिर्जरा। निर्जरानभिलाषेणैव क्षुधा आदिसहने, ठा० ४ ठा० ४ उ०। उव०।

अकामतण्हा- स्त्री० *[अकामतृष्णा]*
निर्जराद्यनभिलाषिणां सतां तृषि, भग० १ श० १ । उव०।

अकामबंभचेरवास- पुं० *[अकामब्रह्मचर्यवास]*
अकामानां निर्जराद्यनभिलाषिणां सतामकामो वा निरभिप्रायो ब्रह्मचर्य्येण स्त्र्यादिपरिभोगाभावमात्रलक्षणेन वासो रात्रौ शयनमकाम ब्रह्मचर्य्यवासः। भग० १ श० १ उ०। उव०।

अकाममरण- न० *[अकाममरण]*
अकामेन अनीप्सितत्वेन म्रियतेऽस्मिन् इति अकाममरणम्। बालमरणे, बालाणं च अकामं तु, मरणं असइं ।उत्त० ५ अ०

अकामिय- त्रि० *[अकामिक]*
निरभिलाषे, 'तहेव संता तंता परितंता अकामिया'। विपा० १ श्रु० १ अ०।

अकामिया- स्त्री० *[अकामिया]*
अनिच्छायाम्। 'अकामियाए चिणंति दुक्खं'। पण्हा० ३ अ०।

अकाय- पुं०। *[अकाय]*
पृथिव्यादिषड्विधकायविरहिते, ठा० २ ठा० ३ उ०।
औदारिकादिकायपञ्चकविप्रमुक्ते (वा) सिद्धे, आव०।

अकारग- पुं० *[अकारक]*
भक्तद्वेषरूपे, रोगविशेषे, नाया० १ श्रु० १३ अ०। उपा०। अपथ्ये, उव०।
अकर्त्तरि। त्रि०। सूय० १ श्रु० १ अ०।

अकारगवाइ- पुं० *[अकारकवादिन्]*
अकारकं वदन्ति तच्छीलाः, आत्मनोऽमूर्तत्वनित्यत्वसर्व-व्यापित्वेभ्यो हेतुभ्यः निष्क्रियत्वमेवाभ्युपपन्नेषु, सूय० १ श्रु०१ अ० १ उ०

अकारण- त्रि० *[अकारण]*
नास्ति करणं हेतुरुद्देश्यं वा यस्य। हेतुरहिते, उद्देश्यरहिते च। बुह० १ उ०।
यदा तपःस्वाध्यायवैयावृत्त्यादिकारणषट्कं विना बलवीर्य्यादि अर्थं सरसाहारं करोति, तदा पञ्चमोऽकारणदोष इत्येवंलक्षणे पञ्चमे परिभोगैषणाया दोषे, उत्त० २४ अ०।

अकारविंत- त्रि० *[अकारयत्]*
आरम्भक्रयकारणे परं अव्यापारयति। । बुह० १ उ०।

अकारिय- त्रि० *[अकारित]*
अन्यैरकारिते, पण्हा० १ अ०।

अकाल- पुं० *[अकाल]*
अप्राशस्त्ये, अप्रशस्तकाले, विहितकर्मसुपर्य्युदस्ततयाऽभि-हिते, गुरुशुक्राद्यस्तकालादौ, अप्रस्तावे, उत्त० १ अ०। कर्तव्याऽनवसरे, आचा० १ श्रु० २ अ० १ उ०। बुह०।
अवर्षासु, 'अकाले वरिसइ'। ठा० ७ ठा०।
अप्राप्तकाले, अनुचितकाले, पदार्थे। विशे० ।

अकालपडिबोहि- त्रि० *[अकालप्रतिबोधिन्]*
असमये व्याप्रियमाणे, न तेषां कश्चित् पर्य्यटनकालोऽस्ति अर्द्धरात्रावपि मृगयादौ गमनसम्भवात्। आचा० २ श्रु० ३अ० १ उ०। निसि० ।

अकालपरिहीण- न० *[अकालपरिहीण]*
परिहाणिः परिहीणं कालविलम्बः। न विद्यते परिहीणं यत्र प्रादुर्भवने तत् अकालपरिहीणम् (शीघ्रप्रकटीभवने) । रा०।

अकालपरिभोगि- त्रि० *[अकालपरिभोगिन्]*
रात्रौ सर्वादरेण भुञ्जाने, । निसि० १६ उ०। आचा०।

अकालमच्चु- पुं० *[अकालमृत्यु]*
अकाल एव जीवितभ्रंशे, । आव० १ अ०।

अकालवासि- पुं० *[अकालवर्षिन्]*
अनवसरवर्षिणि मेघे, तद्वदनवसरे दानव्याख्यानादिपरोपकार-र्थप्रवृत्ते पुरुषे च। ठा० ४ ठा० ४ उ०।

अकालसज्झायकर- पुं० *[अकालस्वाध्यायकर]*
असमाधिस्थानविशेषे, 'अकाले सज्झायकारी य कालियसुयं उग्घाडपोरुसीए पढिज्जंतं देवया असमाहिए योजयति' इति असमाधिस्थानत्वं तस्य। आव० ४ अ०। सम०।

अकाहल- त्रि० *[अकाहल]*
अमन्मनाक्षरे, पण्हा० २ अ०।

अकिंचण- त्रि० *[अकिञ्चन]*
नाऽस्य किञ्चन प्रतिबन्धास्पदं धनकनकादि अस्तीति अकिञ्चनः, निष्परिग्रहे, उत्त० ३ अ०। आव०। आव०चू०। ठा०। उव०। पण्हा०। आचा०। नाया०।
हिरण्यादिमिथ्यात्वादिद्रव्यभावकिञ्चनविनिर्मुक्ते, दश०६ अ०।
'समणाभविस्सामो अ, अणगारा अकिंचणा'सूय०२श्रु०१ अ०

अकिंचणकर- त्रि० *[अकिञ्चनकर]*
अकिञ्चत्संपादके, अकिञ्चनानां साधूनां प्रयोजनकरे, 'ववहार इच्छिए वाए य अकिंचणकरे य' योऽपि कश्चित्साधूनां प्रत्यनीकः सोऽपि तेषां राजादिकुमार प्रव्रजितानां भयतो न किंचित् करोति। अथवाऽकिञ्चनानां साधूनां यदि कथमपि केनाप्यर्थजाते प्रयोजनमुपजायते, तर्हि तत् सर्व लोके प्रायोऽप्रार्थित एव करोति, वव० २ उ०।

अकिंचणया- स्त्री० *[अकिञ्चनता]*

न विद्यते किञ्चनद्रव्यजातमस्येत्यकिञ्चनस्तद्भावोऽकिञ्चनता। निष्परिग्रहितायाम्, 'चउव्विहा अकिंचणया पन्नत्ता। तंजहा- मणअकिंचणया वइअकिंचणया कायअकिंचणया उवकरण-अकिंचणया' ठा० ४ ठा० ३ उ०।

अकिच्च- न०। न०त०। *[अकृत्य]*

अप्राशस्त्ये। अकरणीये, साधूनामविधेये, ठा०। पण्हा०।

'अकिच्चमप्पणा काउं कयमेएण भासइ। अकिच्चं पाणाइ-वायादि अप्पणा काउं कयमेतेण भासइ। अण्णस्स उच्छोडेइ' (स महामोहं प्रकरोति) आव० ४ अ०।

अकिच्चठाण- न० *[अकृत्यस्थान]*

कृत्यस्य करणस्य स्थानमाश्रयः कृत्यस्थानं तन्निषेधोऽकृत्यस्था-नम्। मूलगुणादिप्रतिसेवारूपेऽकार्यविशेषे, भग० ८श० ६ उ०

अकिज्ज- त्रि० *[अक्रेय]*

क्रेयानर्हे, 'सुक्किंयं वा सुविक्कीयं, अकिज्जं किज्जमेव वा'। दश० ७ अ०।

अकिट्ठ- त्रि० *[अकृष्ट]*

अविलिखिते, भग० ३ श० २ उ०।

अकिणंत- स्त्री० *[अक्रीणत्]*

वस्त्रादिक्रयमकुर्वाणे, बुह० १ उ०।

अकित्ति- स्त्री० *[अकीर्ति]*

सर्वदिग्व्याप्याऽसाधुवादे, गच्छा०२ अधि०।

दानपुण्यफलप्रवादे, दश० १ चूलि०।

दानकृताया एक-दिग्गामिन्या वा प्रसिद्धेरभावे, उव०।

अकिरिय- पुं० *[अक्रिय]*

कायिक्याधिकरणिक्यादि क्रियावर्जिते, ठा० ७ ठा०।

प्रशस्तमनोविनयभेदे, भग० २५ श० ७ उ०।

न विद्यन्तेऽनभ्युपगमात्परलोकविषयाः क्रिया येषां तेऽक्रियाः। नास्तिकेषु, 'अकिरियराहुमुहदुद्धरिसं' नं०।

नास्य क्रिया सावद्या विद्यते इत्यक्रियः। संवृत्तात्मकतया सांपरायिककर्माऽबन्धके, सूय०२ श्रु० १ अ०।

अकिरिया- स्त्री० *[अक्रिया]*

ततश्चाक्रिया दुष्टक्रिया मिथ्यात्वाद्युपहतस्यामोक्षसाधके अनु-ष्ठाने, यथा मिथ्यादृष्टेर्ज्ञानमप्यज्ञानमिति। एषा मिथ्यात्वभेदत्वेन दर्शिता, ठा० ३ ठा० ३ उ०।

'अकिरिया तिविहा पन्नत्ता। तंजहा- पओगकिरिया समुदा-णकिरिया अन्नाणकिरिया' अक्रिया हि अशोभना क्रियैवातो-ऽक्रिया। त्रिविधेत्यभिधायाऽपि प्रयोग इत्यादिना क्रियैवो-क्तेति। ठा० ३ ठा ३ उ०।

क्रियाऽस्तीति रूपा सकलपदार्थसार्थव्यापिनी सैवाऽयथा वस्तु-विषयतया कुत्सिता अक्रिया। नञः कुत्सार्थत्वात्। नास्तिक्ये, ठा० ८ ठा०।

योगनिरोधे, ठा० ८ ठा०।

एका अक्रिया योगनिरोधलक्षणा, नास्तिकत्वं वा। सम० १

सम० अपरिस्पन्दे, सूय०२ श्रु० २ अ०।

क्रियाया अभावे, भग० २९ श० २ उ०।

अकिरियाआय- पुं० *[अक्रियात्मन्]*

अक्रिय आत्मा येषामभ्युपगमे ते अक्रियात्मानः। सांख्येषु, सूय० १ श्रु० १० अ०।

अकिरियवाइ- पुं० *[अक्रियावादिन्]*

क्रिया अस्तीतिरूपा सकलपदार्थसार्थव्यापिनी,सैवाऽयथावस्तु -विषयतया कुत्सिता अक्रिया, नञः कुत्सार्थत्वात्, तामक्रियां वदन्तीत्येवंशीला अक्रियावादिनः। यथाऽवस्थितं हि वस्त्वने-कान्तात्मकं, तन्नास्त्येकान्तात्मकमेव वास्तीति प्रतिपत्तिमत्सु नास्तिकेषु, ठा०८ ठा०।

ते चाऽष्ट 'अट्ठ अकिरियावादी पन्नत्ता। तं जहा-एक्क वादी अणिक्कवाई मितवादी निमित्तवादी सायवादी समुच्छेदवादी णियावादी, ण संति परलोगवादी'। ठा० ४ ठा० ४ उ०।

अक्रियां क्रियाया अभावं वदन्ति तच्छीला अक्रियावादिनः। न कस्यचित्प्रतिक्षणमनवस्थितस्य पदार्थस्य क्रिया सम्भवति उत्पत्यनन्तरमेव विनाशादित्येवं वदत्सु, नं०। भग०।

तथा चाहुरेकेक्षणिकाः सर्वसंस्काराः, अस्थिराणां कुतः क्रिया? 'भूतिर्येषां क्रिया सैव, कारकं सैव चोच्यते'।। नं०।

अक्रिया जीवादिपदार्थो नास्तीत्यादिकां वदितुं शीलं येषां ते अक्रियावादिनः। भग० २९ श० २ उ०।

नास्त्येव जीवादिकः पदार्थ इत्येवं वादिषु, सूय० १श्रु० १२अ०

नास्ति माता नास्ति पितेत्येवमादिवादिनि, नास्तिके, उत्त० ३ अ०। आचा०।

ते चतुरशीतिः (८४)। 'अकिरियवाई णं होइं चुलसीई'। सूय० १ श्रु० १० अ०।

धर्मधर्मिणोरभेदोपचारात् समवसरणविशेषे।भग०२९श०२उ०

अकुओभय- त्रि० *[अकुतोभय]*

न विद्यते कुतश्चिद्धेतोः केनापि प्रकारेण जन्तूनां भयं यस्मात् सोऽकुतोभयः। संयमे, आचा० १ श्रु० १ अ० ३ उ०।

अकुंचियाग- त्रि० *[अकुञ्चिकाक]*

कुञ्चिकाविरहिते, पिंड०।

अकुक्कुय- त्रि० *[अकुकुच]*

हस्तपादमुखादिविरूप-चेष्टारहिते। वव० ३ उ०।

ईषन्मुखविकाररहिते, आचा० १ श्रु० १ अ० ३ उ०।

सुसाणे सुण्णगारे वा, रुक्खमूले व एगओ।

अकुक्कुओ णिसीएज्जा, ण य वित्तासए परं।।

अकुक्कुचोऽशिष्टचेष्टारहितो निषीदेत् तिष्ठेत्, यद्वा, अकु-क्रुचः कुन्थ्वादिविराधनाभयात् कर्मबन्धहेतुत्वेन कुत्सितं हस्तपादादिभिरस्पन्दमानो निषीदेत्। उत्त० ३ अ०।

अकुक्कुय- त्रि०*[अकुकूज]*

कुत्सितं कूजति पीडितः सन्नाक्रन्दति। कुकूजो न तथेत्यकुकूजः, कुत्सितकूजना कर्त्तरि, उत्त० २१ अ०।

अकौकुच्य- त्रि०

नास्ति कौकुच्यं भाण्डविटचेष्टा यस्य सोऽकौकुच्यः। सम्यक्-साधुमुद्रायुक्ते, उत्त० १९ अ०।

अकुडिल- त्रि० *[अकुटिल]*

अमायिनि, वव० ३ उ०।

अवक्रे, जंबू० २ वक्ष०।

ऋजौ, आचा० १ श्रु० १ अ० ३उ०।

अकुतूहल- त्रि० *[अकुतूहल]*

न विद्यते कुतूहलं यस्य स अकुतूहलः कुहकेन्द्रजालभगलविद्यानाटकादीनामविलोकके। । उत्त० १० अ०।

अकुमारभूय- त्रि० *[अकुमारभूत]*

अकुमारब्रह्मचारिणि, 'अकुमारभूए जे केइ कुमारभूए ति हं वए'। सम० ३ सम०।

अकुय- त्रि० *[अकुच]*

कुचस्पन्दने, न कुचतीत्यकुचः। वव० ८ उ०।

निश्चले, निसि० १ उ०।

अकुसल- त्रि० *[अकुशल]*

वक्तव्यावक्तव्यविभागानिपुणे। पण्हा० आश्र० २ द्वा०।

स्थूलमतौ, 'तसथावरहिंसाए, जणा अकुसला०'। दश०१ अ०

अशोभने च। उव०।

अकुसलचित्तणिरोह- पुं० *[अकुशलचित्तनिरोध]*

आर्त्तध्यानादिप्रतिषेधेनाऽकुशलमनोनिरोधे। दश० ९ अ०।

अकुसलजोगणिरोह- पुं० *[अकुशलयोगनिरोध]*

अकुशलानां मनोवाक्काययोगानां व्यापाराणां निरोधः अकुशलयोगनिरोधः। मनआदित्रिविधकरणैरायुक्ततायाम्, ओह०।

अकुसील- पुं० *[अकुशील]*

न कुशीलोऽकुशीलः। कुशीलभिन्ने, सूय० १ श्रु० ९ अ०।

अकुहय- त्रि० *[अकुहक]*

इन्द्रजालादिकुहकरहिते, 'अलोलुए अक्कुहए अमाई, अपीसुणे आवि अदीणवित्ती'। दश० ९अ० २उ०।

अकेवल- त्रि० *[अकेवल]*

न विद्यते केवलमस्मिन्नित्यकेवलम्। अशुद्धे, सूय० २श्रु० २अ०

अकोऊहल्ल- त्रि० *[अकौतूहल]*

नटनर्तकादिषु, अकौतुके, 'नो भावए नो वि य भाविअप्पा, अकोऊहल्ले य सया स पुज्जो'।। दश० ९ अ० ३ उ०।

अकोप्प- त्रि० *[अकोप्य]*

अकोपनीये, अदूषणीये, बुह० १ उ०

अकोप्यमद्वेष्यं रम्यं जङ्घायुगलं यासां तास्तथा। पण्हा०३ अ०।

अकोविय- त्रि० *[अकोपित]*

अदूषणीये, 'आरियं उवसंपज्जे, सव्वधम्ममकोवियं'। सूय० १ श्रु० ८ अ०।

अकोविय- पुं० *[अकोविद]*

श्रुतेन वयसा चाऽप्राप्तयोग्यताके, वव० १ उ०।

अपण्डिते, सच्छास्त्रावबोधरहिते, सूय० १ श्रु० १ अ० २ उ०

आरंभाइं न संकंति, अवियत्ता अकोविया'। सूय० १ श्रु० १ अ० ३ उ०।

सम्यग्ज्ञाननिपुणे, वणे मूढे जहा जंतू, मूढे णेयाणुगामिए। दो वि एए अकोविया, तिव्वं सोयं तियच्छइ'। सूय० १ श्रु० १ अ० ३ उ०। दश०। पिंड०।

अकोवियप्प- पुं० *[अकोविदात्मन्]*

सम्यक्परिज्ञानविकले, बुह०१ उ०

अकोहण- त्रि० *[अक्रोधन]*

क्रोधरहिते, सूय० १ श्रु० १० अ०।

अक्कंत- त्रि० *[आक्रान्त]*

अवष्टब्धे, आचा० १ श्रु०६ अ० ५ उ०।

अभिभूते, स्वोपरिगत्या व्याप्ते, सूय० १ श्रु० १ अ० ४ उ०।

आक्रमणे, नं०। भग० १ श० ३ उ०।

आक्रान्ते, पादादिना भूतलादौ भवति। अचित्तवायुकायिकभेदे, पुं०। ठा० ५ ठा० ३ उ०।

अचित्तस्य प्रथमो भेदः, ओह०

अक्कंतदुक्ख- त्रि० *[दुःखाक्रान्त]*

आक्रान्ता अभिभूता दुःखेन शारीरमानसेनाऽसातोदयेन दुःखा- क्रान्ताः। दुःखाभिभूतेषु। सूय० १श्रु० १ अ० ४उ०।

अक्कंतिय- पुं०*[आक्रान्तिक]*

न कुतोऽपि बिभ्यति ये स्तेन। बुह०

अक्कंदण- न० *[आक्रन्दन]*

महता शब्देन विरवणे, आव० ४ अ०।

अक्कतूवरी- स्त्री० *[अर्कतुवरी]*

गुच्छभेदे, पन्न० १ पद०।

अक्कम- पुं० *[आक्रम]*

अवृद्धिः। बलेनाऽतिक्रमणे, आक्रमणमाक्रमः। पराजये, उच्छेदे, आव० म०।

बलात्कारे, आव० ४ अ०।

अक्कमण- न० *[आक्रमण]*

अभिभवने, विशे०।

पादेनाक्रीडने, आव० ४ अ०।

अक्कमित्ता- अ० *[आक्रम्य]*

आक्रमणं कृत्वेत्यर्थे। पण्हा० १ अ०।

अक्किट्ठ- त्रि० *[अक्लिष्ट]*

अबाधिते, निर्वेदने, भग० ३ श० २ उ०।

स्वशरीरोत्थल्केशरहिते, 'जीवा० ३ प्रति।

अक्केज्ज- त्रि० *[अक्रेय]*

अक्रयणीये, ठा० ९ ठा०।

अक्कोस- न० *[अक्रोश]*

वर्षायोग्यक्षेत्रविशेषे, यस्य मूलनिबन्धात्परतः षण्णां दिशाम् अन्यतरस्यामेकस्यां द्वयोस्तिसृषु वा दिक्षु अटवीजलश्वापदः सन्ति, तेन पर्वतनदीव्याघातेन च गमनं भिक्षाचर्या च न सम्भवति, तन्मूलनिबद्धमात्रमक्रोशम्। वव० १ उ०।

अक्कोस- पुं० *[आक्रोश]*

दुर्वचने, भग० ८ श० ८ उ०। सम०

निष्ठुरवचने, आव० ४ उ०।

अनिष्टवचनम्, द्वादशः परीषहः। आव०

असभ्यभाषायाम्, उत्त० २ अ०।

अक्कोसग- त्रि० *[आक्रोशक]*

दुर्वचनवादिनि। उत्त० २ अ०।

अक्कोसणा- स्त्री० *[आक्रोशना]*

मृतोऽसि त्वमित्यादिवचनेषु, नाया० १६ अ०।

अक्कोसपरिसह- पुं० *[आक्रोशपरिषह]*

आक्रोशनमाक्रोशोऽसभ्यभाषात्मकः, स एव परीषहः आक्रोश-परीषहः। द्वादशे परीषहे उत्त० २ अ०।

आक्रोशोऽनिष्टवचनं, तच्छ्रुत्वा सत्येतरालोचनया न कुप्येत्, किन्तु सहेत। आव० ४ अ०।

नाऽऽकृष्टो मुनिराक्रोशेत्, सम्यग्ज्ञानाद्यवर्जकः। अपेक्ष-तोपकारित्वं, न तु द्वेषं कदाचन' ।आव० १ अ०। आव०म०।

अक्कोह- त्रि० *[अक्रोध]* ।

क्रोधोदयविरहिते,। विफलीकृतक्रोधे, उव०।

नञः स्वल्पार्थत्वात् स्वल्पक्रोधे, जंबू० २ वक्ष०।

क्रोधमकुर्वाणे, उत्त० २ अ०।

अक्ख-१ पुं० *[अक्ष]*

जीवे, आव०म०। ठा०।

जीवो अक्खो अत्थव्वावणभोयणगुणाणिओएण। अक्षस्तावत् जीव उच्यते, केन हेतुनेत्याह- अर्थव्यापन भोजन गुणान्वितो येन तेनाक्षो जीवः।

इदमुक्तं भवति- अश्नुते ज्ञानात्मना सर्वार्थान् व्याप्नोतीत्यौ-णादिकनिपातनादक्षो जीवः। अथवा

अश्नाति समस्तत्रिभुवनान्तर्वर्त्तिनो देवलोक समृद्ध्यादीनर्थान् पालयति भुङ्क्ते वेति निपातनादक्षो जीवः

अश्नातेर्भोजनार्थत्वाद्, भुजेश्च पालनाभ्यवहारार्थत्त्वादिति भावः इत्येवमर्थं व्यापनभोजनगुणयुक्तत्त्वेन जीवस्याक्षत्वं सिद्धं भवति । विशे०।

अक्ख-२ पुं० *[अक्ष]*

इन्द्रिये, न० ।आव०म ।पन्न० ।नाया० ।विशे० ।निसि० ।दश०।

अक्ख- ३ पुं० *[अक्ष]*

अश्नाति नवनीतादिकमित्यक्षः धुरि(चक्रनाभौ)। उत्त १ अ० ।

अक्खभंगम्मि सोयइ ।उत्त०५अ० ।अनु० ।उव० ।जंबू०। भग०

अक्ख-४ पुं० *[अक्ष]*

चतुर्भिर्हस्तैर्निष्पन्नेऽवमानविशेषे, अनु०। ज्यो० ।

व्यावहारिकोऽक्षः षण्णवत्यङ्गुलमानेन भवति ।सम०९६ सम०

अक्ष इत्यक्षोपाङ्गदानवच्चेति द्रुमपुष्पिकाऽध्ययने, दश० १ अ०

अक्ख-५ पुं० *[अक्ष]*

चन्दनके, अस्मिन् हि अनाकारवर्ती साध्वादेः स्थापनां कृत्वा आवश्यकक्रियां कुर्वतः स्थापनाऽऽवश्यकं भवति।अनु० ।आव

तद्रूपे उत्कृष्टौपग्रहिकोपधिविशेषे, 'अक्खासंथारो वा, एग-मणेगंगिओ अउक्कोसो। पोत्थगपणगं फलगं, उक्कोसोवग्गहो सव्वो'। गच्छा०। पिंड०।

अक्ख-६ पुं० *[अक्ष]*

रुद्राक्षफलविशेषे, अणु० ३ वर्गः।

पाशके, कपर्दके, 'कुजए अपराजिए जहो, अक्खेहिं कुसलेहिं दीवयं'। सूय० १ श्रु० २ अ० २ उ०।

अक्खइय- त्रि० *[अक्षतिक]*

अक्षये,अक्षतिकबीजेन अक्षयेण दुःखहेतुनेत्यर्थः ।पण्हा०२अ०

अक्खओदय- त्रि० *[अक्षयोदक]*

अक्षयं शाश्वतमविनाश्युदकं जलं यस्य सोऽक्षयोदकः। नित्य-सलिलभृते, 'जहा से सयंभूरमणे उदही अक्खओदए'। उत्त० ११ अ०।

अक्खचम्म- न० *[अक्षचर्मन्]*

जलापकर्षणकोशे, 'अक्खचम्मं उट्ठगंडदेसं'। नाया० ६ अ०।

अक्खणिबद्धा- स्त्री० *[अक्षनिबद्धा]*
गन्ध्याम्, पिंड०।

अक्खपाय- पुं० *[अक्षपाद]*
'अक्षपादेनोक्ते ग्रन्थे च'। विशे०। आव०म०।

अक्खम- त्रि० *[अक्षम]*
अयुक्तत्वे, ठा० ३ ठा० ३ उ०।
अनुचितत्वे असमर्थत्वे, ठा० ५ ठा० १ उ०।

अक्खय-१ न० *[अक्षज]*
'अक्षव्यापारमाश्रित्य, भवदक्षजमिष्यते। तद् व्यापारो न तत्रेति, कथमक्षभवं भवेत् ?'।। आव०म०।

अक्खय-२ पुं०। *[अक्षत]*
परिपूर्णे, सम० १ सम०। पण्हा०।

अक्खय- ३ त्रि० *[अक्षय]*
नाऽस्य क्षयोऽस्तीत्यक्षयः। नं०।
अपर्य्यवसाने, आव०४ अ०।
अप्रणाशिन। सम०।
अक्षयं क्षयरहितं साद्यनन्तवत्त्वात्। कल्प०।
अनाशंसाद्यपर्यवस्थितिकत्वात्। भग० १ श० १ उ०।
विनाशकरणाभावात्। 'जीवा० ३ प्रति०। रा०।
स भगवान् प्रज्ञयाऽक्षयोऽक्षीणज्ञान इत्यर्थः। सूय० १ श्रु० ६ अ०।

अक्खयणिहि- पुं० *[अक्षयनिधि]*
देवभाण्डागारे, । विपा० १ श्रु० ७ अ०।
अव्यये भण्डागारे। नाया० १ श्रु० २ अ०।

अक्खयणीवि- स्त्री० *[अक्षयनीवि]*
अव्यये मूलधने, येन जीर्णीभूतस्य देवकुलस्योद्धारः करिष्यते। नाया० १ श्रु० २ अ०।

अक्खयायार- पुं० *[अक्षताचार]*
स्थापितादिपरिहारिणि आचारवति साधौ, 'आहाकम्मुद्देसिय, ठवियरइयकीयकारियं छेज्जं। उब्भिण्णाहडमाले, वणीमगा-जीवणणिकाए। परिहरतिऽसणं, पाणं, सेज्जोवहिपूतिसंकियं मीसं। अक्खयमभिण्णममए, संकिलिट्ठं वासए जुत्तो'।। एतानि योऽशनपानादिशय्योपधींश्च परिहरति। तथा पूतिं सशंकितं मिश्रम् उपलक्षणमेतत् अध्यवपूरकादिकं च यश्चावश्यके युक्तः सोऽक्षताचारः। वव० ३ उ०।

अक्खयायारया- स्त्री० *[अक्षताचारता]*
परिपूर्णाऽऽचारतायाम्। वव० ३ उ०।

अक्खयायारसंपण्ण- त्रि० *[अक्षताचारसंपन्न]*
अक्षतेनाचारेण संपन्नः। अक्षताचारसंपन्ने। वव० ३ उ०।

अक्खर- न० *[अक्षर]*
न क्षरति न विनश्यतीत्यक्षरम्। केवलज्ञाने, 'सव्वजीवाणं पि य णं अक्खरस्स अणंतभागो णिच्चुग्घाडिओ' विशे०।
क्षर संचलने, न क्षरतीति अक्षरम्। ज्ञाने, चेतनायाम्। न खल्विदमनुपयोगेऽपि प्रच्यवते ततोऽक्षरमिति, आव० म०।
न क्खरइ अणुवओगे, वि अक्खरं सो य चेयणाभावो।
अविसुद्धनयाणमयं, सुद्धनयाणऽक्खरं चेव।।
'क्षर संचलने' न क्षरति न चलत्यनुपयोगेऽपि न प्रच्यवत इत्यक्षरः। स च चेतनाभावो जीवस्य ज्ञानपरिणाम इत्यर्थः। तथा च तन्मतानुसारिणो मीमांसका नित्यं शब्दमातिष्ठमानाः प्रतीता एव। बुह० १ उ०।

अक्खरगुण- पुं० *[अक्षरगुण]*
अकारादीनामक्षराणां गुणोऽनन्तागमपर्यायवत्वमुच्चारणं च, अन्यथाऽर्थस्य प्रतिपादयितुमशक्यत्वात्। सूय० १ श्रु०१ अ० १ उ०

अक्खरगुणमइसंघडणा- स्त्री० *[अक्षरगुणमतिसंघटना]*
अक्षरगुणेन मतेः संघटना, भावश्रुतस्य द्रव्यश्रुतेन प्रकाशनेऽ-क्षरगुणस्य मत्या संघटनायां बुद्ध्या रचनायां च। सूय० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

अक्खरपुट्ठिया- स्त्री० *[अक्षरपृष्ठिका]*
ब्रह्मया लिपेर्नवमे लेखविधाने। पन्न० १ पद०।

अक्खरलंभ- पुं० *[अक्षरलाभ]*
पुरुषस्त्रीनपुंसकघटपटादिवर्णविज्ञाने,। विशे०। सूय०।

अक्खरविसुद्ध- त्रि० *[अक्षरविशुद्ध]*
पदैरक्षरैर्वाऽलङ्कृते, पंच० चू०।

अक्खरसंबद्ध- पुं० *[अक्षरसंबद्ध]*
वर्णव्यक्तिमति, ठा० २ ठा० ३ उ०। (अस्य व्याख्या भासा शब्दे द्रष्टव्यम्)

अक्खरसण्णिवाय- पुं० *[अक्षरसन्निपात]*
अक्षराणां सन्निपाताः संयोगाः। राय०।
अकारादि (वर्ण) संयोगेषु, 'अजिणाणं जिणसंकासाणं सव्वक्खरसण्णिवायाणं'। ठा० ३ ठा० ४ उ०।

अक्खरसम- न० *[अक्षरसम]*
गेयस्वरभेदे, यत्र अक्षरे दीर्घे दीर्घस्वरः क्रियते, ह्रस्वे ह्रस्वः, प्लुतेप्लुतः, सानुनासिकेसानुनासिकस्तदक्षरसमम्, ठा०७ ठा

अक्खलिय- त्रि० *[अस्खलित]*
उपलशकलाद्याकुलभूभागे, लाङ्गलमिव स्खलति यत्तत्स्ख-लितं, न तथाऽस्खलितम्। *गुणभेदे, अनु०। गच्छा०। आव०म०।

अक्खलियचरित्त- पुं० *[अस्खलितचारित्र]*
अस्खलितमतिचाररहितं चारित्रं मूलगुणरूपं यस्यासौ अस्खलितचारित्रः। निरतिचारचारित्रे, ईदृशेन साकं केवल्यपि विहरेत् । गच्छा० १ अधि०।

अक्खवाडग- पुं० *[अक्षपाटक]*
चतुरस्राकारे (आसने,) 'तेसि णं बहुमज्झदेसभाए पत्तेयं २ वइरामया अक्खावडगा पन्नत्ता'। 'जीवा० ३ प्रति०।

अक्खसुत्तमाला- स्त्री० *[अक्ष*माला]*
अक्षा रुद्राक्षाः फलविशेषास्तेषां सम्बन्धिनी *प्रतिबद्धा माला आवली या सा तथा सैव गण्यमानैर्निमसतयाऽतिव्यक्तत्वात्। रुद्राक्षमालायाम्, अनुत्त० ३ वर्ग।

अक्खसोय- न० *[अक्षस्रोतस्]*
चक्रधूःप्रवेशरन्ध्रे, भग० ७ श० ६ उ०।

अक्खसोयप्पमाण- त्रि० *[अक्षस्रोतःप्रमाण]*
अक्षस्रोतश्चक्रधूःप्रवेशरन्ध्रं, तदेव प्रमाणमक्षस्रोतःप्रमाणम्। भग० ७ श० ६ उ०।
चक्रनाभिछिद्रप्रमाणे, उव०।

अक्खसोयप्पमाणमेत्त- त्रि० *[अक्षस्रोतःप्रमाणमात्र]*
अक्षस्रोतः प्रमाणेन मात्रा परिमाणमवगाहतो यस्य स तथा (चक्रनाभिच्छिद्रप्रमिताऽवगाहे) । भग० ७ श० ६ उ०।

अक्खा- स्त्री० *[आख्या]*
अभिधाने, 'कालो उ लंदक्खा,' लन्दाख्या इत्यभिधानम्। स कालः प्रतिपत्तव्यः। बुह० ३ उ०।

अक्खाइय- न० *[आख्यातिक]*
पठति भुङ्क्ते इत्यादि (आख्यातनिष्पन्ने) यव भेदे, आव०म०। विशे०
धावतीत्याख्यातिकम् क्रियाप्रधानत्वात्। अनु०।
साध्यक्रियापदे,'यथाऽकरोत् करोति करिष्यति' पण्हा०२ अ०

अक्खाइयट्ठाण- न० *[आख्यायिकास्थान]*
कथानकस्थाने, आचा० २ श्रु० ११ अ०।

अक्खाइयणिस्सिय- न० *[आख्यायिकानिश्रित]*
आख्यायिका प्रतिबद्धेऽसत्प्रलापे, एष नवमो मृषाभेदः। ठा० १ ठा०।

अक्खाइया- स्त्री० *[आख्यायिका]*
कल्पित-कथायाम् संथा०।
यथा तरङ्गवतीमलयवतीप्रभृतयः। बुह १ उ०।

अक्खाउं- अव्य० *[आख्यातुम्]*
आख्यानं कर्तुमित्यर्थे, 'न य दिट्ठं सुयं सव्वं भिक्खू अक्खाउमरिहइ'। दश० ८ अ०।

अक्खाग- पुं० *[आख्याक]*
म्लेच्छविशेषे, सूय० १ श्रु० ५ अ०। पन्न०

अक्खाडग- पुं० *[आखाटक]*
प्रेक्षाकारिजनासनभूत। ठा०४ ठा० २ उ०।
चतुरस्रे लोकप्रतीतेऽर्थे, ठा० ३ ठा० ३ उ०
'तेसि णं बहुसमरमणिज्जाणं भूमिभागाणं बहुमज्झदेसभाए पत्तेयं २ वइरामए अक्खाडए'। राय०।
प्रेक्षास्थाने आसनविशेषलक्षणः। भग०
मल्लयुद्धस्थानम्। पिण्ड०

अक्खाण- न० *[आख्यान]*
आभिमुख्येनादरेण वा ख्यापनं प्रकथनमभिधानं वा। आभिमुख्येनाऽऽदरेण वा प्रकथनेऽभिधाने च, विशे०।
आख्यानकानि धूर्ताऽऽख्यानकादीनि। बुह २ उ०। निसि०।

अक्खाय- त्रि० *[आख्यात]*
पूर्वतीर्थकरगणधरादिभिःप्रतिपादिते,सूय०१श्रु०३अ।आव०
सं तिमे य द्रुवे ठाणा, अक्खाया मारणंति य। उत्त० ९ अ०।
समन्तात्कथिते, उत्त०२ अ०।
आ मर्यादया जीवाऽजीवलक्षणासंकीर्णतारूपतयाऽभिविधिना वा समस्तवस्तुविस्तारव्यापनलक्षणेन ख्यातं कथितमाख्यातमात्मादिवस्तु जातमिति गम्यते। ठा०१ ठा०।सूय०।दश०।
भणिते, संथा०।
केवलज्ञानेनोपलभ्यावेदितम्। दश०
सकलजन्तुभाषाभिव्याप्त्या कथितम्। उत्त०

अक्खायपव्वज्जा- स्त्री० *[आख्यातप्रव्रज्या]*
आख्यातेन धर्मदर्शनेन आख्यातस्य वा प्रव्रज्येत्यभिहितस्य गुरुभिर्या साऽऽख्यातप्रव्रज्या। प्रव्रज्याभेदे, ठा० ३ ठा० २ उ०।
'अक्खायाए जंबू धम्मं अक्खादिपभवस्स'। पंच० भा०।
'अक्खायाए सुदंसणो सेट्ठी सामिणा संबोहिओ'। पंच० चू०।

अक्खि- न० *[अक्षि]*
अश्रुते विषयान्, 'अक्खिहि य णासाहि य जिब्भाहि य ओट्ठेहि य'। विपा० १ श्रु० २ अ०।
'ते अंजिअक्खितिलए'। निसि० १ उ०।

अक्खितर- न० *[अक्ष्यन्तर]*
नेत्ररन्ध्रे, विपा०।
'अक्खिंतरेसु दुबे (नाड्यौ)। विपा० १ श्रु० १ अ०।

अक्खित्त-१ त्रि० *[आक्षिप्त]*
आकृष्टे, नाया० १ श्रु० १६ अ०।
उपलोभिते, नाया० १ श्रु० २ अ०।
आवर्जिते, दश, ० ३ अ०।

अक्खित्त-२ [अक्षेत्र]

क्षेत्राभावे, एकक्षेत्रस्थितानां मार्गणा कर्तव्या, कस्य क्षेत्रं भवति कस्य वा न भवति क्षेत्रमित्यर्थः। वव० ४ उ०।

क्षेत्रभिन्ने बहिरर्थे अक्षेत्रे स्थितानामुपाश्रये उपाश्रयविषया मार्गणा कर्तव्या। अक्षेत्रे उपाश्रयस्य मार्गणा कर्तव्येत्युक्तं तत्र तावदक्षेत्रमाह 'ण्हाणाणुजाण अद्धाणसीसए कुलगणे चउक्के य। गामाइवाणमंतरमहे य उज्जाणमादीसु।

इंदक्कील मणोग्गाहो जत्थ राया जेहिं व पंच इमे। अमच्चपुरोहिया सेट्ठी, सेणावति सत्थ वाहो य'। वव० ४ उ०।

जं दिसं वाघातो तं दिसं अक्खुज्जाणं जाव खेत्तं भवति परओ अक्खेत्तं'। निसि० १ उ०।

अक्खित्तणियंसण- त्रि० [आक्षिप्तनिवसन]

आकृष्टपरिधानवस्त्रे,'अक्खित्तणियंसणामलिणडंडिखंडवसणा' । पण्हा० ३ अ०।

अक्खिराग- पुं० [अक्षिराग]

अक्ष्णां रागो रञ्जनम्। सौवीरादिकेऽञ्जने, सूय० १ श्रु० ९ अ०।

अक्खिवण- न० [आक्षेपण]

चित्तव्यग्रतापादने, पण्हा० ३ अ०।

अक्खिविउं- अव्य० [आक्षेप्तुम्]

स्वीकर्तुमित्यर्थे, निसि० १ उ०।

अक्खिविउकाम- त्रि० [आक्षेप्तुकाम]

स्वीकर्तुकामे, निसि० १ उ०।

अक्खिवेयणा- स्त्री० [अक्षिवेदना]

नेत्रपीडात्मके रोगभेदे, विपा० १ श्रु० ४ अ०।

अक्खीण- त्रि० [अक्षीण]

अत्रुटिते, उव०।

क्षयमनुपगते, पन्न० २६ पद०।

'नामगोयस्स वा कम्मस्स अक्खीणस्स अवेइयस्स' अक्षीणस्य स्थितेरक्षयेण। कल्प०।

'अक्खीणदव्वसारा'। पण्हा० ३ अ०।

अक्षीणायुष्कमप्रासुकम्। भग०

अक्खीणझंझए– त्रि० [अक्षीणझञ्झः]

अक्षीणकलहः। आव०

अक्खीणपडिभोइ- पुं० [अक्षीणपरिभोगिन्]

अक्षीणमक्षीणायुष्कमप्रासुकं परिभुञ्जते इत्येवंशीला अक्षीण-परिभोगिनः।

अप्रासुकपरिभोगिषु, अनपगताहारशक्तिषु, आजीवियसमय-स्स णं अयमट्ठे पन्नत्ते अक्खीपडिभोइणो सव्वसत्ता।

भग० ८ श० ५ उ०।

अक्खीणमहाणसिय- पुं० [अक्षीणमहानसिक]

महानसमन्नपाकस्थानं तदाश्रितत्वाद्वाऽन्नमपि महानसमुच्यते, ततश्चाक्षीणं पुरुषशतसहस्रेभ्योऽपि दीयमानं स्वयमभुक्तं सत् तथाविधलब्धिविशेषादत्रुटितं, तच्च तन्महानसं च भिक्षालब्धं भोजनमक्षीणमहानसं तदस्ति येषां ते तथा। उव०।

अक्षीणमहानसीं नामलब्धिमुपपन्नेषु, येषामसाधारणान्तराय-क्षयोपशमादल्पमात्रमपि पात्रपतितमन्नं गौतमादीनामिव पुरुष शतसहस्रेभ्योऽपि दीयमानं स्वयमेवाभुक्तं न क्षीयते ते अक्षीण महानसाः,। गच्छा० २ अधि०।

अक्खीणमहाणसियस्स भिक्खं ण अन्नेण णिट्ठविज्जइ, तम्मि जिमिते णिट्ठाति। आव० चू० १ अ०। आव०म०।

अक्खीणमहालय- पुं० [अक्षीणमहालय]

लब्धिविशेषमवाप्तेषु, ते च यत्र परिमितभूप्रदेशेऽवतिष्ठन्ते तत्रासंख्याता अपि देवास्तिर्यञ्चो मनुष्याश्च सपरिवाराः परस्पर बाधारहितास्तीर्थकरपर्षदीव सुखमासते इति। गच्छा० २ अधि०।

अक्खीरमधुसप्पिय- पुं० [अक्षीरमधुसर्पिष्क]

दुग्धक्षौद्रघृतवर्जके अभिग्रहविशेषधारके, पण्हा० १ अ०।

अक्खुआआरचरित्त- पुं० [अक्षताकारचरित्त]

अक्षत आकारः स्वरूपं यस्य अक्षताकारमतीचारैरप्रतिहतस्व-रूपं चरित्रं येषां ते तथा। निरतिचारचरित्रेषु, 'अट्ठारससहस्स सीलंगधरा अक्खुआ आरचरित्ता ते सव्वे सिरसा मणसा मत्थएण वंदामि'। आव० ४ अ० ।

अक्खुण्ण- त्रि० [अक्षुण्ण]

अमर्दिते, निसि० १० उ०।

अक्खुण्णेसु पहेसु पुढवी उदगंमि होइ पुहओ, बुह० १ उ०।

अक्खुण्णइ– धा० [आक्षुणत्ति]

विलिखति। बृह०

अक्खुपुरि- स्त्री० [अक्षपुरि]

नगरीभेदे, यत्र सूर्यप्रभो ग्रहपतिः, सूरश्रीस्तस्य भार्या, तस्याः सूरप्रभा दारिकाः सूर्य्यस्य अगमहिषीत्वेन जाताः,नाया० २श्रु०

अक्खेव-१ पुं० [आक्षेप]

आक्षेपणमाक्षेपः, आशङ्कायाम्, आव०म०। ।

पूर्वपक्षे, विशे०।

'अक्खेवो सुत्तदोसा पुच्छा वा' आक्षेपो नाम यत्सूत्रदोषा उच्यन्ते पृच्छा वा क्रियते, बुह १ उ०।

अक्खेव-२ पुं० [आक्षेप]

परद्रव्याक्षेपस्वरूपे एकोनविंशतितमे गौणचौर्ये,

। पण्हा० ३ अ० ।

अक्खेवणी- स्त्री० *[आक्षेपणी]*

आक्षिप्यते मोहात्तत्वं प्रत्याकृष्यते श्रोताऽनयेत्याक्षेपणी, कथा-भेदे, सा चतुर्विधा- आयारक्खेवणी ववहारक्खेवणी पण्णत्तिक्खेवणी दिट्ठिवायक्खेवणी'। ठा० ४ ठा०।

आयारे ववहारे, पन्नत्ती चेव दिट्ठिवाए य।
एसा चउव्विहा खलु, कहा उ अक्खेवणी होइ ।।
विज्जा चरणं च तवो, य पुरिसकारो य समिइगुत्तीओ।
उवइस्सइ खलु जहियं, कहाइ अक्खेवणीइ रसो ।।

यत्र क्वचिदसावुपदेशः कथाया आक्षेपण्या रसो निष्यन्दः सार इति गाथार्थः। दश० । निसि० ३ अ०। गच्छा०। उव०।

अक्खेवि- त्रि० *[आक्षेपिन्]*

आक्षिपन्ति वशीकरणादिना ये ते ततो मुष्णन्ति ते आक्षेपिणः (वशीकरणादिना परद्रव्यमुट्षु) पण्हा० ३ अ०।

अक्खोड- पुं० *[अक्षोट]*

तत्फले, । पन्न० १७ पद०।

अक्खोडभंग- पुं० *[अक्षोटभङ्ग]*

खोटभङ्ग शब्दार्थे, 'खोटभंगो त्ति वा उक्कोडभंगो त्ति वा अक्खोडभंगो त्ति वा एगट्ठं'। वव० १ उ०। निसि०।

अक्खोभ- त्रि० *[अक्षोभ]*

क्षोभवर्जिते, 'अक्खोभे सागरो व्व थिमिए'। पण्हा० ५ अ०।

अक्षोभ्यस्य परीषहोपसर्ग संभवेऽपि निष्प्रकम्पस्य, नं०।

अक्खोवंजण- न० *[अक्षोपाञ्जन]*

शकटधूर्म्रक्षणे, 'अक्खोवंजणवणाणुलेवणभूयं' अक्षोपाञ्जन-व्रणानुलेपनभूतम् अक्षोपाञ्जनं च शकटधूर्म्रक्षणं, व्रणानुलेपनं च क्षतस्यौषधेन विलेपनम्, अक्षोपाञ्जनव्रणानुलेपने, ते इव विवक्षितार्थसिद्धिरसादिनिरभिष्वङ्गतासाधर्म्याद्यः सोऽक्षोपाऽ-ञ्जनव्रणानुलेपनभूतस्तम्, क्रियाविशेषणं वा।

भग० ७ श० १ उ०

अक्खंड- त्रि० *[अखण्ड]*

पौर्णमासीचन्द्रबिम्बवत्। ठा० ५ ठा० १ उ०।

संपूर्णावयवे, आव०म०। तं०। नाया०।

सर्वधर्मास्तिकायादिकं संपूर्ण देशदैशिककल्पनारहितमखण्डं वस्तु। विशे०।

अखण्डमविराधितं चारित्रमेव प्राकारो यस्य तत्तथा। नं०।

अक्खंडदंत- त्रि० *[अखण्डदन्त]*

अखण्डाः सकला दन्ता येषां ते अखण्डदन्ताः।जीवा०३ प्रति०

परिपूर्णदशनेषु, जंबू० २ वक्ष० उव०।

अक्खंडियसील- त्रि० *[अखण्डितशील]*

अभग्नचारित्रे, पंच० चू०।

अखिल- त्रि० *[अखिल]*

अखिलो ज्ञानदर्शनचारित्रैः संपूर्णः। सूय० १ श्रु० ७ अ०।

अखेत्त- त्रि० *[अक्षेत्र]*

छिण्णमंडवं। निशी० ३४१ आ।

सचित्तपृथ्व्यादिमदस्थण्डिलम्। बृह० १४० आ।

अखेम- त्रि० *[अक्षेम]*

सोपद्रवे मार्गे, तद्वत् क्रोधाद्युपद्रवसहिते पुरुषजाते च। ठा० ४ ठा० २ उ०।

अखेमरूव- पुं० *[अक्षेमरूप]*

आकारेण सोपद्रवे मार्गे, तद्वत् द्रव्यलिङ्गवर्जिते, । ठा० ४ ठा० २ उ०।

अखेयण्ण- त्रि० *[अखेदज्ञ]*

अनिपुणे, सूय० १ श्रु० १० अ०।

अकुशले, आचा० १ श्रु० २ अ० ३ उ०।

अग-१ पुं० *[अग]*

न गच्छतीत्यगः। वृक्षे, । आ०म.। निसि०। विशे०।

अग-२ पुं० *[अग]*

पर्वते, । कल्प०।

अगइसमावण्ण- पुं० *[अगतिसमापन्न]*

अगतिं नरकादिं गच्छति। नैरयिकादौ, दुविहा णेरइया पन्नत्ता। तं जहा- गइसमावन्नगा चेव अगइसमावन्नगा चेव। जाव वेमाणिया।

गतिदण्डके गतिसमापन्नका नरकं गच्छन्तः, इतरे तु तत्र ये गताः अथवा गतिसमापन्ना नारकत्वं प्राप्ताः, इतरे तु द्रव्य नारकाः, अथवा चलस्थिरत्वापेक्षया ते ज्ञेया। ठा०२ ठा० उ०।

अगंठिम- न० *[अग्रन्थिम]*

कदलीफलेषु, खण्डाखण्डीकृतेषु वा फलेषु, बुह० १ उ०।

अध्वकल्पे, 'सक्करघययगुलमीसा खज्जूरगंठिमा वत्तम्मि' अगंठिमा नाम कयलया अन्ने भण्णंति मरहट्ठविसए फलाण कयलंकप्पमाणाओ पिंडीओ एक्कम्मि डाले बहुक्किओ भवंताणि फलाणि खंडाखंडाणि कयाणि घेप्पंति। निसि० १६ उ०।

अगंडूयग- पुं० *[अकण्डूयक]*

कण्डूयनाकारकेऽभिग्रहविशेषधारके सूय० २ श्रु० २ अ०।

अगंथ- पुं० *[अग्रन्थः]*

न विद्यते ग्रन्थः सबाह्याभ्यन्तरोऽस्येत्यग्रन्थः। निर्ग्रन्थे, 'पाव कम्मं अकुव्वमाणे एस महं अगंथे वियाहिए'। आचा० १ श्रु० ८ अ० ३ उ०।

अगंध- त्रि० *[अगन्ध]*

नञः कुत्सार्थत्वाद् -अतीव दुर्गन्धे, बुह १ उ०।

अगंधण- पुं० *[अगन्धन]*

नागजातिभेदे, नागानां भेदद्वयम्- गन्धनोऽगन्धनश्च। तत्र अगन्धना नागा मन्त्रैराकृष्टाः 'अवि मरणमज्झवस्संति ण य वंतं आमापिबंति' दश० २ अ०।

अगड- पुं० *[अकृत]*

अकृते, सग्गामे मा वीसुं, वसेज्ज अगडे असुले से। व्या०६ उ०। गर्ते, बुह ३ उ०।

अगडदत्त- पुं० *[अगडदत्त]*

शङ्खपुरे सुन्दरनृपस्य सुलसायां जातेऽगडदत्ते पुत्रे, । उत्त०।

अगडदद्दुर- पुं० *[अवटदर्दुर]*

कूपमण्डूके, नाया० ८ अ०।

अगडमह- पुं० *[अवटमह]*

कूपप्रतिष्ठोत्सवे, आचा० २ श्रु० १ अ० २ उ०।

अगढिय- त्रि० *[अग्रथित]*

अप्रतिबद्धे, आहारे वाऽगृद्धे, पण्हा० १ अ०।

मुत्कलैरेव वचनैरभिधीयमाने, बुह ३ उ०।

अगणि- पुं० *[अग्नि]*

वह्नौ, पण्हा० ५ अ०। उत्त०।

'चत्तारि अगणिआ समारभित्ता जेहिं कुरकम्माभि तवेंति बालं'। सूय० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

'अंगारं अगणिं अच्चिं, अलायं वा सजोइयं। ण उज्जिज्जा ण घट्टिज्जा, नो णं णिव्वावए मुणी'। दश० ८ अ०।

प्रदीपनके, वव० १ उ०।

अगणिआहिय- पुं० *[अग्न्याहित]*

अग्निराहितो यैः। 'वाऽऽहिताग्न्यादिषु'। इति वाऽऽहितशब्दस्य पूर्वनिपातः। अग्न्याहिता आहिताग्नयः। कृतवह्न्याधानेषु, श्रीऋषभजिनेशचितायामग्निंस्थापितवन्तस्तेनकारणेनाहिताग्नय इति तत एव च प्रसिद्धः। आव०म०।

अगणिकंडयट्ठाण- न० *[अग्निकण्डकस्थान]*

अग्निप्रवेशस्थाने, 'अगणिकंडयट्ठाणेसु अण्णयरंसि वा तहप्प-गारंसि णो उच्चारं पासवणं वोसिरेज्जा' ।आचा० २ श्रु० १ अ०

अगणिकाय- पुं० *[अग्निकाय]*

तेजस्काये, भग० ७ श० १० उ०। अनु०।

अगणिजीव- पुं० *[अग्निजीव]*

अग्नयश्च ते जीवाश्च अग्निजीवाः तेज-स्कायिकेषु, विशे०

अगणिजीवसरीर- न० *[अग्निजीवशरीर]*

तेजस्कायजीवबद्धशरीरे, जीवान्तरशरीराणामग्निजीवशरीरत्वम्।

। भग० ५ श० २ उ० ।

अगणिज्झामिय-१ त्रि० *[अग्निध्मात]*

अग्निना दग्धे, । भग० ।

अगणिज्झामिय-२ त्रि० *[अग्निध्यामित]*

अग्निनेषद्दग्धे, अग्निना स्वकीयवर्णत्याजनाद् ध्यामीकृते, । भग० ५ श० २ उ०।

अगणिज्झुसिय-१ त्रि० *[अग्निजोषित]*

अग्निसेविते, जुषी प्रीति-सेवनयोः, इत्यस्य धातोः प्रयोगात्। भग० ५ श० २ उ०।

अगणिज्झुसिय-२ त्रि० *[अग्निझोषित]*

पूर्वस्वभावक्षपणात्। भग०५ श० २ उ०।

अग्निना क्षपिते, भग० १५ श, १ उ०।

अगणिणिक्खित्त-२ त्रि० *[अग्निनिक्षिप्त]*

अग्नावुपरि निक्षिप्ते, 'अगणिनिक्खित्तं अफासुयं अणेसणिज्जं लाभे संते णो पडिगाहेज्जा' आचा० १ श्रु० १ अ० ४ उ०।

अगणिपरिणमिय- त्रि० *[अग्निपरिणमित]*

औष्ण्ययोगाद् सञ्जाताग्निपरिणामे, भग० ५ श० २ उ०।

पूर्वस्वभावत्याजनेनाऽऽत्मभावं नीते, भग० १५ श० १ उ०।

अगणिमुह- पुं० *[अग्निमुख]*

ऋषभदेवचितायामग्निकुमारा वदनैः खल्वग्निं प्रक्षिप्तवन्तः, तत एव निबन्धनाल्लोके 'अग्निमुखा वै देवाः' इति प्रसिद्धम्, इति समयविदः। आव०म०। आव० चू०।

अगत- पुं० *[अगद]*

नास्ति गदो रोगो यस्मात्। ५ ब०।

औषधे, निसि० ११ उ०।

नकुलाद्यौषधे, निसि० १ उ०। ६ ब०।

अगत्थि- पुं० *[अगस्ति]*

अष्टाशीतिमहाग्रहाणां पञ्चचत्वारिंशे महाग्रहे, 'दो अगत्थी' ठा० २ ठा० ३ उ०। चंद०। सूर०। ज०। कल्प०।

अगम- पुं० *[अगम]*

आकाशे, ।तद्धिगमनक्रियारहितत्वेनागमम्।भग०२०श० २उ०

अगमिय- न० *[अगमिक]*

न गमिकमगमिकम्। प्रायो गाथाश्लोकवेष्टकाद्यसदृशपाठा-त्मके श्रुतभेदे,। तच्चैवंविधं प्रायः । विशे०।

आचारादिकालिकश्रुतम्, असदृशपाठात्मकत्वात्। तथाचाह 'अगमियं कालियसुयं। नं०। आव०म०। बुह०।

अगम्म- त्रि० *[अगम्य]*

न गन्तुमर्हति।

गमनानर्हासु स्नुषादिषु, चाण्डाल्यादिकायां च, अगम्यां स्नुषां चाण्डाल्यादिकां वा स्त्रियमिति शेषः। वव० १ उ०।

अगम्मगामि- त्रि० *[अगम्यगामिन्]*
भगिन्याद्यभिगन्तरि, पण्हा० २ आश्र० द्वा०।

अगरभा- स्त्री० *[अगर्भा]*
सुविभक्ताक्षरतया अरहस्यायां वाण्याम्, उव०।
'अगरभाए अम्ममण ए सव्वक्खरसण्णिवायाए' (जिनवाण्या) तत्र, अभर्गया व्यक्तवर्णघोषयेत्यर्थः। उपा० २ अ०।

अगरहिय-१ त्रि० *[अगर्हित]*
(आहार विषये) अकृतगर्ह्ये, पण्हा० १ अ०।

अगरहिय-२ त्रि० *[अगर्ह्य]*
अनिन्द्ये। 'से अगरहिए अचेले जे समाहिए'। आचा० १ श्रु० ८ अ० ८ उ०।

अगरु- न० *[अगरु]*
अगरुचन्दनाख्ये गन्धिकद्रव्ये। सूय० १ श्रु० ४ अ० २ उ०। पण्हा०। निसि०। उपा०। आचा०।
'संखतिणिसागुलुचंदणाइं'। निसि० २ उ०।

अगरुगंधिय- त्रि० *[अगरुगन्धित]*
अगुरुगन्धो धूपनादिप्रकारेण जातोऽस्येति अगुरुगन्धितम्। अगुरुचन्देनेन धूपिते, तं०।

अगरुपुड- पुं० *[अगरुपुट]*
अगरुनामकगन्धद्रव्यस्य पुटे, 'अगरुपुडाण वा लवंगपुडाण वा वासपुडाण वा'। जंबू० १ वक्ष०।

अगरुलहुय- न० *[अगुरुलघुक]*
न विद्येते गुरुलघुनी यस्मिंस्तदगुरुलघुकम्। परिणामोपेतमूर्तद्रव्यत्वादगुरुलघुकम्। न गुरुकमधोगमनस्वाभावं न लघुकम् उर्ध्वगमनस्वभावं यद् द्रव्यं तदगुरुलघुकम्। अत्यन्तसूक्ष्मे भाषामनःकर्मद्रव्यादौ, ठा० १० ठा० १ उ०।

अगरुलहुणाम- न० *[अगुरुलघुनामन्]*
नामकर्मभेदे, यदुदयादगुरु लघु स्वयं शरीरं जीवानां भवति, सम०

अगरुलहुयपरिणाम- पुं० *[अगुरुलघुकपरिणाम]*
अगुरुलघुकमेव परिणामः, परिणामपरिणामवतोरभेदादगुरुलघुकपरिणामः। अजीवपरिणामभेदे, ठा० १० ठा०।
अगुरुलघुपरिणामस्तु परमाणोरारभ्य यावदनन्तानन्तप्रदेशिकाः स्कन्धाः सूक्ष्माः। सूय० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

अगरुवर- पुं० *[अगुरुवर]*
कृष्णागरौ, नाया० १७ अ०।

अगलत- त्रि० *[अगलत्]*
अस्राविणि, 'असती मोयमहीए कयकप्प अगलंत सत्तए णिसिरे' वव० ७ उ०।

अगविट्ठ- त्रि० *[अगवेषित]*
गवेषणया अपरिभाविते, 'अगविट्ठस्स उ गहणं, न होइ न य अगहियस्स परिभोगो।' पिंड०।
'अगविट्ठा य गविट्ठा, णिप्पण्णा धारणदिसासु' वव०४ उ०।

अगाढ- त्रि० *[अगाढ]*
अवगाढे, सूय० १ श्रु० १३ अ०।

अगाढपण्ण- त्रि० *[अगाढप्रज्ञ]*
अगाढा तत्त्वनिष्ठा प्रज्ञा बुद्धिर्यस्य सोऽगाढप्रज्ञः। परमार्थपर्यवसितबुद्धौ,'अगाढपण्णेसु वि भावियप्पा,अन्नं जणं सपन्नं परिहवेज्जा।' सूय०१ श्रु० १३ अ०।

अगार- न० *[अगार]*
गृहे, दश० १ अ०।
अगैर्द्रुमदृषदादिभिर्निर्वृत्तमगारम्।दशा०१०अ०। विशे०। ठा० । अनु०। सूय०। आचा०। निसि०। आव०म०।
अगारमावसंतस्स, सव्वो संविज्जए तहा, सूय० १ श्रु० ३अ० २ उ०
स्थाने च। 'सिंगारागारचारुवेसा' उव०।
अगारं गृहं तद्योगाद्। विशे०।
अगारं गृहं तदेषां विद्यते इति, गृहस्थे, । दश० १ अ०।

अगारत्थ- पुं० *[अगारस्थ]*
अगारं गृहं, तत्र तिष्ठन्तीति अगारस्थाः। गृहस्थेषु, आचा० १ श्रु० ९ अ० १ उ०।

अगारधम्म- पुं० *[अगारधर्म]*
न गच्छन्तीत्यगा वृक्षास्तैः कृतम् आ समन्ताद् राजत इत्यगारं गृहम्। तत्र स्थितानां धर्मोऽगारधर्मः। देशविरतौ, आव०म०
पंच य अणुव्वयाइं, गुणव्वयाइं च होंति तिन्नेव।
सिक्खावयाइ चउरो, गिहिधम्मो बारसविहो य ।।
पञ्चाणुव्रतानि स्थूलप्राणातिपातविरत्यादीनि गुणव्रतानि च भवन्ति, त्रीण्येव दिग्व्रतादीनि शिक्षापदानि चत्वारि सामायिक आदी,गृहिधर्मो द्वादशविधस्तु एष एवाणुव्रतादिः।अणुव्रतादि स्वरूपं चावश्यके चर्चितत्वान्नोक्तमिति, दश० निसि०६ अ०।

अगारबंधण- न० *[अगारबन्धन]*
पुत्रकलत्रर्धानधान्यादिरूपे गृहपाशे, आचा०१ श्रु० ५अ० ४उ०
एवं समुट्ठिए भिक्खू,वोसिज्जा गारबंधणं।सूय० १ श्रु० ३अ० ३ उ०

अगारव- त्रि० *[अगौरव]*
ऋद्ध्यादिगौरववर्जिते, पण्हा० ५ अ०।

अगारवास- पुं० *[अगारवास]*
गृहवासे, 'अगारवासमज्झे वसित्ता'। भग० १५ श० १ उ०।

अगारि- पुं० *[अगारिन्]*

गृहस्थ, सूय० १ श्रु० १४ अ०। आचा०।

'अगारिणो वि समणा भवंतु, सेवंति उ ते वि तहप्पगारं'। सूय० २ श्रु० ६ अ०।

गृही, असंयतः।ठा० । जम्बू०।

अगारिकम्म- न० *[अगारिकर्मन्]*

अगारिणां कर्माऽनुष्ठानम्। गृहस्थानां सावद्य आरम्भे, जातिमद आदिके च। 'णिक्खम्म से सेवइ गारिकम्मं, न पारए होइ विमोयणाए' सूय० १ श्रु० १३ अ०।

अगारिंयंग- न० *[अगार्य्यङ्ग]*

अगारिणां गृहस्थानामङ्गं कारणम्। जात्यादिके मदस्थाने, सूय० १ श्रु० १३ अ०।

अगारी- स्त्री० *[अगारी]*

गृहस्थस्त्रियाम्, वव० १ उ०।

अगारी, क्षत्रियादिकः। सूय०

अगारीपडिबंधं- पुं० *[अगारीप्रतिबन्ध]*

अगार्याः प्रतिबन्धोऽगारिप्रतिबन्धः। यत्रागार्य्या विषये आत्मपर उभयसमुत्था दोषा इत्येवंरूपे गृहियोषित्प्रतिबन्धे, वव० ४ उ०

अगाह- त्रि० *[अगाध]*

गम्भीरे, ठा० ४ ठा० ४ उ०।

अपरिमितजल। आव०

प्रायोगंभीरम्। दश०

अगिज्झ- त्रि० *[अग्राह्य]*

हस्तादिना ग्रहीतुमशक्ये 'तओ अगिज्झा पन्नत्ता, तं जहा-समए पएसे परमाणू'। ठा० ३ ठा० २ उ०।

अनाश्लेष्ये, 'अणेगणरभुयाऽगिज्झे'। उव०।

अप्रमेये, रा०।

अगिण्हियव्व- त्रि० *[अग्रहीतव्य]*

न ग्रहीतव्योऽग्रहीतव्यः। हेये, उपेक्षणीये च। उभयोरपि कार्य्यासाधकत्वात्। 'गज्झो जो कज्जसाहगो होइ' इति कार्य्यसाधकस्यैव ग्राह्यत्वोक्तेः उत्त० १ अ०। आव०।

अनुपादेयं, हेयम्। दश०

अगिद्ध- त्रि० *[अगृद्ध]*

अनध्युपपन्ने अमूर्छिते, 'अगिद्धे सद्दफासेसु, सूय० १ श्रु०९ अ० 'उवहिम्मि अमुच्छिए अगिद्धे अण्णायउंछं पुलणिप्पुलाए' अगृद्धः प्रतिबन्धाभावेन। दश० १० अ०।

अगिलाइ- स्त्री० *[अग्लानि]*

अखेदे, ठा० ८ ठा०। भग०।

अगिलाणाम नो मनोवाक्काएहिं अजज्जरमाणेति। निसि०१ उ

अगिला- स्त्री० *[अग्लानि]*

निर्जरार्थमात्मोत्साहे, व्या० ४ उ०।

गिलाव्याख्यानार्थमाह-'निववेट्ठि व कुणंतो, जो कुणई एरिसा गिलाहोइ। पडिलेहुट्ठवणाई, वेयावडियं तु पुव्वुत्तं' ।। यो नाम नृपवेष्टिं राजवेष्टिमिव कुर्वन् वैयावृत्त्यं करोति एतादृशी भवति गिला ग्लानिस्तस्याः प्रतिषेधोऽगिला। तया करणीयं वैयावृत्त्यम् किं तदित्यत आह- प्रतिलेखोत्थापनादिकं भाण्डस्य प्रत्युपेक्षणम्-पविष्टस्योत्थापनम् आदिशब्दात् भिक्षानयनादि परिग्रहः, एतत्पूर्वोक्तं वैयावृत्त्यम्। वव० १ उ०।

अग्लानः– उचितकर्तव्यसहिष्णुः। आचा०

अगिलाय- पुं० *[अग्लान]*

अग्लाने 'कुज्जा भिक्खू गिलाणस्स, अगिलाए समाहिए' भिक्षुः साधुर्ग्लानस्य वैयावृत्त्यमग्लानोऽपरिश्रान्तः कुर्य्यात्, सम्यक् समाधिना ग्लानस्य वा समाधिमुत्पादयेत्।सूय०१ श्रु०११ अ०

अगीय- पुं० *[अगीत]*

अगीतार्थे, वव० १ उ०।

अगीयत्थ- पुं० *[अगीतार्थ]*

अनधिगताचारप्रकल्पादिनिशीथान्तश्रुतार्थे, 'जीवा०१ प्रति०। अगीतार्थो येन छेदश्रुतार्थो न गृहीतो, गृहीतो वा परं विस्मारितः। बुह १ उ०।

अगीतार्थत्वम्। आव०

अगुणगुण- पुं० *[अगुणगुण]*

अगुणे एव कस्यचिद् गुणत्वेन विपरिणममाणे, स वक्रविषयः यथा गौर्गलिरसञ्जातकिणस्कन्धो गोगणस्य मध्ये सुखेनैवात्ति। तथा च- 'गुणानामेव दौर्जन्याद्धुरि धुर्य्यो नियुज्यते। असंजातकिणस्कन्धः, सुखं जीवति गौर्गलिः'।।१ आचा० १ श्रु० २ अ० १ उ०।

अगुणत्त- न० *[अगुणत्व]*

अविद्यमानगुणोऽगुणस्तद्भावः, तत्त्वम्। गुणाभावे, 'अज्झयणगुणी भिक्खू, न सेस इइ णो पइन्न को हेऊ। अगुणत्ता इइ हेऊ को दिट्ठंतो सुवण्णमिव'। दश० १० अ०।

अगुणपेहि- त्रि० *[अगुणप्रेक्षिन्]*

अगुणान् प्रेक्षते तच्छीलश्च यः। अगुणदर्शनशीले, दश० ५ अ०

अगुणवज्ज- त्रि० *[अगुणवर्ज]*

अगुणान् दोषान् वर्जयति सतोऽपि न गृह्णाति इत्यगुणवर्जकः। सतामप्यगुणानामग्राहेक, नं०।

अगुत्त- त्रि० *[अगुप्त]*

गुप्तिरहिते, 'केवलमेव अगुत्तो, सहसा णाभोगपव्वयप्पेहिं'। वव० १ उ०।'

अगुत्ति- स्त्री० *[अगुप्ति]*
मनःप्रभृतीनां कुशलानां निवर्त्तनेऽकुशलानां प्रवर्त्तने, ठा० ३ ठा० १ उ०।
इच्छाया अगोपनरूपे त्रयोविंशेगौणपरिग्रहे, पण्हा० ५अ०, निसि०

अगुरुलहुय- न० *[अगुरुलघुक]*
अत्यन्तसूक्ष्मे भाषामनःकर्मद्रव्यादौ, ठा० १० ठा०।

अगुरुलहुयपरिणाम- पुं० *[अगुरुलघुकपरिणाम]*
अजीवपरिणामभेदे, ठा० १ ठा०।

अगुरुवर- पुं० *[अगुरुवर]*
कृष्णागरौ, नाया० १ श्रु० १ अ०।

अगोविय- त्रि० *[अगोपित]*
प्रकटे, सूय०१ श्रु० ८ अ०।

अगोरसव्वय- पुं० *[अगोरसव्रत]*
गोरसमात्राऽभक्षके, आव० ४ अ०।

अग्ग-१ न० *[अग्र]*
परिमाणे, नं०। विशे०। सूर० । ठा०।
'अग्गं ति वा परिमाणं ति वा एगट्ठा' ।आ०चू०१ अ०। उत्त०।
'अन्ते जेणेव देसग्गे तेणेव उवागए'। देसग्गं देशान्तम्। नाया० १५ अ०।

अग्ग-२ त्रि० *[अग्रय]*
अग्रे भवमग्रयम्, प्रधाने, अंत० ७ वर्ग०। निसि०। भग०। नाया०। सूय०।
अत्यन्तोत्कृष्टे च। सूय० १ श्रु० २ अ० ३ उ०। जंबू०।

अग्गंथ- पुं० *[अग्रन्थ]*
निर्ग्रन्थे, आचा०१ श्रु०८ अ० ३ उ०।

अग्गकेस- पुं० *[अग्रकेश]*
अग्रभूतेषु केशेषु, भग०९ श० ३३ उ०।

अग्गजाय- न० *[अग्रजात]*
वनस्पतीनामाग्रभागे जाते, 'अग्गजायाणि मूलजायाणि वा खंधजायाणि वा'। आचा० २ श्रु० १ अ० ८० उ०।

अग्गजिब्भा- स्त्री० *[अग्रजिह्वा]*
अग्रभूता जिह्वा अग्रजिह्वा। जिह्वाग्रे, षड्जमेव प्रथमस्वरलक्षणं ब्रूयात्। कयेत्याह- अग्रभूता जिह्वा अग्रजिह्वा, जिह्वाग्रमित्यर्थस्तया। अनु०।

अग्गतावसग- पुं० *[अग्रतापसक]*
ऋषिभेदे, यद्गोत्रे धनिष्ठानक्षत्रम्। 'धणिट्ठाणक्खत्ते किं गोत्ते पन्नत्ते ? अग्गतावसगोत्ते पन्नत्ते'। सूर० १ पाहु०। चंद० १ पाहु०। जंबू०।

अग्गद्ध- न० *[अग्रार्ध]*
पूर्वार्द्धे, निसि० १ उ०।

अग्गपलंब- पुं०न० *[अग्रप्रलम्ब]*
प्रलम्बानामग्रभागे, इमे अग्गपलंबा-'तलणालिपरिलओए, कविट्ठं अंबाड अंबए चेव।एयं अग्गपलंबं, णेयव्वं आणुपुव्वीए।जणपद० सिद्धा एते एसे च तलादिगा। निसि०१५ उ०
आम्रातकफलं। बृह०।
तलादिप्रलंबा। निशी०।

अग्गपिंड- पुं० *[अग्रपिण्ड]*
शाल्योदनादेः प्रथममुद्धृत्य भिक्षार्थं व्यवस्थाप्यमाने पिण्डे, आचा० २ श्रु० १ अ० १ उ०।
काकपिण्ड्यां। आचा०।

अग्गप्पहारि- पुं० *[अग्रप्रहारिन्]*
पुरः प्रहरणशीले, 'चोर-पल्लिंगतो तत्थ अग्गप्पहारि णिसंसो च चोरसेणावतिमतो' आव० १ अ०। आव०म०।

अग्गबीय- पुं० *[अग्रबीज]*
अग्रे बीजं येषामुत्पद्यते ते तथा। तलतालीसहकारादिषु शाल्यादिषु च अग्र्याण्येवोत्पत्तौ कारणतां प्रतिपद्यन्ते येषां कोरण्टकादीनां ते अग्रबीजाः। कोरण्टकादिषु बीजप्रकारेषु वनस्पतिषु, सूय०२ अ०। ठा०। विशे०। आव०म०।
अग्गबीया १ मूलबीया २ पोरबीया ३ खंधबीया ४ इत्यादयो वनस्पतिभेदाः। आचा०१ श्रु०१ अ०५ उ०
अग्रे बीजं येषां ते तथा, कोरण्टकादयः। अग्रे वा बीजं येषां ते अग्रबीजाः। ब्रीह्यादिषु, ठा० ४ ठा० १ उ०।

अग्गमहिसी- स्त्री० *[अग्रमहिषी]*
अग्रभूता प्रधाना महिषी, राजभार्य्यायाम्, ठा० ४ ठा० २ उ०
प्रधानभार्य्यायाम्। उपा० २ अ०।
पट्टराइयाम्, 'जीवा० ३ प्रति०। ठा०।

अग्गरस- पुं० *[अग्र्यरस]*
अग्र्यः प्रधानो रसो येभ्यस्ते अग्र्यरसाः। शङ्गाररसोत्पादकेषु रत्यादिषु, श्रृङ्गारसे च। उत्त० १४ अ०।
रसाग्र। न०। रसानां सुखानामग्रम्। प्राकृतत्वादग्रशब्दस्य पूर्व -निपातः। सुखप्रधाने, उत्त० १४ अ०।

अग्गल-१ न० *[अर्गल]*
षडशीतितमे महाग्रहे, सूर० २० पाहु०। चंद० २० पाहु०।

अग्गल-२ *[अर्ज]*
कपाटमध्यस्थे रोधके, कल्लोले, कपाटे च। 'अग्गलं फलिहं दारं, कवाडं वा वि संजए। अवलंविया ण चिट्ठिज्जा, गोअरग्गओ मुणी'।। दश० ५ अ० २ उ०।

अग्गलपासग- पुं० *[अर्गलपाशक]*
यत्रार्गला निक्षिप्यन्ते तेषु, आचा० २ श्रु० १ अ० ५ उ०।

अग्गलपासाय- पुं०स्त्री० *[अर्गलाप्रासाद]*
यत्रार्गला निक्षिप्यन्ते तेषु, 'जीवा० ३ प्रति०। जंबू०।
आह च जीवाभिगममूलटीकाकारः- अर्गला प्रासादो यत्रार्गला नियम्यन्ते। रा०।

अग्गला- स्त्री० *[अर्गला]*
'अग्गला अग्गलपासाया य वइरामईतो' रा०।

अग्गविडव– न० *[अग्रविटपम्]*
शाखामध्यभागाग्रं, विस्ताराग्रं वा। पण्हा०।

अग्गसिर-१ न० *[अग्रशिरस्]*
शिरोऽग्रे,'घणनिचियसुबद्धलक्खणुन्नयकूडागारणिभणिरूवम्-पिंडियग्गसिरा'। तं०।

अग्गसिर–२ न० *[अग्रशिरस्]*
उष्णीषलक्षणम्। जम्बू० ।

अग्गसिहर- न० *[अग्रशिखर]*
वनस्पत्यादीनां शिखराग्रे,सोहियवरं कुरग्गसिहरा।उव०। रा०

अग्गसुयक्खन्ध- पुं० *[अग्रश्रुतस्कन्ध]*
आचाराङ्गस्य द्वितीये श्रुतस्कन्धे, आचा० २श्रु० १अ० १उ०।

अग्गसोण्डा- स्त्री० *[अग्रशुण्डा]*
शुण्डाग्रे, उपा० २ अ०।

अग्गहण- न० *[अग्रहण-अनादरे]*
भद्दा पुण अग्गहणं,जाणंतो वा विपरिणमेज्जा सो। बुह०३उ०
अनुपादाने, उत्त० २ अ०।
एसणमणेसणिज्जं,तिण्हं अग्गहणभोयणणयाणं।उत्त० निसि०

अग्गहत्थ- पुं० *[अग्रहस्त]*
अग्रश्चासौ हस्तश्चेति गुणगुणिनोरभेदात्। हस्ताग्रे, । अनु०।

अग्गहि- त्रि० *[आग्रहिन्]*
अभिनिवेशिनि, 'आग्रही वत !
निनीषति युक्तिं, तत्र यत्र मतिरस्य निविष्टा।
पक्षपातरहितस्य तु युक्तिर्यत्र तत्र मतिरेति निवेशम्'।१ ।
सूय० १ श्रु० १ अ० ३ उ०।

अग्गाणीअ- न० *[अग्राणीक]*
सैन्याग्रभागे, 'जेणेव भरहस्य रण्णो अग्गाणिअं तेणेव उवा-गच्छंति'। जंबू० ३वक्ष०।१

अग्गाणीअ-२ न० *[अग्रायणीय]*
अग्रं परिमाणं, तस्यायनं गमनं परिच्छेद इत्यर्थः, तस्मै हितमग्रायणीयम्। सर्वद्रव्यादि-परिमाणपरिच्छेद-कारिणि, द्वितीय- पूर्वे, तत्र हि द्वितीयमग्रायणीयम्।

अग्रं परिमाणं तस्य अयनं गमनं, परिच्छेद इत्यर्थः, तस्मै हित मग्रायणीयम्। सर्वद्रव्यादि परिमाण परिच्छेद कारीति भावार्थः।

तथाहि-तत्र सर्वद्रव्याणां सर्वपर्यायाणां सर्वजीवविशेषाणां च परिमाणमुपवर्ण्यते। यत्र उक्तं चूर्णिकृता- 'बीइयं अग्गेणीयं तत्थ सव्वदव्वाण पज्जवाण य सव्वजीवाण य अग्गं परिमाणं वन्निज्जइ त्ति'। अग्गेणीयं तस्य पदपरिमाणं षण्णवतिपद शत-सहस्राणि। नं०। संथा०।

अग्गेणीयपुव्वस्स णं चोद्दसवत्थुदुवालसचूलिया वत्थू पन्नत्ता'। नं०।

अग्गि-१ पुं० *[अग्नि]*
वैश्वानरे। पिंड०।

अग्गि-२ पुं० *[अग्नि]*
वह्निनामके लोकान्तिकदेवे, आव०म०।

अग्गि- ३ पुं० *[अग्नि]*
कृत्तिकानक्षत्रस्य देवतायाम्। ठा०४ ठा०२ उ०।
'कत्तिया अग्गिदेवयाए' ज्यो० ६ पाहु०। सूर०। चंद० । ठा० २ ठा० ३ उ०
'चत्तारि अग्गी जाव जमा'। अग्निरिति कृत्तिकानक्षत्रस्य देवता यावद्यम इति। ठा० ४ ठा० २ उ०।

अग्गिय- पुं० *[अग्निक]*
यमशिष्ये यमदग्निनामके तापसे,यमशिष्योऽग्निक इति,यमदग्निः इति श्रुतः'। आव०। आव०म०। आव० चू०।

अग्गिकुमार- पुं० *[अग्निकुमार]*
अग्निश्चासौ कुमारश्च। कुमारवच्चेष्टमान इति भुवनपतिदेवभेदे, पन्न०१ पद०।

अग्गिच्च- पुं० *[आग्नेय]*
उत्तरयोः कृष्णराज्ययोर्मध्ये आग्नेयाभ-विमानवास्तव्ये-ऽष्टमे लोकान्तिकदेवे, ठा० ५ ठा० ३ उ०। प्रव०। भग०। नाया०।

अग्गिच्चाभ- न० *[आग्नेयाभ]*
उत्तरयोः कृष्णराज्ययोर्मध्ये वर्त्तमाने आग्नेयनामलोकान्तिक देव विमाने, ठा० ५ ठा० ३ उ०। भग०। सम०।

अग्गिज्जोय- पुं० *[अग्निद्योत]*
श्रीवीरस्याष्टमे भवे विप्रभेदे, श्रीवीरस्याष्टमे भवे, चैत्यसन्निवेशे च। षष्टिलक्षपूर्वायुष्कोऽग्निद्योतो नाम विप्रस्त्रिदण्डीभूत्वा मृतः। कल्प०। आव० चू०।

अग्गिदत्त-१ पुं० *[अग्निदत्त]*
भरतक्षेत्रजपार्श्वजिनसमकालजाते ऐरवतक्षेत्रजे तीर्थकरे, ति०। सम० ।

अग्गिदत्त-२ पुं० *[अग्निदत्त]*
भद्रबाहोर्द्वितीये शिष्ये, कल्प० ।

अग्गिदहण- न० *[अग्निदहन]*
वह्नौ शरीरभस्मीकरणलक्षणे शारीरदण्डे, पण्हा० १ अ० ।

अग्गिभूइ-१ पुं० *[अग्निभूति]*
मन्दरसन्निवेशजाते ब्राह्मणभेदे, श्रीवीरस्य दशमभवे, मन्दर-सन्निवेशे षट्पञ्चाशल्लक्षपूर्वायुष्कोऽग्निभूतिर्नामा ब्राह्मणस्त्रि-दण्डी भूत्वा मृतः । कल्प० । आ०चू० । आव०म० ।

अग्गिभूइ-२ पुं० *[अग्निभूति]*
श्रीमतो महावीरस्य द्वितीये गणधरे, । कल्प० । आव०म० ।

अग्गिमाणव- पुं० *[अग्निमानव]*
दाक्षिणात्यानामग्निकुमाराणामिन्द्रे, ठा० २ठा० ३उ० । भग० ।

अग्गिमित्ता- स्त्री० *[अग्निमित्रा]*
पोलासनगरवास्तव्यस्याजीविकमतोपासकस्येभ्यकुम्भकारस्य सद्दालपुत्रस्य भार्यायाम्, उपा०७ अ० ।

अग्गिमेह- पुं० *[अग्निमेघ]*
अग्निवद्दाहकारिजले मेघे, भग०७ श० ६ उ० ।

अग्गिय-१ पुं० *[अग्निक]*
भस्मकाभिधाने वायुविकारे, विपा० १ श्रु० १ अ० ।

अग्गिय-२ पुं० *[अग्निक]*
इन्द्रदत्तेन राज्ञा स्वमन्त्रिसुतायामुत्पादितस्य सुरेन्द्रदत्तस्य दास्यां जाते पुत्रे, ('मणुस्स' शब्दे चैतद्विवृतिः) आव०चू०, १ अ० ।

अग्गिय-३ पुं० *[अग्निक]*
वत्सगोत्रावान्तर्गतगोत्रे, ठा०७ ठा० ।

अग्गिल्लय- पुं० *[अग्नि]*
पञ्चपञ्चाशत्तमे महाग्रहे, सूर० २० पाहु० । चंद०२० पाहु० । 'दो अग्गिल्ला' । ठा० २ ठा० ।

अग्गिवेस-१ पुं० *[अग्निवेश]*
लोकप्रसिद्धे ऋषिभेदे, नं० ।

अग्गिवेस-२ पुं० *[अग्निवेश्म]*
पक्षस्य चतुर्दशे दिने, जंबू०१ वक्ष० । कल्प० । जो० ।

अग्गिवेस-३ पुं० *[अग्निवेश्म]*
दिवसस्य द्वाविंशतितमे मुहूर्त्ते, चंद० १०पाहु०, सूर० १०पाहु०

अग्गिवेसायण-१ पुं० *[अग्निवेश्यायन]*
अग्निवेशस्यापत्यमग्निवेश्यः ।तस्याऽपत्यमग्निवेश्यायनः । अग्नि-वेशर्षिपौत्रे, नं० ।
तद् गोत्रजाते च । यथा- सुधर्मा गणधरः ।आव०म० । कल्प० ।

अग्गिवेसायण-२ पुं० *[अग्निवेश्यायन]*
गोशालस्य मङ्खलिपुत्रस्य पञ्चमे दिक्चरे, भग०१५ श०१ उ० ।

अग्गिवेसायण- ३ पुं० *[अग्निवेश्यायन]*
द्वाविंशे दिवसमुहूर्त्ते, सम० ३० सम० ।

अग्गिसक्कार- पुं० *[अग्निसंस्कार]*
ध्यापना नामाग्निसंस्कारः, स च भगवत ऋषभस्य निर्वाण-प्राप्तस्याऽन्येषां च साधूनामिक्ष्वाकूनामितरेषां च प्रथमं त्रिदशैः कृतः पश्चाल्लोकेऽपि संजातः । आव०म० ।

अग्गिसप्पभा- स्त्री० *[अग्निसप्रभा]*
अवसर्पिण्यां द्वादशतीर्थकरस्य वासुपूज्यस्य दीक्षासमय उपयुक्त शिबिकायाम्, सम० ।

अग्गिसम्म- पुं० *[अग्निशर्मन्]*
यमुपहसता गुणसेनेन नवभवानुषङ्गि वैरं वर्द्धितम् । स्वनाम-ख्याते ब्राह्मणभेदे, आचा० १ श्रु० ३ अ० २ उ० ।

अग्गिसाहिय- त्रि० *[अग्निसाधिक]*
अग्नेर्दायभाक्त्वेन साधारणे, यथा- हिरण्णे य सुवण्णे य जाव सावइज्जे अग्गिसाहिए चोरसाहिए रायसाहिए मच्चुसाहिए, इत्यादि । भग०९ श० ३३ उ० । नाया० ।

अग्गिसिह-१ पुं० *[अग्निशिख]*
अवसर्पिण्याः सप्तमदत्तनामकवासुदेवनन्दननामक बलदेवयोः पितरि, । सम० । आव० ।

अग्गिसिह-२ पुं० *[अग्निशिख]*
औत्तराणमिग्निकुमाराणामिन्द्रे, ठा० २ ठा० ।

अग्गिसिह- ३ पुं० *[अग्निशिख]*
ज्वलनशिखनाम्नो राज्ञो मित्रे च । उत्त० १३ अ० ।

अग्गिसिह- ४ पुं० *[अग्निशिख]*
अग्निज्वालायाम्, स्त्री० । ठा० ।

अग्गिसेण- पुं० *[अग्निषेण]*
वर्तमानायामवसर्पिण्यां भरतक्षेत्रजसंभवजिनसमकालिकैरव-तजे तीर्थकरे । भरहे य संभवजिणो, ऐरवए अग्गिसेण जिनचंदो । सम० ।

अग्गिहोत्त- न० *[अग्निहोत्र]*
जरामर्य्यं वा एतत्सर्वं यदग्निहोत्रं, तज्जरामर्य्यमेव, यावज्जीवं कर्त्तव्यमिति । आव०म० । विशे० ।

अग्गिहोत्तवाइ- पुं० *[अग्निहोत्रवादिन्]*
अग्निहोत्रादेव स्वर्गगमनमिच्छति, तत्सिद्धये युक्तिवादिनि, 'जे अग्निहोत्तवादी जलसोयं जे य इच्छंति' इत्यग्निहोत्रवादिनां कुशीलत्वं दर्शितम् । सूय० १ श्रु० ७ अ० ।

अग्गुज्जाण- न० *[अग्र्योद्यान]*
नगरादेर्बहिः प्रधानोद्याने, हत्थिसीसे नयरस्स बहिया अग्गु-ज्जाणे सत्थसन्निवेसं करेति ।नाया०१७अ० ।आव०म० ।आ० चू

अग्गेअ- न० *[आग्नेय]*

शास्त्रभेदे च। सूय० १ श्रु० ८ अ०।

अग्गेई- स्त्री० *[आग्नेयी]*

अग्निर्देवता यस्याः सा आग्नेयी। दक्षिणपूर्वस्यां विदिशि,। भग० १ श० १ उ०। ठा०। आव०म०।

अग्गेणीय- न० *[अग्रायणीय]*

चतुर्दशपूर्वाणां मध्ये द्वितीयपूर्व, । ठा०।

अग्गेतण- त्रि० *[अग्रेतन]*

पौरस्त्ये, आव०म०।

अग्गोदय- न० *[अग्रोदक]*

उपरितन उदके, अग्गोदयंतिषोडशसहस्रोच्छ्रिताया वेलाया यत् उपरि गव्यूतिद्वयमानं वृद्धिहानिस्वभावं, तदग्रोदकम्। जीवा० ३ प्रति०।

अग्घ-१ पुं० *[अर्घ]*

रजतादिद्रव्यरूपे मूल्ये,। संथा०। आव०।

मत्स्यभेदे, 'लवणसमुद्दे अत्थि वेलं धरंति वा नागराया अग्घ-सिंहा विज्जाइ वा'अर्घादयो मत्स्यकच्छपविशेषाः। जीवा० ३ प्रति०

अग्घ-२ *[अर्ह]*

पुष्पादिषु पूजाद्रव्येषु। नाया० १६ अ०।

अग्घाडग- पुं० *[आघ्रातक]*

गुच्छवनस्पतिकायभेदे, पन्न०१ पद०।

अग्घाय- अव्य० *[आघ्राय]*

नासिकया गन्धं गृहीत्वेत्यर्थः। 'सुरभिगंधाणि वा अग्घाय से तत्थ आसाय वडियाए मुच्छिए'। आचा० २ श्रु० १ अ० ८ उ०। आव०म०।

अग्घायमाण- त्रि० *[आजिघ्रत्]*

उत्सिङ्घति गन्धं नासिकया गृह्णाति, नाया०८ अ०। आव०म०।

अग्घिय- त्रि० *[अर्घित]*

अर्धः संजातोऽस्य। बहुमूल्ये, । निसि० २ उ०।

अघण- त्रि० *[अघन]*

अद्दढे, उव०।

विरले, पिंड०।

अघुणित- त्रि० *[अघुणित]*

घुणैरविद्धे। बुह १ उ०।

अचंकारियभट्टा-१ स्त्री० *[अचङ्कारितभट्टा]*

धन्यश्रेष्ठिनो भट्टायां भार्यायामुत्पादितायामुपायलब्धत्वाददति स्नेहन न केनचिदेषा चङ्कारयितव्येति स्वनामख्यातायां सुता-याम्, गच्छा० २ अधि०।

अचंकारियभट्टा-२ स्त्री० *[अचङ्कारितभट्टा]*

धन्यश्रेष्ठिनो भट्टायां भार्यायामुत्पादितायामुपायलब्धत्वाददति-स्नेहेन न केनचिदेषा चङ्कारयितव्येति स्वनामख्यातायां सूता, गच्छा०२

अचंचल- त्रि० *[अचञ्चल]*

वशीकृतेन्द्रिये, 'चंचल' शब्दे प्रतिपादयिष्यमाणे चञ्चल-विपरीते अनुयोगश्रवणार्हे, बुह० १ उ०।

अचंड- त्रि० *[अचण्ड]*

अतीव्रकोपे, तं०।

निष्कारणप्रबलकोपरहिते, कारणविकलकोपविकलः पण्हा० ४ अ० । समः०।

सौम्ये, 'मा-अचंडालियं कासी'। उत्त० १ अ०।

अचक्कि- पुं० *[अचक्रिन्]*

न चक्री। नञः पर्युदासवाचकत्वेन सद्दशग्राहकत्वात् सामान्य पार्थिवे, बुह० १ उ०।

अचक्किय- त्रि० *[अचकित]*

अत्रासिते, 'समुद्दगंभीरसमा दुरासया, अचक्किया केणइ दुप्पहं-सया'। उत्त० ११ अ०।

अचक्खु- न० *[अचक्षुष्]*

चक्षुर्वर्जशेषेन्द्रियचतुष्टये, मनसि च। जीवा०। उत्त०।

अचक्खुदंसण- न० *[अचक्षुर्दर्शन]*

अचक्षुषा चषुर्वर्जेन्द्रिय-चतुष्टयेन मनसा वा दर्शनं यत्तदचक्षुर्द-र्शनम्। ठा० ९ ठा०।

चक्षुर्वर्जशेषेन्द्रियमनोभिः स्वस्वविषयस्य सामान्यग्रहणस्वरूपे दर्शनभेदे,। ठा०।

अचक्खुदंसणावरण- न० *[अचक्षुर्दर्शनावरण]*

अचक्षुर्दर्शनस्यावरणम्। दर्शनावरणकर्मभेदे, ठा० ९ ठा०।

अचक्खुफास- पुं० *[अचक्षुःस्पर्श]*

अन्धकारे, 'पुरओ पवाए पिट्ठओ हत्थिभयदुहओ अ चक्खुफासो मज्झे सरा निवयंति'। नाया० १ श्रु० १४ अ०।

अचक्खुय- त्रि० *[अचक्षुष्क]*

अन्धे, 'अचक्खुओवनेयारं, बुद्धिं अण्णेसए गिरा'। वव० १ उ०

अचक्खुविसय- पुं० *[अचक्षुर्विषय]*

चक्षुरगोचरे, अचक्षुर्विषयो यत्र, न चक्षुषो व्यापारो यत्रेत्यर्थः। दश०५ अ० ४ उ०।

अचक्खुस- त्रि० *[अचाक्षुष]*

चक्षुषाऽदृश्ये, पण्हा०१ अ०।

अचक्खुस्स- त्रि० *[अचक्षुष्य]*

द्रष्टुमनिष्टे, बुह० ३ उ०।

अचयंत- त्रि० *[अशक्नुवत्]*

असमर्थे, 'चोइया भिक्खचरिया अचयंता जवित्तए'। सूय० १ श्रु० ३ अ० २ उ०।

अचरम- त्रि० *[अचरम]*

प्रान्तिममध्यवर्त्तिनि, तच्चापेक्षिकं, तस्य चरमापेक्षाभावात्। यथा-तथाविधान्यशरीरापेक्षया मध्यमशरीरमचरमशरीरम्। पन्न० ९ पद०।

चरमभिन्नेषु नारकादिषु वैमानिकपर्यन्तेषु जीवेषु, ते हि अचरमाः येषां भव्यत्वे सत्यपि चरमो भवो न भविष्यति, न निर्वास्यन्तीत्यर्थः। ठा० २ ठा० २ उ०।

'दुविहा सव्वजीवा पन्नत्ता- चरमा चेव अचरमा चेव'। ठा० २ ठा० ४ उ०।

अचरमो द्विविधः-अनाद्यपर्यवसितः साद्यपर्यवसितश्च। तत्राऽ-नाद्यपर्यवसितोऽभव्यः, साद्यपर्यवसितः सिद्धः। पन्न०१६ पद०

अचरमंतपएस- पुं० *[अचरमान्तप्रदेश]*

अचरम एव कस्याप्यपेक्षयाऽनन्तवर्त्तित्वादन्ते, पन्न० ९ पद०।

अचरमसमय- पुं० *[अचरमसमय]*

चरमसमयादन्यस्मिन् यावच्छैलेश्यवस्थाचरमसमये, नं०।

अचरिम- त्रि० *[अचरमः]*

अभव्यः सिद्धश्च। पन्न० १४३। जीवा० ४४४।

अचल-१ त्रि० *[अचल]*

निष्प्रकम्पे, 'अयले भवभेरवाणं' कल्प०

न चलतीत्यचलः परीषहोपसर्गवातेरितोऽपि। आचा० १ श्रु० ६ अ० ५ उ०।

यद्यप्यसाविङ्गितप्रदेशे स्वतः शरीरमात्रेण चलति, तथाप्यभ्यु-द्यतमरणात् न चलतीत्यचलः। आचा०१ श्रु०८ अ०८ उ०।

अचलो निश्चलः परीषहादिभिः। पण्हा० ५ अ०।

अचलम् स्वाभाविकप्रायोगिकचलनक्रियाव्यपोहात्। 'जीवा० ३ प्रति०। सम०। भग०। उव०।

स्पन्दनादिवर्जितत्वात्। पण्हा०४ अ० । रा०।

दशार्हाणां षष्ठे दशार्हपुरुषे, अंत०१ वर्ग।

अचल-२ त्रि० *[अचल]*

पूर्वभवे मल्लिनाथजीवस्य महाबलनाम्नो बालवयस्ये, स च तेन सह प्रव्रजितो विपुलं तपः कृत्वाऽनशनेन मृत्वा जयन्त विमाने उपन्नो देशोनानि २० सागरोपमाणि स्थितिं परिपाल्य च्युतः प्रतिबुद्धो नामेक्ष्वाकुराजो जातः। मल्लिनाथेन च सह प्रव्रज्यां गृहीत्वा सिद्धः। नाया० १ श्रु० ८ अ०।

अचल- ३ त्रि० *[अचल]*

अवसर्पिण्यां प्रथमे बलदेवे, आव०। सम०।

अचल-४ त्रि० *[अचल]*

मनोहरीपुत्रे, (स चापरविदेहे सलिलावती विजये वीतशोकायां नगर्यां जितशत्रोः राज्ञो मनोहरी भार्यायामुत्पन्नो बलदेवो जातः)। आ०चू० १ अ०। आव०म०।

अचल-५ *[अयलो]*

कलाशिक्षायामुदाहरणगतः पुरुषः। दश०

अचलट्ठाण- न० *[अचलस्थान]*

अचलो निष्प्रकम्पः परमाण्वादिर्भवति, तस्य स्थानमचलस्थानं निरेजःकाले, अचलं च तत्स्थानं चावस्थानमचलस्थानमिति व्युत्पत्तेर्वा। निरेजः कालश्च परमाण्वादीनामयम्-'परमाणु-पोग्गले णं भंते ! णिरेए कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, असंखेज्जाओ उसप्पिण्णी ओस्सप्पिणीतो'। वव०१ उ०। निसि०।

अचलस्थानं तु चतुर्धा, सादिसपर्यवसान भेदात्। तद्यथा-सादिसपर्यवसानं परमाण्वादेर्द्रव्यस्यैकप्रदेशाववस्थानं, जघ-न्यत एकं समयमुत्कृष्टश्चतश्चासंख्येयकालमिति साद्यपर्यवसानं सिद्धानां भविष्यदद्धारूपम्, अनादिसपर्यवसानमतीताद्धा-रूपस्य शैलेश्यवस्थान्त्यसमये कार्मणतैजसशरीरभव्यत्वानां चेति,अनाद्यपर्यवसानं धर्माधर्माकाशानामिति। आचा० १ श्रु० २ अ० १ उ०

अचलपुर- न० *[अचलपुर]*

आभीरदेशान्तर्गते ब्रह्मद्वीपासन्ने पुरभेदे कल्प०। नं०।

अचलभाया- पुं० *[अचलभ्राता]*

श्रीमहावीरस्य नवमे गणधरे, विशे०। आव०म०। कल्प०।

(तस्य वृतान्तं 'गणहर' शब्दे वक्ष्यते)

अचला- स्त्री० *[अचला]*

शक्रस्य देवेन्द्रस्य सप्तम्यामग्रहिष्याम् नाया०२ श्रु०।

अचलिय- न० *[अचलित]*

वस्त्रं शरीरं वा न चलितं कृतं यत्र तदचलितम्। अप्रमाद-प्रत्युपेक्षणभेदे, ठा०६ ठा०। ओह०।

अत्र चतुर्भङ्गी यथा-'वत्थं अचलियं अप्पाणं अचलियं, तथा वत्थं चलियं अप्पाणं अचलियं, तथा वत्थं चलिअं अप्पाणं चलिअं, तथा वत्थं अचलिअं अप्पाणं चलिअं। एत्थ पढमो भंगो सुद्धो' । ठा० ६ ठा०।

अनारब्धचलनक्रिये, त्रि०। निसि०।

अचवचव- त्रि० *[अचवचव]*

चवचवेति शब्दरहिते, पण्हा० १ अ०।

'असुरसुरं अचवचवं आहारमाहारेइ'। भग०७ श० १ उ०।

अनुकरणशब्दोऽयम्। भग०

अचवल- त्रि० *[अचपल]*
स्थिरस्वभावे, वव० ३ उ०।
'गतिठाणभासभावादिएहि न वि कुणति चंचलत्तं तु।
गाणं गणिताण भवे, अचवलो सो उ मुणेयव्वो'।।
पंच०भा०। पंच० चू०
कायिकादिचापल्यरहिते,पण्हा० ४ अ० ।
अचवलं मानसचापल्यरहितम्। भग०२ श०५ उ०।
'अतिंतिणे अचवले, अप्पभासी मियासणे' अचपलो भवेत् सर्वत्र स्थिर इत्यर्थः। दशः ८ अ०। विशे०। रा०।
'अचवला' अचपला मनोवाक्कायस्थैर्य्यात्। सम०।

अचाइय- त्रि० *[अशक्त]*
असमर्थे, सूय०१ श्रु०१३ अ०।

अचाएंत- त्रि० *[अशक्नुवत्]*
असमर्थे, 'अव्वाबाध अचाएंतो नेच्छइ अप्पचेतए एए'। वव० ३ उ०। सूय०।

अचिंतण- न० *[अचिन्तन]*
चिन्तनाभावे, यत्कदाचिद् रूपादिकं दृष्टं, तस्स चेतसि न स्मरणमपरिभावनमित्यर्थः। उत्त० ३२ अ०।

अचिट्ठ- त्रि० *[अचेष्ट]*
अविद्यमानचेष्टे, आव० ३ अ०।

अचित्त- त्रि० *[अचित्त]*
न विद्यते चित्तमस्मिन्नित्यचित्तमचेतनम्। जीवरहिते, आचा०१ श्रु०१ अ०८ उ०। आव०। अनु०। निसि०। सूय०।

अचित्त- त्रि० *[अचित्त]*

अचित्तदवियकप्प- पुं० *[अचित्तद्रव्यकल्प]*
अचित्तद्रव्याणामाहारादीनामुपयोगविधिविशेषे,
'अचित्तदवियकप्पं, एत्तो वोच्छं समासेणं।
आहारे उवहिम्मि य, ओवसणे तह य पस्सवणे ।।
पयसं निसज्जठाणे, दंडे वंडे चिलमिलिणी।
अवलेहणिया वन्नाणं, सोचणे दंतसोहणे चेव ।।
पिप्पलगसूतिणक्खाणछेदणे चेव सोलसं मज्झा।
हारो खलु द्विविहो लोइयलोउत्तरे णायव्वो ।।
तिविहो तु लोइओ खलु, तत्थ इमो होति णायव्वो'।
पंच०भा०। पंच०चू०।

अचित्तदव्वखंध- पुं० *[अचित्तद्रव्यस्कन्ध]*
अविद्यमानचित्तोऽचित्तः स चाऽसौ द्रव्यस्कन्धः। द्विप्रदेशिका-दिपुद्गलस्कन्धरूपे अचेतने द्रव्यस्कन्धभेदे, अनु०।

अचित्तदव्वचूला- स्त्री० *[अचित्तद्रव्यचूला]*
चूडामणिकुन्ताग्रसिंहकर्णप्रासादपादपाद्यग्रे, निसि०१ उ०।

अचित्तमंत- त्रि० *[अचित्तवत्]*
न विद्यते चित्तमुपयोगो ज्ञानं यस्य। कनकरजतादावचेतने, सूय०१ , श्रु०१ अ०१ उ०।
चित्तमंतमचित्तं वा णेव सयं अदिन्नं गिण्हेज्जा'। दश० ४ अ०। आचा०।

अचित्तमहाखंध- पुं० *[अचित्तमहास्कन्ध]*
उत्कृष्टावगाहनेऽनन्तप्रदेशिके स्कन्धे, विशे०।

अचित्तसोय- न० *[अचित्तस्रोतस्]*
जीवरहितछिद्रे, (अचित्तस्रोतसो भेदास्तत्र शिश्नं प्रवेश्य शुक्र-पुद्गलनिष्कासनं च 'अंगादाण' शब्देऽदर्शि)। निसि०१ उ०।

अचियत- त्रि०। देशी०।
अप्रीतिकरे। 'अचियतंति वा अणियतंति वा एगट्ठं' इति वचनात्। वव०२ उ०। पिंड०।
अप्रीतौ च। वव०१ उ०। सूय०।
अप्रीतिमत्याम्, वव० ७ उ०।

अचियंतेउरपरघरप्पवेस- पुं० *[अचियतान्तःपुरपरगृहप्रवेश]*
अचियतोऽनभिमतोऽन्तःपुरप्रवेशवत् परगृहप्रवेशोऽन्यतीर्थिक प्रवेशो येषां ते तथा। अनभिमतपरमतप्रवशेषु सम्यक्त्विषु, यथा राज्ञामन्तःपुरे गन्तुं नेष्यते, एवं परतीर्थिकेष्वपि यैः प्रवेशो नेष्यते, ते श्रावकाः। सूय०२ श्रु०२ अ०।
'ऊसियफलिहा अवंगुयदुवारा अचियंतेउरपरघरप्पवेसा चाउ-द्दसट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासिणेसु पडिपुण्णं पोसहं सम्मं अणुपाले-माणा विहरंति'। सूय०२ श्रु०२ अ०।

अचुक्ख- त्रि० *[अचोक्ष]*
अशुद्धे, । तं०। जीवा०।

अचेयकड- त्रि० *[अचेतस्कृत]*
अचैतन्यकृते, भग०१६ श०२ उ०।
*** (जीवानामचेतस्कृतकर्मकत्वं 'चेयकड' शब्दे वक्ष्यते)

अचेयण- त्रि० *[अचेतन]*
चेतनाविकले, आव०४ अ०।
'अचेयणा' नराधमाः विशिष्टचैतन्याभावात्। पण्हा० २ अ०

अचेल- न० *[अचेल]* अव्य०।
वस्त्राणां वासगन्धनवीनावदातसुप्रमाणानां सर्वेषां वाऽभावे, सम० २२ सम०।

अचेलग- पुं० *[अचेलक]*
न विद्यन्ते चेलानि वासांसि यस्याऽसावचेलकः। ठा० ५ ठा० ३ उ०।
अल्पकुत्सितचेले, जिनकल्पिके च।आचा० १ श्रु०६ अ०२ उ०
अविद्यमानचेलकः कुत्सितचेलको वा। उत्त०

अचेलगधम्म- पुं० *[अचेलकधर्म]*
अविद्यमानानि जिनकल्पिकविशेषापेक्षया असत्त्वादेव, स्थविर कल्पिकापेक्षया तु जीर्णमलिनखण्डितश्वेताल्पत्वादिना चेलानि वस्त्राणि यस्मिन् स तथा, धर्मश्चारित्रम्, स चासौ धर्मश्चालेक धर्मः। आचेलक्याख्ये द्वाविंशतितीर्थकराप्रज्ञप्ते ऋषभवीरतीर्थ सम्मते साध्वाचारे, ठा०९ ठा०।

अचेलपरिसह- पुं० *[अचेलपरिषह]*
अचेल चेलाभावो जिनकल्पिकादीनाम्, अन्येषां तु भिन्नमल्प-मूल्यं च चेलमप्यचेलम्, अवस्त्रशीलवत्, तदेव परीषहोऽचेल-परीषहः। उत्त०२ अ०।
अचेलतायां जीर्णापूर्णमलिनादिचेलत्वे लज्जादैन्याऽऽकाङ्क्षाद्य-करणेन परिषह्यमाणत्वादिति। भग० ८ श० ८ उ०।
षष्ठे परीषहे। पण्हा०५ संव० द्वा०। सम०।
अमहामूल्यानि खण्डितानि जीर्णानि च वासांसि धारयेत्। आव०४ अ०।
'शीताभितापेऽपि यतिस्त्वग्वस्त्रत्राणवर्जितः। वासोऽकल्पं न गृह्णीयादग्निं नोज्वालयेदपि'।। आव०१ अ०।

अचेलिआ- स्त्री० *[अचेलिका]*
वस्त्ररहितायां स्त्रियाम्, निर्ग्रन्थ्याऽचेलिकया न भवितव्यम्। बुह०५ उ०।

अचोइय- त्रि० *[अचोदित]*
अप्रेरिते, 'वित्तो अचोइओ निच्चं, खिप्पं हवइ सुचोइए' उत्त०१ अ०।

अचोरिय- न० *[अचौर्य]*
चोरताभावे, 'अचोरियं करेंतं' अचौर्यं कुर्वन्तं, चौरतामकुर्वा-णमित्यर्थः। पण्हा०२ अ०।

अच्च-१ धा०।
अर्च पूजायाम्, 'अच्चे मुत्ते महाभागा, । उत्त० १२ अ०।

अच्च-२ त्रि० *[अर्च]*
कालविशेषात्मकलवभेदे च, यस्मिन् हि श्रमणो भगवान् महा-वीरो निर्वृत्तः। कल्प०।

अच्च- ३ त्रि० *[अर्च्य]*
पूज्ये, ठा० ३ ठा०१ उ०।

अच्चंतकाल- त्रि० *[अत्यन्तकाल]*
अन्तमतिक्रान्तोऽत्यन्तः, अत्यन्तः कालो यत्र सोऽत्यन्तकालः। असीमकालिके,। उत्त० ३२ अ०।

अच्चंतथावर- पुं० *[अत्यन्तस्थावर]*
अनादिस्थावरे, मरुदेवा अत्यन्तस्थावरा अनादिवनस्पतिराशेः उद्धृत्य सिद्धाः। आव० म०।

अच्चंतपरम- त्रि० *[अत्यन्तपरम]*
अधिकोत्कृष्टे, 'अच्चंतपरमो आसी,'। उत्त० २० अ०।

अच्चंतविसुद्ध- त्रि० *[अत्यन्तविशुद्ध]*
सर्वथा निर्दोषे, ठा० ९ ठा०।
अत्यन्तं विशुद्धः सर्वथा निर्दोषो दीर्घश्च पुरुषपरम्परापेक्षया यो राज्ञां भूपालानां कुललक्षणो वशः सन्तानस्तत्र प्रसूतो जातो यः स तथा। ठा० ९ ठा०।

अच्चंतसुहि- त्रि० *[अत्यन्तसुखिन्]*
निरतिशयसुखाऽऽप्लुते, उत्त० ३२ अ०।

अच्चंतिय- त्रि० *[आत्यन्तिक]*
सर्वकालभाविनि, 'णेगंतणच्चंतिय ऊदए वं, वयंति ते दोवि गुणोदयम्मि'। सूय० २ श्रु० ६ अ०।

अच्चंतोसण्ण- पुं० *[अत्यन्तावसन्न]*
अवसन्नेप्वेव प्रव्राजितेषु, संविग्नैः प्रव्राजितमात्रेष्वेवाबसन्नतया विहृतेषु च। जीत०।

अच्चक्खर- त्रि० *[अत्यक्षर]*
एकादिभिरक्षरैरधिके, 'अनत्यक्षरत्वं हि *गुणः' इत्ययं दोषः। अनु०। विशे०। आव०। आव० म०। आ०चू०।

अच्चण- न० *[अर्चन]*
पुष्पादिभिः सत्करणे, 'अच्चणं सेवणं चेव, मणसा वि न पत्थए'। उत्त० ३५ अ०।

अच्चणिज्ज- त्रि० *[अर्चनीय]*
चन्दनगन्धादिभिः सत्करणीये, उव० ।उपा० ।जीवा०। भग०। नाया०।

अच्चणिआ- स्त्री० *[अर्चनिका]*
सिद्धायतने जिनप्रतिमाद्यर्चने, भग० ४ श०१ उ०।

अच्चत्थ- न० *[अत्यर्थ]*
अतिक्रान्तमर्थमनुरूपत्वरूपम्। अतिशये। अत्यये, सम०। अर्थाभावे, सम०।
'अंगारपलित्तककप्पअच्चत्थसीयवेयणा'। पण्हा० २ अ०।

अच्चत्थत्त- न० *[अत्यर्थत्व]*
महार्थत्वाऽपरपर्याये परिपुष्टार्थाभिधायितारूपेऽष्टमे सत्यवचन-अतिशये, रा०।

अच्चय- पुं० *[अत्यय]*
प्रत्यवाये, बुह० ३ उ०।
आत्यन्तिके विनाशे च। बुह०४ उ०।

अच्चसण- न० *[अत्यशन]*
प्रतिपदादीनां पञ्चदशदिवसानां लोकोत्तरसंज्ञया द्वादशे दिवसे, । चंद० १० पाहु०। सूर० १० पाहु०।

अच्चा- स्त्री० *[अर्चा]*
अर्च्यतेऽसावाहारालङ्कारादिभिरित्यर्चा। देहे, आचा, १ श्रु० १ अ० ६ । सूय०। ठा०।
अर्चा द्विविधा। तद्यथा- सचित्ता अचित्ता च। तत्राचित्ता द्विविधा- प्रतिमा इतरा च। इतरा नाम स्त्रीशरीरं निर्जीवम्। एकैकं पुनर्द्विधा- सन्निहिता, असन्निहिता च। वव०६ उ०।
एके पुनरेकयाऽर्चयैकेन शरीरेणैकस्माद् भवात् सिद्धिगतिं गन्तारो भवन्ति। सूय०२ श्रु०२ अ०।
क्रोधाध्यवसायात्मिकायां ज्वालायाम्। आचा० १ श्रु० ८ अ० ६ उ०। ठा०।
लेश्यायाम्, अर्चा लेश्याऽन्तःपरिणतिः, अर्चा मनुष्यशरीरम्। सूय० १ श्रु० १५ अ०।

अच्चाइण्ण- त्रि० *[अत्याकीर्ण]*
जनसंकुलत्वादतीवाकीर्णे, 'अच्चा इण्णा वित्तो णो परस्स णिक्खमणपवेसाए' आचा० २ श्रु० ३ अ० १ उ०।

अच्चाउर- त्रि० *[अत्यातुर]*
भृशं ग्लाने, 'अच्चाउरं वा वि समिक्खिऊणं, खिप्प तओ घेत्तु दलित्तु तस्स' बुह० १ उ०।

अच्चागाढ- न० *[अत्यागाढ]*
अत्यन्तम्लेच्छादिभये, 'अच्चागाढे वसिया, णिक्खित्तो जइ व होज्ज जयणाए' बुह० २ उ०।

अच्चावेढण- न० *[अत्यावेष्टन]*
अतीवाऽऽवेष्टनेन परितापने, निसि० १२ उ०।

अच्चासणया- स्त्री० *[अत्यासनता]*
अत्यन्तं सततमासनमुपवेशनं यस्य सोऽत्यासनस्तद्भावस्तत्ता। सततमुपवेशने, ठा० ९ ठा०।

अच्चासणया- स्त्री० *[अत्यशनता]*
अतिमात्रमशनमत्यशनं तदेवाऽत्यशनता। प्रमाणाधिकभोजने, ठा० ९ ठा०।

अच्चासण्ण- त्रि० *[अत्यासन्न]*
अतिनिकटे, 'णच्चासण्णे णाइदूरे' भग० १ श० १ उ०। रा०। सूर०।

अच्चासाइत्तए- अव्य० *[अत्याशातयितुम्]*
छायाया भ्रंशयितुमित्यर्थे 'तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया सक्कं देविंदं सयमेव अच्चासाइत्तए। भग० ३ श०२ उ०।

अच्चासाइय- त्रि० *[अत्याशातित]*
उपसर्गिते,'से य अच्चासाइए समाणे परिकुविए' ठा०१० ठा०

अच्चासाएमाण- त्रि० *[अत्याशातयत्]*
उपसर्गं कुर्वति, ठा० १० ठा०।

अच्चासायणा- स्त्री० *[अत्याशातना]*
आत्यन्तिक्यामाशातनायाम्, ठा० १० ठा०।
जे भिक्खू भदंत ! अन्नयरीए अच्चासायणाए अच्चासाइए अच्चासाएंतं वा साइज्जइ त्ति। निसि० १० उ०।

अच्चाहार- पुं० *[अत्याहार]*
प्रभूताऽऽहारे, 'अच्चाहारेण सहइ०'। आव० ४ अ०।

अच्चि-१ स्त्री० *[अर्चि]*
किरणे, रा०। नाया०।
शरीरस्थरत्नादितेजोज्वालायाम्, भग०२ श०५ उ०। पन्न०। जीवा०। उपा०। उव०।
शरीरनिर्गततेजोज्वालायाम्, ठा०८ ठा०।
लेश्यायाम्। सूय०१ श्रु०१० अ०।
दाह्य-प्रतिबद्धे ज्वाला-विशेषे, आचा० १ श्रु० १ अ० ४ उ०। । नाया०। ठा०।
अनलविच्छिन्नायां ज्वालायाम्, जीवा० ३ प्रति०।
छिन्नज्वालम्, मूलाग्निविच्छिन्ना ज्वाला। दश०
दीपशिखायाम्, उत्त० ३ अ०।

अच्चि-२ स्त्री० *[अर्चि]*
प्रथमकृष्णराजेरभ्यन्तर पूर्वयोरवकाशान्तरे स्थिते लोकान्तिक विमाने, भग० ६ श० ५ उ०।
ब्रह्मलोककल्पे विमानविशेषः। सम०

अच्चि- ३ स्त्री० *[अर्चि]*
एष बादरतेजसो भेदः पन्न० १ पद०। दश०।

अच्चिमालि- त्रि० *[अर्चिर्मालिन्]*
अर्चींषि किरणास्तेषां माला, सा अस्यातीति अर्चिर्माली। सर्वतः किरणमालापरिवृते, जीवा०४ प्रति०। रा०। पन्न०।
आदित्ये, पुं०। सूय० १ श्रु० ६ अ०। सम०।
पूर्वयोः कृष्णराज्योरवकाशान्तरे (स्थिते) लोकान्तिकविमान-भेदे, भग० ६ श०५ उ०।

अच्चिमालिप्पभ- त्रि० *[अर्चिर्मालिप्रभ]*
अर्चिर्माली आदित्यस्तद्वत्प्रभान्ति शोभन्ते यानि तानि अर्चि-र्मालिप्रभाणि सूर्यवत् किरणैः शोभमानेषु, सम०।

अच्चिमालिणी- स्त्री० *[अर्चिर्मालिनी]*
सूर्याचन्द्रमसोस्तृतीयायामग्रमहिष्याम्, भग० १० श० ५ उ०। सूर०। जंबू०। जीवा०। ठा०। चंद०
दक्षिणपौरस्त्यरतिकरपर्वतस्य पश्चिमदिशि, शक्रस्य सेवा-नाम्न्याः तृतीयाया अग्रमहिष्या लक्षयोजनप्रमाणायां राजधान्यां च। ठा०४ ठा०१ उ०।
शक्रदेवेन्द्रस्य शच्या अग्रमहिष्या राजधानी। जीवा०

अच्चिय- त्रि० *[अर्चित]*
चन्दनादिना चर्चिते, नाया०१ श्रु०१ अ०।
महार्घ्ये, बुह० ३ उ०।
प्रमाणीकृते, निसि०२ उ०।
मान्ये, 'जं जस्स अच्चियं तस्स०। वव०१ उ०।

अच्चिसहस्समालणिज्ज- त्रि० *[अर्चिःसहस्रमालनीय]*
अर्चिषां किरणानां सहस्रैर्मालनीयं परिवारणीयं।
नाया० १ अ० ।रा०
मणिरत्नप्रभाज्वालानां सहस्रैः परिवारणीये, किमुक्तं भवति ? एवं नाम अत्यद्भुतैर्मणिरत्नप्रभाजालैराकलितमवभाति, यथा-नूनमिदं न स्वाभाविकं, किन्तु विशिष्टविद्याशक्तिमत्पुरुषप्रपञ्च-प्रभावितमिति। । आव०म० । रा०। जीवा०।

अच्चिसहस्समाला- स्त्री० *[अर्चिःसहस्रमाला]*
दीप्तिसहस्राणामावलीषु, भग०१० श०५ उ०।

अच्चिसहस्समालिणीया- स्त्री० *[अर्चिःसहस्रमालिनिका]*
अर्चिःसहस्रमाला दीप्तिसहस्राणामावल्यः सन्ति यस्यां सा तथा अर्चिःसहस्रमालिनिका।दीप्तिसहस्रपरिवृतायाम्, भग०१०श०५उ

अच्चीकरण- न० *[अर्चीकरण]*
अकर्तव्या अर्चा अनर्चा, अनर्चायाः याअर्चाकरणमर्चीकरणम् अभूततद्भावे च्विः। राजादीनां गुणवर्णने, निसि० ४ उ०।.

अच्चुक्कड- त्रि० *[अत्युत्कट]*
अभ्युन्नते, आव०म०।

अच्चुट्ठिय- त्रि० *[अत्युत्थित]*
अतीवाकार्यकरणं प्रत्युत्थिते, 'दासी त्वेनाऽत्यन्तमुत्थिता' इति। दास्या अपि दास्याम्। स्त्री०। सूय० १ श्रु० १४ अ०।

अच्चुण्ह- त्रि० *[अत्युष्ण]*
अतीवोष्ण उष्णधर्मो यत्र सोऽत्युष्णः। अतिशयितोष्णस्वभावे, ठा०५ ठा० ३ उ०।

अच्चुदय- न० *[अत्युदक]*
महामहति वर्षे। सभए वा सत्ताणं, अच्चुदये सुक्खतरं,उव०। प्रभूतजले, जीवा० ३ प्रति०।

अच्चुय- पुं० *[अच्युत]*
सौधर्मावतंसकादिसकलविमानप्रधाना-च्युतावतंसकाभिधान-विमानविशेषोपलक्षिते द्वादशे देवलोके, अनु० ।निसि० ।सम० आरणाच्युतयोरेकादशद्वादशयोः कल्पयोरिन्द्रे च। ठा० २ ठा० ३ उ० ।

अच्चुव्वाय- त्रि० *[अत्युद्वात]*
अतीवोद्वातः परिश्रान्तः। भृशं श्रान्ते, ।बुह० ३ उ०। निसि०।

अच्चुसिण- त्रि० *[अत्युष्ण]*
अतीव तप्ते ओदनादिके। अच्चुसिणं सुप्पेण वा जाव फुमाहि वा। आचा०२ श्रु०१ अ०७ उ०।

अच्छ-१ धा० *[आस्]*
उपवेशने। प्रतीक्षते। वव०१ उ०।
आसीत सामान्यतः। तं०। भग०।

अच्छ-२ त्रि० *[अच्छ]*
आकाशस्फटिकरत्नवदतिस्वच्छे, पन्न० २ पद०। जीवा०। आव०म०। भग०। उव०। ठा०। रा०। जंबू०।
निर्मले, नाया०१ श्रु०१२ अ०। भग०।
अनाविले, जीवा० ३ प्रति०।
स्फटिकवद् बहिर्निर्मलप्रदेशे, जीवा० ३ प्रति०।
सुनिर्मलजाम्बूनदरत्नबहुलत्वात्तस्य, चंद० ५ पाहु०। सूर० ५ पाहु० । जीवा०।
ऋक्षे, आचा०२ श्रु० १ अ०५ उ०। जीवा०। पन्न०। भग०।

अच्छ- ३ त्रि० *[अच्छ]*
एष सनखपदभेदः। पन्न०१ पद०।

अच्छंदग- पुं० *[अच्छन्दक]*
मोराकग्रामसन्निवेशस्थे पाखण्डिनि, स मोराके वसन्मंत्रतन्त्रज्ञो लोकपूजितस्तत्र समागतस्तत्र समागतस्य श्रीवीरस्य पुरतः सिद्धार्थव्यन्तरेणाऽच्छेद्यमिदमिति प्रतिज्ञाय गृहीतं तृणं छिन्दन् शक्रेण वज्रं प्रक्षिप्य छिन्नदशाङ्गुलीकृतो जनैरुपहसित इति आव०चू०। आव० म०।

अच्छण- न० *[आसन]*
अवस्थाने, गच्छा०२ अधि०। नाया०।
पर्युपासने, बुह० ३ उ०।
प्रतिश्रवणे, 'अच्छण अवलोवणे वा' वव० १ उ०।

अच्छण- पुं० *[अक्षण]*
अहिंसायाम्, दश०८ अ०।

अच्छणघरग- न० *[आसनगृहक]*
अवस्थानगृहकेषु, येषु यदा तदा वाऽऽगत्य बहवः सुखासिक-याऽवतिष्ठन्ते। जीवा० ३ प्रति०। जंबू०।

अच्छणजोय- पुं० *[अक्षणयोग]*
अहिंसाव्यापारे, तेषां पृथिव्यादीनामक्षणयोगेन अहिंसाव्यापा-रेण नित्यं भवितव्यम् । दश० ८ अ०।

अच्छण्णत्थ- त्रि० *[अच्छन्नस्थ]*
अच्छन्नप्रदेशे स्थिते, बुह० ३ उ०।

अच्छंतित- त्रि० *[आच्छादित]*
निरुद्धे, पण्हा० ४ अ०।

अच्छत्तय- त्रि० *[अच्छत्रक]*
छत्ररहिते, वीरमहापद्मयोरछत्रको धर्मो मतः। ठा०९ ठा०।

अच्छभल्ल- पुं० *[अच्छभल्ल]*
ऋक्षे, वव०१० उ०।
व्याघ्रविशेषे च। पण्हा०१ अ०

अच्छरगणसंघसंविइण्ण- त्रि० *[अप्सरोगणसंघसंविकीर्ण]*
अप्सरोगणानां संघः समुदायस्तेन सम्यक् रमणीयतया विकीर्णा व्याप्ता अप्सरोगणसंघविकीर्णा। अप्सरोयूथ संपरिवृते। जीवा० ३ प्रति०। पन्न०। रा०।

अच्छरस- त्रि० *[अच्छरस]*
अच्छो रसो येषां ते अच्छरसाः। प्रत्यासन्नवस्तुप्रतिबिम्बा-धारभूतेष्विवाऽतिनिर्मलेषु, जीवा० ३ प्रति०।

अच्छरसा- स्त्री० *[अप्सरस्]* देवीमात्रे, रूपेण देवीकल्पायां स्त्रियां च। 'नंदनवनविवरचारिणीओ अच्छराओ उत्तरकुरुमाणस-च्छराओ अच्छेरगपेच्छिणियाओ तिण्णि पलिओवमाइं परमाउं पालयित्ता ताओ वि उवणमंति मरणधम्मं'।
पण्हा०४अ० उव०।

अच्छरसातंडुल- न० *[अच्छरसतण्डुल]*
अच्छो रसो येषु तेऽच्छरसाः प्रत्यासन्नवस्तुप्रतिबिम्बाधारभूता इवातिनिर्मला इत्यर्थः। अच्छरसाश्च ते तण्डुला अच्छरस-तण्डुलाः। श्वेतेषु दिव्यतण्डुलेषु, रा०। जीवा०। आव०म०।

अच्छरा- स्त्री० *[अप्सरा]*
शक्रस्य देवेन्द्रस्य देवराजस्य षष्ठ्यामग्रमहिष्याम्, ठा०८ ठा०। भग०।

अच्छराणिवाय- पुं० *[अप्सरोनिपात]*
चप्पुटिकायां, तत्करणकाले च। यावता कालेन चप्पुटिका क्रियते तावान् कालोऽप्यप्सरोनिपातशब्देनाभिधीयते। जीवा० ३ प्रति। सूय०। भग०।

अच्छवि- पुं० *[अच्छवि]*
योगनिरोधेना-विद्यमानशरीरे स्नातकाख्य-निर्ग्रन्थभेदे, अत्र चत्वारोऽनुवादार्थाः-'अव्यथक' इत्येके। छवियोगाच्छविः शरीरं तद्योगनिरोधेन यस्य नास्त्यसौ 'अच्छविक' इत्यन्ये। क्षपा सच्छेदो व्यापारस्तस्या अस्तित्वात् क्षपी, तन्निषेधात् 'अक्षपी' इत्यन्ये। घातिकर्मचतुष्टय क्षपणानन्तरं वा तत्क्षपणाभावात् अक्षपीत्युच्यते। भग०२५ श०६ उ०।

अच्छविकर- पुं० *[अक्षपिकर]*
न क्षपिः स्वपरयोरायासो यः सः, तत्करणशीलो न भवति सो-ऽक्षपिकरः। भग०२५ श०७ उ०।
व्यथाविशेषस्याऽकारके प्रशस्तमनोविनयभेदे, ठा०८ ठा०।

अच्छविमलसलिलपुण्ण- त्रि० *[अच्छविमलसलिलपूर्ण]*
अच्छेन स्वरूपतः स्फटिकवच्छुद्धेन विमलेनाऽऽगन्तुकमलर-हितेन सलिलेन पूर्णः। स्फटिककल्पस्वच्छनिर्मलजलभृते, रा०। जीवा०।

अच्छा- स्त्री० *[अच्छा]*
वरुणदेशप्रतिबद्धे पुरीभेदे, आर्यदेशगणनायां वरुणा अच्छा। वरुणा नगरी, अच्छा देशः। अन्ये तु वरुणा देशः, अच्छा पुरीत्याहुः। सूय०।
वरणजनपदे आर्यक्षेत्रम्। प्रन्न०।

अच्छादणा- स्त्री० *[आच्छादना]*
स्थगने, 'संतस्स अच्छायणाए मग्गस्स'। वव० ३ उ०।

अच्छि- न० *[अक्षि]*
अश्नुते विषयान्। लोचने, तं०। दशा०।

अच्छिंदण- न० *[आच्छेदन]*
एकवारमीषद् वा छेदने, निसि० ३ उ०।
'पायपुंछणमाच्छिंदइ वा' आच्छिनत्ति बलादुद्दालयतीति। ठा०५ ठा०१ उ०।
'आच्छिंदिहि त्ति'-ईषच्छेत्स्यतीति। भग० १५ श०१ उ०।

अच्छिंदित्ता- अव्य० *[आच्छिद्य]*
आछिदल्यप्। हस्तादुद्दालनेनापहृत्येत्यर्थे, उपा० ७ अ०।
'अच्छिंदिय जं भिच्चसामिमादीणं'। आचा०।

अच्छिंदमाण- त्रि० *[आच्छिन्दत्]*
ईषत्सकृद् वा छिन्दति। भग० ८ श० ३ उ०।

अच्छिचमढण- न० *[अक्षिचमढन]*
चक्षुषोर्मलने, बृह० २ उ०।

अच्छिज्ज-१ न० *[अच्छेद्य]*
छेत्तुमशक्ये। ठा०।
छेत्तुमशक्या बुद्ध्या क्षुरिकादिशस्त्रेण वेत्यच्छेद्या। ठा० ३।
तओ अच्छेज्जा पन्नत्ता। तं जहा- समए पएसे परमाणु। ठा० ३ ठा०२ उ०।
'लोगे अच्छिज्जभेज्जो' छद्यः शस्त्रादिना, तन्निषेधादच्छेद्यः। द्रव्यपरमाणौ, भग० २० श० ६ उ०।

अच्छिज्ज-२ न० *[आच्छेद्य]*
आच्छिद्यते अनिच्छतोऽपि भृतकपुत्रादेः सकाशात् साधुदानाय परिगृह्यते यत्तदाच्छेद्यम्। पिंड०।
चतुर्दशोद्गमदोषदुष्टे, तदभेदोपचारात् चतुर्दशे उद्गमदोषे च। गच्छा० १ अधि०।

अच्छिज्जंती- स्त्री० *[आच्छिद्यमाना]*
तुम्बवीणादिवादनप्रकारेण वाद्यमानायाम्, आव० १ अ०।

अच्छिणिमीलिय- न० *[अक्षिनिमीलित]*
अक्षिनिकोचे, जीवा० ३ प्रति०।

अच्छिणिमीलियमेत्त- न० *[अक्षिनिमीलितमात्र]*
अक्षिनिकोचकालमात्रे, 'अच्छिणिमीलियमेत्तं, नत्थि सुहे दुक्खमेव अणुबद्धं। नरए नेरइयाणं, अहोनिसं पच्चमाणाणं ।' जीवा० ३ प्रति०।

अच्छिण्ण-१ त्रि० *[अच्छिन्न]*
अपृथग्भूते, ठा० १० ठा०।

अच्छिण्ण-२ त्रि० *[अच्छिन्न]*
प्रतिनियतकालविवक्षारहिते, बृह० १ उ०।

अच्छिण्णछेदणय- पुं० *[अच्छिन्नच्छेदनय]*
*मच्छिन्नं छेदेनेच्छति। नयभेदे, यथा 'धम्मो मंगलमुक्किट्ठं' इति श्लोकोऽर्थतो द्वितीयादिश्लोकमपेक्षमाणः। समo २२ समo

अच्छिण्णच्छेदणइय- न० *[अच्छिन्नच्छेदनयिक]*
अच्छिन्नच्छेदनयवति सूत्रे, अच्छिण्णच्छेयणइयाइं आजीविय-सुत्तपरिवाडीए' सम० २२ सम।

अच्छिद्द-१ त्रि० *[अच्छिद्र]*
अविरले, जंबू०२ वक्ष०

अच्छिद्द-२ पुं० *[अच्छिद्र]*
गोशालस्य मङ्खलिपुत्रस्य षण्णां दिक्चरणां चतुर्थे दिक्चरे, । भग०१५ श०१ उ०।

अच्छिद्दजाल- न० *[अच्छिद्रजाल]*
अविवरे, यत्किञ्चिद् वस्तु-समूहे, पण्हा०४ अ०

अच्छिद्दजालपाणि- पुं० *[अच्छिद्रजालपाणि]*
अच्छिद्रजालौ विवक्षिताङ्गुल्यन्तरालसमूहरहितौ पाणी हस्तौ यस्य स तथा।अविवराङ्गुलिसमुदयवद्हस्तके, अच्छिद्दजपाणी पीवरकोमलवरांगुली इति करयोः सुलक्षणम्। उव०। पण्हा०

अच्छिद्दपत्त- त्रि० *[अच्छिद्रपत्र]*
अच्छिद्राणि पत्राणि यस्य सः। नीरन्ध्रपर्णे, नाया०१ श्रु० १ अ०। उव०
'अच्छिद्दपत्ता अविरलपत्ता अवाईणपत्ता अणईइपत्ता णिद्धुयजरढपंडुपत्ता' अच्छिद्राणि पत्राणि येषां ते अच्छिद्र-पत्राः। किमुक्तं भवति। न तेषां पत्रेषु वातदोषतः कालदोषतो वा गड्डरिकादिरीतिरुपजायते, येन तेषु पत्रेषु छिद्राण्यभ-विष्यन्, इत्यच्छिद्रपत्रः। अथवा एवं नामान्योन्यशाखाप्रशा-खानुप्रवेशात्पत्राणि पत्राणामुपरि जातानि येन मनागप्यपान्त-रालरूपं छिद्रं नोपलक्ष्यत इति। तथा चाह-'अविरलपत्ताइं ति'। रा०। जीवा०। जंबू०।

अच्छिद्दपसिणवागरण- पुं० *[अच्छिद्रप्रश्नव्याकरण]*
अच्छिद्राण्यविरलानि निर्दूषणानि वा प्रश्नव्याकरणानि येषां ते तथा। अविरलप्रश्नोत्तरेषु, निर्दुष्टप्रश्नोत्तरेषु च। भग० २ श० ५ उ०। उव०।

अच्छिद्दपाणि– पुं० *[अच्छिद्रपाणि]*
प्रतिमापन्नो जिनकल्पिको वा। आचा०

अच्छिद्दविमलदसण- पुं० *[अच्छिद्रविमलदशन]*
अच्छिद्रा विमला दशना यासां तास्तथा। अविरलस्वच्छरदना-याम्, जंबू० २ वक्ष०।

अच्छिपत्त- न० *[अक्षिपत्र]*
अक्षिपक्ष्मणि, भग० १४ श० ८ उ०।

अच्छिवेहग- पुं० *[अक्षिवेधक]*
चतुरिन्द्रियजीवभेदे, उत्त० ३६ अ०। जीवा०।

अच्छिमल- पुं० *[अक्षिमल]*
दूषिकादौ, तं०।
नेत्रमले, 'अच्छिमलो दूसिकादि'। निसि० ३ उ०।

अच्छिरोडय- पुं० *[अक्षिरोडक]*
चतुरिन्द्रियजीवभेदे, उत्त० ३६ अ०। जीवा०।

अच्छिल- पुं० *[अक्षिल]*
चतुरिन्द्रियजीवभेदे, उत्त० ३६ अ०।

अच्छिवेयणा- स्त्री० *[अक्षिवेदना]*
लोचनयोर्दुःखानुभवने, उत्त० २ अ०।
'षोडशानां रोगानां द्वादशोऽयम्' उपा० ४ अ०। नाया०।

अच्छी- स्त्री० *[आच्छी]*
अच्छनामकदेशोद्भवायां स्त्रियाम्, पन्न० ११ पद०।

अच्छुय- त्रि० *[आस्तृत]*
आच्छादिते, नाया० १ श्रु० ८ अ०।

अच्छुरण- न० *[आस्तरण]*
प्रस्तरणे, निसि० १५ उ०।
दावानलादिभये, यद् भूमावास्तीर्य्यते प्रलम्बादिवितरणाय वा यत्तदास्तरणम्। एतत्प्रायश्चर्ममयं भवति। साधूनामौपग्रहिको-पधावन्तर्भवति। बृह० ३ उ०।

अच्छुरिय- न० *[आच्छुरित]*
आस्तीर्णे, बृह० १ उ०।

अच्छुल्लूढ- त्रि० *[अच्छोल्लूढ]*
स्वस्थानं त्याजिते, बृह० १ उ०।

अच्छेज्ज- न० *[अच्छेद्य]*
छेत्तुमशक्ये, ठा० ३ ठा० २ उ०।
आच्छेद्य–षष्ठशबलदोषे। पण्हा०

अच्छेद- नं० *[अच्छेद]*
'जम्हा तु अव्वोच्छित्ती, सो कुणती नाणचरणमादीणं। तम्हा खलु अच्छेदं, गुणप्पसिद्धं हवति नामं'।
गौणानुज्ञायाम्, पंच०भा०।

अच्छेर- न० *[आश्चर्य]*
आ विस्मयतश्चर्यन्तेऽवगम्यन्ते इत्याश्चर्याणि। ठा० ९ ठा०।

अच्छेरपेच्छणिज्ज- त्रि० *[आश्चर्यप्रेयक्षणीय]*
अहो ! किमिदमिति कौतुकेन सोष्ठवाद्दर्शनीये, जीवा०२ प्रति०

अच्छोडण- न० *[आस्फोटन]*
वस्त्राणां रजकैरिव शिलायामास्फालने, पिंड०।

अच्छोदग- न० *[अच्छोदक]*
स्वच्छपानीये, रा०।

अच्छोदगपडिहत्थ- त्रि० *[अच्छोदकप्रतिहस्त]*
स्वच्छपानीयपरिपूर्णे, । रा०।

अजंगम- त्रि० *[अजङ्गम]*
गमनशक्तिविकले, । वव०१ उ०।
जङ्घाबलपरिहीने, । वव०८ उ०।

अजज्जर- त्रि० *[अजर्जर]*
जरारहिते, जीवा० ३ प्रति०।

अजय-१ पुं० *[अयत]*
गृहस्थकल्पे साधौ, गच्छा०१ अधि०।
अविरतसम्यग्दृष्टौ, कल्प०।

अजय-२ पुं० *[अयत]*
अयत्नवति च। उव०।
यतनाऽभावे, नं०। । दश०४ अ०।

अजयणकारि- पुं० *[अयतनकारिन्]*
अयतनया कार्यकारिणि,अजयणकारिस्सेवं,कज्जे परदव्वलिंग-कारिस्स, अजयणं जो करेति सो भणति अजयणकारी। णिक्कारणपडिसेवी, अजयणकारी व कारणे साहु।
निसि० १ उ० ।

अजयणा- स्त्री० *[अयतना]*
यतनाऽभावे ईर्याद्यशोधने, 'अजयणाए पकुव्वंति, पाहुणगाणं अवच्छला'। गच्छा० ३ अधि०।

अजयभाव- त्रि० *[अयतभाव]*
असंयताध्यवसाये, 'परस्स तं देइ सवग्गे होइ अहिगरणम् अजयभावस्स अयतभावस्स अयतोऽशुद्धाऽऽहारापरिहारक-त्वेन जीवरक्षणरहितो भावोऽध्यवसायो यस्य स तथा। पिंड०।

अजयसेवि- त्रि० *[अयतसेविन्]*
अयतनया प्रतिसेवके, वव०१ उ०।

अजर- पुं० *[अजर]*
उम्मुक्ककम्मकवया अजरा अमरा असंगया' सिद्धा अजराः, वयसोऽभावात्। उव०।
न विद्यते जरा यस्य, तदजरम्। आव०म०।

अजरामर- न० *[अजरामर]*
जरा वयोहानिः, मरणं मरः स्वरान्तत्वादच्प्रत्ययः। न विद्यते जरामरौ यत्र तदजरामरम्। मोक्षे, विशे०। जंबू०। तं०।
'अहो य राओ परितप्पमाणे, अट्ठे सुमूढे अजरामरे व्व' अजरा-मरवद् बालः, क्लिश्यते धनकाम्यया। सूय० १ श्रु० १० अ०
'नत्थि कोइ जगम्मि अजरामरो'। महा०७ अ०।

अजस- न० *[अयशस्]*
अश्लाघायाम्,असद्वृत्ततयानिन्दायाम्,सूय०२श्रु०२अ।गच्छा सर्वदिग्गामिन्याः प्रसिद्धेरभावे, भग०९ श० ३३ उ०।
अपराक्रमकृते, दश०१ चूलि०।
अवर्णवादभाषायाम्। निसि०११ उ०।

अजसकारग- त्रि० *[अयशःकारक]*
सर्वदिग्गामिन्याः प्रसिद्धे प्रतिषेधके, भग० ९ श० ३३ उ०।

अजसकित्तिणाम- न० *[अयशःकीर्तिनामन्]*
यदुदयवशात् मध्यस्थजनस्याप्यप्रशस्यो भवति, तदयशः-कीर्ति नाम। आव० ।

अजसजणग- त्रि० *[अयशोजनक]*
निन्दनीयतादिकारके, गच्छा०२ अधि०।

अजसबहुल- त्रि० *[अयशोबहुल]*
अयशोऽश्लाघाऽसद्वृत्ततया निन्दा तद्बहुलः। यानि यानि परापकार भूतानि कर्मानुष्ठानानि विधत्ते, तेषु तेषु कर्मसु करचरणच्छेदनादिषु अयशोभाजि। नियडिबहुले साइबहुले अजसबहुले, उस्सण्णतसपाणघाती। सूय०२ श्रु०२ अ०।

अजससयविसप्पमाणहियय- त्रि० *[अयशःशतविसर्पद्हृदय]*
न यशः शतानि अयशःशतानि, तेषु विसर्पद् विस्तारं गच्छद् हृदयं मानसं यस्य स तथा, प्रभूताश्लाघाविस्तृमनस्के, तं०।

अजहण्णुक्कोस- त्रि० *[अजघन्योत्कृष्ट]*
न जघन्योत्कृष्टा स्थितिर्यस्य सः, एवं स्थितिशब्दलोपात् तथा। मध्यमायां स्थितौ वर्तमाने, आव०म०।

अजहण्णुकोसपएसिय- पुं० *[अजघन्योत्कर्षप्रदेशिक]*
जघन्याश्चोत्कर्षाश्च जघन्योत्कर्षाः, न तथा ये तेऽजघन्योत्कर्षाः, मध्यमा इत्यर्थः, ते प्रदेशाः सन्ति येषां ते अजघन्योत्कर्षप्रदे-शिकाः। मध्यमप्रदेशनिष्पन्नेषु, ठा० १ ठा० १ उ०।

अजहत्थ- न० *[अयथार्थ]*
पलाशादावयथावदर्थके नामभेदे, ठा० १ ठा०१ उ०।

अजाइय- त्रि० *[अयाचित]*
अयाञ्चा लब्धे, अदत्तादाने च। अयाचितमित्यनेनादत्तादानं गृहीतम्। सूय० १ श्रु० ९ अ०।

अजाणंत- त्रि० *[अजानत्-अजानान]*
अनवबुध्यमाने, अजाणंता मुसं वदे। सूय० १श्रु० १अ० ३ उ० कल्पाऽकल्पमजानति अगीतार्थे, पुं०। बुह० ३ उ०।

अजाणय- त्रि० *[अज्ञ]*
न जानाति, स्वल्पज्ञाने, आचा० १ श्रु०६ अ० २ उ०।
एवं विप्पडिवन्नेगे, अप्पणा उ अजाणया। सूय०१ श्रु० ३ अ०

अजाणिय- अव्य० *[अज्ञात्वा]*
अविज्ञायेत्यर्थे, निसि०९ उ०।

अजाणिया- स्त्री० *[अज्ञिका]*
नज्ञिका, ज्ञिकाविलक्षणायां सम्यक् परिज्ञानरहितायां पर्षदि, 'अजाणिया जहा जा होइ पगइमहुरा मियछावयसीहकुक्कुड-भूया रयणमिव असंठविया अजाणिया सा भवे परिसा' या ताम्रचूडकण्ठी रवकुरङ्ग पोतवत्प्रकृत्या मुग्धस्वभावा असंस्था-पितजात्यरत्नमिवान्तर्गुणविशिष्टगुणाऽसमृद्धा सुखप्रज्ञापनीया पर्षत् सा अज्ञिका। नं०।

अजाणू- स्त्री० *[अज्ञा]*
अज्ञस्य हिंसादेर्हेतुस्वरूपफलाविदुषोज्ञानाद् व्यावृत्तौ, ठा०२ ठा० ४ उ०।

अजाता– स्त्री० *[अजाता]*
उत्तरगुणैश्चाधाकर्मादिभिरशुद्धा। ओह०

अजायकप्पिय- पुं० *[अजातकल्पित]*
अगीतार्थे, 'एगविहारो अजायकप्पिओ जो भवे ठवणकप्पे'। गच्छा० १ अधि०।

अजिअसेण-१ पुं० *[अजितसेन]*
जम्बूद्वीपे भारतवर्षेऽतीतायामुत्सर्पिण्यां जाते चतुर्थे कुलकरे, ठा०१० ठा०।

अजिअसेण-२ पुं० *[अजितसेन]*
कौशाम्ब्या अधिपतौ धारणीवल्लभे नृपतिभेदे, धारणीत्यभिधा देवी, तत्र धर्मवसुर्गुरुः' आव०। आ०चू०।

अजिअसेण- ३ पुं० *[अजितसेन]*
श्रावस्तीनगरी समवसृते यशोभद्रायाः कीर्तिमत्यामहत्तरिकायाः प्रव्राजके आचार्यभेदे, ('अलोह' शब्दे कथा द्रष्टव्या)। आ०चू०। आव०।

अजिअसेण-४ पुं० *[अजितसेन]*
भद्दिलपुरनगरे नागस्य गृहपतेः सुलसाभार्यायामुत्पन्ने पुत्रे, स चाऽरिष्टनेमेरन्तिके प्रव्रज्य शत्रुञ्जये सिद्धः। अंत०४ वर्ग।

अजिइंदिय- त्रि० *[अजितेन्द्रिय]*
न जितानि श्रोत्रादीनीन्द्रियाणि येन स तथा। इन्द्रियावशे, दश० । निसि०१ अ०
असर्वज्ञत्वे, ठा०५ ठा०।

अजिण-१ *[अजिन]*
मृगादिचर्मणि, उत्त०५ अ०। आचा०। सूय०।
चर्मधारित्वे, । उत्त०५ अ० ।

अजिण-२ *[अजिन]*
न जिनोऽजिनः, अवीतरागे, भग० १५ श० १ उ०।
असर्वज्ञे, पुं०।
'अजिणा जिणसंकासा जिणाइ वाऽवितहं वागरेमाणा'। उव०। कल्प०। ठा०।

अजिण्ण- न० *[अजीर्ण]*
जीर्णाजीर्णे च भोजने बहुशः, एष आयुष उपक्रमः। अस्माद् म्रियन्ते प्राणिन इत्यर्थः। आव०१ अ०। जीवा०।

अजिम्मकंतणयणा- स्त्री० *[अजिह्मकान्तनयना]*
अजिह्मेऽमन्दे भद्रभावतया निर्विकारचपल इत्यर्थः, कान्ते नयने यासां तास्तथा सुभगत्वयतत्वसहजचपलत्वभाजन लोच-नासु, अजिम्हकंतणयणा पत्तलधवलायतआयतंबलो अणाओ। जंबू० २ वक्ष०।

अजीर- न० *[अजीर्ण]*
आहारस्याऽजरणे, तद्भावे च रोगोत्पत्तिः। वव० १ उ०। जंबू०। नाया०। उपा०।

अजीव- पुं० *[अजीव]*
न जीवा अजीवाः। जीवविपरीतस्वरूपेषु धर्माधर्माकाश-पुद्गलास्तिकायाऽद्धासमयेषु, पन्न० १ पद०।
'नत्थि जीवा अजीवा वा, नेवं सण्णं निवेसए'। सूय०।

अजीवआणवणिया- स्त्री० *[अजीवाज्ञापनिका]*
आज्ञापनिकाजन्यः कर्मबन्धोऽप्याज्ञापनिका। अजीवविषया-आज्ञापनिका
अजीवाज्ञापनिका।'अजीवमाज्ञापयतः'इत्यादेश- नरूपाया आज्ञापनिक्याः क्रियाया भेदे, ठा०२ ठा०१ उ०।

अजीवआणवणिया- स्त्री० *[अजीवानायनी]* ।
अजीवविषया आनायनी, अजीवमानायनम्। आनायनरूपायाः क्रियाया भेदे, । ठा०२ ठा०१ उ०।

अजीवआरंभिया- स्त्री० *[अजीवारम्भिका]*
या चाजीवान् जीवकलेवराणि पिष्टादिमयाऽजी वाकृतींश्च वस्त्रादीन् वाऽऽरभमाणस्य सा अजीवारम्भिका। आरम्भिक्याः क्रियाया भेदे, ठा० २ ठा०१ उ०।

अजीवकाय- पुं० *[अजीवकाय]*
अजीवाश्च तेऽचेतनाः कायाश्च राशयोऽजीवकायाः। जीवविपरीतेषु धर्माधर्माकाशपुद्गलेषु, भग०७ श०१० उ०।

अजीवकायअसंजम- पुं० *[अजीवकायासंयम]*
पुस्तकादीनामजीवकायानां ग्रहणपरिभोगानुपरमेण तत्समाश्रितजीवविघाते, । ठा०७ ठा०।

अजीवकायअसमारंभ- पुं० *[अजीवकायासमारम्भ]*
पुस्तकादीनां ग्रहणपरिभोगतस्तदाश्रितजीवानां परितापकरणे, । ठा० ७ ठा०।

अजीवकायआरंभ- पुं० *[अजीवकायारम्भ]*
पुस्तकादीनां ग्रहण-परिभोगतः तदाश्रितजीवानामुपद्रवणे, । ठा० ७ ठा० ।

अजीवकायसंजम- पुं० *[अजीवकायसंयम]*
पुस्तकादीनामजीवकायानां ग्रहणपरिभोगोपरमे, ठा०७ ठा०। आव०। पण्हा०।

अजीवकिरिया- स्त्री० *[अजीवक्रिया]*
जीवस्य पुद्गलसमुदायस्य यत्कर्मेर्य्यापथ्यं तया परिणमनं साऽजीवक्रिया। 'अजीवकिरिया दुविहा पन्नत्ता। तंजहा- ईरियावहिया चेव, संपराइया चेव'। ठा०२ ठा०२ उ०।

अजीवणिस्सिय- त्रि० *[अजीवनिःश्रित]*
अजीवाश्रिते, ठा०७ ठा०।

अजीवणिस्सिय- त्रि० *[अजीवनिःसृत]*
अजीवेभ्यो निर्गते, ठा०७ ठा०।

अजीवदव्वविभत्ति- स्त्री० *[अजीवद्रव्यविभक्ति]*
अजीवद्रव्याणां विभागरूपे विभक्तिभेदे, अजीवद्रव्यविभक्तिः तु रूप्यरूपिद्रव्यभेदाद् द्विधा। सूय० १ श्रु० ५ अ० १ उ०।

अजीवदिट्ठिया- स्त्री० *[अजीवदृष्टिका]*
अजीवानां चित्र कर्मादीनां दर्शनार्थं गच्छतो गतिक्रियारूपे दृष्टिकायाः क्रियाया भेदे, ठा० २ ठा० १ उ०।

अजीवदेस- पुं० *[अजीवदेश]*
धर्माधर्मास्तिकायादिदेशेषु, भग० १६ श० ८ उ०।

अजीवधम्म- पुं० *[अजीवधर्म]*
अचेतनानां मूर्तिमतां द्रव्याणां वर्णगन्धरसस्पर्शेषु, अमूर्त्तिमतां द्रव्याणां धर्माधर्माकाशानां गत्यादिकेषु धर्मेषु,सूय०२श्रु०१अ०

अजीवपज्जव- पुं० *[अजीवपर्याय]*
अजीवानां पर्यायेषु, पन्न०।
पर्याया गुणा विशेषा धर्मा इत्यनर्थान्तरम्। पन्न०५ पद०।

अजीवपण्णवणा- स्त्री० *[अजीवप्रज्ञापना]*
अजीवानां प्रज्ञापनाऽजीवप्रज्ञापना। प्रज्ञापनाभेदे, पन्न०।

अजीवपरिणाम- पुं० *[अजीवपरिणाम]*
पुद्गलानां परिणामे, 'दसविहे अजीवपरिणामे पन्नत्ते। तं जहा- बंधणपरिणामे, गइयपरिणामे ठाणपरिणामे, भेदवन्नरसपरिणामे, गंधपरिणामे फासपरिणामे, अगरुयलहुयसद्दपरिणामे। (बन्धनपरिणामादीनां व्याख्याऽन्यत्र) ठा० १० ठा०।

अजीवपाउसिया- स्त्री० *[अजीवप्राद्वेषिकी]*
अजीवे पाषाणादौ स्खलितस्य प्रद्वेषादजीवप्राद्वेषिकी। ठा० २ ठा० १ उ०।
अजीवस्योपरि प्रदेषाद्याः क्रियाः, प्रद्वेषकरणमेव वा। प्राद्वेषिक्याः क्रियाया भेदे, भग० ३ श० ३ उ०।

अजीवपाडुच्चिया- स्त्री० *[अजीवप्रातीतिकी]*
अजीवं प्रतीत्य यो रागद्वेषोद्भवस्तज्जो यो बन्धः सा अजीवप्रातीतिकी। प्रातीतिक्याः क्रियाया भेदे, ठा० २ ठा० १ उ०।

अजीवपुट्ठिया- स्त्री० *[अजीवपृष्टिका (जा)(स्पृष्टिका)]*
अजीवं रागद्वेषाभ्यां पृच्छतः स्पृशतो वा क्रियात्मके, पृष्टिजा-(स्पृष्टिका)याः क्रियाया भेदे, ठा० २ ठा० १ उ०।

अजीवमिस्सिया- स्त्री० *[अजीवमिश्रिता]*
सत्यमृषाभेदे, यदा यदा प्रभूतेषु मृतेषु स्तोकेषु जीवत्सु एकत्र राशीकृतेषु शङ्खादिषु एवं वदति- अहो! महानयं मृताऽजीवराशिरिति तदा सा अजीवमिश्रिता, अस्या अपि सत्यमृषात्वम्। मृतेषु सत्यत्वात्, जीवत्सु मृषात्वात्। पन्न० ११ पद०।

अजीवरासि- पुं० *[अजीवराशि]*
राशिभेदे, सम०।
अजीवरासी दुविहा पन्नत्ता। तं जहा-रूवी अजीवरासी, अरूवी अजीवरासी य। सम०।

अजीववेयारणिया- स्त्री० *[अजीववैदारणिका-अजीववैक्रयणिका]*
अजीवं विदारयति स्फोटयति, अजीवमसमानभागेषु विक्रीणाति, द्वैभाषिको विचारयति, पुरुषादिविप्रतारणबुद्ध्याऽजीवं भणत्येतादृशमेतदिति यत्सा तथा। अजीववैदा/वैक्रयवैचा/वैता) रणिक्याः क्रियाया भेदे, ठा०२ ठा० १ उ०।

अजीवसामंतोवणिवाइया- स्त्री० *[अजीवसामन्तोपनिपातिकी]*
कस्यापि रथो रूपवानस्ति, तं च जनो यथा यथा प्रलोकयति प्रशंसति च, तथा तथा तत्स्वामी हृष्यतीति।
रथादौ हृष्यतः क्रियात्मके सामन्तोपनिपातिक्याः क्रियाया भेदे, ठा०२ ठा० १ उ०।

अजीवसाहत्थिया- स्त्री० *[अजीवस्वाहस्तिका]*
स्वहस्तगृहीतेनैवाजीवेन खड्गादिनाऽजीवं मारयति सा अजीवस्वाहस्तिकी, स्वहस्तेनाजीवं ताडयतोऽजीवस्वाहस्तिका। स्वाहस्तिक्याः क्रियाया भेदे, ठा०२ ठा०१ उ०।

अजीवापच्चक्खाणकिरिया- स्त्री० *[अजीवाप्रत्याख्यान-क्रिया]*
अजीवेषु मद्यादिषु अप्रत्याख्यानात्कर्मबन्धनरूपेऽप्रत्याख्यान-क्रियाभेदे, ठा०२ ठा०२ उ०।

अजीवाभिगमं- पुं० *[अजीवाभिगम]*
गुणप्रत्यया वध्यादिप्रत्यक्षतः पुद्गलास्तिकायाद्यभिगमे, ठा० ३ ठा०२ उ०।
'से किं तं अजीवाभिगमे ? अजीवाभिगमे दुविहे पन्नत्ते। तं जहा-रूविअजीवाभिगमे य, अरूविअजीवाभिगमे य। से किं तं अरूवि-अजीवाभिगमे ? अरूविअजीवाभिगमे दसविहे पन्नत्ते। तं जहा- धम्मत्थिकाए एवं जहा पन्नवणाए जाव। से तं अरूवि-अजीवाभिगमे०'। जीवा० १ प्रति०।

अजीवुब्भव- त्रि० *[अजीवोद्भव]*
अजीवप्रभवे, दश० १ अ०।

अजुत्त- त्रि० *[अयुक्त]*
बुद्ध्या चिन्त्यमाने अनुपपत्तिक्षमे *दोषविशेषदुष्टे। यथा- तेषां कटतटभ्रष्टैर्गजानां मदबिन्दुभिः। प्रावर्त्तत नदी घोरा, हस्त्यश्वरथवाहिनी । विशे०। आव०म०। अनु०। बृह०।

अजुत्तरूव- त्रि० *[अयुक्तरूप]*
असंगतरूपे, अनुचित वेषे, ठा० ४ ठा० ३ उ०।

अजूरणया- स्त्री० *[अजीर्णता (अजरणता)]*
शरीरजीर्णत्वाऽविधाने, शरीरापचयकारिशोकानुत्पादने, 'बहूणं पाणाणं जाव सत्ताणं अदुक्खणयाए असोयणयाए अजूरण-याए'। भग० ७ श० ६ उ०।

अजोगया- स्त्री० *[अयोगता]*
योगनिरोधोत्तरंशैलेशीकरणात्प्राग्वर्तमानायामवस्थायाम्, उव० योगनिरोहं करेइ, करेइत्ता अजोगत्तं पाउणइ, अजोगत्तं पाउ-णित्ता इसिं रहस्स०। उव०

अजोगरूव- त्रि० *[अयोगरूप]*
अघटमानके, 'अजोरूवं इह संजयाणं, पावं तु पाणाण य संझकाउं'। सूय० २ श्रु० ६ अ०।

अजोगि- पुं० *[अयोगिन्]*
न सन्ति योगा यस्य। ठा० २ ठा० १ उ०।
न योगीति वा योऽसावयोगी। ठा० २ ठा० १ उ०।
निरुद्धयोगे, ठा० ४ ठा० ४ उ०।

अजोगिकेवलि- पुं० *[अयोगिकेवलिन्]*
अयोगी चाऽसौ केवली च अयोगिकेवली। निरुद्धमनःप्रभृति-योगे शैलेशीगते, सम० १४ सम०।

अजोगिभवत्थ- पुं० *[अयोगिभवस्थ]*
अयोगीचासौभवस्थश्चायोगिभवस्थः।शैलेश्यवस्थामुपगते, नं०

अजोगिभवत्थकेवलणाण- न० *[अयोगिभवस्थकेवलज्ञान]*
शैलेशीकरणव्यवस्थितस्य केवलज्ञाने। नं०।
(** 'केवलनाण' शब्दे व्याख्याऽस्य द्रष्टव्या)

अजोणिभूय- न० *[अयोनिभूत]*
विध्वस्तयोनौ प्ररोहासमर्थ, दश०।

अजोणिय- पुं० *[अयोनिक]*
सिद्धे, ठा० २ ठा० १ उ०।

अजोसिय- त्रि० *[अजुष्ट]*
असेविते, 'जे विण्णवणा अजोसिया' सूय० १श्रु० २अ०१ उ०

अज्ज-१ अव्य० *[अद्य]*
अस्मिन्नहनि इदं शब्दस्यनिपातः सप्तम्यर्थे।उत्त०३अ०। सूय० वर्तमानदिने, निसि० ९ उ०।
अद्यतया वाऽधुनातनतया वर्तमानकाल इत्यर्थः। भग० १४ श० ९ उ
वैभारपर्वतस्याऽधः स्थे ह्रदे, । भग०२ श०५ उ०।

अज्ज-२ न० *[अब्ज]*
दशार्बुदसंख्यायां, शतकोटिसंख्यायां, तत्संख्येये च। कल्प०।

अज्ज- ३ त्रि० *[आर्य]*
आरात् सर्वहेयधर्मेभ्यो यातः प्राप्तो गुणैरित्याऽऽर्यः। पन्न० १ पद०। नं०। आव०।
पापकर्मबहिर्भूतत्वेनापापे, ठा० ४ ठा० २ उ०। भग०।
आर्यकर्मकारिणि अजुगुप्सितकारिणि, वव० १ उ०।

अज्ज-४ त्रि० *[आर्य]*
साधौ, कल्प०। बृह०।
चारित्रार्हे, आचा०१ श्रु०५ अ०२ उ०।
सुजने, बृह० १ उ०।

अज्ज-५ त्रि० *[आर्य]*
आमन्त्रणे आर्यशब्दप्रयोगः 'अज्जो ! सामाइयं जाणामो' हे आर्य, ओकारान्तता सम्बोधने प्राकृतत्वात्।भग०१ श०९ उ०।
अज्जो ति आमन्त्रणवचनम्। भगवान् महावीरः किल साधूना-मन्त्रयति- हे आर्याः !। ठा० ९ ठा०।
'अज्जो ति समणे भगवं महावीरे गोयमाइसमणे णिग्गंथे आमंतित्ता एवं वयासी'। ठा० ३ ठा०२ उ०।

अज्ज-६ त्रि० *[आर्य]*
मातामह, निसि०।

अज्ज-७ त्रि० *[आर्य]*
पितामह, नाया०८ अ०।

अज्ज-८ त्रि० *[आर्य]*
गोत्रप्रवर्तके ऋषिभेदे, । नं०।

अज्जइसिवालिय- पुं०स्त्री० *[आर्यर्षिपालित]*
आर्यशान्तिश्रेणिकस्य माढरसगोत्रस्य चतुर्थे यथापत्ये अन्तेवासिनि, कल्प०।
आर्यर्षिपालितान्निःसूतायां शाखायाम्, ।थेरेहिंतो अज्जइसिवालिएहिंतो इत्थ णं अज्जइसिवालिया साहा णिग्गया'। कल्प०।

अज्जउत्त- पुं० *[आर्यपुत्र]*
अपापकर्मवतोर्मातापित्रोः पुत्रे, ठा०८ ठा०।

अज्जकण्ह- पुं० *[आर्यकृष्ण]*
दिगम्बरमतप्रवर्तकस्य शिवभूतेर्गुरौ,आव०म० ।उत्त०। विशे० । आ०चू०। ('बोडिय' शब्दे किञ्चित् विशेषं वक्ष्यते)

अज्जकम्म- न० *[आर्यकर्मन्]*
आर्यं हेयधर्मेभ्यो नृशंसतादिभ्यो दूरयातं कर्म। शिष्टनोचिते अनुष्ठाने, । उत्त०१३ अ०।

अज्जकालग- पुं० *[आर्यकालक]*
स्वातिशिष्ये हारीतगोत्रे श्यामार्यापरनामके आचार्ये,। नं०। आव०म०। आव० चू० ।

अज्जखउड- पुं० *[आर्यखपुट]*
विद्यासिद्धे आचार्यभेदे, आव०म० । आ०चू०। (** विज्जासिद्ध' शब्देऽस्य वक्तव्यता)

अज्जग- पुं० *[आर्यक]*
पितामहे, वव०१ उ०। नाया०। आव०म०।
'अज्जए पज्जए वा वि बप्पचुल्ल पिउ त्ति य।
माउलो भाइणिज्जे त्ति पुत्तो नत्त पइत्तिय'।१ । दश०७अ०।
'अज्जयपज्जयपिउपज्जयागए य बहुहिरण्णे य सुवण्णे य'। भग०९ श० ३३ उ०।

अज्जग- पुं० *[आद्यक]*
भूतृणे, निसि०११ उ०।

अज्जगंग- पुं० *[आर्यगङ्ग]*
द्वैक्रियनिह्नवमतप्रवर्तके निह्नवाऽऽचार्यभेदे, 'उल्लुकातीरक्षेत्रे महागिरिशिष्यो धनगुप्तो नाम। अस्यापि शिष्य आर्यगङ्गो नामाऽऽचार्यः। विशे०।

अज्जघोस- पुं० *[आर्यघोष]*
पार्श्वनाथस्य द्वितीये गणधरे, ठा० ८ ठा०। कल्प०।

अज्जचंदना- स्त्री० *[आर्यचन्दना]*
भगवतो महावीरस्य प्रथमशिष्यायाम्, । कल्प०। आ०चू०। आव०म०। अंत०।

अज्जजंबु- पुं० *[आर्यजम्बू]*
सुधर्मस्वामिनः शिष्ये, 'अज्जसुहम्मं अंतेवासी अज्जजंबू जाव पज्जुवासति'। अंत०१ वर्ग।

अज्जजक्खिणी- स्त्री० *[आर्ययक्षिणी]*
अरिष्टनेमेः प्रथमशिष्यायाम्, कल्प०।

अज्जजयंत- पुं० *[आर्यजयन्त]*
आर्यवज्रसेनस्य तृतीये शिष्ये, कल्प०।

अज्जजयंती- स्त्री० *[आर्यजयन्ती]*
स्थविरादार्यरथान्निर्गतायां शाखायाम्, 'थेरेहिंतो णं अज्जरहेहिंतो णं इत्थ णं अज्जजयंती साहा णिग्गया'। कल्प०।
आर्यजयन्तान्निर्गतायां शाखायां च। 'थेराओ अज्जजयंताओ अज्जजयंती साहा निग्गया'। कल्प०।

अज्जजीयधर- पुं० *[आर्यजीतधर]*
आरात् सर्वहेयधर्मेभ्योऽर्वाग् यातमार्यम्, जीतमिति *मुच्यते जीतं, स्थितिः, कल्पः, मर्य्यादा, व्यवस्था, इति हि पर्यायाः। मर्यादाकरणं च *मुच्यते। ध्रियते, धारयतीति वा धरः। आर्यजीतस्य धर आर्यजीतधरः।*सम्पन्ने, आर्यश्चासौ जीतधरः ।आर्यगोत्रे शाण्डिल्यशिष्ये जीतधरनामके सूरौ, नं०।

अज्जणक्खत्त- पुं० *[आर्यनक्षत्र]*
आर्यभद्रस्य शिष्ये, कल्प०।

अज्जणाइल- पुं० *[आर्यनागिल]*
आर्यवज्रसेनस्य प्रथमेऽन्ते वासिनि कल्प०।

अज्जणाइला- स्त्री० *[आर्यनागिला]*
स्थविरादार्यनागिलात् निर्गतायां शाखायाम्, 'थेराओ अज्जणाइलाओ अज्जणाइला साहा निग्गया'। कल्प०।

अज्जणाइली- स्त्री० *[आर्यनागिली]*
आर्यवज्रसेनान्निर्गतायां शाखायाम्, 'थेरेहिंतो अज्जवइरसेणिएहिंतो इत्थ णं अज्जणाइली साहा णिग्गया'। कल्प०।

अज्जणित्ता- अव्य० *[अर्जयित्वा]*
उपादायेत्यर्थे, 'एगंतदुक्खं भवमज्जणित्ता, वेदंति दुक्खी तमणंतदुक्खं'। सूय०१ श्रु०५ अ० २ उ०।

अज्जतावस- पुं० *[आर्यतापस]*
आर्यवज्रसेनस्य चतुर्थेऽन्तेवासिनि, कल्प०।

अज्जतावसी- स्त्री० *[आर्यतापसी]*
आर्यतापसन्निःसृतायां शाखायाम् 'थेराओ अज्जतावसाओ अज्जतावसी साहा णिग्गया'। कल्प०।

अज्जत्ता-१ स्त्री० *[अद्यत्ता]*
वर्त्तमानकालतायाम् 'अज्जकालिना अज्जत्तया वा'। कल्प०।

अज्जत्ता-२ स्त्री० *[आर्यता]*
पापकर्मबहिर्भूततायाम् 'जे इमे अज्जताए समणा णिग्गंथा विहरंति'। कल्प०। भग०।
अधुनातनतया वर्त्तमानकालतया। भग०

अज्जथूलभद्द- पुं० *[आर्यस्थूलभद्र]*
आर्य्यसंभूतविजयस्य शिष्ये महागिरिसुहस्तिनोर्गुरौ, कल्प०। आव०।

अज्जदिण्ण- पुं० *[आर्यदत्त]*
पार्श्वनाथस्य प्रथमगणधरे, सम०।
इन्द्रदत्तस्य काश्यपगोत्रस्य शिष्ये च। तस्य शान्तिश्रेणिकः सिंहगिरिश्च। कल्प०।

अज्जद्दय- पुं० *[आर्यार्द्रक]*
आर्यार्द्रकनाम्नि वीरशिष्ये, सूय० २ श्रु० ६ अ०।

अज्जधम्म- पुं० *[आर्यधर्म]*
आर्यमङ्गोः शिष्ये भद्रगुप्तगुरौ, 'वंदामि अज्जधम्मं, ततो वंदेय भद्दगुत्ते य'। नं०।
आर्यसिंहस्य शिष्ये आर्यशाण्डिल्यस्य गुरौ, कल्प०।

अज्जपउम- पुं० *[आर्यपद्म]*
आर्यवज्रस्य शिष्ये द्वितीये, कल्प०।

अज्जपउमा- स्त्री० *[आर्यपद्मा]*
आर्यपद्माद् विनिःसृतायां शाखायाम्, थेरेहिंतो अज्जपउमेहिंतो इत्थ णं अज्जपउमा साहा णिग्गया'। कल्प०।

अज्जपूसगिरि- पुं० *[आर्यपुष्पगिरि]*
आर्यरथस्य शिष्ये, कल्प०।

अज्जपोमिल- पुं० *[आर्यपोमिल]*
आर्यवज्रसेनस्य द्वितीये शिष्ये, कल्प०।

अज्जपोमिला- स्त्री० *[आर्यपोमिला]*
आर्यपोमिलान्निर्गताया शाखायाम्, थेराओ अज्जपोमिलाओ अज्जपोमिला साहा णिग्गया। कल्प०।

अज्जप्पभव- पुं० *[आर्यप्रभव]*
आर्यजम्बूनाम्नः काश्यपगोत्रस्य शिष्ये, कल्प०।

अज्जप्पभिइ- अव्य० *[अद्यप्रभृति]*
इतो वर्त्तमानदिनादारभ्येत्यर्थे, 'नो खलु भंते ! कप्पइ, अज्जप्पभिइ अन्नउत्थियं वा'। उपा० १ अ०।

अज्जफग्गुमित्त- पुं० *[आर्यफल्गुमित्र]*
आर्यपुष्पगिरेः शिष्ये आर्यधनगिरेर्गुरौ, कल्प०।

अज्जम- पुं० *[अर्यमन्]*
अर्यमनामके देवविशेषे, जंबू० ७ वक्ष०। अनु०।
उत्तरफाल्गुनीनक्षत्रस्यार्यमा देवतेति। ज्यो० ६ पाहु०।
अर्यमदेवोपलक्षिते उत्तरफाल्गुनीनक्षत्रे, ज्यो० १५ पाहु०। चंद०। सूर०। गच्छा०।

अज्जमंगु- पुं० *[आर्यमङ्गु]*
आर्यसमुद्रस्य शिष्ये। कल्प०।

अज्जमणग- पुं० *[आर्यमणक]*
श्रीशय्यम्भवसूरिपुत्रे। छहि मासेहिं अहिअं, अज्झयणमिणं तु अज्जमणगेणं। छम्मासा परियाओ, अह कालगओ समाहीए। । दश० ।

अज्जमहागिरि- पुं० *[आर्यमहागिरि]*
आर्यस्थूलभद्रस्य ऐलापत्यसगोत्रे शिष्ये, नं०।
अयञ्च जिनकल्पिकवदुग्रविहारः राजपिण्डोपभोजिन आर्य-सुहस्तिनः स्वगुरुशिष्यादपि सतः विसंभोगमुत्पाद्य पृथग्गच्छं कृत्वा विजहार। तदा प्रभृत्येव गच्छपृथत्त्वमासीत्। नं०।

अज्जरक्ख- पुं० *[आर्यरक्ष]*
आर्यनक्षत्रस्य शिष्ये, 'थेरस्स णं अज्ज नक्खत्तस्स कासवगुत्तस्स अज्जरक्खे थेरे अंतेवासी कासवगोत्ते' अयं रक्षितार्याद् भिन्नोऽभिन्नो वेत्यत्र कल्प*सुबोधिकाटीकाकृतां विप्रतिपत्तयः-'थेरे अज्जरक्ख त्ति' अहो ! बत किरणावली-कारस्य बहुश्रुतप्रसिद्धिभाजोऽप्यनाभोग विलसितम्, यतो येन श्रीतोसलिपुत्राचार्यशिष्याः श्रीवज्र स्वामिपार्श्वेऽधीत साधिक नवपूर्वा नाम्ना च आर्यरक्षितास्ते भिन्नाः, एते च श्रीवज्र-स्वामिभ्यः शिष्य-प्रशिष्यादिगणनया नवमस्थान भाविनो नाम्नाचार्यरक्षा इत्येवम् अनयोरार्यरक्षितार्यरक्षयोः स्फुटं भेदं विस्मृत्याऽऽर्यरक्षस्थाने आर्यरक्षितव्यकिरं लिखितवान्। । कल्प०।

अज्जरक्खिय- पुं० *[आर्यरक्षित]*
सोमदेवद्विजेन रुद्रसोमायां भार्यायामुत्पादिते तोसलिपुत्राचार्य -शिष्ये वज्रस्वामिसमीपेऽधीतसाधिकनवपूर्वे स्थविरभेदे, नं०।

अज्जरक्खियमीस- पुं० *[आर्यरक्षितमिश्र]*
अनुयोगचातुर्विध्यकारके रक्षिताचार्ये, सूय०१ अ०१ उ०।

अज्जरह- पुं० *[आर्यरथ]*
आर्यवज्रस्वामिनस्तृतीये शिष्ये, कल्प०।

अज्जल- पुं० *[आद्यल]*
म्लेच्छभेदे, पन्न०१ पद०।

अज्जव-१ न० *[आर्जव]*
ऋजोः रागद्वेषवत्त्ववर्जितस्य सामायिकवतः कर्म भावो वा आर्जवम्। संवरे, ठा० ५ ठा० १ उ०।
ऋजुभाव आर्जवम्। आव०।
मनोवाक्कायविक्रियाविरहे मायाराहित्ये,। वव०। आचा०। कल्प०। आव०। नाया०।
परस्मिन्निकृतिपरेऽपि मायापरित्यागे, दश० १० अ०।

अज्जव-२ न० *[आर्जव]*
एतत्तृतीयश्रमणधर्मः। ठा०२ ठा०१ उ०।

अज्जव-३ न० *[आर्जव]*

दशमो योगसंग्रहः। सम० ३१ सम०। आव०।

अज्जव-४ न० *[आर्जव]*

चम्पायां कौशिकार्योऽभूदुपाध्यायो महामतिः।
तस्याद्योऽङ्गऋषिः शिष्यो, ग्रन्थिच्छिद् रुद्रकोऽपरः।।१ ।।
उपाध्यायेन दार्वर्थं, द्वावपि प्रेषितौ वने।
दारुभारं गृहीत्वैति, सायमङ्गऋषिर्वनात्।।२।।
रुद्रो रन्त्वा दिवा सायं, स्मृत्वा बहिरधावत।
दध्यौ वीक्ष्य तमायान्तं, गुरुर्निःसारयाम्यमुम्।। ३।।
इतो ज्योतिर्यशा वत्सपालीं नीत्वाऽन्नमात्मनः।
पुत्रस्य पञ्चकस्यार्थे, वलन्ती दारुकाष्ठभृत्।।४।।
दृष्टा तेनाथ तां हत्वाऽऽदाय तद्दारुभारकम्।
शीघ्रं मार्गान्तरेणैत्य, गुरोरग्रे करौ धुनन्।।५।।
आख्यद् वः प्रियशिष्येण, ज्योतिर्यशा व्यनाश्यत।
आगतः सोऽथ गुरुणा, ययौ निस्सारितोऽटवीम्।।६।।
तत्र शुद्ध्या मनोध्यानात्, जातजातिस्मृतिर्व्रतम्।
सोऽवाप केवलं चाथ, महिमानं व्यधुः सुराः।।७।।
देवैः कथितमेतस्याऽभ्याख्यानं प्रददेऽमुना।
रुद्रको हीलितो लोके, दध्यौ सत्यं मया ददे।।८।।
अभ्याख्यानमिति ध्यायन्, सोऽगात्प्रत्येकबुद्धताम्।
उपाध्यायः सपत्नीकः, प्रव्रज्य प्राप केवलम्।।९।।
चत्वारोऽपि ययुः सिद्धिमेवं कर्त्तव्यमार्जवम्।आव०चू०।आव०

अज्जवइर- पुं० *[आर्यवज्र]*

आर्यवज्र आरात्सर्वहेयधर्मेभ्यो यातः। प्राप्तः सर्वैरुपादेयगुणैः इत्यर्थः, स चासौ वज्रश्च। आव०म०।

धनगिरेः सुनन्दायां भार्यायामुत्पादिते पुत्रे आर्यसिंहगिरेः शिष्ये। आव०म०। आव०चू०।

आर्यवज्रः, युगप्रधानः। आर्यवैरः, चैत्यभक्तिद्वारे आचार्यः। आव०, आव०म०।

वात्सल्योदाहरणे आर्यः। दश०

अज्जवइरसेण- पुं० *[आर्यवज्रसेन]*

आर्यवज्रस्य शिष्ये, कल्प०।

अज्जवइरी- स्त्री० *[आर्यवज्री]*

आर्यवज्रान्निःसृतायां शाखायाम्, थेरेहिंतो णं अज्जवइरेहिंतो णं गोयमसगोत्तेहिंतो इत्थ णं अज्जवइरी साहा णिग्गया। कल्प०

अज्जवट्ठाण- न० *[आर्जवस्थान]*

आर्जवं संवरस्तस्य स्थानानि भेदा आर्जवस्थानानि। साध्वार्ज-वादिषु संवरभेदेषु,

पंच अज्जवट्ठाणा पन्नत्ता। तं जहा- साहुअज्जवं साहुमद्दवं साहुलाघवं साहुखंती साहुमोत्ती।

साधु सम्यग्दर्शनपूर्वकत्वेन शोभनमार्जवं मायानिग्रहस्ततः कर्मधारयः, साधोर्वा यतेरार्जवं साध्वार्जवम्। एवं शेषाण्यपि ठा० ५ ठा०१ उ०।

अज्जवप्पहाण- त्रि० *[आर्जवप्रधान]*

मायोदयनिग्रहप्रधाने। उव०।

अज्जवभाव- पुं० *[आर्जवभाव]*

अशठतायाम्, 'मायं च अवभावेणं'। दश० ८ अ०।

अज्जवया- स्त्री० *[आर्जवता]*

मायावर्जनात्मके श्रमणभेदे । उत्त० २९ अ०।

अज्जविय- न० *[आर्जव]*

मायावक्रतापरित्यागात्। आचा०।

अमायित्वे, सूय० २ श्रु० १ अ०।

अज्जवेडय- न० *[आर्यवेटक]*

श्रीगुप्ताद् हारीतसगोत्रात् निःसृतस्य चारणगणस्य षष्ठे कुले, कल्प०।

अज्जसमिय- पुं० *[आर्यसमित]*

आर्यवज्रस्वामिमातुः सुनन्दाया भ्रातरि आर्यसिंहगिरिशिष्ये, कल्प०। आव०म०। आव०चू०।

येन योगप्रभावादचलपुरासन्नब्रह्मद्वीपे पादलेपेन जलोपरि गच्छन्तं तापसं जित्वा तं सानुगं प्रव्राज्य ब्रह्मद्वीपिका शाखा निर्गमिता। कल्प०।

अज्जसमुद्द- पुं० *[आर्यसमुद्र]*

उदधिनामनि आचार्यभेदे, जङ्घाबल परिक्षीणानामुदधिनाम्ना-मार्यसमुद्राणाम् पराक्रमं मरणमभूदिति वृद्धप्रसिद्धिः। आचा०१ श्रु० ८ अ० १ उ०।

अज्जसाम- पुं० *[आर्यश्याम]*

आरात् सर्वहेयधर्मेभ्यो यातः प्राप्तो गुणैरित्यार्यः, स चासौ श्यामश्च आर्यश्यामः।प्रज्ञापनाकृतिकालकाचार्यनामकेआचार्ये प्रज्ञापना*करणप्रयोजनादि तदुपक्रम एवोक्तम्–

'वायगवर-वंसाओ, तेवीसइमेण धीरपुरिसेण।
दुद्धररयेण मुणिणा पुव्वसुयसमिद्धबुद्धीणं'। ३।
'सुयसागरा विएऊण जेण सुयरयणमुत्तमं दिण्णं।
सीसगणस्स भगवओ, तस्स नमो अज्जसामस्स ।४२। पन्न०

अज्जसुहत्थि- पुं० *[आर्यसुहस्तिन्]*

आर्यस्थूलभद्रस्य शिष्ये स्थविरे, आव०४ अ०।

यैरार्यसुहस्तिभिर्दीक्षितो द्रमको मृत्वा सम्प्रति नामा राजाऽभूत्। कल्प०।

योगसंग्रहेऽनिश्रितोपधानदृष्टान्ते । आव०

अज्जसुहम्म- पुं० *[आर्यसुधर्मन्]*
श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य पञ्चमे गणधरे, तत्स्वरूपं चेदम्– कुल्लागसन्निवेशे धम्मिल्लविप्रस्य भार्या भद्दिला, तयोः सुतः चतुर्दशविद्यापात्रम्। पञ्चाशद्वर्षान्ते प्रव्रजितः। त्रिंशद्वर्षाणि वीर सेवा कृता वीरनिर्वाणाद् द्वादशवर्षान्ते जन्मतो द्विनवतिवर्षान्ते च केवलम्। ततोऽष्टौ वर्षाणि केवलित्वं परिपाल्य शतवर्षायुषं जम्बूस्वामिनं स्वपदे संस्थाप्य शिवं गतः। अंत०१ वर्ग। अनुत्त०। सम०

अज्जसेणिय- पुं० *[आर्यसैनिक]*
आर्यशान्तिसैनिकस्य द्वितीये शिष्ये, कल्प०।

अज्जसेणिया- स्त्री० *[आर्यसैनिकी]*
आर्यसैनिकान्निर्गतायां शाखायाम्, 'थेरेहिंतो णं अज्जसेणिए-हिंतो इत्थ णं अज्जसेणिया साहा णिग्गया'। कल्प०।

अज्जा-१ स्त्री० *[आर्या]*
प्रशान्तरूपायां दुर्गायाम्, नाया०८ ।

अज्जा-२ स्त्री० *[आर्या]*
सप्तचतुष्कलगणादिव्यवस्थानिबद्धे मात्राछन्दसि,जंबू०२ वक्ष० आर्यैव संस्कृतेतरभाषासु गाथासंज्ञा। गच्छा०१ अधि०। आर्यारचनं एकविंशतिरूपायां कलायां गण्यते नाया० १ अ०

अज्जा- ३ स्त्री० *[आर्या]*
साध्व्या, गच्छा० ३ अधि०।

अज्जाकप्प- पुं० *[आर्याकल्प]*
आर्याणामेव साध्वीनामेव कल्पते इत्यार्याकल्पः। साध्व्यानीत आहारे, गच्छा०।

अज्जाणंदिल- पुं० *[आर्यनन्दिल]*
आर्यमङ्गोः शिष्ये आर्यनागहस्तिगुरौ, नं०।

अज्जालद्ध- त्रि० *[आर्यालब्ध]*
साध्वीं प्राप्त, गच्छा०२ अधि०।

अज्जावेयव्व- त्रि० *[आज्ञापयितव्य]*
आज्ञाप्ये, समाज्ञापयितव्ये, 'अहं णं अज्जावेयव्वो अन्ने अज्जा-वेयव्वा'। सूय०२ श्रु०२ अ०।

अज्जासंसग्गी- स्त्री० *[आर्यासंसर्गी]*
साध्वीपरिचय, गच्छा०।

अज्जासाढ- पुं० *[आर्याषाढ]*
श्री वीरसिद्धे चतुर्दशाधिकवर्षशतद्वयेऽतिक्रान्ते उत्पन्नाव्यक्त-दृष्टीनां गुरौ, ते चाऽऽर्याषाढाभिधा आचार्याः श्वेताम्ब्यां नगर्यां समवसृत्य तत्रैव हृदयशूलरोगतो मृत्वा सौधर्मे उपपद्य पुनः शरीरमधिष्ठाय कञ्चित्स्वशिष्यमाचार्यं कृत्वा दिवं गता इति। तच्छिष्याश्चाव्यक्तदृष्टयोऽभवन्। आव०। उत्त०। आव०म०।

अज्जिअ- त्रि० *[अर्जित]*
उत्पादिते, उत्त०१ अ०।
उपार्जिते, धम्मज्जियं च ववहारं, बुद्धेहायरियं। उत्त०१ अ०।
सञ्चिते, 'अट्ठविहं कम्ममूलं, बहुएहि भवेहि अज्जियं पावं'। संथा०। निसि०। उत्त०।

अज्जिअलाभ- पुं० *[आर्यिकालाभ]*
आर्यिकाभ्यो लाभ-आर्यिकालाभः। साध्व्यानीतवस्त्रपात्रादौ, । आव०।

अज्जिआ- स्त्री० *[आर्यिका]*
मातुर्मातरि, दश०७ अ०।
पितामह्याम्, बुह०१ उ०। गच्छा०

अज्जुण-१ पुं० *[अर्जुन]*
अर्ज-उनन्। ककुभपर्याये, उव०।
बहुबीजकवृक्षभेदे, पन्न० १ पद०। नाया०। रा०।
तत्पुष्पे, तच्च सुरभि भवति। नाया० १ श्रु० ९ अ०।
तृणविशेषे, पन्न० १ पद०। आचा०।

अज्जुण-२ पुं० *[अर्जुन]*
स्वनामख्याते पाण्डुरस्वर्णे, जंबू० ३ वक्ष०।

अज्जुण- ३ पुं० *[अर्जुन]*
गोशालस्य मङ्खलिपुत्रस्य षष्ठे गौतमपुत्रे दिक्चरे, गोशाल-परावर्तिस्थानम्। भग० १५ श०।
अज्जुणस्स गोयमपुत्तस्स सरीरगं विप्पजहामि। भग०१४ श०।

अज्जुण-४ पुं० *[अर्जुन]*
पाण्डुराजस्य तृतीये आत्मजे, । नाया० १ श्रु० १६ अ० । उपा० २ अ०

अज्जुणग-१ पुं० *[अर्जुनक]*
मालाकारभेदे, अंत०।

अज्जुणग-२ पुं० *[अर्जुनक]*
स्वनामख्याते तस्करभेदे, आचा०१ श्रु० ३ अ०१ उ०।

अज्जुणसुवण्ण- न० *[अर्जुनसुवर्ण]*
श्वेतकाञ्चने, उव०।

अज्झत्त- न० *[अध्यात्म]*
अधि आत्मनि वर्त्तते इत्यध्यात्मम्। चेतसि, । दश० १ अ०। । आचा०। ठा०।
ध्याने, आव० ५ अ०।
सम्यग्धर्मध्यानादिभावनायाम्, सूय० १ श्रु० ८ अ०।
आत्मानमधिकृत्य यद्वर्त्तते तदध्यात्मम्।सुखदुःखादौ, आचा० १ श्रु० १ अ० ७ उ०।
आत्मनीत्यर्थे, उत्त० १ अ०।

अज्झत्त- न० *[अध्यात्मस्थ]*

अध्यात्मं मनस्तस्मिन् तिष्ठत्यध्यात्मस्थम्, इष्टसंयोगानिष्ट संयोग आदिहेतुभ्यो जाते सुखदु:खादौ, उत्त०।

'अज्झत्तं सव्वओ सव्वं, दिस्समाणे पियायए'। उत्त० ६ अ०।

अध्यात्मम्, सुखदु:खादि। आचा०

अज्झत्तओग- पुं० *[अध्यात्मयोग]*

सुप्रणिहितान्त:करणतायाम्, धर्मध्याने च। सूय०१ श्रु०१६अ०

'अज्झत्तओगे गयमाणसस्स' । आचा०१ श्रु०।

अज्झत्तओगसाहणजुत्त- पुं० *[अध्यात्मयोगसाधनयुक्त]*

अध्यात्मं मनस्तस्य योगा व्यापारा धर्मध्यानादयस्तेषां साध-नान्येकाग्रतादीनि तैर्युक्तोऽध्यात्मयोगसाधनयुक्त:। चित्तैकाग्र-ताऽऽदिभाजि, उत्त० २९ अ०।

'निव्विकारे णं जीवे वइगुत्ते अज्झत्तगसाहणजुत्ते यावि भवइ'। उत्त० २९ अ०।

अज्झत्तओगसुद्धादाण- त्रि० *[अध्यात्मयोगशुद्धादान]*

अध्यात्मयोगेन सुप्रणिहितान्त:करणतया धर्मध्यानेन शुद्धमव-दातमादानं चरित्रं यस्य स तथा। शुभचेतसा विशुद्धचारित्रे, 'अज्झत्तओगसुद्धादाणे उवट्ठिए ठिअप्पा संखाए परदत्तभोई भिक्खू ति वच्चे'। सूय०१ श्रु०१६ अ०।

अज्झत्तकिरिया- स्त्री० *[अध्यात्मक्रिया]*

केनापि कथञ्चनाप्यपरिभूतस्य दौर्मनस्यकरणरूपेऽष्टमे क्रिया-स्थाने, ठा०५ ठा०२ उ०।

अज्झत्तज्झाणजुत्त- त्रि० *[अध्यात्मध्यानयुक्त]*

अध्यात्मना शुभमनसा ध्यानं यत्तेन युक्तो य: स तथा। प्रशस्त-ध्यानोपयुक्ते, पण्हा० ५ अ०।

अज्झत्तदंड- पुं० *[अध्यात्मदण्ड]*

शोकाद्यभिभवेऽष्टमक्रियास्थाने, पण्हा० ५ अ०।

अज्झत्तदोस- पुं० *[अध्यात्मदोष]*

कषाये, सूय०।

कोहं च माणं च तहेव मायं, लोभं चउत्थं अज्झत्थदोसा।
एआणि वंता अरहा महेसी, न कुव्वई पाव न कारवेई।।

निदानोच्छेदेन हि निदानिन उच्छेदो भवति इति न्यायात् संसार स्थितेश्च क्रोधादय: कारणमत एतानध्यात्मदोषांश्चतुरोऽपि क्रोधादीन् कषायान् वान्त्वा परित्यज्याऽसौ भगवानर्हंस्तीर्थकृद् जात:। तथा महर्षिश्च। एवं परमार्थतो महर्षित्वं भवति, यद्य-ध्यात्मदोषा न भवन्ति, नान्यथेति। तथा न स्वत: पापं सावद्य-मनुष्ठानं करोति, नाऽप्यन्यै: कारयतीति। सूय० १ श्रु०६ अ०।

अज्झत्तरय- त्रि० *[अध्यात्मरत]*

प्रशस्तध्यानासक्ते, दश०१० अ०।

अज्झत्तवत्तिय- पुं० *[अध्यात्मप्रत्ययिक]*

आत्मनि अधि अध्यात्मम्। तत्र भव आध्यात्मिको दण्डस्तत् प्रत्ययिकम्। अष्टमे क्रियास्थाने, तद्यथा- निर्निमित्तमेव दुर्मना उपहतमन:संकल्पो हृदयेन ह्रियमाणश्चिन्तासागरावगाढ: संतिष्ठते। सूय०२ श्रु० १२ अ०।

अज्झत्तवयण- न० *[अध्यात्मवचन]*

आत्मन्यधि अध्यात्मम्, तच्च तद्वचनम्। हृदयगते वचनभेदे, षोडशवचनानां सप्तममिदम्। आचा०२ श्रु०४ अ०१ उ०।

आत्मन्यधि अध्यात्मं हृदयं तं तत्परिहारेणान्यद् भणिष्यत: तदेव। सहसा पतिते वचने, विशे०। आचा०।

अभिप्रेतमर्थं गोपयितुकामस्य सहसा तस्यैव भणनम्। पण्हा० यदन्यच्चेतसि निधाय विप्रतारकबुद्ध्याऽन्यद् बिभणिषुरपि सहसा यच्चेतसि तदेव ब्रूते तत्। प्रन्न०, आचा०।

अज्झत्तविसीयण- नं० *[अध्यात्मविषीदन]*

संयमकष्टमनुभूय मनसि विषण्णीभवने, सूय०।

अज्झत्तविसुद्ध- त्रि० *[अध्यात्मविशुद्ध]*

सुविशुद्धान्त:करणे, सूय० १ श्रु० ४ अ० २ उ०।

अज्झत्तविसोहिजुत्त- त्रि० *[अध्यात्मविशोधियुक्त]*

विशुद्धभावे,

जा जयमाणस्स भवे, विराहणा सुत्तविहिसमग्गस्स।
सा होइ णिज्जरफला, अज्झत्तविसोहिजुत्तस्स।। उव०।

अज्झत्तवेइ- त्रि० *[अध्यात्मवेदिन्]*

सुखदु:खादे: स्वरूपतोऽवगन्तरि आचा०१ श्रु०१ अ०७ उ०।

अज्झत्तसंवुड- त्रि० *[अध्यात्मसंवृत]*

अध्यात्मं मनस्तेन संवृत:। स्त्रीभोगादत्तमनसि, सूत्रार्थोपयुक्त -निरुद्धमनोयोगे च। 'वइगुत्ते अज्झत्तसंवुडे परिवज्जए सया पावं'। आचा० १ श्रु० ५ अ० ४ उ०। सूय०।

अज्झत्तसम- त्रि० *[अध्यात्मसम]*

अध्यात्मानुरूपे परिणामानुसारिणि, वव०२ उ०।

अज्झत्तसुइ- स्त्री० *[अध्यात्मश्रुति]*

चित्तजयोपायप्रतिपादनशास्त्रे, पण्हा० १ अ०।

अज्झत्तसुद्धि- स्त्री० *[अध्यात्मशुद्धि]*

चेत:शुद्धौ, अध्यात्मशुद्धिरेव फलदा, न बाह्यशुद्धि:,भरतचक्र-वर्तिन: बाह्यकरणस्य रजोहरणादेरभावेऽपि अध्यात्मशुद्धयैव केवलोत्पत्ते:। प्रसन्नचन्द्रस्य च बाह्यकरणवतोऽपि आभ्यन्तर करणविकलस्य सप्तमपृथिवीप्रायोग्यकर्मबन्धात् पश्चाद्वर्तिन्या अध्यात्मशुद्ध्यैव मोक्षगमनात्। आव०चू०१ अ०।

अज्झत्तसोहि- त्रि० *[अध्यात्मशोधि]*

चेत:शुद्धौ, आव०चू० १ अ०।

अज्झत्तिय- त्रि० *[आध्यात्मिक]*
आत्मनि अधिअध्यात्मम्, तत्र भव आध्यात्मिकः। आत्म-विषये, आव०म०। भग०। वि०। नाया०। निसि०।
'अज्झत्तिए चिंतिए' आत्मनि क्रियमाणे, 'परकिरियं अज्झत्तियं संसेइयं णो तं सातिए'। आचा० २ श्रु० १३ अ०।
अध्यात्मनि मनसि भव आध्यात्मिकः। बाह्यनिमित्तानपेक्षे शोकाभिभवे, 'अष्टमं क्रियास्थानमेतत्'। सम०।

अज्झत्तियवीरिय- न० *[आध्यात्मिकवीर्य]*
आत्मन्यधि इति अध्यात्मम्, तत्र भवमाध्यात्मिकम्। आन्तर-शक्तिजनितं सात्त्विकमित्यर्थः। तच्च वीर्यं चेति।
'उज्जमधितिधीरत्तं, सोंडीरत्तं खमा य गंभीरं।
उवओगयोगतव संजमादि य होइ अज्झप्पो' ।१ ।
इत्युक्तेः उद्यमधृत्यादौ, सूय०१ श्रु०८ अ०।

अज्झत्थ- न० *[अध्यात्म]*
अधि आत्मनि वर्तत इत्यध्यात्मम्। सम्यग्धर्मध्यानादिभावना-याम्, सूय०१ श्रु०८ अ०।

अज्झत्थओग- पुं० *[अध्यात्मयोग]*
सुप्रणिहितान्तःकरणतायाम्; धर्मध्याने च। सूय०१ श्रु० १ ६अ० (निरूपणमस्य 'अज्झत्तओग' शब्दे कृतम्)

अज्झत्थओगसाहणजुत्त- पुं० *[अध्यात्मयोगसाधनयुक्त]*
चित्तैकाग्रतादिभाजि, उत्त०२९ अ०।

अज्झत्थओगसुद्धादाण- त्रि० *[अध्यात्मयोगशुद्धादान]*
शुभचेतसा विशुद्धचारित्रे, सूय०१ श्रु०१६ अ०।

अज्झत्थजोगसाहणजुत्त- पुं० *[अध्यात्मयोगसाधनयुक्त]*
चित्तैकाग्रतादिभाजि, उत्त०२९ अ०।

अज्झत्थजोगसुद्धादाण- त्रि० *[अध्यात्मयोगशुद्धादान]*
शुभचेतसा विशुद्धचारित्रे, सूय०१ श्रु०१६ अ०।

अज्झत्थज्झाणजुत्त- त्रि० *[अध्यात्मध्यानयुक्त]*
प्रशस्तध्यानोपयुक्ते, पण्हा०५ अ०।

अज्झत्थदंड- पुं० *[अध्यात्मदण्ड]*
अष्टमे क्रियास्थाने, पण्हा०५ अ०।

अज्झत्थदोस- पुं० *[अध्यात्मदोष]*
कषाये, सूय०१ श्रु०६ अ०।

अज्झत्थरय- त्रि० *[अध्यात्मरत]*
प्रशस्तध्यानासक्ते, दश०१०अ०।

अज्झत्थवत्तिय- पुं० *[अध्यात्मप्रत्ययिक]*
अष्टमे क्रियास्थाने, सूय० २ श्रु०१२ अ०।

अज्झत्थवयण- न० *[अध्यात्मवचन]*
षोडशवचनानां सप्तमे वचने, आचा०२ श्रु०४ अ०१ उ०।

अज्झत्थविसीयण- न० *[अध्यात्मविषीदन]*
संयमकष्टमनुभूय मनसि विषण्णीभवने, । सूय० १ श्रु० ३ अ० ३ उ० ।

अज्झत्थविसुद्ध- त्रि० *[अध्यात्मविशुद्ध]*
सुविशुद्धान्तःकरणे, सूय० १ श्रु० ४ अ०२ उ०।

अज्झत्थविसोहिजुत्त- त्रि० *[अध्यात्मविशोधियुक्त]*
विशुद्धभावे, उव०।

अज्झत्थवेइ- त्रि० *[अध्यात्मवेदिन्]*
सुखदुःखादेः स्वरूपतोऽवगन्तरि, आचा०१ श्रु०१ अ०७ उ०।

अज्झत्थसंवुड- त्रि० *[अध्यात्मसंवृत]*
स्त्रीभोगाऽदत्तमनसि, सूत्रार्थोपयुक्तनिरुद्धमनोयोगे च। आचा०१ श्रु० ५ अ०४ उ०।

अज्झत्थसम- त्रि० *[अध्यात्मसम]*
अध्यात्मानुरूपे परिणामानुसारिणि, वव० २ उ०।

अज्झत्थसुइ- स्त्री० *[अध्यात्मश्रुति]*
चित्तजयोपायप्रतिपादनशास्त्रे, पण्हा० १ अ०।

अज्झत्थसुद्धि- स्त्री० *[अध्यात्मशुद्धि]*
चैतःशुद्धौ, आव०चू० १ अ०।

अज्झत्थसोहि- स्त्री० *[अध्यात्मशोधिन्]*
चेतःशुद्धौ, आव०चू० १ अ०।

अज्झत्थिय- त्रि० *[आध्यात्मिक]*
आत्मविषये, आव०म०।

अज्झत्थियवीरिय- न० *[आध्यात्मिकवीर्य]*
उद्यमधृत्यादौ, सूय०१ श्रु० ८ अ०।

अज्झप्प- न० *[अध्यात्म]*
चेतसि, दश० १ अ०।
ध्याने, आव० ५ अ०।

अज्झप्पओग- पुं० *[अध्यात्मयोग]*
अन्तःकरणशुद्धे धर्मध्याने, सूय०१ श्रु० १६ अ०।

अज्झप्पओगसाहणजुत्त- पुं० *[अध्यात्मयोगसाधनयुक्त]*
शुभचेतसा विशुद्धचारित्रे, सूय०१ श्रु०१६ अ०।

अज्झप्पओगसुद्धादाण- त्रि० *[अध्यात्मयोगशुद्धादान]* शुद्ध-चेतसा विशुद्धान्तःकरणे, सूय० १ श्रु० १६ अ०।

अज्झप्पकिरिया- स्त्री० *[अध्यात्मक्रिया]*
अष्टमे क्रियास्थाने, ठा० ५ ठा० २ उ०।

अज्झप्पजोग- पुं० *[अध्यात्मयोग]*
सुप्रणिहितान्तःकरणतायां धर्मध्याने, सूय० १ श्रु० १६ अ०।

अज्झप्पजोगसाहणजुत्त- पुं० *[अध्यात्मयोगसाधनयुक्त]*
चित्तैकाग्रतादि भाजि, उत्त० २९ अ०।

अज्झप्पजोगसुद्धादाण- त्रि० *[अध्यात्मयोगशुद्धादान]*
शुभभावेन विशुद्धचारित्रे, सूय०१ श्रु०१६ अ०।

अज्झप्पज्झाणजुत्त- त्रि० *[अध्यात्मध्यानयुक्त]*
प्रशस्तध्यानोपयुक्ते, पण्हा० ५ अ०।

अज्झप्पदंड- पुं० *[अध्यात्मदण्ड]*
शोकाद्यभिभवरूपे अष्टमे क्रियास्थाने, पण्हा० ५ अ०।

अज्झप्पदोस- पुं० *[अध्यात्मदोष]*
कषाये, सूय०१ श्रु०६ अ०।

अज्झप्परय- त्रि० *[अध्यात्मरत]*
प्रशस्तध्यानासक्ते, दश०१० अ०।

अज्झप्पवत्तिय- पुं० *[अध्यात्मप्रत्ययिक]*
अष्टमे क्रियास्थाने सूय० २ श्रु०२ अ०।

अज्झप्पवयण- न० *[अध्यात्मवचन]*
हृदयगते वचनभेदे, षोडशवचनानां सप्तममिदम्। आचा०२ श्रु०४ अ०१ उ०।

अज्झप्पविसीयण-न० *[अध्यात्मविषीदन]*
संयमकष्टमनुभूय मनसि विषण्णीभवने, । सूय० १ श्रु० ३ अ० ३ उ० ।

अज्झप्पविसुद्ध- त्रि० *[अध्यात्मविशुद्ध]*
सुविशुद्धान्तःकरणे, सूय०१ श्रु०५ अ०१ उ०।

अज्झप्पविसोहिजुत्त- त्रि० *[अध्यात्मविशोधियुक्त]*
विशुद्धभावे, ओह०।

अज्झप्पवेइ- त्रि० *[अध्यात्मवेदिन्]*
सुखदुःखादेः स्वरूपतोऽवगन्तरि, । आचा० १ श्रु० १ अ० ७ उ०।

अज्झप्पसंवुड- त्रि० *[अध्यात्मसंवृत्त]*
स्त्रीभोगादत्तमनसि, सूत्रार्थोपयुक्तनिरुद्धमनोयोगे च। आचा० १ श्रु० ५ अ०४ उ०।

अज्झप्पसम- त्रि० *[अध्यात्मसम]*
अध्यात्मानुरूपे परिणामानुसारिणि, वव०२ उ०।

अज्झप्पसुइ- त्रि० *[अध्यात्मश्रुति]*
चित्तजयोपायप्रतिपादनशास्त्रे, पण्हा० १ अ०।

अज्झप्पसुद्धि- स्त्री० *[अध्यात्मशुद्धि]*
चेतःशुद्धौ, आव०चू०१ अ०।

अज्झप्पसोहि- त्रि० *[अध्यात्मशोधि]*
भावशुद्धौ, आव०चू०१ अ०।

अज्झप्पिय- त्रि० *[आध्यात्मिक]*
आत्मनि क्रियमाणे आन्तरोपायसाध्ये सुखदुःखादौ, आचा०२ श्रु०१३ अ०।

अज्झप्पियवीरिय- न० *[आध्यात्मिकवीर्य]*
उद्यमधृत्यादौ, सूय० १ श्रु० ८ अ०।

अज्झयण-१ न० *[अध्ययन]*
अधीयते ज्ञायन्ते एभिरित्यध्ययनानि।नामसु, 'ता कधं देवताणं अज्झयणं आहिताति वएज्जा'। चंद० १ ,पाहु०। सूर० १ ,पाहु०।
अधीयते विनेयादिक्रमेण गुरुसमीप इत्यध्ययनम्। विशिष्टार्थ-ध्वनिसंदर्भरूपे श्रुतभेदे, जीवा०१ प्रति०।
'अज्झयणं पिय तिविहं, सुत्ते अत्थे य तदुभए चेव'। विशे०।
अधीयत इत्यध्ययनम्। पठ्यमाने, आव०४ अ०।

अज्झयण-२ न० *[अध्ययन]*
धर्मप्रज्ञप्तौ, दश०४ अ०।

अज्झयणकप्प- पुं० *[अध्ययनकल्प]*
योग्यताऽनुसारेण वाचनादानसामाचार्याम्, पंच० भा०।

अज्झयणगुणिउत्त- त्रि० *[अध्ययनगुणनियुक्त]*
प्रक्रान्त शास्त्रनिष्यन्दभूते प्रक्रान्ताध्ययनाभिहितगुणसमन्विते, दश० ९ अ० ४ उ०।

अज्झयणगुणि- त्रि० *[अध्ययनगुणिन्]*
प्रक्रान्ताऽध्ययनोक्तगुणवति दश० १० अ०।

अज्झयणछक्क- न० *[अध्ययनषट्क]*
आवश्यकनामश्रुते, तस्य सामायिकादि षडध्ययनकलापा त्मकत्वात्। विशे०।

अज्झयणछक्कवग्ग- पुं० *[अध्ययनषट्कवर्ग]*
आवश्यके,षडध्ययनकलापात्मकत्वात्तस्य।विशे०। अनुओ०।

अज्झवसाण-१ न० *[अध्यवसान]*
अतिहर्षविषादाभ्यामधिकमवसानंचिन्तनमध्यवसानम्।विशे० रागस्नेहभयात्मकेऽध्यवसाये, ठा०७ ठा०।
रागभयस्नेहभेदात् त्रिविधमध्यवसानम्। अन्तःकरणप्रवृत्तौ, सूय०२ श्रु०२ अ०।
मानस्याऽपरिणतौ, नाया०१ श्रु०१ अ०। उत्त०।
मणसंकप्पेत्ति वा अज्झवसाणंति वा एगट्ठा। निसि०१ उ०।

अज्झवसाण-२ न० *[अध्यवसान]*
प्रकर्षतोऽपि प्रयत्नभेदे। अनुओ०। विशे०। उव०।

अज्झवसाण- ३ न० *[अध्यवसान]*
अन्तःकरणे, आव०म०। उपा०। पन्न०। आव०।

अज्झवसाणजोगणिव्वत्तिय- त्रि० *[अध्यवसानयोगनिर्वर्तित]*
अध्यवसानं जीवपरिणामः, योगश्च मनःप्रभृति-व्यापारस्ताभ्यां निर्वर्तितो यः स तथा। परिणामेन मनोयोगादिनां चासाधिते, भग०२५ श०८ उ०।

अज्झवसाणणिव्वत्तिय- त्रि० *[अध्यवसाननिर्वर्तित]*
मनःपरिणति-साध्ये, अध्यवसाननिर्वर्तितेन उत्प्लोतव्यं मये-त्येवंरूपाध्यवसायनिर्वर्तितेन। भग० २५ श० ८ उ०।

अज्झवसाणावरणिज्ज- न० *[अध्यवसानावरणीय]*
अध्यवसानस्याऽऽवरणरूपे कर्मभेदे, भग०९ श० ३१ उ०।

अज्झवसाय- पुं० *[अध्यवसाय]*
संकल्पे, आव० ३ अ०।
सूक्ष्मेषु आत्मनः परिणामविशेषेषु, आचा०१ श्रु०१ अ०२ उ०।
अनुभागबन्धस्थाने,'अनुभागबंधठाणं, अज्झवसाया व एगट्ठा' । पंच०चू०।

अज्झवसिय- न० *[अध्यवसित]*
अध्यवसाये, अनुओ०।

अज्झहिय- न० *[आत्महित]*
आत्मनां हितमात्महितम्। स्वहिते, पण्हा०१ अ०।

अज्झाय- पुं० *[अध्याय]*
अध्ययने, आव०४ अ०। ठा०।

अज्झारुह- पुं० *[अध्यारुह]*
उपर्युपर्यध्यारोहन्तीति अध्यारुहाः। वृक्षोपरिजातेषु वृक्षाभि-धानेषु कामवृक्षाभिधानेषु वा वनस्पतिषु, सूय०।
ते च वल्लीवृक्षाभिधानां इति वृक्षाणां शाखाप्ररोहे च। सूय०२ श्रु० ३ अ०। पन्न०। आचा०।

अज्झारोवण- न० *[अध्यारोपण]*
पर्यनुयोजने, विशे०।

अज्झारोह- पुं० *[अध्यारोह]*
वृक्षाणां शाखाप्ररोहे, सूय० २ श्रु० ३ अ०।

अज्झावय- पुं० *[अध्यापक]*
उपाध्याये च, 'अज्झावयाणं पडिकूलभासी'। उत्त०१२ अ०। आव०म०। आव०चू०।

अज्झावसत- त्रि० *[अध्यावसत्]*
मध्ये वर्त्तमाने, गृहमध्यावसतः-गृहे वर्तमानस्य। उपा०१ अ०

अज्झावसित्ता- अव्य० *[अध्युष्य]*
मध्ये वर्तयित्वेत्यर्थे, 'पंचतित्थगरा कुमारवासमज्झावसित्ता'। ठा०५ ठा० ३ उ०।

अज्झासणा- स्त्री० *[अध्यासना]*
सहने, उत्त०२ अ०।
** परीषहाणामध्यासहना 'परीसह' शब्दे द्रष्टव्या

अज्झाहार- पुं० *[अध्याहार]*
अध्यारुह्यते ज्ञानयाऽनुसन्धीयते। व्याख्याऽङ्गमेषः। आचा०१ श्रु०१ अ०४ उ०।

अज्झीण-१ न० *[अक्षीण]*
अर्थिभ्योऽनवरतं दीयमानमपि वर्द्धत एव, न तु क्षीयत इत्य-क्षीणम्।अथवा व्यवच्छित्तिनयमतेन सर्वदैव व्यवच्छेदादली-कवदक्षीणम्। विशे०। आव०म०।
यद्दीयमानं न क्षीयते स्म तद् अक्षीणम्। ठा० ६।

अज्झीण-२ न० *[अक्षीण]*
सामायिकचतुर्विंशतिस्तवाऽऽत्मक अध्ययने, अनुओ०।

अज्झीणज्झंझय- त्रि० *[अक्षीणझञ्झाक]*
अक्षीणकलहे, आव० ४ अ०।

अज्झुववण्ण-१ त्रि० *[अध्युपपन्न]*
अधिकमित्यर्थमुपपन्नः, तच्चित्तस्तदात्मकः। विषयपरिभोगा-यतजीविते, आचा०१ श्रु०१ अ० ७ उ०। ठा०। भग०।

अज्झुववण्ण-२ त्रि० *[अध्युपपन्न]*
अधिकं तदेकाग्रतां गते, नाया०२ अ०। वि०। भग०।

अज्झुववण्ण- ३ त्रि० *[अध्युपपन्न]*
जातानुरागे, वव०२ उ०।

अज्झुववण्ण-४ त्रि० *[अध्युपपन्न]*
मूर्च्छिते, आचा०२ श्रु०१ अ०८ उ०।
गृद्धे, सूय०२ श्रु०६ अ०।
'मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झुववण्णे य' इति एकार्थाः। विशे०।
'अज्झोववण्णा कामेहिं, चोइज्जंता गया गिहं'। अध्युपपन्नाः कामगतिचित्ताः। सूय० १ श्रु० ३ अ० २ उ०।
अज्झोववण्णा कामेहिं मुच्छिया'। अध्युपपन्ना गृद्धाः। सूय०१ श्रु०२ अ० ३ उ०।

अज्झुववण्ण-५ त्रि० *[अध्युपपन्न]*
पौनः पुन्येनाभिलषमाणे, सूय० १ श्रु० १० अ०।

अज्झुववण्ण-६त्रि० *[अध्युपपन्न]*
आधिक्येन भोगेषु लब्धे, सूय० २ श्रु० १ अ०। ठा०।

अज्झुसिर- त्रि० *[अशुषिर]*
श्लक्ष्णशुषिररहिते, रा०।
कुशवनतृणादौ, संस्तारकभेदे च। निसि०२ उ०।

अज्झुसिरतण- न० *[अशुषिरतृण]*
दर्भादौ, शुषिररहिते तृणे च। जीत०।

अज्झोयरय- पुं० *[अध्यवपूरक]*
स्वार्थमूलाद् ग्रहणे कृते साध्वाद्यर्थमधिकतरकणप्रक्षेपणेन भक्तादौ संपादिते सति, तत्र सम्भवति षोडशे उद्गमदोषे, भग० ९ श० ३३ उ०।
सट्ठाएण मूलग्गहणे, अज्झोयर होइ पक्खेवो। ठा० ९ ठा०। दश०। आचा०।

अज्झोववज्जणा- स्त्री० *[अध्युपपादना]*
क्वचिदिन्द्रियार्थेऽध्युपपत्तौ, अभिष्वङ्गे च। 'तिविहा अज्झोव-वज्जणा- जाणू अजाणू वितिगिच्छा' ।तत्र जानतो विषयजन्यम् अर्थं या तत्राध्युपपत्तिः, सा जाणू। या त्वजानतः, सा अजाणू या तु संशयवतः, सा विचिकित्सा। ठा० ३ ठा०४ उ०।

अज्झोववण्ण- त्रि० *[अध्युपपन्न]*
विषयपरिभोगायतजीविते, आचा०।

अज्झोववाय- पुं० *[अध्युपपात]*
ग्रहणैकाग्रचित्ततायाम्,परस्स अज्झोववायलोभजणाइं पात्राणि परस्यान्यस्य अध्युपपाते च ग्रहणैकाग्रचित्ततां लोभं मूर्च्छां जनयन्ति यानि तानि अध्युपपातलोभजननानि।पण्हा०५ अ०

अट्ट-१ पुं० *[अट्ट]*
अट्टाणि वा अट्टालयाणि वा। आचा० २ श्रु० ११ अ०।
अट्यतेऽतिक्रम्यतेऽनेनेत्यट्टः। आकाशे, भग०२० श० २उ०।

अट्ट-२ त्रि० *[आर्त]*
अर्तिः शारीरमानसी पीडा, तत्र भव आर्त्तः। आचा० १ श्रु० २ अ० ५ उ०।
पीडिते, सूय० १ श्रु० १० अ०।
दुःखिते, आचा० १ श्रु० ४ अ० २ उ०।
मोहोदयेन आर्त्ते, आचा० १ श्रु० ६ अ० १ उ०।
शरीरतो दुःखिते, उव०।
क्लिष्टे, आव०४ अ०।
मोहोदयादगणितकार्याऽकार्यविवेके च। आचा० १ श्रु० ६ अ० १ उ०
अस्य निक्षेपः- अट्टे लोए परिजुण्णे दुस्संबोहे अविजाणए। आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

अट्ट-३ त्रि० *[आर्त]*
ऋतस्य पीडितस्येदं वचनमिति कृत्वा षोडशे गौणालीके, पण्हा० २ अ० ।

अट्ट-४ त्रि० *[आर्त]*
इष्टविषयसंयोगाभिलाषे, पण्हा० ४ अ०।

अट्ट-५ त्रि० *[आर्त]*
एतदात्मके शोकाक्रन्दविलेपनादिलक्षणे वा ध्यानभेदे, आव० ४ अ०। नाया०।

अट्टक- पुं० *[आटमो]*
कुट्टितलेपरूतरूपे पात्रछिद्रपूरके द्रव्ये, बुह० १ उ०।

अट्टज्झाण- न० *[आर्तध्यान]*
ऋतं दुःखम्। उक्तं हि-ऋतशब्दो दुःखपर्यायवाच्याश्रीयते। ऋते भवमार्त्तम्, उत्त० ३० अ०।
ऋतं दुःखं, तस्य निमित्तं, तत्र वा भवम्। ऋते वा पीडिते भवमार्त्तम्। ठा० ४ ठा० १ उ०। आव०।
तच्च तद् ध्यानं च। आर्त्तभावं गत आर्त्तः, आर्त्तस्य वा ध्यानम् आर्त्तध्यानम्। आव०चू० ४ अ०।
मनोज्ञामनोज्ञवस्तुवियोगसंयोगादि निबन्धनचित्तविप्लवलक्षणे ध्यानभेदे, सम० १ सम०।
राज्योपभोगशयनासनवाहनेषु, गन्धमाल्यमणिरत्नविभूषणेषु इच्छालाषमतिमात्रमुपैति मोहाद् ध्यानं तदार्त्तमिति संप्रवदन्ति तज्ज्ञाः। दश०१ अ०।
भवकारणमट्टरुद्दाइ। आव०४ अ०।

अट्टज्झाणोवगय- त्रि० *[आर्त्तध्यानोपगत]*
अपगतसद्विवेकतया धर्मध्यानदुर्वर्तिनि आर्त्तध्यानध्यायिनि, अट्टज्झाणोवगए, भूमिगयदिट्ठिए ज्झियाइ। सूय०२ श्र०२ अ०

अट्टट्टहास- पुं० *[अट्टट्टहास]*
उच्चैर्हसनरूपे हासविशेषे, उपा० २ अ०।
भीमं अट्टट्टहासं मुयंतो बीहावेइ। आव०म०। आव०

अट्टण-१ न० *[अट्टन]*
स्वनामख्याते मुल्ले, पुं०। उत्त०४ अ०।

अट्टण-२ न० *[अटन]*
व्यायामे, उव०।

अट्टणसाला- स्त्री० *[अट्टनशाला]*
व्यायामशालायाम्, नाया०।

अट्टणियट्टियचित्त- त्रि० *[आर्त्तनिवर्तितचित्त]*
आर्त्तं निवर्तितं चित्तं यैस्त आर्त्त-निवर्त्तित-चित्ताः।आर्ताद्वा निवर्तितं चित्तं यैस्ते आर्त्तनिवर्त्तितचित्ताः। क्लिष्टाध्यवसायिषु, । उव०।
अट्टणियट्टियचित्ता जह जीवा दुक्खसागर मुवेंति । भग० २ श० १ उ०।

अट्टणियट्टियचित्त- त्रि०।
क्लिष्टपरिणामे, आर्त्तेन नितरामर्दितमनुगतं चित्तं येषां ते। उव०

अट्टतर- न० *[आर्त्ततर]*
अतिशयिते आर्त्तध्याने, 'पज्जिज्जमाणाऽट्टतरं रसंति' सूय०१ श्रु०५ अ०१ उ०।

अट्टदुहट्ट- त्रि० *[आर्त्तदुर्घट]*
आर्त्तनाम्नो ध्यानविशेषस्य दुस्थगे, उपा०२ अ०।

अट्टदुहट्ट- त्रि० *[आर्त्तदुःखार्त्त]*
आर्तेन दुःखपीडिते, उपा० २ अ०।
आर्तश्चाऽसौ दुःखार्तः। मनसा देहेन च दुःखिते, विशे०।

अट्टदुहट्टवसट्ट- त्रि० *[आर्तदुर्घटवशार्त]*
आर्त्तस्यध्यानविशेषस्य दुर्घटो दुःस्थगो दुर्निरोधो वशः पारतन्त्र्यं तेनार्त्तः पीडित आर्त्तदुर्घटवशार्त्तः ।असमाधिप्राप्ते, नाया० ८ अ०

अट्टदुहट्टवसट्ट- त्रि० *[आर्त्तदुःखार्तवशार्त्त]*
आर्त्तेन दुःखार्त्त आर्त्तदुःखाऽऽर्तः, तथा वशेन च विषयपारतन्त्र्येण ऋतः परिगतो वशार्त्तः। क्लिष्टाध्यवसायेन विषय-यन्त्रणया च दुःखिते, उपा०२ अ०।
आर्त्तो मनसा दुःखितः, दुःखार्त्तो देहेन, वशार्त्तस्तु इन्द्रियवशेन पीडितः। ततः कर्मधारयः। विपा० १ श्रु० १ अ०।
मनसा, देहेनेन्द्रियवशेन च पीडिते, जहा णं तुणं अट्टदुहट्ट-वसट्टे अकाले चेव जीवियाओ ववरोविइज्जइ'। उपा० २ अ०।

अट्टदुहट्टियचित्त- त्रि० *[आर्त्तदुःखार्दितचित्त]*
आर्त्तेन दुःखार्दितं चित्तं येषां ते तथा। क्लिष्टाध्यवसायतो दुःखितमनस्केषु, उव०।

अट्टदुहट्टोवगय- त्रि० *[आर्तदुर्घटोपगत]*
आर्त्तमार्त्तध्यानं, दुर्घटं दुःस्थगनीयं दुर्वार्यमित्यर्थः, उपगतः प्राप्तो यः स तथा ।दुर्निवार्याऽऽर्त्तध्यानवति, विपा०१ श्रु०२ अ०

अट्टमइय- पुं० *[आर्त्तमतिक]*
आर्त्त आर्त्तध्याने मतिर्येषां ते आर्त्तमतिकाः। आर्त्तध्यानोप-युक्ते, आतु०।

अट्टवस- पुं० *[आर्त्तवश]*
आर्त्तध्यानवश्यतायाम्, नाया० १ श्रु०१ अ०

अट्टवसट्टदुहट्ट- त्रि० *[आर्त्तवशार्त्तदुःखार्त्त]*
आर्तवशमार्तध्यानवश्यतामृतो गतो, दुःखार्त्तश्च यः स तथा। आर्त्तध्यानविवशीभूतदुःखिते, 'अट्टवसट्टदुहट्टे काले मासे कालं किच्चा'। नाया० १ श्रु० १ अ०।

अट्टवसट्टोवगय- त्रि० *[आर्त्तवशार्त्तोपगत]*
आर्तवशार्त्तश्च स उपगतश्चेति ।आर्त्तध्यानसामर्थ्येन आर्त्ते, । आव० ।

अट्टस्सर- त्रि० *[आर्त्तस्वर]*
दुःखेन शब्दायमाने, 'अट्टस्सरे ते कलुणं रसंते'। सूय०१ श्रु०५ अ०१ उ०।

अट्टहास- पुं० *[अट्टहास]*
अट्टहासभीसणो, अट्टट्टहासम्। आव०४ अ०।

अट्टालग- पुं०न० *[अट्टालक]*
प्राकारोपरिवर्त्याश्रय विशेषे, पण्हा०१ अ०। सम०। जीवा०। नाया०। निसि० ।भग०। पन्न०। आचा०। रा०। अनुओ०।
प्राकारकोष्ठकोपरिवर्त्तिनि मन्दिरे, । उत्त०९ अ०।

अट्टि- स्त्री० *[आर्त्ति]*
शरीरमानस्यां पीडायाम् आचा०१ श्रु०२ अ० ५ उ०।

अट्टियचित्त- त्रि० *[आर्त्तितचित्त]*
आर्त्तिना आर्त्ताद् वा ध्यानविशेषादाकुलं चित्तं येषां ते आर्त्ति-तचित्ताः। शोकादिपीडिते, अट्टा अट्टियचित्ता। उपा०२ अ०।

अट्ठ- पुं० *[अर्थ]*
प्रयोजने, निसि०१ उ०। कल्प०। सूय०। उत्त०। आचा०। ठा०। नाया०। आव०।
अम्हं अप्पणो अट्ठाइं चेइयाइं भवंति। आचा०२श्रु०२ अ०२उ०
प्रयोजन एव ठः, यदा तु धनमुच्यते तदा ठो न स्यात्। अत्थो धनम्। आर्षे तु भवति- अट्ठावयं न सिक्खिज्जा, वेहाइयं च नो वए, इत्यत्र अर्थ्यत इत्यर्थो धनधान्यहिरण्यादिकं इति व्याख्यानात्। सूय०१ श्रु० ३ अ०२ उ०।
भाविप्रयोजने, अट्ठं वा हेउं वा समणस्स उ विरहिए, वव० २उ०
धर्मविषयेऽर्थित्वे, उत्त० ३ अ०।
कार्ये०, ठा०५ ठा०२ उ०।
मोक्षे, तत्कारणभूते संयमे च। अट्ठे परिहायती बहु, अहिगरणं न करेज्ज पंडिए। सूय०१ श्रु०२ अ०१ उ०।
निवृत्तौ, नाया०१ अ०।
अभिधेये (वाच्ये), सूय०१ श्रु०६ अ०। ठा०।
'से नूणं कामदेवा ! अट्ठे समट्ठे ? हंता ! अट्ठि' अस्त्येषोऽर्थ इत्यर्थः। अथवा मयोदितं वस्तु समर्थः संगतः। उपा०२ अ०।
'छव्विहे अट्ठे- पन्नत्ते। तं जहा- संसयअट्ठे, वुग्गहअट्ठे, अणुजोगी, अणुसोमे, तहणाणे, अतहणाणे'। ठा०६ ठा०।
अर्थ्यते गम्यत इत्यर्थः। हेये उपादेये वा वस्तुनि, उभयस्यापि अर्थ्यमानत्वात्। उत्त०१ अ०। आव०चू०। निसि०।
विषयभोगादिके। आचा०१ श्रु० ३ अ० ३ उ०। सूय०।

अट्ठ- त्रि० *[अष्टन्]*
सङ्ख्या-भेदे, तत्संख्यान्विते च। पन्न०।

अट्ठंगणिमित्त- न० *[अष्टाङ्गनिमित्त]*
भौमम् १ , उत्पातम् १ , स्वप्नः ३, आन्तरिक्षम् ४, आङ्गं ५, स्वरं ६, लक्षणं ७, व्यञ्जनम् ८, इत्येवं नवमपूर्वतृतीयाचार-वस्तुनिर्गते सुखदुःखादिसूचके निमित्ते, सूय०।
अट्ठनिमित्तंगाइं, दिव्वुप्पातंतलिक्ख भोमं च। अंगं सरलक्खण वंजणं च तिविहं पुणेक्केक्कं ।१ । भग० ११ श० ११ उ०।
संवच्छरं सुविणं लक्खणं च, निमित्त देहं च उपाइयं च।
अट्ठंगमेयं बहवे अहित्ता,लोगंसि जाणंति अणागताइं ।९।
सूय० १ श्रु० १२ अ०।

अट्ठंगतिलय- पुं० *[अष्टाङ्गतिलक]*
अष्टस्वङ्गेषु पुण्ड्रेषु, भग० ११ श० ११ उ०।

अट्ठंगमहाणिमित्त- न० *[अष्टाङ्गमहानिमित्त]*
अष्टाङ्गानि यत्र, एवंविधं यद् महानिमित्तं शास्त्रम्। आङ्गस्वप्ने-त्याद्यष्टावयवे भाविपदार्थसूचके स्वप्नादिफलव्युत्पादके ग्रन्थे, कल्प०।

अट्ठंगमहाणिमित्तसुत्तत्थधारय- त्रि० *[अष्टाङ्गमहानिमित्तसूत्रार्थ-धारक]* अष्टाङ्गमष्टाऽवयवं यत् महानिमित्तं परोक्षार्थ-प्रतिपत्तिकारणव्युत्पादकं महाशास्त्रम्, तस्य यौ सूत्रार्थौ तौ धारयन्ति ये ते तथा। अधीताऽष्टभेदमहानिमित्तशास्त्र सूत्रा-ऽभिधेयेषु,। नाया० १ अ०। भग० ।

अट्ठकण्णिय- त्रि० *[अष्टकर्णिक]*
अष्टकोणविभागे, ठा० ८ ठा०।

अट्ठकम्मगंठीविमोयग- त्रि० *[अष्टकर्मग्रन्थिविमोचक]*
अष्टकर्मरूपो यो ग्रन्थिस्तस्य विमोचकः। ज्ञानावरणीयादि-कर्मणा क्षपके, पण्हा० ५ अ०।

अट्ठकम्मतंतुघणबंधण- न० *[अष्टकर्मतन्तुघनबन्धन]*
अष्टकर्मलक्षणैस्तन्तुभिर्धने बन्धने, 'वेढंता कोसिकारकीडो व्व अप्पगं अट्ठकम्मतंतुबंधणेणं'। पण्हा० ३ अ०

अट्ठकर- पुं० *[अर्थकर]*
अर्थान् हिताहितप्राप्तिपरिहारादीन् राजादीनां दिग्यात्रादौ तथो-पदेशतः करोतीति अर्थकरः। मन्त्रिणि, नैमित्तिके च। ठा०४ ठा० ३ उ०।

अट्ठग– *[अष्टकः]*
चतुर्विंशत्यधिकशतसत्कभागाष्टकप्रमाणम्। सूर्य० २३८।

अट्ठगुणोववेय- न० *[अष्टगुणोपपेत]*
अष्टभिर्गुणैरुपपेतमष्टगुणोपपेतम्। पूर्णादिगुणाष्टकयुते ज्ञेये। ते चाऽष्टावमी गुणाः- पूर्णं रक्तमलंकृतं व्यक्तमविपुष्टं मधुरं समं सललितं च। तथा चोक्तम्- पुण्णं रत्तं च अलंकियं च वत्तं तहेव अविपुट्ठं। महुरं समं सललियं, अट्ठगुणा होंति गेयस्स' । जीवा० ३ प्रति०

अट्ठचक्कवालपइट्ठाण- त्रि० *[अष्टचक्रवालप्रतिष्ठान]*
अष्टचक्रप्रतिष्ठिते, 'एगमेगेणं महाणिही अट्ठचक्कवालपइट्ठाणे अट्ठ अट्ठजोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं'। जीवा० ३ प्रति०।

अट्ठजाय- न० *[अष्टजात]*
जातशब्दो भेदवाचकः। अर्थभेदे, निसि० १ उ०।
धनार्थिनि, वव०२ उ०।

अट्ठजुत्त- त्रि० *[अर्थयुक्त]*
अर्थते—गम्यत इत्यर्थस्तेन युक्तमन्वितम्। उत्त० अर्थेन हेयोपादेयात्मकेन युक्तानि अन्वितानि अर्थयुक्तानि। हेयो पादेयाभिधायकेषु आगमवचनादिषु, अर्थो मोक्षस्तत्र युक्तानि अन्वितानि अर्थयुक्तानि। मोक्षे उपादेयतया सङ्गतेषु वचनादिषु 'अट्ठजुत्ताणि सिक्खेज्जा णिरट्ठाणि उ वज्जए'। उत्त० १ अ०।

अट्ठट्ठमिका- स्त्री० *[अष्टाष्टमिका]*
अष्टावष्टमानि दिनानि यस्यां साऽष्टाऽष्टमिका। यस्यां हि अष्टौ दिनाष्टकानि भवन्ति तस्यामष्टौ अष्टमानि भवन्त्येवेति। चतुः षष्टिदिननिष्पन्नायां भिक्षुप्रतिमायाम्, सम०।
अट्ठट्ठमियाणं भिक्खूपडिमा चउसट्ठीए राइंदिएहिं दोहि य अट्ठासीएहिं, भिक्खासएहिं अहासुत्तं जाव भवइ।
भिक्षुप्रतिमाऽभिग्रहविशेषः।अष्टावष्टकानि यतोऽसौभवन्ति यतश्चतुषष्ट्या रात्रिंदिवैः सा पालिता भवति, तथा प्रथमेऽष्टके प्रतिदिनमेकैका भिक्षा, एका दत्तिर्भोजनस्य पानकस्य च, एवं द्वितीये द्वे द्वे यावदष्टमे अष्टावष्टाविति संकलनया द्वे शते भिक्षाणामष्टाशीत्यधिके भवतः। अत उक्तं द्वाभ्यां चेत्यादि यावत्करणात्। अहाकप्पं अहामग्गं फासिया पालिया सोहिया तीरिया किित्तिया सम्मं आणाए आराहिया वि भवइ, इति दृश्यम्। सम० ६४ सम०। ठा०।
अष्टाऽष्टमिकायामष्टक आदिरष्टक उत्तरमष्टको गच्छः। तत्र अष्टलक्षणो गच्छ उत्तरेणाऽष्टकेन युतः क्रियते, जाता चतु-षष्टिः सा उत्तरहीना आदियुता क्रियते, तथापि सैव चतुषष्टिः। एतदष्टमेऽष्टके भिक्षापरिमाणम्, एतदादिनाऽ-ष्टकेन युतं क्रियते, जाता द्वासप्ततिः । सा गच्छाऽर्द्धेन चतुष्केण गुण्यते, जाते द्वेशते अष्टाशीत्यधिके। वव० ९ उ०। अंत०।

अट्ठट्ठाण- न० *[अष्टस्थानक]*
प्रज्ञापनाया अष्टमे स्थाने, 'एवं जहा अट्ठट्ठाणे'। ठा०१ ठा०।

अट्ठणाम- न० *[अष्टनामन्]*
अष्टविधपदार्थनामनि, 'से किं तं अट्ठणामे ? अट्ठणामे अट्ठविहा वयणविभत्ती'। अनुओ०।

अट्ठदंसिण- त्रि० *[अर्थदर्शिन्]*
यथावस्थितमर्थं यथा गुरुसकाशादवधारितमर्थं प्रतिपाद्यं द्रष्टुं शीलमस्य स भवत्यर्थदर्शी। सत्पदार्थवेत्तरि, समालवेज्जा पडिपुन्नभासी, निसामिया सामिय अट्ठदंसी।सूय०१श्रु०१ ४अ०

अट्ठदुग्ग- त्रि० *[अर्थदुर्ग]*
अर्थतः परमार्थतो दुर्गं विषमम्। सूय०१ श्रु०१० अ०।
परमार्थतो विचार्यमाणे गहने दुर्विज्ञेये, सूय०१ श्रु०५अ०१ उ०
परमार्थतो दुरुत्तरे, 'इओ चुतेसु दुहमट्ठदुग्गं' सूय० १ श्रु० १० अ० ९ उ०।

अट्ठपएसिय- त्रि० *[अष्टप्रदेशिक]*
अष्टौ प्रदेशा यस्मिन् इति अष्टप्रदेशिकः। स्वार्थिककप्रत्यय-विधानादिति। प्रदेशाऽष्टकनिष्पन्ने, 'एत्थ णं अट्ठपएसिए रुयगे'। ठा० १ ठा०।

अट्ठपदपरूवणया- स्त्री० *[अर्थपदप्ररूपणता]*
अर्थः, त्र्यणुकस्कन्धादि, तद्युक्तं तद्विषयं व पदमानुपूर्व्यादिकं, तस्य प्ररूपणं कथनं, तद्भावोऽर्थपदप्ररूपणता। इयमानुपूर्व्या-दिका संज्ञा, अयं च तदभिधेयस्त्र्यणुकादिरर्थः संज्ञी, इत्येवं संज्ञासंज्ञिसंबन्धकथने, से किं तं नेगमववहाराणं अणोवणि-हिया दव्वाणुपुव्वी? पंचविहा पन्नत्ता। तं जहा- अट्ठ-पदपरूवणया।**आदि 'आणुपुव्वी' शब्दे वक्ष्यामः अनुओ०।

अट्ठपदोवसुद्ध- त्रि० *[अर्थपदोपशुद्ध]*
अर्थपदानि युक्तयो हेतवो वा तैरुपशुद्धमवदातम्। सद्युक्तिके, सद्धेतुके च। अर्थैरभिधेयैः पदैश्च वाचकैरूप सामीप्येन शुद्धं निर्दोषम्। निर्दोषवाच्यवाचके, 'सोच्चा य धम्मं अरहंत-भासिअं, समाहितं अट्ठपदोवसुद्धं'। सूय० १ श्रु०६ अ०।

अट्ठपिट्ठणिट्ठिया- स्त्री० *[अष्टपिष्टनिष्ठिता]*
अष्टभिःशास्त्रप्रसिद्धैःपिष्टैर्निष्ठिताऽष्टपिष्टनिष्ठता।पन्न०१७ पद० अष्टवारपिष्टप्रदाननिष्पन्ने सुराभेदे, जीवा० ३ प्रति०।

अट्ठफास– न० *[अष्टस्पर्शम्]*
बादरपरिणामम्। भग० ९६।

अट्ठभाइया- स्त्री० *[अष्टभागिका]*
अष्टमे भागे वर्त्तत इत्यष्टभागिका। षट्पञ्चाशदधिकशतद्वय-पलमानायां माणिकायाम् माणिकाया अष्टमभागवर्तित्वात्, द्वात्रिंशत् पलप्रमाणे रसमानविशेषे, अनुओ०। भग०।
अष्टमभागमात्रो मानविशेषः। भग० ३१३।

अट्ठमइय- त्रि० *[अष्टमदिक]*
अष्टौ मदस्थानानि येषां तेऽष्टमदिकाः। अष्टसुमदस्थानेषु प्रम-त्तेषु, 'जे पुण अट्ठमईओ, पलिय-पसण्णाऽपसण्णा य' ।आतु०

अट्ठमंगल- न० *[अष्टमङ्गल]*
अष्टगुणितानि अष्ट वा मङ्गलानि। स्वनामख्यातेषु श्रीवत्सा-दिषु, 'तस्स णं असोगवरपायवस्स उवरिं बहवे अट्ठट्ठमंगलगा पन्नत्ता। तं जहा- सोवत्थिय १ , सिरिवत्था २, णंदियावत्त ३, वद्धमाणग ४, भद्दासण ५, कलस ६, मच्छ ७, दप्पण ८।' तत्र अष्टावष्टाविति वीप्साकरणात् प्रत्येकं तेऽष्टाविति वृद्धाः। अन्ये त्वष्टाविति संख्या, अष्टमङ्गलानीति च संज्ञा। उव०। नाया०। आव०चू०। आव०म०। भग०। जंबू०। रा०।
अष्टेति संख्याशब्दः, अष्टमङ्गलकानीति चाखण्डः संज्ञाशब्दः। जम्बू०

अट्ठमभत्त- न० *[अष्टमभक्त]*
एकैकस्मिन् दिने द्विवारं भोजनौचित्येन दिनत्रयस्य षण्णां भक्तानामुत्तरपारणकदिनयोरेकैकस्य भक्तस्य च त्यागेनाऽष्टम-भक्तं त्याज्यं यत्र तत्तथा, इति व्युत्पत्त्या समयपरिभाषया वा उपवासत्रये,
'तए णं से भरहे रायाअट्ठमभत्तंसि परिणम- माणंसि पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ'। जंबू० ३ वक्ष०।

अट्ठमभत्तिय- त्रि० *[अष्टमभक्तिक]*
दिनत्रयमनाहारिणि, जंबू० ३ वक्ष०।

अट्ठमयमहण- त्रि० *[अष्टमदमथन]*
अष्टमदस्थाननाशके, पण्हा०५ अ०।

अट्ठमहापाडिहेर- प० *[अष्टमहाप्रातिहार्य]*
अर्हतां पूजौपयिकेषु अशोकवृक्षादिषु, 'अशोकवृक्षः सुरपुष्प-वृष्टिर्दिव्यध्वनिश्चामरमासनं च। भामण्डलं दुन्दुभिरातपत्रं, सत्प्रातिहार्याणि जिनेश्वराणाम्'।१ । नं०।

अट्ठमिपोसहिय- त्रि० *[अष्टमीपौषधिक]*
अष्टम्याः पौषध उपवासादिकोऽष्टमीपौषधः, स विद्यते येषां तेऽष्टमीपौषधिकाः। अष्टम्याः पौषधव्रते क्रियमाणेषूत्सवेषु, आचा०२ श्रु०१ अ०२ उ०।

अट्ठमी- स्त्री० *[अष्टमी]*
चाउद्दसि पन्नरसिं, वज्जेज्जा अट्ठमिं च णवमिं च। छट्ठिं च चउत्थिं बारसिं च सेसासु देज्जाहिं ।१ । विशे०।
वृद्धवैयाकरणसंमते विभक्तिभेदे'अट्ठमी आमंतणी भवे'अष्टमी संबुद्धिरामन्त्रणी भवेत्, आमन्त्रणार्थे विधीयत इत्यर्थः। अनुओ०
अष्टम्यामन्त्रणी भवेत् इति। प्रथमाऽपीयं विभक्तिरामन्त्रण-लक्षणस्यार्थस्य कर्मकरणादिवत् लिङ्गार्थमात्रातिरिक्तस्य प्रति-पादकत्वेनाष्टम्युक्ता। ठा०८ ठा०।
आमंतणे भावे अट्ठमी उ, जहा-हे जुवाण ! त्ति, आमन्त्रणे भावे अष्टमी तु, यथा- हे युवन् ! इति, वृद्धवैयाकरणदर्शनेन चेयमष्टमी गण्यते, ऐदंयुगानां त्वसौ प्रथमैवेति मन्तव्यमिति। अनुओ०।

अट्ठमुत्ति- पुं० *[अष्टमूर्त्ति]*
अष्टौ भूम्यादयो मूर्त्तयोऽस्य। शिवे, 'क्षितिजलपवनहुताशन-यजमानाऽऽकाशचन्द्रसूर्याख्याः।इति मूर्त्तयो महेश्वरसम्बधिन्यो भवन्त्यष्टौ'। ठा० ९ ठा०।

अट्ठरससंपउउत्त- त्रि० *[अष्टरससंप्रयुक्त]*
अष्टभिः श्रृङ्गारादिभी रसैः सम्यक् प्रकर्षेण युक्ते, जीवा० ३प्रति

अट्ठविह- त्रि० *[अष्टविध]*
अष्ट विधाः प्रकारा यस्य। अष्ट प्रकारे, भग०१५ श०१ उ०। 'अट्ठविहकम्मतमपडलपडिच्छण्णे' अष्टविधकर्मेव तमःपटल-मन्धकारसमूहस्तेन प्रत्यवच्छिन्नानि तथा'। विशे०।

अट्ठसइया- त्रि० *[अर्थशतिका]*
अर्थशतानि यासु सन्ति, ता अर्थशतिकाः। अथवा- अर्थानाम् इष्टकार्याणां शतानि याभ्यः ता अर्थशतास्ता एवाऽर्थशतिकाः। अर्थशतोत्पादिकासु वागादिषु, 'अपुणरुत्ताहिं अट्ठसइयाहिं वग्गूहिं अणवरयं अभिणंदंता य'। जंबू०२ वक्ष०। भग०।

अट्ठसंघाड- पुं० *[अष्टसङ्घाट]*
अष्टसु प्रायश्चित्तलतासु, 'संघाडो त्ति वा लयत्ति वा पगारो त्ति वा एगट्ठं' इति वचनात्। बुह० १ उ०।

अट्ठसय- न० *[अष्टशत]*
अष्टाभिरधिकं शतम्। अष्टोत्तरशते, ठा० १० ठा०।

अट्ठसयसिद्ध- पुं० *[अष्टशतसिद्ध]*
अष्टशतं च ते सिद्धाश्च निर्वृत्ता अष्टशतसिद्धाः। एकस्मिन् समये ऋषभस्वामिना सह निर्वृत्तिं गतेष्वष्टोत्तरशतेषु सिद्धेषु। इदञ्चाऽनन्तकालजातमिति नवम-माश्चर्यमुच्यत इति। ठा० १ ठा०। कल्प०।

अट्ठसहस्स- न० *[अष्टसहस्र]*
अष्टोत्तरसहस्रसङ्ख्येषु, 'वइरामय-वत्थणिउणजोइयअट्ठसहस्सं वरकंचणं सलणिम्मिएण'। उव०

अट्ठसामइय- त्रि० *[अष्टसामयिक]*
अष्टौ समया यस्मिन् सोऽष्टसमयः, स एवाऽष्टसामयिकः। समयाष्टकोद्भवे, ठा०८ ठा०।
'केवलिसमुग्घाए अट्ठसामइये पन्नत्ते'। उव०।

अट्ठसेण- पुं० *[अष्टसेन]*
वत्सगोत्रजे पुरुषभेदे, तदपत्येषु च। ठा०७ ठा०।

अट्ठसेण- पुं० *[अर्धसेन]*
पुरुषविशेषे, ठा०७ ठा०।

अट्ठसोवण्णिय- त्रि० *[अष्टसौवर्णिक]*
षोडशकर्षमाषाऽऽत्मकसुवर्णनामाष्टकमिते, 'एगमेगस्स णं रन्नो चाउरंतचक्कवट्टिस्स अट्ठसोवन्निए काकिणिरयणे'। ठा० ८ ठा० ।

अट्ठहत्तरि- त्रि० *[अष्टसप्तति]*
अष्टाधिकायां सप्ततिसंख्यायाम्, 'अट्ठहत्तरीए सुवण्णकुमार-दीवकुमारावाससयसहस्साणं'। सम०।

अट्ठा-१ स्त्री० *[अष्टा]*
मुष्टौ, 'चउहिं अट्ठाहिं लोयं करेइ'। जंबू०२ वक्ष०।

अट्ठा-२ स्त्री० *[आस्था]*
आस्थानमास्था। प्रतिष्ठायाम्, सूय०२ श्रु०१ अ०।

अट्ठाण- न० *[अस्थान]*
अनुचिते स्थाने, ठा०६ ठा०।
वेश्यापाटकादौ कुस्थाने, वव०२ उ०।
अयुक्ते, 'अट्ठाणमेयं कुसला वयंति, दगेण जे सिद्धिम् उदाहरंति'। सूय०१ श्रु०७अ० ।
शब्दप्रतिबद्धावसतिः। बृह०

अट्ठाणट्ठवणा- स्त्री० *[अस्थानस्थापना]*
गुर्ववग्रहादिके अस्थाने प्रत्युप्रेक्षितोपधेः स्थापनं निक्षेपोऽस्था-नस्थापना। प्रमादप्रत्युप्रेक्षणाभेदे, ठा०७ ठा०।

अट्ठाणमंडव- पुं० *[आस्थानमण्डप]*
उपस्थानगृहे, ठा०५ ठा०१ उ०।

अट्ठाणिय- न० *[अस्थानक]*
अभाजने, अनाधारे, 'अट्ठाणिए होइ बहू गुणाणं, जेण्णाण संकाइ मुसं वएज्जा'। सूय०१ श्रु०१३ अ०।

अट्ठादंड- पुं० *[अर्थदण्ड]*
अर्थेन स्वपरोपकारलक्षणेन प्रयोजनेन दण्डो हिंसा अर्थदण्डः। सम०९ सम०।
त्रसानां स्थावराणां वाऽऽत्मनः परस्य वोपकाराय हिंसायाम्। ठा०५ ठा०२ उ०।

अट्ठादंडवत्तिय- पुं०न० *[अर्थदण्डप्रत्यय]*
आत्मार्थाय स्वप्रयोजनकृते दण्डोऽर्थदण्डः पापोपादानम्, तत्प्रत्ययः। प्रथमे क्रियास्थाने, सूय०२श्रु०२अ०। आव०चू०।

अट्ठारस- त्रि० *[अष्टादशन्]*
'पढमे छम्मासे अत्थि अट्ठारसमुहुत्तारात्ती'। सूर०१ पाहु०

अट्ठारसकम्मकारण- न० *[अष्टादशकर्मकारण]*
अष्टादश चौरप्रसूतिहेतौ, पण्हा० ३ अ०

अट्ठारसट्ठाण- न० *[अष्टादशस्थान]*
प्रतिसेवनीयेषु अष्टादशसु स्थानेषु, दश०।
समणेणं भगवया महावीरेणं समणाणं निग्गंथाणं सक्खुड्डय वियत्ताणं अट्ठारसट्ठाणा पन्नत्ता। तं जहा-वयछक्कं कायछक्कं, अकप्पो गिहिभायणं। पलियंकनिसेज्जा य, सिणाणं सोभव-ज्जणं।१ । सम०१८ सम०।
एषु व्रतषट्कं, शोभावर्जनं चेति विधेयं, शेषं प्रतिषेधनीयम्। वव० १० उ०।
अट्ठारसहिं ठाणेहिं जो होति अपतिट्ठितो नाऽलमत्थो तारिसो होइ ववहारं ववहरित्तए। अट्ठारसहिं ठाणेहिं जो होति पति-ट्ठितो अलमत्थो तारिसो होइ ववहारं ववहरित्तए। वव०१० उ०

अट्ठारसवंजणाउल- त्रि० *[अष्टादशव्यञ्जनाकुल]*
अष्टादशभिर्लोकप्रतीतैर्व्यञ्जनैः शालनतक्रादिभिराकुलं सङ्कीर्णं यत् तत्तथा। अथवा अष्टादशभेदं च तद् व्यञ्जनाकुलम्, शाकपार्थिवादिदर्शनाद् भेदशब्दलोपः। सूपाद्यष्टादशव्यञ्जन-सङ्कीर्णे, चंद०।
अष्टादश च भेदा इमे- सूओ १ दणो २ जवण्णं ३, तिण्णि य मंसाइ ६ गोरसो ७ जूसो ८। भक्खा ९ गुललावणिया १०, मूलफला ११ हरियगं १२ डागो १ ३।१ । होइ रसालू य १४ तहा, पाणं १५ पाणीय १६ पाणगं चेव १७। अट्ठारसमो सागो १८, णिरुवहओ लोइओ पिंडो।२०,। चंद० २० पाहु० सूर० २० पाहु० । ठा०। भग० ।

अट्ठारसविहिप्पयारदेसीभासाविसारय- पुं०स्त्री० *[अष्टादशविधिप्रकारदेशीभाषाविशारद]*
अष्टादशविधिप्रकाराः, अष्टादशभिर्वा विधिभिर्भेदैः प्रचारः प्रवृतिर्यस्याः सा तथा, तस्यां देशीभाषायां देशभेदेन वर्णा-वलीरूपायां विशारदः पण्डितो यः स तथा। अष्टादशधा-भिन्नदेशीभाषापण्डिते, अट्ठारसविहिप्पयारदेसीभासाविसारए गीयरइगंधव्वनट्टकुसले हयजोही'। नाया० १ श्रु० १ अ०।

अट्ठारससीलंगसहस्स- न० *[अष्टादशशीलाङ्गसहस्र]*
शीलभेदानामष्टादशसहस्रेषु, । आव०। दश०।

अट्ठारससेणि- स्त्री० *[अष्टादशश्रेणि]*
कुम्भकारादिषु अष्टादशसु राज्ञः प्रजासु, जंबू०।
अष्टादशश्रेणयश्चेमाः-कुंभार १ पट्टइल्ला २, सुवण्णकारा य ३ सूचकारा य ४। गंधव्वा ५ कासवगा ६, मालाकारा य ७ कज्जकरा ८।१ । तंबोलिआ ९ य एए, नवप्पयारा य णारुआ भणिआ। अह णं णवप्पयारे, कारुअवण्णे पवक्खामि।२। चम्मयर १ जंतपीलग २, गंछिअ ३, छिंपय ४ कंसकारा य ५। सीवग ६ गुआर ७ भिल्ला ८, धीवण ९ वण्णाइ अट्ठदस । ३। त्रिचकारादयस्तु एतेष्वे-वाऽन्तर्भवन्ति।
तए णं ताओ अट्ठारससेणिप्पसेणीओ भरहेणं रन्ना एवं वुत्ता समाणीओ हट्ठाओ। जंबू० ३ वक्ष०।

अट्ठारसय- त्रि० *[अष्टादशक]*
अष्टादशवर्षप्रमाणे, 'ते वरिसा होइ णवा, अट्ठारसिया उ हरिया होइ'। अष्टादशिका अष्टादशव-र्षप्रमाणा।वव०४ उ०।

अट्ठालोभि- त्रि० *[अर्थलोभिन्]*
अर्थोऽत्र कुप्यादिस्तत्र आ समन्ताल्लोभः अर्थलोभः, य विद्यते यस्येति समन्ततो धनलुब्धे, 'अहोयराओ परियप्पमाणे काला-कालसमुट्ठाई संजोगट्ठी अट्ठालोभी'। आचा० १ श्रु० २ अ० ३ उ०

अट्ठावण्ण- स्त्री० *[अष्ट(ष्टा)(पञ्चाशत्)]*
अष्टाधिका पञ्चाशत् अष्ट-पञ्चाशत्, अष्ट च पञ्चाशच्च अष्टपञ्चाशदिति वा। 'अट्ठावन' इति प्रसिद्धायां संख्यायां, तत्संख्येये च। 'पढमदोच्चपंचमासु तिसु पुढवीसु अट्ठावण्णं णिरयावाससयसहस्सा'। सम० ५८ सम०।

अट्ठावय-१ न० *[अर्थपद]*
अर्यत इत्यर्थो धनधान्यहिरण्यादिकः, पद्यते गम्यते येन अर्थस्तत्पदं शास्त्रम्, अर्थाऽर्थं पद०मर्थपद०म्। चाणक्यादिके अर्थशास्त्रे, सूय०१ श्रु०९ अ०।

अट्ठावय-२ न० *[अष्टापद]*
द्यूतक्रीडाविशेषे, सूय० १ श्रु० ९ अ०।
द्यूतफलके, जंबू०२ वक्ष०। पण्हा०।
द्यूतसामान्ये, जंबू०२ वक्ष०। निसि०।
'अट्ठावयं ण सिक्खिज्जा'। सूय०१ श्रु०९ अ०।
शारिफलकद्यूतं तद्विषयकलाम्। जम्बू०

अट्ठावय-३ न० *[अष्टापद०]*
द्वासप्ततिकलासु चेयं त्रयोदशी कला। नाया०१ श्रु०१ अ०। सम०

अट्ठावय- ४ न० *[अष्टापद०]*
स्वनामख्याते पर्वतविशेषे, यत्र ऋषभदेवः सिद्धः।
आव० म०। कल्प०।
अट्ठावयम्मि सेले, चउदसभत्तेण सो महरिसीणं।दसहिं सहसेहि समं, णिव्वाणमनुत्तरं पत्तो।१ । आव०। जंबू०। संथा०। नं०।

अट्ठावयवाइ- पुं० *[अष्टापद०वादिन्]*
इन्द्रभूतिना सह वीर जिन-समीपं समागते विप्रभेदे, कल्प०।

अट्ठावीस- स्त्री० *[अष्टाविंशति]*
अष्टाऽधिका विंशतिः। अष्ट च विंशतिश्चाऽष्टाविंशतिः। अष्टा-धिकविंशतिसंख्यायाम्, । जंबू० १ वक्ष०।

अट्ठाह- न० *[अष्टाह]*
अष्टानामह्नां समाहारे, नाया० ९ श्रु० ८ अ०।

अट्ठाहिया- स्त्री० *[अष्टाहिका]*
अष्टानामह्नां समाहारोऽष्टाहम्, तदस्ति यस्यां महिमायां सा-ऽष्टाहिका। जम्बू०
महिमामात्रे, व्युत्पत्तेः प्रदर्शनमात्रफलत्वेन महिमामात्रस्यैव प्रवृत्तिनिमित्तत्वात्। नाया० १ श्रु० ८ अ०।
अष्टदैवसिक्यां च।' अट्ठाहिया य महिमा, सम्मं अणुबंध-साहिगा केइ'। आव०म०
महामहिमाविशेषः। जीवा०। जम्बू० ।

अट्ठि-१ न० *[अस्थि]*
कीकशे, पण्हा०१ अ० उव०।
कुलके, आचा०२ श्रु०१ अ०८ अ०।
कुल्ये पञ्चमे धातौ, तं०। ठा०।
साऽस्थिके सरजस्के कापालिके, । बुह०१ उ०।

अट्ठि-२ त्रि० *[अर्थिन्]*
अर्थोऽस्याऽस्तीत्यर्थी। प्रयोजनवति, । आचा० १ श्रु० ६अ० ४ उ० ।

अट्ठिअगाम- पुं० *[अस्थिकग्राम]*
स्वनामख्याते ग्रामभेदे, तत्र वीरजिनः समवासरत्। तदेतत्सर्वमुक्तम्–

अट्ठिकच्छभ- पुं० *[अस्थिकच्छप]*
अस्थिबहुले कच्छपभेदे, पन्न० १ पद०।
अस्थिकच्छपः, कच्छपविशेषः। जीवा०

अट्ठिकढिण- त्रि० *[अस्थिकठिन]*
अस्थिभिः कठिनम्। कीकशैरमृदुनि, तं०।

अट्ठिकढिण- त्रि० *[कठिनास्थिक]*
कठिनानि अस्थिकानि यत्र तत्तथा। अमृदुकीकशके, 'अट्ठिय-कढिणे सिरण्हारुबंधणे'। तं०।

अट्ठिग-१ न० *[अस्थिक]*
हडुके, पण्हा० ३ अ०
कापालिके, पुं०। वव०२ उ०।

अट्ठिग-२ न० *[अस्थिक]*
अबद्धबीजे अनिष्पन्ने फले, । बुह०१ उ०

अट्ठिग-३ न० *[आर्थिक]* न०।
अर्यत इत्यर्थो मोक्षः, स प्रयोजनमस्य इत्यार्थिकम्। अथवा ऽर्थः, स एव प्रयोजनरूपोऽस्यास्तीति अर्थिकम्, उत०१ अ०।
मोक्षोत्पादके, उत्त०१ अ०।

अट्ठिग-४ न० *[आर्थिक]* न०।
अभिलाषिणि, सूय०१ श्रु०२ अ० ३ उ०।

अट्ठिगकट्ठुट्ठिय- त्रि० *[अस्थिककाष्ठोत्थित]*
अस्थिकान्येव काष्ठानि, काठिन्यसाधर्म्यात्, तेभ्यो यदुत्थितं तत्तथा।कठिनकीकशेभ्यः समुत्थिते देहे, ।भग० ९श० ३३उ०

अट्ठिचम्मसिरत्ता- स्त्री० *[अस्थिचर्मशिरावत्ता]*
अस्थीनि च चर्म च शिराश्च स्नायवो विद्यन्ते यस्य स तथा तद्भावः, तत्ता।अस्थिचर्मशिरामात्रशालित्वे अट्ठिचम्मसिरत्ताए पण्णायंति णो चेव णं मंससोणियत्ताए धणं अणगारं, अस्थि-चर्मशिरावत्तया प्रज्ञायेते तदुत्पादावेताविति, न पुनः मांसशो-णितवत्तया, तयोः क्षीणत्वादिति। अनुत्त० २ वर्ग०।

अट्ठिचम्मावणद्ध- त्रि० *[अस्थिचर्मावनद्ध]*
अस्थीनि चर्माऽवनद्धानि यस्य सोऽस्थिचर्मावनद्धः। कूशत्वात् चर्मलग्नकीकशके, अट्ठिचम्माऽवणद्धे किडिकिडिभूए किसे धम्मणिसंतए यावि होत्था। भग०२ श०१ उ०।

अट्ठिजुद्ध- न० *[अस्थियुद्ध]*
योधप्रतियोधयोरस्थिभिः संप्रहारे, नाया० १ श्रु०१ अ०।

अट्ठिज्झाम- न० *[अस्थिध्याम]*
अस्थि च तद् ध्यामं चाऽग्निना श्यामलीकृतम्। आपादित-पर्यायान्तरेऽस्थिनि, भग०५ श०२ उ०।

अट्ठिदामसय- न० *[अस्थिदामशत]*
हड्डमालाशते, तं०।

अट्ठिधमणिसंताणसंतय- त्रि० *[अस्थिधमनिसन्तानसन्तत]*
अस्थि- धमन्यः सन्तानेन परम्परया सन्ततं व्याप्तं यत्तदस्थि-धमनिसन्ततम्। अस्थ धमनिपरम्परया व्याप्ते,। तं०।

अट्ठिभंजण- न० *[अस्थिभञ्जन]*
कीकशभञ्जनरूपे शरीरदण्डे, पण्हा० १ अ०

अट्ठिभिंजा- स्त्री० *[अस्थिभिञ्जा]*
अस्थिमध्यरसे, ठा० ३ ठा० ४ उ०। तं०।
अस्थिमध्यम्। सूय० । भग० ।

अट्ठिमिजाणुसारि- त्रि० *[अस्थिमिञ्जानुसारिन्]*
अस्थिमिञ्जाऽन्तधातुव्यापके, ठा०६ ठा०।

अट्ठिमिंजापेमाणुरागरत्त- त्रि० *[अस्थिमिञ्जाप्रेमानुरागरक्त]*
अस्थीनि च कीकशानि मिञ्जा च तन्मध्यवर्तिधातुरस्थिमिञ्जा-स्ताः प्रेमानुरागेण सार्वज्ञप्रवचनप्रीतिरूपकुसुम्भादिरागेण रक्ता इव रक्ता येषां ते तथा। अथवाऽस्थिमिञ्जासु जिनशासन-गतप्रेमानुरागेण रक्ता ये ते तथा। भग०२ श०५ उ०।
सम्यक्त्ववासिताऽन्तश्चेतस्सु, सूय०२ श्रु०७ अ०।
'अयमाउसो ! निग्गंथे पावयणे अट्ठे अयं परमट्ठे सेसे अणट्ठे'। इत्येवमुल्लेखेन सम्यक्त्विषु, नाया०५ अ०। दशा०। रा०।

अट्ठिय-१ त्रि० *[अर्थित]*
वाञ्छिते, उत्त०१ अ०।

अट्ठिय-२ त्रि० *[अस्थित]*
अव्यवस्थिते, पण्हा० ३ अ०

अट्ठियकप्प- पुं० *[अस्थितकल्प]*
अनवस्थित-समाचारी, आव०।

अट्ठियप्प- त्रि० *[अस्थितात्मन्]*
चञ्चलचित्ततयाऽस्थिरस्वभावे, । उत्त०२३ अ०।

अट्ठिसरक्ख- पुं० *[अस्थिसरजस्क]*
कापालिके, वव०७ उ०।

अट्ठिसुहा- स्त्री० *[अस्थिसुखा]*
अस्थ्नां सुखहेतुत्वादस्थिसुखा। उव०
अस्थ्नां सुखकारिण्यां संबाधनायाम्, कल्प०।

अट्ठुत्तर- त्रि० *[अष्टोत्तर]* ।
अष्टाऽभिरधिके, अष्टोत्तरं शतसहस्रं लक्षं रजतस्य तुष्टिदानं ददाति स्मेति। उव०।

अट्ठुप्पत्ति- स्त्री० *[अर्थोत्पत्ति]*
अर्थस्योत्पत्तिर्यस्मात्। व्यवहारे। अर्थो व्यवहारादुत्पद्यते इति तस्य तथात्वम्। वव० २ उ०।

अट्ठुस्सेह- त्रि० *[अष्टोत्सेध]*
अष्टौ योजनान्युत्सेध उच्छ्रयो येषां ते तथा। अष्टयोजनोच्चे, चक्कट्ठपइट्ठाणा अट्ठुस्सेहा य। ठा०९ ठा०।

अड- धा० *[अट]*
'अडति संसारे'। पण्हा०१ अ० ।

अड- पुं० *[अट]*
लोभपक्षिभेदे, जीव० १ प्रति०। पन्न०।

अडज्झ- त्रि० *[अदाह्य]*
अग्निक्षारादिना भश्मवदकरणीये, ठा०२ ठा०४ उ०।
'अडज्झकुच्छे अट्ठसुवण्णे य गुणा भणिया'। दश०१० अ०।

अडड- न० *[अटट]*
चतुरशीतिलक्षैर्गुणितेऽटटाङ्गे। ठा०२ ठा०४ उ०।
'चउरासीइं अडडंगसयसहस्साइं से एगे अडडे'। अनुओ०। जीवा०। भग०। जंबू०। कर्म०।

अडडंग- नं० *[अटटाङ्ग]*
चतुरशीत्या लक्षैर्गुणिते त्रुटिते, 'चउरासीइं तुडियसयसहस्साइं से एगे अडडंगे'। अनुओ०।
वाचनाऽन्तरमतेन चतुरसीतिलक्षगुणिते महात्रुटिते, । भग०।

अडण- न० *[अटन]*
चरणे, गमने च। ठा०६ ठा०। आव०म०।

अडपल्लाण- नं० *[देशी]*
लाटेषु स्वनामप्रसिद्धेऽन्यत्र थिल्लिरिति ख्याते वाहनभेदे, जीवा० ३ प्रति०।

अडमाण- त्रि० *[अटत्]*
गच्छति,'अणाउलो संवच्छरखमणंसि अडमाणे'। आव०म०।

अडयाल- त्रि० *[अष्टचत्वारिंशत्]*
अष्ट च चत्वारिंशच्च, अष्टाधिका वा चत्वारिंशत्। द्व्यून-पञ्चाशति, आव०।

अडयाल- *[देशी]*
प्रशंसायाम्, पन्न०२ पद०। जंबू०। सम०। जीवा०।

अडयालकयवणमाल- त्रि० *[अष्टचत्वारिंशत्कृतवनमाल]*
अष्टचत्वारिंशद्भेदभिन्ना विच्छित्तयः कृता वनमाला येषु तानि अष्टचत्वारिंशत्कृतवनमालानि।अष्टचत्वारिंशद्विधविच्छेदवद्वन - मालायुतेषु, जीवा० ३ प्रति०।

अडयालकोट्ठगरइय- त्रि० *[अष्टचत्वारिंशत्कोष्ठकरचित]*
अष्टचत्वारिंशत् भेदभिन्न-विच्छित्तिकलिताः कोष्ठका अपवरका रचिताः स्वयमेव रचनां प्राप्ता येषु तानि अष्टचत्वारिंशत्कोष्ठक रचितानि। सुखादिगणे दर्शनात्पाक्षिको निष्ठान्तस्य पर-निपातः 'अडयाल' शब्दो देशीवचनत्वात्प्रशंसावाची वा।
। पन्न० २ पद०।
अष्टचत्वारिंशत् भेदभिन्नविचित्रच्छन्दोगोपुररचितेषु, अडयाल कोट्ठरइया अडयालकयवणमाला। सम०। जंबू०। जीवा०।

अडवि- स्त्री० *[अटवि]*
अटन्ति मृगयाद्यर्थिनो यत्र। कान्तारे, ठा० ५ ठा०२ उ०। अरण्ये, तं०।

अडविजम्मण- न० *[अटविजन्मन्]*
कान्तारजन्मलक्षणे दुःखे, पण्हा० १ अ०

अडविदेसदुग्गवासि- पुं० *[अटविदेशदुर्गवासिन्]*
अटवीदेशे जलस्थलदुर्गरूपेषु दुर्गेषु वसति चौरादौ, । पण्हा० ३ अ०।

अडविवास- पुं० *[अटविवास]*
अरण्यवसने, । पण्हा० ३ अ०।

अडसट्ठि- स्त्री० *[अष्टषष्टि]*
अष्ट च षष्टिश्च, अष्टाऽधिका वा षष्टिः। अष्टाऽधिकषष्टिसंख्या-याम्, । सम० ६९ सम०।

अडिल्ल- पुं० *[अटिल]*
चर्मपक्षिभेदे, पन्न०१ पद०। जीवा०।

अडोलिका- स्त्री० *[अटोलिका]*
यवनाम्नो राज्ञः पुत्र्यां गर्दभराजस्य भगिन्याम्, बुह० १ उ०।

अड्डिया- स्त्री० *[अड्डिका]*
उपदेशमात्ररूपे शास्त्राऽनिबद्धे मल्लानां करणविशेषे, विशे०। आव०म०।

अड्ड-१ त्रि० *[आढ्य]*
ऋद्ध्या परिपूर्णे, निसि०। उव०।
धनधान्यादिभिः परिपूर्णे, भग० २ श०५ उ०।
समृद्धे, भग०९ श० ३२ उ०। ठा०।
धनवति, ठा०९ ठा०।

अड्ड-२ त्रि० *[आढ्य]*
महति च। संथा०।

अड्डक्खेत्त- न० *[अर्धक्षेत्र]*
अहोरात्रप्रमितस्य क्षेत्रस्य चन्द्रेण सह योगमश्नुवत्सु नक्षत्रेषु, । चंद० १० पाहु० । सूर० १० पाहु० ।
अर्द्धक्षेत्राणि नक्षत्राणि षट्। तद्यथा- उत्तराभाद्रपदा, उत्तरा-फाल्गुनी, उत्तराऽऽषाढा, रोहिणी, पुनर्वसु, विशाखा चेति। । चंद० १० पाहु० । सूर० १० पाहु० ।

अड्ढग- त्रि० *[आढ्य]*
युक्ते, परिपूर्णे च। संजमतवड्ढगस्स उ, अविगप्पेणं तहक्कारो। सम्पन्नः। आव० आव०म० ।

अड्ढरत्त- पुं० *[अर्धरात्र]*
अर्द्धं रात्रेः, निशीथे, अड्ढरत्ते आगतो दारं मग्गइ। आव०म० ।
अर्द्धरात्रः, निशीथः। दश०
आर्धरात्रिकः। वव०

अड्ढाइज्ज- त्रि० *[अर्द्धतृतीय]*
अर्द्धं तृतीयं येषां तेऽर्द्धतृतीयाः। अवयवेन विग्रहः, समुदायः समासार्थः। सार्द्धद्वयोः, जीवा०१ प्रति०। पन्न०।
'अड्ढाइज्जंगुलग्गहणमुस्सेहं'। नं०। रा०। आव०म०।
अर्द्धतृतीयानि। आव०

अड्ढाइज्जदीव- पुं० *[अर्द्धतृतीयद्वीप]*
अर्द्धं तृतीयं येषां तेऽर्द्धतृतीयाः ते च ते द्वीपाश्चेति समासः। अर्द्धतृतीयद्वीपाः।जम्बूद्वीपधातकीखण्डपुष्कराद्धलक्षणे साऽर्द्ध- द्वीपद्वये, भग० ९ श० ३ उ०।

अड्ढाइज्जदीवसमुद्दतदेक्कदेसभाग- पुं० *[अर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रतदेक-देशभाग]*
जम्बूद्वीप-धातकीखण्ड-पुष्कराऽर्द्धद्वीप-लवणसमुद्र-कालोदधि समुद्राणां विवक्षिते भागे, साहरणं पडुच्च अड्ढाइज्जदीवसमुद्द-तदेक्कदेसभाए होज्जा। भग० ९ श० ३ उ०।

अड्ढेज्ज- न० *[आढ्यत्व]*
धनपतित्वे, तस्य सुखकारणत्वात् सुखभेदे च। ठा० १० ठा०।
धनपतित्वं सुखकारणत्वात्सुखं । ठा०

अड्ढेज्ज- स्त्री० *[आढ्येज्या]*
आढ्यैः क्रियमाणा इज्या पूजा आढ्येज्या, धनिकृतसत्कारे, ठा० १० ठा०।

अड्ढोरुग- पुं० *[अर्द्धोरुक]*
अर्द्धोरूकोऽपि तौ द्वावपि अवग्रहाऽनन्तकपट्टावुपरिष्टाद् गृही-त्वा सर्वं कटीभागमासादयति। स च मल्लचलनाऽऽकृतिः केवलमुपरि ऊरूद्वये च कशाबद्धः। बुह० ३ उ०। निसि०।
कटिविभागाच्छादकं निर्ग्रन्थ्युपकरणम्। ओह० २०९।
निर्ग्रन्थ्युपकरणविशेषः। निसि०

अण-१ न० *[अण]*
कुत्सिते, कुत्सितत्वादणन्ति कुत्सितानि करणानि शब्दयन्ति, अणन्त्यनेनेति व्युत्पत्तेर्वा। पापे, विशे०। आव०म०
अणति गच्छति तासु तासु योनिषु जीवोऽनेनेति। पापे, आव०म०। भग०।
शब्दकरणगाल्यादिप्रदाने, तं०।
अणत्यनेन जन्तुश्चतुर्गतिकं संसारमिति अणम्। आचा० १ श्रु० २ अ० १ उ०।
शब्दे, गतौ च। विशे०।

अण-२ न० *[अण]*
अणन्तीवाऽविकलहेतुत्वेनाऽसातवेद्यं नरकाद्यायुष्कं शब्दयन्ति इत्यणाः। क्रोधादिषु चतुर्षु कषायेषु, विशे०।
एकदेशेन समुदायस्य गम्यमानत्वादनन्तानुबन्धिषु क्रोधादिषु चतुर्षु कषायेषु। विशे०।

अण- ३ न० *[ऋण]*
व्यवहारकदेयद्रव्ये, नाया० १ श्रु० १८ अ०।
अष्टप्रकारे कर्मणि, उत्त० १ अ०। आव०।

अणइ- अव्य० *[अनति]*
अतीति अव्ययमतिक्रमार्थे, न अति अनति अनतिक्रान्ते, तं०।

अणइक्कमणिज्ज- त्रि० *[अनतिक्रमणीय]*
व्यभिचारयितुमशक्ये 'अणइक्कमणिज्जाइं वागरणाइं'। भग० १५ श० १ उ०।

अणइवत्तिय- अव्य० *[अनतिपत्य]*
अनतिक्रम्येत्यर्थे, । आचा० १ श्रु० ६ अ० ५ उ०।

अणइवर- न० *[अनतिवर]*
प्रधाने, न विद्यतेऽतिवरं यस्मात् तदनतिवरम्। सर्वश्रेष्ठे, उव०

अणइवरसोमचारूरूव- त्रि० *[अनतिवरसोमचारूरूप]*
अतीव अतिशयेन सोमं दृष्टिसुभगं चारु रूपं येषां ते तथा। यद्वा अतीति अव्ययमतिक्रमार्थे, न अति अनति, सौम्यं च तच्चारु च सौम्यचारु, सौम्यचारू च तद्रूपं च सौम्यचारुरूपम्, वरं च तत् सौम्यचारुरूपं च वरसौम्यचारुरूपम्। अननीति अनतिक्रान्तं वरसौम्यचारुरूपं येषां ते अनतिवरसौम्यचारुरूपः देव-मनुष्यादिभिः स्वलावण्यगुणादिभिरजितरूपेषु, तं०।
'तेणं मणुया अणइवरसोमचारुरूवा भोगुत्तमा'। तं०। उव०।

अणइवाएमाण- त्रि० *[अनतिपातयत्]*
प्राणाद्यतिपातमकुर्वति, अणवकंखमाणा अणइवाएमाणा। आचा० १ श्रु० ८ अ० ३उ०।

अणइविलंबियत्त- न० *[अनतिविलम्बितत्व]*
अष्टाविंशे सत्यवचनाऽतिशये, रा०।

अणंग-१ न० *[अनङ्ग]*
आहार्ये लिङ्गादौ, ठा०५ ठा०२ उ०।
मोहोदयोद्धूततीव्रमैथुनाऽध्य-वसायाख्ये कामे, आव०६ अ०।

अणंग-२ न० *[अनङ्ग]*
आनन्दपुरे नगरे जितारिराजस्य विश्वस्तायां भार्यायां जाते पुत्रे, गच्छा० २ अधि०। बुह०।

अणंगकिड्डा- स्त्री० *[अनङ्गक्रीडा]*
अनङ्गानि कुचकक्षोरुवदनादीनि तेषु क्रीडनमनङ्गक्रीडा। योनि-मेहनयोरन्यत्र रमणे, आव०।
अयं च स्वदारसंतुष्टेः, तृतीयश्चतुर्थो वाऽतिचारः श्रावकेण न समाचरितव्यः। अतिचाराताऽस्य स्वदारेभ्योऽन्यत्र मैथुनपरि-हारेणाऽनुरागादालिङ्गनादि व्रतमालिन्यादिति। उपा० १ अ०।

अणंगपडिसेविणी- स्त्री० *[अनङ्गप्रतिसेविनी]*
मैथुने प्रधानमङ्गं मेहनं भगश्च, तत्प्रतिषेधोऽनङ्गम्, तेनाऽङ्गेना-ऽऽहार्यलिङ्गादिना, अनङ्गे वा मुखादौ, प्रतिसेवाऽस्ति यस्याः। अनङ्गं वा काममपरापरपुरुषसंपर्कतोऽतिशयेन प्रतिसेवत इति एवंशीला अनङ्गप्रतिसेविनी तथाविधवेश्यावत् आहार्यलिङ्गा-दिना, मुखादौ वा, बहुपुरुषैर्वा मैथुनप्रतिसेवमानायाम्, एता-दृशी स्त्री गर्भं न धारयति। ठा० ५ ठा० २ उ०।

अणंगप्पविट्ठ- न० *[अनङ्गप्रविष्ट]*
स्थविरैर्भद्रबाहुस्वामिप्रभृतिभिराचार्यैः उपनिबद्धे आवश्यक-निर्युक्त्यादौ श्रुतविशेषे, आव०म०। नं०। बुह०। विशे०।
**‘अंगप्पविट्ठ’ शब्दे विशेषस्वरूपमुक्तम्*

अणंगसेण- पुं० *[अनङ्गसेन]*
सुवर्णकारभेदे, कुमारनंदी इति तस्य नामाऽन्तरम्। बुह०४ उ०

अणंगसेणा- स्त्री० *[अनङ्गसेना]*
कृष्णवासुदेवसमये द्वारवती जातायां प्रधानगणिकायाम्, आव०चू०। निसि०। अंत०। आव०म०।

अणंत-१ त्रि० *[अनन्त]*
नाऽस्यान्तोऽस्तीत्यनन्तः, निरन्वयनाशेनाऽनश्यमाने,अपरिमिते निरवधिके च। सूय० १ श्रु० १ अ० ४ उ०। नं०।
अक्षये, पण्हा० ३ अ०
अपर्यवसाने, दर्श०। सूय०।
नाऽस्यान्तोविद्यतइत्यनन्तम्। केवलात्मनोऽनन्तत्वात् । रा०। पण्हा०। जीवा० ।
अनन्तार्थविषयत्वाद् वाऽनन्तमन्तरहितम्, अपर्यवसितत्वात्। दशा० १० अ०। ठा०।
अविनाशित्वात्। जंबू०२ वक्ष०।
अनन्तार्थविषयज्ञानस्वरूपत्वादन्तरहितः। भग०।

अणंत-२ त्रि० *[अनन्त]*
अनन्तार्थविषयज्ञानस्वरूपत्वात्। सम० १ सम०।
केवलज्ञाने, नाया० १ श्रु० ८ अ०।

अणंत- ३ त्रि० *[अनन्त]*
आकाशे च। नं०।
तस्याऽन्तवर्जितत्वात्। भग० १२ श० १० उ०।

अणंत-४ त्रि० *[अनन्त]*
भरतक्षेत्रजे अवसर्पिण्याश्चतुर्दशे तीर्थकरे, अनन्तकर्मांशजयात् अनन्तः। अनन्तानि वा ज्ञानादीनि अस्येति। रत्नविचित्रं रत्न-खचितम् अनन्तमति महाप्रमाणं दाम स्वप्ने जनन्या दृष्टमतो अनन्त इति। आव०म०।

अणंत-५ त्रि० *[अनन्त]*
साधारणजीवे, पण्हा०१ अ०

अणंत-६ त्रि० *[अनन्त]*
अनन्तकर्मपुद्गलनिर्वृत्तत्वात्तदनन्तमिति अनन्तानां वा भवानां हेतुर्यत्तदनन्तम्। ओह०

अणंतकर- त्रि० *[अनन्तकर]*
संसारपारगमनाऽसमर्थे, कायोपगाः, तदुपमर्दारम्भप्रवृत्ताः संसारस्यानन्तकराः स्युः, संसारस्याऽन्तकरा न भवन्तीत्यर्थः। सूय० २ श्रु० ७ अ०।

अणंतकाइय- पुं० *[अनन्तकायिक]*
अनन्ताः कायिका जीवा यत्र तदनन्तकायिकम्। अनन्तजीवे वनस्पतिभेदे। आव०।
लक्षणादि चास्य ‘अणंतजीव’ शब्दे वक्ष्यते।

अणंतकाय- पुं० *[अनन्तकाय]*
अनन्तजीवे वनस्पतौ, आव०

अणंतकाल- पुं० *[अनन्तकाल]*
अपर्यवसितकाले। पण्हा० ३ अ०

अणंतकिरिया– स्त्री० *[अनन्तक्रिया]*
परम्परामुक्तिफला । उत्त० ।

अणंतखुत्तो- अव्य० *[अनन्तकृत्त्वस्]*
अनन्तवारानित्यर्थः। ‘जीवे णेरइयत्ताए उववण्णपुव्वे ? हंता गोयमा ! असतिं अदुवा अणंतक्खुत्तो’। भग० १२ श० ६ उ०।

अणंतग-१ न० *[अनन्तक]*
गणनासंख्याभेदे, ठा०।

अणंतग-२ त्रि० *[अनन्तग]*
अन्तं गच्छतीत्यन्तगः, नाऽन्तगः अनन्तगः। अविनाशिनि, सूय०१ श्रु०९ अ०।

अणंतग-३ त्रि० *[अनन्तग]*
कम्बलादिवस्त्रम्। ओह०

अणंतघाइ- पुं० *[अनन्तघातिन्]*
अनन्तविषयतया अनन्ते ज्ञानदर्शने हन्तुं विनाशयितुं शीलं येषां तेऽनन्तघातिनः। ज्ञानदर्शनविनाशनशीलेषु ज्ञानावरणी-यादि कर्मपर्यवेषु, पसत्थजोगपडिवन्ने य णं अणगारे अणंतघाइपज्जवे खवेइ। उत्त० २९ अ०।

अणंतचक्खु- पुं० *[अनन्तचक्षुष्]*
अनन्तं ज्ञेयानन्ततया नित्यतया वा चक्षुरिव चक्षुः केवलं ज्ञानं यस्य, अनन्तस्य वा लोकस्य पदार्थप्रकाशकतया वा चक्षुर्भूतो यः स भवत्यनन्तचक्षुः। सूय०१ श्रु०६ अ०।
अनन्तमपर्यवसानं नित्यं ज्ञेयानन्तत्वाद् वाऽनन्तं चक्षुरिव केवलज्ञानं यस्य स तथा। केवलज्ञानिनि, तरिउं समुद्दं च महा भवोघं, अभयंकरे वीर अणंतचक्खू। सूय० १ श्रु० ६ अ०।

अणंतजिण- पुं० *[अनन्तजिन]*
अनन्तश्चासौ ज्ञानात्मतया नित्यतया वा जिनश्च रागद्वेषजयनात् अनन्तजिनः। अवसर्पिण्याश्चतुर्दशे तीर्थकरे, आचा०। कल्प०

अणंतजीव- पुं० *[अनन्तजीव]*
अनन्तकायिके वनस्पतिभेदे, ठा० ३ ठा० १ उ०।

अणंतजीविअ- पुं० *[अनन्तजीविक]*
अनन्तकायिकवनस्पतौ, भग० ८ श० ३ उ०।
अनंतजीविका–पनकादयः। ठा०

अणंतणाण- न० *[अनन्तज्ञान]*
अनन्तं स्वपरपर्यायापेक्षया वस्तु ज्ञायते येन, तदनन्तज्ञानम्। केवलज्ञाने, दश० २ अ०।

अणंतणाणदंसि- पुं० *[अनन्तज्ञानदर्शिन्]*
अनन्तं ज्ञानं दर्शनं च यस्यासावनन्तज्ञानदर्शी। केवलज्ञानिनि, सूय० १ श्रु० ९ अ०।

अणंतणाणि- पुं० *[अनन्तज्ञानिन्]*
अनन्तमविनाश्यनन्तपदार्थपरिच्छेदकं वा ज्ञानं विशेषग्राहकं यस्याऽसावनन्तज्ञानी। सूय० १ श्रु० ६ अ०।
उत्पन्नकेवलज्ञाने तीर्थकरे, ज्यो० ६ पाहु०। सम०।
अनन्तज्ञानी, केवली। आव०

अणंतदंसि- पुं० *[अनन्तदर्शिन्]*
अनन्तमविनाश्यनन्तपदार्थपरिच्छेदकं दर्शनं सामान्यार्थ परि-च्छेदकं यस्य य अनन्तदर्शी।
उत्पन्नकेवलदर्शने,सूय० १ श्रु० ६ अ०

अणंतपएसिय- पुं० *[अनन्तप्रदेशिक]*
अनन्तपरमाण्वात्मके स्कन्धे, भग० ८ श० २ उ०।

अणंतपार- स्त्री० *[अनन्तपार]*
अनन्तः पारः पर्यन्तो यस्य कालस्य स अनन्तपारः। अन्तविर-हितपर्यन्ते, केण अणंतं पारं संसारं हिंडई जीवो ?। 'आतु०। से पन्नया अक्खयसागरे वा, महोदही वा वि अणंतपारे।' सूय०१ श्रु०६ अ०।

अणंतमिस्सिया- स्त्री० *[अनन्तमिश्रिता]*
मूलकादिकमनन्तकायं, तस्यैव सत्कैः परिपाण्डुपत्रैरन्येन वा केनचित् प्रत्येकवनस्पतिना मिश्रमवलोक्य सर्वोऽप्येषोऽनन्त-कायिक इति वदतः सत्यमृषाभाषाभेदे, पन्न० ११ पद०।

अणंतमीसय- न० *[अनन्तमिश्रक]*
अनन्तविषयकं मिश्रकमनन्तमिश्रकम्। सत्यमृषाभेदे, यथा-मूलकन्दादौ परीत्तपत्रादिअमतिनन्तकायोऽयमित्यभिदधतः। ठा० १० ठा०।

अणंतमोह- त्रि० *[अनन्तमोह]*
अनन्तोऽपर्यवसितस्तदभावापेक्षया प्रायस्तस्याऽनपगमान्मुह्यते येनाऽसौ मोहो ज्ञान वरणदर्शनमोहनीयात्मकः। ततश्चाऽनन्तो मोहोऽस्येत्यनन्तमोहः। उत्त० ४ अ०।
अविनाशिदर्शनावरणमोहनीयकर्मणि, । उत्त० ४ अ०।

अणंतर-१ त्रि० *[अनन्तर]*
न विद्यतेऽन्तरं व०धानं यस्य। ६ ब०।
अव्यवहिते, नं०।
निर्व्यवधाने, भग० १४ श० ७ उ०। कल्प०।
अनंतरं चयं चइत्ता अव्यवहितं च्यवनं कृत्वेति। नाया० ८ अ० देवभवसम्बन्धिनं देहं त्यक्त्वेत्यर्थः। अथवाऽनन्तरम्, आयुः-क्षयाद्यनन्तरं च्यवनं च्युत्वा, महाविदेहे अनन्तरं शरीरं त्यक्त्वा, च्यवनं वा कृत्वा। विपा० १ श्रु० १ अ०।

अणंतर-२ त्रि० *[अनन्तर]*
न विद्यतेऽन्तरं व्यवधानमस्येत्यनन्तरः। वर्त्तमानसमये, ठा० १० ठा०।

अणंतरखेत्तोगाढ- त्रि० *[अनन्तरक्षेत्रावगाढ]*
आत्मशरीरावगाढक्षेत्रापेक्षया यदनन्तरं क्षेत्रं तत्राऽवगाढे, भग० ६ श० १० उ०।

अणंतरखेदोववण्णग- त्रि० *[अनन्तरखेदोपपन्नक]*
अनन्तरं समयाद्यव०हितं खेदेन दुःखेनोपपन्नमुत्पादक्षेत्रप्राप्ति-लक्षणं येषां तेऽनन्तरखेदोपपन्नकाः। खेदप्रधानोत्पत्तिप्रथम-समयवर्तिषुनैरयिकादिषु, भग० १४ श० १ उ०।

अणंतरगंठिय- त्रि० *[अनन्तरग्रन्थित]*
प्रथमग्रन्थीनाम् अनन्तरव्यवस्थितैर्ग्रन्थिभिः सह ग्रथिते, । भग० ५ श० ३ उ०।

अणंतरच्छेय- पुं० *[अनन्तरच्छेद]*
स्वाङ्गे नैव द्वैधीकरणे, 'णह-दंताहि अणंतरं णहेहिं दंतेहिं वा जं छिंदति, तं अणंतरच्छेयो भण्णति'। निसि० १ उ०।

अणंतरणिग्गय- त्रि० *[अनन्तरनिर्गत]*
निश्चितं स्थानान्तरप्राप्त्या गतं गमनं निर्गतम्। अनन्तरं समयादिना निर्व्यवधानं निर्गतं येषां तेऽनन्तरनिर्गताः। प्रथमसमये नगरादेरुच्छितेषु स्थानान्तरप्राप्तेषु, भग० १४ श० १ उ०।

अणंतरदिट्ठंतय- पुं० *[अनन्तरदृष्टान्तक]*
यः खल्वनन्तरप्रयुक्तोऽपि परोक्षत्वादागमगम्यत्वाद् दार्ष्टान्तिकार्थसाधनायाऽलं न भवति, तस्मिन् दृष्टान्तभेदे। दश०१ अ०

अणंतरपज्जत्त- पुं० *[अनन्तरपर्याप्त]*
न विद्यते पर्याप्तत्वेऽन्तरं येषां तेऽनन्तराः, ते च ते पर्याप्तकाश्चेत्यनन्तरपर्याप्तकाः। प्रथमसमयपर्याप्तकेषु नैरयिकादिषु, ठा० १० ठा०।

अणंतरपच्छाकड- त्रि० *[अनन्तरपश्चात्कृत]*
अनन्तरं व्यवधानेन पश्चात्कृतो, चंद०८ पाहु० ।सूर० ८ पाहु०।

अणंतरपरंपरअणिग्गय- पुं० *[अनन्तरपरम्परानिर्गत]*
प्रथमसमयान्निर्गतेषु, ये हि नरकादुद्वृत्ताः सन्तो विग्रहगतौ वर्तन्ते, न तावदुत्पादक्षेत्रमासादयन्ति, तेषामनन्तरभावेन परस्परभावेन चोत्पादक्षेत्राप्राप्तत्वेन निश्चयेनाऽनिर्गतत्वात्। भग० १४ श० १ उ०।

अणंतरपरंपरअणुववण्णग- पुं० *[अनन्तरपरम्परानुपपन्नक]*
अनन्तरमव०धानं परम्परं च द्वित्र्यादिसमयरूपमविद्यमानम् उपपन्नमुत्पादो येषां ते तथा। विग्रहगतिकेषु, विग्रहगतौ हि द्विविधस्याप्युत्पादस्याविद्यमानत्वादिति। भग०१४ श०१उ०।

अणंतरपरंपरखेदाणुववण्णग- पुं० *[अनन्तरपरम्परखेदानुपपन्नक]*
अनन्तरं परम्परं खेदेन नास्ति उपपन्नकं येषां ते तथा। विग्रहगतिवर्तिषु, भग०१४ श०१ उ०।

अणंतरपुरक्खड- त्रि० *[अनन्तरपुरस्कृत]*
स्वाव्यवहितोत्तरवर्तिनि, 'अणंतरपुरक्खडे कालसमयंसि' अनन्तरमव्यवधानेन पुरस्कृतोऽग्रे कृतो यः सोऽनन्तर पुरस्कृतः अनन्तरं द्वितीय इत्यर्थः। सूर० ८ पाहु०। चंद० ८ पाहु०।

अणंतरबंध– त्रि० *[अनन्तरबन्ध]*
येषां पुद्गलानां बद्धानां सतामनन्तरः समयो वर्तते तेषामन - न्त रबन्धः। भग०।

अणंतरसमुदाणकिरिया- स्त्री० *[अनन्तरसमुदानक्रिया]*
नाऽस्त्यन्तरं व०धानं यस्याः सा अनन्तरा, अव्यवहिता। सा च समुदानक्रिया च। सम०।
प्रथमसमयवर्तिसमुदानक्रियायाम्, ठा० ३ ठा०२ उ०।

अणंतरसिद्ध- पुं० *[अनन्तरसिद्ध]*
न विद्यतेऽन्तरं व्यवधानमर्थात् समयेन येषां तेऽनन्तराः, ते च सिद्धाश्चान्तरसिद्धाः। सिद्धत्वप्रथमसमये वर्तमानेषु सिद्धेषु, पन्न०१ पद०। ठा०।

अणंतरहिय-१ त्रि० *[अनन्तरहित]*
अव्यवहिते। आचा० १ श्रु० ३ उ०।

अणंतरहिय-२ त्रि० *[अनन्तरहित]*
सचित्ते, आव० ३ अ०।
'जे भिक्खू माउग्गामस्स मेहुणवडियाए अणंतरहियाए पुढवीए णिसियावेज्ज वा' अनन्तरहितया,
अनंतरहिया नाम सचित्ता। निसि० ७ उ०।

अणंतरागम- पुं० *[अनन्तरागम]*
आगमभेदे, अर्थापेक्षया गणधराणामनन्तरागमः। सूत्रापेक्षया गणधरशिष्याणामनन्तरागमः। सूय० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

अणंतराहारग- पुं० *[अनन्तराहारक]*
अनन्तरानव्यवहितान् जीवप्रदेशैः आक्रान्ततया स्पृष्टतया वा पुद्गलानाहारयन्तीत्यन्तराहारकाः। जीवप्रदेशैः स्पृष्टानां पुद्गलानामहारकेषु नैरयिकादिषु, ठा० १० ठा०।
अनन्तरमुपपातक्षेत्रप्राप्तिसमयमेव आहारयन्तिइत्यनन्तराहाराः। पन्न० ३४ पद०।
प्रथमसमयाहारकेषु, ठा० १० ठा०।

अणंतरिय- त्रि० *[अनन्तरित]*
अव्यवहिते। विशे०।

अणंतरोगाढग- पुं० *[अनन्तरावगाढक]*
अनन्तरं संप्रत्येव समये क्वचिदाकाशदेशेऽवगाढा आश्रितास्त एवानन्तरावगाढकाः। प्रथमसमयावगाढकेषु विवक्षितं क्षेत्रं द्रव्यं वाऽपेक्ष्याव्यवधानेनाऽवगाढेषु नैरयिकादिजीवेषु, ठा०२ ठा० १ उ०।

अणंतरोववण्णग- पुं० *[अनन्तरोपपन्नक]*
न विद्यतेऽन्तरं व०धानमस्येत्यनन्तरः वर्तमानः समयः। तत्र उपपन्नकाः, ठा० १० ठा०।
न विद्यतेऽन्तरं समयादिव्यवधानमुपपन्ने उपपाते येषां ते अनन्तरोपपन्नकाः। प्रथमसमयोत्पन्नेषु, भग०१३ श०१ उ०।
येषामुत्पन्नानामेकोऽपि समयो नाऽतिक्रान्तस्ते। ठा०१० ठा०।
एकस्मादनन्तरमुत्पन्नेषु नैरयिकादिषु वैमानिकपर्यन्तेषु, ठा०२ ठा० २ उ०।
उपपत्तिप्रथमसमयवर्तिनः। प्रन्न० ।

अणंतवग्गभइय- त्रि० *[अनन्तवर्गभक्त]*
अनन्तवर्गापवर्तिते, । उव०।

अणंतवत्तियाणुप्पेहा- स्त्री० *[अनन्तवृत्तितानुप्रेक्षा]*
अनन्ता अत्यन्तं प्रभूता वृत्तिर्वर्तनं यस्यासावनन्तवृत्तिः, तस्या अनुप्रेक्षा अनन्तवृत्ताऽनुप्रेक्षा। भवसन्तानस्याऽनन्तवृत्तिताऽनुचिन्तनरूपायां शुक्लध्यानस्य प्रथमानुप्रेक्षायाम्, यथा- 'एस अणाई जीवो, संसारसागरो व्व दुत्तारो। नारयतिरियनरामरभवेसु परिहिंडए जीवो'। ठा० ४ ठा० १ उ०। उव०। भग०।

अणंतवत्तियाणुप्पेहा- स्त्री० *[अनन्तवर्तितानुप्रेक्षा]*
अनन्ततया वर्तते इति अनन्तवर्ती, तद्भावस्तत्ता, भवसन्तानस्य इति गम्यते, तस्या अनुप्रेक्षा।शुक्लध्यानभेदे । ठा० ४ ठा० १ उ०।

अणंतवीरिय- पुं० *[अनन्तवीर्य]*
जमदग्निभार्याया रेणुकायाः स्वसुः पत्यौ कार्तवीर्यपितरि, आव० चू०१ अ०। आव०म०।

अणंतसंसारिय- पुं० *[अनन्तसंसारिक]*
अनन्तश्चाऽसौ संसारश्चाऽनन्तसंसारः, सोऽस्याऽस्तीत्यन्तसंसारिकः । अपरिमितसंसारे, रा०।
नैरयिकादिवैमानिकपर्यन्तेषु, ठा०२ ठा०भ उ०।
अथ केनार्जितमनन्तसंसारित्वम् ? इति प्रश्ने उत्तरमाह–
जे पुण गुरुपडिणीया, बहुमोहा ससबला कुसीला य।
असमाहिणा मरंति उ, ते हुंति अणंतसंसारी।५६।
ये पुनः, गुणात्यभिधत्ते तत्त्वमिति गुरुः, तं प्रति, ज्ञानाद्यवर्णवादभाषणादिना प्रत्यनीकाः प्रतिकूलाः, तथा बहुमोहास्त्रिंशन्मोहनीयस्थानवर्तिनः, सह शबलैरेकविंशत्या शबलस्थानैर्वर्तन्ते ये ते सशबलाः, कुत्सितं शीलमाचारो येषां ते कुशीलाः। चः समुच्चये। एवंविधा येऽसमाधिनाऽऽर्तरौद्रभावे वर्त्तमाना म्रियन्ते, तेऽनन्तसंसारिणो भवन्तीति। आतु०।

अणंतसमयसिद्ध- पुं० *[अनन्तसमयसिद्ध]*
अनन्तेषु समयेषु एकैकसिद्धे, ठा० १ ठा० १ उ०।

अणंतसेण- पुं० *[अनन्तसेन]*
तृतीयायामवसर्पिण्यां जाते चतुर्थकुलकरे, सम०।
भद्रिलपुरवास्तव्यस्य नागगृहपतेः सुलसानाम्न्यां भार्यायां जाते पुत्रे, तत्कथा अन्तकृद्दशायास्तृतीये वर्गे द्वितीयाध्ययने सूचिता तत्रैव प्रथमाध्ययनोक्ताऽनीयस्येव भावनीया। अंत०।
अस्य द्वात्रिंशद्भार्याः, द्वात्रिंशत्क एव दानम्, विंशतिवर्षाणि पर्यायः चतुर्दशपूर्वाणि श्रुतम्, शत्रुञ्जये सिद्धिः। वस्तुतस्तु अयं वसुदेवदेवकीसुतः। अंत० ४ वर्ग।

अणंतसो- अव्य० *[अनन्तशस्]*
बहुवारमित्यर्थे, निरवधिककालमित्यर्थे।सूय०१श्रु०१अ०३उ० अनन्तशो निर्विच्छेदमिति वृत्तिकारः। सूय०१श्रु०१अ०२ उ०।

अणंतहियकामुय- त्रि० *[अनन्ताहितकामुक]*
मोक्षकामुके, दश० ९ अ०२ उ०।

अणंताणंत- त्रि० *[अनन्तानन्त]*
अनन्तेन गुणिता अनन्ताः। अनन्तगुणितेषु अनन्तेषु, भग० १४ श० २ उ०।

अणंताणुबंधि- पुं० *[अनन्तानुबन्धिन्]*
अनन्तं संसारं भवमनुबध्नाति अविच्छिन्नं करोतीत्येवंशीलोऽनन्तानुबन्धी।अनन्तो वाऽनुबन्धो यस्येत्यनन्तानुबन्धी। सम्यग् दर्शनसहभाविक्षमास्वरूपोपशमादिचरणलवनिबन्धिनिक्रोधादि कषाये, ठा० ४ ठा० १ उ०।

अणंतिय- न० *[अनन्तिक]*
अन्तिकमासन्नं तन्निषेधादनत्तिकम्, नञोऽल्पार्थत्वात्।अनासन्ने भग० ५ श० ४ उ०।

अणंदमाण- त्रि० *[अनन्दमत्]*
सौख्यमभुञ्जति, तं०।

अणंदिय- त्रि० *[अनन्दित]*
अधोलोकवासिन्यामष्टम्यां दिक्कुमार्याम्, आव०।

अणंध- पुं० *[अनन्ध]*
अन्धपुरनगरेश्वरे राज्ञि, बुह०४ उ०। निसि०।

अणंबिल- त्रि० *[अनाम्ल]*
स्वस्वादादचलिते, आचा० २ श्रु० १ अ० ७ उ०।
अनाम्लीभूते जीवितविप्रमुक्ते पानकादौ, निसि० १९ उ०।

अणंसुवाइ- पुं० *[अनश्रुपातिन्]*
न अश्रु पातयतीति मार्गादिखेदेष्वपि अनश्रुपातनशीले शुभाश्वादौ, जं अचंडपाडि अदंडपाडि अणंसुवाइ। जंबू० ३ वक्ष०।

अणकर- पुं० *[ऋणकर]*
ऋणं पापं करोतीति ऋणकरः। चतुर्विंशे गौणपाणातिपाते, पण्हा०१ अ०

अणक्क- पुं० *[अनक्ष]*
म्लेच्छभेदे, पण्हा०१ अ०

अणक्कभिण्ण- त्रि० *[अनासाभिन्न]*
अनस्तिते बलीवर्दादौ, 'अणिल्लंछिएहिं अणक्कभिण्णेहिं गोणेहिं तसपाणविवज्जिएहिं वित्तेहिं वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति'। भग०८ श०५ उ०।

अणक्खरसुय- न० *[अनक्षरश्रुत]*
क्ष्वेडितशिरःकम्पनादिनिमित्ते मामाह्वयति वारयति वेत्यादिरूपे अभिप्रायपरिज्ञानस्वरूपेऽक्षरश्रुतविपक्षभूते श्रुतभेदे। नं०।

अनगरहिय- त्रि० *[अगर्हित]* परममुनिभिरपि महापुरुषैः सेवितत्वात् सामायिके, आव०म०।

अणगार-१ पुं० [अनगार]

परित्यक्तद्रव्य-भावगृहे, नं० ।
सामान्यसाधौ, भग०१५ श०१ उ० ।
गृहरहिते, सूय०२ श्रु०१ अ० ।
त्यक्तगृहव्यापारे, आचा० २ श्रु० ६ अ० २ उ० ।
पुत्रदुहितृस्नुषाज्ञातिधात्र्यादिरहिते, आचा०१ श्रु०२ अ०५ उ० ।
भिक्षौ, ठा०६ ठा०१० उ० ।

अनगारी–यतिः, साधुः, तीर्थिकप्रव्रजिताः । आचा० ।आव० ।

न विद्यते अगारं–गृहं यस्यासौ साधुः । जीवा०

न विद्यते अगारं–गृहं द्रव्यतो भावतश्च यस्यासौ संयत । पन्न०
अगाः वृक्षास्तैर्निष्पन्नमगारं तन्न विद्यते त्यक्तगृहपाशः ।आचा०
भावितात्मा लब्धिसामर्थ्यात् । भग०
*कृताङ्गस्यैकविंशमध्ययनम् । उत्त०
(भगवति सूत्रे)चतुर्दशशतके नवमोद्देशकः । भग०
अनगारशब्दो व्युत्पन्नोऽव्युत्पन्नश्च । अव्युत्पन्नः साधौ, 'अनगारो मुनिर्मौनी, साधुः प्रव्रजितो व्रती । श्रमणः क्षपणश्चैव, यतिश्चैकार्थवाचकाः' इति । उत्त०
व्युत्पन्नोऽगारशब्दो द्विधाद्रव्यभावभेदात् । तत्र द्रव्यागारमगैर्द्रुमद्दषदादिभिर्निवृत्तम्, भावागारं पुनरगैर्विपाककालेऽपि जीवविपाकितया शरीरपुद्गलादिषु बहिःप्रवृत्तिरहितैरनन्तानुबन्ध्यादिभिर्निर्वृत्तं कषायमोहनीयम् । तत्र द्रव्यागारपक्षे नञ्-तु निषेधे । अविद्यमानगृहे, भावागारपक्षे त्वल्पकषाय मोहनीये, कषायमोहनीयं हि कर्म । न च कर्मणः स्थित्यादिभूयस्त्वे विरतिसम्भवः । यत आगमः- सत्तण्हं पयडीयं, अब्भिंतरओ य कोडकोडीए । काऊण सागराणं, जइ लहइ चउण्हमण्णयरं । इत्यादि । उत्त०१ अ० ।

अणगार-२ पुं० [ऋणकार]

ऋणमिव कलान्तरक्लेशानुभवहेतुतया ऋणमष्टप्रकारं कर्म, तत्करोतीति कोऽर्थः तथा तथा गुरुवचनविपरीत प्रवृत्तिभिः उपचिनोतीति ऋणकारः । दुःशिष्ये, उत्त० १ अ० ।

ऋणं–पापं करोतीति, प्राणवधस्य चतुर्विंशतितमः पर्यायः । । पण्हा० ।

अणगारगुण- पुं० [अनगारगुण]

साधोः व्रतषट्केन्द्रियाभिग्रहादिषु सप्तविंशतिगुणेषु, । उत्त० ३१ अ० ।

अणगारचरित्तधम्म- पुं० [अनगारचरित्रधर्म]

अगारं नास्ति येषां तेऽनगाराः साधवः, तेषां चारित्रधर्मः ।महाव्रतादिपालनरूपे चारित्रधर्मभेदे, अनगारेचरित्तधम्मे दुविहे पन्नत्ते । तं -सरागसंजमे, वीयरागसंजमे' । ठा०२ ठा०१ उ०

अणगारधम्म- पुं० [अनगारधर्म]

सर्वविरतिचारित्रे यतिधर्मे, उव० ।

अनगारधम्मो ताव इह खलु सव्वओ सव्वयाए मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइस्सं, सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं, मुसावाय-अदिन्नादाण-मेहुण-परिग्गह-राईभोअणाओ वेरमणं, अयमाउसो ! अनगार-सामइए धम्मे पन्नत्ते । एअस्स धम्मस्स सिक्खाए उवट्ठिए निग्गंथे वा निग्गंथी वा विहरमाणे आणाए आराहए भवति ।

अथाऽधिकृतवाचना- इह खलु इहैव मर्त्यलोके, सर्वतः द्रव्यतो भावतश्चेत्यर्थः । सर्वात्मना सर्वान् क्रोधादीनात्मपरिणामानाश्रित्येत्यर्थः । एते च मुण्डीभूत्वेत्यस्य विशेषणे, अनगारिता प्रव्रजितस्येत्यन्तस्य वा अयमायुष्मन् ! अनगाराणां समये सामाचारे, सिद्धान्ते वा भवोऽनगारसामयिको, अनगार-सामयिकं वा शिक्षायामभ्यासे आज्ञाया विहरन् आराधको भवति ज्ञानादीनाम् ।आज्ञाया जिनोपदेशस्याराधको भवतीति । उव०
साधुधर्ममाह– खंती य मद्दवऽज्जव, मुत्ती तवसंजमे अ बोधव्वे । सच्चं सोयं आकिंचणं च बंभं च जइधम्मो ।
क्षान्तिश्च, मार्दवम्, आर्जवम्, मुक्तिः तपःसंयमौ च बोद्धव्यौ, सत्यं, शौचम्, आकिञ्चन्यं, ब्रह्मचर्यं च यतिधर्म इति गाथाक्षरार्थः । दश० । निसि० ६ अ० ।

अणगारमग्गगइ- स्त्री० [अनगारमार्गगति]

सम्यग्दृष्टेः तत्प्रतिबन्धपरित्यागरूपेण निर्मुक्तस्य सम्यग्दर्शन-ज्ञान चारित्रेषु सिद्धिगतौ च । उत्त० ।

अणगारमहेसि- पुं० [अनगारमहर्षि]

अनगाराश्च ते महर्षयश्चेति ।अनगारगुणविशिष्टेषु महर्षिषु, सम०

अणगारवाइ- पुं० [अनगारवादिन्]

यतिवेषमास्थितेषु अनगारगुणरहितेषु अनगारमन्येषु शाक्यादिषु, आचा०१ श्रु० १ अ०२ उ० ।

अणगारसामाइय- त्रि० [अनगारसामायिक]

अनगाराणां समये भव इति । अनगाराणां सामाचारे सिद्धान्ते वा भवे, उव० । ठा० ।

अणगारसीह- पुं० [अनगारसिंह]

मुनिसिंहे, 'एवं थुणित्ताण स रायसीहं परमाइ' । उत्त०२० अ०

अणगारसुय- न० [अनगारश्रुत]

आचारश्रुतापरनामके *कृताङ्गस्य द्वितीयश्रुतस्कन्धे पञ्चमाऽध्ययने, सूय० ।

अणगारि- पुं० [अनगारिन्]

अगारी गृही असंयतस्तत्प्रतिषेधादनगारी । संयते, पण्हा० ।

अणगारिय- त्रि० *[अनगारिक]*

न विद्यते अगारं यस्येत्यनगारः साधुस्तस्येदमिति। अनगार-सम्बन्धिनि सर्वविरतिसामायकादौ, विशे०।

अनगारेषु—भावभिक्षुषु भवं अनुष्ठानम्। उत्त० ३३९।

अणगारिया- स्त्री० *[अनगारिता]*

अगारी गृही असंयतः, तत्प्रतिषेधादनगारी संयतः, तद्भावः तत्ता। साधुतायाम्, ठा०४ ठा०१ उ०।

अणगाल- पुं० *[अनगाल]*

दुष्काले, बुह० ३ उ०।

अणगिण- पुं० *[अनग्न]*

सुषमसुषमायां भरतवर्षे कर्मभूमिषु च सदा भवति। कल्पवृक्षभेदे, ।

अनग्नेषु कल्पपादपेषु अत्यर्थं बहुप्रकाराणि वस्त्राणि विश्रसात एवाऽतिसूक्ष्मसुकुमारदेवद्रुमाऽनुकाराणि मनोहराणि निर्मलानि उपजायन्ते। तं०। जीवा०।

अणग्घ- स्त्री० *[अनर्घ्य]*

सर्वोत्तमत्वादविद्यमानमूल्ये, आव०४ अ०।

अर्धगोचरातीते, संथा०।

अणच्चंतिय- पुं० *[अनात्यन्तिक]*

सहायिनं मुत्त्वाऽप्रतिनिवर्तिष्यति सहायभेदे, बुह० ४ उ०।

अणच्चक्खर- न० *[अनत्यक्षर]*

एकादिभिरक्षरैरधिकमत्यक्षरं, न तथा अनत्यक्षरम्।अनुओ०।

एकेनाप्यक्षरेणानधिके, आव०म०

अणच्चाविय- न० *[अनर्तित]*

वस्त्रमात्मानं वा न नर्त्तितं, न नृत्यवदिव कृतं यत्र तदनर्तितं प्रत्युपेक्षणम्। अप्रमादप्रत्युपेक्षणाभेदे, ठा०।

वस्त्रं नर्तयत्यात्मानं चेत्येवमिह चत्वारो भङ्गाः, वत्थे अप्पाणम्मि य चउहं अणच्चाविंयं। ठा० ६ ठा०१ उ०। उव०।

नच्चणं सरीरे वत्थे वा, सरीरे उक्कंपणं, वत्थे वि विकारा करेंति, ण णच्चाविंयं अणच्चाविंयं। निसि० ८ उ०

अणच्चासायणासील- पुं० *[अनत्याशातनाशील]*

अतीवायं सम्यक्त्वादिलाभं शातयति विनाशयति इत्याशातना, तस्याः शीलं तत्करणस्वभावात्मकमस्येत्याशातनाशीलः, न तथाऽनत्या शातनाशीलः गुरुपरिवारादिकृतिः। आचार्यादीनाम् अभक्तिनिन्दा हीलाऽवर्णवादाद्याशातनानिवारके,उत्त०२९ अ०

अणच्चासायणाविणय- पुं० *[अनत्याशातनाविनय]*

अत्याशातनं शातना, तन्निषेधरूपो विनयोऽनत्याशातना-विनयः। भग० २५ श०७ उ०।

दर्शनविनयभेदे, उव०।

अणज्ज- पुं० *[अनार्य]*

आराद् यातं सर्वहेयधर्मेभ्य इत्यार्यम्, न आर्यमनार्यम्। आव० ४ अ० ।

आर्येतरे, क्रूरे च। पण्हा०४ अ०

पापकर्मणि, पण्हा०२ अ०

अनार्य इवाऽनार्यः। म्लेच्छचेष्टिते, दश० १ चू०।

अनार्यलोककरणात्, पण्हा० १ अ०

अनार्यप्रयुक्ते, पण्हा० २ अ०।

अणज्ज- त्रि० *[अन्याय्य]*

अन्यायोपेते, पण्हा० १ अ०

अणज्जधम्म- पुं० *[अनार्यधर्म]*

अनार्याणामिव धर्मः स्वभावो येषां ते तथा, अनार्यकर्म-कारित्वात्। सूय० २ श्रु० ६ अ०।

क्रूरकर्मकारिषु, 'इच्चेवमाहंसु अणज्जधम्मं, अणारिया बाल-रसेसु गिद्धा'। सूय० २ श्रु० ६ अ०।

अणज्जभाव- पुं० *[अनार्यभाव]*

क्रोधादिमति पुरुषजाते, ठा० ४ ठा०२ उ०।

अणज्झोवण्ण- त्रि० *[अनध्युपपन्न]*

अमूर्च्छिते, आचा० २ श्रु० १ अ० १ उ०।

अणट्ठाकित्ति- त्रि० *[अनार्यकीर्ति]*

अनार्ता कीर्तिर्यस्य। सकलदोषविगमतोऽ बाधितकीर्तिके, 'तहेव विजओ राया अणट्ठाकित्तिपव्वए' आर्षत्वादनार्त आर्त-ध्यानविकलः। कीर्त्यादिनाऽनाथादिदानोच्छ्रया प्रसिद्धयोपल-क्षितः। उत्त० १८ अ०।

अणट्ठ-१ पुं० *[अनर्थ]*

अनर्थोऽप्रयोजनमनुपयोगो निष्कारणतेति पर्यायाः।अर्थस्याऽ-भावोऽनर्थः। अ०।

अप्रयोजने, आव० ६ अ०।

निष्प्रयोजने, निसि० १ उ०। सूय०।

अणट्ठ-२ पुं० *[अनर्थ]*

गुणहानौ, नाया० ९ अ०।

अणट्ठ- ३ पुं० *[अनर्थ]*

उपघाते, पण्हा०२ अ०। ठा०।

अणट्ठग- पुं० *[अनर्थक]*

अष्टाविंशे गौणपरिग्रहे, तस्य परमार्थवृत्त्या निरर्थकत्वात्। पण्हा० १ अ०।

अणट्ठकारग- त्रि० *[अनर्थकारक]*

पुरुषार्थोपघातके, पण्हा० २ अ०

आर्तध्यानरहिते, उत्त० २ अ०।

अणट्ठपडग- त्रि० *[अन्यार्थप्रकृत]*
साधुनिमित्ते निवर्तिते, अनट्ठं पगडं लेणं भइज्ज। दश० ८ अ०

अणट्ठादंड- पुं० *[अनर्थदण्ड]*
अर्थः प्रयोजनं गृहस्थस्य क्षेत्रवास्तुधनधान्यं शरीरपरिपालनादि विषयं, तदर्थ आरम्भो भूतोपमर्दोऽर्थदण्डः। दण्डो निग्रहो यातना विनाश इति पर्याया। अर्थेन प्रयोजनेन दण्डोऽर्थदण्डः, स चैवंभूत उपमर्दनलक्षनो दण्डः क्षेत्रादिप्रयोजनपेक्षमाणो-अर्थदण्ड उच्यते, तद्विपरीतोऽनर्थदण्डः आव० ४ अ०।
निष्प्रयोजनं हिंसादिकरणे, आतु०।
स च द्रव्यतः यदकारणे राजकुले दण्ड्यते।भावतस्तु निष्कारणं ज्ञानादीनां हानिः। बुह० १ उ०। आव०।

अणट्ठादंडवेरमण- न० *[अनर्थदण्डविरमण]*
अर्थः प्रयोजनम्, तत्प्रतिषेधोऽनर्थः, दण्ड्यते आत्माऽनेनेति दण्डो निग्रहः, अनर्थेन दण्डोऽनर्थदण्डः। इह लोकप्रयोजनम् अङ्गीकृत निष्प्रयोजन भूतोपमर्देनात्मनो निग्रहः इत्यर्थः। तस्मात्तस्य वा विरमणं विरतिः। तृतीये गुणव्रते, उपा०।

अणट्ठाबंधि- पुं० *[अनर्थबन्धिन्]*
पक्षमध्ये अनर्थकं निष्प्रयोजनमेकवारोपरि द्वौ त्रीन् चतुरो वा वारान् कम्बासु बन्धान् ददाति, चतुरुपरि बहूनि अट्टकानि वा बध्नाति, तथा च स्वाध्यायविघ्नपलिमन्थादयो दोषाः,यदि च ऐकाऽङ्गिकं चम्पकादि पदे लभ्यते, तदा तदेव ग्राह्यम्, बन्धन आदिपलिमन्थपरिहारात्। कल्प०।

अणणिप्पित्तु- अव्य० *[अनर्प्य]*
प्रतीपमनर्प्येत्यर्थे, अपडिहट्ठुमणणिप्पित्तु संपव्वए, अणणिप्पित्तु , न प्रतीपं अर्पयतीत्यर्थः। निसि० २ उ०।

अणणुओग- पुं० *[अननुयोग]*
अनुयोगविपर्यस्ते अननुरूपे योगे, विशे०।

अणणुचीइय- त्रि० *[अननुचित]*
शास्त्रानुज्ञाते, जो तु अकारणसेवा, सा सव्वा अणणुचीयातो होंति, जा अकारणतो पडिसेवा गुणदोसे अचिंतिऊ न सा अणणुचीति। निसि० १ उ०।

अणणुपालण- न० *[अननुपालन]*
अनासेवने, आव० ६ अ०।
'पोसहोववासस्स सम्ममणणुपालणया' पोषधोपवासातिचारः। उपा० १ अ०।

अणणुवाइ- त्रि० *[अननुपातिन्]*
सिद्धान्तेन सहाऽघटमानके, वव० १ उ०।

अणणुसासणा- स्त्री० *[अननुशासना]*
शिक्षाया अभावे, नाया० १ श्रु० १३ अ०।

अणण्ण- त्रि० *[अनन्य]*
अभिन्ने, विशे०।
'अणण्णं अभिण्णं' अपृथगित्यर्थः। निसि० १ उ०।
मोक्षमार्गादन्योऽसंयमः, नाऽन्योऽनन्यः। ज्ञानादौ, अणण्णं चरमाणे से न छण्णे, न छणावए।आचा०१श्रु०३अ०२उ०।

अणण्णणेय- त्रि० *[अनन्यनेय]*
अन्येन नेत्राऽनेतव्ये, 'णेतारो अन्नेसि अणन्नणेया बुद्धाहु ते अंतकडा हवंति' न च स्वयं बुद्धत्वादन्येन नीयन्ते तत्त्वावबोधं कार्यन्ते इत्यनन्यनेयाः, हिताहितप्राप्तिपरिहारं प्रति नान्यस्तेषां नेता विद्यत इति भावः। सूय० १ श्रु० १२ अ०।

अणण्णदंसि- पुं० *[अनन्यदर्शिन्]*
अन्यद् द्रष्टुं शीलमस्येत्यन्यदर्शी यस्तथा० नासावनन्यदर्शी। यथावस्थितपदार्थद्रष्टरि, आचा० १ श्रु०२ अ०१ उ०।

अणण्णपरम- पुं० *[अनन्यपरम]*
न विद्यतेऽन्यः परमः प्रधानो यस्मादित्यनन्यपरमः। संयमे, । आचा०१ श्रु० ३ अ० ३ उ०।

अणण्णमण- त्रि० *[अनन्यमनस्]*
न विद्यते अन्यद् धर्मध्यानलक्षणात् मनो यस्य सोऽनन्यमनाः। एकाग्रचित्ते, संथा०। भगवन्मनसि, उव०।

अणण्णहावाइ- पुं० *[अनन्यथावादिन्]*
सत्यवक्तरि, 'अणुवकयपराणुग्गहपरायणा जं जिणा जगप्पवरा। जिअरागदोसमोहा, अनन्नहावाइनो तेण।१ ।आव०४ अ०

अणण्णाराम- त्रि० *[अनन्याराम]*
मोक्षमार्गादन्यत्रारममाणं, आचा० १ श्रु०२ अ०१ उ०।

अणण्हय- पुं० *[अनाश्रव]*
नवकर्माऽनादाने, पण्हा०१ अ० ठा०।

अणण्हयकर- पुं० *[अनाश्रवकर]*
प्राणातिपाताद्याश्रवकरणरहिते पञ्चमे प्रशस्तमनोविनयभेदे, भग०२५ श०७ उ०। ठा०।

अणण्हयत्त- न० *[अनंहस्कत्व]*
न विद्यते अंहः पापं यस्मिन् तत् अनंहस्कम्, तस्य भावोऽनंहस्कत्वम्। अविद्यमानकर्मत्वे। उत्त०१ अ०।

अणतिक्कमणिज्ज- त्रि० *[अनतिक्रमणीय]*
अचालनीये, भग०२ श०५ उ०। दश०।

अणतिक्कमणिज्जवयण- त्रि० *[अनतिक्रमणीयवचन]*
अनतिक्रमणीयं वचनं येषां ते। वचनानतिक्रामकेषु, 'अम्मापिऊ णं अणइ-क्कमणिज्जवयणा' अम्बापित्रोः सत्कमनतिक्रमणीयं वचनं येषां ते तथा। उव०।

अणतिवाइ- पुं० *[अनतिपातिन्]*
अतिपतनमतिपातः प्रास्युपमर्दनं,तद्विद्यते यस्यासावतिपातिकः तत्प्रतिषेधादनतिपातिकः। अहिंसके, सूय० २ श्रु० १ अ०।

अणतिविलंबियत्त- न० *[अनतिविलम्बितत्व]*
अतिविलम्बराहित्यरूपे वचनातिशये, उव०।

अणत्त-१ पुं० स्त्री० *[ऋणार्त्त]*
राजादीनां हिरण्यादिकधारके, गच्छा०१ अधि०।
ऋणपीडिते, ठा० ३ ठा०४ उ०।

अणत्त-२ पुं० स्त्री० *[ऋणार्त्त]*
स न दीक्षणीयः। पंच०भा०। पंच०चू०।

अणत्त- ३ *[अनात्त]*
अपरिगृहीते, ठा०।

अणत्तट्ठिय- त्रि० *[अनात्मार्थिक]*
नात्मार्थ एव यस्यास्त्यसावनात्मर्थिकः। परमार्थकारिणि। पण्हा० १ अ०।

अणत्तपण्ण- त्रि० *[अनात्मप्रज्ञ]*
नात्मने हिताय प्रज्ञा येषां ते अनात्मप्रज्ञाः। व्यर्थबुद्धिषु, 'एगे विसीयमाणे अणत्तपण्णे'। आचा०१ श्रु० ५ अ० ६ उ०।

अणत्तव- त्रि० *[अनात्मवत्]*
अकषायो ह्यात्मा भवति, स्वस्वरूपावस्थितत्वात्, तद्वान्न भवति यः सोऽनात्मवान्। सकषाये, ठा० ६ ठा०।

अणत्थ- पुं० *[अनर्थ]*
अनर्थहेतुत्वाद् गौणे एकविंशे परिग्रहे, परमार्थवृत्या निरर्थकः, परिग्रहस्याष्टाविंशतितमं नाम। पण्हा० ५ अ०

अणत्थकारग- त्रि० *[अनर्थकारक]*
पुरुषार्थोपघातकारके, पण्हा० ३ अ०

अणत्थंतर- न० *[अनर्थान्तर]*
अन्योऽर्थोऽर्थान्तरम्, न विद्यतेऽर्थान्तरं यस्य पर्याये, एकार्थे शब्दे, 'योग्यमर्हमित्यनर्थान्तरम्'। आव०म०।

अणत्थगंथ- पुं० *[अनर्थग्रन्थ]*
भावधनयुक्ते, उव०।

अणत्थदंडज्झाण- न० *[अनर्थदण्डध्यान]*
अनर्थदण्डो निष्प्रयोजनं हिंसादिकरणं तस्य ध्यानम्। दुर्दान्त-मत्ततया द्वीपायनं रुष्टीकुर्वतां शाम्बादीनामिव, वक्रमण्डलीं सर्पविशेषरूपां घ्नतो गङ्गदत्तस्येव, विष्णुश्रीदेवीस्वर्गसंदेश-कथननिपुणस्य वा बालस्येव, ध्याने, आतु०।

अणत्थमियसंकप्प- पुं० *[अनस्तमितसंकल्प]*
अनस्तमिते सूर्ये संकल्पो भोजनाभिलाषो यस्य। अनिष्ट-रात्रिभोजने दिवाभोजिनि, बुह०१ उ०।

अणत्थवाय- पुं० *[अनर्थवाद]*
निष्प्रयोजने जल्पे, पण्हा०२ अ०।

अणत्थादंड- पुं० *[अनर्थदण्ड]*
निष्प्रयोजनहिंसाकरणे,आतु०।'अणट्ठाडंड' शब्दे अस्य विवृतिः

अणत्थादंडवेरमण- न० *[अनर्थदण्डविरमण]*
तृतीये गुणव्रते, उवा०।(अणट्ठदंडवेरमण' शब्देऽस्य विस्तरः)

अणधारग- पुं० *[ऋणधारक]*
ऋणं व्यवहारकदेयं द्रव्यं, तद् यो धारयति। अधमर्णे, नाया०१७ अ०

अणपज्ज- त्रि० *[अनात्मज्ञ]*
अनात्मवशे ग्रहगृहीते, क्षिप्त-चित्तादौ च। निसि० १ उ०।

अणद्ध- त्रि० *[अनर्द्ध]*
न विद्यतेऽर्द्धं येषामित्यनर्धाः। निर्विभागेषु, 'समयः प्रदेशः परमाणव एते अनर्धाः'। ठा० ३ ठा०२ उ०।

अणपन्निय- पुं० *[अप्रज्ञप्तिक]*
व्यन्तरनिकायोपरिवर्तिनि व्यन्तरभेदे, पण्हा० १ अ०। ठा०। उव०।

अणप्पगंथ- त्रि० *[अनर्प्यग्रन्थ]*
अनर्प्योऽनर्पणीयोऽढौकनीयः परेषामाध्यात्मिकत्वाद् ग्रन्थवद् द्रव्यवत् ग्रन्थो ज्ञानादिर्यस्य सोऽनर्प्यग्रन्थ इति। परेभ्योऽ-दातव्यज्ञानादिके, ठा० ९ ठा०।

अणप्पगंथ- त्रि० *[अनल्पग्रन्थ]*
बह्वागमे, उव०।

अणप्पगंथ- त्रि० *[अनात्मग्रन्थ]*
अविद्यमानो वा आत्मनः सम्बन्धी ग्रन्थो हिरण्यादिर्यस्य। अपरिग्रहे, उव०। सूय०।

अणप्पिय- न० *[अनर्पित]*
अवशेषिते, यथा जीवद्रव्यं संसारी, संसार्यपि त्रसरूपं, त्रसरूपमपि पञ्चेन्द्रियं, तदपि नररूपमित्यादि तु अर्पितं विशेषितं विशेषः। ठा० १० ठा०।

अणप्पियणय- पुं० *[अनर्पितनय]*
अनर्पितमविशेषितं सामान्यमुच्यते, तद्वादी नयोऽनर्पितनयः सामान्यमेवास्ति न विशेष इत्येवं वादिनि आगमप्रसिद्धे नयभेदे, विशे०। आव०चू०।

अणबल- पुं० *[ऋणबल]*
ऋणे ग्रहीतव्ये बलं यस्येति। बलवत्युत्तमर्णे, पण्हा०२ अ०

अणबलभणिय- पुं० *[ऋणबलभणित]*
उत्तमर्णेनाऽस्मद् द्रव्यं देहीत्येवमभिहिते अधमर्णे, पण्हा० २

अणब्भय- त्रि० *[अनभ्रक]*
अभ्रकरहिते, तं०।

अणब्भुवगय- त्रि० *[अनभ्युपगत]*
श्रुतसंपदानुपसंपन्ने अनिवेदितात्मनि, आव०म०।

अणभंजग- पुं० *[ऋणभञ्जक]*
ऋणं देयं द्रव्यं भञ्जन्ति, न ददति ये ते। उत्तमर्णेभ्य ऋणं गृहीत्वाऽदायकेषु, पण्हा० ३ अ०

अणभिओग- पुं० *[अनभियोग]*
न अभियोगोऽनभियोगः। अनभियोक्तव्ये, उव०।

अणभिक्कंत- त्रि० *[अनभिक्रान्त]*
न अभिक्रान्तो जीवितादनभिक्रान्त इति। सचेतने, आचा०२ श्रु० १ अ० १ उ०।
अनतिलङ्घिते, आचा० १ श्रु० ४ अ० ४ उ०।
अन्यैरनभिक्रान्तायामपरिभुक्तायां दोषविशेषविशिष्टायां वसतौ। गच्छा०१ अधि०। आचा०।

अणभिक्कंतकिरिया- स्त्री० *[अनभिक्रान्तक्रिया]*
चरकादिभिरनवसवितपूर्वायां वसतौ, सा चानभिक्रान्तत्वादेव अकल्पनीया। आचा०२ श्रु०२ अ०२ उ०।

अणभिक्कंतसंजोग- पुं० *[अनभिक्रान्तसंयोग]*
अनभिक्रान्तोऽनतिलङ्घितः संयोगो धनधान्यहिरण्यपुत्रकलत्र आदि कृतोऽसंयमसंयोगो वा येनाऽसावनभिक्रान्तसंयोगः। परिग्रहग्रस्तेऽसंयते, आचा० १ श्रु० १ अ० ४ उ०।

अणभिगम- पुं० *[अनभिगम]*
विस्तरबोधाभावे, भग० २ श० १ उ०।

अणभिग्गहिय- न० *[अनभिग्रहिक]*
अभिग्रहः कुमतपरिग्रहः, स यत्रास्ति तदभिग्रहिकं, तद्विपरीतमनमभिग्रहिकम्। मिथ्यात्वभेदे, ठा० २ ठा० १ उ०।
'अणभिग्गहियमिच्छादंसे दुविहे पन्नत्ते। तं जहा-सपज्जवसिए चेव, अपज्जवसिए चेव' अनभिग्रहिकं भव्यस्य सपर्यवसितमितरस्यापर्यवसितमिति। ठा० २ ठा० १ उ०।
न विद्यते आभिमुख्येनोपादेयतयागृहीतं ग्रहणमस्येत्यनभिगृहीतः। पन्न०
आभिमुख्येन गृहीतं ग्रहणं–ज्ञानमस्येत्यनभिगृहीतः, उत्त० ५

अणभिग्गहिय- पुं० *[अनभिग्रहित]*
अभिग्रहिकमिथ्यात्वरहिते, बुह० १ उव।

अणभिग्गहियकु दिट्ठि- पुं० *[अनभिगृहीतकु दृष्टि]*
अनभिगृहीता अनङ्गीकृता कुदृष्टिर्बौद्धमतादिरूपा येन सोऽनभिगृहीतकुदृष्टिः। संक्षेपरुचौ, येन मिथ्यात्विनां कुमतमङ्गीकृतं नाऽस्तीत्यर्थः। उत्त० २८ अ०।

अणभिग्गहियसिज्जासणिय- पुं० *[अनभिगृहीतशय्याऽऽसनिक]*
न अभिगृहीते शय्यासने येन सोऽनभिगृहीतशय्यासनिकः। शय्यासनविषयकाऽभिग्रहरहिते, 'नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा अणभिग्गहियसिज्जासणिएणं हुत्तए'। कल्प०।

अणभिग्गहीयपुण्णपाव- त्रि० *[अनभिगृहीतपुण्यपाप]*
अनधिगतपुण्यपापे, अविदितपुण्यपापकर्महेतौ च। पण्हा० २

अणभिग्गहिया- स्त्री० *[अनभिगृहीता]*
अर्थाऽनभिग्रहेण डित्थादिवदुच्यमानायां भाषायाम्, 'अणभिग्गहिया भासा, भासा य अभिग्गहं निबोधव्वा'। भग० १० श० ३ उ०।

अणभिप्पेय- पुं० *[अनभिप्रेत]*
अनभिप्रेताऽर्थविषये संयोगे, उत्त० १ अ०।

अणभिभूय- त्रि० *[अनभिभूत]*
नाभिभूतोऽनभिभूतः। अनुकूल प्रतिकूलोपसर्गैः परतीर्थिकैर्वा अजाताऽभिभवे, आचा०१ श्रु०२ अ०।

अणभिय- पुं० *[अनभीत]*
अणति गच्छति तास तासु योनिषु जीवोऽनेनेत्यणं पापं, तस्माद् भीतः। असावद्ययोगे, आव०म०।

अणभिलप्प- त्रि० *[अनभिलाप्य]*
प्रज्ञापनायोगे, आव०म०।
'पण्णवणिज्जा भावा, अणंतभागो उ अणभिलप्पाणं'। सूय०१ श्रु०१ अ०१ उ०। आव०चू०।

अणभिहिय- न० *[अनभिहित]*
आत्मन् एवेच्छयाऽभणितलक्षणे, बुह० १ उ०।
स्वसिद्धान्तानुपदिष्टरूपे *दोषभेदे, यथा सप्तमः पदार्थो वैशेषिकस्य, प्रकृतिपुरुषाऽभ्यधिकं वा साङ्ख्यस्य, दुःखं समुदायमार्गनिरोधलक्षणं, चतुरार्यस्यादानातिरिक्तं वा बौद्धस्येत्यादि । अनुओ०। आव० म०। विशे०।

अणराय- न० *[अराजक]*
राज्ञोऽभावे, प्राक्तनस्य राज्ञो मरणे संजाते सति यावदद्याऽपि राजा युवराजश्चैतो द्वावपि नाऽभिषिक्तौ तावदराजकं भण्यते, बुह० १ उ०।

अणरिक्क- न० *[देशी]*
दधिक्षीरादौ, निसि० १६ उ०।

अणल- पुं० *[अनल]*
नाऽस्ति अलः पर्याप्तिर्यस्य, बहुदाह्यदहनेऽपि तृप्तेरभावात्। वह्नौ, अनलदैवतत्वात् कृत्तिकानक्षत्रे, चित्रकवृक्षे ।तस्य सर्वतः पर्याप्तत्वेऽपि पर्याप्तेः सीमाभावात्तत्वम्। भल्लातके वृक्षे च। पण्हा०। ठा०। आव०।

न अलोऽनलः। अप्रत्यले अपर्याप्ते अयोग्ये, निसि० ११ उ०।
असमर्थे, आव०म०।
अपर्याप्ताः, दीक्षापालनेऽसमर्थाः। बृह०
अनलमित्यस्य-
कामं खलु अलसद्दो, तिविहो पज्जत्तहिं पगतं।
अणलो अपच्चलो त्ति य, होंति अजोगो व एगट्ठा।२२१ ।
चोदक आह- ननु अलशब्दः त्रिष्वर्थेषु दृष्टः, तद्यथा-पर्याप्ते, भूषणे, वारणे च।
आचार्य आह- यद्यपि त्रिष्वप्यर्थेषु दृष्टः तथापि अर्थवशादत्र पर्याप्ते द्रष्टव्यः, न अलोऽनलः, अपश्चलः अयोग्यश्च एते एकार्थाः। निसि० ११ उ०।

अणलंकिय- त्रि०*[अनलङ्कृत]*
मुकुटादिभिरधिभूषिते, भग० २ श०१ उ०।

अणलंकियतिभूसिय- त्रि०*[अनलङ्कृतविभूषित]*
अलङ्कृतं मुकुटादिभिः, विभूषितं वस्त्रादिभिः, तन्निषेधादनलङ्कृतं अविभूषितम्। मुकुटादिभिर्वस्त्रादिभिर्वा शोभामप्रापिते, भग० २ श० १ उ०।

अणलगिरि- पुं०*[अनलगिरि]*
चण्डप्रद्योतभूपतेर्हस्तिरत्ने, उत्त० ९ अ०

अणलस- त्रि०*[अनलस]*
उत्साहवति, दश० १ अ०।

अणलाणिलतणवणस्सइगणणिस्सिय- त्रि०*[अनलानिलतृणवनस्पतिगणनिःश्रित]*
अनलस्तेजस्कायोऽनिलो वायुकायस्तृणवनस्पतिगनोबादरवनस्पतीनां समुदायः, एतन्निःश्रिता। तेजस्कायाद्युपजीवकेषु त्रसेषु, पण्हा० १ अ०

अणलिय- न०*[अनलीक]*
सत्ये, बुह० १ उ०।

अणल्लियणिज्ज- त्रि०*[देशी]*
अनाश्रयणीये अयोग्ये,'विसवल्लीअणल्लियणिज्जाओ'स्त्रियः विषवल्लीवद् हालाहल विषलतावत् अनाश्रयणीयाः सर्वथा सङ्गादिकर्तुमयोग्याः, तत्कालप्राणप्रयाणहेतुत्वात्। पर्वतकस्य राज्ञो नन्दपुत्रीविषकन्यावत्। तं०।

अणव-१ पुं० *[ऋणवत्]*
दिवसस्य षड्विंशे लोकोत्तरमुहूर्त्ते, कल्प०। चंद०। सूर० ।

अणव-२ पुं० *[ऋणवत्]*
ऋणवान्। सूर्य० ।जम्बू० ।

अणवकंखमाण- त्रि०*[अनवकाङ्क्षत्]*
विहर्तुमिच्छति, कल्प०। ठा०

अणवकंखवत्तिया- स्त्री०*[अनवकाङ्क्षप्रत्यया]*
अनवकाङ्क्षा स्वशरीराद्यनपेक्षत्वं सैव प्रत्ययो यस्याः साऽनवकाङ्क्षप्रत्यया इहलोकपरलोकाऽपायाऽनपेक्षस्य क्रियाभेदे, । ठा० २ ठा० १ उ०।
अनवकाङ्क्षाप्रत्ययिकी, विंशतिक्रियामध्ये पञ्चदशी। आव०
अनवकांक्षा–स्वशरीराद्यनपेक्षत्वं सैव प्रत्ययो यस्याः । ठा०
अणवकंखवत्तिया किरिया दुविहा पण्णता। आयशरीरअणवकंखवत्तिया चेव, परसरीरअणवकंखवत्तिया चेव। तत्रात्मशरीरानवकाङ्क्षप्रत्यया सा स्वशरीरक्षतिकारिकर्माणि कुर्वतः, तथा परशरीरक्षतिकराणि कुर्वतो द्वितीयेति। ठा०२ ठा०१ उ०
'अणवकंखवत्तिया इहलोगे परलोगे य। इहलोगे अणवकंखवत्तिया लोगविरुद्धाणि वि चोरिक्कादीणि करेति, जेण वहबंधादीणि इहेव पावति, परलोगे अणवकंखवत्तिया अट्टरुद्दज्झाती इंदियपराभूतो हिंसादिकम्माणि करेमाणो परलोगं नाऽवकंखति'। आव०चू०४ अ०।

अणवकंखा- स्त्री०*[अनवकाङ्क्षा]*
अनाकाङ्क्षायां स्वशरीराद्यनपेक्षत्वे, ठा०१ ठा०१ उ०।

अणवगय- त्रि०*[अनवगत]*
अपरिज्ञाते, ठा० ४ ठा० ४ उ०।

अणवजुय- त्रि०*[अनवयुत]*
अपृथग्भूते, वव० ७ उ०।

अणवज्ज- न०*[अणवर्ज्य / अनवद्य]*
अवद्यं पापं, नाऽस्मिन् अवद्यमस्तीत्यनवद्यम्। सामायिके, विशे०। आव०चू०।
अनवद्यम्, सामायिकदशमपर्यायः। आव०
पापानुबन्धरहितम्। दश०
पीडानुत्पादके, अपापे वाक्ये। सूय० १ श्रु० ६अ०।
गुणविशेषविशिष्टे सूत्रे, अनवद्यमगर्ह्यमहिंसाप्रतिपादकम्। आव०म०। अनुओ०।
निर्दोषे, भग०५ श०६ उ०। उत्त०।
पापाभावे कर्मोपचयाभावे, सूय०१ श्रु०१ अ०२उ०।
कामादिपापव्यापाराप्ररूपके, विशे०।
सावद्ययोगप्रत्याख्यानात्मकत्वात्तस्य। आव०म०।
पावमवज्जं सामाइयं अपावं ति तो तदणवज्जं।
पावमणंति व जम्हा, वज्जिइ तेण तदसेसं।
अणशब्दस्य कुत्सितार्थत्वादणन्ति कुत्सितानि करणानि शब्दयन्ति, अणन्त्यनेनेति व्युत्पत्तेर्वा, अणं पापमुच्यते। तदशेषं सर्वमपि वर्ज्यते परिह्रियते यस्मात्तेन सामायिकेन अणं वर्जयतीति वा, ततः सामायिकमणवर्ज्यमुच्यते इति शेषः। विशे०

अणवज्जंगी- स्त्री० *[अनवद्याङ्गी]*
सुदर्शना(?)अपरनामिकायां भगवतो महावीरस्य दुहितरि जमालि गृहिण्याम्, विशे० । उत्त० ।

अणवज्जया- स्त्री० *[अणवर्ज्यता]*
अणस्य पापस्य वर्ज्योऽणवज्यः, तद्भावोऽणवर्ज्यता। संवरे, आव०म० ।

अणवट्ठ- पुं० *[अनवस्थ]*
अनवस्थाप्ये, वव०१ उ० ।

अणवट्ठप्प- न० *[अनवस्थाप्य]*
अवस्थाप्यत इत्यवस्थाप्यम्, तन्निषेधादनवस्थाप्यम्। दुष्टता-परिणामस्याऽकृततपोविशेषस्यव्रतानामनारोपणे,गच्छा० ।उव०

यो हि आसेविताऽतिचारविशेषः सन्ननाचरिततपोविशेषः, तद् दोषोपरतो महाव्रतेषु नाऽवस्थाप्यते नाऽधिक्रियते इति, तदतिचारजाते तच्छुद्धिरूपे,नवमे प्रायश्चित्ते च।
। ठा० ३ ठा० ४ उ० ।
यत्र प्रतिसेवते उत्थापनायामप्ययोग्यत्वेन यावदनाचीर्णतपाः पश्चाच्चीर्णतपाः पुनर्महाव्रतेषु स्थाप्यते तत्, अनवस्थापनीयाः जीत० । वव० ।

अणवट्ठप्पया- स्त्री० *[अनवस्थाप्यता]*
येन पुनः प्रतिसेवितेन उत्थापनाया अप्ययोग्यः सन् कञ्चित् कालं न व्रतेषु स्थाप्यते तदनवस्थाप्यताऽर्हत्वादनवस्थाप्यता प्रायश्चित्तम्।
यद्वा- यथोक्तं तपो यावन्न कृतं, तावन्न व्रतेषु लिङ्गे वाऽवस्थाप्यत इत्यनवस्थाप्यस्तस्य भावोऽनवस्थाप्यता। नवम प्रायश्चित्ते, आव० ।
हस्ततालादिप्रदानदोषादुष्टतरपरिणामत्वाद् व्रतेषु नावस्थाप्यते इति अनवस्थाप्यः, तद्भावः । आव० । ठा० ।

अणवट्ठप्पारिह- न० *[अनवस्थाप्यार्ह]*
नवमप्रायश्चित्ते, ठा० ।
यस्मिन्नासेविते कञ्चन कालं व्रतेष्वनवस्थाप्यं कृत्वा पश्चात् चीर्णतया तद्दोषोपरतो व्रतेषु स्थाप्यते तदनवस्थाप्याऽर्हम्। ठा०१० ठा० ।
कृततपसो व्रतारोपणम्। भग०

अणवट्ठप्पावत्ति- स्त्री० *[अनवस्थाप्यावर्त्ति]*
उपचारात्,अनवस्थाप्याख्यप्रायश्चित्तापत्तिकारिणीषु प्रतिसेवासु जीत० ।

अणवट्ठाण- न० *[अनवस्थान]*
सामायिककालाऽवधेरपूरणे यथा कथञ्चिद् वाऽनादृतस्य करणे, एष सामायिकस्य पञ्चमोऽतिचारः। उपा०१ अ० ।

अणवट्ठिय- त्रि० *[अनवस्थित]*
अनियतप्रमाणे, 'अणवट्ठित्ताणं तत्थ खलु राइंदिया पन्नत्ता'। चंद० ८ पाहु० । सूर० ८ पाहु० ।
अस्थिरे कल्पाऽनुयोगाश्रवणाऽनर्हभेदे, बुह० ।

अनवस्थितस्य अल्पकालीनस्य अनियतस्य सामायिकस्य करणमनवस्थितकरणमल्पकालकरणानन्तरमेवत्यजति, यथा-काञ्चिद् वा करोतीति भावः। उपा० १ अ० । आव० ।

अणवट्ठियचित्त- त्रि० *[अनवस्थितचित्त]*
एकत्र स्थापिताऽन्तःकरणत्वरहिते, निसि० १ उ० ।

अणवट्ठियसंठाण- न० *[अनवस्थितसंस्थान]*
सततचारप्रवृत्त्या सम्यगवस्थाने, जीवा० ३ प्रति० ।

अणवणीयत्त- न० *[अनपनीतत्व]*
कारककालवचनलिङ्गादिव्यत्ययरूपवचनदोषापेततारूपे पञ्च-विंशे सत्यवचनाऽतिशये, सम० ३५ सम० । रा० । उव० ।

अणवतप्पया- स्त्री० *[अनवत्राप्यता]*
अपतापयितुं लङ्घयितुमर्हः शक्यो वा अपत्राप्यो लङ्घनीय, न तथाऽनवत्राप्यस्तद्भावोऽनवत्राप्यता ।हीनसर्वाऽङ्गत्वे,उत्त०१ अ अलज्जनीयाऽङ्गतायाम्, ठा०८ ठा० ।

अणवत्था- स्त्री० *[अनवस्था]*
किञ्चिदकार्य कुर्वन्तं दृष्ट्वाऽन्येषामपि तथाकरणे, वव०७ उ० ।

अणवदग्ग-१ त्रि० *[अनवताग्र]*
अवनतमासन्नमग्रमन्तो यस्य तत्तथा। तन्निषेधादनवनताग्रम्, तदेव वर्णनाशादनवताग्रमिति। आसन्नाग्रे अनवगतमपरिछि-न्नम् अग्रं परिमाणं यस्य तत्तथा। अपरिछिन्नाऽन्ते, । भग० १ श० १ उ० ।

अणवदग्ग-२ त्रि० *[अनवदग्र]*
न विद्यतेऽवदग्रं पर्यन्तो यस्य सोऽयमनवदग्र इति। अपर्यन्ते अनन्ते, सूय० २श्रु० २अ० ।सम० । नाया० । भग० । पण्हा० ।
अपर्यवसाने, सूय०२ श्रु०५ अ० ।
अपरिमिते, निसि०२ उ० । सूय० । पण्हा० ।

अणवयक्खित्ता- अव्य० *[अनवेक्ष्य]*
पश्चाद् भागमनवलोक्येत्यर्थे, 'जे णं नो पभू मग्गओ रूवाइं अणवयक्खित्ताणं पासित्ताए' भग० ७ श०७ उ० ।

अणवयग्गं- *[देशी]*
अवयग्गं इति देशीवचनोऽन्तवाचकः, ततस्तन्निषेधादणवयग्गं अनन्ते, भग० १ श० १ उ० ।

अणवयमाण- त्रि० *[अनपवदत्]*
अपवदन् अन्यथैव व०स्थितं वस्त्वन्यथावदन्नपवदन्। न अप-वदन् अनपवदत्। मृषावादमकुर्वति, वव० ३ उ० ।

अणवरय- त्रि० *[अनवरत]*
अवरतं विरामस्तन्नाऽस्ति यस्य। बुह०।
निरन्तरे, कल्प०।
सतते, भग०९ श० ३३ उ० ।आचा० ।जंबू०।
सकलकाले, आव०म०।

अणविक्खिया- स्त्री० *[अनपेक्षता]*
शिक्षारहितत्वे, गच्छा०१ अधि०।

अणवेक्खमाण- त्रि० *[अनपेक्षमाण]*
शरीरनिरपेक्षे, 'धुणे उरालं अणुवेहमाणे, चिच्चाण सोयं अणवेक्खमाणे'। सूय०१ श्रु० १० अ०।

अणवेक्खा- स्त्री० *[अनपेक्षा]*
स्वपरविशेषाऽकरणे, वव० ३ उ०।

अणसण- न० *[अनशन]*
अश्यते, भुज्यते इत्यनशनम् ।अशेषाऽऽहारप्रत्याख्याने, उत्त०।
एकस्मादुपवासादारभ्य षाण्मासिकपर्यन्ते, उत्त० ३अ०।
आहारत्यागरूपे बाह्यतपोभेदे, ठा०६ ठा०। गच्छा०।
अपरिभोगे, सूय०१ श्रु०७ अ०।

अणसिय- त्रि० *[अनशित]*
न अशितोऽनशितः। अभुक्ते, । आव०म०।

अणह- त्रि० *[अनघ]*
नाऽधमस्याऽस्तीति अनघः ।निरवद्याऽनुष्ठायिनि, । सूय० १ श्रु० २ अ०२ उ०।
अपापे, आव०४ अ०।
निर्दोषे, उव०। पण्हा०।
अक्षते, सूर० २० पाहु०। चंद०२० पाहु०।

अणहबीय- पुं० *[अनघबीज]*
अविनष्टबीजे, बुह०४ उ०। निसि०।

अणहसमग्ग- त्रि० *[अनघसमग्र]*
अनघमक्षतं, न पुनरपाऽन्तराले केनाऽपि चोरादिना विलुप्तं समग्रं द्रव्यं भाण्डोपकरणादि यस्य स तथा। तस्करादिना-अलुण्ठितसर्वस्वे, चंद० २० पाहु०। सूर० २० पाहु०।
निर्दूषणे, अहीनपरिवारे, अनघत्वं निर्दूषणतया समग्रत्वमहीन-धनपरिवारतया। नाया०१ श्रु०८ अ०।

अणहिक्खट्ठ- पुं० *[अनधिखादनार्थ]*
अविषमसमुद्देशनार्थे, । बुह०१ उ०।

अणहिगय- त्रि० *[अनधिगत]*
अगीतार्थे, वव०१ उ०।
अनन्तरभाविनि, विशे०।
अविज्ञाते, वव०१ उ०।

अणहिगयपुण्णपाव- त्रि० *[अनधिगतपुण्यपाप]*
सूत्राऽर्थकथनेऽप्यविज्ञातपुण्यपापे, । वव० ४ उ०।

अणहिज्जमाण- त्रि० *[अनधीयमान]*
अपठति, 'ते विज्जमाणा अणहिज्जमाणा, आहंसु विज्जा परिमोक्खमेव'। सूय०१ श्रु० १२ अ०।

अणहियास- पुं० *[अनधिसह]*
असहिष्णौ, बुह०१ उ०।

अणहिलपाडगणयर- न० *[अनहिलपाटकनगर]*
भगवतीवृत्त्यन्ते-अष्टाविंशति युक्ते, वर्षसहस्रे शतेन चाभ्यधिके अणहिलपाटकनगरे, कृतेयमच्छुप्तधनिवसतौ। भग० ४२ श०

अणहीय- त्रि० *[अनधीत]*
अनभ्यस्ते, गच्छा०१ अधि०।

अणहीयपरमत्थ- पुं० *[अनधीतपरमार्थ]*
अनधीता अनभ्यस्ताः परमार्था आगमरहस्यानि यैस्तेऽनधीत परमार्थाः। अगीतार्थे, । गच्छा० १ अधि०।

अणाइ- त्रि० *[अनादि]*
न विद्यते आदिः प्राथम्यमस्येत्यनादिः। उत्त० १ अ०।
आदिविकले, उत्त०१ अ० ।आव०म०।
नाऽस्याऽऽदिरस्त्यनादिः। संसारे, सूय०२ श्रु०२ अ०।
आदिरहिते, ठा० ३ ठा०१ उ०।

अणाइज्जवयणपच्चायाय- त्रि० *[अनादेयवचनप्रत्याजात]*
अनादेये वचनप्रत्याजाते येषां ते तथा। अनुपादेयवचनजन्मसु, भग०७ श०६ उ०।

अणाइणिहण- त्रि० *[अनादिनिधन]*
अनाद्यपर्यवसिते, अनुत्पन्नशाश्वते च। आव० ४ अ०।

अणाइण्ण- त्रि० *[अनाचीर्ण]*
अनासेविते, महापुरुषैरनाचीर्णम्(नाऽऽचरणीयम्) बुह० १ उ०

अणाइय-१ त्रि० *[अज्ञातिक]*
अविद्यमानस्वजने, भग० १ श० १ उ०।

अणाइय-२ त्रि० *[अणातीत]*
अणमणकं पापमतिशयेन इतं गतम् अणातीतम्। पापं प्राप्ते, भग० १ श० १ उ०।

अणाइय-३ त्रि० *[अनादिक]*
अविद्यमानादिके, भग० १ श० १ उ०। ठा०।
नाऽस्याऽऽदिः प्रथमोत्पत्तिर्विद्यते इत्यनादिकः। चतुर्दशरज्ज्वात्मके लोके, धर्माऽधर्मादिके वा द्रव्ये, सूय०२ श्रु०५ अ०।

अणाइय-४ त्रि० *[ऋणातीत]*
ऋणमतीतम्, ऋणजन्यदुःस्थतानिमित्ततया संसारे। भग० १ श० १ उ० ।

अणाइल- त्रि० *[अनाविल]*

अकलुषे, यथा चाऽसौ सागरोऽनाविलोऽकलुषजल एवं भगवानपि तथाविधकर्मलेशाभावादकलुषज्ञान।सूय०१ श्रु०६ अ० यथाऽनाविलोऽकलुषो रागद्वेषाऽसंपृक्ततया मलरहितोऽनाकुलो वा, विषयाप्रवृत्तेः। सूय०१ श्रु०१५ अ०।

लाभादिनिरपेक्षे, 'अणालेइया अकसाइ भिक्खू' अनाविलो लोभादिनिरपेक्षः। सूय०१ श्रु०१४ अ०।

अदीनस्य चतुर्थं नाम। अंत०

अणाइसंजुत्तय- पुं० *[अनादिसंयुक्तक]*

न विद्यते आदिः प्राथम्यमस्येत्यनादिः। स चेह प्रक्रमात् संयोगस्तेन संमिते, इत्यागमाद्विभागाभावेन युक्तः श्लिष्टोऽनादिसंयुक्तः स एवानादिसंयुक्तकः। यद्वा- संयोगः संयुक्तस्ततो अनादिसंयुक्तमस्येत्यनादिसंयुक्तम्। कर्मणाऽनादिसंयोगसंयुक्ते जीवे, उत्त० १ अ०।

अणाइसंताण- पुं० *[अनादिसन्तान]*

अनादिप्रवाहके, उव०।

अनादिः सन्तानो यस्य कर्मबन्धनस्य तत् तथा।पण्हा०३अ०

अणाइसिद्धंत- पुं० *[अनादिसिद्धान्त]*

अमनमन्तो वाच्यवाचकरूपतया परिच्छेदोऽनादिसिद्धश्चासावन्तश्चाऽनादिसिद्धान्तः। अनादिकालादारभ्येदं वाचकमिदं तु वाच्यमित्येवं सिद्धे प्रतिष्ठिते परिच्छेदे, अनुओ०।

अणाउ- पुं० *[अनायुष्]*

न विद्यते चतुर्विधमप्यायुर्यस्य स भवत्यानायुः। दग्धकर्मबीजत्वेन पुनरुत्पत्तिविरहे जिने,। सूय०१ श्रु०६ अ०।

अपगतायुः कर्मणि सिद्धे,। सूय०१ श्रु०६ अ०।

जीवभेदे, ठा०२ ठा०१ उ०।

अणाउट्टी- पुं० *[अनाकुट्टी]*

आकुट्टनमाकुट्टः, स विद्यते यस्यासावाकुट्टी, नाऽऽकुट्टी अनाकुट्टी । अहिंसायाम्, आचा०१ श्रु०९अ०१ उ०।आव०म०। जाणं काएण णाउट्टी, अबुहो जं च हिंसति। पुट्ठो संवेदइ परं, अवियत्तं क्खु सावज्जं'।१ । सूय०१ श्रु०१ अ०२ उ०।

अणाउत्त- त्रि० *[अनायुक्त]*

अनाभोगवति अनुपयुक्ते, ठा०२ ठा०१ उ०। उत्त०।

असावधाने, उव०।

आलस्यभाजि प्रत्युपेक्षाऽनुपयुक्ते, उत्त०१७ अ०।

अणाउत्तआइणया- स्त्री० *[अनायुक्तादानता]*

अनायुक्तोऽनाभोगवाननुपयुक्त इत्यर्थः। तस्याऽऽदानता अनायुक्तादानता। अनायुक्तस्य वस्त्रादिविषये ग्रहणतायाम्, अनाभोगप्रत्ययक्रियाभेदे, ठा०२ ठा०१ उ०।

अणाउत्तपमज्जणया- स्त्री० *[अनायुक्तप्रमार्जनता]*

अनायुक्तस्य पात्रादिविषयप्रमार्जनतारूपे अनाभोगप्रत्ययक्रियाभेदे, इह द्वयोः शब्दयोः ताप्रत्ययः स्वार्थिकः। प्राकृतत्वेन अनादीनां भावविवक्षयैवेति। ठा० २ ठा० १ उ०।

अणाउल-१ त्रि० *[अनाकुल]*

समुद्रवन्नक्रादिभिः परीषहोपसर्गैरक्षुभ्यति, जत्थत्थमिए अणाउले, समविसमाइं मुणी हियासए। सूय०१ श्रु०२ अ०२ उ०। सूत्रार्थादनुत्तरति, 'सव्वे अणट्ठे परिवज्जयंते, अणाउलेया अकसाइ भिक्खू'। सूय०१ श्रु०१३ अ०।

गवंपि अणाउलो संवच्छरखमणंसि'। आव०म०। अंत०।

अणाउल-२ त्रि० *[अनाकुल]*

क्रोधादिरहिते, दश०१ अ०।

अणाउल- ३ त्रि० *[अनाकुल]*

औत्सुक्यरहिते, बुह० १ उ०।

अणाएस- पुं० *[अनादेश]*

आङिति मर्यादया विशेषरूपाऽनतिक्रमात्मिकया दिश्यते कथ्यते इत्यादेशो विशेषः, न आदेशोऽनादेशः। सामान्ये, उत्त० १ अ०।

अणागइ- स्त्री० *[अनागति]*

अनागमने, अशेषकर्मच्युतिरूपायां लोकाग्राऽऽकाशदेशस्थान रूपायां वा सिद्धौ, सूय० १ श्रु०१२ अ०।

अणागंता- अव्य० *[अनागत्य]*

आगमनमकृत्वेत्यर्थे, ठा० ३ ठा०२ उ०।

अणागत- त्रि० *[अनागत]*

न आगतोऽनागतः। वर्तमानत्वमप्राप्ते भविष्यति, । ठा० ३ ठा० ४ उ० ।

समयादौ पुद्गलपरावर्तान्ते काले भविष्यत्कालसम्बन्धि, सूय० अनागतमेष्यत्कामानिवृत्तानां नरकादियातनास्थानेषु महादुःख मपश्यन्तोऽपर्यालोचयन्तः। * ०१ श्रु० ३ अ०४ उ०।

अनागतानि च भवान्तरभावीनि सुखदुःखादीनि। अनागता भविष्यदनन्तकालभाविनः। सूय० १ श्रु० ११ अ०।

पर्युषणादावाचार्यादि-वैयावृत्यकरणान्तरायसद्भावादारत एव तत्तपःकरणम्। आव० ,ठा०।

अणागतकाल- पुं० *[अनागतकाल]*

विवक्षितं वर्तमान समयमवधीकृत्य भाविनि समयराशौ, ज्यो० १ पाहु०।

अणागतकालग्गहण- न० *[अनागतकालग्रहण]*

भविष्यत्कालगाह्यस्य वस्तुनः परिच्छेदात्मके विशेषदृष्टाऽनुमानभेदे, अनुओ०।

अणागम- पुं० *[अनागम]*

अनागमने, आचा०१ श्रु०२ अ० ३ उ०।

अपौरुषेयाऽऽदौ आगमे, आगमलक्षणविहीनत्वात् तस्य।

। ठा० १० ठा०।

अणागमणधम्म- त्रि० *[अनागमनधर्मन्]*

अनागमनं धर्मो येषां ते, यथाऽऽरोपितप्रतिज्ञाभारवाहित्वात्। न पुनर्गृहप्रत्यागमनेप्सुषु आचा० १ श्रु० ६ अ० २ उ०।

अणागयपच्चक्खाण- न० *[अनागतप्रत्याख्यान]*

प्रत्याख्यानभेदे भविष्यति प्रत्याख्याने, आव०।

अनागतकरणादनागत-पर्युषणादावाचार्यादि वैयावृत्त्यकरणा-न्तरायसद्भावाहारत एव तत् तत् तपःकरणे, ठा०।

अणागलिय- त्रि० *[अनर्गलित]*

अनिवारिते, भग० १५ श० १ उ०।

अणागलिय- त्रि० *[अनाकलित]*

अप्रमेये, भग०१५ श०१ उ०। उपा०।

अणागलियचंडतिव्वरोस- त्रि० *[अनर्गलितचण्डतीव्ररोष]*

अनिवारितचण्डतीव्रक्रोधे, भग०१५ श०१ उ०।

अणागलियचंडतिव्वरोस- त्रि० *[अनाकलितचण्डतीव्ररोष]*

अनाकलिताप्रमेय-चण्डतीव्रक्रोधे, अनागलियचंडतिव्वरोसं समुहत्तुरियं च वलं धम्मं तं दिट्ठिविसं सप्पं संघट्टेंति। भग० १५ श० १ उ०। उपा०। नाया०।

अणागाढ- त्रि० *[अनागाढ]*

अनभिगृहीतदर्शनविशेषे, बुह०१ उ०।

आगाढभिन्ने कारणे, वव० ३ उ०।

अथ किमिदमागाढं किं वा अनागाढम् ? अहिना सर्पेण दष्टः कश्चित्, विषं वा केनचिद् भक्तादिमिश्रं दत्तं, विसूचिका वा कस्यापि जता, सद्यः क्षयकारि वा कस्यापि शूलमुत्पन्नम्, एवमादिकमाशुघाति सर्वमप्यागाढम्। एतद् विपरीतं तु चिर घाति कुब्जादिरोगात्मकमनागाढम्। बुह० १ उ०। निसि०।

अनागाढे योगे भवे उत्तराध्ययनादौ श्रुते, निसि०४ उ०।

अणागार- न० *[अनाकार]*

अविद्यमाना आकारा महत्तराकाराऽऽदयो विच्छिन्नप्रयोजन-त्वात् प्रतिपत्तुर्यस्मिंस्तदनाकारम्। ठा० १० ठा०।

अविद्यमानाकारे प्रत्याख्यानभेदे, यद्विशिष्टप्रयोजनसम्भवाऽ-भावे कान्तारदुर्भिक्षादौ महत्तराद्याकारमनुच्चारयद्भिर्विधीयते तदनाकारमिति केवलमनाकारेऽपि अनाभोगसहसाऽऽकारा-वुच्चा रयितव्यावेव काष्ठाऽङ्गुल्यादेर्मुखे प्रक्षेपणतो भङ्गो मा भूदिति। अतोऽनाभोगसहसाकारपेक्षया सर्वदा साकारमेव। भग०७ श०२ उ०।

अणाजीव- पुं० *[अनाजीविक]*

निःस्पृहे। दश० ३ अ०।

'अगिलाइ अणाजीवे नायव्वो सो तवायारो'। गच्छा०१ ।

अणाजीवि- त्रि० *[अनाजीविन्]*

न आजीवी अनाजीवी। अनाशंसिनि, निसि०१ उ०।

अणाढायमाण- त्रि० *[अनाद्रियमाण]*

अनादरयति, आचा० २ श्रु० १ अ० २ उ०।

अणाढिय-१ न० *[अनादृत]*

अनादरे संभ्रमरहिते, आव० ३ अ०।

आदरः संभ्रमस्तत्करणमादृतता, सा यत्र न भवति, तदना-दृतमुच्यते। इत्येवंरूपे वन्दनदोषाणां प्रथमे दोषे, बुह० ३ उ०। आव०। आव०चू०।

आदृता आदरक्रियाविषयीकृताः, शेषा जम्बूद्वीपगता देवा येनाऽऽत्मना इति अद्भुतं महर्द्धिकत्वमीक्षमाणेन सोऽनादृतः। जीवा० ३ प्रति० ।

जम्बूद्वीपाधिपतिर्व्यन्तरसुरः। उत्त०।

अनादराद्या सा अनादृता, शिथिलस्य या सा। ठा०।

अणाढिय-२ न० *[अनादृत]*

अनादरेण वन्दने, एष वन्दनकस्य प्रथमदोषः। आव०चू० ३ अ०

अणाढिय- ३ पुं० *[अनर्द्धिक]*

जम्बूद्वीपाधिष्ठातृदेवे, उत्त० ११ अ०।

'जम्बूदीवाहिवई अणाढिओ'। जीवा०। ठा०।

अणाढिया- स्त्री० *[अनादृता]*

अनादृतादनादराद् या, सा अनादृता। नन्दिषेणस्येव अनादृतस्य वा शिथिलस्य या सा तथा। ठा० १० ठा०।

रोगनियए सदिक्खा अणाढिया रामकण्हपुव्वभवे। पंच०भा० । पंच०चू०।

अनादृतस्य जम्बू-द्वीपाऽधिपतेः राजधान्याम्, जीवा०३ प्रति०

अणाणा- स्त्री० *[अनाज्ञा]*

आज्ञाप्यते इत्याज्ञा, हिताऽहितप्राप्तिपरिहारतया सर्वज्ञोपदेशः तद्विपर्ययोऽनाज्ञा। तीर्थकराऽनुपदिष्टे स्वमनीषिकया आचरिते-ऽनाचारे, आचा०।

अणाणत्त- न० *[अनानात्व]*

भेदवर्जिते, ठा०१ ठा०।

नानात्ववर्जिताः देशभेदेनालक्षितनानात्वाः। पन्न०

नानात्ववर्जितायेष्वेवाधारभूताकाशप्रदेशेष्वेकेतेष्वेवतर। भग०

अणाणय- त्रि० *[अनाज्ञक]*

तीर्थकरोपदेशशून्ये स्वैरिणि, आचा०१ श्रु०२ अ०६ उ०।

अणाणुगामिय- त्रि० *[अनानुगामिक]*
न अनुगच्छति इति कालाऽन्तरमुपकारित्वेनाऽननुयातरि, । ठा० ५ ठा०१ उ० ।
अशुभाऽनुबन्धे, ठा०६ ठा० ।
न आनुगामिकमनानुगामिकम् । शृङ्खलाप्रतिबद्धप्रदीपसदृशे गच्छन्तमननुगच्छति अवधिज्ञानविशेषे, नं० ।

अणाणुगिद्ध- त्रि० *[अनानुगृद्ध]*
अनाशक्ते, 'से एसणं जाणमणेसणं च, अन्नस्स पाणस्स अणाणुगिद्धे' । सूय० १ श्रु० १३ अ० ।

अणाणुतावि- पुं० *[अनानुतापिन्]*
अपवादपदेन कायानामुपद्रवेऽपि कृते पश्चादनुतापरहिते, वव० २ उ० ।
हा ! दुष्ठु कृतमित्यादि पश्चात्तापमकुर्वति निःशङ्के, निर्दये च प्रवर्तमाने, बुह० ३ उ० ।

अणाणुपुव्वी- स्त्री० *[अनानुपूर्वी]*
न आनुपूर्वी, अनानुपूर्वी, आनुपूर्वीपश्चानुपूर्वीरूपप्रकारद्वयाऽतिरिक्तस्वरूपायामपरिपाटौ, अनुओ०

अणाणुबंधि- न० *[अननुबन्धिन्]*
नाऽनुबन्धोऽननुबन्धः, सोऽस्त्यस्मिन्निति । न विद्यतेऽनुबन्धः सातत्यं प्रस्फोटकादीनां यत्र तदनुबन्धि, इन् समासान्तोऽत्र दृश्यः । नाऽनुबन्धि अननुबन्धि । ठा० ६ ठा० ।
अप्रमादप्रत्युपेक्षणविधिभेदे, प्रत्युपेक्षणं च न निरन्तरमाखोटादि, किं तर्हि ? साऽन्तरं सविच्छेदमिति तत्त्वम् । उव० । निसि० । उत्त० ।

अणाणुवत्ति- त्रि० *[अननुवर्त्तिन्]*
प्रकृत्यैव निष्ठुरे, बुह०१ उ० ।

अणाणुवाइ- पुं० *[अननुवादिन्]*
वादिनोक्तं साधनमनुवदितुं शीलमस्येत्यनुवादी, तत्प्रतिषेधादननुवादी । व्याकुलमनस्त्वेनानुवादमपि कर्तुमशक्ते, 'से मुम्मुई होइ अणाणुवाई' । सूय० १ श्रु ०१२ अ० ।

अणाणुवीइत्तु- अव्य० *[अननुविचिन्त्य]*
पश्चादविचार्येत्यर्थे, सूय० १ श्रु० १२ अ० ।

अणातावय- त्रि० *[अनातापक]*
संस्तारकपात्रादीनामातपेऽदातरि, (साधौ) । कल्प० ।

अणातीय- पुं० *[अनातीत]*
आ समन्तादतीव इतो गतोऽनाद्यनन्तसंसारे आतीतः,न आतीतोऽनातीतः ।संसारार्णवपारगामिनि,आचा०१ श्रु०८अ०६ उ०

अणादि- त्रि० *[अनादि]*
प्रवाहापेक्षयाऽऽदिरहिते, उत्त० ४ अ० । आव०म० । भग० ।

अणादिट्ठी– स्त्री० *[अनादृष्टिः]*
अन्तकृद्दशानां तृतीयवर्गस्य त्रयोदशमध्ययनम् । अंत० ३ ।

अणादिय-१ पुं० *[अनादृत]*
जम्बूद्वीपाधिपतौ व्यन्तरसुरे,उत्त० १० अ० ।

अणादिय-२ पुं० *[अनादिक]*
नास्यादिः प्रथमोत्पत्तिर्विद्यते इत्यनादिकः । चतुर्दशरज्ज्वात्मके धर्माऽधर्माऽऽदिके वा द्रव्ये, सूय० २ श्रु०५ अ० ।
दोषविशेषे, बुह० ३ उ० ।
प्रवाहाऽपेक्षयाऽऽदिरहिते । पण्हा० १ अ० ।
**व्युत्पत्तिस्तु 'अणाढिय' शब्दे निरूपिता*

अणादिय-३ त्रि० *[अणादिक]*
अणं पापकर्म, आदिकारणं यस्य सोऽणादिकः । पापकार्ये, पण्हा०१ अ०

अणादिय- त्रि० *[अणातीत]*
अधमर्णेन देयद्रव्यमतिक्रान्ते, 'पंचविहो पन्नतो जिणेहि इह अण्हवो अणादियो' । पण्हा०१ अ०

अणापुच्छियचारि- पुं० *[अनापृच्छ्यचारिन्]*
गणमनापृच्छ्य चरति क्षेत्रान्तरसंक्रमादि करोतीत्येवंशीलोऽनापृच्छ्यचारी । नो आपृच्छ्य चारिणि, पञ्चमं विग्रहस्थानं प्राप्ते, ठा०१ ठा०१ उ० ।

अणाबाह- पुं० *[अनावाध]*
अवकाशे, बुह० ३ उ० ।
बाधावर्जिते, दश० ६ अ० ।
न विद्यते आबाधा जन्मजरामरणक्षुत्पिपासादिका यत्र तदनाबाधम् । स्वाभाविकबाधापगमतो मोक्षसुखे, ठा० १० ठा० ।
स्वाध्यायाद्यन्तरायकारणरहिते, उत्त० ३५ अ०
अनाबाधानिमित्तमनाबाधाकार्यम्, निमित्तशब्दः कार्यवाचकः तथा लोके वक्तारो भवन्ति-अनेन निमित्तेन, अनेन कारणेन मयेदं कार्यमारब्धमनेन कार्येणेत्यर्थः । आव०म० ।

अणाबाहसुहाभिकंखि- पुं० *[अनाबाधसुखाऽभिकाङ्क्षिन्]*
मोक्षसुखाऽभिलाषिणि, दश० १ अ० ।

अणाभोग- पुं० *[अनाभोग]*
अत्यन्तविस्मृतौ, आतु० । जीत० । निसि० । वव० ।
एकान्तविस्मृतौ, आव०चू०९ अ० ।
अज्ञाने, निसि०२ अ० ।
आभोगनमाभोगः, उपयोगविशेष इति । अनुपयोगे, आव० ४

अणाभोगझाण- न० *[अनाभोगध्यान]*
अनाभोगोऽत्यन्तविस्मृतिः तस्य ध्यानम् । विस्मृतव्रतप्रसन्नचन्द्रस्येव ध्याने, आतु० ।

अणाभोगकिरिया- स्त्री० *[अनाभोगक्रिया]*

अनाभोगप्रत्यये क्रियाभेदे, अनाभोगक्रिया द्विविधा- आदान-निक्षेपणाऽनाभोगक्रिया, उत्क्रमणाऽनाभोगक्रिया च। तत्राऽऽ-दानं रजोहरणपात्र चीवराकानामप्रत्युपेक्षिता, अप्रमार्जिताना-मनाभोगेनाऽऽदाननिक्षेपः। उत्क्रमणाऽनाभोगक्रियालङ्घनप्ल-वनधावनाऽसमीक्षागमनाऽऽगमनादि। आव०चू० ४ अ०।

अणाभोगणिव्वत्तिय- पुं० *[अनाभोगनिर्वर्तित]*

अज्ञाननिर्वर्तिते, ठा०।

अणाभोगपडिसेवणा- स्त्री० *[अनाभोगप्रतिसेवना]*

अनाभोगो विस्मृतिस्तत्र प्रतिसेवना। प्रतिसेवनाभेदे, । ठा० १० ठा० ।

अणाभोगवत्तिया- स्त्री० *[अनाभोगप्रत्यया]*

अनाभोगोऽज्ञानादि। अज्ञानं प्रत्ययो निमित्तं यस्याः सा तथा। ठा० २ ठा० १ उ०।

पात्राद्याददतो निक्षिपतो वा सम्भवति क्रियाभेदे, ठा० ५ ठा० २ उ०।

अणाभोगवत्तिया किरिया दुविहा पन्नत्ता। तं जहा -अणाउत्त-आयणया चेव, अणाउत्तपमज्जणया चेव। ठा० ५ ठा० २ उ०। आव०चू०। आव०।

अनाभोगप्रत्ययिकी, विंशतिक्रियामध्ये चतुर्दशी। आव०

अणामंतिय- अव्य० *[अनामन्त्र्य]*

अनापृच्छ्येत्यर्थे, आचा० २ श्रु० १ अ० ९ उ०।

अणामियावाही- पुं० *[अनामिकव्याधि]*

नामरहिते व्याधौ, अनामिको नामरहितो व्याधिरसाध्यरोगः, । तं० ।

अणायंबिल- त्रि० *[अनाचामाम्ल]*

आचामाम्लविरहिते, आव० ६ अ०।

अणायग- पुं० *[अनायक]*

न विद्यतेऽन्यो नायकोऽस्येत्यनायकः। स्वयंप्रभे चक्रवर्त्यादौ, सूय० १ श्रु० २ अ० २ उ०।

अणायग- त्रि० *[अज्ञातक]*

अस्वजने, निसि० ८ उ०।

अप्रज्ञापने, निसि०११ उ०।

अणाययण- न० *[अनायतन]*

न आयतनमनायतनम् ।अस्थाने,वेश्यासामंतादिरूपे। दश० १ साधूनामनाश्रये, पण्हा०४ अ०।

नाट्यशालायाम्, अश्वपतितजन्तुगुणशालायाम्, पंच०चू०।

पार्श्वस्थाद्यायतने, आव० ३ अ०।

पशुपण्डकसंसक्ते वा स्थाने। उव०।

अणाययणसेवण- न० *[अनायतनसेवन]*

पार्श्वस्थाद्यायतनभजने, आव० ३ अ०।

अणायरिय- पुं० *[अनार्य]*

आराद् याताः सर्वहेयधर्मेभ्य इत्यार्याः, तद्विपर्ययादनार्याः। क्रूरकर्मसु, आचा० १ श्रु०४ अ०२ उ०।

शकयवनादिदेशोद्भवेषु, सूय० २ श्रु०१ अ०।

अर्द्धषड्विंशजनपदबाह्यानि। आचा०

अणायस- त्रि० *[अनायस]*

अलोहमये, निसि० १ उ०।

अणाया- पुं० *[अनात्मन्]*

न आत्मा अनात्मा। घटादिपदार्थे, 'एगे अणाया' प्रदेशार्थ-तयाऽसंख्येयाऽनन्तप्रदेशोऽपि तथाविधैकपरिणामरूपद्रव्यार्था-पेक्षया एक एव, सन्तानापेक्षयाऽपि, तुल्यरूपापेक्षया तु अनु-पयोगलक्षणैकस्वभावयुक्तत्वात् कथञ्चिद्भिन्नस्वरूपाणामपि धर्माऽस्तिकायादीनामनात्मनामेकत्वमवसेयमिति ।सम०१ सम परस्मिंश्च 'अणायाए अवक्कमइ'। भग०१ श०४ उ०।

अणायाण- न० *[अनादान]*

अकारणे, अणायाणमेयं अभिग्गहियसिज्जासणियस्स। कल्प०

अणायार–१ पुं० *[अनाचार]*,

सावद्ययोगः। दश०

अणायार-२ पुं० *[अनाचार]*

आचरणमाचारः, आधाकर्मादिपरिहरणपरिष्ठापनरूपोऽनाचारो -ऽनाचारः। आधार्मादिग्रहणे, आतु०।

साध्वाचारस्य परिभोगतो ध्वंसे, वव० १ उ०। आव०।

शास्त्रविहितस्य व्यवहारस्याऽभावे, गच्छा० २ अधि०।

व्यभिचारः। आव०

अणायारज्झाण- न० *[अनाचारध्यान]*

न आचारोऽनाचारः। नञः कुत्सार्थत्वाद् दुष्टाचारस्य ध्यानम् अनाचारः। दुर्ध्याने, वल्लरदावं ध्यायतः कोङ्कणसाधोरिव, देवानामनागमनादुत्प्रव्रजितुकामस्यापाठसूरेरिव वा कुध्याने, आतु०

अणायावाइ- पुं० *[अनात्मवादिन्]*

आत्मानं वदितुंशीलमस्येति। यः पुनरेवंभूतमात्मानं नाऽभ्युप-गच्छति, सोऽनात्मवादी। आत्मानमनभ्युपगन्तरि नास्तिके, सर्वव्यापिनं नित्यं क्षणिकं वाऽऽत्मानमभ्युपगन्तरि, आचा०१ श्रु०१ अ०१ उ०।

अणायावि- पुं० *[अनातापिन्]*

न आतापयति। आतापनां शीतादिसहनरूपां करोतीत्यना-तापी। मन्दश्रद्धत्वापरीषहाऽसहिष्णौ, ठा० ५ ठा० २ उ०।

अणारंभ- पुं० *[अनारम्भ]*
जीवानुपघाते, भग०८ श०१ उ०।
जीवाऽनुपद्रवे, सत्तविहे अणारंभे पन्नत्ते। तं जहा-पुढवि-काइयअणारंभे जाव अजीवकायअणारंभे। ठा० ७ ठा०।
न विद्यते सावद्य आरम्भो येषां ते तथा। सावद्ययोगरहितेषु, 'अपरिग्गही अणारंभा, भिक्खू ताणं परिव्वए'। सूय० १ श्रु० १ अ० ४ उ०।

अणारंभजीवि- पुं० *[अनारम्भजीविन्]*
आरम्भः सावद्यानुष्ठानं प्रमत्तयोगो वा, तद्विपर्ययेण त्वनारम्भः, तेन जीवितुं शीलं येषां ते अनारम्भजीविनः। समस्तारम्भ निवृत्तेषु यतिषु, । आचा०।

अणारंभट्ठाण- न० *[अनारम्भस्थान]*
असावद्यारम्भस्थाने,एगंतमिच्छे असाहू तत्थ णं जा सा सव्वतो विरई एसट्ठाणे अणारंभट्ठाणे आरिए'। सूय० २ श्रु० २ अ०।

अणारद्ध- त्रि० *[अनारब्ध]*
केवलिभिर्विशिष्टमुनिभिर्वाऽनाचीर्णे, 'आरंभे जं चऽणारंभे अणारद्धं च ण आरंभे'। आचा० १ श्रु० २ अ० १ उ०।

अणाराहय- त्रि० *[अनाराधक]*
विराधके, 'अणायावी अस्समिए धम्मस्स अणाराहए भवइ'। ठा० ४ ठा० ३ उ०।

अणारिय- पुं० *[अनार्य]*
न आर्योऽनार्यः। अज्ञानावृतत्वादसदनुष्ठायिनि, सूय० १ श्रु०, १ अ०, २ उ०।
पापात्मके, भग० ३ श० ६ उ०। सूय०।
अकार्यकर्मकारिणि, निसि० १७ उ०।
धर्मसंज्ञारहिते, शिष्टसंमतनिखिलव०हारे वा क्षेत्रे, सूय० १ श्रु०, ५ अ०, १ उ०।
अनार्या म्लेच्छास्ततश्च साधुनिन्दादिना अनार्या इव अनार्याः। साधुप्रत्यनीकेषु। उत्त० ३ अ०।
क्षेत्रभाषाकर्मभिर्बहिष्कृतः। सूय० । उत्त०

अणारियट्ठाण- न० *[अनार्यस्थान]*
सावद्यऽऽरम्भाश्रये, सूय० २ श्रु० २ अ०।

अणारोहग- त्रि० *[अनारोहक]*
योधवर्जिते, अणासए अणारहिए अणारोहए। भग० ७ श० ९ उ० ।

अणालंबणपइट्ठाण- त्रि० *[अनालम्बनप्रतिष्ठान]*
अविद्यमानमालम्बनं प्रतिष्ठानं त्राणकारणं यत्र स तथा। आलम्बनरक्षकरहिते, पण्हा० ३ अ०

अणालत्त- त्रि० *[अनालपित]*
अभाषिते, 'पुव्विं अणालत्तेणं आलवित्तए वा०। उपा०।

अणालस्स- न० *[अनालस्य]*
अनुत्साहे, तं०।
कृतोद्यमे, वव० ७ उ०।

अणालस्सणिलय- पुं० *[अनालस्यनिलय]*
अनालस्यमुत्साहस्तस्य गृहम्, अकार्यादी सादरं प्रवृत्तिहेतु-त्वाद्। योषिति, तं०।

अणलाव- पुं० *[अनालाप]*
कुत्सित आलापोऽनालाप इति।वचनविकल्पभेदे,ठा०७ ठा०

अणालिद्ध- त्रि० *[अनाश्लिष्ट]*
अकृताऽऽश्लेषे, आव०

अणालोइय- त्रि० *[अनालोचित]*
गुरूणां समीपेऽकृतालोचने, उव०।

अणालोइयअपडिक्कंत- त्रि० *[अनालोचिताऽप्रतिक्रान्त]*
अनालोचितश्चाऽसौ अप्रतिक्रान्तश्च। गुरूणां समीपेऽकृताऽऽ-लोचने दोषाच्चाऽनिवृते, उव०।

अणालोय- पुं० *[अनालोक]*
अज्ञे,'चुलिसीइजोणिसयसहस्स गुविलं अणालोकमंधयारं ति' अनालोको नामाऽज्ञानाऽन्धकारो यस्य स तथा। पण्हा०४ अ०

अणावाय- न० *[अनापात]*
जनसंपातरहिते, वर्जिते, भग० ८ श० ६ उ०।
विजने, आचा० २ श्रु० १ अ० ५ उ०।
लोकानामुपागमनरहिते, उत्त० २४ अ०।
स्त्र्याद्यापातरहिते स्थण्डिले, आव० ४ अ०।
अनापात–आपातादिरहिता उच्चारभूमी। दशवै० । उत्त०

अणाविल- त्रि० *[आनाविल]*
अकलुषे, रागद्वेषाऽसंपृक्ततया मलरहिते, । सूय० १ श्रु० १५ अ०।

अणाविल- त्रि० *[ऋणाबिल]*
ऋणेन कलुषे, आतु०।

अणाविलज्झाण- न० *[अनाविलध्यान]*
अणमृणं तेनाऽऽविलः कलुषः ऋणाविलः, तस्य ध्यानम्। तैलकर्षलाया यतिभगिन्या इव दुर्ध्याने, आतु०।

अणाविलप्प- पुं० *[अनाविलात्मन्]*
अनाविलो विषयकषायैरनाकुल आत्मा यस्याऽसावनाविलात्मा निष्कषायिनि'अभयंकरे भिक्खू अणाविलप्पा' सूय०१ श्रु०७अ

अणावुट्ठि- स्त्री० *[अनावृष्टि]*
वर्षणाऽभावे, सम०।

अणासंसि- पुं० *[अनाशंसिन्]*
श्रोतृभ्यो वस्त्राद्यनाकाङ्क्षिणि प्रवचनसारपरिकथनयोग्ये, बृह० आचार्याद्याराधनाशंसारहिते, सांसारिकफलानपेक्षे वा, आलोचना प्रदानयोग्ये, आशंसिनो हि समग्राऽतिचाराऽऽलोचना-संभवात् आशसाया एवाऽतिचारत्वात्। गच्छा०।

अणासग- त्रि० *[अनश्वक]*
अश्वरहिते, भग० ७ श० ९ उ०।

अणासच्छिन्न- त्रि० *[अच्छिन्ननास]*
अकृत्तघ्राणे, निसि० ४ उ०।

अणासण्ण- त्रि० *[अनासन्न]*
अनिकटवर्तिनि, उत्त० २० अ०।

अणासत्ति- स्त्री० *[अनासक्ति]*
अप्रतिबद्धतायाम्, स्वजनादिषु स्नेहाभावे, भग०१ श०९ उ०।

अणासय- त्रि० *[अनाशय]*
न विद्यते आशयः पूजाभिप्रायो यस्याऽसावनाशयः। द्रव्यतो विद्यमानेऽपि समवसरणादिके भावतोऽनास्वादके तीर्थकृति, तद्गतगार्द्ध्याऽभावात्। सूय० १ श्रु० १५ अ०।

अणासव-१ पुं० *[अनाश्रव]*
न विद्यन्ते आश्रवा हिंसादयो यस्य। पापकर्मबन्धरहिते हिंसाद्याश्रवद्वारविरते, । उत्त०।
प्राणातिपातादिरहिते, उव०।
अविद्यमानपापकर्मबन्धे, उव०।
नवकर्माऽनुपादाने, पण्हा०१ अ०
आश्रवति तान् तान् शोभनत्वेन अशोभनत्वेन वा गृह्णाती-त्याश्रवः, नाऽऽश्रवोऽनाश्रवः। बुह०।

अणासव-२ पुं० *[अनाश्रव]*
मध्यस्थे रागद्वेषरहिते, बुह०।

अणासव-३ पुं० *[अनाश्रव]*
पञ्चत्रिंशे गौणप्राणातिपातविरमणे, तस्य कर्मबन्धनिरोधोपाय-त्वात्। पण्हा०१ अ०।

अणासव- पुं० *[अनाश्रव]*
आ समन्तात् श्रृण्वन्ति गुरुवचनमाकर्णयन्तीति आश्रवाः। न तथा प्रतिभाषाविषयस्य तस्याश्रवणादनाश्रवः।उत्त० १ अ०।

अणासव- पुं० *[अनाश्रव]*
आश्रवः व्रत-विशेषे, आचा०।

अणासाइज्जमाण- त्रि० *[अनास्वाद्यमान]*
केवलं रसनेन्द्रियविषये, भग०१ श०१ उ०।

अणासाएमाण- त्रि० *[अनाशायमान]*
आशाविषयमकुर्वाणे उत्त० २९ अ०।

अणासाएमाण- त्रि० *[अनास्वादयत्]*
अभुञ्जाने, उत्त० २९ अ०।

अणासायणा- स्त्री० *[अनाशातना]*
तीर्थकरादीनां सर्वथाऽहीलनायाम्, दश० ९अ० १ उ०।
मनवाक्कायैः प्रतीपवर्जने, उत्त० १ अ०।

अणासायणाविणय- पुं० *[अनाशातनाविनय]*
अनुचित क्रियानिवृत्तिरूपे दर्शनविनयभेदे, अयं च पञ्चदश-विधः। आह च-'तित्थगरधम्मआयरिअवायगे थेरकुलगणे संघे। संभोगिअकिरियाए, मइनाणाईण य तहेव' सांभोगिका एकसामाचारिका क्रिया आस्तिकता। अत्र भावना- तीर्थ-कराणामनाशातनायां तीर्थकरप्रज्ञप्तधर्मस्याऽनाशातनायां च वर्तितव्यमित्येवं सर्वत्र द्रष्टव्यमिति। ठा०७ ठा०।
उपचारविनयभेदः। दश०।

अणासिय- त्रि० *[अनाशित]*
बुभुक्षिते, 'अणासिया णाम महासियाला, या गब्भिनो तत्थ सयासको वा' सूय० १ श्रु० ५ अ० २ उ०।

अणासेवणा- स्त्री० *[अनासेवना]*
आसेवनाविरहे, आचा०१ श्रु०८ अ० ३ उ०।

अणाह- त्रि० *[अनाथ]*
अशरणे, निसि० ३ उ०।
निःस्वामिनि, विपा०१ श्रु०७ अ०।
योगक्षेमकारिविरहिते, पण्हा०१ अ०
रङ्के, नाया०८ अ०।
आत्मनोऽनाथत्वपरिभावयितरि मुनिभेदे, । उत्त०२० अ०।

अणाहपव्वज्जा- स्त्री० *[अनाथप्रव्रज्या]*
विंशतितमे उत्तराऽध्ययने, सम० ३६ सम०।
तच्च महानिर्ग्रन्थीयमिति नाम्ना प्रसिद्धम्। उत्त०२० अ०।

अणाहरण- न० *[अनाधरण]*
आध्रियतेऽनेनेत्याधरणमाधारः। तन्निषेधोऽनाधरणम्। आधर्तु-मक्षमे, भग०१८ श० ३ उ०।
अनिष्टं शोभनमपि न रोचते परि अणाहारो भवति। निसि०।

अणाहसाला- स्त्री० *[अनाथशाला]*
आरोग्यशालायाम्, वव०४ उ०।

अणाहार-१ पुं० *[अनाहार]*
आहारविपरीतेऽभ्यवहार्ये, तल्लक्षणं चाऽऽहारभिन्नत्वम्। बुह०
न विद्यते आहारो यस्येत्यनाहारः।आचा०१ श्रु०८ अ०८ उ०।
अविद्यमानाऽऽहारे, दश०१ अ०।

अणाहार-२ पुं० *[ऋणाधार]*
ऋणधारके, विपा०१ श्रु० १ अ०।

अणाहारग- पुं० *[अनाहारक]*
आहारमकुर्वति विग्रहगत्यापन्ने समुद्घातगतकेवलिनि, अयोगि-सिद्धे च। भग०६ श० ३ उ०
नेरइया दुविहा पन्नत्ता। तं जहा- आहारगा चेव अणाहारगा चेव, एवं जाव वेमाणिया। ठा०२ ठा० २ उ०। भग०।

अणाहारिम- न० *[अनाहारिम]*
अनाहार्ये, निसि० ११ उ०।

अणाहारिय- त्रि० *[अनाहृत]*
अतीताहरणक्रिययाऽपरिणामिते, भग० १ श० १ उ०।

अणाहिट्ठ- पुं० *[अनाधृष्ट]*
वसुदेवस्य धारण्यां जाते पुत्रे, तद्वक्तव्यता गजसुकुमारस्येव इत्यन्तकृद्दशानां तृतीये वर्गे त्रयोदशाऽध्ययने सूचिता। अंत० ३ वर्ग०।

अणिइय- पुं० *[अनितिक]*
इतिशब्दो नियतरूपोपदर्शनपरः, ततश्च न विद्यते इतिर्यत्राऽसावनितिकः। अविद्यमाननियतस्वरूपे, ईश्वरादेरपि दारिद्यादि भावात् संसारे, भग० ९ श० ३३ उ०।

अणिइपत्त- त्रि० *[अनीतिपत्र]*
ईतिविरहितच्छे, नाया० १ श्रु० १ अ०।

अणिउंतय- न० *[अतिमुक्तक]*
अतिशयेन मुक्तं बन्धनं यस्य। तिन्दुकवृक्षे तालवृक्षे च। पन्न० १ पद०।

अणिउण- त्रि० *[अनिपुण]*
न निपुणोऽनिपुणः। अकुशले, आव० ४ अ०। निसि०।

अणिएअचारि- पुं० *[अनियतचारिन्]*
अनियतमप्रतिबद्धं परिग्रहायोगाच्चरितुं शीलमस्याऽसाव-नियतचारी। अप्रतिबद्धविहारिणि, सूय०१ श्रु० ६अ० ५उ०।
‘अखिले अगिद्धे अणिएयचारी, अभयंकरे भिक्खु अणावि-लप्पा’। सूय० १ श्रु० ७ अ०।

अणिएअवास- पुं० *[अनियतवास]*
मासकल्पादिनाऽनिकेतवासे अगृहे उद्यानादौ वासे, ‘अणिएय-वाससमुयाण चरिया,अण्णाय उच्छं पइरिक्कया य।दश०२ चू०

अणिगाल- त्रि० *[अनङ्गार]*
रागपरिहारेणाऽङ्गारदोषरहिते, पण्हा० १ अ०।

अणिंद- त्रि० *[अनिन्द्र]*
नाऽस्तीन्द्रो यस्मिन् सोऽनिन्द्रः। इन्द्रविरहिते प्रजास्वामिके, भग० ३ श० १ उ०।

अणिंद- त्रि० *[अनिन्द्य]*
अजुगुप्सिते, सामायिके च। आव०म०। आ० चू०।

अणिंदणिज्ज- त्रि० *[अनिन्दनीय]*
गीतार्थादिजनाऽदूष्ये, जीवा० १ प्रति

अणिंदिय- त्रि० *[अनिन्दित]*
सप्तमकिन्नरेषु, पन्न०१ पद०।

अणिंदिय- पुं० *[अनिन्दिय]*
सिद्धे, अपर्याप्तके, उपयोगतः केवलिनि, ठा० १० ठा०।
णेरइया दुविहा पन्नत्ता। तं जहा- सइंदिया चेव, अणिंदिया चेव जाव वेमाणिया। ठा०२ ठा० २ उ०।

अणिंदिया- स्त्री० *[अनिन्दिता]*
षष्ठ्यामूर्ध्वलोकवास्तव्यायां दिक्कुमारीमहत्तरिकायाम्, ठा० ८ ठा०। आव०चू०। आव०म०।

अणिक्खित्त- न० *[अनिक्षिप्त]*
अविश्रान्ते, उव०। भग०।

अणिकंप- त्रि० *[अनिष्कम्प]*
अनिश्चले, आचा०२ श्रु० २ अ० ३ उ०।

अणिकाम- न० *[अनिकाम]*
परिमित्ते, बुह० १ उ०।

अणिकाय- पुं० *[अनिकाय]*
लघुमृषावादे, निसि०१उ०। (‘मुसावाय’ शब्देऽस्य विवृतिः)।

अणिकेय- पुं० *[अनिकेत]*
न विद्यते निकेतो गृहं यस्य। उत्त० २ अ०।
अविद्यमानगृहे, अनेकत्र बद्धाऽऽस्पदे, उत्त० १ अ०।

अणिक्कट्ठ- त्रि० *[अनिष्कृष्ट]*
द्रव्यतोऽकृशशरीरे, भावतोऽवशीकृतकषाये, । ठा० ४ ठा० ४ उ० ।

अणिक्कावाइ- पुं० *[अनेकवादिन्]*
सत्यपि कथञ्चित् एकत्वे भावानां सर्वथाऽनेकत्वं वदतीत्यनेक वादी। परस्परं विलक्षणा एव भावाः, तथैव प्रतीयमानत्वात्। यथारूपं रूपतयेति। अभेदे तु भावानां जीवाऽजीवबद्धमुक्त-सुखितदुःखितादीनामेकत्वप्रसङ्गाद् दीक्षादिवैयर्थ्यमिति। किञ्च-सामान्यमङ्गीकृत्यैकत्वं वितर्क्षितं परैः। सामान्यं च भेदेभ्यो भिन्नाऽभिन्नतया चिन्त्यमानं न युज्यते। एवमवय-वेभ्योऽवयवी धर्मेभ्यश्च धर्मी इत्येवमनेकवादी, इत्युपदर्शितस्वरूपे अक्रियावादिनि, ठा० ८ ठा०

अणिक्खित्त- त्रि० *[अनिक्षिप्त]*
अनुज्झितेऽप्रत्याख्याते, भग० १७ श०, २ उ०।
अविश्रान्ते, उव०।

अणिगामसोक्ख- त्रि० *[अनिकामसौख्य]*
अपकृष्टसुखे तुच्छसुखे, उत्त० १४ अ०।

अणिगण- पुं० *[अनग्न]*
न विद्यन्ते नग्नास्तत्कालीना जना येभ्यस्तेऽनग्नाः।जंबू०२ वक्ष०
सवस्त्रत्वहेतुषु कल्पवृक्षेषु, सम० १० सम०।

अणिमूहियबलवीरिय- पुं० *[अनिगूहितबलवीर्य]*
अनिह्नुतबाह्याऽभ्यन्तरसामर्थ्ये, गच्छा०१अधि०।दश०। आचा० । पंच०चू०।
'अणिगूहियबलवीरिउ, परिक्कमइ जो जहुत्तमाउत्तो। जुंजइय जहा थामं, नायव्वो वीरियायारो'। दश० ३ अ०। पंच०चू०।

अणिग्गह-१ पुं० *[अनिग्रह]*
अविद्यमानो निग्रह इन्द्रियनोइन्द्रियनियन्त्रणात्मकोऽस्येति। उत्त० १७ अ०।
अवशीकृतेन्द्रिये, उत्त० ११ अ०।
स्वैरे, पण्हा०२ अ०
उच्छृङ्खले, दश०८ अ० ।

अणिग्गह-२ पुं० *[अनिग्रह]*
एकादशे गौणाऽब्रह्मणि, तत्राऽनिग्रहोऽनिषेधो मनसो विषयेषु प्रवर्त्तमानस्येति गम्यते। एतत्प्रभवत्वाच्चाऽस्याऽनिग्रह इत्युक्तम्। पण्हा०४ अ० ।

अणिच्च- त्रि० *[अनित्य]*
नित्यभिन्ने सर्वदा स्थायिनि, आचा० १ श्रु० १ अ० ५ उ०।
प्रत्युतानुत्पन्नस्थिरैकस्वभावतया कूटस्थं नित्यत्वेन व्यवस्थितं सत् नित्यं, नैवं यत्, तदनित्यम्। अच्युताऽनुत्पन्नस्थिरैकस्वभावं हि नित्यमतोऽन्यत् प्रतिक्षणविशरारु अनित्यम्। आचा०१ श्रु०५ अ०५ उ०। अनुओ०। उत्त०।
अशाश्वते, उत्त०२ अ०।
अनित्यमस्थिरत्वात्। पण्हा० ५ अ०

अणिच्चजागरिया- स्त्री० *[अनित्यजागरिका]*
अनित्यचिन्तायाम्, 'अणिच्चजागरियं' भग० १५ श० १ उ०।

अणिच्चया- स्त्री० *[अनित्यता]*
अनश्वरतायाम्, सूय०।

अणिच्चाणुप्पेहा- स्त्री० *[अनित्यानुप्रेक्षा]*
'कायः सन्निहितापायः, सम्पदः पदमापदाम्।
समागमाः साऽपगमाः, सर्वमुत्पादि भङ्गुरम्' ।१ ।
इत्येवं जीवितादेरनित्यस्याऽनुप्रेक्षा। धर्मरूपे धर्मध्यानस्य अनुप्रेक्षाभेदे, ठा० ४ ठा० १ उ०।

अणिच्छियत्त- स्त्री० *[अनीप्सितता]*
प्राप्तुमवाञ्छितत्वे, भग० ६ श० ३ उ०।

अणिच्छियव्व- त्रि० *[अनेष्टव्य]*
मनागपि मनसाऽपि अप्रार्थनीये, आव० ४ अ०।

अणिजिण्ण- त्रि० *[अनिर्जीर्ण]*
जीवप्रदेशेभ्यः परिशटितप्रदेशे, उव० कल्प०।
सामस्त्येनात्मप्रदेशेभ्यऽपरिशाटितः। पन्न०

अणिज्जमाण- त्रि० *[अन्वीयमान]*
अनुगम्यमाने, विपा०१ श्रु० १ अ०।

अणिज्जमाणमग्ग- त्रि० *[अन्वीयमानमार्ग]*
अनुगम्यमानमार्गे, 'मच्छिया चडगरहपहकरेणं अणिज्जमाणमग्गेमियागामे णयरे' इत्यादि। विपा० १ श्रु०१ अ०।

अणिजूहित्ता- अव्य० *[अपोह्य]*
अदत्त्वेत्यर्थे, अपोह्य दत्त्वा हस्ताद्यावृतमुखस्य। भग०।

अणिज्जाएत्ता- अव्य० *[अनिर्धार्य]*
चक्षुरव्यापार्येत्यर्थे, भग० ७ श०७ उ०।

अणिज्जायणत्तिया- स्त्री० *[अनिर्यापणात्मिका]*
वाचनासंपद्भेदे, उत्त० १ अ०।

अणिज्जूढ- त्रि० *[अनिर्यूढ]*
महतो ग्रन्थात् सुखावबोधाय सङ्क्षेपनिमित्तमनुग्रहपरगुरुभिः अनुद्धृते, भग० १ श० ९ उ०।

अणिट्ठ-१ त्रि० *[अनिष्ट]*
इष्यते स्मेति प्रयोजनवशात् इष्टम्, न इष्टमनिष्टम्। भग० १ श० ५ उ० ।
मनस इच्छामतिक्रान्ते, । जीवा० १ प्रति०। उपा०। ठा०। भग०।
अवाञ्छिते, भग०९ श० ३३ उ०।
सत्तामनभिलषणीये, । आव०४ अ०।
अणिट्ठा, अकंता, अप्पिया, अमणुन्ना, अमणामा, एते एकार्थाः । विपा०१ श्रु०१ अ०।
अनिष्टा जनस्येति गम्यते। पण्हा० ३ अ०

अणिट्ठ-२ त्रि० *[अनिष्ट]*
अकृतयागे देवादौ, । ठा०।

अणिट्ठतर- त्रि० *[अनिष्टतर]*
अतिशयेन कमनीये, जीवा० ३ प्रति०। विपा०।

अणिट्ठत्ता– स्त्री० *[अनिष्टता]*
इष्टा—मनसा इच्छाविषयीकृता तद्विपरीता अनिष्टा तस्या भावः। पन्न० ५०४।
अनिष्टता, इच्छाया अविषयता। भग० २५३।

अणिट्ठफल- न० *[अनिष्टफल]*
अशुभे कर्मणि, उपा०२ अ०।

अणिट्ठवयण- न० *[अनिष्टवचन]*
आक्रोशवाचि, 'अणिट्ठवयणेहिं सप्पमाणा'। पण्हा० ३ अ०

अणिट्ठविय- त्रि० *[अनिष्ठापित]*
असमापिते, अनिष्ठापिताऽसमापिता सर्वकालं सदा संस्थाप्यता तत्कृत्यकरणं यस्य तत्तथा। भग० ९ श० ३३ उ०।

अणिट्ठस्सर- पुं० *[अनिष्टस्वर]*
प्रयोजनवशादपीच्छाऽविषये, ठा० ८ ठा०।

अणिट्ठुर- त्रि० *[अनिष्ठुर]*
प्रस्तरागमनवत् कार्कश्यरहिते, गच्छा० २ अधि०।

अणिट्ठुह- त्रि० *[अनिष्ठीवक]*
मुखश्लेष्मणाऽपरिष्ठापके, पण्हा० १ अ०। सूय०।

अणिड्ढिपत्त- पुं० *[अनृद्धिप्राप्त]*
आमर्षौषध्यादिलक्षणामृद्धिं अप्राप्ते, नं०। पन्न०।

अणिड्ढिमंत- त्रि० *[अनृद्धिमत्]*
अनृद्धिप्राप्ते, 'छव्विहा अणिड्ढिमंता मणुस्सा पन्नत्ता। तं जहा- हेमवंतगा हिरण्णवंतगा हरिवंसगा रम्मगवंसगा कुरुवासिनो अंतरदीवगा'। ठा०। ६ ठा०।

अणिड्ढिय- पुं० *[अनर्द्धिक]*
अनीश्वर प्रव्रजिते, आव०म०।

अणिण्हव- पुं० *[अनिह्नव]*
अनपलापे, गच्छा० १ अधि०। वव०। दश०।
निह्नवत्वेन रहिते, बुह० १ उ०।

अणिण्हवण- न० *[अनिह्नवन]*
निह्नवनमपलपनम्, न निह्नवनमनिह्नवनम्। यतोऽधीतं तस्याऽनपलापे, एष ज्ञानाचारस्य पञ्चमो विषयः। यतोऽनिह्नवेनैव पाठादिसूत्रादेर्विधेयं, न पुनर्मानादिवशादात्मनो लाघवाद्याशङ्कया श्रुतगुरूणां श्रुतस्य वाऽपलापेनैति। गच्छा०।

अणिण्हवमाण- त्रि० *[अनिह्नुवान]*
अनपलपति, नाया०१ श्रु० १ अ०।

अणितिय- त्रि० *[अनित्य]*
अप्रच्युताऽनुत्पन्नस्थिरैकस्वभावतया कूटस्थनित्यत्वेनाऽव०-स्थिते , आचा०१ श्रु० ५ अ० २ उ०।

अणित्थंथ- त्रि० *[अनित्थंस्थ]*
अमुं प्रकारमापन्नमित्थम्, इत्थं तिष्ठतीति इत्थंस्थम्, न इत्थंस्थमनित्थंस्थम्। केनचिल्लौकिके न प्रकारेणाऽस्थिते, उव०।
परिमण्डलादिसंस्थानरहिते, भग०२४ श०१२ उ०।
अनियताकारे, जीवा० १ प्रति०।

अणित्थंथसंठाणसंठिय- त्रि० *[अनित्थंस्थसंस्थानसंस्थित]*
इत्थं तिष्ठतीति इत्थंस्थम्, न इत्थंस्थमनित्थंस्थम्, अनियताऽऽ- कारमित्यर्थः। तच्च तत् संस्थानम्, तेन संस्थानेन अनियत- संस्थानसंस्थिते, जीवा०१ प्रति०।

अणिदा-१ स्त्री० *[अनिदा]*
निदानं निदा, न निदाऽनिदा, प्राणिहिंसा नरकादिदुःखहेतुरिति परिज्ञानविकलेन सता क्रियमाणे प्राणिनिर्वहणे, स्वपुत्रादिकमन्यं वा विभागेनाऽविविच्य सामान्येन विधीयमाने, अजानतो वा व्यापाद्यस्य सत्त्वस्य व्यापादने च। । पिंड०।
अनिर्द्धारणायाम्, 'पुढविकाइया सव्वे, असण्णिभूया अणिदाए वेयणं वेदेंति'। भग० १ श० २ उ०।
अनाभोगवत्यां हिंसायाम्, भग० १९ श० ५ उ०।

अणिदा-२ स्त्री० *[अनिदा]*
चित्तविकलाया सम्यग्विवेकविकलायाम्, पन्न० ३४ पद०।
अनिर्द्धारणा। भग०।

अणिदाण-१ त्रि० *[अनिदान]*
नाऽस्य स्वर्गावाप्त्यादिनिदानमस्तीत्यनिदानम्। सूय० १ श्रु० २ अ० ३ उ०।
न विद्यते निदानमस्त्येत्यनिदानः, निराकाङ्क्षे अशेषकर्मक्षयाऽर्थिनि,सूय० १ श्रु०१६ अ०।
निदानवर्जिते, आतु०।
प्रार्थनारहिते, भग०२ श०१ उ०। आचा०।
भाविफलाऽऽशंसारहिते, । दश०१० अ०। पण्हा०।
स्वर्गावाप्त्यादिलक्षणनिदानरहिते,सूय०१ श्रु०२ अ० ३ उ०।
देवेन्द्राद्यैश्वर्याप्रार्थकः। पण्हा०

अणिदाण-२ त्रि० *[अनिदान]*
न विद्यते निदानमारम्भरूपं भूतेषु जन्तुषु यस्याऽसावनिदानः। सावद्याऽनुष्ठानरहिते अनाश्रवे,सूय०१ श्रु०१० अ०।

अणिदाण-३ त्रि० *[अनिदान]*
भोगर्द्धिप्रार्थनास्वभावम् आर्त्तध्यानम्। तद्वर्जिते अनिदानेऽर्थे, ठा० ३ ठा० १ उ०।

अणिदाणभूय- त्रि० *[अनिदानभूत]*
सावद्याऽनुष्ठानरहितेऽनाश्रवभूते कर्मोपादानरहिते अनिदानकल्पे ज्ञानादौ, सूय०। यथा–
अप्पडिण्णभिक्खू समाहिपत्ते अणियाणभूते सुपरिव्वएज्जा।
न विद्यते निदानमारम्भरूपं भूतेषु जन्तुषु यस्याऽसावनिदानः। स एवम्भूतः सावद्याऽनुष्ठानरहितः परि समन्तात् संयमाऽनुष्ठाने व्रजेद् गच्छेदिति।
यदि वा अनिदानभूतोऽनाश्रवभूतः कर्मोपादानरहितः सुष्ठु परिव्रजेत् सुपरिव्रजेत्।यदि वा अनिदानभूतानि अनिदानकल्पानि ज्ञानादीनि तेषु परिव्रजेत्। अथवा- निदानं हेतुः कारणं दुःखस्याऽन्तो निदानभूतः कस्यचिद् दुःखमनुपादयन् संयमे पराक्रमेदिति। सूय० १ श्रु० १० अ०

अणिदाणया- स्त्री० *[अनिदानता]*
निदायते लूयते ज्ञानाद्याराधना लता आनन्दरसोपेतमोक्षफला येन परशुनेव देवेन्द्रादिगुणर्धिप्रार्थनाऽध्यवसानेन तत् निदान- मनिदानं तद् यस्य सोऽनिदानः तद्भावस्तत्ता। निरुत्सुक- तायाम्,। ठा० १० ठा० ।
निदानं भोगर्द्धिप्रार्थनास्वभावमार्तध्यानं, तद्वर्जितताऽनिदानता भोगर्द्धिप्रार्थनायाम्, एतस्याः फलं संसारव्यतिव्रजनम्। ठा० ३ ठा० १ उ०।
सव्वत्थ भगवया अणिदाणता पसत्था। ठा० ६ ठा०।

अणिद्दिठ्ठ- त्रि० *[अनिर्दिष्ट]*
प्रागकृतनिर्देशे, निसि० १ उ०।

अणिद्देस- पुं० *[अनिर्देश]*
अप्रमाणे, उत्त० १ अ०।

अणिद्देसकर- पुं० *[अनिर्देशकर]*
अप्रमाणकर्त्तरि, 'आणाणिद्देसकरे' । उत्त० १ अ० ।

अणिप्पण्ण- त्रि० *[अनिष्पन्न]*
अतीतकाले निष्पत्तिरहिते, उव०।

अणिमंतेमाण- त्रि० *[अनिमन्त्रयत्]*
निमन्त्रणमददति, आचा० २ श्रु० २ अ० ३ उ०।

अणिमिस- पुं० *[अनिमिष]*
मत्स्ये, बहु अट्ठिअं पोग्गलं, अणिमिसं बहुकंटयं। दश० १ ।
निश्चलनयने, आव० ५ अ०

अणिमिसणयण- पुं० *[अनिमिषनयन]*
न विद्यते निमेषो येषां तानि अनिमेषाणि, अनिमेषाणि नयनानि येषां तेऽनिमेषनयनाः। वव०१उ०। आव०म० ।

अणिय-१ न० *[अनीक]*
सैन्य, कल्प०। । ठा०।

अणिय-२ न० *[अनृत]*
वितथे, मिथ्यावितथमनृतमिति पर्यायाः। ठा० १० ठा०। आव०म०। विशे०। आव०।

अणियट्ट- पुं० *[अनिवर्त]*
मोक्षे, आचा०१ श्रु०५ अ०१ उ०।

अणियट्टगामिन्- पुं० *[अनिवर्त्तगामिन्]*
अनिवर्तो मोक्षस्तत्र गन्तुं शीलं यस्य स तथा। निर्वाणयायिनि, आचा०१ श्रु०५ अ० ३उ

अणियट्टि-१ न० *[अनिवर्तिन्]*
न निवर्त्तते, न व्यावर्त्तते इत्येवंशीलमनिवर्ति। प्रवर्धमान- तरपरिणामादव्यावर्त्तनशीले, 'सुहुमकिरिए अणियट्टी' इति शुक्लध्यानस्य तृतीये भेदे, ठा० ४ ठा० १ उ०। सूय०।

अणियट्टि-२ न० *[अनिवर्तिन्]*
अशीतितमे महाग्रहे, चंद० २० पाहु०, सूर० २० पाहु० ।

अणियट्टि- ३ न० *[अनिवर्तिन्]*
आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां भविष्यति विंशतितमे तीर्थकरे, । सम० ।

अणियट्टिकरण- न० *[अनिवृत्तिकरण]*
अनिवृत्तिकरणमित्यन्योन्यं नाऽतिवर्तन्ते परिणामा अस्मिन् इति अनिवृत्तिकरणम्। आचा० १ श्रु० ९ अ० १ उ०।
तच्च तत्करणं च अनिर्वृतिकरणं सम्यक्त्वाद्यनुगुणे विशुद्धतर अध्यवसायरूपे भव्यानां करणभेदे, 'अणियट्टीकरणं, पुण, सम्मत्तपुरक्खडे जीवे'। आव० म०।

अणियट्टिबायर- पुं० *[अनिवृत्तिबादर]*
नवमगुणस्थाने वर्त्तमाने जीवे, स च कषायाऽष्टकक्षपणाऽऽर- म्भात् नपुंसकवेदोपशमने यावद् भवति निवृत्तिबादरसमया- दूर्ध्वं लोभखण्डवेदनां यावदनिवृत्तिबादरः आव०४ अ०।

अणियट्टिबायरसपरायगुणट्ठाण- नं० *[अनिवृत्तिबादरसंपरायगुण- स्थान]*
नवमगुणस्थाने,व्याख्या चैवम्- युगपदेतद्गुणस्थानकं प्रतिप- न्नानां बहूनामपि जीवानामन्योन्यमध्यवसायस्थानस्य व्यावृत्तिः नाऽस्त्यस्येति अनिवृत्तिः, समकालमेतद्गुणस्थानकमारूढस्य अपरस्य यदध्यवसायस्थानं विवक्षितोऽन्योऽपि कश्चित्तद्वर्त्येवे त्यर्थः।
संपरैति पर्यटति संसारमनेनेति संपरायः कषायोदयः बादरः सूक्ष्मकिट्टीकृतसंपरायाऽपेक्षया स्थूलसंपरायो यस्य स बादर- संपरायः। अनिवृत्तिश्चाऽसौ बादरसंपरायश्च तस्य गुणस्थानम् अनिवृत्तिबादरसंपरायगुणस्थानम्। । आव०चू०।

अणियण- पुं० *[अनग्न]*
विचित्रवस्त्रदायित्वात् न विद्यन्ते नग्ना निवासिनो जना येभ्यः तेऽनग्नाः। संज्ञाशब्दो वाऽयमिति। विशिष्टवस्त्रदायिषु कल्पद्रुमभेदेषु, ठा० ७ ठा०। आव०

अणियत- त्रि० *[अनियत]*
अप्रतिबद्धे, सूय० १ श्रु० ६ अ०। उत्त०।
अनेकस्वरूपे, दशा०१० अ०।
अनियमवति अनवस्थिते, । पण्हा० २ अ०। नाया०।
अवश्यंभाव्युदयाऽऽप्रापिते आत्मपुरुषेश्वरस्वभावकर्मादिकृते सुखादिके, । सूय० १ श्रु० १ अ० २ उ०।
अशाश्वतानि स्थानानि, सर्वाणि दिवि चेह च। देवाऽसुर- मनुष्याणामृद्धयश्च सुखानि च। सूय०१ श्रु०८ अ०।
अनियतो वासो नानादेशपरिभ्रमणम्। वव०१ उ०।

अणियतचारिण्- पुं० *[अनियतचारिन्]*
अनियतमप्रतिबद्धं परिग्रहयोगाच्चरितुं शीलमस्याऽसावनियत-चारी। अप्रतिबद्धविहारिणि, सूय० १ श्रु० ६ अ०।

अणियतवट्टि- पुं० *[अनियतवृत्ति]*
अनियतविहारे, उत्त० १ अ०।

अणियतवास- पुं० *[अनियतवास]*
मासकल्पादिनाऽनिकेतवासे गृहे, उद्यानादौ वासे, दश०२चू० अणियओ वासो निप्पत्तियविहारो, अस्य गृहीतसूत्रार्थस्य शिष्यस्याऽनियतो वासः क्रियते ग्रामनगरसन्निवेशादिष्वनियत-वासेन। विशे०।
देशदर्शनं कार्यते, ततः स आचार्यपदे स्थाप्यते। बुह०१ उ०।

अणियतवित्ति- पुं० *[अनियतवृत्ति]*
अनियतचारिणि अनियतविहारे, ठा० ८ ठा०। वव०।
अनियताऽनिश्चिता वृत्तिर्व्यवहरणं विहारो वा यस्य सोऽ-नियतवृत्तिः। 'गामे एगराइं, नगरे पंचराइं' इत्यादि-प्रकारेण। दशा० ४ अ०।

अणियत्त- त्रि० *[अनिवृत्त]*
अनिवृते, उत्त० २ अ०।

अणियत्तकाम- त्रि० *[अनिवृत्तकाम]*
अनुपरतेच्छौ, उत्त० १४ अ०।

अणियाहिवइ- पुं० *[अनीकाधिपति]*
गजादिसैन्यप्रधाने ऐरावतादौ, ठा० ३ ठा० १ उ०। रा०।

अणिरुद्ध-१ त्रि० *[अनिरुद्ध]*
क्वचिदप्यस्खलिते,सूय० १ श्रु० १२ अ०।

अणिरुद्ध-२ त्रि० *[अनिरुद्ध]*
कृष्णवासुदेवपुत्रस्य प्रद्युम्नस्य वैदर्भ्यामुत्पन्ने पुत्रे, स च अरिष्ट-नेमेरन्तिके प्रव्रज्य शत्रुञ्जये सिद्धः। अंत० ४ वर्ग०। पण्हा०।

अणिरुद्धपण्ण- त्रि० *[अनिरुद्धप्रज्ञ]*
अनिरुद्धा क्वचिदप्यस्खलिता प्रज्ञा, प्रज्ञायतेऽनयेति प्रज्ञा ज्ञानं, येषां तीर्थकृतां तेऽनिरुद्धप्रज्ञाः। क्वचिदपि अस्खलितज्ञानेषु तीर्थकृत्सु, । सूय० १ श्रु० १२ अ०।

अणिल- पुं० *[अनिल]*
वायौ, पण्हा० १ अ०। दश०। आव०।

अणिलामइ- त्रि० *[अनिलाऽऽमयिन्]*
वातरोगिणि, बुह० २ उ०।

अणिल्लंछिय- त्रि० *[अनिर्लाञ्छित]*
अवर्धितके अखण्डीकृते, भग० ८ श० ५ उ०।

अणिवारिय- त्रि० *[अनिवारित]*
निषेधकरहिते, विपा० १ श्रु० २अ०।

अणिवारिया- स्त्री० *[अनिवारिका]*
नाऽस्ति निवारको, मैवं कार्षीरित्येवं निषेधको यस्याः साऽ-निवारिका। प्रतिषेधकरहितायाम्, नाया० १ श्रु० १६ अ०।

अणिव्वत- त्रि० *[अनिर्वृत]*
कदाचिदनुपशान्ते,। सूय० १ श्रु० ४ अ० २ उ०।
अपरिणते, दश० १ अ०।

अणिव्वाणि- पुं० *[अनिर्वाणि]*
असुखे, वव० १ उ०।

अणिव्वुइ- स्त्री० *[अनिर्वृति]*
पीडायाम्, आव०म०।

अणिव्वुड- त्रि० *[अनिर्वृत]*
अपरिणते, दश० ३ अ०।

अणिव्वेय- पुं० *[अनिर्वेद]*
उद्योगादनुपरमे, दश० ३ अ०।

अणिसिद्ध- त्रि० *[अनिषिद्ध]*
अनुमते, कल्प०।

अणिसीह- न० *[अनिशीथ]*
प्रकाशपाठात् प्रकाशोपदेशाद् वा निशीथमिति श्रुतभेदे, आव०म०।

भूआपरिणयविगयं, सद्दकरणं तहेवमनिसीहं।
पच्छन्नं तु निसीहं, निसीहनामं जयज्झयणं।

भूतमुत्पन्नम्, अपरिणतं नित्यं, विगतं विनष्टं, भूताऽपरिणत-विगतम्, समाहारत्वादेकवचनम्। किमुक्तं भवति ? 'उप्प-ण्णेइ वा, विगमेइ वा, धुवेइ वा' इत्यादि। किं विशिष्टम् ? शब्दकरणं शब्दः क्रियते यस्मिन्, तत् शब्दकरणम्। उक्तं च-यदुत्पादाद्यर्थप्रतिपादकः, तथा महत्ताऽपि शब्देन प्रतिपाद्य, तत् प्रकाशपाठत् प्रकाशोपदेशाद्वा निशीथ इति। आव०म०।

अणिस्सकड- न० *[अनिश्राकृत]*
ये रजोहरणादिवेषधारिनो मत् पितृतुल्यास्तेभ्यो दास्यामीति संकल्पं विनैवाऽवढौकनाय, बलिनिष्पादने, स्वपित्रादिभक्ति-मात्रकृते भक्ते च। पिंड०।

अणिस्सिओवस्सिय- पुं० *[अनिश्रितोपाश्रित]*
निश्रितं रागः, उपाश्रितं द्वेषः।
अथवा- निश्रितमाहारादिलिप्सा, उपाश्रितं शिष्यकुलाद्यपेक्षा, तद्वर्जितो यः सोऽनिश्रितोपाश्रितः। रागद्वेषवर्जनेन, आहार-शिष्यकुलाद्यपेक्षाराहित्येन च मध्यस्थभावं गते, ठा०८ ठा०।
अनिश्रितैःसर्वांशंसारहितैरुपाश्रितोऽङ्गीकृतोऽनिश्रितोपाश्रितस्म्
अथवा- निश्रितश्च शिष्यत्वादिप्रतिपन्नः, उपाश्रितश्च स एव वैयावृत्त्यकरत्वादिना प्रत्यासन्नतरस्तौ।

अथवा- निश्रितं रागः, उपाश्रितश्च द्वेषस्तम्।

अथवा- निश्रितञ्चाऽऽहारादिलिप्सा, उपाश्रितं च शिष्य-प्रतीच्छककुलाद्यपेक्षा, ते न स्तो यत्र तत्तथेति क्रियाविशेषणम् सर्वथा पक्षपातरहितत्वेन यथावदित्यर्थः। भग० ८ श०८ उ०।

अणिस्सिओवहाण- न० *[अनिश्रितोपधान]*

न निश्रितमनिश्रितं द्रव्योपधानम्- उपधानकमेव, भावोपधानं तपः। आव०४ अ०। आव०चू०।

शुभयोगसङ्गहाय परसाहाय्याऽनपेक्षे तपसि, सम० ३२ सम०।

ऐहिकफलाऽनपेक्षतपःकारियाताम्, चतुर्थो योगसंग्रह। आव०

अणिस्सिय-१ त्रि० *[अनिश्रित]*

निश्चयेनाऽऽधिक्येन च श्रितो निश्रितः। न निश्रितोऽनिश्रितः। क्वचिच्छरीरादावप्रतिबद्धे, । सूय०१ श्रु०१६ अ०।

आरम्भेषु सावद्याऽनुष्ठानरूपेष्वनिश्रितोऽसम्बद्धोऽप्रवृत्त इत्यर्थः। सूय०१ श्रु० ९ अ०। आचा०।

इह परलोकाऽऽशंसाविप्रमुक्ते, 'जावज्जीवाए अणिस्सिओहं नेव सयं पाणे अइवाएज्जा'। भग०।

अणिस्सिय-२ त्रि० *[अनिश्रित]*

कुलादिष्वप्रतिबद्धे, दश०१ अ०।

द्रव्यभावनिश्रया रहिते प्रतिबन्धविप्रमुक्ते, दश०९ अ०१ उ०।

अणिस्सिय-३ त्रि० *[अनिश्रित]*

कीर्त्यादिनिरपेक्षे वैयावृत्यादौ, पण्हा०१ अ०।

अणिस्सिय-४ त्रि० *[अनिश्रित]*

निश्रारहिते, कस्याऽपि साहाय्यमवाञ्छति, उत्त० १९ अ०।

अणिस्सिय-५ त्रि० *[अनिश्रित]*

अलिङ्गे अवग्रहे, निश्रितो लिङ्गप्रमितोऽभिधीयते-यथा यूथिका -कुसुमानामत्यन्तशीतमृदुस्निग्धीदरूपः प्राक् स्पर्शोऽनुभूतस्तेन -अनुमानेन लिङ्गे न तं विषयमपरिच्छिन्दत्, यदा ज्ञानं प्रवर्तते, तदाऽनिश्रितमलिङ्गम् अवगृह्णातीत्यभिधीयते। ठा० ६ ठा०।

अणिस्सिय-६ त्रि० *[अनिश्रित]*

अनिश्रितं नाम पुस्तकादिनिरपेक्षमेवाऽवगृह्णाति च। अथवा एकवारं श्रुतं पुनर्यदा कश्चिदनूद्य वदति, तदैव वक्तुं समर्थो नाऽन्यदा। एवं विधाने, किन्तु स्मरणनिरपेक्ष एव भवतीति। दशा०४ अ०।

अणिस्सियकर- त्रि० *[अनिश्रितकर]*

रागद्वेषपरिहारतो यथाऽवस्थितव्यवहारकारिणि, वव० ३ उ०।

अणिस्सियप्प- पुं० *[अनिश्रिताऽऽत्मन्]*

अनिदान, 'अणिस्सियप्पा अपडिबद्धा' आव०६ अ०।

अणिस्सियवयण- त्रि० *[अनिश्रितवचन]*

रागादिना वाक्यकालुष्यवर्जिते, दशा० ४ अ०।

अणिस्सियवयणया- स्त्री० *[अनिश्रितवचनता]*

निश्रितं क्रोधादीनाम्, अथवा रागद्वेषाणां निश्रामुपगतम्। न निश्रितमनिश्रितम्। वव० ३ उ०।

मध्यस्थ वचनतायाम्, ठा० ८ ठा०।

रागाद्यकलुषवचनतायाम्, उत्त० १ अ०।

अणिस्सियववहारि- पुं० *[अनिश्रितव०हारिन्]*

निश्रा रागः, निश्रा संजाता अस्येति निश्रितः। न निश्रितोऽ–निश्रितः। स चाऽसौ व्यवहारश्चाऽनिश्रितव्यवहारः, तत्करण-शीला अनिश्रितव्यवहारिणः। अरागेण व्यवहारकारिणि, । वव० १ उ०।

अणिह-१ पुं० *[अनिह]*

निहन्यत इति निहः। न निहोऽनिहः। क्रोधादिभिरपीडिते, तपःसंयमसहने वा, निगूहितबलवीर्ये। सूय०१ श्रु०२अ०१ उ

निहन्यन्ते प्राणिनः संसारे यया सा निहा माया। न विद्यते सा यस्याऽसावनिहः। मायाप्रपञ्चरहिते, । सूय० १ श्रु० ८ अ०। दश०।

अणिह-२ पुं० *[अनिह]*

परीसहोपसर्गे, निहन्यत इति निहः। न निहोऽनिहः। उपसर्गै-रपराजिते,सूय० १ श्रु० २ अ०२ उ०।

अणिह- ३ पुं० *[अनिहत]*

निश्चयेन निहन्यत इति निहतः। न निहितोऽनिहतः। भावरिपु-भिरिन्द्रियकषायकर्मभिरनिहते, आचा० १ श्रु० ४अ० ४उ०।

सर्वत्र ममत्वरहिते,सूय०१ श्रु०२ अ०२ उ०।

अणिहतय- त्रि० *[अनिहतक]*

निरुपक्रमायुष्कत्वात् उरो युद्धे च, भूम्यामपातित्वाद् घातम् अप्रापिते, सम०।

अणिहयरिउ- पुं० *[अनिहतरिपु]*

भद्दिलपुरवास्तव्यनागगृहपतेः सुलसानाम्न्यां भार्यायां जातेऽ-न्यतमे पुत्रे, तत्कथाऽन्तकृद्दशासु ३ वर्गे ४ अध्ययने सूचिता।

तत्रैव प्रथमाध्ययनोक्ताऽणीयसकुमारस्येव भावनीया यथा-द्वात्रिंशद् भार्याः, द्वात्रिंशत्क एव दानम्, विंशतिवर्षाणि पर्यायः, चतुर्दशपूर्वाणि श्रुतम्, शत्रुञ्जये सिद्धिः, तत्त्वतस्त्वयं वसुदेवदेवकीसुतः। अंत० ३ वर्ग० ४ अ०।

अणिहुत- त्रि० *[अनिभृत]*

अनुपशान्ते, पण्हा० ३अ०, उव०

त्रिदण्डिनि, बुह० ३ उ०।

'अणिहुआ य संलावा' अतिभृताश्च संलापा गुर्वादिनाऽपि निष्ठुरवक्रोक्त्यादयः। पन्न०। बुह०।

अणिहुतपरिणाम- त्रि० *[अनिभृतपरिणाम]*
अनिभृतोऽनुपशमपरः परिणामो येषां ते, अनुपशमपरपरिणामेषु, पण्हा० १ अ०

अणिहुतिंदिय- त्रि० *[अनिभृतेन्द्रिय]*
अनुपशान्तेन्द्रियेषु देहेषु, सम०। पण्हा० ५ अ०।

अणीइपत्त- त्रि० *[अनीतिपत्र]*
न विद्यते ईतिर्गडुरिकादिरूपा येषु तान्यनीतीनि। अनीतीनि पत्राणि येषां ते तथा। ईतविरहितच्छदेषु, जंबू० १ वक्ष०।

अणीय- न० *[अनीक]*
हस्त्यश्वरथपदातिवृषभनर्त्तकगाथकजनरूपे सैन्ये,उव०। भग०

अणीयस- पुं० *[अणीयस]*
भद्दिलपुरवास्तव्यनागगृहपतेः सुलसानाम्न्यां भार्यायां जातेअन्यतमे पुत्रे, अंत०।

अणीसड-त्रि० *[अनिसृष्ट]*
हस्तप्रमाणादवग्रहादस्फोटिते, बुह० ३ उ०।

अणीहड- त्रि० *[अनिर्हृत]*
अनिष्कासिते, बुह०१ उ०।
अबहिर्निर्गते, अनात्मीकृते च। आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

अणीहारिम- न० *[अनिर्हारिम]*
गिरिकन्दरादौ विधीयमाने पादोपगमनमरणे, कलेवरस्याऽनिर्हरणीयत्वात् तत्त्वम्। भग० १३ श० ८ उ०। ठा०।

अणु-१ त्रि० *[अणु]*
प्रमाणतः स्तोके, पण्हा० ३ अ०। आव०म०।सूय०।
सूक्ष्मे लघौ, विशे०। आतु०। ठा०।
लघीयसि, आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ०।
परमाणौ, आव०४ अ०।
अणुः परमाणुर्निरंशो निरवयवो निष्प्रदेशोऽप्रदेश इति। विशे०।

अणु-२ अव्य० *[अनु]*
पश्चाच्छब्दार्थे, आचा० १ श्रु०५ अ०५ उ०।
पश्चाज्जाते, त्रि०। ठा० १ ठा०।
अनुरूपे, उत्त० १२ अ०।
समीपे, बुह० ३ उ०।
अवधारणे, बुह० १ उ०।

अणुअ-१ त्रि० *[अणुक]*
तनुके, अणुकानां तनुकानामतिसूक्ष्माणां सुकुमालानां लोम्नां स्निग्धा छविर्यत्र तत्तथा। जंबू० ३ वक्ष०।

अणुअ-२ त्रि० *[अणुक]*
मिणचवाख्ये धान्यभेदे, युगन्धर्याम्, स्त्री०। बुह०।

अणुअतंत- त्रि० *[अनुवर्त्तमान]*
उत्तरदेशकालमागते, निसि० ५ उ०

अणुअतणुअ– त्रि० *[अनुकतनुक]*
अतिसूक्ष्माणाम्। जम्बू०

अणुइण्ण- त्रि० *[अनुचीर्ण]*
आगते, कायः शरीरं तत्संस्पर्शमनुचीर्णाः कायसंगमागताः। आचा० २ श्रु० ३ चू०।

अणुउद- पुं० *[अनृत]*
अस्वकाले, 'विसमं पवालिनो परिणमंति अणुदूसुदेंति पुप्फफलं'। ठा० ५ ठा० ३ उ०।

अणुओइय- त्रि० *[अनुयोजित]*
प्रवर्तिते, नं०।

अणुओग- पुं० *[अनुयोग]*
अणु सूत्रं, महान् अर्थः ततो महतोऽर्थस्याऽणुना सूत्रेण योगोऽ-नुयोगः।अनुयोजनमनुयोगः।अनुरूपो योगोऽनुयोगः। अनुकूलो वा योगोऽनुयोगः। उव०।
व्याख्याने विधिप्रतिषेधाभ्यामर्थप्ररूपणे, विशे०। नाया०।
निजेनाऽभिधेयेन सार्धमनुरूपे सम्बन्धे। सम०। जीवा०। ठा०। अनुओ०। आव०म०। आव०।

अणुओगगअ- पुं० *[अनुयोगगत]*
अनुयोगः प्रथमानुयोगः, तीर्थकरादि पूर्वभवादिव्याख्यानग्रन्थः गण्डिकाऽनुयोगश्च भरतनरपतिवंशजातानां निर्वाणगमनानुत्तर विमानगमनवक्तव्यताव्याख्या नग्रन्थ इति द्विरूपेऽनुयोगे गतोऽनुयोगगतः। दृष्टिवादांशभेदे दृष्टिवादान्तर्गतेऽधिकारे, अवयवे समुदायोपचाराद् दृष्टिवादे च। ठा० १० ठा०।

अणुओगतत्तिल्ल- स्त्री० *[अनुयोगतृप्त]*
अनुयोगग्रहणैकनिष्ठे, बुह० १ उ०।

अणुओगत्थ- पुं० *[अनुयोगार्थ]*
व्याख्यानभूतेऽर्थे, आचा० १ श्रु०१ अ०१ उ०।

अणुओगदायय- पुं० *[अनुयोगदायक]*
सुधर्मस्वामिप्रभृतावनुयोगदायिनि, 'वंदित्तु सव्वसिद्धे, जिणे य अणुओगदायए सव्वे। आयारस्स भगवओ, निज्जुत्तिं कित्तइस्सामि' ।१ । आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

अणुओगदार-१ न० *[अनुयोगद्वार]*
उत्कालिक-श्रुतविशेषे, नं०।
अध्ययनार्थकथनविधिरनुयोगः। द्वाराणीव द्वाराणि, महापुरस्य इव सामायिकस्याऽनुयोगार्थं व्याख्यानार्थं द्वाराण्यनुयोग द्वाराणि उपक्रमादिषु व्याख्यानप्रकारेषु, अत्र नगरदृष्टान्तं वर्णयन्त्याचार्याः। अनुओ०। उत्त०।

अणुओगदार-१ न० *[अनुयोगद्वार]*
अस्वाध्याये परिहर्तव्य*विशेषः। निशी०
अनुयोगद्वारम्, *विशेषः। आव०

अणुओगधर- पुं० *[अनुयोगधर]*
अनुयोगिके, वव० ३ उ०।
'अणुओगधरो अप्पणो गारवाणि रिहरणत्थं सो ताराण य लज्जाणि रिहरणत्थं' आह अनुयोगकथाम्। निसि० २० उ०।

अणुओगपर- त्रि० *[अनुयोगपर]*
सिद्धान्तव्याख्याननिष्ठे, जीवा०१ प्रति०।

अणुओगि- पुं० *[अनुयोगिन्]*
अनुयोगो व्याख्यानं प्ररूपणेति यावत् स यत्राऽस्ति। व्याख्या-नार्थं क्रियमाणे प्रश्नभेदे, यथा- 'चउहिं समएहिं लोगो' इत्यादिप्ररूपणाय 'कइहिं समएहिं' इत्यादि। ठा० ६ ठा०।

अणुओगिय- त्रि० *[अनुयोगिक]* प्रव्रजिते, नं०।
'अणुओगियवरवसभे, नाइलकुलवंसनंदिकरे' नं०।

अणुधरी- स्त्री० *[अणुन्धरी]*
द्वारवतीवास्तव्यस्याऽर्हन्मित्रस्य भार्यायाम्, यस्याः पुत्रस्य जिन देवस्य आत्मदोषोपसंहारे कथा। आव०४ अ०। आव०चू०।

अणुकंप-त्रि० *[अनुकम्प]*
अनुशब्दोऽनुरूपार्थे, ततश्चाऽनुरूपं कम्पते चेष्टत इत्यनुकम्पः। अनुरूपक्रियाप्रवृत्तौ, उत्त० १२ अ०।

अणुकंप- त्रि० *[अनुकम्प्य]*
अनुकम्पनीये, बृह० ६ उ०।

अणुकंपण- न० *[अनुकम्पन]*
दुःखार्तानां बालवृद्धाऽसहायानां यथादेशकालमनुकम्पाकरणे, वव० ३ उ०।

अणुकंपय- त्रि० *[अनुकम्पक]*
भगवतो भक्ते, अनुकम्पायाश्च भक्ति वाचित्वम्, 'आयरियऽणु-कंपाए, गच्छो अणुकंपिओ महाभागो' इति वचनात्। कल्प०।
आत्महिते प्रवृत्ते, ठा० ४ ठा० ४ उ०।

अणुकंपा- स्त्री० *[अनुकम्पा]*
अनुकम्पनमनुकम्पा। दयायाम्, निसि० १ उ०।
अनुकम्पा, कृपा, दयेत्येकार्थाः। उव०।
भक्तपानादिभिरुपष्टम्भे च, भग० ८ श० ८ उ०।
'अनुकम्पाऽनुकम्प्ये स्यात्' अनुकम्पाऽनुकम्प्ये विषये, ठा०।

अणुकंपादाण- न० *[अनुकम्पादान]*
अनुकम्पया कृपया दानं दीनानाथविषयमनुकम्पादानम्।
। ठा० १० ठा०।

अणुकंपासय- पुं० *[अनुकम्पाशय]*
अनुकम्पाप्रधानमाशयोऽनुकम्पाशयः। अनुक्रोशप्रधाने चित्ते, सम०।
'अणुकंपासयप्पओगतिकालमइविसुद्धभत्तपाणाइं' अनुकम्पा अनुक्रोशस्तत्प्रधान आशयश्चित्तं तस्य प्रयोगो व्यावृत्तिरनुकम्पा -शयप्रयोगस्तेन, सम०।

अणुकंपि- स्त्री० *[अनुकम्पिन्]*
अनुकम्पयमाने तच्छीले, सूय० १ श्रु० ३ अ० ३ उ०।

अणुकड्ढेमाण- त्रि० *[अनुकर्षत्]*
अनु पश्चात् कर्षन् अनुकर्षन्।
पृष्ठतः पश्चात् कृत्वा समाकर्षति, नं०।

अणुकप्प- पुं० *[अनुकल्प]*
ज्ञानदर्शनचारित्रतपोवृद्धानां पूर्वाचाऽऽर्याणां ज्ञानग्रहणेन च तपोविधानेषु च अनुकृतिकरणे, पंच० चू०

अणुकरण- न० *[अनुकरण]*
सीवनलेपनादि कुर्वन्तं दृष्ट्वा ब्रूते- इच्छाकारेण तवेदमहं करिष्यामीत्युत्त्वा तथा करणे, वव० १ उ०।

अणुकरणकारावणणिसग्ग- पुं० *[अनुकरणकारापणनिसर्ग]*
अनुकरणं नाम यत्सीवनलेपादि कुर्वन्तं दृष्ट्वा ब्रूते-इच्छाकारेण तवेदमहं करिष्यामि ? कुरुते च। कारापणं तद् यत्स्वयं करणे कुशलोऽन्यानपीच्छाकारेण कारापयति, तस्मिन् निसर्गः स्व-भावो यस्य सोऽनुकरणकारापणनिसर्गः, इत्थंभूतस्तस्य स्व-भावो यदि अनभ्यर्थित एव करोति, कारयतीति भावः। अन-भ्यर्थनेनैव कुर्वन्ति, कारयन्ति च।भावसङ्ग्रहविशेषे,
। वव० ३ उ० ।

अणुकहन- न० *[अनुकथन]*
आचार्यप्ररूपणातः पश्चात् कथने, *० १ श्रु०१३ भग०।

अणुकुइय- त्रि० *[अनुकुचित]*
अनुक्षिप्ते, निसि० ८ उ०।

अणुकुड्ड- अव्य० *[अनुकुड्य]*
अनुशब्दस्य समीप-अर्थद्योतकत्वात्, अनुकुड्यमुपकुड्यम्। बृह० ३ उ०
कुड्यसमीपवर्त्तिनि प्रदेशे, बृह० ३ उ०।

अणुकूल- त्रि० *[अनुकूल]*
अनुलोमे, आचा० १ श्रु० ३ अ० ४ उ०। ठा०। निसि०।
अनुरूपे, आव०म०।
अप्रतिकूले, पण्हा० ४ अ०।
आचार्याणामन्येषां वा पूज्यानां वैयावृत्यादिना हितकारिणि उत्सारकल्पिकयोग्यतावति, बृह० १ उ०।

अणुकूलवाय- पुं० *[अनुकूलवात]*
आघ्रायकविवक्षिते पुरुषाणां पवने, जीवा० १ प्रति०।

अणुक्कंत- त्रि० *[अनुक्रान्त]*
अनुष्ठिते आसेवनापरिज्ञया सेविते, आचा०१ श्रु०९ अ०४ उ०।

अणुक्कंत- त्रि० *[अन्वाक्रान्त]*
अनुचीर्णे, आचा०१ श्रु०९ अ० ३ उ०

अणुक्कम- पुं० *[अनुक्रम]*
अनुपरिपाट्याम् आव०चू०।
आनुपूर्वी अनुक्रमोऽनुपरिपाटीति पर्यायाः।अनुओ०। आचा०। अणुपरिवाडित्ति वा अणुक्कमेति वा एगट्ठा। आव०चू०१० अ०।

अणुक्कसाइ-१ पुं० *[अनुत्कशायिन्]*
उत्क उत्कण्ठितः सत्कारादिषु शेते इत्येवंशील उत्कशायी, न तथा अनुत्कशायी। सर्वधनादित्वादिनिः। सत्कारादिकम-कुर्वतेऽकुप्यति, तत्संपत्तौ वाऽनहंकारवति, उत्त० ३ अ०।

अणुक्कसाइ-२ त्रि० *[अणुकषायिन्]*
अणवः स्वल्पाः संज्वलननामान इति यावत्। कषायाः क्रोधादयोऽस्येति सर्वधनत्वादिनिप्रत्ययेऽणुकषायी। संज्वलन- कषायविशिष्टे, उत्त०१५ अ०।

अणुक्कसाइ- ३ त्रि० *[अनुत्कषायिन्]*
उत्कषायी प्रबलकषायी, न तथा अनुत्कषायी। अप्रबलकषाये, उत्त०१५ अ०।
सत्कारादिना हर्षरहिते, 'अणुक्कसाई अप्पिच्छे अन्नाए सीअलोलुए' उत्त० २ अ०।

अणुक्कस्स- पुं० *[अनुत्कर्षवत्]*
अष्टमदस्थानानामन्यत मेनाऽप्युत्सेकमकुर्वति, । सूय०१ श्रु०२ अ०१ उ०।

अणुक्कोस- पुं० *[अनुत्कर्ष]*
आत्मनः परेभ्यः सकाशाद् गुणैरुत्कर्ष-णमुत्कृष्टताभिधानम्। गौणमोहनीयकर्मणि, भग०१२ श०५ उ०। सम०।
आत्मगुणाभिमाने, ठा०४ ठा०४ उ०।

अणुक्कोस- पुं० *[अनुक्रोश]*
दयायाम्, ठा०४ ठा०४ सम०।

अणुक्खित्त- त्रि० *[अनुक्षिप्त]*
पश्चादुत्पाटिते, 'अणुक्खित्तंसि धूगंसि'। नाया०८ अ०।

अणुगंतव्व- त्रि० *[अनुगन्तव्य]*
अनुसर्त्तव्ये, ठा०५ ठा०१ उ०।

अणुगच्छण- न० *[अनुगमन]*
आगच्छतः प्रत्युद्गमनरूपे कायविनयभेदे, दश०१ अ०।

अणुगच्छमाण- त्रि० *[अनुगच्छत्]*
अनुवर्त्तमाने, 'अणुगच्छमाणे वि तहं विजाणे, तहा तहा साहू अककसेणं'। सूय०१ श्रु० १४ अ०। आचा०।
अनुगच्छन्–अवगच्छन्–बुद्ध्यमानः सन्। आचा०

अणुगम- पुं० *[अनुगम]*
अनुगमनमनुगमः, अनुगम्यतेऽनेनास्मिन्नस्मादिति वाऽनुगमः। सूत्राऽनुकूले परिच्छेदे, ठा० १ ठा०।
निक्षिप्त*स्य अनुकूले परिच्छेदे, अर्थे, कथने च। जंबू०१ वक्ष०
*स्यानुरूपेऽर्थाख्याने, वव०१ उ०। आव०म०। आचा०। संहितादिव्याख्यानप्रकारप्ररूपे,
उद्देशनिर्द्देशनिर्गमादिद्वारकला- पके वा। सम०।
अनुगमनमनेनास्मादस्मिन्निति वा अर्थकथनम्। आचा०
अनुयोगद्वारे, अनुओ०।

अणुगमण– पुं० *[अनुगमनम]*
आगच्छतः प्रत्युद्गमनम्। उत्त०

अणुगम्म- अव्य० *[अनुगम्य]*
बुद्ध्वा इत्यर्थे,सूय०१ श्रु०१४ अ०।

अणुगय- त्रि० *[अनुगत]*
पूर्वमवगते, विशे०।
अव्यवच्छिन्नतयाऽनुवृत्ते, पण्हा० ३ अ०
मतिसहितं ति वा मतिअणुगतं वा एगट्ठा।आव०चू०१ अ०।
पितृविभूत्याऽनुयाते पितृसमे पुत्रे, पुं०। ठा०८ ठा० ३ उ०।
आनुकूल्ये, न०। सम०।
अभिप्रायानुवर्तिनमात्मानम्। उत्त०
युक्तम। दश०।। उत्त०।

अणुगवेसेमाण- त्रि० *[अनुगवेषयत्]*
सामायिकपरिसमाप्त्यनन्तरं गवेषयति, भग० ८ श० ५ उ०।

अणुगाम- पुं० *[अनुग्राम]*
अनुकूलो ग्रामोऽनुग्रामः। वव० २ उ०।
विवक्षितग्राममार्गानुकूले ग्रामे लघुग्रामे, एकस्माद् ग्रामादन्य-स्मिन् ग्रामे, उत्त० ३ अ०।
एकग्रामाल्लघु पश्चाद्वावाभ्यां स्थिते ग्रामे, ठा०५ ठा०२ उ०।
विवक्षितग्रामादनन्तरे ग्रामे, उव०।

अणुगामि- त्रि० *[अनुगामिन्]*
साध्यमसाध्यमग्न्यादिकमनुगच्छति, साध्याऽभावे न भवति, यो धूमादिहेतुः, सोऽनुगामी। अदुष्टहेतौ, ठा० ३ ठा० ३ उ०।
अनुयातरि, आव०५ अ०।
मोक्षायाऽनुगच्छति, वव०१० उ०।

अणुगामिय- त्रि० *[अनुगामिक]*
उपकारिसत्कालान्तरमनुयाति तदनुगामिकम्।ठा०५ठा०१उ०
अनुगमनशीले भवपरम्परानुबन्धिसुखजनके, । ठा०।
अनुगमनशीलेऽवधिज्ञाने,सूय०२ श्रु०२ अ०२उ०।
गच्छन्तमनुगच्छतीति अनुगामिकः। अनुचरे, सूय० २ श्रु० २ अ० २ उ०।
अकर्तव्यहेतुभूतेषुचतुर्दशस्वसदनुष्ठानेषु,सूय०२श्रु०२अ०२उ०

अणुगामियत्त- न० *[अनुगामिकत्व]*
भवपरम्परासु सानुबन्धसुखे, उव०।

अणुगिद्ध- त्रि० *[अनुगृद्ध]*
प्रत्याशक्ते,सूय०१ श्रु० ३ अ० ३ उ०।

अणुगिद्धि- स्त्री० *[अनुगृद्धि]*
अभिकाङ्क्षायाम्, उत्त० ३ अ०।

अणुगिलइत्ता- अव्य० *[अनुगीर्य]*
भक्षयित्वेत्यर्थे, नाया०७ अ०।

अणुगीय- त्रि० *[अनुगीत]*
मूलाचार्यात्पाश्चात्यशिष्यैः। कृते ग्रन्थे, महत्थरूवा वयणप्प-भूया गाहाणुगीया नरसंघमज्झे'अन्विति तीर्थकृद्गणधरादिभ्यः पश्चाद् गीता अनुगीता। कोऽर्थः? तीर्थकरादिभ्यः श्रुत्वा प्रति-पादिता, स्थविरैरिति शेषः।अनुलोमं वा गीताऽनेन श्रोत्रानु-कूलैव देशना क्रियते इति ख्यापितं भवति। उत्त०१३ अ०।

अणुगुरु- त्रि० *[अनुगुरु]*
पूर्वगुरुभिराचरितं तत्तथैव पाश्चात्यैरपि आचरणीयमिति गुरुपारम्पर्ये व्यवस्थया व्यवहरणीये, बुह० १ उ०।

अणुग्गह- पुं० *[अनुग्रह]*
उपकारे, उव०।
ज्ञानाद्युपकारे, ठा०।
तिविहे अणुग्गहे पन्नत्ते। तं जहा-आयाणुग्गहे, पराणुग्गहे, तदुभयाणुग्गहे य। तत्र आत्मानुग्रहोऽध्ययनादिप्रवृत्तस्य, परानुग्रहो वाचनादिप्रवृत्तस्य, तदुभयानुग्रहः शास्त्रव्याख्यान शिष्य सङ्ग्रहादिप्रवृत्तस्येति। ठा० ३ ठा० ३ उ०।
'सर्वज्ञोक्तोपदेशेन, यः सत्त्वानामनुग्रहम्। करोति दुःख-तप्तानां, स प्राप्नोत्यचिराच्छिवम्' आव०म०। पन्न०।
अनुपघाते, उज्ज्वालने निसि०१ उ०।

अणुग्गहता- स्त्री० *[अनुग्रहता]*
अनुगृह्यत इति, अनुग्रहः। अनुग्रहणे, वव०१ उ०।

अणुग्गहतापरिहार- पुं० *[अनुग्रहतापरिहार]*
अनुग्रहतया परिहारोऽनुग्रहतापरिहारः। खोटादिभङ्गरूपे परि-हारभेदे, वव०१ उ०।

अणुग्घाइम- न० *[अनुद्घातिम]*
उद्घातो भागपातस्तेन निर्वृत्तमुद्धातिमं लघ्वित्यर्थः। यत उक्तम्- 'अद्धेण छिन्नसेसं पुव्वद्धेणं तु संजुयं काओ। दिज्जाइ लहुयदाणं, गुरुदाणं तत्तियं चेव' । ('उग्घाइअ' शब्देऽस्या व्याख्या द्रष्टव्या) एतन्निषेधादनुद्घातिमम्। तपोगुरुणि प्राय-श्चित्ते, तद्योगात् तदर्हेषु साधुषु च। ठा० ३ ठा० ४ उ०।

अणुग्घाइय- पुं० *[अनुद्घातिक]*
न विद्यते उद्घातो लघुकरणल-क्षणो यस्य तपोविशेषस्य तदनुद्घातम्, यथाश्रुतदानमित्यर्थः, तद्येषां प्रतिसेवाविशे-षतो ऽस्ति तेऽनुद्घातिकाः। ठा० ५ ठा० ३ उ०।
उद्घातो नामः भागपातः, साऽन्तरहानं वा, स विद्यते येषु ते उद्घातिकाः, तद्विपरीता अनुद्घातिकाः। तपोगुरुप्रायश्चित्ताऽ-र्हेषु , बुह०४ उ०।
त्रयोऽनुद्घातिकाः– तओ अणुग्घाइयापन्नत्ता। तं जहा-हत्थ-कम्मं करेमाणे, मेहुणं सेवमाणे, राइभोयणं भुंजमाणे। ठा० ३ ठा०४ उ०।
त्रयस्त्रिसंख्याका अनुद्घातिकाः। उद्घातो नाम-'अद्धेणच्छि-न्नसेसं' इत्यादिविधिना भागपातः, सान्तरहानं वा, स विद्यते येषु ते उद्घातिकाः, तद्विपरीता अनुद्घातिकाः, प्रज्ञप्तास्तीर्थ-करादिभिः प्ररूपिताः, तद्यथोपदर्शनार्थः। हन्ति हसति वा मुखमावृत्याऽनेनेति हस्तः, शरीरैकदेशो निक्षेपाऽऽदानादि-समर्थः, तेन यत्कर्म क्रियते तद् हस्तकर्म, तत् कुर्वन्। तथा स्त्रीपुंसयुग्मं मिथुनमुच्यते, तस्य भावः कर्म वा मैथुनं, तत्प्रतिसेवमानः। तथा रात्रौ भोजनमशनादिकं भुञ्जानः। एष सूत्रार्थः। बुह० ४ उ०

अणुग्घाय- पुं० *[अनुद्घात]*
न विद्यते उद्घातो लघूकरण लक्षणो यस्य तदनुद्घातम्। आचा०१ श्रु० ८ अ० २ उ०।

अणुग्घायण- न० *[अणोद्घातन]*
अणत्यनेन जन्तुगणश्चतुर्गतिकं संसारमित्यणं कर्म, तस्योत्प्रा-बल्येन घातनमपनयनमणोद्घातनम्। कर्मण उद्घातने, 'से मेहावी जे अणुग्घायणस्स खेयण्णे जे य बंधए मोक्खमण्णेसी कुसले पुण णो बद्धे णो मुक्के। आचा०१ श्रु०२ अ०६ उ०।

अणुग्घासंत- त्रि० *[अनुग्रासयत्]*
आत्मना गृहीत्वा पश्चाद् ग्रासं ददति, 'जे भिक्खू मा उग्गामस्स मेहुणवडियाए अणुग्घासेज्ज वा अणुपाएज्ज वा, अणुग्घासंतं वा अणुपायंतं वा साइज्जइ'। निसि० ७ उ०।

अणुचर- त्रि० *[अनुचर]* अनुपरिहारिकपदस्थितानां यावत् षाण्मास-कल्पस्थितानां सेवाकारके, उत्त० २८ अ०।

अणुचरित्ता- त्रि० *[अनुचर्य]*
आसेव्य, सम०।

अणुचिंतण- न० *[अनुचिन्तन]*
पर्यालोचन, आव० ४ अ०।

अणुचिंता- स्त्री० *[अनुचिन्ता]*
अनुचिन्तनमनुचिन्ता, मनसैवाविस्मरणनिमित्ते सूत्रानुस्मरणे, आव०४ अ०।

अणुचिऊण- अव्य० *[अनुच्युत्वा]*
पश्चाच्च्युत्वेत्यर्थे, 'अणुचिऊणेहागओ तिरियपक्खीसु'। महा० ६ अ०।

अणुचिण्णवं- त्रि० *[अनुचीर्णवत्]*
अनुष्ठितवति, आचा० १ श्रु० ८ अ० ६ उ०।
आचरितम्। आव०।

अणुचिय- त्रि० *[अनुचित]*
अभावितशैक्षे, बृह० १ उ०।

अणुचीइ- अव्य० *[अनुचिन्त्य]*
औत्पत्तिक्यादिभेदभिन्नया बुद्ध्या पर्यालोच्येत्यर्थे, । आव० ४ अ०, । जीवा०। सूय०।
अनुविचिन्त्य पर्यालोच्य भाषमाणः सतां साधूनां मध्ये लभते प्रशंसनम्। दश० ७ अ०। सूय०।

अणुचीइभासि- त्रि० *[अनुविचिन्त्यभाषिन्]*
अनुविचिन्त्य पर्यालोच्य भाषते इत्येवंशीलोऽनुविचिन्त्यभाषी। वव० १ उ०।
आलोचितवक्तरि, दश० ९ अ०।

अणुच्चरिय- त्रि० *[अनुच्चरित]*
अशब्दिते, महा० १ चू०।

अणुच्चार्य- अव्य०।
निन्द्यत्वादुच्चारयितुमयोग्ये, अभिग्गहियमिच्छदिट्ठी अणुच्चरिय णामधेज्जे सुज्जसिवे महा० १ चू०।

अणुच्चसद्द- पुं० *[अनुच्चशब्द]*
अनुच्चस्वरे, न विद्यते उच्चः शब्दः स्वरो यस्य तदनुच्चशब्दः, तद्व०च्छिन्नं शब्दं विविक्तममिलिताक्षरमित्यर्थः, तस्मिन्। वव० १ उ०।

अणुच्चाकुइय- पुं० *[अनुच्चाकुचिक]*
उच्चा हस्तादि यावत् येन पिपीलिकादेर्वधो न स्यात् सर्पादेर्वा दंशो न स्यात्, अकुचाकुचपरिस्पन्द इति वचनात्। परिस्पन्द-रहिता निश्चेलेति यावत्, ततः कर्मधारये उच्चा कुचा शय्या कम्बादिमयी, सा नो विद्यते यस्य स अनुच्चाकुचिकः। नीच-सपरिस्पन्दशय्याके, कल्प०।

अणुजाण- न० *[अनुयान]*
रथयात्रायाम्, बृह० १ उ०। वव० १ उ०।

अणुजाणण- न० *[अनुज्ञापन]*
अनुमोदने, सूय० १ श्रु० ९ अ०। ठा०।

अणुजाणाहिगार- पुं० *[अनुयानाधिकार]*
रथस्य पृष्ठतोऽनुव्रजनेन प्रतिष्ठाधिकारे, जीवा० १ प्रति०।

अणुजाणित्तए- अव्य० *[अनुज्ञातुम्]*
तथैव सम्यगेतद्धारयाऽन्येषां च प्रवेदयेत्येवमभिधातुमित्यर्थे, ठा० २ ठा० १ उ०।

अणुजात- त्रि० *[अनुयात]*
अनुगते, पण्हा० २ आश्र० द्वा०।
अनुजातशब्दः सदृशवचनः। वृषभस्य अनुजातः सदृशो वृष-भाऽनुजातः। सूर० १२ पाहु०। चंद० १२ पाहु०।
अनुरूपः सम्पदा पितुस्तुल्यो जातोऽनुयातः, अनुगतो वा पितृ-विभूत्याऽनुयातः। पितृसमे सुतभेदे, यथा महायशाः, आदि-त्ययशसा पित्रा तुल्यत्वात्। ठा० ४ ठा०१ उ०।

अणुजीवंति– धा० *[अनुजीवन्ति]*
तदुपार्जितवित्ताद्युपभोगतः उपजीवन्ति। उत्त० ४४१।

अणुजुत्ति- स्त्री० *[अनुयुक्ति]*
अनुगतयुक्तौ, 'सव्वाहिं अणुजुत्तीहिं, अचयंता जवित्तए' सर्वाभिरर्थानुगताभिर्युक्तिभिः सर्वैरव हेतुदृष्टान्तैः प्रमाणभूतैः अशक्नुवन्तः। सूय० १ श्रु० ३ अ० ३ उ०।
'सव्वाहिं अणुजुत्तीहिं, मतिमं पडिलेहिया' सर्वा याः काश्च-नाऽनुरूपाः पृथिव्यादिजीवनिकायसाधनत्वेनाऽनुकूला युक्तयः साधनानि, यदि वा सिद्धविरुद्धाऽनैकान्तिकपरिहारेण पक्षध-र्मत्वसपक्षसत्त्वविपक्षव्यावृत्तिरूपतया युक्तिसंगता युक्तयस्ता-भिर्मतिमान्। सूय० १ श्रु० ४ अ० १ उ०।

अणुजेट्ठ- त्रि० *[अनुज्येष्ठ]*
जेष्ठसमीपे वर्तमाने, यथा- एको द्विकस्य ज्येष्ठः, त्रिकस्याऽनु-ज्येष्ठः, चतुष्कादीनां तु ज्येष्ठाऽनुज्येष्ठः। आव०म०। अनु०।

अणुज्जियत्त- न० *[अनूर्जितत्व]*
वराकत्वे, बृह० ३ उ०।

अणुज्जुय- त्रि० *[अनृजुक]*
असरले कथञ्चित् सरलं कर्तुमशक्ते, उत्त० ३४ अ०।
वक्रे, पण्हा०२ आश्र० द्वा०।
अधर्मद्वारस्य नवमं नाम। पण्हा० २६।

अणुज्झावित्ता- अव्य० *[अनुध्याय]*
चिन्तयित्वेत्यर्थे, 'कम्मगरसालाए अणुज्झावित्ता पडिमं ठित्तो'। आव०म०।

अणुट्ठाण- न० *[अनुष्ठान]*
आचारे, ठा०७ ठा०।
चैत्यवन्दनादिके आचरणे,आचा०।
क्रियाकलापे, गच्छा०१ अधि०।
कालाऽध्ययनादौ, भग०२ श०१ उ०।

अणुट्ठिय-१ त्रि० *[अनुष्ठित]*
अनुक्रान्ते, आचा०१ श्रु०९ अ०४ उ०। आव०म०।
'अहवा अवितहं णो अणुट्ठिअं'। सूय०१ श्रु०२ अ०२ उ०।

अणुट्ठिय-२ त्रि० *[अनुत्थित]*
द्रव्यतो निषण्णे, भावतो ज्ञानदर्शनचारित्रोद्योगरहिते, आचा०१ श्रु०४ अ०१ उ०।

अणुणंत- त्रि० *[अनुनयत्]*
स्वाभिप्रायेण शनैः शनैः प्रज्ञापयति, । उत्त०१४ अ०।

अणुणाइ- त्रि० *[अनुनादिन्]*
'गज्जियसद्दस्स अणुणाइणा' अनुनादिना सदृशेन। कल्प०।

अणुणाइत्त- न० *[अनुनादित्व]*
प्रतिरवोपेततारूपे सत्यवचनातिशये, सम० ३५ सम०। रा०।

अणुणाय- पुं० *[अनुनाद]*
मेघस्वनादौ,'अणुणादे पयाहिणजले जिणघरे वा'। आव०म०

अणुणाय- त्रि० *[अनुनास्य]*
अनुनासिके नासाकृतस्वरे, ठा०७ ठा०।
नासा विनिर्गतस्वरानुगते गेय-दोषभेदे, जंबू०७ वक्ष०। अनु०। जीवा०।

अणुणिज्जमाण- त्रि० *[अनुनीयमान]*
प्रार्थ्यमाने, 'अह एवं पि अणुणिज्जमाणे'। निसि०१ उ०।

अणुण्णत- त्रि० *[अनुन्नत]*
अनुच्छ्रिते मदरहिते, 'एत्थ वि भिक्खू अणुन्नए विणीए' न उन्नतोऽनुन्नतः। शरीरेणोच्छ्रितः, भावोन्नतस्त्वभिमानग्रहग्रस्तः, तत्प्रतिषेधात् तपोनिर्जरामदमपि न विधत्ते।सूय०१ श्रु०१६ अ० अनुन्नतो द्रव्यतो भावतश्च। द्रव्यतो नाऽऽकाशदर्शी भावतो न जात्याद्यभिमानवान्। दश०५ अ०१ उ०।

अणुण्णवणी- स्त्री० *[अनुज्ञापनी]*
अवग्रहस्याऽनुज्ञापनीयायां भाषा-याम्, ठा०४ ठा० ३ उ०।

अणुण्णवित्ता- अव्य० *[अनुज्ञाप्य]*
अनुमोद्येत्यर्थे, 'जिणवर मणुण्णवित्ता, अंजणघणरुयगविमल-संकासा'। आव०म०।

अणुण्णवियपाणभोयणभोइ- पुं० *[अनुज्ञाप्यपानभोजनभोजिन्]*
आचार्यादीननुज्ञाप्य पानभोजनादिविधातरि, अदत्तादानविरते-र्द्वितीयां भावनां प्रतिपन्ने, आचा०२ श्रु०२ अ०६ उ०। आव०

अणुण्णवेमाण- त्रि० *[अनुज्ञापयत्]*
अनुज्ञां ददति, स्वजनादीन् तत्कालगतसाधर्मिकपरिष्ठापना-यामनुज्ञापयतो नाऽतिक्रामन्ति ठा०६ ठा०।

अणुण्णा- स्त्री० *[अनुज्ञा]*
अनुज्ञानमनुज्ञा। अधिकारदाने, ठा० ३ ठा० ३ उ०।
अनुमोदने, सूय०२ श्रु०२ अ०। नाया०।
परं प्रति सूत्रार्थदानानुमतौ, जीवा०१ प्रति०।
सूत्रार्थयोरन्यप्रदानं प्रत्यनुगमने, वव०१ उ०।
गुरोर्निवेदिते, सम्यगिदं धारयाऽन्यॉंश्चाऽध्यापयेति गुरुवचन-विशेषे, अनु०। अंत०।
तिविहाऽणुन्ना पन्नत्ता। तं जहा-आयरियत्ताए, उवज्झायत्ताए, गणित्ताए। ठा० ३ ठा० ३ उ०।
अधिकारदान। ठा० ।

अण्णुणाअ- त्रि० *[अनुज्ञात]* जिनाऽनुमते, ठा० ३ ठा०४ उ०। दत्ताऽऽज्ञे, उत्त०२३ अ०। आ० क०।

अणुण्णाकप्प- पुं० *[अनुज्ञाकल्प]*
कस्मिन् काले वस्त्राद्यनुज्ञातमित्येवंविधौ, पंच० भा०।

अणुण्हसंवट्टियकक्कसंग- त्रि० *[अनुष्णसंवर्त्तितकर्कशाङ्ग]*
भिक्षापरिभ्रमणाभावादुष्णलगनाभावेन संवर्त्तितानि वर्तुली-भूतानि अत एवाऽकर्कशानि अङ्गानि पाणिपादपृष्ठोदरप्रभृतीनि येषां ते अनुष्णसंवर्त्तितकर्कशाङ्गाः। भिक्षाणामभावादुष्णसंबंध अभावेन शीतीभूताङ्गेषु, । बुह० ३ उ०।

अणुतडभेद- पुं० *[अनुतटभेद]*
वंशस्येव द्रव्यभेदे, ठा० १ ठा०।

अणुतडियाभेय- पुं० *[अनुतटिकाभेद]*
इक्षुत्वगादिवद् द्रव्यभेदे, पन्न० ११ पद०।

अणुतप्पि- त्रि० *[अनुतापिन्]*
अकल्पं किमपि प्रतिसेव्य अनुपश्चाद् हा ! दुष्टु कारितमित्यादि रूपेण तपति सन्तापमनुभवति, इत्येवंशीलोऽनुतापी।
अकल्प- प्रतिसेवनाऽनन्तरं पश्चात्तापविशिष्टे, वव० १ उ०।

अणुताव- पुं० *[अनुताप]*
पश्चात्तापे, आव०४ अ०। नाया०।

अणुतावि- पुं० *[अनतापिन्]*
पुरःकर्मादिदोषदुष्टाहारग्रहणात् पश्चाद् 'हा ! दुष्टु कृतं मया' इत्यादिमानसिकतापधारणशीले, बुह० ३ उ०।

अणुतावियाः- स्त्री० *[अनुतापिका]*
अनुतापयतीति अनुतापिका। परस्यानुतापकारिकायां भाषा-याम् 'अणुतावियं खलु ते भासं भासंति' । सूय० २ श्रु० ७ अ०

अणुतप्पया- स्त्री० *[अनुत्रिप्यता]*

उत् प्राबल्येन त्रप्यते लज्यते येन तत् उत्त्रप्यं, न उत्त्रप्यम् अनुत्त्रप्यमलज्जनीयं, यथा च शरीरशरीरमतोरभेदमधिकृत्य। अहीनसर्वाङ्गे शरीरसंपद्भेदे, वपुलज्जाए धाऊ, अलज्जणीओ अहीणसव्वंगो। होई अणुतप्पे सो, अविगलइंदियपडिप्पुण्णो। त्ति। वव० २ उ०। उत्त०। बुह०।

अणुत्तर-१ त्रि० *[अनुत्तर]*

उत्तरः प्रधानो, नाऽस्योत्तरो विद्यते इत्यनुत्तरः। ठा० १० ठा०। सूय०।

अविद्यमानप्रधानतर, भग०९ श० ३३ उ०।

अनन्यसदृश, आव०म०। आचा०।

अनुपप्रधान, विशे०।

सर्वोत्कृष्ट,पण्हा० ।कल्प० ।आव०म० ।दशा० ।उत्त०। उव०।

वस्तुप्रतिपादकत्वादुत्तम, आव० ४ अ०। सूय०।

अणुत्तर-२ त्रि० *[अनुत्तर]*

वृद्धिरहिते च। आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

अणुत्तर- ३ त्रि० *[अनुत्तर]*

नाऽस्त्यस्योत्तरं सिद्धान्त इत्यनुत्तरम्। यथाऽवस्थितसमस्त-सर्वोत्कृष्टे श्रीजिनधर्मे, सूय० १ श्रु० ५ अ० १ उ०।

अणुत्तरगइ- त्रि० *[अनुत्तरगति]*

सिद्धिगतिप्राप्ते, 'एस करेमि पणामं, तित्थयराणं अणुत्तर-गईणं'। चंदा०।

अणुत्तरग्गा- स्त्री० *[अनुत्तराग्र्या]*

अनुत्तरा चाऽसौ सर्वोत्तमत्वादग्र्या च लोकाग्रव०स्थितत्वात् अनुत्तराग्र्या। ईषत्प्राग्भारायां पृथिव्याम् सूय०१ श्रु०६ अ०।

अणुत्तरण- न० *[अनुत्तरण]*

न विद्यते उत्तरणं पारगमनं यस्मिन् सति इत्यनुत्तरणः। पार-गमनप्रतिबन्धके, उत्त०१ अ०।

अणुत्तरणवास- पुं० *[अनुत्तरणवास]*

न विद्यते उत्तरणं पार गमनमस्मिन् सतीत्यनुत्तरणः। स चाऽसौ वासश्चाऽवस्थानमनुत्तरणवासः। अनुत्तरणवासहेतुत्वाद् आयुर्घृ- तमित्यादिवदनुत्तरणवासः। यद्वा- आत्मनः पारतन्त्र्यहेतुतया पाशयतीति पाशः, ततोऽनुत्तरणश्चासौ पाशश्चाऽनुत्तरणपाशः। उभयत्र च सापेक्षत्वेऽपि गमनकत्वात् समासः। संसाराव- स्थितौ, पारवश्ये वा। एतच्च सम्बन्धनसंयोगस्याऽर्थतः फलम्। उत्त०१ अ०।

अणुत्तरणाणदंसणधर- त्रि० *[अनुत्तरज्ञानदर्शनधर]*

कथञ्चिद् भिन्न- ज्ञानदर्शनाधारे, 'एवं से उदाहु अणुत्तरदंसी अणुत्तरनाणदंसणधरे'। सूय० १ श्रु० २ अ० ३ उ०।

अणुत्तरणाणि- त्रि० *[अनुत्तरज्ञानिन्]*

नाऽस्योत्तरं प्रधानमस्तीत्यनुत्तरम्, तच्च तज्ज्ञानं च अनुत्तर-ज्ञानम्, तदस्याऽस्तीत्यनुत्तरज्ञानी। केवलिनि, सूय० १ श्रु० २ अ० ३ उ०।

अणुत्तरधम्म- पुं० *[अनुत्तरधर्म]*

नाऽस्योत्तरः प्रधानो धर्मो विद्यते इति अनुत्तरः।सूय०१ श्रु०६ अ श्रुतचारित्राख्ये धर्मे, सूय० १ श्रु०२ अ०२ उ०।

अणुत्तरपरक्कम- पुं० *[अनुत्तरपराक्रम]*

परे शत्रवः। ते च द्विधा- द्रव्यतो मत्सरिणः, भावतः क्रोधादयः। इह भाव-शत्रुभिः प्रयोजनं, तेषामेवउच्छेदतो मुक्तिभावात् ।आक्रमणमाक्रमः, पराजय उच्छेद इति यावत्। परेषामाक्रमः पराक्रमः। सोऽनुत्तरोऽनन्यसदृशो यस्येति, 'जिन तित्थयरे भगवंते अणुत्तरपरक्कमे अमियनाण'। अत्र आह- ये खल्वैश्वर्यादिभगवन्तः तेऽनुत्तरपराक्रमा एव, तमन्तरेण विव-क्षितभगासंभवात्, ततोऽनुत्तरपराक्रमानित्येतदतिरिच्यते ।नैव दोषः अस्य अनादिसिद्धैश्वर्यादिसमन्वितपरमपुरुषप्रतिपादनपर नयवादनिषेधपरत्वात् ।तथाहि-कैश्चिदनुत्तरपराक्रमत्वमन्तरेणैव हिरण्यगर्भादीनामनादिविवक्षितभगयोगोऽभ्युपगम्यते ।उक्तं च 'ज्ञानमप्रतिधं यस्य, वैराग्यं च जगत्पतेः। ऐश्वर्यं चैव धर्मश्च, सह सिद्धं चतुष्टयम्'।। आव०म०।

अणुत्तरविमाण- न० *[अनुत्तरविमान]*

नैषामन्यान्युत्तराणि विमानानि सन्तीत्यनुत्तरविमानानि। चतु-र्दशदेवलोकवास्तव्यानुत्तरोपपातिकदेवविमानेषु, अनु० 'कइ णं भंते ! अणुत्तरविमाणा पन्नत्ता? गोयमा ! पंच अनुत्तर विमाणा पन्नत्ता। ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्ज-वित्थडा य ? गोयमा ! संखेज्जवित्थडा य असंखेज्जवित्थडा य'। भग०१३ श०२ उ०।

'कइ णं भंते ! अनुत्तर विमाणा पन्नत्ता ? गोयमा ! पंच अनुत्तरविमाणा पन्नत्ता। तं जहा- विजए, वेजयंते, जयंते, अपराजिए, सव्वट्ठसिद्धे य'। भग०६ श०६ उ०।

अणुत्तरोववाइय- पुं० *[अनुत्तरोपपातिक]*

अनुत्तरेषु सर्वोत्तमेषु विमानविशेषेषु उपपातो जन्माऽनुत्तरो-पपात, स विद्यते येषां तेऽनुत्तरोपपातिकाः। अनुत्त०।

उत्तरः प्रधानः। नाऽस्योत्तरो विद्यते- इत्यनुत्तरः। उपपतनम् उपपातो जन्मेत्यर्थः, अनुत्तरश्चाऽसावुपपातश्चेत्यनुत्तरोपपातः, सोऽस्ति येषां तेऽनुत्तरोपपातिकाः सर्वार्थसिद्धादिविमानपञ्चक उपपातिषु। ठा० १० ठा०।

विजयाद्यनुत्तरविमानवासिनि, सम०१ सम०।

विजयादिविमानेषूपपत्तिमत्सु साधुषु, ठा० ८ ठा०।

अणुत्तरोववाइयदसा- स्त्री० *[अनुत्तरोपपातिकदशा]*
अनुत्तरोपपातिकवक्तव्यताप्रतिबद्धादशा, दशाऽध्ययनोपलक्षिता दशाऽध्ययनप्रतिबद्धप्रथमवर्गयोगाद् दशा ग्रन्थविशेषोऽनुत्तरोपपातिकदशा । ठा० १० ठा० । अनु० ।
नवमेऽङ्गे, नं० । सम० ।

अणुदत्त- पुं० *[अनुदात्त]*
न उदात्तः, विरोधे नञ् । इति लक्षिते ताल्वादिषु सभागेषु स्थानेषूर्ध्वभागे निष्पन्ने स्वरभेदे, यथा नीचैः शब्देन 'जे भिक्खू हत्थकम्मं करेइ' इत्यादि । बुह० १ उ० ।

अणुदहमाण- त्रि० *[अनुदहत्]*
निसर्गाऽनन्तरमुपतापयति, ठा०१० ठा० ।

अणुदिण्ण- न० *[अनुदीर्ण]*
अनागतकाले उदीरणारहिते चिरेण भविष्यदुदीरणेऽभविष्यदुदीरणे वा कर्मणि, भग० १ श० ३ उ० ।

अणुदिसा-१ स्त्री० *[अनुदिक्]*
आग्नेयादिकायां विदिशि, कल्प० । आचा० ।

अणुदिसा-२ स्त्री० *[अनुदिक्]*
आचार्योपाध्यायपद०द्वितीयस्थानवर्त्तित्वे, वव० २ उ० ।

अणुदिट्ठ- त्रि० *[अनुद्दिष्ट]*
यावन्तिकादिभेदवर्जिते, पण्हा० १ संव० द्वा० ।

अणुद्धरिकुंथु- पुं०स्त्री० *[अनुद्धरिकुन्थु]*
अनुद्धरिनामके कुन्थुजीवे, बुह० १ उ० । ठा० ।
स हि चलन्नेव विभाव्यते, न स्थितः, सूक्ष्मत्वात् । ठा०८ ठा०
जं रयिणं च णं समणे भगवं महावीरे जाव सव्वदुक्खप्पहीणे, तं रयणिं च णं कुंथुअणुद्धरीनामं समुप्पन्ना, जा ठिया अचलमाणा णिग्गंथाण य णिग्गंथीण य नो चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ, जाऽठिया चलमाणा छउमत्थाणं निग्गंथाण य निग्गंथीण य चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ' । कल्प०

अणुद्धुय- त्रि० *[अनुद्धूत]*
अनुरूपेण वादनार्थमुत्क्षिप्तोऽनुद्धूतः । वादनार्थमेव वादकैरत्यक्ते मृदङ्गादौ, नाया०१ अ० । विपा० । जंबू० ।
अनुद्धूताऽनुरूपेण वादनार्थमुत्क्षिप्ता, अनुद्धूता वादनार्थमेववाद- कैरत्यक्ता, मृदङ्गा मर्दला यस्यां सा तथा । नाया०१ अ० । विपा० । भग० । कल्प० ।
यत्र आनुरूप्येण यथा- मार्दङ्गिकविधिरुद्धूता वादनार्थमुत्क्षिप्ता मृदङ्गा मर्दलाः सन्ति । जंबू० ३ वक्ष० ।

अणुधम्म-१ पुं० *[अणुधर्म]*
बृहत्साधुधर्मापेक्षयाऽणुः -अल्पो धर्मोऽणुधर्मः । देशविरतौ, विशे० । आव०म० ।

अणुधम्म-२ पुं० *[अनुधर्म]*
अनुगतो मोक्षं प्रत्यनुकूलो धर्मोऽनुधर्मः । अहिंसालक्षणे, परीषहोपसर्गसहनलक्षणे वा धर्मे, 'एसोऽणुधम्मो मुणिणा पवेदिओ' । सूय०१ श्रु०२ अ०१ उ० ।
अनु पश्चाद् धर्मोऽनुधर्मः । तीर्थंकरानुष्ठानादनन्तरं चर्यमाणे धर्मे, सूय०२ श्रु०६ अ० । निसि०

अणुधम्मचारि- पुं० *[अनुधर्मचारिन्]*
तीर्थकरप्रणीतधर्मानुष्ठायिनि,जंसी विरता समुट्ठिया, कासवस्स अणुधम्मचारिणो, काश्यपस्य ऋषभस्वामिनो वर्द्धमानस्वामिनो वा संबन्धी यो धर्मः, तदनुचारिणस्तीर्थकरप्रणीत धर्मानुष्ठायिन इत्यर्थः । *० १ श्रु० २ अ० २ उ० ।

अणुपंथ- पुं० *[अनुपथ]*
मार्गाऽभ्यर्णे, बुह०२ उ० ।

अणुपत्त- त्रि० *[अनुप्राप्त]*
पश्चात्प्राप्ते, उत्त० ३ अ० ।

अणुपयाहिणीकरेमाण- त्रि० *[अनुप्रदक्षिणीकुर्वाण]*
आनुकूल्येन प्रदक्षिणीकुर्वाणे, रा० ।

अणुपरियट्टण- न० *[अनुपरिवर्त्तन]*
पौनःपुन्येन भ्रमणे, भग०१ श०६ उ० ।
पार्श्वतो भ्रमणे, सूय०१ श्रु०६ अ० ।
घटीयन्त्रन्यायेन भ्रमणे, आचा०१ श्रु०५ अ०१ उ० । नं० । ।
दुःखानां शारीरमानसानामावर्त्तः पौनः पुन्यभवनमनुपरिवर्त्तते, दुःखावर्तावमग्नो बम्भ्रम्यते । आचा०१ श्रु०२ अ० ३ उ० ।

अणुपरियट्टण- न० *[अनुपर्यटन]*
भूयोभूयस्तत्रैवाऽऽगमने, 'संसारपारकंखी ते संसारं अनुयट्टंति' संसारमेव चतुर्गतिकसंसरणरूपम्, अनुपर्यटन्ति । सूय० १ श्रु० १ अ० २ उ० ।
अणुपरियट्टिज्ज त्ति सर्वतः परिभ्रमेत्, भग० १८ श० ७ उ० ।

अणुपरियट्टमाण- त्रि० *[अनुपरिवर्त्तमान]*
एकेन्द्रियादिषु पर्यटति, जन्मजरामरणानि वा बहुशोऽनुभवति । सूय० १ श्रु० ७ अ० ।
अरघट्टघटीन्यायेन वर्तमाने, आचा०१श्रु०२अ०३उ० । जीवा०

अणुपरियट्टित्ता- अव्य० *[अनुपरिवर्त्य]*
सामस्त्येन परिभ्रम्येति प्राद-क्षिण्येन परिभ्रम्येति वाऽर्थे, जीवा० ३ प्रति० ।

अणुपरिहारि- पुं० *[अनुपरिहारिन्]*
परिहारिणः अणु स्तोकं प्रतिलेखनादिषु साहाय्यं करोतीति अणुपरिहारी । यत्र यत्र भिक्षादिनिमित्तं गच्छति, तत्र तत्र अनु पश्चात् पृष्ठतो लग्नः सन् गच्छतीत्यनुपरिहारी । वव० १ उ० ।

पारिहारिकाणामनुचरे, विशे० ।
निर्विष्टे, आसेवित-विवक्षितचारित्रे च। ठा० ३ ठा०४ उ० ।

अणुपविसंत- त्रि० *[अनुप्रविशत्]*
अनु पश्चाद्भावे चरकादिषु निर्वृत्तेषु पश्चात्पाककरणकालतो वा पश्चाद् भिक्षार्थं प्रवेशं कुर्वति, निसि० २ उ० ।

अणुपविसित्ता- अव्य० *[अनुप्रविश्य]*
अनुकूलं स्तोकं वा प्रविश्येत्यर्थे, निसि० ७ उ० ।

अणुपवेस- पुं० *[अनुप्रवेश]*
अनुप्रवेश अनुकूले स्तोके वा प्रवेशे निसि० ७ उ० ।

अणुपस्सि- पुं० *[अनुदर्शिन्]*
अनु द्रष्टुं शीलमस्येत्यनुदर्शी। पर्यालोचके, 'एयाणुपस्सी णिज्झोसइत्ता' एतदनुदर्शी भवति, अतीतानागतसुखाभिलाषी न भवतीति यावत्। आचा ०१ श्रु० ३ अ० ३ उ० ।

अणुपस्सिय- अव्य० *[अनुदृश्य]*
पर्यालोच्येत्यर्थे, सूय०१ श्रु०२ अ० २ उ० ।

अणुपाण- त्रि० *[अणुप्राण]*
अणवः सूक्ष्माः प्राणाः प्राणिनो येषु ते अणुप्राणाः। सूक्ष्म-जन्तुयुक्ते, । सूय० १ श्रु० २ अ० १ उ० ।

अणुपायकिरिया- स्त्री० *[अनुपातक्रिया]*
प्रमत्तसंयतानामापन्नपातं प्रत्येवंगुणसंपातिमसत्त्वानां विनाशा-त्मके क्रियाभेदे, आव०चू०४ अ० ।

अणुपालंत- त्रि० *[अनुपालयत्]*
प्रतिपालयति, आचा० १ श्रु० ५ अ० २ उ० ।

अणुपालणाकप्प- पुं० *[अनुपालनाकल्प]*
आचार्ये कथञ्चिद् विपन्ने गणरक्षणविधौ, पंच० भा० ।

अणुपालणासुद्ध- न० *[अनुपालनाशुद्ध]*
प्रत्याख्यानभेदे, आव० ।
कंतारे दुब्भिक्खे, आयंके वा महइ समुप्पन्ने। जं पालिअं न भग्गं, तं जाणऽणुपालणासुद्धं। कान्तारे अरण्ये, दुर्भिक्षे काल विभ्रमे, आतङ्के महति समुत्पन्ने सति यत्पालितं न भग्नं तज्ज्ञा-नीह्यनुपालनाशुद्धमिति। आव०६ अ०। ठा०। आव० चू०।

अणुपालित्ता- अव्य० *[अनुपाल्य]*
यथा पूर्वैः पालितं तथा पश्चात्प-रिपाल्येत्यर्थे, कल्प० ।

अणुपालिय- त्रि० *[अनुपालित]*
आत्मसंयमानुकूलतया पालिते, ठा०८ ठा०। दशा० ।

अणुपासमाण- त्रि० *[अनुपश्यत्]*
भूयः पश्यति, 'किं मे पेरो पासइ किं च अप्पा, किं वा हु खलियं न विवज्जयामि। इच्चेव सम्मं अणुपासमाणो, अणागयं नो पडिबंध कुज्जा' ।। दश० २ चू० ।

अणुपिट्ठ- न० *[अनुपृष्ठ]*
आनुपूर्व्याम्, 'अणुपिट्ठसिद्धाइं'। सम० ।

अणुपुव्व- न० *[अनुपूर्व]*
क्रमे, आचा० १ श्रु० ६ अ० ३ उ०। ठा०।

अणुपुव्व- न० *[आनुपूर्व्य]*
मूलादिपरिपाट्याम्, उव० ।
आनुपूर्व्येण क्रमेण वर्द्धमाना हीयमाना वा इति। उव०। जीवा० ।

अणुपुव्वसो- अव्य० *[अनुपूर्वशस्]*
अनुक्रमेणेत्यर्थे, आचा०१ श्रु०६ अ०१ उ० ।

अणुप्पगंथ- पुं० *[अनुप्रग्रन्थ]*
अनुरूपतयौचित्येन विरतेः न त्वपुण्योदयाद्, अणुरपि वा सूक्ष्मो अप्यल्पोऽपि प्रगतो ग्रन्थो धनादिर्यस्य यस्माद् वाऽ-सावनुप्रग्रन्थः। अपेर्वृत्यन्तर्भूतत्वात् अणुप्रग्रन्थो वा। परिग्रह-विरते, ठा० ९ ठा० ।

अणुप्पण्ण- त्रि० *[अनुत्पन्न]*
वर्त्तमानसमयेऽविद्यमाने, निसि० ५ उ० ।
अलब्धे, गच्छा०१ अधि० ।

अणुप्पदाउं- अव्य० *[अनुप्रदातुम्]*
पुनःपुनर्दातुमित्यर्थे,। उपा० ।

अणुप्पदाण- न० *[अनुप्रदान]*
पुनःपुनर्दाने, आव०६ अ०। आचा०
परम्परकेण प्रदाने, वव०२ उ० ।
गृहस्थानां परतीर्थिकानां स्वयूथ्यानां वा संयमोपघातके दाने,
जेणेह णिव्वहे भिक्खू, अण्णपाणं तहाविहं।
अणुप्पयाणमन्नेसिं, तं विज्जं परियाणिया।।
आचा०१ श्रु०९ अ० ।

अणुप्पभु- पुं० *[अनुप्रभु]*
युवराजे, सेनापत्यादौ च। निसि०२ उ०

अणुप्पवाएत्ता- त्रि० *[अनुप्रवाचयितृ]*
पाठयितरि, गच्छा०१ अधि०। ठा०।
'आयरियउवज्झाए गणंसि सम्मं अणुप्पवाएत्ता भवइ' तृतीयं संग्रहस्थानम्। गच्छा० १ अधि० ।

अणुप्पवाएमाण- त्रि० *[अनुप्रवाचयत्]*
वर्णानुपूर्वीक्रमेण पठति, जं ० ३ वक्ष० ।

अणुप्पवाय- पुं० *[अनुप्रवाद]*
अनुप्रवदति साधनानुकूल्येन सिद्धिप्रकर्षेण प्रवदतीति। नं०।
नवमपूर्वे, ठा०९ ठा०। विशे०। आव० म०।
' विद्याऽनुप्रवादम् ' इत्यपरं नाम। नं० ।

अणुप्पवेसण- न० *[अनुप्रवेशन]*
मनसि लब्धाऽऽस्पदीभवने, उत्त० ३ अ०।

अणुप्पवेसेत्ता- अव्य० *[अनुप्रवेश्य]*
'अन्नयरंसि अचित्तंसि सोयगंसि अणुप्पवेसेत्ता' निसि० १ उ०।

अणुप्पसूय- त्रि० *[अनुप्रसूत]*
जाते, आचा० १ श्रु० १ अ० ८ उ०।

अणुप्पाइ(ण्)- पुं० *[अनुपातिन्]*
अनुपततीत्यनुपाती। घटमाने युज्यमाने, निसि० १ उ०।

अणुप्पिय- त्रि० *[अनुप्रिय]*
प्रियानुकूले, 'अन्नस्स पाणस्सिहलोइयस्स, अणुप्पियं भासति सेवमाणे' अनुप्रियं भाषते यद् यस्य प्रियं तत्तस्य वदनोऽनु पश्चाद् भाषते अनुभाषते। सूय० १ श्रु० ७ अ०।

अणुप्पेहा- स्त्री० *[अनुप्रेक्षा]*
अनुप्रेक्षणमनुप्रेक्षा। चिन्तनिकायाम्, ठा०५ ठा० ३ उ०।
ग्रन्थार्थानुचिन्तने, गच्छा० २ अधि०।
सूत्रानुचिन्तनिकायाम्। उत्त०२ अ०। दश०।
अनुप्रेक्षा स्वाध्यायविशेषः। स तु मनसस्तत्रैव नियोजनाद् भवति। उत्त०२९ ।
अनुपश्चात् प्रेक्षणमनुप्रेक्षा। धर्मध्यानादेः पश्चात्पर्यालोचने, भग०२५ श०८ उ०। ठा०। आव०। उत्त०।

अणुफास- पुं० *[अनुस्पर्श]*
अनुभावे, 'लोहस्सेवऽणुफासो, मन्ने अन्नयरामवि'। दश० ६ अ० ।

अणुबंध- पुं० *[अनुबन्ध]*
सातत्ये, ठा० ६ ठा०।

अणुबंधचउक्क- न० *[अनुबन्धचतुष्क]*
प्रयोजनादिकारिसंबन्धाभिधेयचतुष्टये, तच्च ग्रन्थादावभिधातव्यम्। आव० १ अ०।

अणुबंधि- त्रि० *[अनुबन्धिन्]*
प्रस्फोटकादीनां सातत्यविशिष्टे अननुबन्धिदोषरहिते प्रतिलेखने। ठा०६ ठा०।

अणुबद्ध-१ त्रि० *[अनुबद्ध]*
सदानुगते, जीवा० ३ प्रति०। आव०म०।
गृहीते, निसि०१ उ०।
निरन्तरमुपचिते, जीवा० ३ प्रति०।
सतते, पण्हा०१ , ठा०।
अव०च्छिन्ने, पण्हा०१ अ०।
प्रतिबद्धे, नाया०२ अ०।
व्याप्ते, नाया०२ अ०।

अणुबद्ध-२ त्रि० *[अनुबद्ध]*
पूर्वोपार्जितद्वेषबन्धनबद्धे, उत्त०४ अ०।

अणुबद्धखुहा- स्त्री० *[अनुबद्धक्षुध]* सततबुभुक्षायाम्, 'अणुबद्धखुहापरद्धसीउण्हतण्हवेयणादुग्घट्टघटियविवण्णमुह-विच्छविया' पण्हा० ३ अ०।

अणुबद्धणिरंतर- त्रि० *[अनुबद्धनिरन्तर]*
अत्यन्तनिरन्तरे, अनुबद्धनिरन्तराः अत्यन्तनिरन्तरा वेदना येषु ते तथा। पण्हा० १ अ०।

अणुबद्धतिव्ववेर- त्रि० *[अनुबद्धतीव्रवैर]*
अव०च्छिन्नोत्कटवैरभावे, 'अणुबद्धतिव्ववेरा, परोप्परं वेयणं उदीरेंति' पण्हा० १ अ०।

अणुबद्धधम्मज्झाण- त्रि० *[अनुबद्धधर्मध्यान]*
अनुबद्धं सततं धर्मध्यानमाज्ञाविचयादिलक्षणं येषां तेऽनुबद्धधर्मध्यानाः। सततप्रवृत्तधर्मध्याने, पण्हा० १ अ० ।

अणुबद्धरोसप्पसर- त्रि० *[अनुबद्धरोषप्रसर]*
अनुबद्धः सततमव्यवच्छिन्नो रोषस्य प्रसरो विस्तारो यस्य सोऽनुबद्धरोषप्रसरः। निरन्तरकुद्धे, गच्छा० २ अधि०।

अणुबद्धविग्गह- त्रि० *[अनुबद्धविग्रह]*
सदा कलहशीले, निच्चं विग्गहशीलो, काऊण य नाणुतप्पए पच्छा।न य खामिउं पसीयइ, सपक्खपरपक्खओ वा वि।।
नित्यं सततं विग्रहशीलः कलहकरणस्वभावः, कृत्वा च कलह नानुतप्यते पश्चात्। यथाह-किं कृतं मया पापेनेति। तथा क्षमितोऽपि, क्षम्यतां ममायमपराध इति भणितोऽपि स्वपक्षपरपक्षयोरपि, न च नैव प्रसीदति प्रसन्नतां भजति, तीव्रकषायोदयत्वात्। अत्र च स्वपक्षे साधुसाध्वीवर्गः परपक्षे गृहस्थवर्गः। एषोऽनुबद्धविग्रह उच्यते। बुह० १ उ०।

अणुवेलंधर- पुं० *[अनुवेलन्धर]*
महतां वेलन्धराणामादेशप्रतीच्छक-तयाऽनुयायिनो वेलन्धरा अनुवेलन्धराः। स्वनामख्यातेषु नाग-राजेषु, जीवा० ३ प्रति०।

अणुब्भडं- त्रि० *[अनुद्भट]*
अनुल्बणे, जीवा० ३ प्रति०।
अभिमानरहिते, उत्त० २ अ०।

अणुब्भडपसत्थकुक्खि- त्रि० *[अनुद्भटप्रशस्तकुक्षि]*
अनुद्भटोऽनुल्बणः प्रशस्तः प्रशस्तलक्षणः पीनः कुक्षिर्यासां ताः अनुद्भटप्रशस्तपीनकुक्षयः। जीवा० ३ प्रति०।

अणुब्भामग- पुं० *[अनुद्भ्रामक]*
मौलग्रामे भिक्षापरिमाणशीले, बुह०१ उ०।

अणुभव- पुं० *[अनुभव]*
स्वसंवेदने, आव०। पण्हा०।

अणुभवण- न० *[अनुभवन]*
कर्मविपाकवेदनेऽनुभावे, आव०४ अ०

अणुभविउं- अव्य० *[अणुभवितुम्]*
भोक्तमित्यर्थे, 'वेयणा अणुभविउं जे संसारम्मि अनंतए'। उत्त० १८ अ०।

अणुभवित्ता- अव्य० *[अनुभूय]*
अनुभवं कृत्वेत्यर्थे, पण्हा० १ अ०।

अणुभाग-१ पुं० *[अनुभाग]*
वैक्रियकरणादिकायामचिन्त्यशक्तौ, ठा० २ ठा०, ३ उ०। नाया० । आव०। चंद०। सूर०
माहात्म्ये, सूय०१ श्रु०५ अ०१ उ०।

अणुभाग-२ पुं० *[अनुभाग]*
वर्णगन्धादिगुणे, विशे०।

अणुभाग-३ पुं० *[अनुभाग]*
शापाद्यनुग्रहविषये सामर्थ्ये, पन्न० २ पद०। उत्त०

अणुभाग-४ पुं० *[अनुभाग]*
कर्मणां विपाके, सूय०१ श्रु० ५ अ० १ उ०।
विपाकः। पन्न०
उदये, रसे च। ठा०७ ठा०।
तीव्रादिभेदे रसे, सम०।
अनुभागः, रसः, अनुभाव इति पर्यायाः। सूय०

अणुभाग-४ पुं० *[अनुभाग]*
स्वभावः, स्वरूपाम्। जम्बू०
सामर्थ्यादिलक्षणः। आव०

अणुभागअप्पाबहुय- न० *[अनुभागाऽल्पबहुत्व]*
अनुभागं प्रत्यल्पबहुत्वे, यथा 'सव्वत्थोवाइं अणंतगुणवुड्ढि-ट्ठाणाणि, असंखेज्जगुणवुड्ढिट्ठाणाणि, असंखिज्जगुणाणि, संखिज्जगुणवुड्ढिट्ठाणाणि, असंखिज्जगुणाइं जाव अणंतभाग-वुड्ढिट्ठाणाणि असंखिज्जगुणाणि'। प्रदेशाऽल्पबहुत्वं यथा- अट्ठविहबंधगस्स य आउयभागो थोवो, नामगोयाणं तुल्लो विसेसाहिओ, नाणदंसणावरणंतरायाणं तुल्लो विसेसाहिओ, मोहस्स विसेसाहिओ, वेयणिज्जस्स विसेसाहिओ त्ति
। ठा० ४ ठा० २ उ० ।

अणुभागउदीरणोवक्कम-पुं० *[अनुभागोदीरणोपक्रम]*
प्राप्तोदयेन रसेन सहाऽप्राप्तोदयस्य रसस्य वेदनाऽऽरम्भे,
। ठा० ५ ठा० १ उ०।

अणुभागकम्म- न० *[अनुभागकर्मन्]*
अनुभागरूपं कर्माऽनुभागकर्म। रसात्मके कर्मभेदे। भग० १ श० ४ उ० ।

अणुभागणामनिहत्ताउय- न० *[अनुभागनामनिधत्तायुष्]*
अनुभाग आयुष्कर्मद्रव्याणां तीव्रादिभेदो रसः, स एव, तस्य वा नाम परिणामोऽनुभागनाम, अथवा गत्यादीनां नाम-कर्मणाम् अनुभागबन्धरूपो भेदोऽनुभागनाम, तेन सह निधत्तमायुः अनुभागनामनिधत्तायुरिति। आयुर्बन्धभेदे, सम०। भग०। ठा०।

अणुभागबंध- पुं० *[अनुभागबन्ध]*
अनुभागो विपाकस्तीव्रादिभेदो रस इत्यर्थः, तस्य बन्धोऽनु-भागबन्धः। बन्धभेदे, ठा० ४ ठा० २ उ०।

अणुभागुदीरणा- स्त्री० *[अनुभागोदीरणा]*
प्राप्तोदयेन रसेन सहाऽप्राप्तोदये वेद्यमाने रसे, ठा०४ठा०२उ०

अणुभाव- पुं० *[अनुभाव]*
शुभानां कर्मप्रकृतीनां प्रयोगकर्मणोपात्तानां प्रकृतिस्थिति-प्रदेशरूपाणां तीव्रमन्दानुभावतयाऽनुभवने, आचा० १ श्रु० २ अ० १ उ०। सम०।
अचिन्त्यायां वैक्रियकरणादिकायां शक्तौ च। ठा०३ ठा०३ उ० प्रभावे च। वव० २ उ०।

अणुभावकम्म- न० *[अनुभागकर्मन्]*
अनुभागतो वेद्यमाने कर्मणि, यस्य हि अनुभावो यथा बद्धरसो वेद्यते। ठा० २ ठा० ३ उ०।

अणुभावग- त्रि० *[अनुभावक]*
चिन्तापके, आव०म०।

अणुभासण- न० *[अनुभाषण]*
आचार्यभाषणात्पश्चाद् भाषणे, आचार्येण भाषिते पश्चात् भाषणं, न पुनः प्रधानीभूयाचार्यभाषणादग्रे भाषते।
वव० ३ उ०। आव० चू०।

अणुभासणसुद्ध- न० *[अनुभाषणशुद्ध]*
गुरूच्चारितस्य शनैः शुद्धोच्चारणरूपे भावविशुद्धिभेदे, आव० चू० ६ अ०।
अनुभाषणाशुद्धं, यथा–अनुभासइ गुरुवयणं, अक्खर पयवंज-णेहिं परिसुद्धं।पंजलिउडो अभिमुहो, तं जाणऽणु भासणा सुद्धं नवरं गुरुर्भणति- (वोसिरइ त्ति) शिष्यस्तु-(वोसिरामि त्ति) ठा० ५ ठा० ३ उ०।

कृतकृतिकर्मप्रत्याख्यानं कुर्वन् अनुभाषते गुरुवचनं लघुतरेण शब्देन भणतीत्यर्थः। कथमनुभाषते? अक्षरपद व्य-ञ्जनैः परिशुद्धमननाऽनुभाषणायत्नमाह। नवरं गुरुर्भणति-(वोसिरइ त्ति) 'इमो वि भणति-(वोसिरामि त्ति)सेसं गुरु भणियसरिसं भाणियव्वं'। किं भूतः सन् ? कृतप्राञ्जलि-रभिमुखस्तज्जानीहिअनुभाषणाशुद्धमिति। आव० ६अ०

अणुभूइ- स्त्री० *[अनुभूति]*
अनुभवनमनुभूतिः। अनुभवे, विशे०। आव० म०। दश०।

अणुमइ- स्त्री० *[अनुमति]*
अनुमोदने, आव० ४ अ०। सूय०।
तत्स्वरूपं च-'कालं सयं परिणते, अणुवारणअनुमती होति, एवं भणति तुमं अप्पणो य अण्णस्स वा हत्थकम्मं करे-हित्ति'। निसि० १ उ०।

अणुमइया- स्त्री० *[अनुमतिका]*
उज्जयिन्यां देवलासुतस्य राज्ञो भार्याया अनुरक्तलोचनाया दास्याम्, आव०चू० ११ उ०। आव०

अणुमत-१ त्रि० *[अणुमत]*
अणोरपि मन्तरि, 'अणुमयाइं कुलाइं भवंति' अणुरपि क्षुल्लकोऽपि मतो येषु सर्वसाधुसाधारणत्वात्, न तु मुखं दृष्ट्वा तिलकं कुर्वन्तीति। कल्प०।

अणुमत-२ त्रि० *[अनुमत]*
अनु पश्चादपि मतोऽनुमतः। नाया०१ अ०।
पश्चादपि मते, भग०२ श०१ उ०।
अभिप्रेते, बुह०१ उ०।
अभिरुचिते, पथ्ये च। उव०।
आनुकूल्येन सम्मते, जीवा०१ प्रति०।
बहुमते, आव०।
अभीष्टे, आव०म०।

अणुमत-२ त्रि० *[अनुमत]*
विप्रियकरणस्यापि । नाया० १ अ०।
वैगुण्यदर्शनस्याऽपि । उव० ।
कार्यविघातस्य । नाया० १ अ० ।

अणुमत-३ त्रि० *[अनुमत]*
दानमनुज्ञाते, कल्प०।

अणुमहत्तर- पुं० *[अनुमहत्तर]*
मूलमहत्तराभावे तत्कार्यकारिणि, 'मूलमहत्तरे असण्णिहिते जो पुच्छणिज्जो धुरे ठायति, सो अणुमहत्तरः। निसि० ६ उ०।
मूलमहत्तरे असन्निहिते यस्तत्र सर्वैरपि प्रच्छनीयः, धुरि च प्रथमं तिष्ठिति सोऽनुमहत्तरः। बुह० २ उ०।

अणुमाण-१ पुं० *[अणुमान]*
अणुश्चासौ मानः। स्तोकाहङ्कारे, सूय० १ श्रु० ८ अ०।
चक्रवर्त्यादिना सत्कारादिना पूज्यमानेनाणुरपि स्तोकोऽपि मानोऽहङ्कारो न विधेयः, किमुत महान् ?। यदि वोत्तममरण उपस्थितेनोग्र-तपोनिष्टप्तदेहेन वा, 'अहो ! अहमित्येवंरूपः' स्तोकोऽपि गर्वो न विधेयः। सूय० २ श्रु० ८ अ०।

अणुमाण-२ न० *[अनुमान]*
अनु इति लिङ्गदर्शनसंबन्धानुस्मरणयोः पश्चात् मानं ज्ञाय-मनुमानम्। ठा० ४ ठा० ३ उ०।
अविनाभावनिश्चयात् लिङ्गात् लिङ्गिज्ञाने, । आव०चू०१अ० । । नं० ।
अनु पश्चाद् लिङ्गलिङ्गिसंबन्धग्रहणस्मरणानन्तरं मीयते परि-च्छिद्यते देशकालस्वभावविप्रकृष्टोऽर्थोऽनेन ज्ञानविशेषेणेत्य-नुमानम् । भग०। अनु०।
दृष्टान्ते, आकाशपटानुमानादत्राऽनुमानशब्दो दृष्टान्तवचनः। दशा० १ अ०।
'साध्याविनाभूतलिङ्गात्, साध्यनिश्चायकं स्मृतम्। अनुमानं तदभ्रान्तं, प्रमाणत्वात् समक्षवत्' ।।१ इति लक्षणलक्षिते प्रमाणभेदे, ठा० ४ ठा० ३ उ०।

अणुमाणइत्ता- अव्य० *[अनुमान्य]*
अनुमानं कृत्वेत्यर्थे, वव० १ उ०।
लघुतरापराधनिवेदनेन मृदुदण्डादित्वमाचार्यस्याकलय्येति, । भग० ।

अणुमाणणिराकिय- त्रि० *[अनुमाननिराकृत]*
अनुमानबाह्ये, यथा नित्यः शब्दः। वस्तुदोषविषये विशेषे, ठा० १० ठा०।

अणुमाय- त्रि० *[अणुमात्र]*
स्तोकमात्रे, । दश० ५ अ०२ उ०।

अणुमुक्क- त्रि० *[अनुमुक्त]*
अविमुक्ते, । पण्हा० ४ अ०।

अणुमोइय- त्रि० *[अनुमोदित]*
यत् त्वया शत्रुहननादि-कार्यं भव्यं कृतमित्यादिवदने, आतु०।

अणुमोयण- स्त्री० *[अनुमोदन]* ।
अनुमतौ, आव०।
अनुज्ञाने, सूय० १ श्रु० ८ अ०। पण्हा०।
आधाकर्मप्रभृतिकर्तृप्रशंसायाम्, अप्रतिषेधने च। अप्रतिषि-द्धम् अनुमतमिति विद्वत्प्रवादात्। पिंड०।
अनुमोदनेन तस्य वा दीयमानस्याऽप्रतिषेधनेनाऽप्रतिषिद्धम् अनुमतमिति वचनाद् हननप्रसङ्ग जननाच्च। ठा०९ ठा०।

अणुमोयणकम्मभोयगप्पसंसा- स्त्री० *[अनुमोदनकर्मभोजकप्रशंसा]*
अनुमोदनादाधाकर्मभोजकप्रशंसायाम्, अक्षतपुण्याः सुलब्धि-का एते, ये इत्थं सदैव लभन्ते, यतेतेत्येवंरूपा। पिंड०।

अणुयत्तणा- स्त्री० *[अनुवर्तना]*
आनुकूल्याऽनुपघाते, जीवा०१ प्रति०।
ग्लानोपचारे, बुह० १ उ०।

अणुयत्तणाइजुत्त- त्रि० *[अनुवर्तनादियुक्त]*
आनुकूल्याऽनुपघातसहिते, 'अणुयत्तणाइजुत्तो, पासत्थाईसु ता खित्ते' जीवा० १ प्रति०।

अणुयत्तमाण- त्रि० *[अनुवर्तमान]*
अनुगच्छति, विशे०।
सद्दहइ समत्थेइ य, कुणइ करावेइ गुरुजणाभिमयं।
छंदमणुयत्तमाणो, गुरुजणाराहणं कुणई।१ । आव०म०।

अणुयरिय- न० *[अनुचरित]*
आसेविते, नाया० १ श्रु० १ अ०।

अणुया- स्त्री० *[अनुज्ञा]*
अनुमोदने, सूय० २ श्रु० १ अ०।

अणुयास- पुं० *[अनुकाश]*
विकाशप्रसरे, नाया० १ श्रु०१ अ०।

अणुरंगा- स्त्री० *[अनुरङ्गा]*
गन्त्र्याम्, घंसिकायां च। 'अणुरंगाइ जाणे' बुह० १ उ०।

अणुरंजिएल्लय- त्रि० *[अनुरञ्जित]*
संप्रदायक्रमरञ्जिते, जंबू० ३ वक्ष०।

अणुरत्त- त्रि० *[अनुरक्त]*
अनुरज्ये, उव०। आतु०।
अत्यन्तस्नेहभाजि, उत्त० १४ अ०। नाया०।
अनुरागवत्याम्, भग० १२ श०६ उ०।
पतिरक्तायां भर्तारं प्रति रागवत्याम्, नाया० १६ अ०।
स्त्रियाम्, 'अणुरत्ता अविरत्ता, इट्ठे सद्दफरिसरसरूवगंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोए पच्चणुब्भवमाणी विहरति' अनुरक्ताऽविरक्ता अनुरज्या भर्तरि प्रतिकूले सत्यपि, न विप्रियेऽपि विरक्ततां गतेत्यर्थः। उव०।

अणुरत्तलोयणा- स्त्री० *[अनुरक्तलोचना]*
उज्जयिनीपुरीश्वरस्य देवलासुतस्य राज्ञोऽग्रमहिष्याम्, आव०।

अणुरसिय- न० *[अनुरसित]*
शब्दायिते, नाया० ६ अ०।

अणुराग- पुं० *[अनुराग]*
परस्परस्याऽत्यन्तिक्यां प्रीतिमत्याम्, बुह० १ उ०।
त्रिविधोऽभिष्वङ्गरूपः, तद्यथा- दृष्ट्यनुरागो, विषयाऽनुरागः, स्नेहाऽनुरागः) विशे०।

अणुरागय- त्रि० *[अन्वागत]*
अनुरूपे आगमने, भग० २ श० १ उ०।

अणुराहा- स्त्री० *[अनुराधा]*
मित्रदेवताके नक्षत्रभेदे, अनु०। जंबू०। ठा०।
अणुराहाणक्खत्ते च उतारे। सूर०। चंद० । ज्यो० ।

अणुरूव- त्रि० *[अनुरूप]*
अविषमे, ठा० ९ ठा०।
अनुकूले, आव०म०।
घटमानेऽर्थे, विशे०।
सदृशे, उत्त० १ अ०।
उचिते, नाया० १६ अ०।

अणुलाव- पुं० *[अनुलाप]*
पौनःपुन्यभाषणे०। 'अनुलापो मुहुर्भाषा' इति वचनात्। ठा० ७ ठा०। नाया०।

अणुलिंपण- न० *[अनुलेपन]*
सकृल्लिप्ताया भूमेः पुनर्लेपने, पण्हा० ३ अ०।

अणुलित्त- त्रि० *[अनुलिप्त]*
चन्दनादिना कृताऽनुलेपे, उव०।

अणुलित्तगत्त- त्रि० *[अनुलिप्तगात्र]*
अन्विति अतिशयेन लिप्तं विलेपनरूपकृतं गात्रं शरीरं यस्य स तथा। कृतानुरूपशरीरे, तं०।

अणुलिहंत- त्रि० *[अनुलिखत्]*
अभिलङ्घयति, 'गगणतलमणुलिहंतसिहरे'। सूर० १८ पाहु०। चंद० १८ पाहु०। रा०। तं०। सम०। जीवा०।

अणुलेवण- न० *[अनुलेपन]*
श्रीखण्डादिविलेपने, ठा० ८ ठा०। नाया०।
सकृल्लिप्तस्य पुनः पुनरुपलेपने, पन्न० २ पद०।

अणुलेवणतल- न० *[अनुलेपनतल]*
अनुलेपनप्रधाने तले, सूय० २ श्रु० २ अ०।
पुनरुपलिप्तभूमिकायाम्, 'मेयवसापूयरुधिरमंसचिक्खिल्ललित्ताणुलेवणतला'। पन्न० २ पद०।

अणुलोम- त्रि० *[अनुलोम]*
अविपरीते, पंच०चू०।
अनुकूले, उव०। सूय०। आचा०। नाया०।
अनुकूलतया वेद्यमाने, जंबू०२ वक्ष०।
मनोहारिणि, दश०१ अ०।
अनुकूलमनुगुणं वा। जीवा०
अनुकूलकरणम्०। ठा०
अनुलोमनाऽर्थद्रव्याऽनुयोगोऽनुलोमः। अनुलोमे, अनुकूलकरणाय परस्य यो विधीयते- यथा क्षेमं भवतामित्यादिरूपे द्रव्याऽनुयोगभेदे, ठा० ६ ठा०।

अणुलोमइत्ता- अव्य० *[अनुलोम्य]*
विवादाऽध्यक्षान् सामनीत्याऽनुलोमान् कृत्वा प्रतिपन्थिनमेव वा पूर्वं तत्पक्षाऽभ्युपगमेन अनुलोमे कृत्वेत्यर्थे,। ठा०६ ठा०।

अणुलोमवाउवेग- त्रि० *[अनुलोमवायुवेग]*
अनुलोमोऽनुकूलो वायुवेगः शरीरान्तर्वर्ती वातजवो येषां तेऽनुलोमवायुवेगाः ।वायुगुल्मरहितोदरमध्यप्रदेशेषु, तं० । जीवा० युगलमनुष्यादिषु। आह च टीकाकारः-उदरमध्यप्रदेशे वायुगुल्मो येषां ते तथा, तदभावाच्च तेषामनुलोमो भवति, वायुवेगो मिथुनानाम् इति। जीवा०१ प्रति०।

अणुल्लग- पुं० *[अनुल्लबक]*
कन्दविशेषे, द्वीन्द्रियजीवभेदे च। उत्त० ३ अ०।

अणुल्लण- त्रि० *[अनुल्बण]*
अगर्विते, बुह० ३ उ०।

अणुल्लाव- पुं० *[अनुल्लाप]*
कुत्सिते काक्का वर्णने, ठा० ३ ठा०।

अणुल्लोय- पुं० *[अनुल्लक]*
द्वीन्द्रियजीवविशेषे, उत्त० ३६ अ०।

अणुवइट्ठ- त्रि० *[अनुपदिष्ट]*
आचार्यपरम्पराऽनागते, 'उस्सुत्तमणुवइट्ठं नाम जं नो आयरियपरंपरागयं मुक्तव्याकरणवत्' । निसि० ११ उ०। वव०।

अणुवउत्त- त्रि० *[अनुपयुक्त]*
हेयोपादेयपरीक्षाविकले, उपयोगशून्ये, निसि०।
साधुं प्रत्यदत्तावधानः। ओह० ।

अणुवएस- पुं० *[अनुपदेश]*
स्वभावे, निसर्गः स्वभावोऽनुपदेश इत्यनर्थान्तरम्। ठा० २ ठा० १ उ०।

अणुवओग- पुं० *[अनुपयोग]*
अनर्थे, अनर्थोऽप्रयोजनमनुपयोगो निष्कारणतेति पर्यायाः। आव० ६ अ०।
शक्तेरनुपयोजने अव्यापारणे, उपयोजनमुपयोगो जीवस्य बोधरूपो व्यापारः। स चेह विवक्षिताऽर्थे चित्तस्य विनिवेश स्वरूपो गृह्यते, न विद्यते स यत्र सोऽनुपयोगः पदार्थः। उपयोगाविषये, 'अणुवओगो दव्वं' भावशून्यतायां च। अनु०।

अणुवकय- त्रि० *[अनुपकृत]*
परैरवर्तितेषु, अनुपकृतम् । आव० ४ अ०।

अणुवक्कंत- त्रि० *[अनुपक्रान्त]*
अनिराकृते, उव०।

अणुवक्ख- त्रि० *[अनुपाख्य]*
गताऽऽख्यातिके, बुह० १ उ०।

अणुक्खड- त्रि० *[अनुपस्कृत]*
अकृतोपस्कारे, उवक्खडा य खीरदहिमादि, अणुवक्खडा सव्वेसु परिविट्ठेसु। निसि० १ उ०।

अणुवगरण- न० *[अनुपकरण]*
उपधेरभाव, वव० ७ उ०।

अणुवचय- पुं० *[अनुपचय]*
अनुपचीयमानतायाम्, अनुपादाने च। उत्त० १ अ०।

अणुवत्त- त्रि० *[अनुवृत्त]*
द्वितीयवारं प्रवृत्ते जीतव्यवहारादौ, वव० २ उ०।

अणुवत्ति- स्त्री० *[अनुवृत्ति]*
इङ्गिताादिना गुरुचित्तं विज्ञाय तदाऽऽनुकूल्येन प्रवृत्तौ । विशे०। आव०म०।

अणुवभोज्ज- त्रि० *[अनुपभोज्य]*
साधूनामुपभोक्तुमयोग्ये, बुह० ३ उ०

अणुवम- त्रि० *[अनुपम]*
उपमारहिते, आव० ५ अ०।

अणुवमसिरिय- त्रि० *[अनुपमश्रीक]*
निरुपमदेहकान्तिकल्पिते, आव०म०।

अणुवमा- स्त्री० *[अनुपमा]*
खाद्यविशेषे, जीवा० ३ प्रति०।

अणुवयमाण- त्रि० *[अनुवदत्]*
पश्चाद् वदति, आचा० १ श्रु० ६ अ० ४ उ०।
असीला अणुवयमाणस्स बितिया' अनुवदतोऽनुपश्चाद् वदतः पृष्ठतोऽपृष्ठतोऽपवदतोऽन्येन वा मिथ्यादृष्ट्यादिना कुशीला इत्येवमुक्तेऽनुवदतः पार्श्वस्थादेः। आचा०१ श्रु०६ अ०४ उ०।

अणुवरय- त्रि० *[अनुपरत]*
अविरते, ठा० २ ठा० १ उ०।
पापाऽनुष्ठानेभ्योऽनिवृत्ते, आचा० १ श्रु० ५ अ० १ उ०।
अविच्छिन्ने । सम० ।

अणुवरयकायकिरिया- स्त्री० *[अनुपरतकायक्रिया]*
अनुपरतस्याऽविरतस्य सावद्याद् मिथ्यादृष्टेः सम्यग्दृष्टेर्वा कायक्रियोत्क्षेपादि-लक्षणा कर्मबन्धनमनुपरत-कायक्रिया। कायिक्याः क्रियाया भेदे, भग० ३ श० ३ उ०।

अणुवरयदण्ड- पुं० *[अनुपरतदण्ड]*
मनोवाक्कायलक्षणदण्डाद् विरते आचा०१ श्रु०४ अ० १ उ०।

अणुवलब्भमाण- त्रि० *[अनुपलभ्यमान]*
अदृश्यमाने, 'अणुवलब्भभाणो वि सुहदुक्ख' । दश० १ अ०।

अणुववायकारग- त्रि० *[अनुपपातकारक]*
उप समीपे, पतनं स्थानमुपपातो दृग्विषयदेशावस्थानम्, तत् कारकस्तदनुष्ठाता तद्भिन्नो गुर्वादेशादिभीत्या तदव०हितदेशस्थायिभिन्नः गुरूणां दृग्विषये स्थित्यकारकः, उत्त० १ अ०
आदेशभयाद् दूरं तिष्ठति। उत्त० १ अ०।

अणुवसंत- त्रि० *[अनुपशान्त]*
उपशान्तो जितकषायः, न उपशान्तोऽनुपशान्तः। सकषाये, उत्त० १९ अ०।
उपशमप्रधाने, सूय० २ श्रु०२ अ०।

अणुवसंत- त्रि० *[अनुपशान्त]*
निर्विकारे, ठा०।

अणुवसमंत- त्रि० *[अनुपशमयत्]*
अनुपशमं कुर्वति, वव० १ उ०।

अणुवसु- पुं० *[अनुवसु]*
वसु द्रव्यं, तद्भूतः कषायकालिकाऽऽदिमलापगमाद् वीतराग इत्यर्थः। तद्विपर्ययेणाऽनुवसुः।सरागे, वसुः साधुः, अनुवसुः श्रावकस्तस्मिन्, 'वीतरागो वसुर्ज्ञेयो, जिनो वा संयतोऽथवा। सरागोऽह्यनुवसुः प्रोक्तः, स्थविरः श्रावकोऽथवा'।वसु वा अणु वसु वा जाणित्तु धम्मं जहा तहा। आचा०१ श्रु०६अ०२ उ०

अणुवस्सियववहारकारि(ण)- त्रि० *[अनुपश्रितव०हारकारिन्]*
निश्रा रागः, निश्रा संजाता अस्येति निश्रितः, न निश्रितोऽनिश्रितः,स चाऽसौ व्यवहारश्च अनिश्रितव्यवहारः, तत्करणशीला अनिश्रितव्यवहारकारिणः। रागेण व्यवहारकारिणि, वव० १ उ

अणुवह- अव्य० *[अनुपथ]* पथः समीपे,। अनुपथमेवाऽस्मदवसथो भवतां वर्त्तेत। आचा० १ श्रु०८ अ०१ उ०।

अणुवहय- त्रि० *[अनुपहत]*
अग्न्यादिभिरविध्वस्ते, पिंड०।

अणुवहयविहि- पुं० *[अनुपहतविधि]*
अनुत्पन्नमुत्पाद्य दाने, गुरुभिर्दत्तस्य अन्यस्य गुरूननुज्ञाप्य दाने वा। अनुपहतविधिर्यदनुत्पन्नमुत्पाद्य ददाति। अन्ये तु व्याचक्षते- यत्पुनस्तस्य गुरुभिर्दत्तं तत् सोऽन्यस्य गुरूननुज्ञाप्य ददाति। 'अणुवहियं जं तस्स उ, दिन्नं तं देह सो उ अन्नस्स' यत् तस्य दत्तं सोऽन्यस्मै गुरूननुज्ञाप्य ददाति। क्षमाश्रमणैः तुभ्यमिदं दत्तमित्येषोऽनुपहतविधिः। वव० १ उ०।

अणुवाइ- त्रि० *[अनुपातिन्]*
अनुपतत्यनुसरतीत्येवंशीलः। ठा० ९ ठा०।
अनुवदितुंशीलमस्येत्यनुवादी।अनुवादशीले,सूय०१श्रु०१२अ०

अणुवाएज्ज- त्रि० *[अनुपादेय]*
हेये अग्रहीतव्ये, आव०म०।

अणुवाय-१ पुं० *[अनुताप]*
संयोगे, भग० १२ श० ४ उ०।

अणुवाय-२ पुं० *[अनुपात]*
अनुसरणे, पन्न०१७ पद०।
अनुपतनमनुपातः।शब्दोच्चारणरूपाऽनुदर्शनादौ, उपा०१ अ०

अणुवाय-३ पुं० *[अनुपात]*
आघायकविवक्षितपुरुषाणामनुकूले वाते,। जंबू० १ वक्ष०। रा०।
अनुकूलो वातो यत्र देशे सोऽनुवातः। यस्माद् देशाद् वायुरागच्छति तत्र, भग० १६ श० ६ उ०।
अनुगमनं—अनुरागः। उत्त०

अणुवाय-४ पुं० *[अनुवाद]*
'द्वादश मासाः संवत्सरोऽग्निरुष्णोऽग्निर्हिमस्य भेषजम्' इत्यादीनि तु वेदवाक्यान्यनुवादप्रधानानि, लोकप्रसिद्धस्यैवाऽर्थस्य एतेष्वनुवादात्। विशे०।

अणुवालय- पुं० *[अनुपालक]*
आजीविकोपासकभेदे, भग० २४ श० २० उ०।
गोशालकश्रावकविशेषः। भग०

अणुवास- पुं० *[अनुवास]*
वर्षावासे ऋतुबद्धे वा उषित्वा पुनस्तत्रैव पश्चाद् वसने, अशिव आदिकारणेषु वृद्धादिवासे वा वसने च। पंच० चू०।

अणुवासग- पुं० *[अनुपासक]*
न उपासकः श्रावकोऽनुपासकः। मिथ्यादृष्टौ, स च ज्ञातकोऽज्ञातकश्च, नायकोऽनायकश्चेति द्विधा। एतस्य द्विविधस्यापि प्रव्राजने चतुर्गुरु, आज्ञादयश्च दोषाः। निसि० ११ उ०।
उपासकः श्रावक इतरोऽनुपासकः। अश्रावके, निसि० ८ उ०।

अणुवासणा- स्त्री० *[अनुवासना]*
चर्मयन्त्रप्रयोगेणाऽपानेन जठरे तैलविशेषप्रवेशने, । नाया० १३ अ०। विपा०।
व्यवस्थापनायाम्, आचा०१ श्रु०६ अ०१ उ०।

अणुविग्ग- त्रि० *[अनुद्विग्न]*
प्रशान्ते, चरे मंदमणुव्विग्गे, अविक्खित्तेण। दश०५अ० १ उ०
अनुद्विग्नः क्षुधादिजयात् प्रशान्त इति। बुह० १ उ०।

अणुवीइ-१ अव्य० *[अनुविचिन्त्य]*
पर्यालोच्येत्यर्थे, पण्हा०२ अ०
आलोच्येत्यर्थे, दश०७ अ०।

अणुवीइ-२ अव्य० *[अनुविचिन्त्य]*
केवलज्ञानेन ज्ञात्वेत्यर्थे, सूय०१ श्रु०१० अ०।

अणुवीइ- ३ अव्य० *[अनुवाच्य]*
आनुकूल्यं वाचयित्वेत्यर्थे, सूय०१ श्रु०४ अ०१ उ०।

अणुवीइभासि(ण)- पुं० *[अनुविचिन्त्यभाषिन्]*
अनुविचिन्त्य पर्यालोच्य भाषते इत्येवंशीलोऽनुविचिन्त्यभाषी। वव० १ उ०।
स्वालोचितवक्तृरूपे वाचिकविनयभेदे, दश० १ अ०।

अणुवीइसमिइजोग- पुं० *[अनुविचिन्त्यसमितियोग]*

अनुविचिन्त्य पर्यालोच्य भाषणरूपा या समितिः सम्यक्प्रवृत्तिः साऽनुविचिन्त्यसमितिस्तयोर्योगः संबन्धस्तद्रूपो वा व्यापारो वा अनुचिन्त्य समितियोगः। भाषासमितियोगे, पण्हा०२ अ०।

अणुवूहण- न० *[अनुव्यूहन]*

प्रशंसने, कल्प०।

अणुवेदयंत- त्रि० *[अनुवेदयत्]*

अनुभवति, सूय० १ श्रु० ५ अ० १ उ०

अणुवेहमाण- त्रि० *[अनुप्रेक्षमाण]*

अनुप्रेक्षां कुर्वति, 'घुणे उरालं अणुवेहमाणे, विच्चाण सोयं अणवेक्खमाणे' सूय० १० अ०।

अणुव्वय-१ न० *[अणुव्रत]*

अणूनि लघूनि व्रतानि अणुव्रतानि। लघुत्वं च महाव्रतोपेक्षया-ऽल्पविषयत्वादिनेति प्रतीतमेवेति। उक्तं च-'सव्वगयं सम्मत्तं, सुए चरित्तेन पज्जवा सव्वे। देसविरइं पडुच्च, दोण्ह वि पडिसेवणं कुज्जा'।। इति। अथवा सर्वविरताऽपेक्षया अणो-र्लघोर्गुणिनो व्रतान्यणुव्रतानि। ठा० ५ ठा० १ उ०।

अणुव्वय-२ न० *[अनुव्रत]*

अणु महाव्रतस्य पश्चादप्रतिपत्तौ यानि व्रतानि कथ्यन्ते तान्यणु व्रतानि इति। उक्तं च-'जइ धम्मस्स समत्थे, जुज्जइ तद्देसणं पि साहूणं। तदहिगदोसनिवत्ती, फलंति कायाऽणुकंपट्ठं'। इति। ठा०५ ठा०१ उ०। आतु०।

श्रावकयोग्येषु देशविरतिरूपेषु स्थूलप्राणाऽतिपातविरमण आदिषु, तानि च– पंचाऽणुव्वया पन्नत्ता ? तं जहा-

थूलाओ पाणाइवायाओ वेरमणं, थूलाओ मुसावायाओ वेरमणं, थूलाओ अदिन्नाऽऽदाणाओ वेरमणं, सदारसंतोसे, इच्छापरिणामे।

स्थूला द्वीन्द्रियादयः सत्त्वाः, स्थूलत्वे चैतेषां सकल-लौकिकानां जीवत्वप्रसिद्धेः, स्थूलविषयत्वात् स्थूलं, तस्मात् प्राणाऽतिपातात्।

तथा स्थूलः परिस्थूलवस्तुविषयोऽतिदुष्टो विवक्षासमुद्भवः, तस्मात् मृषावादाद्।

तथा परिस्थूलवस्तुविषयं चौर्याऽऽरोपणहेतुत्वेन प्रसिद्धम् अति दुष्टाध्यवसायपूर्वकं स्थूलं, तस्माददत्तादानात्। तथा स्वदारसन्तोषः, आत्मीयकलत्रादन्येच्छानिवृत्तिरित्युपलक्षणात् परदारवर्जनमपि ग्राह्यम्।

तथा इच्छाया धनादिविषयस्याऽभिलाषस्य परिमाणं नियमन-मिच्छापरिमाणम्, देशतः परिग्रहविरतिरित्यर्थः। ठा० ५ ठा० १ उ०। आव०। उपा०।

अणुव्वजंत- त्रि० *[अनुव्रजत्]*

अनुकूलं साध्वभिमुखं व्रजति, सूय० १ श्रु०४ अ०१ उ०।

अणुव्वया- स्त्री० *[अनुव्रता]*

अन्विति कुलाऽनुरूपं व्रतमाचारोऽस्या अनुव्रता। पतिव्रतायाम् उत्त० २० अ०।

अनुवर्त्तिनी, परिणामिकीबुद्धिदृष्टान्ते भार्या। आव०

अणुव्वस- त्रि० *[अनुवश]*

वशमुपागते, अन्योऽन्यं परस्परतो वशमुपागताः परस्परा-यताः। सूय० १ श्रु० ३ अ० ३ उ०।

अणुव्विवाग- पुं० *[अनुविपाक]*

अनुरूपे विपाके, । सूय० १ श्रु०५ अ०२ उ०।

अणुसंचरंत- त्रि० *[अनुसञ्चरत्]*

बम्भ्रम्यमाणे, सूय० १ श्रु०१० अ०।

पश्चात् सञ्चरणे, आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

अणुसंवेयण- न० *[अनुसंवेदन]*

पश्चात्संवेदने, अनुभवने च। आचा० १ श्रु० ५ अ०५ उ०।

अणुसंसरण- न० *[अनुसंसरण]*

दिग्विदिशां गमनस्य भावदिगागमनस्य वा स्मरणे, आचा० १ श्रु०१ अ०१ उ०।

अणुसज्जाणा- स्त्री० *[अनुसज्जना]*

अनुषक्तौ, वव० १ उ०।

अणुसज्जित्था- त्रि० *[अनुषक्तवत्]*

पूर्वकालात् कालाऽन्तरमनुवृत्तवति, भग०६ श०७ उ०।

अणुसट्ठी- स्त्री० *[अनुशिष्टि]*

अनुशासनमनुशिष्टिः। उपदेशप्रदानरूपे स्तुतिकरणे, लक्षणे वा वैयावृत्त्यभेद, वव०१ उ०। निसि०।

इहलोकाऽपायप्रदर्शने, बुह० १ उ०।

तिविहा अणुसट्ठी पन्नता। तं जहा- आयाणुसट्ठी पराणुसट्ठी तदुभयाणुसट्ठी। ठा० ३ ठा० ३ उ०।

अणुसमय- अव्य० *[अनुसमय]*

सततमित्यर्थे, उत्त०५ अ०।

प्रतिक्षणमित्यर्थे, चंद० ६पाहु०।

'अणुसमयं अविरहियं, णिरंतरं उववज्जंति'। अनुसमयम् इत्यादि पदत्रयमेकार्थम्। भग० ४१ श० १ उ०।

अणुसमवयणोववत्तिअ- त्रि० *[अनुसमवदनोपपातिक]*

अनुरूपा समाऽविषमा वदनोपपत्तिर्द्वारघटना येषां ते तथा। अनुलोमाऽविषमद्वारघटनाके, । जंबू० ३ वक्ष०।

अणुसय- पुं० *[अनुशय]*

गर्वे, पश्चात्तापे च। अनु०। पण्हा०।

अणुसरण- न० *[अनुस्मरण]*

'णाणानयाणुसरणं, पुव्वगयसुयाणुसारेणं' आव०४ अ०।

स्मृतौ, विशे०।

अणुसरियव्व- त्रि० *[अनुसर्तव्य]*

अनुगन्तव्ये, ठा० ५ ठा० १ उ०।

अणुसरियव्व- त्रि० *[अनुस्मर्तव्य]*

अनुचिन्तनीये, 'अणुसरियव्वो सुहेण चित्तेण एसेव नमोक्कारा कयन्नुयं मन्नमाणेणं'। आव०म०।

अणुसरिस- त्रि० *[अनुसदृश]*

अनुरूपे, 'अणुसरिसोतस्स होउवज्झाओ'। वव० २ उ०।

अणुसार-१ पुं० *[अनुसार]*

पारतन्त्र्ये, विशे०।

अणुसार-२ पुं० *[अनुस्वर]*

अनुस्वारो विद्यतेऽस्येति अभ्रादिभ्य इति मत्वर्थीयोऽत् प्रत्ययः। अनुस्वारवत्त्वेनउच्चार्यमाणेऽनक्षरश्रुतविशेषे,आव०म०। नं०। अणुस्सारं नाम पम्हुट्ठे अच्छे सत्ते वा संभरिते अन्नेण वा संभारिते जं अक्खरविरहितं सद्दकरणं तमणुस्सारं भन्नति। आव०चू० १ अ०।

अणुसासंत- त्रि० *[अनुशासत्]*

शिक्षयति- शिक्षां प्रयच्छति, उत्त० ४ अ०।

अणुसासण-१ नं० *[अनुशासन]*

अनुशास्यन्ते सन्मार्गेऽवतार्यन्ते सदसद्विवेकतः प्राणिनो येन तदनुशासनम्। धर्मदेशनसन्मार्गाऽवतारणे।सूय०१श्रु०१५ अ० शिक्षायाम्, नाया०१३ अ०। उत्त०। जीवा०।

'अणुसासइ' अनुशास्ते। बुह०१ उ०।

अणुसासण-२ नं० *[अनुशासन]*

भगवदाज्ञारूपे आगमे च। सूय०१ श्रु०२ अ० ३ उ०। यथागममित्यर्थे। सूत्रानुसारेणेति यावत्। 'अणुसासणमेव पक्कमे, वीरेहिं समं पवेइयं'। सूय०१ श्रु०२ अ०१ उ०।

अणुसासण- ३ नं० *[अनुशासन]*

दुःस्थस्य सुस्थतासंपादने, सम०।

अणुसासण-४ नं० *[अनुशासन]*

अनुकम्पायाम्, अणुकंप त्ति अणुसासणं ति एगट्ठा।पंच० चू०

अणुसासण-५ नं० *[अनुशासन]*

अनुशासनं भज्यमाने वा दृष्टे वा। किमुक्तं भवति ? सामाचारीतः प्रतिभज्यमानान् कथञ्चिद्, रुष्टत्वादनुशास्ति, तदनुशासनम्। यदि वा यो यथोक्तकार्येऽपि सन् कथञ्चित् न कुरुते, तत् कस्यचिच्छिक्षणम्, 'एतत् तव कृत्यमिति' रुष्टत्वादनुशास्ति, एतदनुसासनम्। संग्रहणभेदे, वव० ३ उ०।

अणुसासिज्जंत- त्रि० *[अनुशास्यमान]*

तत्र तत्र चोद्यमाने। दश० ९ अ० ४ उ०। सूय०।

अणुसासिय- त्रि० *[अनुशासित]*

युक्तानि शिक्ष्यमाणे कथञ्चित् स्खलितादिषु गुरुभिः परुषोक्त्या शिक्षिते, कठोरवचनैस्तर्जिते, उत्त० १ अ०।

अभिहिते, सूय० १ श्रु० १४ अ०।

अणुसिट्ठ- त्रि० *[अनुशिष्ट]*

शिक्षां गृहीते, । सूय० १ श्रु० ३ अ० ३ उ०।

अणुसिट्ठी- स्त्री० *[अनुशिष्टि]*

तद्भावकथनपुरस्सरं प्रज्ञापनायाम्, बुह० १ उ०।

शिक्षायाम्, उत्त०१० अ०।

अणुसूयग- पुं० *[अनुसूचक]*

नगराऽभ्यन्तरे चारमुपलभमाने, सूचककथितं श्रुतं दृष्टं वा, स्वयमुपलब्धं च प्रतिसूचकेभ्यः कथयति, सामन्तराज्येषु वसतिकृतवृत्तिके अमात्यपुरुषे, तादृश्यां कृतवृत्तिकायां चैव महिलायाम्, 'सूयग तहाऽणुसूयपडिसूयग सव्वसूयगा चेव। पुरिसा कयवित्तीया, वसंति सामंतनगरेसु।१ ।वव०१ उ०।

अणुसूयत्ता- न० *[अनुस्यूतत्व]*

अपरशरीराऽऽश्रितततायां परनिश्रायाम् । सूय०२ श्रु० ३ अ०।

अणुसोय- न० *[अनुश्रोतस्]*

प्रवाहे, 'अणुसोयपट्ठिए बहुजणम्मि पडिसोयलद्धलक्खेण। पडिसोयमेव अप्पा, दायव्वो होउ कामेणं।। अणुसोयसुहो लोगो, पडिसोओ आसवो सुविहियाणं। अणुसोओ संसारो, पडिसोओ तस्स उत्तारो'।। दश०२ चू०।

अणुसोयचारि- त्रि० *[अनुश्रोतश्चारिन्]*

अनुश्रोतसा चरतीति अनुश्रोतश्चारी। नद्यादिप्रवाहगामिनि मत्स्ये, एवं भिक्षाके च।

यो हि अभिग्रहविशेषादुपाश्रय समी-पात् क्रमेण कुलेषु भिक्षते, सोऽनुश्रोतचारी। ठा० ४ ठा० ४ उ०

अणुसोयपट्ठिय- त्रि० *[अनुश्रोतःप्रस्थित]*

नदीपूरप्रवाहपतितकाष्ठवद् विषयकुमार्यद्रव्यक्रियानुकूल्येन प्रवृत्ते, अणुसोयपट्ठिए बहुजणम्मि पडिसोयलद्धलक्खेणं । पडिसोयमेव अप्पा, दायव्वो होउ कामेणं'। दश०२ चू०।

अणुसोयसुह- त्रि० *[अनुश्रोतःसुख]*

उदकभिन्नाऽभिसर्पणवत् प्रवृत्त्याऽनुकूलविषयादिसुखे, दश० १ अ०।

'अणुसोयसुहो लोगो'। दश० २ चू०।

अणुस्सरित्ता- अव्य० *[अनुसृत्य]*

अनुसारं कृत्वेत्यर्थे, । सूय० १ श्रु०७ अ०।

अणुस्सुय-१ त्रि० *[अनुश्रुत]*
अवधारिते गुरुभिरुच्यमाने, उत्त० ५ अ०
श्रवणपथमायाते, सूय०१ श्रु०२ अ०२ उ०।

अणुस्सुय-२ त्रि० *[अनुश्रुत]*
भारतादौ पुराणे श्रुते, सूय०१ श्रु० ३ अ०४ उ०।

अणुस्सुय-३ त्रि० *[अनुत्सुक]*
न उत्सकोऽनुत्सुकः। सूय० १ श्रु० ९ अ०।

अणुस्सुयत्त- न० *[अनुत्सुकत्व]*
विषयसुखेऽनुत्तालत्वे, उत्त० २९ अ०।

अणुहियासण- न० *[अन्वध्यासन]*
अविचलकायतया सहने, जंबू० २ वक्ष०।

अणूव- त्रि० *[अनूप]*
नद्यादिपानीयबहुले, बुह० १ उ०। विशे०। वव०।

अणूवदेस- पुं० *[अनूपदेश]*
जलदेशे, वव० ४ उ०।

अणेक्क- त्रि० *[अनेक]*
बहुत्वे, सूय० १ श्रु० १२ अ०।

अणेक्काणंतरसिद्धकेवलनाण- न० *[अनेकान्तरसिद्धकेवलज्ञान]*
आभिनिबोधिकज्ञानभेदे, ठा० २ ठा० १ उ०।

अणेगंगिय- पुं० *[अनेकाङ्गिक]*
अनेकपट्टकृते, निसि० १ उ०।
कन्थिकाप्रस्तारात्मके संस्तारभेदे च। वव० २ उ०।

अणेगंतवाय- पु० *[अनेकान्तवाद]*
स्याद्वादे, स च यथा युक्तामञ्चति, तथा स्याद्वादमञ्जर्यादि-ग्रन्थेभ्यः संगृह्यते। अनु०

अणेगकोडि- त्रि० *[अनेककोटि]* अनेकाः कोटयो द्रव्यसङ्ख्यायां, स्वस्वरूपपरिमाणे वा येषां तेऽनेककोटयः। कोटिसङ्ख्याकेषु कौटुम्ब्यादिषु, नाया०।
अनेकाः कोटयो द्रव्यसङ्ख्यायां, स्वस्वरूपपरिमाणे वा येषां तेऽनेककोट्यः, तैः कौटुम्बिकैः कुटुम्बिभिः, आकीर्णा संकुला या सा तथा, सा चासौ निर्वृता च संतुष्टजनयोगात्संतोषवतीति कर्मधारयः।
अत एव सा चासौ सुखा च शुभा च वेति कर्मधारयः।।
नाया०१ अ०। उव०। रा०।

अणेगक्खरिय- न० *[अनेकाक्षरिक]*
अनेकानि च तानि अक्षराणि तैर्निर्वृत्तमनेकाक्षरिकम्। द्व्यक्ष-रादिनिर्वृत्ते द्विनामभेदे, अनु०।
'से किं तं अणेगक्खरिए ? अणेगक्खरिए कन्ना वीणा लता माला। से तं अणेगक्खरिए'। अनु०।

अणेगखंडी- स्त्री० *[अनेकखण्डी]*
अनेकेषां नश्यतां नराणां मार्गभूताः खण्डयोऽपद्वाराणि यस्यां साऽनेकखण्डी। विपा०१ श्रु० ३ अ०।
अनेकनश्यत्तरनिर्गमापद्वारायां पुर्याम्, नाया० १८ अ०।

अणेगखंभसयसण्णिविट्ठ- त्रि० *[अनेकस्तम्भशतसन्निविष्ट]*
अनेकेषु स्तम्भशतेषु सन्निविष्टे यत्र वा अनेकानि स्तम्भशतानि सन्निविष्टानि। भग०९ श० ३३ उ०। रा०। विपा०।
'एगं च णं महं भवणं करेंति अणेगखंभसयसन्निविट्ठं लील-ट्ठियसालभंजियागं' नाया० १ अ०। आव०म०।

अणेगगुणजाणय- त्रि० *[अनेकगुणज्ञायक]*
अनेकेषां गुणानामुपलक्षणत्वाद् दोषाणां च ज्ञायकः। बहुदो-षाणां ज्ञायके, अणेगगुणजाणए पंडिए विहिण्णू।जंबू०३ वक्ष०

अणेगचित्त- त्रि० *[अनेकचित्त]*
अनेकानि चित्तानि कृषिवाणिज्यावल्गनादीनि यस्य योऽनेक-चित्तः। कृष्यादिषु व्यापृतचित्ते, आचा०१ श्रु० ३ अ०२ उ०।

अणेगजीव- त्रि० *[अनेकजीव]*
अनेके जीवा यस्येति। बहुजीवाजीवात्मके क्षित्यादौ, 'पुढवी-चित्तमंतमक्खाया अणेग-जीवा पुढोसत्ता'। दश०४ उ०।

अणेगजोगधर- पुं० *[अनेकयोगधर]*
योगः क्षीराश्रवादिलब्धिकलापसंबन्धः, तं धारयन्तीति अनेक-योगधराः। लब्धिसंपन्नेषु सूय० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

अणेगझस- त्रि० *[अनेकझष]*
विविधमत्स्येषु सूक्ष्ममत्स्यखलमत्स्यादिषु, पण्हा०१ अ०।

अणेगणरपवरभुयऽगेज्झ- त्रि० *[अनेकनरप्रवरभुजाग्राह्य]*
अनेकस्य मनुष्यस्य ये प्रवराः प्रलम्बा भुजा बाहवस्तैरग्राह्योऽ-परिमेयोऽनेकनरप्रवरभुजाऽग्राह्यः। अनेकपुरुषव्यामैरप्रतिमेय-थौल्ये वृक्षादौ, रा०।

अणेगणाम- न० *[अनेकनामन्]*
अनेकपर्यायेषु, 'अणेगपरिरयंति वा अणेगपज्जायंति वा अणेग-नामभेदंति वा एगट्ठा'। आव०चू० १ अ०।

अणेगतालायराणुचरिय- त्रि० *[अनेकतालाचरानुचरित]*
अनेके च ये तालाचराः तालादानेन प्रेक्षाकारिणः तैरनुचरित आसेवितो यः स तथा। उव०।
नानाविधप्रेक्षाकारिसेविते, भग० ११ श० ४ उ०। विपा०। पुरादौ, नाया० १ अ०। जंबू०।

अणेगदन्त- त्रि० *[अनेकदन्त]*
अनेके दन्ता येषां ते अनेकदन्ताः। द्वात्रिंशद्दन्तेषु, तं०। पण्हा०।
अनेके दन्ता येषां ते अनेकदन्ताः अनेकदन्तयुक्तेषु, तं०।

अणेगपासंडपरिग्गहिय- त्रि० *[अनेकपाखण्डपरिगृहीत]*
नानाविधव्रतिभिरङ्गीकृते, पण्हा०२ अ० ।

अणेगबहुविविहवीससापरिणय- त्रि० *[अनेकबहुविविधविश्रसापरिणत]*
न एकोऽनेकः, अनेक एकजातीयोऽपि व्यक्तिभेदाद् भवति। तत आह- बहु प्रभूतं विविधो जातिभेदान्नानाप्रकारः बहुविधः, प्रभूतजातिभेदतो नानाविध इति भावः। स च केनाऽपि निष्पादितोऽपि संभाव्येत।तत आह-विश्रसया स्वभावेन तथा-विधक्षेत्रादिसामग्रीविशेषजनितेन परिणतो न पुनरी-श्वरादिना निष्पादितो विश्रसापरिणतः। ततः पदत्रयस्य पद- द्वयमीलनेन कर्मधारयः।नानाविधस्वभावोद्भूते, जीवा० ३ प्रति०

अणेगभागत्थ- त्रि० *[अनेकभागत्थ]*
द्वित्रादिभागस्थे, निसि० २० उ० ।

अणेगभाव- त्रि० *[अनेकभाव]*
बहुपर्याययुक्ते, भग० १४ श० ४ उ० ।

अणेगभूय- त्रि० *[अनेकभूत]*
अनेकरूपे, भग० १४ श० ४ उ० ।

अणेगभेद- पुं० *[अनेकभेद]*
अनेकपर्याये, 'अणेगपरिरयं ति वा अणेगपज्जयं ति वा अणेग भेदं ति वा एगट्ठा'। आव०चू० १ अ० ।

अणेगरूव- त्रि० *[अनेकरूप]*
नानाप्रकारे, 'इह लोइयाइं भीमाइं अणेगरूवाइं अवि सुम्भि-दुम्भिगंधाइं सद्दाइं अणेगरूवाइं'। आचा०१ श्रु०९ अ०२ उ० ।
'मुहुं मुहुं मोहगणे जयंतं, अनेगरूवा समणं चरंतं। फासा फुसंती असमंजसं च, न तेसु भिक्खू मणसा पओगे'। उत्त०१
अनेकमित्यनेकविधं परुषविषमसंस्थानादिभेदं रूपं स्वरूप-मेषामिति अनेकरूपाः। त्रयोविंशतिविधाः।उत्त०४ अ० ।

अणेगरूवधुणा-१ स्त्री० *[अनेकरूपधुना]*
अनेकरूपा संख्यात्रयाद् अधिका धुना कम्पना यस्यां सा अनेक रूपधुना। उत्त०२६अ०

अणेगरूवधुणा-२ *[अनेकरूपधूनना]*
अनेकरूपा चासौ संख्यात्रयातिक्रमणतो युगपद०नेकवस्त्रग्रहणतो वा धूनना कम्पनात्मिका या साऽनेकरूपधूनना। उत्त०२६ अ०

अणेगरूवधुणा- ३ *[अनेकरूपधूना]*
अत्र च धूनं कम्पनमन्यत् प्राग्वत् उत्त०२६ अ० ।
'अणेगमपकारं कंपेति, अथवा अणेगाणि एगओ काऊण धुणइ पमाणे पमायंति' पुरिमेषु खोटकेषु यत्प्रमाणयुक्तं भवति तत् पुरिमादीन् न्यूनानधिकान् वा करोति। उव० ।

अणेगवयणप्पहाण- पुं० *[अनेकवचनप्रधान]*
नानाविधवाग् व्यवहाराभिज्ञे, अनेकेषु विविधप्रकारेषु वचनेषु वक्तव्येषु प्रधानो मुख्यः। अनेकधा वचनप्रकारश्चायं निज-शासनप्रवर्तनादौ आदौ तावन्मधुरं, मध्ये रूक्षं ततः परं कटु-कम्। भोजनविधिमिव विबुधाः, स्वकार्यसिद्ध्यै वदन्ति वचः अनुकूलं च सत्यं च, वक्तव्यं स्वामिना सह। जंबू०३ वक्ष०

अणेगवायामजोग्ग- पुं० *[अनेकव्यायामयोग्य]*
परिश्रमविशेषे, अनेकानि यानि व्यायामयोग्यानि परिश्रम-योग्यानि वल्गनव्यामर्दनमल्लयुद्धकरणानि, तत्र वल्गनं उल्ललनं, व्यामर्दन परस्परेण बाह्वाद्यङ्गमोटनम्, मल्लयुद्धानि प्रतीतानि। एतैः कृत्वा श्रान्तः सामान्येन श्रममुपगतः परिश्रान्तः सर्वाङ्गीणं श्रमं प्राप्तः, एवंविधः सन्। कल्प० ।

अणेगवालसयसंकणिज्ज- त्रि० *[अनेकव्यालशतशङ्कनीय]*
अनेकैः श्वापदशतैर्भयजनके, 'अणेयवालसयसंकणिज्जे या वि होत्था'। नाया० २ अ० ।

अणेगविहारि(ण्)- त्रि० *[अनेकविहारिन्]*
स्थविरकल्पिके, बुह० ५ उ० ।

अणेगसाहुपूइय- त्रि० *[अनेकसाधुपूजित]*
अनेकसाध्वाचरिते, दश० ५ अ० २ उ० ।

अणेगसिद्ध- पुं० *[अनेकसिद्ध]*
एकस्मिन् समये अनेके सिद्धाः अनेकसिद्धाः। पण्हा०१ अ० ।
एकसमये द्व्यादिष्टशतान्तेषु, ठा० १ ठा० १ उ० । नं० ।
अनेके च एकस्मिन् समये सिध्यन्त उत्कर्षतोऽष्टोत्तरशतसंख्या वेदितव्याः। ठा० १ ठा० १ उ० ।

अणेगाहगमणिज्ज- न० *[अनेकाहगमनीय]*
अनेकैरहोभिः अनेका-हैर्वा गम्यत इति अनेकाहगमनीयम्। बहुदिवसैर्गन्तव्येऽध्वनि निसि० १६ उ० । आचा० ।

अणेज- त्रि० *[अनेज]*
निष्कम्पे, 'अणेजकम्मुदये'। आव० ।

अणेयाउय- त्रि० *[अनैयायिक]*
न्यायेन चरति नैयायिकः, न नैयायिक अनैयायिकः। असत् न्यायवृत्तिके, 'अपडिपुण्णे अणेयाउए'। सूय० २ श्रु० २ अ० ।

अणेलिस- त्रि० *[अनीदृश]*
नाऽन्यत्र ईदृशमस्तीति अनीदृशम्। आचा० १श्रु०६अ०१ उ०
अनन्यसदृशे अद्वितीये, । सूय० १ श्रु० ११ अ० ।
अतुले। सूय० १ श्रु० ६ अ० ।

अणेवंभूय- त्रि० *[अनेवंभूत]*
एवंप्रकारमनापन्ने, यथा बद्धं कर्म नैवंभूताऽनेवंभूता अतस्ताम्, श्रूयन्ते ह्यागमेकर्मणः स्थितिघातादय । भग० ५ श० ५ उ०

अणेसणा- स्त्री० *[अनेषणा]*

अणेसणाए अणन्तरेण दोसेण संकिता अणेसणाए तुट्ठा महस्स सक्कारेण गहिता। आव०चू० ४ अ०।

'से एसणं जाणमणेसणं च' एषणां गवेषणग्रहणैषणादिकां जानन् सम्यगवगच्छन्नेषणां चोद्गमदोषादिकां तत्परिहारं विपाकं च सम्यगवगच्छन्। सूय० १ श्रु० १३ अ०।

अणेसणिज्ज- त्रि० *[अनेषणीय]*

एष्यत इत्येषणीयं कल्प्यम्, तन्नि षेधादनेषणीयम्, । भग० ५ श० ५ उ० ।

केनचिद्दोषेणाऽशुद्धे, सूय० १ श्रु० ९अ०। आचा०। उत्त०।

साधुनाऽग्राह्ये, उत्त० २० अ०।

एष्यते गवेष्यते उद्गमादिदोषविकलतया साधुभिर्यत् तदेषणीयं कल्प्यं, तन्निषेधादनेषणीयम्। ठा० ३ ठा० १ उ०। पिंड०।

अनेषणीयपरिहारमधिकृत्याह–

भूयाइं च सहारब्भ, तमुद्दिस्सा य जं कडं।
तारिसं तु ण गिण्हेज्जा, अन्नपाणं सुसंजए

अभूवन् भवन्ति भविष्यन्ति च प्राणिनस्तानि भूतानि प्राणिनः समारभ्य संरम्भसमारम्भारम्भैरुपतापयित्वा तं साधुमुद्दिश्य-साध्वर्थं यत्कृतं तदकल्पितमाहारोपकरणादिकं तादृशमाधा-कर्मदोषदुष्टं सुसंयतः सुतपस्वी तदन्नं पानकं वा न भुञ्जीत। तु शब्दस्यैवकारार्थत्वान्नैवाभ्यवहरेदेवं तेन मार्गोऽनुपालितो भवति । सूय० १ श्रु० ८ अ०।

अणोउया- स्त्री० *[अनृतुका]*

न विद्यते ऋतु रक्तरूपः,शास्त्रप्रसिद्धो वा यस्याः सा अनृतुका। अरजस्कायां स्त्रियाम्,

यस्या ऋतुकाले मासि मासि रक्तं न प्रस्रवति एतादृशी स्त्री पुरुषेण सार्द्धं गर्भं न धरते। ठा० ५ ठा०

अणोक्कंत- त्रि० *[अनुपक्रान्त]*

अनिराकृते, उव०।

अणोग्घसिय- न० *[अनवघर्षित]*

अवघर्षणमवघर्षितं,तस्याऽभावोऽनवघर्षितम्।भूत्यादिनाऽनि-मार्जिने, जीवा० ३ प्रति०। रा०।

अनवघर्षितेन निर्मला तया छायया समनुबद्धा युक्ताः। (आदर्शकाः) । जीवा० ३ प्रति०।

अणोज्ज- त्रि० *[अनवद्य]*

निर्दोषे, नाया०८ अ०।

अणोज्जंगी- स्त्री० *[अनवद्याङ्गी]*

भगवतो महावीरस्वामिनो दुहितरि जमालिगृहिण्याम् । आव० म० । आव०चू०।

अणोज्जा- स्त्री० *[अनवद्या]*

महावीरस्य दुहितरि, कल्प०। आव०। आचा०।

अणोत्तप्प- त्रि० *[अनवत्राप्य]*

अविद्यमानमवत्राप्यमवत्रपणं लज्जनं यस्य सोऽयमनवत्राप्यो-ऽलज्जनीयः। अहीनसर्वाङ्गत्वेनालज्जाकरे, । दशा०।

अणोत्तप्पया- स्त्री० *[अनवत्रप्यता]*

अलज्जनीयशरीरतायाम्, वव० ६ उ०।

अणोद्धंसिज्जमाण- त्रि० *[अनुपध्वस्यमान]*

माहात्म्यादपात्यमाने, उव०।

अणोम- त्रि० *[अनवम]*

मिथ्यादर्शनाऽविरत्यादिविपर्यस्ते, आचा०१ श्रु० ३ अ०२ उ०।

अणोमाणतर- त्रि० *[अनवमानतर]*

अतिशयेनासङ्कीर्णे, भग० १३ श० ४ उ०।

अणोरपार- त्रि० *[अनर्वाक्पार]*

विस्तीर्णस्वरूपे, पण्हा० ३ अ०।

महत्त्वादनर्वाक्पारम्। पण्हा० ३ अ०।

अणोरपारमिति देशीयवचनं प्रचुरार्थे, उपचाराद् आराद्भाग-परभागरहिते, आव० म०

अणोवणिहिया- स्त्री० *[अनौपनिधिकी]*

न विद्यते वक्ष्यमाणपूर्वानुपूर्व्यादिक्रमेण विरचनं प्रयोजनं यस्य इत्यनौपपनिधिकी। द्रव्यानुपूर्विभेदे, यस्यां वक्ष्यमाणपूर्वानुपू -र्व्यादिमेण विरचना न क्रियते सा द्वयादिपरमाणु निष्पन्नस्कन्ध विषया आनुपूर्व्या अनौपनिधिकीत्युच्यते। अनु०।

अणोवम- त्रि० *[अनुपम]*

न विद्यते उपमा यस्यासावनुपमः। अतुले, उव०। सम०।

अणोवमदंसि- पुं० *[अनवमदर्शिन्]*

अवमं हीनं मिथ्यादर्शनाऽविरत्यादि, तद्विपर्यस्तमनवमं तद् द्रष्टुं शीलमस्येत्यनवमदर्शी। सम्यग्ज्ञानदर्शनचारित्रवति । आचा० १ श्रु० ३ अ० २ उ०

अणोवमसरीअ- त्रि० *[अनुपमश्रीक]*

निरुपमानशोभे, । नाया०८ अ० ।

अणोवयमाण- त्रि० *[अनवपतत्]*

अनवतरति,अणोवयमाणेहिं उवयंति।आचा०१ श्रु०२ अ०१ उ

अणोवलेवय- त्रि० *[अनुपलेपक]*

कर्मबन्धनरहिते, पण्हा०२ अ०।

अणोवसंखा- स्त्री० *[अनुपसङ्ख्या]*

संख्यानं संख्या, परिच्छेदः। उप सामीप्येम संख्या उपसंख्या। सम्यग्यथाऽवस्थिताऽर्थपरिज्ञानम्। नोपसंख्या अनुपसंख्या। अपरिज्ञाने,। सूय०२ श्रु० १२ अ०।

अणोवहिय- त्रि० *[अनुपधिक]*

द्रव्यतो हिरण्यादिकैर्भावतो मायया रहिते,आचा०१श्रु०,४ अ०

अणोसहिपत्त- त्रि० *[अनौषधिप्राप्त]*

औषधिबलरहिते, आव०४ अ०।

अणोसिय- त्रि० *[अनुषित]*

अव०सिते, सूय० १ श्रु०१४ अ०।

अणोहंतर- पुं० *[अनोघन्तर]*

न ओघंतरः। संसारोत्तरणं प्रत्यनले, ।आचा०१श्रु०२अ०३ उ

अणोहट्टय- त्रि० *[अनपघट्टक]*

अविद्यमानोऽपघट्टको यदृच्छया प्रवर्तमानस्य हस्तग्रहादिना निवर्तको यस्य स तथा। नाया० ८ अ०।

बलाद्धस्त दौ गृहीत्वा निवारकेणाऽनिवारिते स्वच्छन्दप्रवृत्ते, विपा०१ श्रु०२ अ०।

'तवेणं सा सुभद्दा अज्जा अणोहट्टिया अनिवारिता'। पुप्फि०

अणोहिया- स्त्री० *[अनोधिका]*

अविद्यमानजलौधिकायाम्, भग० १५ श० १ उ०।

अणोहिया- स्त्री० *[अनूहा]*

अतिगहनत्वेनाविद्यमानोहायाम्, 'एगं महं अगामियं अणोहियं छिन्नावायं दीहमद्धं'। भग० १५ श० १ उ०।

अण्ण-१ न० *[अन्न]*

खण्डमण्डकादिके, उत्त०१२ अ०।

अशने मोदकादिके भक्ष्ये, उत्त०२० अ०।

ओदनादिके, सूय०१ श्रु० ४ अ०२ उ०।

भोजने, सूय०१ श्रु०२ अ०। उत्त०। उव०।

अण्ण-२ त्रि० *[अन्य]*

'अण्णं' पृथगित्यर्थः। निसि०१ उ०। पण्हा०। पन्न०।

स्वातिरिक्ते, पण्हा०।

सर्वनामता चास्य, भग० २ श० ५ उ०।

'नो अन्नदेवे नो अन्नेहि देवाणं देवीओ अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेइ'। भग० २ श० ५, नं०।

'अन्नेहिं बहवे एवमाइणो' उव०। रा०। सूय०।

अन्यस्य नामादिषड्विधो निक्षेपस्तत्र नामस्थापने क्षुण्णे, द्रव्याऽन्यत् त्रिधा-तदन्यत्, अन्यान्यत्, आदेशाऽन्यच्चेति, द्रव्यपरवच्चैवमिति। सम०।

अण्ण-३ न० *[अर्ण]*

अकारादौ वर्णे, गमनस्वभावे त्रि०। जले, उत्त० ५ अ०।

अण्णगिलाय- पुं० *[अन्नग्लायक]*

अन्न भोजनं विना ग्लायतीति अन्नग्लायकः। अभिग्रहविशेषात् प्रातरेव दोषान्नभुजि, उव०। पण्हा०। सूय०।

अण्णउत्त- त्रि० *[अन्योक्त]*

अन्यैः अविवेकिभिः कथिते, उव०।

अण्णउत्थिय- पुं० *[अन्ययूथिक]*

जैनयूथादन्यद् यूथं सङ्घान्तरं, तीर्थान्तरमित्यर्थः, तदस्ति येषां तेऽन्ययूथिकाः। उपा०१ अ०।

अर्हत्सङ्घापेक्षयाऽन्येषु, उव०।

चरकपरिव्राजकशाक्याऽऽजीवकवृद्धश्रावकप्रभृतिषु,

निसि०२उ परतीर्थिकेषु, उव०। नाया०। निसि०। आचा०।

सरजस्कादिषु, आचा०१ श्रु० १ अ० १ उ०।

तीर्थान्तरीयेषु कपिलादिषु, नाया० १० अ०।

अण्णाउत्थियदेवय- न० *[अन्ययूथिकदैवत]*

परतीर्थिकपूज्येषु हरिहरादिषु देवेषु, । उपा० १ अ०। उव०। आव०चू०

अण्णउत्थियपरिग्गहिय- त्रि० *[अन्ययूथिकपरिगृहीतं]*

तीर्थान्तरीयैः पूज्यत्वादिनाऽङ्गीकृतेऽर्हच्चैत्यादौ, उपा०१ अ०।

अन्ययूथिकास्तद्दैवतानि, तत्परिगृहीतानि वा अर्हच्चैत्यानि, श्रावको न वन्देत। तदुक्तं सम्यक्त्वं प्रतिपद्यमानेनाऽऽनन्देन- 'नो खलु भंते ! कप्पइ अज्जप्पभिइ अन्नउत्थिया वा अन्नउत्थिय देवयाणि वा अन्नउत्थियपरिग्गाहियाणि वा अरिहंतचेइयाइं वंदित्तए वा नमंसित्तए वा'। उपा०१ अ०। उव०।

अन्ययूथिकपरिगृहीतानि वा अर्हत्चैत्यानि अर्हत्प्रतिमालक्षणानि यथा भौतपरिगृहीतानि वीरभद्रमहाकालादीनि। उपा० १ अ०। आव० चू०।

अण्णओ- अव्य० *[अन्यतस्]*

'न हु दाहामि ते भिक्खं, भिक्खू जायाहि अन्नओ'। न हु, नैव दास्यामि, ते तुभ्यं भिक्षां याचस्व अन्यतोऽस्मद् - व्यतिरिक्तान्। उत्त० १ अ०।

अण्णकाल- पुं० *[अन्नकाल]*

सूत्रार्थपौरुष्युत्तरकालं, भिक्षाकाले, । सूय० २ श्रु० १ अ०।

अण्णक्खाण- न० *[अन्वाख्यान]*

अन्वादेशे, आव०म०।

अण्णगुण- त्रि० *[अन्यगुण]*

चैतन्यादन्ये गुणा येषां तान्यन्यगुणानि। अचेतनेषु, आधारकाठिन्यगुणा पृथिवी। सूय०१ श्रु०१ अ०१ उ०

अण्णग्गहण- न० *[अन्यग्रहण]*

गानजाते मुखविकारे गान्धर्विके। 'अन्नग्गहण त्ति गलग्गहस्स उभओ कण्णरुंधेसु सरणीतो मण्णतो सुवातसंगहीयासु य आणायत्तं मुहं जं तं हवेज्ज, अहवा अण्णग्गहे गंधव्विओ त्ति'। निसि०१७ उ०।

अण्णतर- त्रि० [अन्यतर]

बहूनां मध्ये एकतरे, उव०।

'अण्णयरेसु आभियोगेसु देवलोगेसु देवत्ताए उववज्जइ' अन्यतरेषु केषुचिदित्यर्थः। भग० १ श० १ उ०। निसि०।

'अण्णयरे वा दीहकालपडिबंधे एवं तस्स न भवइ'। जंबू०२ वक्ष०। निसि०। उत्त०।

'अण्णयरेसु देवलोगेसु' अन्यतरदेवानां मध्ये इत्यर्थः। ठा० ४ ठा० १ उ०। आचा०।

अण्णतरग- पुं० [अन्यतरक]

एकस्मिन्काले आत्मपरयोरन्यमन्यतरं तारयन्तीति अन्यतरकाः तपोवैयावृत्त्यविषयकसामर्थ्याऽभावेन केवलमुभयं युगपत्कर्तुम् अशक्नुवत्सु एकस्मिन् काले आत्मपरयोरेकतरं तारयत्सु प्रायश्चित्तार्हपुरुषेषु, वव० १ उ०।

अण्णतित्थिय- पुं० [अन्यतीर्थिक]

चरकपरिव्राजकशाक्याजीवकवृद्धश्रावकप्रभृतिषु ।निसि०११ उ परदार्शनिकेषु, आव० ६ अ०।

अण्णतित्थियपवत्ताणुओग- पुं० [अन्यतीर्थिकप्रवृत्तानुयोग]

अन्यतीर्थिकेभ्यः कापिलादिभ्यः सकाशाद्यः प्रवृत्तः स्वकीयाचारवस्तुतत्त्वमनुयोगो विचारः, तत्करणार्थं शास्त्रसन्दर्भ इत्यर्थः सोऽन्यतीर्तिकप्रवृत्तानुयोग इति। पापश्रुतभेदे, सम० २९ सम०।

अण्णत्थ- अव्य० [अन्यत्र]

अन्यत्र कुत्रचिद् वस्त्वन्तरे, विपा०१ श्रु०२ अ०। आव०चू०। कुत्रचिन्मनोऽकुर्वन्। अनु०।

अण्णत्थगय- त्रि० [अन्यत्रगत]

उक्तस्थानद्वयव्यतिरिक्तस्थानाश्रिते, भग०७ श०९ उ०।

प्रज्ञापकक्षेत्राद्देवस्थापनाच्चापरत्रस्थिते, भग०६ श०९ उ०।

अण्णत्था- स्त्री० [अन्वर्था]

अर्थमनुगता या संज्ञा सा अन्वर्था। अर्थमङ्गीकृत्य प्रवर्तमानायां संज्ञायाम्, कथमन्वर्था ? यथा- भासं करोतीति भास्कर इति यो भासनार्थस्तमङ्गीकृत्य प्रवर्त्तत इत्यन्वर्था। आव०चू०१ अ०

अण्णदंसि-त्रि० [अन्यदर्शिन्]

अन्यद् द्रष्टुंशीलमस्येत्यन्यदर्शी। अयथावस्थितपदार्थद्रष्टि, आचा० १ श्रु० २ अ० ६ उ०।

अण्णदत्तहर- पुं० [अन्यदत्तहर]

अन्येन दत्तं हरतीति राजादिनाऽन्येभ्यो वितीर्णस्यापान्तराल एव छेदके, । उत्त० ७ अ०।

अण्णधम्मिय- पुं० [अन्यधार्मिक]

जैनधर्मादन्यस्मिन् धर्मे वर्तते इति, मिथ्यादृष्टौ, ओह०। परधार्मिके, बुह० ४ उ०।

परतीर्थिके बुह० ३ उ०।

शाक्यादौ, गृहस्थे च। ठा० ३ ठा० ४ उ०।

अण्णपर- त्रि० [अन्यपर]

अन्यरूपतया परस्मिन् अन्यस्मिन्, यथा एकाणुकाद् द्व्यणुकत्र्यणुकादि, व द्व्यणुकादेकाणुकद्व्यणुकादि। आचा० २श्रु० १२ अ०।

अण्णपुण्ण- न० [अन्नपुण्य]

अन्नात्पुण्यमन्नपुण्यम् ।पात्रायान्नदानात्तीर्थकरनामादिपुण्यप्रकृति बन्धरूपे पुण्यभेदे, ठा० ९ ठा०।

अण्णपमत्त- त्रि० [अन्नप्रमत्त]

अन्नार्थं प्रमत्तः। भोजनकरणासक्ते, उत्त० १४ अ०।

अण्णपमत्त- त्रि० [अन्यप्रमत्त]

अन्ये सुहृत्स्वजनादयस्तदर्थं प्रमत्तः। उत्त० १४ अ०।

सुहृत्स्वजनमातृपितृपुत्रकलत्रभ्रात्रादीनां कार्यकरणासक्ते,अन्नप्पमत्ते धणमेसमाणे, पप्पोति मच्चुं पुरिसो जरं च'। उत्त० १४ अ० ।

अण्णवेलचरक- पुं० [अन्यवेलाचरक]

अन्यस्यां भोजनकालापेक्षया आद्यावसानरूपायां वेलायां समये चरतीत्या दिकालाभिग्रहविशेषविशिष्टे भिक्षौ, । ठा० ५ ठा० १ उ० ।

अण्णभोग- पुं० [अन्नभोग]

खाद्यादिरूपे भोग्यपदार्थे, 'अण्णभोगेहिं लेणभोगेहिं'। उव०

अन्नमन्न- त्रि० [अन्योन्य]

परस्परशब्दार्थे, नाया० १ अ०। रा०। आव०म०। भग०। आचा०। उत्त०। चंद०। अनु०। ठा०। सूय०।

अन्योऽन्यमनुरक्तौ स्नेहवन्तौ, अत एवाऽन्योऽन्यमनुव्रजतः इत्यनुव्रजन्तौ, एवं छन्दानुवर्तकौ अभिप्रायमनुवर्तिनौ, एवं हृदयेप्सितकारकौ। कर्तव्यानि प्रयोजनानीत्यर्थः। अथवा कृत्यानि नैत्यिकानि, करणीयानि कादाचित्कानि, प्रत्यनुभवन्तौ विदधानौ। नाया० २ अ०।

'अण्णमण्णं खिज्जमाणीओ विव' ।परस्परं चक्षुषाऽऽलोकनेन अवलोकनेन ये लेशाः संश्लेषास्तैः खिद्यमाना इव। रा० ।ठा०

'अण्णमण्णं सेवमाणा' अन्योऽन्यस्य परस्परस्यासेवनया, ब्रह्माश्रितभोगेन क्वचित्पाठः। पण्हा० ४ अ०।

'अण्णमण्णं करेमाणे पारंचिए' अन्योऽन्यं परस्परंमुखपायुप्रयोगतो मैथुनं कुर्वन् पुरुषयुगमिति शेषः। उच्यते-'आसप्पपोसयसेवी, के वि मणुस्सा दुवेयगा होंति। तेसिं लिंगविवेगो त्ति। 'ठा० ३ ठा० ४ उ०। बुह०। जीत०।

अन्नमन्नकिरिया- स्त्री० *[अन्योन्यक्रिया]*
परस्परतः साधुना कृतप्रतिक्रियया विधेयायां रजःप्रमार्जना-दिकायां क्रियायाम्, अन्योऽन्यं क्रियाश्च अन्योऽन्यक्रियाः।
। आचा० २ श्रु० १३ अ०।

अन्नमन्नगंठिय- त्रि० *[अन्योन्यग्रथित]*
परस्परेणैकेन ग्रन्थिना सहाऽन्यो ग्रन्थिरन्येन च सहाऽन्य इत्येवं ग्रथिते,भग० ५ श० ३ उ०

अन्नमन्नगरुयत्ता- स्त्री० *[अन्योन्यगुरुकता]*
अन्योन्येन ग्रन्थनाद् विस्तीर्णतायाम्, भग०५ श० ३ उ०।

अन्नमन्नगरुयसंभरियत्ता-स्त्री० *[अन्योन्यगुरुकसंभारिकता]*
अन्योन्येन गुरुकं यत्संभारिकं च तत्तथा, तद्भावस्तत्ता। अन्यो-न्येन ग्रन्थनाद् विस्तारसंभारवत्त्वे, भग० ५ श० ३ उ०।

अन्नमन्नघडता- स्त्री० *[अन्योन्यघटता]*
अन्योन्यं घटन्ते संबध्नन्तीति अन्योन्यघटाः। जीवा० ३ प्रति०।
अन्योन्यं घटाः समुदायरचना यत्र तदन्योन्यघटम्। अन्योन्यं घटाः समुदायो येषां तेऽन्योन्यघटाः। परस्परसंबन्धतायाम्,
। भग० ५ श० ३ उ०।

अन्नमन्नपुट्ठ- त्रि० *[अन्योन्यस्पृष्ट]*
स्पर्शनमात्रेण मिथः स्पृष्टे, भग० १ श० ६ उ०। जीवा०।

अन्नमन्नबद्ध- त्रि० *[अन्योन्यबद्ध]*
अन्योन्यं जीवाः पुद्गलानां, पुद्गलाश्च जीवानामित्येवमादिरूपेण गाढतरसंबन्धे, भग० १ श० ६ उ०।

अन्नमन्नबेह- पुं० *[अन्योन्यवेध]*
अन्यस्याऽन्यस्यां संबन्धे, निसि० २० उ०।
अन्योन्यस्य वेधः संबन्धोऽन्योन्यवेधस्तस्मात्। पञ्चदशाद्यारोप एकैकस्मिन् स्थापने संयुज्यते इत्यर्थः। निसि० १० उ०।

अन्नमन्नब्भास- पुं० *[अन्योन्याभ्यास]*
अन्योन्यं परस्परमभ्यासः। परस्परं गुणने, अनु०।

अन्नमन्नभारियत्ता- स्त्री० *[अन्योन्यभारिकता]*
अन्योन्यस्य यो यो भारः, स विद्यते यत्र, तदन्योन्यभारिकं, तद्भावस्तत्ता। परस्परं भारवत्वे, भग० ५ श० ३ उ०।

अन्नमन्नमणुगय- त्रि० *[अन्योन्यानुगत]*
परस्परानुबद्धे, नं०।

अन्नमन्नसंपत्त- त्रि० *[अन्योन्यसंप्राप्त]*
परस्परसंलग्ने, जीवा० ३ प्रति०।

अन्नमन्नसंवास- पुं० *[अन्योन्यसंवास]*
परस्परमेकत्र संवासे, वव० ३ उ०।

अन्नमन्नसिणेहपडिबद्ध- त्रि० *[अन्योन्यस्नेहप्रतिबद्ध]*
परस्परं स्नेहेन प्रतिबद्धे, भग०१ श०५ उ०।

येनैकस्मिन् चाल्यमाने गृह्यमाणे वा परमपि चलनादि धर्मोपेतं भवति। जीवा० ३ प्रति०।

अण्णलिंग- न० *[अन्यलिङ्ग]*
अन्यतीर्थिकानां नेपथ्ये, बृह० १ उ०।

अण्णलिंगसिद्ध-पुं० *[अन्यलिङ्गसिद्ध]*
परिव्राजकादिसंबन्धिनि वल्कलकषायादिवस्त्रादिरूपे द्रव्यलिङ्गे व्यवस्थिताः सन्तो ये सिद्धास्तेऽन्यलिङ्गसिद्धाः। नं०।

अण्णव-१ पुं० *[अर्णव]*
अर्णो जलं विद्यते यत्रासावर्णवः। द्रव्यतो जलधौ, भावतश्च भवे। उत्त० ५ अ०।

अण्णव-२ त्रि० *[ऋणवत्]*
सप्तविंशतितमे लोकोत्तरमुहूर्ते, जंबू० ७ वक्ष०।

अण्णवालय- पुं० *[अर्णपालक]*
कालोदाय्यादिके अन्ययूथिके, भग० ७ श० १० उ०।

अण्णविहि- पुं० *[अन्नविधि]*
सूपकारकलायाम्, जंबू० २ वक्ष०। सम०। नाया०। उव०।

अण्णहा- अव्य० *[अन्यथा]*
अन्येन प्रकारेणेत्यर्थे, आचा०१ श्रु०५ अ० ३ उ०। आव०म०।

अण्णहाभाव- पुं० *[अन्यथाभाव]*
विपरिणमने, बृह० ४ उ०।

अण्णहावाइ- त्रि० *[अन्यथावादिन्]*
अनृतवादिनि, 'अनुवकयपराणुग्गह परायणा जं जिणा जग-प्पवरा जिअराग दोससंमोहा य नऽन्नहावाइणो तेणं। आव० ४ अ०

अण्णहिभाव- पुं० *[अन्यथाभाव]*
विपरिणमने, बृह० ४ उ०।

अण्णाइट्ठ- त्रि० *[अन्वाविष्ट]*
अभिव्याप्ते, भग० १४ श० १ उ०।
परवशीकृते, भग० १८ श० ६ उ०।

अण्णाएसि- पुं० *[अज्ञातैषिन्]*
जातिकुलसद्रव्यनिर्द्रव्यतादिनाऽपरीक्षितोऽज्ञातः,तादृशं गृहस्थ- माहाराद्यर्थमेषयतीत्येवंशीलोऽज्ञातैषी। उत्त०२ अ०।
अज्ञातो जातिश्रुतादिभिरेषत्युञ्छति अर्थात् पिण्डादीनि इत्य-ज्ञातैषी। उत्त० ३ अ०।
अज्ञातस्तपस्वितादिभिर्गुणैरनवगत एषयते ग्रासादिकं गवेषय-तीत्येवंशीलोऽज्ञातैषी। उत्त० १५ अ०।
यत्र कुले तस्य साधोस्तपोनियमादिगुणो न ज्ञातस्तत्र एषयते ग्रासादिकं गृहीतुं वाच्छत इत्येवंशीलोऽज्ञातैषी। उत्त० १५ अ०
विशिष्टगुणैरज्ञात एव भिक्षणरते, । उत्त०१५ उ०।

अण्णाण-१ न० *[अज्ञान]*

न ज्ञानमज्ञानम्। सम्यग्ज्ञानादितरस्मिन् ज्ञाने, आव०।

अन्नाणं परियाणामि, नाणं उवसंपज्जाणि। आव०४ अ०।

अज्ञानं-प्रकर्षे गर्वः प्रज्ञाऽभावे दैन्यचिन्तनमित्युभयथा।उत्त०।

निर्ज्ञाने (ज्ञानरहिते), त्रि०। भग० १ श० ९ उ०।

नञः कुत्सार्थत्वात् कुत्सितं ज्ञानमज्ञानमिति। अनु०।

ज्ञानावरणकर्मोदयजनिते, आव० ४ अ०।

अज्ञानमनवबोधः। उत्त० ३ अ०।

अण्णाण-२ न० *[अज्ञान]*

मूढतारूपे, आतु०।

मोहविजृम्भणे, सूय०१ श्रु०१ अ० ३ सम०। आचा०।

उद्विजेत। आव०४ अ०।

अण्णाण- ३ न० *[अज्ञान]*

ज्ञानाभावे मिथ्यादृष्टिकुतीर्थिकपार्श्वस्थादिसंबन्धिशास्त्रावगाहनात्मके, । उत्त०। सम०।

कुशास्त्रसंस्कारे, उव०।

अण्णाण-४ न० *[अज्ञान]*

कुत्सितत्वं च मिथ्यात्वसंवलितत्वात्। भग० ८ श० २ उ०।

मिथ्यात्वतिमिरोपप्लुतदृष्टेर्जीवस्य विपर्यस्तबोधे,विशे०। उत्त० ज्ञानिनः सम्यग्दृष्टयः, अज्ञानिनो मिथ्यादृष्टयः। आह च- 'अविसेसिया मइच्चिय, सम्मद्दिट्ठिस्स ता मइन्नाणं। मइअन्नाणं मिच्छादिट्ठिस्स सुयं पि एमेव' ठा० २ ठा० ४ उ०।आव०।

अण्णाण-५ न० *[अज्ञान]*

अज्ञानभावाऽभावाभ्यां द्विधा सोढव्ये एकविंशे परीषहभेदे। अज्ञानपरीषहश्च सोढव्य एव, न तु कर्मविपाकजादज्ञानात् उत्त०

अण्णाण-६ न० *[अज्ञान]*

चतुर्थः कुडङ्गः। एकविंशतितमः परिषहः, कर्मविपाकजादज्ञानान्नोद्विजेत। आव० ।

अण्णाणओ- अव्य० *[अज्ञानतस्]*

ज्ञानावरणोत्कर्षतयेत्यर्थे, दश० १ चू०।

अण्णाणकिरिया- स्त्री० *[अज्ञानक्रिया]*

अज्ञानात् क्रियमाणयोश्चेष्टाकर्मणोः, ठा० ३ ठा० ३ उ०।

अण्णाणणिव्वत्ति- स्त्री० *[अज्ञाननिर्वृत्ति]*

अज्ञानस्य निर्वृत्तौ, भग०।

कइविहा णं भंते ! अन्नाणनिव्वत्ती पन्नत्ता? गोयमा ! तिविहा अन्नाणनिव्वत्ती पन्नत्ता। तं जहा-मइअन्नाणनिव्वत्ती, सुय-अन्नाण निव्वत्ती, विभंगणानाणनिव्वत्ती, एवं जस्स जइ जाव वेमाणिया । भग० १९ श० ८ उ०।

अण्णाणदोस-१ पुं० *[अज्ञानदोष]*

अज्ञानात्कुशास्त्रसंस्काराद् हिंसादिष्वधर्मस्वरूपेषु नरकादिकारणेषु धर्मबुद्ध्याऽभ्युदयार्थं या प्रवृत्तिस्तल्लक्षणो दोषोऽज्ञानदोषः। अथवा उक्तलक्षणमज्ञानमेव दोषोऽज्ञानदोष इति। ठा० ४ ठा० १ उ०।

अण्णाणदोस-२ पुं० *[अज्ञानदोष]*

रौद्रध्यानस्य लक्षणभेदे, भग० २५ श० ७ उ०। उव०।

अण्णाणदोस- ३ पुं० *[अज्ञानदोष]*

प्रमाददोषे, आचा० १ श्रु० ५ अ० १ उ०। गच्छा०।

अण्णाणपरीसह- पुं० *[अज्ञानपरीषह]*

'ज्ञानचारित्रयुक्तोऽस्मि, छद्मस्थोऽहं तथापि हि।
इत्यज्ञानं विषहेत, ज्ञानस्य क्रमलो भवेत्' ।१ ।
इति सोढव्ये परीषहभेदे । उत्त०।

अण्णाणफल- त्रि० *[अज्ञानफल]*

अज्ञानमनवबोधस्तत्फलानि, ज्ञानावरणरूपाणीत्यर्थः। धर्माचार्यगुरुश्रुतनिन्दारूपेषु ज्ञानावरणकर्मसु, उत्त०२ अ०।

अण्णाणया- स्त्री० *[अज्ञानता]*

अज्ञानो निर्ज्ञानस्तस्य भावोऽज्ञानता। स्वरूपेणानुपलम्भे, भग० १ श० ९ उ०।

अण्णाणलद्धि- स्त्री० *[अज्ञानलब्धि]*

आत्मनोऽज्ञानस्य ज्ञानाऽऽवरणीयोदयतो लाभे,

'अन्नाणलद्धी णं भंते ! कइविहा पन्नत्ता ? गोयमा ! तिविहा पन्नत्ता। तं जहा- मइअन्नाणलद्धी, सुयअन्नाणलद्धी, विभंगनाणलद्धी'। भग० ८ श०२ उ०।

अण्णाणवाइ- त्रि० *[अज्ञानवादिन्]*

सति मत्यादिके हेयोपादेयप्रदर्शके ज्ञानपञ्चके अज्ञानमेव श्रेय इत्येवं वदति अज्ञानिके, सूय० १ श्रु० १२ अ०।

अण्णाणसत्थ- न० *[अज्ञानशास्त्र]*

भारतकाव्यनाटकादौ लौकिकश्रुते ठा०९ ठा०।

अण्णाणि- त्रि० *[अज्ञानिन्]*

न ज्ञानमज्ञानं, तद्विद्यते येषां तेऽज्ञानिनः। अज्ञानमेव श्रेय इति वदत्सु वादिभेदेषु, सूय०१ श्रु० १२ अ०।

ज्ञाननिह्नववादिषु, । सूय०१ श्रु०१२ अ०।

'अण्णाणी कम्मं खवेति, बहुयाहिं वासकोडीहिं। तन्नाणी तिहिंगुत्तो, खवेइ ऊसाससमित्तेण' ।१ । उत्त० १ अ०।

अण्णाणिय- पुं० *[अज्ञानिन्]*

न ज्ञानमज्ञानं, तद्विद्यते येषां तेऽज्ञानिनः।सूय०१ श्रु०१ अ०१ उ० आज्ञानिक-पुं०(अज्ञानेन) चरन्तीति आज्ञानिकाः। अज्ञानं वा प्रयोजनं येषां ते आज्ञानिकाः। आव०६ अ०।

सम्यग्ज्ञानरहितेषु अज्ञानमेव श्रेय इत्येवं वादिषु, सूय० १ श्रु०१ अ०१ उ०।

अण्णाणियवाइ- पुं० *[अज्ञानिकवादिन्]*
अज्ञानमभ्युपगमद्वारेण येषामस्ति तेऽज्ञानिकास्त एव वादिनोऽज्ञानिक वादिनाः। अज्ञानमेव श्रेय इत्येवं प्रतिज्ञेषु, ठा० ४ ठा० ४ उ०। सूय०।

अण्णात- त्रि० *[अज्ञात]*
अनुमानेनाऽविषयीकृते। भग० ३ श०६ उ०।
स्वयं स्वजनादिसंबन्धाऽकथनेन गृहस्थेरपरिज्ञातस्वभावादिभावे भिक्षौ, पण्हा० १ अ०
जातिकुलसद्रव्यादिनाऽपरीक्षिते, उत्त०२ अ०।
'अण्णायं णाम जहा, अचित्तकरो चित्तं काऊण न जाणति' अज्ञत्वात् अल्पविज्ञानत्वादित्यर्थः। निसि० १५ उ०।

अण्णातउञ्छ- पुं० *[अज्ञातोञ्छ]*
विशुद्धोपकरणग्रहणे, दश० २ चू०
परिचयाकरणे, दश० ९ अ० ३ उ०।

अण्णातचरय- पुं० *[अज्ञातचरक]*
अज्ञातोऽनुपदर्शित सौजन्यादिभावः सँश्चरति यः स तथा। उव०
अज्ञातेषु वा गृहेषु चरतीति अज्ञातः। अज्ञातगृहे वा चरामीत्यभिग्रहवति, सूय० २ श्रु० २ अ०।

अण्णातपिंड- पुं० *[अज्ञातपिण्ड]*
अज्ञातश्चासौ पिण्डश्चाऽज्ञातपिंडः। अन्तप्रान्तरूपे पिण्डे, अज्ञा-तेभ्यः पिण्डोऽज्ञातपिण्डः।अज्ञातेभ्यः पूर्वाऽपरसंस्तुतेभ्य उञ्छ वृत्त्या लब्धे पिण्डे, । सूय० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

अण्णादत्तहर- त्रि० *[अन्यादत्तहर]*
अन्यैरदत्तमनिसृष्टं हरत्यादत्ते इत्यन्यादत्तहरः। ग्रामनगरादिषु चौर्यकृति, उत्त० ७ अ०।

अण्णाय- त्रि० *[अन्याय्य]*
न्यायादपेते, सूय०१ श्रु० १३ अ०।

अण्णायभासि- त्रि० *[अन्याय्यभाषिन्]*
अन्याय्यं भाषितुं शीलमस्य सोऽन्याय्यभाषी।
यत्किञ्चन भाषिणि, अस्थानभाषिणि, गुर्वाद्यधिक्षेपकरे च। सूय० १ श्रु० १३ अ०

अण्णायया- स्त्री० *[अज्ञातता]*
तपसो यशःपूजाऽऽद्यर्थित्वेनाप्रकाशयद्भिः करणे,सम०३२ सम कोऽर्थः ? पूर्वं परीषहसमर्थानां यदुपधानं क्रियते, तद्यथा लोको न जानाति तथा कर्तव्यम्, विज्ञातं वा कृतं न नयेत्, प्रच्छन्नं वा कृतं नयेत्। आव० ४ अ०

अण्णायसील- त्रि० *[अज्ञातशील]*
पण्डितैरप्यज्ञातस्वभावे, अब्रह्मशीले च। तासां नारीणाम ज्ञात-शीलानां पण्डितैरप्यज्ञातस्वभावानाम्। यद्वा- न ज्ञातं नाङ्गीकृतं शीलं ब्रह्मस्वरूपं याभिस्ता अज्ञातशीलास्तासाम्। यद्वा- नञः कुत्सार्थत्वात् कुत्सितं ज्ञातं शीलं साध्वीनां याभिः परिव्रा-जिकायोगिन्यादिभिस्ता अज्ञातशीलास्तासाम्। तं०।

अण्णिय- त्रि० *[अन्वित]*
युक्ते, सूय० १ श्रु० १ अ०। वव०। उत्त०।

अण्णियाउत्त- पुं० *[अन्निकापुत्र]*
जयसिंहनाम्नो वणिक्पुत्रस्य जामेः अन्निकायाः पुत्रे, आव०।

अण्णुण्ण(न्न)- त्रि० *[अन्योन्य]*
ह्रस्वाभावे 'अण्णोण्णं'। ओह०। पिंड०। बुह०।

अण्णेसणा- स्त्री० *[अन्वेषणा]*
मार्गणायाम्, आव०म०।
प्रार्थनायां च, आचा० १ श्रु० ८ अ० ८ उ०। सूय०। आव०म०।

अण्णेसि- त्रि० *[अन्वेषिन्]*
अन्वेष्टुं शीलमस्येति अन्वेषी। मार्गणाशीले, आचा० श्रु० २ अ० ६ उ०।

अण्णोण्णकार- पुं० *[अन्योन्यकार]*
परस्परं वैयावृत्यकरणे, बुह० ३उ

अण्णोणगमण- त्रि० *[अन्योन्यगमन]*
परस्पराभिगमनीये, पण्हा०२ अ०।

अण्णोण्णजणिय- त्रि० *[अन्योन्यजनित]*
परस्परकृते, । पण्हा०२ अ०।

अण्णोण्णपग्गहियत्त- न० *[अन्योन्यप्रगृहीतत्व]*
परस्परेण पदानां वाक्यानां वा सापेक्षतायाम्, सम० ३५ सम।
सप्तदशे सत्यवचनातिशये, रा०।

अण्णोण्णसमणुरत्त- त्रि० *[अन्योन्यसमनुरक्त]*
परस्परं सख्यौ, बुह०६ उ०।

अण्णोण्णसमाधि- पुं० *[अन्योन्यसमाधि]*
परस्परं समाधौ, 'अण्णोण्णसमाहीए एवं वनं विहरंति' यो यस्य गच्छान्तर्गतादेः समाधिरभिहितस्तद्यथा सप्तापि गच्छ-वासिनां, गच्छनिर्गतानां द्वयोरग्रहः, पञ्चसु अभिग्रहः, इत्यनेन विहरन्ति। आचा० २ श्रु० १ अ० ११ उ०।

अण्णोवएस- पुं० *[अन्योपदेश]*
आहरणतद्देशाख्योदाहरणभेदे, दश० १ अ०।

अण्हयंती- स्त्री० *[भुञ्जाना]*
भोजनं कुर्वत्याम्, तं०। उव०।

अण्हय- पुं० *[आश्रव]*
अभिविधिना श्रौति श्रवति कर्म येभ्यस्ते आश्रवाः। कर्मोपादानभूतेषु प्राणातिपातादिषु पञ्चसु, पण्हा० १ अ०।
'जंबू ! इणमो अण्हयसंवरविणिच्छियं पवयणस्स। निस्संदं वोच्छामी, निच्छयत्थं सुभासियत्थं महेसीहिं'। पण्हा०२ अ०। ठा०। उत्त०।
'पंचविहो पन्नत्तो, जिणेहि इह अण्हयो अणादीवो। हिंसा १ मोस २ मदिन्नं ३, अबंभ ४ परिग्गहं चेव ५' पण्हा० १ अ०।

अण्हयकर- पुं० *[आश्रवकर]*
आश्रवः कर्मोपादानं, तत्करणशील आश्रवकरः। प्राणातिपाता- द्याश्रवजनकेऽप्रशस्तमनोविनयभेदे, ठा० ७ ठा०।
अशुभकर्माश्रवकारिणि, गच्छा०१ अधि०। उव०। आचा०।

अण्हाणग- न० *[अस्नानक]*
शरीरमज्जनाकरणे, भग० १ श० १ उ०। उव०। ठा०।

अतक्कणिज्ज- त्रि० *[अतर्कणीय]*
अनभिलषणीये, बृह० १ उ०।

अतक्किओवट्ठिय- न० *[अतर्कितोपस्थित]*
अनभिसन्धिपुर्विकायामर्थप्राप्तौ यदृच्छायाम्, यथाकाकतालीयम्, अजाकृपाणीयम्, आतुरभेषजीयम्, अन्धकण्टकीयम् इत्यादि। आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ०।
'अतर्कितोपस्थितमेव सर्वं, चित्रं जनानां सुखदुःखजातकम्। काकस्य तालेन यथाऽभिघातो, न बुद्धिपूर्वोऽत्र वृथाऽभिमानः। भग० १ श० १ उ०।

अतक्किओवहि- पुं० *[अतर्कितोपधि]*
अतर्कणीये उपधौ, यमुपधिं न कोऽपि तर्कयति विशेषतः परि- भावयति। वव० ८ उ०।

अतज्जाय- त्रि० *[अतज्जात]*
अतुल्यजातीये, आव० ४ अ०।

अतज्जाया- स्त्री० *[अतज्जाता]*
अतुल्यजातीये क्रियमाणायां परिष्ठापनिकायाम्,आव०४ अ०।

अतड- पुं० *[अतट]*
अदीर्घे तटे, 'अतडुववातो सो चेव मग्गो'। बृह० १ उ०।

अतर- पुं० *[अतर]*
न तरीतुं शक्यते इत्यतरः। रत्नाकरे, बृह० १ उ०।
असमर्थे, निसि०१ उ०।
ग्लाने, बृह० १ उ०।

अतरंत- त्रि० *[अतरत्]*
असहे, निसि० १ उ०। वव०।
अतिग्लानः। ओह०।

अतव- त्रि० *[अतपस्]*
तपसा विहीने, 'अतवो न होति भोगो' बृह० ४ उ०।
तपसामभावे, उत्त० २३ अ०।

अतसी- स्त्री० *[अतसी]*
क्षुमायाम्, गच्छा० २ अधि०।
अतसी वल्कलप्रधानो वनस्पतिः, यत्सूत्रं मालवादिदेशे प्रसिद्धम्। अनु०। निसि०। पन्न०।

अतह- *[अतथ]*
मिथ्याभूतेऽर्थे, सूय० १ श्रु० १ अ० २ उ०।

अतह- न० *[अतथ्य]*
असदर्थाभिधायित्वे, । सूय० १ श्रु०१ अ०२ उ०।
अविद्यमाने, आचा०१ श्रु० ६ अ० ४ उ०।
वितथेऽसद्भूते, आचा०१ श्रु० ६ अ० २ उ०।

अतहणाण- न० *[अतथाज्ञान]*
न विद्यते यथा वस्तु तथा ज्ञानं यस्य तत्तथा। मिथ्यादृष्टिजीवद्रव्ये, तस्य वितथाज्ञानत्वात्। नास्ति यथैव ज्ञानमवबोधः प्रतीतिर्यस्मिंस्तत्तथा।अलातद्रव्ये वा, वक्रताऽवभासमाने एकान्तवाद्यभ्युपगते वा वस्तुनि, तथाहि- एकान्तेन नित्यमनित्यं वा वस्तु तैरभ्युपगतं, प्रतिभाति च तत् परिणामितयेति तदतथा- ज्ञानमिति। एष दशमो द्रव्यानुयोगः। ठा०१० ठा०।
यथा प्रच्छनीयार्थे प्रष्टव्यस्य ज्ञानं तथैव प्रच्छकस्यापि ज्ञानं यत्र प्रश्ने, सः तथाज्ञानो जानत्प्रश्न इत्यर्थः। एतद्विपरीतस्त्वतथा- ज्ञानः। अजात्प्रश्ने, भग० ६ श० ८ उ०।

अतार- त्रि० *[अतार]*
तरीतुमशक्ये, नदीप्रवाहादौ यस्य हि तरणं नास्ति।
'अत्थाह-मतारमपोरिसीयं सीओदगम्मि अप्पाणं मुयंति'। । नाया० १४ अ०।

अतारिम- त्रि० *[अतारिम]*
अनतिलङ्घनीये, सूय०१ श्रु० ३ अ० २उ०

अतारिस- त्रि० *[अतादृश]*
अतत्सदृशे, । आचा०१ श्रु० ६ अ० १ उ०। उत्त०।

अतिउट्ट- त्रि० *[अतिवृत्त]*
अतिक्रान्तो वृत्तादतिवृत्तः। वृत्तमजानाति, सूय०।
'जंसी गुहाए जलणेऽतिउट्टे, अविजाणओ डज्झइ, लुत्तपण्णो' ज्वलनेऽग्रावतिवृत्तो वेदनाभिभूतत्वात् स्वकृतदुश्चरितमजानन् लुप्तप्रज्ञो गतप्रज्ञाविवेको दन्दह्यते। सूय०१ श्रु०५ अ०१ उ०।

अतिंतिण- त्रि० *[अतिन्तिन]*
अलाभेऽपि ईषद्यत् किञ्चनाभाषिणि, दश० १ अ०।
सकृत्किञ्चिदुक्ते, भूयोभूयोऽसूययाऽवक्तरि च।दश० १ अ०।

अतिक्खवेयरणी- स्त्री० *[अतीक्ष्ण वैतरणी]*
परमाधार्मिकविकुर्वितनरकनद्याम्० तं०।

अतिताणकहा– स्त्री० *[अतियानकथा]*
नगरादौ प्रवेशकथा। ठा०२१०।

अतित्त- त्रि० *[अतृप्त]*
असन्तुष्टे, उत्त०
'एवं अदत्ताणि समाययंतो, भावे अतित्तो दुहिओ अणिस्सो'। उत्त० १५ अ०।

अतित्तलाभ- पुं० *[अतृप्तलाभ]*
तर्पणं तृप्तं, तृप्तिरिति यावत्। तस्य लाभस्तृप्तलाभः, न तथाऽतृप्तलाभः। सन्तोषाऽप्राप्तौ, उत्त० ३२ अ०।

अतित्ति- स्त्री० *[अतृप्ति]*
असन्तुष्टौ, उत्त० ३४ अ०।

अतित्तिलाभ- पुं० *[अतृप्तिलाभ]*
तृप्तिप्राप्त्यभावे, 'संभोगकाले य अतित्तिलाभे'। उत्त० ३४ अ०

अतित्थ- अव्य० *[अतीर्थ]*
तीर्थस्याऽभावोऽतीर्थम्। तीर्थस्यानुत्पादे, (अपान्तराले) व्यवच्छेदे च। पन्न०१ पद०।

अतित्थगरसिद्ध- पुं० *[अतीर्थकरसिद्ध]*
न तीर्थकराः सन्तः सिद्धाः। सामन्यकेवलिषु सत्सु गौतमादिवत् सिद्धेषु, पन्न० १ पद०। ठा०। नं०।

अतित्थसिद्ध- पुं० *[अतीर्थसिद्ध]*
तीर्थस्याभावोऽतीर्थम्, तीर्थस्याभावश्चानुत्पादोऽपान्तराले व्यवच्छेदो वा, तस्मिन्नेव सिद्धास्तेऽतीर्थसिद्धाः। नं०।
तीर्थान्तरे साधुव्यवच्छेदे जातिस्मरणादिना प्राप्तपवर्गमार्गा मरुदेवीवत् सिद्धाः। ठा० १ ठा० १ उ०।
नहि मरुदेव्यादिसिद्धिगमनकाले तीर्थमुत्पन्नमासीत्। नं०।
तीर्थस्य व्यवच्छेदश्चन्द्रप्रभस्वामिसुविधिस्वाम्यपान्तराले।तत्र ये जातिस्मरणादिनाऽपवर्गमवाप्य सिद्धास्ते तीर्थव०च्छेद सिद्धाः । पन्न० १ पद०। ठा०।

अतिदुक्ख- न० *[अतिदुःख]*
अतिदुःसहे, आचा० १ श्रु० ९ अ० २ उ०।

अतिदुक्खधम्म- त्रि० *[अतिदुःखधर्म]*
अतीव दुःखमशातावेदनीयं धर्मः स्वभावो यस्य तत्तथा। अक्षि-निमेषमात्रमपि कालं न यत्र दुःखस्य विश्रामः। तादृशे नरका- दिस्थाने, । सूय० १ श्रु०५ अ०१ उ०।

अतिधूत्त-१ त्रि० *[अतिधूत]*
अतीव धूतमष्टप्रकारं कर्म यस्य सोऽतिधूतः। प्रभूतकर्मणि, सूय०२ श्रु०२ अ०।

अतिधूत्त-२ त्रि० *[अतिधर्त]*
बहुलकर्मणि,'अयं पुरिसे अतिधुत्ते अइयारक्खे' । सूय० २ श्रु०२ अ ।

अतिपास- पुं० *[अतिपार्श्व]*
ऐरवतवर्षेऽस्यामवसर्पिण्या जाते सप्तदशे तीर्थकरे, । सम० ८४ सम० ।

अतिमुच्छिय- त्रि० *[अतिमूर्च्छित]*
अत्यन्तमूर्छितोऽतिमूर्छितः। विषयदोषदर्शने प्रत्यभिमूढतामुपगते, पण्हा० ४ अ०।

अतिल्लिय- न० *[अतैल]*
सर्वथा तैलांशरहिते, तं०।

अतिवच्चंत- त्रि० *[अतिव्रजत्]*
अतिशयेन व्रजति गच्छतीति, बाहुल्येन गच्छति,
जीवा० ३ प्रति०

अतिविज्ज- पुं० *[अतिविद्य]*
जातिवृद्धसुखदुःखदर्शनादतीव विद्या तत्त्वपरिच्छेत्री यस्याऽसावतिविद्यः। जातनिर्वेदे तत्त्वज्ञे, 'तम्हाऽतिविज्जं परमंति नच्चा, आयंकदंसी न करेइ पावं।आचा०१ श्रु०१ अ०२ उ०।

अतिविज्ज- पुं० *[अतिविद्वस्]*
विशिष्टप्रज्ञे, आचा० १ श्रु० ३ अ० २ उ०

अतीरंगम- त्रि० *[अतीरङ्गम]*
तीरं गच्छन्तीति तीरङ्गमाः न तीरङ्गमा अतीरङ्गमाः। तीरं गन्तुमसमर्थेषु, आचा०।
अतीरंगमा एए, ना य तीरंगमित्तए।
तीरं गच्छन्तीति तीरंगमाः, न तीरङ्गमा अतीरङ्गमाः (एते इति) तान् प्रत्यक्षभावमापन्नान् कुतीर्थिकादीन् दर्शयति। न च ते तीरङ्गमनायोद्यता अपि तीरं गन्तुमलम्, सर्वज्ञोपदिष्टसन्मार्गाभावादिति भावः। आचा० १ श्रु० २ अ० ३ उ०।

अतुरिय- त्रि० *[अत्वरित]*
स्तिमिते, उत्त०। विपा०।
'अतुरियमचवलमसंभंताए अविलंबियाए रायहंससरिसीए गईए'। अत्वरितया मानसौत्सुक्यरहितया। कल्प०।
देहमनश्चापल्यरहितं यथाभवत्येवम् । भग० ११ श० ११ उ०। रा०।

अतुरियगइ- त्रि० *[अत्वरितगति]*
मायया लोकावर्जनाय मन्दगामिनि, बुह० १ उ०।

अतुरियभासि(ण)- त्रि० *[अत्वरितभाषिन्]*
विवेकभाषिणि, आचा० १ श्रु०२ अ०६ उ०।
कायिकत्वराररहितम् भाषिणि। भग०

अतुल- त्रि० *[अतुल]*

तुलामतिक्रान्ते, संथा०।

असाधारणे, सम० ३० सम।

निरुपमे, पण्हा० १ अ०।

अत्त-१ त्रि० *[आत्त]*

गृहीते, उत्त० १७ उ०।

करतलपरिगृहीते, नाया० १ अ०।

भीमो भीमसेन इति न्यायात् आत्तो गृहीतः सूत्रार्थो यैस्ते आत्ताः। गीतार्थेषु, बुह० १ उ०। ठा०।

आत्मा, सिद्धिः। उत्त०

अत्त-२ पुं० *[आत्मन्]*

स्वस्मिन्, उत्त० ३२ अ०।

जीवे, आचा० १ श्रु० ६ अ० १ उ०।

स्वभावे, नं०।

अत्त-३ त्रि० *[आत्र]*

आ अभिविधिना त्रायते दुःखात्संरक्षति सुखं चोत्पादयतीति आत्रः। दुःखघ्ने सुखसाधके, 'णेरइआ णं भंते! किं अत्ता पोग्गला अणत्ता पोग्गला वा ?'। भग०१४ श०९ उ०। ठा०।

अत्त-४ त्रि० *[आप्त]*

आप्ते, उत्त०१२ अ०।

अतीव सुष्ठुपरिकर्मिते, सूर०२०पाहु०। चंद०२०पाहु। ठा०।

यथार्थदर्शनादिगुणयुक्ते पुरुषे, नं०। दशा०।

रागादिविप्रमुक्ते, सूय० १ श्रु० ९ अ०। जीवा०।

अप्रतारके, अप्रतारकश्च अशेषदोषक्षयाद् भवतीति। उक्तं च- 'आगमोह्याप्तवचनमाप्तं दोषक्षयाद् विदुः। वीतरागोऽनृतं वाक्यं न ब्रूयाद्धेत्वसंभवात्' । दश० १ अ०। वव०।

ज्ञानादीनि ज्ञानदर्शनचारित्राणि येनाप्तानि स भवत्याप्तः। ज्ञानादिभिराप्यते स आप्त इति व्युत्पत्त्यन्तरम्। यो वा राग-द्वेषप्रहीणः स आप्तः। यदि वा इष्टाः, शोधौ शोधिविषये आप्ताः । वव० १० उ०।

अत्त-५ त्रि० *[आर्त्त]*

ग्लानीभूते, भग० ३५ श० १ उ०।

दुःखार्त्ते, ठा० ७ ठा०।

'कम्मत्ता दुब्भगा चेव, इच्चाहं सुपुढो जणा' पूर्वाचरितैः कर्म-भिरार्त्ताः पूर्वस्वकृतकर्मणः फलमनुभवन्ति, यदि वा कर्मभिः कृष्यादिभिरार्तास्तत्कर्तुमसमर्थाः। सूय०१ श्रु० ३ अ०१ उ०।

अत्तउवण्णास- पुं० *[आत्मोपन्यास]*

आत्मन एव उपन्यासो निवेदनं यस्मिंस्तदात्मोपन्यासम्। उदाहरणे, दोषे, उपन्यासभेदे च। दश० १ अ०।

अत्तकड- त्रि० *[आत्मकृत]*

आत्मार्थं कृते स्वगृहार्थमेव स्थापिते, बुह० १ उ०।

अत्तकम्म- न० *[आत्मकर्मन्]*

स्वदुश्चरिते, दश०५ अ०२ उ०।

यत्पाचकादि सम्बन्धि कर्म पाकादिलक्षणं, ज्ञानावरणीयादि लक्षणं वा, तदात्मनः सम्बन्धि क्रियतेऽनेनेत्यात्मकर्म। बुह० ४ उ०

आधाकर्मशब्दार्थे, पिंड०।

अत्तग- त्रि० *[आत्मग]*

आत्मनि गच्छतीति आत्मगः। सूय०१ श्रु०९ अ०।

अत्तगवेसण- न० *[आर्त्तगवेषण]*

द्रव्याद्यापत्सु, आर्त्तस्य, उपलक्षणमेतत्। अनार्त्तस्य वा, गवे-षणं दुर्लभद्रव्यसंपादनाऽऽदिरूपमार्त्तगवेषणम्। औपचारिक-विनयभेदे, वव०१ उ०।

अत्तगवेसणया- स्त्री० *[आर्त्तगवेषणता]*

आर्तं ग्लानीभूतं गवेषयति भैषज्यादिना योऽसावार्त्तगवेषणः। तद्भाव आर्त्तगवेषणता। भग०२५ श०५ उ०।

आर्त्तस्य दुःखाऽऽर्तस्य गवेषणमौषधाऽऽदेरित्यार्त्तगवेषणम्, तदेवाऽऽर्तगवेषणतेति। पीडितस्योपकार इत्यर्थः।ठा०७ ठा०

अत्तगवेसणया- स्त्री० *[आत्मगवेषणता]*

आत्मना, आप्तेन वा भूत्वा गवेषणं सुस्थदुःस्थतयोरन्वेषणं कार्यमिति। लोकोपचारविन-यभेदे, ठा०७ ठा०। उव०।

अत्तगवेसय- पुं० *[आत्मगवेषक]*

आत्मानं चारित्राऽऽत्मानं गवेषयतीति आत्मगवेषकः। कथमयं मम स्यादिति संयमजीवमार्गयितरि, उत्त०२ उ०।

आत्मानं गवेषयेत्, कथं मयाऽऽत्मा भवान्निस्तारणीयः, इत्यन्वेषयते। 'आत्मगवेषकसिद्धिः स्वरूपाऽऽपत्तिः' इति वच-नात्। सिद्धिर्वाऽऽत्मा। ततः कथं ममाऽसौ स्यादित्यन्वेषक आत्मगवेषकः। यद्वा आत्मानमेव गवेषयत इत्यात्मगवेषकः। । उत्त० ३ अ०।

अत्तगामिण्- पुं० *[आप्तगामिन्]*

आप्तं (मोक्षं) गच्छति तच्छीलः। मोक्षगमनशीले आत्महित-गामिनि, सर्वज्ञोपदिष्टमार्गगामिनि वा मुनौ, सूय०१ श्रु०१०अ०

अत्तगुण- पुं० *[आत्मगुण]*

बुद्धिसुखदुःखेच्छाद्वेषप्रयत्नधर्माऽधर्मसंस्कारेषु जीवगुणेषु, सूय०१ श्रु०१२ अ०।

अत्तचिंतअ- पुं० *[आत्मचिन्तक]*

आत्मानमेव चिन्तयतीति। परकार्यमनपेक्ष्यैवाऽऽत्मानं चिन्त-यति गणधारणाऽयोग्ये, वव०।

अब्भुज्जयमेगयरं, पडिवज्जिस्सं ति अत्तचिंतो उ।
जो वि गणे वि वसंतो, न वहति तत्ती तु अन्नेसिं।। १ ।।
य आत्मानमेव केवलं चिन्तयन्मन्यते-

यथाऽहमभ्युद्यतं जिनकल्पं यथालन्दकल्पानमेकतरं प्रतिपत्स्ये इति आत्मचिन्तकः योऽपि गणेऽपि गच्छेऽपि, वसन् तिष्ठन्, न वहति, न करोति, तप्तिमन्येषां साधूनां सोऽप्यात्मचिन्तकः। वव० ३ उ०

अत्तछट्ठ- पुं० *[आत्मषष्ठ]*

आत्मा षष्ठ इति। पञ्चानां भूतानामात्मा षष्ठः प्रतिपाद्यत इत्ययं पञ्चमं *कृताङ्गस्य प्रथमोद्देशकस्य अर्थाऽधिकारे, सूय०।

अत्तट्ठ- त्रि० *[आत्मार्थ]*

आत्मनोऽर्थः आत्मार्थः। अर्थ्यमानतया स्वर्गादौ, आत्मैवाऽर्थ आत्मार्थः। आत्मव्यतिरिक्ते, मोक्षे च। उत्त० ८ अ०।

अप्पणो अट्ठो भत्तादिउ। निशी०

अत्तट्ठकरणजुत्त- त्रि० *[आत्मार्थकरणयुक्त]*

आत्महितार्थकरणयुक्ते, पंच० चू०।

अत्तट्ठगुरु- त्रि० *[आत्मार्थगुरु]*

आत्मनः स्वस्य अर्थः प्रयोजनं गुरुर्यस्य स आत्मार्थगुरुः। उत्त० ३२ अ०।

आत्मार्थ एव जघन्यो गुरुः पापप्रधानो यस्य स आत्मार्थगुरुः। दश० १ अ०।

स्वप्रयोजननिष्ठे, । उत्त० ३२ अ०।

अत्तट्ठचिंतग- पुं० *[आत्मार्थचिन्तक]*

आत्मन एव केवलस्याऽर्थं भक्तादिलक्षणं चिन्तयति, न बालादीनाम्,तथाकल्पसामाचारा दित्यात्मार्थचिन्तकः । यद्वा-आत्मार्थो नाम अतीचारमलिनस्याऽऽत्मनो यथोक्तेन प्रायश्चित्त विधिना निरतिचारकरणं विशोधनमित्यर्थः। चिन्तयतीत्यात्माऽर्थ चिंतकः परिहारतपः प्रतिपन्नत्वेनाऽऽत्मार्थमात्रचिन्तके, वव०१ उ०।

अत्तट्ठिय- त्रि० *[आत्मार्थिक]*

आत्मार्थे भवमात्मार्थिकम्।आत्मनोऽर्थ आत्मार्थस्तस्मिन् भवम् आत्मार्थिकम्। आत्मन एवाऽर्थे, उवक्खडं भोयण माहणाणं, अत्तट्ठियं सिद्धमहेगपक्खं। ब्राह्मणानामात्मनोऽर्थ आत्मार्थस्तस्मिन् भवमात्मार्थिकम्, ब्राह्मणैरप्यात्मनैव भोज्यम्, न चाऽन्यस्मै देयम्। उत्त० १२ अ०।

अत्तता- स्त्री० *[आत्मता]*

आत्मनो भाव आत्मता। जीवास्तितायाम्, स्वकृतकर्मपरिणतौ च। 'इह खलु अत्तताए तेहिं तेहिं कुलेहिं अभिसेएण संभूता'। आचा० १ श्रु० ६ अ० १ उ०।

अत्तत्ताण- न० *[आत्मत्राण]*

आत्मरक्षायाम्, सूय० १ श्रु० ११ अ०।

अत्तत्तासंवुड- त्रि० *[आत्मात्मसंवृत]*

आत्मन्यात्मना संवृतस्य प्रतिसंलीने, भग० ३ श० ३ उ०।

अत्तदुक्कडकारि- त्रि० *[आत्मदुष्कृतकारिन्]*

स्वपापविधायिनि, 'संपराइय णियच्छंति, अत्तदुक्कडकारिणो'। सूय० १ श्रु० ८ अ०।

अत्तदोस- पुं० *[आत्मदोष]*

आत्मापराधे, ठा० ८ ठा०।

अत्तदोसोवसंहार- पुं० *[आत्मदोषोपसंहार]*

स्वकीयदोषस्य निरोधलक्षणे एकविंशे योगसंग्रहे, । सम० ३२ सम० ।

अत्तपण्णहण्- पुं० *[आत्तप्रज्ञाहन्]*

आत्तां सिद्धान्ताऽऽदिश्रवणतो गृहीतामाप्तां वा इहलोकपरलोकयोः सद्बोधरूपतया हितां प्रज्ञामात्मनोऽन्येषां वा बुद्धिकुतर्कव्याकुलीकरणतो हन्ति यः स आत्तप्रज्ञाहा, आप्तप्रज्ञाहा वा। स्वस्य परेषां च तत्त्वबुद्धिहन्तरि पापश्रमणे, उत्त०१७ अ०

अत्तपण्णेसि-१ पुं० *[आत्मप्रज्ञान्वेषिन्]*

आत्मनः प्रज्ञाज्ञानमात्मप्रज्ञा, तामन्वेष्टुं शीलं यस्य स आत्मप्रज्ञान्वेषी।आत्मज्ञानाऽन्वेषिणि आत्महितान्वेषिणि, सूय० १ श्रु०९अ०

अत्तपण्णेसि-२ पुं० *[आप्तप्रज्ञान्वेषिन्]*

आप्तो रागादिदोषविप्रमुक्तः, तस्य प्रज्ञाकेवलज्ञानाख्या, तामन्वेष्टुं शीलं यस्य स आप्तप्रज्ञान्वेषी। सर्वज्ञोक्ताऽन्वेषिणि, वीरा जे अत्तपण्णेसी, धितिमंता जिइंदिआ। सूय०१ श्रु०९ अ०

अत्तपण्हह- पुं० *[आत्मप्रश्नहन्]*

आत्मनि प्रश्न आत्मप्रश्नः तं हन्त्यात्मप्रश्नहा। केनचित्कृतस्य प्रश्नस्य वञ्चके पापश्रमणे, यथा- यदि कश्चित् परः पृच्छेत्, किं भवान्तरयायी अयमात्मा, उत नेति ? ततस्तम् एव प्रश्नमतिवाचालतया हन्ति, यथा- नास्त्यात्मा, प्रत्यक्षादि प्रमाणैरनुपलभ्यत्वात्, ततोऽयुक्तोऽयं प्रश्नः, सति हि धर्मिणि धर्माः चिन्त्यन्त इति। उत्त०१७ अ०।

अत्तपसण्णलेस्स- त्रि० *[आत्मप्रसन्नलेश्य]*

आत्मनो जीवस्य प्रसन्ना मनागप्यकलुषा पीताद्यन्यतरा लेश्या यस्मिंस्तदात्मप्रसन्नलेश्यम्। उत्त०१२ अ०।

अत्तपसण्णलेस्स- त्रि० *[आप्तप्रसन्नलेश्य]*

आप्ता प्राणिनामिह परत्र य हिता प्राप्ता वा तैरेव प्रसन्ना लेश्योक्तरूपा,यस्मिंस्तदाप्तप्रसन्नलेश्यम्।आत्मनिर्मलत्वकारणे न तेजःपद्मशुक्लादिलेश्यात्रयेण सहिते, उत्त० १२ अ०।

अत्तभाव- पुं० *[आत्मभाव]*
स्वाभिप्राये, सूय० १ श्रु० १३ अ० ।
अत्तभासिय– त्रि० *[आत्मभाषित]*
अण्णस्य संतियलाभं नो भुंजति। निशी० ।
अत्तमइ- त्रि० *[आर्त्तमति]*
आर्त्ते आर्त्तध्याने मतिर्येषां ते आर्त्तमतयः। आर्त्तध्यानोपयुक्तेषु, आतु० ।
अत्तमुक्ख- पुं० *[आप्तमुख्य]*
आप्तप्रधाने केवलज्ञानिनि, तं० ।
अत्तय- पुं०स्त्री० *[आत्मज]*
आत्मनः पितृशरीराज्जात इत्यात्मजः। अङ्गजे पुत्रे, तादृश्यां पुत्र्यां च। यथा भरतस्याऽऽदित्ययशाः। ठा० १० ठा०। नाया०। विपा०।
अत्तव-१ त्रि० *[आर्त्तव]*
ऋतुरस्य प्राप्तः, अण्। ऋतुभवे पुष्पादौ, रजसि च, निसि०।
अत्तव–२ त्रि० *[आत्मवान्]*
सचेतनः। दश०।
अत्तवयणणिद्देस- पुं० *[आप्तवचननिर्देश]*
आप्तस्य अप्रतारकस्य वचनमाप्तवचनं, तस्य निर्देश आप्तवचन निर्देशः। सर्वज्ञोक्तागमे, 'धम्मो मंगलमुक्किट्ठं ति पइन्ना अत्तवयणनिद्देसो'। दश० १ अ०।
अत्तसंजोग- पुं० *[आत्मसंयोग]*
आत्मनः संजोगे औपशमिकादिभिर्भावैर्जीवस्य सम्बन्धरूपे संयोगभेदे, उत्त० १ अ०।
अत्तसंपरिग्गहिय- त्रि० *[आत्मसंपरिगृहीत]*
आत्मैव संप्रगृहीतः- सम्यक् प्रकर्षेण गृहीतो येनाऽहं विनीतः सुसाधुरित्येवमादिना स।
आत्मोत्कर्षप्रधाने, । दश० ९ अ० ४ उ०
अत्तसम- त्रि० *[आत्मसम]*
आत्मतुल्ये, दश० १० अ०।
अत्तसमाहि- पुं० *[आत्मसमाधि]*
स्वपक्षसिद्धौ, माध्यस्थ्यवचनादिना पराऽनुपघाते च। सूय० १ श्रु० ३ उ० ३ अ०।
अत्तसमाहिय- पुं० *[आत्मसमाधिक]*
चित्तैस्वास्थ्यवति, सूय० १ श्रु० ३ अ० ३ उ०।
अत्तसमाहिय- त्रि० *[आत्मसमाहित]*
आत्मना समाहित आत्मसमाहितः।
ज्ञान-दर्शन-चारित्रोपयोगे सदोपयुक्ते, आचा० १ श्रु० ४ अ० ३ उ०। आत्मा समाहितोऽस्येत्यात्मसमाहितः। आहिताऽग्न्यादिदर्शनादार्षत्वाद् वा निष्ठाऽन्तस्य परनिपातः।
यद्वा-प्राकृते पूर्वोत्तर-निपातोऽतन्त्रः। समाहितात्मेत्यर्थः। शुभव्यापारवति, । आचा० १ श्रु० ४ अ० ३ उ०।
अत्तहिय- न० *[आत्महित]*
आत्मोपकारके, पण्हा० ५ अ०। विशे०।
आत्महितं दुःखेनाऽसुमता संसारे पर्यटताऽकृतधर्मानुष्ठानेन लभ्यते अवाप्यत इति। तथाहि- न पुनरिदमतिदुर्लभमगाधसंसारजलधिविभ्रष्टम्। मानुष्यं खद्योतकतडिल्लताविलसितप्रतिमम् सूय० १ श्रु० २ अ० २ उ०।
आत्महितः- मोक्षः। दश०।
अत्ता– न० *[आत्मा]*
मोक्षः, संयमो वा। सूय० ।
अत्तागम- पुं० *[आत्मागम]*
अपौरुषेये आगमे, उत्त० २ अ०।
अत्ताण- त्रि० *[अत्राण]*
अनर्थप्रतिघातकवर्जिते, पण्हा० १ अ०।
शरणविरहिते, आव०म०।
स्कन्धन्यस्तलगुडद्वितीये देशान्तरे गच्छति, कार्पटिके च। बुह०।
संयता आत्मनैव चौरादिसहायविरहिता गच्छन्ति। एष चूर्ण्यभिप्रायः। निशीथचूर्ण्यभिप्रायस्तु-(अत्ताण त्ति) अत्राणो नाम स्कन्धन्यस्तलगुडद्वितीया ये देशान्तरं गच्छन्ति, कार्पटिका वा। बुह० १ उ०।
अत्तीकरण- न० *[आत्मीकरण]*
अनात्मन आत्मत्वेन करणं आत्मीकरणम्। पिंड०।
आत्मसात् करणे,। पिंड०।
स्ववशीकरणे, निसि०।
तच्च राजादीनां संयतैर्न करणीयम्। निसि० ४ उ०।
अत्तुक्करिस- पुं० *[आत्मोत्कर्ष]*
पञ्चमे गौणमोहनीयकर्मणि, सम० ५२ सम।
अहमेव सिद्धान्ताऽर्थवेदी नाऽपरः कश्चित् मत्तुल्योऽस्तीत्येवंरूपे अभिमाने,। सूय० १ श्रु० १३ अ०।
अत्तुक्कोसिय- पुं० *[आत्मोत्कर्षिक]*
आत्मोत्कर्षोऽस्ति येषां ते आत्मोत्कर्षिकाः। गर्वप्रधानेषु वानप्रस्थेषु, । उव०।
अत्तोवणीय- न० *[आत्मोपनीत]*
आत्मैवोपनीतस्तथा निवेदितो नियोजितो यस्मिंस्तत्तथा। परमतदूषणायोपात्ते सति आत्ममतस्यैव दुष्टतपोपनायके ज्ञाने,

यथा पिङ्गलेनाऽऽत्मा।(तथाहि- कथमिदं तमागमभेदं भविष्यतीति राज्ञा पृष्टः। पिङ्गलाभिधानः स्थपतिरवोचत्- भेदस्थाने कपिलादि गुणे पुरुषे निखाते सतीति। अमात्येन तु स एव तत्र तद्गुणत्वात् निखात इति।) तेन आत्मैव नियुक्तः स्ववचनदोषात्। तदेवंविध आत्मोपनीतमिति। । ठा० ४ ठा० ३ उ०।

अत्थ-१ पुं० *[अर्थ]*

अर्यतेऽधिगम्यतेऽर्थ्यते वा याच्यते बुभुत्सुभिरित्यर्थः। जो सुत्ताभिप्पाओ, सो अत्थो।ठा० २ ठा० १ उ०। विशे०। उव०।

ऋ-गतौ, अर्यते गम्यते, ज्ञायत इत्यर्थः। विशे०।

सूत्राभिधेये उत्त०१ अ०। निसि०। आव०म०। दशा०। नं०।

ज्ञानाचारविषयभेदे यथार्थ एवार्थः करणीयः, न त्वर्थभेदः। दशा० १ अ०। निसि०।

*तात्पर्ये। अर्थ्यते प्रार्थ्यत इत्यर्थः। स्वर्गापवर्गप्राप्तिकारण-भूते । उत्त० १८ अ०।

अर्यते गम्यते, साध्यत इत्यर्थः। जो सुत्ताभिप्पाओ, सो अत्थो अज्जए जम्हा'। विशे० । आव०म०। सूय०। आचा०।

अर्थ्यत इत्यर्थः। द्रव्ये, गुणे च, उत्त०१ अ०।

शब्दादिविषयभावेन परिणते द्रव्यसमूहे, विशे०।

ज्ञेयत्वात् सर्व्वमेव वस्तु, अभिधेयः। उत्त०।

अत्थ-२ पुं० *[अर्थ]*

द्रव्ये, आव०४ अ०।

मणिकनकादौ, कल्प०।

विद्यापूर्वं धनार्जने, आव०म०।

राजलक्ष्म्यादौ, ठा० ३ ठा० ३ उ०। आव०चू०।

अत्थ- ३ पुं० *[अर्थ]*

प्रयोजने, 'अणुग्गहत्थं सुविहियाणं' इत्यत्र प्रयोजनऽर्थ-कत्वेनैवाऽर्थशब्दस्य व्याख्यानात्। ओह०। आव०।

अत्थो त्ति वा हेउ त्ति वा कारण त्ति वा एगट्ठं निसि० २० उ०।

अत्थ-४ पुं० *[अस्त]*

मेरौ, यतस्तेनाऽन्तरितो रविरस्तं गत इति व्यपदिश्यते। सम० ३८ सम०।

निरस्ते अविद्यमाने, त्रि०। नाया०१३ अ०।

अत्थ–५ न० *[अस्त्र],*

नाराचादि क्षेप्यायुधम्। पण्हा०।

अत्थअवगम- पुं० *[अर्थावगम]*

अर्थपरिच्छेदे, दश० १ अ०।

अत्थंगय- त्रि० *[अस्तंगत]*

अस्तपर्वतं प्राप्ते, दश० ८ अ०।

अत्थकंखिय- त्रि० *[अर्थकाङ्क्षित]*

काङ्क्षागृद्धिः, आसक्तिरित्यर्थः। अर्थे द्रव्ये काङ्क्षा अर्थकङ्क्षा, सा संजाता अस्येति अर्थकाङ्क्षितः भग०१ श०७उ०।

प्राप्तेऽप्यर्थे अविच्छन्नेच्छे, भग०१ ३श०६ उ०।

अत्थकप्पिय- पुं० *[अर्थकल्पिक]*

आवश्यकादिश्रुतमधीतवति, बुह०।

अत्थस्स कप्पिओ खलु, आवस्सगमादि जाव सूयगमं। मोत्तूणं छेयसुयं, जेण अहीयं तदत्थस्स। ।आवश्यकमादिं कृत्वा यावत् *कृतमङ्गं तावत्, यद् येनाधीतं, स तस्यार्थस्य कल्पिको भवति। *कृताङ्गस्यो- पर्यपि छेदश्रुतं मुक्त्वा यद् येनाधीतं सूत्रं, स तस्य *स्य समस्तस्याप्यर्थस्य कल्पिको भवति। छेदसूत्राणि पुनः पठितान्यपि यावदपरिणतं, तावन्न श्राव्यते, यदा तु परिणतं भवति, तदा कल्पिकः बुह० १ उ०।

अत्थकय- स्त्री० *[अर्थकृत]*

अर्थोऽर्थे, 'आसणदानं च अत्थकए' दश० ९ अ०।

अत्थकर- पुं० *[अर्थकर]*

अर्थस्य करस्तत्करणशीलोऽर्थकरः। प्रशस्तविचित्रकर्मक्षयोप-शमाविर्भावतो विद्यापूर्वं धनार्जनकरणशीले, आव०म०।

विद्याद्यर्थकरणशीलः, भावकरविशेषः। आव०।

अत्थकहा- स्त्री० *[अर्थकथा]*

अर्थस्य कथा लक्ष्म्या उपायप्रतिपादनपरे वाक्यप्रबन्धात्मके कथाभेदे, उक्तं च- 'सामादिधातुवादादिकृष्यादिप्रतिपादिका। अर्थोपादानपरमा, कथाऽर्थस्य प्रकीर्तिता'। १ । तथा- 'अर्थाख्यः पुरुषार्थोऽयं, प्रधानः प्रतिभासते। तृणादपि लघुं लोके, धिगर्थरहितं नरम्'।।१ ।। इति । दश० ३ अ०।

अत्थकामय- त्रि० *[अर्थकाम]*

अर्थे द्रव्ये कामो वाञ्छामात्रं यस्याऽसावर्थकामः। द्रव्यस्य वाञ्छके, भग०१ श०७ उ०।

अत्थकिरियाकारि- त्रि० *[अर्थक्रियाकारिन्]*

अर्थक्रियाकरणशीले, आव०म०।

अत्थकुसल- पुं० *[अर्थकुशल]*

अर्थोपार्जनं हस्तलाघवादिपरित्यागेन कुर्वति, दश०५ अ०।

अत्थक्कजाया- स्त्री० *[अकाण्डायाञ्चा]*

अकालप्रार्थनायाम्, बुह० ३ उ०

अत्थगवेसि- त्रि० *[अर्थगवेषिन्]*

द्रव्यान्वेषणकृति, भग०१५ श०१ उ०।

अत्थग्गहण- न० *[अर्थग्रहण]*

अर्थपरिज्ञाने, वव० ७ उ०।

अर्थ निश्चयकरणे। बुह० १ उ०।

अत्थजुत्ति- स्त्री० *[अर्थयुक्ति]*
हेयेतररूपार्थयोजनायाम्, दश० ५ अ० १ उ०।

अत्थजोणि- स्त्री० *[अर्थयोनि]*
अर्थस्य योनिरर्थयोनिः। राजलक्ष्म्यादेरुपाये, 'तिविहा अत्थ जोणी पन्नत्ता। तं जहा-सामे, दंडे, भए'। ठा०३ ठा०३ उ०।

अत्थण- न० *[अर्थन]*
ज्ञानाद्यर्थं परस्याऽऽचार्यस्य पार्श्वेऽवस्थाय ज्ञानादिगुणार्जने, उत्त० २६ अ०।

अत्थणय- पुं० *[अर्थनय]*
अर्थनिरूपणप्रवणत्वादर्थनयः। ठा०।
मुख्यवृत्त्या जीवाद्यर्थसमाश्रयणात्। आव०म०।
यथाकथञ्चिच्छब्दाएवप्रधानम् इत्यभ्युपगमपरत्वादर्थनयः। अनु०।
यो ह्यर्थमाश्रित्य वक्तृस्थसंग्रहव०हारसूत्राख्यप्रत्ययः प्रादुर्भवति सोऽर्थनयः, अर्थवशेन तदुत्पत्तेः। अर्थप्रधानतयाऽऽसौ व्यवस्थापयतीति। सम्म०।
अर्थमेव प्राधान्येन शब्दोपसर्जनमिच्छति।सूय०२ श्रु०७ अ०।

अत्थणिऊर- न० *[अर्थनिपूर]*
चतुरशीतिलक्षैर्गुणितेऽर्थनिपूराङ्गे, अनु०।

अत्थणिऊरंग- न० *[अर्थनिपूराङ्ग-निकुराङ्ग]*
चतुरशीतिलक्षैर्गुणिते नलिने, अनु०। ठा०। जीवा०।

अत्थणिज्जावणा- स्त्री० *[अर्थनिर्यापणा]*
अर्थः सूत्राऽभिधेयं वस्तु, तस्य निरिति भृशं, यापना निर्वाहणा, पूर्वापरसाङ्गत्येन स्वयं ज्ञानतोऽन्येषां च कथनतो निर्गमतो निर्यापणा। वाचनासंपद्भेदे, उत्त०१ अ०।
अर्थस्य निर्यापणामाह– निज्जवगो अत्थस्स य, जो उ वियाणाइ अत्थ सुत्तस्स। अत्थेण वि निव्वहति, अत्थं पि कहेइ जं भणियं।।यो नाम *स्याऽर्थं कथ्यमानं विजानाति। यदि वा- अर्थेन निर्वहति अर्थाऽवधारणबलेन *पाठे निर्वहमुपयाति, तस्याऽर्थमपि कथयति, आस्तां * ददातीत्यपि शब्दार्थः। वव० १० उ०।

अत्थत्थिअ- त्रि० *[अर्थाऽर्थिन्]*
अर्थमर्थयते इति अर्थाऽर्थी। द्रव्यप्रयोजने, भग० १५ श०१ उ०। उव०। नाया०। जंबू०।

अत्थदंड- पुं० *[अर्थदण्ड]*
शरीराद्यर्थदण्डे, पण्हा०५ अ०।

अत्थदायि- त्रि० *[अर्थदायिन्]*
सूत्राऽभिधेयप्रदातरि, काउं पणामं च अत्थदायिस्स पज्जुण्णखमासमणस्स। निसि०१ उ०

अत्थधम्मब्भासाणवेयत्त- न० *[अर्थधर्माऽभ्यासानपेतत्व]*
अर्थधर्मप्रतिबद्धतारूपे सत्यवचनाऽतिशये, उव०। रा०।

अत्थधर- पुं० *[अर्थधर]*
अर्थबोद्धरि, ठा०४ ठा०१ उ०।
सुत्तहरा अत्थधरो, अत्थधराओ होइ तदुभयधरो आव०म०।

अत्थपिवासिया- त्रि० *[अर्थपिपासित]*
पिपासेव पिपासाप्राप्तेऽप्यर्थेऽतृप्तिः। अर्थे अर्थस्य वा पिपासा संजाता अस्येति अर्थपिपासितः। तं०।
अप्राप्तार्थविषयसञ्जाततृष्णे, भग०१५ श०१ उ०

अत्थपुरिस- पुं० *[अर्थपुरुष]*
अर्थार्जनव्यापारपरे पुरुषभेदे, यथा- मम्मणवणिक्। आव०म० । आव०चू०।

अत्थपुहत्त-१ न० *[अर्थपृथत्त्व]*
'अत्थो सुयस्स विसओ, तत्तो भिन्नं सुयं पुहत्तं ति' अर्थः किमुच्यते ? इत्याह- श्रुतस्य विषयो विधेयः, तस्माच्चाऽर्थात् कथञ्चिद् भिन्नत्वात् सूत्रं पृथगुच्यते।सूत्रार्थलक्षणोभयरूपे श्रुत-ज्ञाने अर्थस्य पृथत्त्वम्। श्रुतज्ञाने तस्य अर्थपृथत्त्वसंज्ञितत्वात् । अत्थाओ य पुहुत्तं, जस्स तओ वा पुहत्तओ जस्स अर्थात् पृथत्त्वं कथञ्चिद् भेदो यस्य तदर्थपृथत्त्वम्। स चाऽर्थः पृथत्त्वतः पार्थक्येन भेदेन वर्तते यस्य तदर्थपृथत्त्वम्। श्रुत-ज्ञाने, ते वंदिऊण सिरसा, अत्थपुहत्तस्स तेहि कहियस्स। सुय-नाणस्स भगवओ, निज्जुत्तिं कित्तइस्सामि। विशे०। आव०म०।

अत्थपुहुत्त-२ न० *[अर्थपृथुत्व]*
'अत्थस्स व पिहुभावो, पुहुत्तमत्थस्स वित्थरंतं ति' पृथु सामान्येन विस्तीर्णमुच्यते, तस्य भावः पृथुत्वम्।अर्थस्य पृथुत्व मर्थपृथुत्वम्। जीवाद्यर्थविस्तारात्मके श्रुतज्ञाने, श्रुतज्ञानमात्रे च। तस्याऽर्थपृथुत्वसंज्ञितत्वात्। विशे०।
श्रुताभिधेयोऽर्थोः तस्मात् सूत्रं पृथक्, अर्थेन वा पृथु अर्थपृथु तद्भावः अर्थपृथुत्वं। आव०

अत्थपोरिसी- स्त्री० *[अर्थपौरुषी]*
अर्थप्रतिबद्धायां पौरुष्याम्। 'अत्थपोरिसिं न करेति, मासलहुं'। निसि० १ उ०।

अत्थप्पवर- त्रि० *[अर्थप्रवर]*
अर्थः प्रवरो यत्र तदर्थप्रवरम्। मुख्यार्थके वस्तुनि, यस्य हि वस्तुनोऽर्थ एव प्रधानभूतः। विशे०।

अत्थबहुल- त्रि० *[अर्थबहुल]*
अर्थो बहुलो यस्मिंस्तदर्थबहुलम् 'क्वचित्प्रवृत्तिः क्वचिदप्रवृत्तिः, क्वचिद् विभाषा क्वचिदन्यदेव। विधेर्विधानं बहुधा समीक्ष्य,

चतुर्विधं बाहुलकं वदन्ति' । 'अत्थबहुलं महत्थं, हेउनिवाओ-वसग्गगंभीरं' । दश० २ अ० ।

अत्थभेय- पुं० *[अर्थभेद]*

आगमपदार्थस्याऽन्यथापरिकल्पने, जीत०

अत्थभोगपरिवज्जिय- स्त्री० *[अर्थभोगपरिवर्जित]*

द्रव्येण भोगैश्वर्यरहिते, पण्हा० २ अ० ।

अत्थमय- न० *[अस्तमय]*

सूर्यादेर्दृश्यस्य सतोऽदृश्यीभवने, भग० २ श० १० उ० ।

अत्थमहत्थखाणि- पुं० *[अर्थमहार्थखानि]*

भाषाऽभिधेया अर्थाः, विभाषाऽभिधेया महार्थाः, तेषामर्थम-हार्थानां खानिरिव अर्थमहार्थखानिः । भाषावार्तिकरूपानुयोग-विधावतिपटीयसि, 'अत्थमहत्थखाणिं सुसमणवक्खाणकहण-णिव्वाणि' । नं० ।

अत्थमाण- त्रि० *[आसीन]*

श्मशानादावास्थीयमाने, तत्थ से अत्थ माणस्स, । उत्त० २ अ० ।

अत्थमिअ- त्रि० *[अस्तमित]*

अत्यन्तास्तंगते, नाया० ४ अ० ।

अत्थमिओदिय- त्रि० *[अस्तमितोदित]*

अस्तमितश्चासौ हीनकुलोत्पत्तिदुर्भगत्वदुर्गतत्वादिना, उदितश्च समृद्धिकीर्तिसुगतिलाभादिनेतिअस्तमितोदितः ।प्रथमावस्थायां हीने पश्चात् सिद्धिं प्राप्ते पुरुषजाते, ठा० ।

यथा हरिकेशबलाभिधानोऽनगारः । स हि जन्मान्तरोपपन्न-नीचै- र्गोत्रकर्मवशादवाप्तहरिकेशाभिधान चाण्डलकुलतया, दुर्भगतया दरिद्रतया च पूर्वमस्तमिताऽऽदित्य इवाऽनभ्युदय-वत्वादस्तम् इति, पश्चात् प्रतिपन्नप्रव्रज्यो निष्कम्पचरणगुणा-वर्जितदेवकृतसान्निध्यतया प्राप्तसिद्धितया सुगतिततया च उदित इति । ठा० ४ ठा० ३ उ० ।

अत्थमियत्थमिय- पुं० *[अस्तमितास्तमित]*

अस्तमितश्चासौ सूर्य इव दुष्कुलतया दुष्कर्मकारितया च कीर्ति-समृद्धिलक्षणतेजोविवर्जित्वात्, अस्तमितश्च दुर्गतिमनादित्य-स्तमिताऽस्तमितः । पौर्वापर्येण दुर्गते, ठा० ।

यथा कालाऽभिधानः सौकरिकः । स हि सूकरैश्वरति मृगयां करोतीति यथाऽर्थः सौकरिक एव दुष्कुलोत्पन्नः, प्रतिदिनं महिषपञ्चशतीव्यापादक इति पूर्वमस्तमितः, पश्चादपि मृत्वा सप्तमनरकपृथिवीं गत इति अस्तमित एवेति । ठा० ४ ठा० ३ उ० ।

अत्थरय-१ न० *[आस्तरक]*

आच्छादके, आव०म० । जीवा० । रा० ।

अत्थरय-२ त्रि० *[अस्तरजस्]*

निर्मले, 'अत्थरयमिउमसूरगोत्थयं' आस्तरकेण प्रतीतेन मृदु-मसूरकेण वा, अथवाऽस्तरजसा निर्मलेन मृदुमसूरकेण अवस्तृतमाच्छादितं यत्तत्तथा । भग० ११ श० ११ उ० ।

अत्थलुद्ध- त्रि० *[अर्थलुब्ध]*

द्रव्यलालसे, भग० १५ श० १ उ० ।

अत्थवं- त्रि० *[अर्थवत्]*

पञ्चविंशे मुहूर्त्ते, कल्प० ।

अत्थवति- पुं० *[अर्थपति]*

धनपतौ, वव० ७ उ० ।

अत्थवाय- पुं० *[अर्थवाद]*

अर्थस्य लक्षणया स्तुत्यर्थस्य निन्दार्थस्य वा वादः । प्रशंस-नीयगुणवाचके, निन्दनीय-दोषवाचके च शब्दविशेषे । अर्थ-वादस्तु द्विधास्तुत्यर्थवादो निन्दार्थवादश्च । विशे० । आव०म०

अत्थविगप्पणा- स्त्री० *[अर्थविकल्पना]*

अर्थभेदोपदर्शने, आव०म० ।

अत्थविणय- पुं० *[अर्थविनय]*

विनयशब्दे वक्ष्यमाणार्थके विनयभेदे, दश० ७ अ० ।

अत्थविणिच्छय- पुं० *[अर्थविनिश्चय]*

अपापरक्षके कल्याणावहे च अर्थावितथभावे, । दश० ८ अ० ।

अत्थविहूण- त्रि० *[अर्थविहीन]*

अगीतार्थे, वव० ३ उ० ।

अत्थसंपयाण- न० *[अर्थसंप्रदान]*

अर्थदाने, अर्थदानं करोतीत्यर्थः । विपा० १ श्रु० १ अ० ।

अत्थसत्थ- न० *[अर्थशास्त्र]*

अर्थागमनिमित्तं शास्त्रमर्थशास्त्रम् । आव०म० ।

अर्थोपायव्युत्पादनग्रन्थे कौटिल्यराजनीत्यादौ, नाया० १ अ० पण्हा० । नं० ।

'अत्थसत्थकोसल्लयमादी तदा उववन्ना' । आव०चू०१ अ० ।

अत्थसत्थकुसल- त्रि० *[अर्थशास्त्रकुशल]*

नीतिशास्त्रादिषु, कुशले, जंबू० ३ वक्ष० ।

अत्थसार- पुं० *[अर्थसार]*

द्रव्यतत्त्वे, आव०म० ।

अत्थसिद्ध- पुं० *[अर्थसिद्ध]*

प्रचुरार्थःप्रभूतार्थः, अर्थपरोऽर्थनिष्ठः,अर्थसिद्धोऽतिशययोगात् मम्मणवणिग्वदिति गाथादलार्थः । आव०म० ।

अत्थसिद्ध- पुं० *[अर्थसिद्ध]*

लोकोत्तररीत्या दशमे अर्थसिद्धे, जंबू०७ वक्ष० ।

शास्त्रीयदशमदिवसनाम । सूर्य०, चंद०

अत्थसिद्ध- पुं० *[अर्थसिद्ध]*
ऐरवते भविष्यति पञ्चमे तीर्थकरे, आव०।

अत्थसुण्ण- न० *[अर्थशून्य]*
डित्थादिकेऽर्थहीने पदे, ठा० १ ठा० १ उ०।

अत्था- स्त्री० *[आस्था]*
स्वपक्षाणामर्हत्कृते तीर्थे बहुमानत्वे, जीवा० १ अधि०।
निर्युक्तिभाष्यसंग्रहणिवृत्तिचूर्णिपञ्जिकादिरूपाः। सम० ।

अत्थादाण- न० *[अर्थादान]*
द्रव्योपादानकरणे अष्टाऽङ्गनिमित्ते, ठा० ३ ठा०४ उ०।

अत्थाम- त्रि० *[अस्थामन्]*
सामान्यतः शक्तिविकले, भग० ७ श०९ उ०।
शारीरिकबलविकले, नाया० १ अ०। विपा०।

अत्थारिय- पुं० *[अस्तारिक]*
मूल्यप्रदानेन शालिलवनाय क्षेत्रे क्षिप्यमाणे कर्मकरे, । वव० ६ उ० ।

अत्थालिय- न० *[अर्थाऽलीक]*
द्रव्यार्थमसत्ये, पण्हा० २ अ०।

अत्थालोयण- न० *[अर्थालोचन]*
अर्थस्य सामान्येन ग्रहणे, आव०चू० १ अ०।

अत्थावग्गह- पुं० *[अर्थावग्रह]*
अवग्रहणमवग्रहः,अर्थस्याऽवग्रहोऽर्थावग्रहः ।अनिर्देशसामान्य मात्ररूपाद्यर्थग्रहणे, आह च नन्द्यध्ययनचूर्णिकृत्-'सामन्न-रूवाइ विसेसणरहियस्स अवग्गहत्ति' ।पन्न०५ पद०। आचा०।

अत्थावत्तिदोस- पुं० *[अर्थापत्तिदोष]*
*दोषभेदे, यत्राऽर्थापत्त्याऽनिष्टमालपति तत्राऽर्थापत्तिदोषः। यथा-'गृहकुक्कुटो न हन्तव्यः' इत्युक्ते अर्थापत्त्या शेषघातोऽदुष्ट इत्यापतति। विशे०। अनु०।
यत्रार्थादनिष्टापत्तिः, *दोषविशेषः। आव०
यथा- 'ब्राह्मणो न हन्तव्यः' इत्यर्थादब्राह्मण घाताय। आव०म०, । बुह०।

अत्थाह- त्रि० *[अस्ताध]*
अगाधे, अस्तं निरस्तमविद्यमानमधस्तलं प्रतिष्ठानं यस्य तद-स्ताधः। स्ताथो वा प्रतिष्ठानं, तदभावादस्ताथम्। नाया० १४ अ०। पिंड०।
यत्र नासिका न ब्रुडति तत् स्ताघम्, यत्र तु नासिका ब्रुडति तदस्ताधम्। बुह० ४ उ०।

अत्थाहिगार- पुं० *[अर्थाधिकार]*
यो यस्य सामायिकाद्यध्ययनस्याऽऽत्मीयोऽर्थस्तदुत्कीर्तनविष-यके उपक्रमभेदे, से किं तं अत्थाहिगारे ? अत्थाहिगारे जो जस्स अज्झयणस्स अत्थाहिगारो। तं जहा-
'सावज्जजोगविरई, उक्कित्तणगुणवओ य पडिवत्ती।
खलियस्स निंदणावणतिगिच्छगुणधारणा चेव'।
से तं अत्थाहिगारे। अनु०। आचा०।

अत्थि-१ अव्य० *[अस्ति]*
अस्तीति तिङन्तक्रिया वचनप्रतिरूपको निपातः। उव०, जीवा० २ प्रति०
बह्वर्थे, सूय० १ श्रु० १ अ० १ उ०।
निपातस्याऽव्ययत्वेन, अव्ययस्य च सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु, सर्वासु च विभक्तिषु। वचनेषु च सर्वेषु, यन्न व्येति तदव्ययम् इति'। बहुत्वप्रतिपादनात्। उव०।
सन्त्येकका:। द्व्यज्ञानिनः। जीवा० ३ प्रति०।
अस्तिशब्दश्चायंनिपातस्त्रिकालविषयः। आचा० १ श्रु० ४ अ० ४ उ०।
त्रिकालवर्त्तिषु विद्यमानेषु अर्थेषु, अभूवन् भवन्ति भविष्यन्ति च इति प्रत्ययवत्सु, ठा० ३ ठा० १ उ०।
येन येन यदा यदा प्रयोजनं तत् तत्तदा तदाऽस्ति भवति जायते इति। अस्य आनन्दहेतुत्वात् सुखभेदे च, ठा० १० ठा०।
प्रदेशे, ठा०१० ठा०। अनु०। उत्त०।
अस्तीति निपातः सर्वलिङ्गवचनः। यदाह शाकटायनन्यासकृत् अस्तीति निपातः सर्वलिङ्गवचेनष्विति। अनु०।
'अत्थि णं भंते ! जीवाणं पाणाइवाएणं किरिया कज्जइ'। भग० १ श० १ उ०। आव०।
अस्ति, विद्यन्ते, सन्तीत्यर्थः, अथवाऽस्ति अयं पक्षो । भग०

अत्थि-२ त्रि० *[अर्थिन्]*
यः परस्मात् मयेदं लभ्यमिति याचते। वव० १ उ०।
स्वामिनि, विशे०।

अत्थिअ-१ पुं० *[अस्थिक]*
बहुबीजकवृक्षविशेषे, पन्न० १ पद०।
तत्फले, न०। आचा० १ श्रु० १ अ० ५ उ०।
अस्थिकवृक्षफलम् । दश० १७६।

अत्थिअ-२ पुं० *[आस्तिक]*
अस्तीति मतिरस्येति आस्तिकः। तत्त्वान्तरश्रवणेऽपि जिनोक्त तत्त्वविषये निराकाङ्क्षाप्रतिपत्तिमिति।
आस्तिकमतम्-आत्माद्याः नित्या ऽनित्यात्मका नव पदार्थाः। कालनियतिस्वभावेश्वरात्म कृतकाः स्वपरसंस्थाः।१ ।
काल-यदृच्छानियतीश्वरस्वभावात्मनश्चतुरशीतिः। ठा० ४ ठा० ४ उ० आव०। जीवा०।
चार्वाकादिभिन्नदर्शनस्वीकर्तरि च। नं० तं०।

अत्थिकाय- पुं० *[अस्तिकाय]*
अस्तीत्ययं त्रिकालवचनो निपातः, अभूवन् भवन्ति भविष्यन्ति चेति भावना। अतोऽस्ति च ते प्रदेशानां कायाश्च राशय इति अस्तिशब्देन प्रदेशप्रदेशाः क्वचिदुच्यन्ते, ततश्च तेषां वा कायाः अस्तिकायाः। ठा० ४ ठा० १ उ०।
अवयविद्रव्येषुधर्मास्तिकायादिषु।भग०२श०१०उ०,आव०चू

अत्थिकायधम्म- पुं० *[अस्तिकायधर्म]*
अस्तयः प्रदेशास्तेषां कायो राशिरस्तिकायः।
स एव धर्मो गतिपर्याये जीवपुद्गलयोर्धारणादित्यस्तिकाय धर्मः। ठा० १० ठा०।
गत्युपष्टम्भलक्षणधर्मास्तिकायनामके द्रव्यधर्मे, ठा०३ठा०३उ

अत्थिक्क- न० *[आस्तिक्य]*
सन्ति खलु जिनेन्द्रोपदिष्टा अतीन्द्रिया, जीवपरलोकादयो भावा इति। परिणामे। संथा०।

अत्थिणत्थिप्पवाय-१ न० *[अस्तिनास्तिप्रवाद]*
यल्लोके यथाऽस्ति यथा वा नास्ति, अथवा स्याद्वादाभिप्रायत-स्तदेवास्ति, तदेव नास्तीत्येवं प्रवदतीति। सम०।

अत्थिणत्थिप्पवाय-२ न० *[अस्तिनास्तिप्रवाद]*
यद्वस्तु लोकेऽस्ति धर्मास्तिकायादि, यच्च नास्ति खरश्रृङ्गादि, तत्प्रवदतीति। अथवा सर्वं वस्तु स्वरूपेणास्ति, पररूपेण नास्तीति प्रवदतीति, अस्तिनास्तिप्रवादम्।चतुर्थे पूर्वश्रुते,नं०।
'अत्थिनत्थिप्पवायपुव्वस्स णं अट्ठारस वत्थू दस चूलिया वत्थू पन्नत्ता'। नं०।
तस्य पदपरिमाणं षष्टिपदशतसहस्राणि। सम०।

अत्थित्त- न० *[अस्तित्व]*
अस्तिभावे त्व। विद्यमानत्वे, दश० १ अ०।
अर्थक्रियाकारित्वे, 'यदेवार्थक्रियाकारि, तदेव परमार्थं सत्' इति वचनात्। आव०म०।
धर्मधर्मिणोरभेदात् सद्वस्तुनि, भग०।

अत्थिभाव- पुं० *[अस्तिभाव]*
विद्यमानभावे, 'अत्थिभावो त्ति वा विज्जमाणभावो त्ति वा एगट्ठा'। आव०चू० १ उ०।

अत्थिर- त्रि० *[अस्थिर]*
अदृढे, ओह०।
अतरे, निसि०१० उ०।
धृति संहननहीनत्वेन बलहीने, वव० २ उ०।
चले च, उत्त० २० अ०।
जीर्णे, आचा०२ श्रु० ३ अ०२ उ०।
अस्थास्नुद्रव्ये, भग०।
अतत्स्थे च, स्थिरा नाम येषां तत्रैव गृहाणि, अस्थिरा येषामन्यत्र गृहाणि। बुह० १ उ०।

अत्थिरव्वय- त्रि० *[अस्थिरव्रत]*
अस्थिराणि गृहीतमुक्ततया चलानि व्रतान्यस्येत्यस्थिरव्रतः। कदाचिद् व्रतं गृह्णाति कदाचिद् मुञ्चति। उत्त० २० अ०।

अत्थीकरण- न० *[अर्थीकरण]*
अर्थयते अर्थी वा करोति अर्थं जनयते इत्यर्थीकरणम्। राजा-दीनां प्रार्थने, तैर्वाऽऽत्मनः प्रार्थनाकरणे, निसि०।

अत्थुग्गह- पुं० *[अर्थावग्रह]*
अर्थ्यतेइत्यर्थः।अर्थस्यावग्रहणमर्थावग्रहः। सकलरूपादिविशे षनिरपेक्षाऽनिर्देश्य-सामान्यमात्ररूपार्थग्रहणलक्षणे मतिज्ञान-भेदा ऽवग्रहभेदे, नं०। सम। भग०। ठा०। पन्न०।
'सामन्नरूवाइं विसेसणरहियस्स अनिद्देसस्स' अवग्रहणमवग्रह इति। नं०।

अत्थुग्गहण- न० *[अर्थावग्रहण]*
फलनिश्चये, भग०११ श०११ उ०।

अत्थुप्पत्ति- स्त्री० *[अर्थोत्पत्ति]*
उत्पद्यते यस्मादिति उत्पत्तिः। अर्थस्योत्पत्तिर्व्यवहार उच्यते अर्थोत्पत्तिः। करणव०हारे, वव० १ उ०।

अत्थोभय- न० *[अस्तोभक]*
स्तोभकरहिते गुणवत्सूत्रे, अनु०।
उत वै हाऽऽदिप्रभृतीनामकारणप्रक्षेपाः स्तोभकाः। तद्रहित-मस्तोभकम्। बुह०१ उ०। विशे०।

अथव्वण- पुं० *[अथर्वण]*
चतुर्थवेदे, 'जाव अथव्वणकुसलेया वि होत्था'विपा०१ श्रु०५

अदंड- पुं० *[अदण्ड]*
प्रशस्तयोगत्रये, अहिंसामात्रे च। 'एगे अदंडे' सम० १ सम।

अदंडकुदंडिम- त्रि० *[अदण्डकुदण्डिम]*
दण्डलभ्यं द्रव्यं दण्ड एव। कुदण्डेन निर्वृत्तं द्रव्यं कुदण्डिमम्, तन्नास्ति यत्र तत्तथा। दण्डकुदण्डाभ्यामगृह्यमाणद्रव्ये नगरादौ, तत्र दण्डोऽपराधानुसारेण राजग्राह्यं द्रव्यम्; कुदण्डस्तुकारणिकानां प्रजापराधान्महत्यपराधिनोऽपराधेऽल्पं राजग्राह्यं द्रव्य मिति। भग० ११ श० ११ उ०। नाया०। जंबू०। कल्प०।

अदंतवण- त्रि० *[अदन्तवन]*
दन्तधावनरहिते, अदन्तधावनो धर्मोवीरमहापद्मयोस्तीर्थेऽनु-ज्ञातः। ठा० ९ ठा०।

अदंभग- त्रि० *[अदम्भक]*
वञ्चनाऽनुगतवचनविरहिते, वव० ३ उ०।

अदंसण- न० *[अदर्शन]*

चाक्षुषज्ञानाभावे, न विद्यते दर्शनं दृग् यस्येत्यदर्शनः। अन्धे, स्त्यानर्द्धिनिद्रोदयवति च। गच्छा०१ अधि०।

दुविहो अदंसणो खलु, जाति उवघाततो य णायव्वो।
उवघातो पुण तिविहो, वाहीउवघाडअंजणत्ताए। पंच०भा०।

अन्धः । ठा० ।

अदक्खु-१ त्रि० *[अदृष्ट]*

अर्वाग्दर्शने, सूय० १ श्रु०२ अ० ३ उ०।

अदक्खु-२ त्रि० *[अदक्ष]*

अनिपुणे, सूय० १ श्रु० २ अ० ३ उ०।

अदक्खु- ३ त्रि० *[अपश्य]*

पश्यतीति पश्यः, न पश्योऽपश्यः।अन्धे,सूय०१श्रु०२अ०३उ आद्राक्षीत् इत्यस्यापि 'अदक्खू' इति रूपम्। प्रति०। भग०।

अदक्खुदंसण-१ त्रि० *[अदक्षदर्शन]*

असर्वज्ञोक्तशासनानुयायिनि, सूय०१ श्रु०२ अ० ३ उ०।

अदक्खुदंसण-२ त्रि० *[अदृष्टदर्शन]*

अचक्षुर्दर्शनमस्यासौ, केवलदर्शनः, सर्वज्ञः। सूय०।

अदक्खुदंसण-३ त्रि० *[अपश्यकदर्शन]*

अपश्यकस्यापि सर्वज्ञस्याभ्युपगतं दर्शनं येनाऽसावपश्यक दर्शनः। स्वतोऽर्वाग्दर्शिनि, सूय०।

अदक्खुदंसण-४ त्रि० *[अपश्यकदर्शन]*

अदक्खुव दक्खुवाहियं, सद्दहसु अदक्खुदंसणा।
हंदि हु सु निरुद्धदंसणे, मोहणिज्जेण कडेण कम्मणा।

(अदक्खुवेत्यादि) पश्यतीति पश्यः, न पश्योऽपश्योऽन्धः, तेन तुल्यं कार्याकार्याविवेचित्वादपश्यवत्।सूय०१ श्रु० २अ०उ०

अदक्खुव- त्रि० *[अपश्यवत्]*

अपश्योऽन्धः, तेन तुल्यं कार्याऽकार्याविवेचित्वादपश्यवत्। अन्धसदृशे कार्याकार्यानभिज्ञे, सूय० १ श्रु०२ अ० ३ उ०।

अदढ- त्रि० *[अदृढ]*

दुर्बले, वव० ४ उ०। आचा०।

विणावि गेलण्णएण जो दुब्बलो। निसि०।

अदढधिई- त्रि० *[अदृढधृति]*

धृतिरहिते, निसि० १ उ०।

असमर्थे, निसि० १ उ०।

अदण- न० *[अदन]*

भोजन बुह० १ उ०।

अदण्ण- त्रि० *[अदत्त]*

आकुलीभूते, बुह०१ उ०।

विषादीकृते, 'तेणं वि य गिलाणेण ते अदण्णा। निसि०१ उ०

अदत्त- त्रि० *[अदत्त]*

अवितीर्णे, पण्हा० ३ अ०।

अदत्तद्रव्यग्रहणरूपे तृतीये आश्रवभेदे, पण्हा० १ अ०

अदत्तहारि- त्रि० *[अदत्तहारिन्]*

अदत्तमपहर्तुं शीलमस्याऽसावदत्तहारी। परद्रव्यापहारके. सूय० १ श्रु० ३ अ०१ उ०।

अदत्तादाण- न० *[अदत्तादान]*

अदत्तस्य स्वामिजीवतीर्थकरगुरुभिः अवितीर्णस्याऽननुज्ञातस्य सचित्ताचित्तमिश्रभेदस्य वस्तुन आदानं ग्रहणमदत्तादानम् तच्च विविधोपाधिवशादनेकविधम्। 'एगे अदिण्णादाणे'। ठा०१ ठा० १ उ०। सूय०।

चौर इति व्यपदेशनिबन्धने, उपा० १ अ०।

परस्वापहारे, आव०६ अ०। आव० चू०।

अदिन्नादाणं सुहुमं, बादरं च। तत्थ सुहुमं तणडगलछार मल्लगादीणं गहणे। बादरं हिरण्णसुवण्णादि। महा० ३ अ०।

अदत्तादाणकिरिया- स्त्री० *[अदत्तादानक्रिया]*

आत्माद्यर्थमदत्तग्रहणे, ठा०५ ठा०२ उ०।

अदत्तादाणवत्तिय-१ पुं०न० *[अदत्तादानप्रत्ययिक]*

अदत्तस्य परकीयस्यादानं स्वीकरणमदत्तादानं स्तेयं, तत्प्रत्ययिको दण्डः। एतच्च सप्तमे क्रियास्थाने, सूय०।

अदत्तादाणवत्तिय-२ पुं०न० *[अदत्तादानप्रत्ययिक]*

अहावरे सत्तमे किरियाठाणे अदिन्नादाणवत्तिए त्ति आहिज्जइ, से जहानामए केइ पुरिसे आयहेउं वा० जाव परिवारहेउं वा सयमेव अदिन्नं आदियइ, अन्नेणं वि अदिन्नं आदियावेति, अदिन्नं आदियंतं अन्नं समणुजाणइ, एवं खलु तस्स तप्पत्तियं ति आहिज्जइ, सत्तमे किरियाठाणे अदिन्नादाणवत्तिए त्ति आहिए।

एतदपि प्राग्वद् ज्ञेयम्। तद्यथा नाम कश्चित्पुरुष आत्मनिमित्तं यावत्परिवारनिमित्तं परद्रव्यमदत्तमेव गृह्णीयात्, अपरं च ग्राहयेद्, गृह्णन्तमप्यपरं समनुजानीयादित्येवं तस्यादत्तादान प्रत्ययिकं कर्म संबध्यते। इति सप्तमं क्रियास्थानमाख्यातमिति। सूय० २ श्रु० २ उ०। आव० चू०। ठा०।

अदत्तादाणविरइ- स्त्री० *[अदत्तादानविरति]*

परद्रव्यहरणविरतौ, महा०७ अ०।

अदत्तादाणवेरमण- न० *[अदत्तादानविरमण]*

अदत्तादानाद् विरमणमदत्तादानविरमणम्। स्वाम्याद्यनुज्ञातं प्रत्याख्यामीति स्तेयविरतिरूपे व्रतभेदे, पण्हा० ३ अ०।

तत्र स्थूलकाऽदत्त प्रत्याख्यानं तृतीयमणुव्रतं सर्वाऽदत्त प्रत्याख्यानं तृतीयं महाव्रतमिति। आव०६ अ०।

अदत्तालोयण- त्रि० *[अदत्तालोचन]*
अदत्ता गुरुपुरतोऽप्रकटिता, आलोचना-आलोचनार्ह पापं येन सोऽदत्तालोचनः। अकृतालोचने, गच्छा० १ अधि०।

अदत्ताहार- पुं० *[अदत्ताहार]*
चौरे, 'अदत्ताहारा वा से अवहरंति रायाणो वा से विलुंपंति'। आचा०१ श्रु० २ अ० ३ उ०।

अदब्भ- त्रि० *[अदभ्र]*
दभ्रमल्पम्, न दभ्रमदभ्रम्। भूयर्थे (अनल्पे), जंबू० ३ वक्ष०।

अदब्भवाह- त्रि० *[अदभ्रवाह]*
अदभ्रं वहतीति अदभ्रवाहः। भूरिवाहकेऽश्वादौ, 'अदब्भवाहं अमेलनयण कोकासिय बहलपत्तलऽच्छं'। जंबू० ३ वक्ष०।

अदय- त्रि० *[अदय]*
निर्दये, निसि० २ उ०।

अदलंत- त्रि० *[अददत्]*
अददाने, वव०२ उ०।

अदस- त्रि० *[अदश]*
दशारहिते, दश०७ अ०।

अदारुय- त्रि० *[अदारुक]*
काष्ठादिरहिते, तं०।

अदिज्ज- त्रि० *[अदेय]*
क्रयविक्रयनिषेधेन अविद्यमानदातव्ये नगरादौ, भग० ११ श०, ११ उ०।
यत्र हि न केनापि कस्यापि देयमिति। जंबू०३वक्ष०। कल्प०।

अदिट्ठ- त्रि० *[अदृष्ट]*
अनुपलब्धे, नाया०१६ अ०।
'तेसिमविवरायाणमदिट्ठकल्लाणाणमहमिदमच्चब्भुयं किंपि संपादयामीति'। आव०चू० १ अ०।
प्राग्जन्मकृतकर्मणि, नं०।आव०म०।विशे०।आव०। भग०।
अदृष्टधर्मणि पुरुषे, वव०१० उ०।

अदिट्ठदेस- पुं० *[अदृष्टदेश]*
अदृष्टपूर्वदेशान्तरे, वव० १० उ०।

अदिट्ठधम्म(ण्)- त्रि० *[अदृष्टधर्मन्]*
सम्यगनुपलब्धश्रुता-दिधर्मिणि, दश०१ अ०। दशा०।

अदिट्ठभाव-पुं० *[अदृष्टभाव]*
आवश्यकादिश्रुतमदृष्टवति, बृह०१ उ०।
आवश्यकादयः *कृताङ्गं यावत् ये आगमग्रन्थास्तेषु ये पदार्था अभिधेयास्ते आदिमा भावा उच्यन्ते, ते पुनर्भावा येन न दृष्टा नावगताः स एषोऽदृष्टभाव इति। उपलक्षणत्वादादि-मादृष्टभावो भवतीति। बृह०१ उ०।

अदिट्ठलाभिय- पुं० *[अदृष्टलाभिक]*
अदृष्टस्यापि अपवारकादिमध्यान्निर्गतस्य श्रोत्रादिभिः कृतोप-योगस्य भक्तादेरदृष्टाद् वा पूर्वमनुपलब्धाद्दायकाल्लाभो यस्य अस्ति स तथा। उव०।
तेन वा चरतीति अदृष्टलाभिकः। अभिग्रहविशेषधारके भिक्षा-चरके, सूय०२ श्रु०२ अ०।

अदिट्ठसार- त्रि० *[अदृष्टसार]*
अगीतार्थे, पंच० चू०।

अदिट्ठहट्ठ- त्रि० *[अदृष्टहृत]*
अदृष्टोत्क्षेपनिक्षेपपदमानीते, आव०।

अदिट्ठाणुभाव- पुं० *[अदृष्टानुभाव]*
अदृष्टफलविपाके, विशे०।

अदिण्ण- त्रि० *[अदत्त]*
स्वामिजीवतीर्थकरगुरुभिरवितीर्णे, ठा० १ ठा०१ उ०।
परकीये द्रव्ये, आचा० ८ अ० १ उ०।
अदत्तादानक्रिया–आत्माद्यर्थमदत्तग्रहणम्।ठा०।

अदिण्णवियार- त्रि० *[अदत्तविचार]*
न दत्तो विचारः, प्रवेशो यत्र तान्यदत्तविचाराणि। अननु-ज्ञातप्रवेशेषु कोष्ठिकादीनां गृहेषु, वव० ८ उ०।

अदित्त- त्रि० *[अदृप्त]*
दर्परहिते शान्ते, बृह० १ उ०।

अदिस्स- त्रि० *[अदृश्य]*
चक्षुषोऽविषये, उत्त० २३ अ०।
'पच्छन्ने आहारनीहारे अदिस्से मंसचक्खुणा' सम० ३४ सम।

अदिस्समाण- त्रि० *[अदृश्यमान]*
अनुपलभ्यमाने, आव०५ अ०।
अनुपदिश्यमाने, आचा०१ श्रु० ३ अ०२ उ०।

अदीण- त्रि० *[अदीन]*
अक्षुभिते दीनाकाररहिते, पण्हा०१ अ०
शोकाभावात्। अंत०७ वर्ग।
प्रसन्नमनसि स्वभावस्थे, निसि० ३ उ०।

अदीणमणस- त्रि० *[अदीनमनस्]*
अदीनं मनो यस्य स अदीनमनाः। *त्वाददीनमनाः अदीन-मानसो वा। उत्त०२ अ०।
अनिष्प्रकम्पचित्ते, आव०म०।

अदीणया- स्त्री० *[अदीनता]*
तद्रूपे भिक्षुलिङ्गे, दश०१० अ०।

अदीणवित्ति- त्रि० *[अदीनवृत्ति]*
आहाराद्यलाभेऽपि शुद्धवृत्तौ, दशा०९ अ०।

अदीणसत्तु- पुं० *[अदीनशत्रु]*
कुरुदेशनाथे हस्तिनागपुरवास्तव्ये स्वनामख्याते राजन्, । ठा० ५ ठा० १ उ० । नाया० ।
'अदीणसत्तुस्स रण्णो धारणीपामोक्खाणं देवीसहस्सं उरोहेया वि होत्था' । विपा० २ श्रु० १ अ० ।

अदु- अव्य० *[अथ]*
अथशब्दो निपातः । निपातानामनेकार्थत्वाद् अत इत्यस्यार्थे, सूय० १ श्रु० २ अ० २ उ० ।
आनन्तर्ये, आचा० ९ अ० १ उ० ।

अदुक्खणया- स्त्री० *[अदुःखनता]*
दुःखस्य करणं दुःखनं, तदविद्यमानं यस्यासावदुःखनः, तद्भावस्तत्ता । अदुःखकरणे, भग० ७ श० ६ उ० ।

अदुगुंछिय-१ त्रि० *[अजुगुप्सित]*
अगर्हिते,'अदुगुंछियमनगरहियमणवज्जमिमंएगट्ठा' आव०म० अनिन्दिते, उव० ।

अदुगुंछिय-२ त्रि० *[अजुगुप्सित]*
सामायिके, अनिद्दं च अदुगुंछितमनगरहितं अणवज्जं चेव एगट्ठा' । आव०चू० १ अ० ।

अदुट्ठ- त्रि० *[अदुष्ट]*
दोषरहिते, पण्हा० १ अ० ।

अदुट्ठ- त्रि० *[अद्विष्ट]*
द्वेषरहिते, पण्हा० १ अ० ।

अदुट्ठचेत(स्)- त्रि० *[अदुष्टचेतस्]*
अकलुषान्तःकरणे, आचा०१ श्रु० ५ अ० ४ उ० ।

अदुत्तरं- अव्य० *[अथापर]*
अतोऽनन्तरमित्यर्थे, अथापरं चेदं च सामर्थ्यातिशयवर्णनम् । भग० ३ श०१ उ० ।
अदुत्तरं च णं मम समणा निग्गंथा ।नाया० १ अ० । जीवा० ।

अदुय- न० *[अद्रुत]*
अशीघ्रे, भग० ७ श० ९ उ० ।

अदुयत्त- न० *[अद्रुतत्व]*
सप्तविंशे सत्यवचनातिशये, सम० ३५ सम

अदुयबंधण- न० *[अद्रुतबन्धन]*
दीर्घकालिकबन्धने, सूय० २ श्रु० २ अ० ।

अदुवा- अव्य० *[अथवा]*
पक्षान्तरोपन्यासद्वारेणाऽभ्युच्चयोपदर्शने,आचा० १ श्रु० १ अ० ३ उ० । सूय० ।

अदूर- त्रि० *[अदूर]*
अविप्रकृष्टे, भग० १ श० १ उ० ।

अदूरग(य)- त्रि० *[अदूरग]*
परस्परसमीपवर्तिनि, सूय० १ श्रु० ४ अ० २ उ० ।

अदूरगेह- न० *[अदूरगेह]*
प्रत्यासन्नप्रातिवेश्मिकगृहे, बुह० २ उ० ।

अदूरसामंत- पुं० *[अदूरसामन्त]*
दूरं विप्रकृष्टं, सामन्तं च सन्निकृष्टं, तन्निषेधाददूरसामन्तम् । नातिदूरे नातिसमीपे, भग० १ श० १ उ० ।
अनिकटाऽऽसन्ने उचितदेशे, उव० । नाया० ।

अदूरागय- त्रि० *[अदूरागत]*
समीपदेशं प्राप्ते, 'अदूरागए बहुसंपत्ते अद्धाण पडिवण्णे अंतरा-पहे वट्टइ' । भग० २ श० १ उ० ।

अदेसकालप्पलावि- पुं० *[अदेशकालप्रलापिन्]*
अदेशकाले अनवसरप्रलपनशीलोऽनवसरप्रलापी । भाषा-चपलभेदे, बुह० १ उ० ।

अद्द-१ पुं० *[अर्द]*
अर्द्यते गम्यतेऽनेनेति अर्दः । आकाशे, भग० २० श० २ उ० ।

अद्द-२ त्रि० *[आर्द्र]*
क्लिन्ने सरसे सजले वस्तुनि, सूय० ।

अद्दइज्ज- न० *[आर्द्रकीय]*
आर्द्रकात्समुत्थितमध्ययनमार्द्रकीयम् । आर्द्रककुमारवक्तव्यता प्रतिबद्धे *कृतस्य श्रुतस्कन्ध-२ अध्ययनम् ६ । सूय० २ श्रु०

अद्दग- न० *[आर्द्रक]*
श्रृङ्गबेरे, आचा० २ श्रु० १ अ० ८ उ० ।

अद्दगकुमार- पुं० *[आर्द्रककुमार]*
आर्द्रकनामधेये कुमारे, ठा० २ श्रु०६ अ० ।

अद्दगपुर- न० *[आर्द्रकपुर]*
नगरभेदे, यत्र आर्द्रककुमार उत्पन्नः । सूय० २ श्रु० ६ अ० ।

अद्दचंदण- न० *[आर्द्रचन्दन]*
सरसचन्दने, उव० ।
आर्द्रेण सरसेन चन्दनेनाऽनुलिप्तं गात्रं येषां ते आर्द्रचन्दनानु-लिप्तगात्राः । (सुपुरुषवर्णकः) उव०

अद्दव- त्रि० *[अद्रव]*
निगालिते, आव०६ अ० ।

अद्दहण- न० *[आद्रहण]*
द्रव्यपाकायाग्नावुत्ताप्यमाने उदकतैलादौ, उपा० ३ अ० ।

अद्दा- स्त्री० *[आर्द्रा]*
रुद्रदेवताके नक्षत्रभेदे, अनु० ।
'दो अद्दाओ' ठा० २ ठा० ३ उ० ।
'अद्दा खलु नक्खत्ते' । सूर० १० पाहु० । चंद १० पाहु० ।

अद्दाइय- न० *[आदर्शित]*
आदर्शनेन पवित्रीभूते, बुह० १ उ०।

अद्दाग- पुं० *[आदर्श]*
दर्पण, सम०।
स्फटिकादिमणि, निसि० १३ उ०।

अद्दागपासिण- पुं० *[आदर्शप्रश्न]*
प्रश्नविद्याभेदे, यथा आदर्शे देवताऽवतारः क्रियते। एतद् वक्तव्यताप्रतिबद्धे प्रश्नव्याकरणानामष्टमेऽध्ययने च। परमिदानीं प्रश्नव्याकरणेषु एतदध्ययनं न दृश्यते। ठा० १ ठा०।

अद्दागविज्जा- स्त्री० *[आदर्श विद्या]*
विद्याविशेषे, ययाऽऽतुर आदर्शे प्रतिबिम्बितोपमृज्यमानः प्रगुणो जायते। वव० ५ उ०।

अद्दागसमाण- पुं० *[आदर्शसमान]*
आदर्शेन समानस्तुल्य इति श्रमणोपासकभेदे, ठा०।
यो हि साधुभिः प्रज्ञाप्यमानान् उत्सर्गापवादादीनागमिकान् भावान् यथावत्प्रतिपद्यते सन्निहितार्थानादर्शकवत्, स आदर्शसमानः। ठा० ४ ठा० ३ उ०।

अद्दामलग- न० *[आद्रमिलक]*
अद्दामलगप्पमाणं सचित्तपुढविकायं गेण्हंति। निसि० १ उ०
शणवृक्षसंबन्धिनि मुकुरे, पन्न०

अद्दारिट्ठ- पुं० *[आर्द्रारिष्ट]*
कोमलकाके, आव०म०।

अद्दिय- त्रि० *[अदिर्त]*
पीडिते, वव० १० उ०।

अद्ध- न० *[अर्द्ध]*
समप्रविभागे, एकदेशे च। विशे०।
'अद्धंऽगुलसोणिको जेट्ठप्पमाणो उसी भणिओ'। जंबू० ३ वक्ष०।

अद्धण- पुं० *[अध्वन्]*
मार्गे, नाया०१४ अ०। निसि०।
अद्धाणं पि य दुविहं, पंथो मग्गो य होइ नायव्वो।।
अध्वा द्विविधः, तद्यथा- पन्थाः, मार्गश्च। पन्था नाम यत्र ग्राम-नगरपल्लीव्रजिकानां किञ्चिदेकतरमपि नास्ति। यत्र पुनर्ग्रामा- नुग्रामपरम्परयाऽवसितं भवति स ग्रामे मार्ग उच्यते।बुह०१ उ० प्रयाणके, विपा०१ श्रु० ३ अ०।

अद्धकप्प- पुं० *[अध्वकल्प]*
अध्वनि गृह्यमाणे कल्पे कमनीये आहारे, बुह०१ उ०।

अद्धकरिस- पुं० *[अर्द्धकर्ष]*
पलस्याऽष्टमांशे, अनु०।

अद्धकविट्ठ- पुं० *[अर्द्धकपित्थ]*
अर्द्धकपित्थाकारवति, 'अद्धकविट्ठ-संट्ठाणसंठियं' उत्तानीकृतम् अर्द्धमात्रं कपित्थस्यैव, यत् संस्थानं तेन संस्थितमर्द्धकपित्थसंस्थानसंस्थितम्।सूर०१०पाहु०।चंद०१० पाहु०।

अद्धकुलव- पुं० *[अर्द्धकुलव]*
मगधदेशप्रसिद्धे धान्यमानविशेषे, रा०।

अद्धकोस- पुं० *[अर्द्धकोश]*
धनुःसहस्रे, जंबू० ४ वक्ष०।

अद्धक्खिकडक्ख- न० *[अर्द्धाक्षिकटाक्ष]*
अर्द्धं तिर्यग्वलितमक्षि येषु कटाक्षरूपेषु चेष्टितेषु ते। अर्द्धकटाक्षेषु, जीवा० ३ प्रति०।

अद्धक्खिय- त्रि० *[अर्द्धाक्षिक]*
अर्द्धविकृतलोचने, महा० ३ अ०।

अद्धखल्ला- स्त्री० *[अर्द्धखल्वा]*
अर्धजङ्घां छादयन्त्यामुपानहि, बुह० ३ उ०।

अद्धचंद- पुं० *[अर्द्धचन्द्र]*
अर्द्धचन्द्राकारे सोपाने, नाया० १ अ०। सम।
सौधर्मकल्पोऽर्द्धचन्द्रसंस्थानसंस्थितः। रा०।
अर्द्धचन्द्रः, बाणविशेषः। आव०।

अद्धचक्कवाल- न० *[अर्द्धचक्रवाल]*
गतिविशेषे, ठा०७ ठा०।

अद्धचक्कवाला- स्त्री० *[अर्द्धचक्रवाला]*
अर्द्धवलयाकारायां श्रेणौ, ठा० ७ ठा०।

अद्धछट्ठ- त्रि० *[अर्द्धषष्ठ]*
सार्द्धेषु पञ्चसु, आव०म०।

अद्धजिण्ण- त्रि० *[अर्द्धजीर्ण]*
जीर्णाऽजीर्णे, आव०म०।

अद्धजोयण- न० *[अर्द्धयोजन]*
योजनस्यार्द्धमर्द्धयोजनम्। गव्यूतौ, बुह०४ उ०।

अद्धट्ठम- त्रि० *[अर्द्धाष्टम]*
अर्द्धमष्टमं येषां तान्यर्द्धाष्टमानि। सार्द्धसप्तसु, नाया०१ अ०।
'अद्धट्ठमाण य राइंदियाणं य विइक्कंताणं' ठा०९ ठा०।

अद्धणाराय- न० *[अर्द्धनाराच]*
अर्द्धं नाराचमुभयतो मर्कटबन्धो यत्र तदर्धनाराचम्। मर्कटैकदेशबन्धनद्वितीयपार्श्वकीलिकासंबन्धरूपेचतुर्थसंहनने, सम०
यत्र हि एकपार्श्वे मर्कटबन्धो द्वितीये च पार्श्वे कीलिका भवति। जीवा०१ प्रति०। कल्प०। तं०। ठा०।

अद्धतुला- स्त्री० *[अर्द्धतुला]*
तुलाप्रमाणस्यार्द्धे, अनु०।

अद्धद्ध- न० *[अर्द्धार्द्ध]*
चतुर्भागे, बुह० ३ उ०।

अद्धद्धा- स्त्री० *[अद्धाऽद्धा]*
अद्धाया अद्धा अद्धाद्धा। दिवसस्य रजन्या वा एकदेशे प्रहरादौ, ठा० १० ठा०।

अद्धद्धामिस्सिया– स्त्री० [अद्धाद्धामिश्रिता]
दिवसस्य रात्रेर्वा एकदेशोऽद्धाद्धा सा मिश्रिता यया सा भाषा। पन्न०।

अद्धद्धामीसय- न० *[अद्धाद्धामिश्रक]*
अद्धाद्धाविषयं मिश्रकं सत्याऽसत्यमद्धाद्धामिश्रकम्। सत्यमृषा-भेदे, यथा कञ्चित्कस्मिंश्चित्प्रयोजने प्रहरमात्र एव मध्याह्नम् इत्याह। ठा० १० ठा०।

अद्धपंचममुहुत्त- पुं० *[अर्धपञ्चममुहूर्त्त]*
अर्द्धपञ्चमाश्च ते मुहूर्त्ताश्च अर्द्धपञ्चममुहूर्त्ताः। नवसु घटिकासु अर्द्धपञ्चमा मुहूर्त्ता यस्य। नवघटिकापरिमिते, 'जया णं भंते! उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स राईए वा पोरिसी भवइ। भग० ११ श० ११ उ०।

अद्धपल- न० *[अर्धपल]*
कर्षद्वये, अनु०।

अद्धपलिअंका- स्त्री० *[अर्धपल्यङ्का]*
ऊरावेकपाद निवेशनलक्षणायां लक्षणायाम्, ठा०५ठा०१ उ०

अद्धपेडा- स्त्री० *[अर्द्धपेटा]*
पेटाया अर्द्धमर्द्धपेटा। पेटायाः समखण्डे। अर्द्धपेटेवार्द्धपेटा। पेटार्द्धसमानगमनलक्षणे गोचरभेदे दशा०।
अर्द्धपेटाऽप्येवमेव, नवरमर्द्धपेटासदृशं स्थानयोर्दिग्द्वयं संबद्ध-योर्गृहश्रेण्योरेव पर्यटति, बुह० १ उ०। ठा०। उत्त०। गच्छा०।

अद्धभरह- पुं० *[अर्द्धभरत]*
भरतस्यार्द्धमर्द्धभरतम्। भरतार्द्धे। पण्हा० ४ अ०।

अद्धभरहप्पमाणमेत्त- त्रि० *[अर्द्धभरतप्रमाणमात्र]*
अर्द्धभरतस्य यत्प्रमाणं तदेव मात्रा प्रमाणं यस्य स तथा। सातिरेकत्रिषष्ट्याधिकयोजनशतद्वयमिते,
'अद्धभरहप्पमाणमेत्तं बोंदिं विसेणं विसपरिणयं विसट्टमाणि करेत्तए' (वृश्चिक आशीविषो वा)। ठा० ४ ठा० ४ उ०।

अद्धमागह- न० *[अर्द्धमागध]*
मगधार्द्धविषयभाषानिबद्धे, अष्टादशदेशीभाषानियते च। निसि० ११ उ०।

अद्धमागही- स्त्री० *[अर्द्धमागधी]*
मागध्यामित्यादिमागधीभाषालक्षणेनापरिपूर्णायां प्राकृतभाषा लक्षणबहुलायां भाषायाम्, उव०।
प्राकृतादीनां षण्णां भाषाविशेषाणां मध्ये या मागधी नाम भाषा 'रसोर्लशौ' मागध्यामित्यादिलक्षणवती, सा असमाश्रित स्वकीयसमग्रलक्षणाऽर्द्धमागधीत्युच्यते। 'भगवं च णं अद्धमा-गहीए भासाए धम्ममाइक्खइ' इति द्वाविंशो बुद्धातिशयः। सम०३४ सम०। विपा०। पन्न०। रा०। आचा०। आव०म०। अद्धमागही भासा भासिज्जमाणी विसिज्जइ' भाषा किल षड्विधा भवति, यदाह- 'प्राकृतसंस्कृतमागधपिशाचभाषा च शौरसेनी च। षष्ठोऽत्र भूरिभेदो, देशविशेषादपभ्रंशः' ।१। । भग० ५ श० ४ उ०।

अद्धमास- पुं० *[अर्द्धमास]*
अर्धं मासस्य। सम०।
पञ्चदशाहात्मके मासस्यार्द्धरूपे पक्षात्मके काले, पण्हा०१ अ०

अद्धमासिय- त्रि० *[अर्धमासिक]*
('अद्धमासिए कत्तरिमुंडे त्ति' यदि कर्तर्या कारयति तदा पक्षे पक्षे गुप्तं कारणीयम्, क्षुरकर्तर्योश्च लोचे प्रायश्चित्तम्) कल्प०।

अद्धरत्तकालसमय- पुं० *[अर्धरात्रकालसमय]*
समयः समाचारोऽपि भवतीति कालेन विशेषितः। कालरूपः समय कालसमयः। स चाऽनर्द्धरात्ररूपोऽपि भवतीत्यतोऽर्द्ध-रात्रकालसमयः। निशीथे रात्रेर्मध्यकाले, ।भग०११श०११ उ०

अद्धलव- पुं० *[अर्धलव]*
लवस्य समेंऽशे, ज्यो० १ पाहु०।

अद्धवेयाली- स्त्री० *[अर्धवैताली]*
वैताल्या विद्याया उपशामकविद्यायाम्, सूय० २ श्रु० २ अ०।

अद्धसंकासिया- स्त्री० *[अर्धसाङ्काश्यिका]*
देवलसुतराजस्य प्रव्रजितस्य प्रव्रजितायामेव देव्यामुत्पन्नायां पुत्र्याम्, आव०४ अ०। आव०चू०
देवलासुतराजस्य तापसावस्थायामुत्पन्ना पुत्री। आव०

अद्धसम- न० *[अर्धसम]*
एकतरसमे वृत्ते, यत्र पादा अक्षराणि वा समानि, अथवा यत्र प्रथमतृतीययोर्द्वितीयचतुर्थयोश्च समत्वम्। ठा० ७ ठा०।

अद्धहार- पुं० *[अर्धहार]*
नवसरिके कण्ठाभरणभेदे, रा०। नाया०। जीवा०। विपा०। जंबू०। जीवा०। आचा०। भग०। उव०।
स्वनामख्याते द्वीपे, समुद्रे च। जीवा० ३ प्रति०।
तत्रार्द्धहारद्वीपे, अर्द्धहारभद्रार्द्धहारमहाभद्रौ देवौ अर्द्धहारसमुद्रे अर्द्धहारवरार्द्धहारमहावरौ'। जीवा० ३ प्रति०।

अद्धहारभद्द- पुं० *[अर्धहारभद्र]*
अर्द्धहारद्वीपाधिपतौ देवे, जीवा० ३ प्रति०।

अद्धहारमहाभद्द- पुं० *[अर्धहारमहाभद्र]*
अर्द्धहारद्वीपाऽधिपतौ देवे, जीवा० ३ प्रति०।

अद्धहारमहावर- पुं० *[अर्धहारमहावर]*
अर्द्धहारसमुद्राधिपतौ देवे, अर्द्धहारवरसमुद्राधिपतौ देवे च। जीवा० ३ प्रति०।

अद्धहारवर- पुं० *[अर्धहारवर]*
स्वनामख्याते द्वीपभेदे, समुद्रभेदे च। तत्र अर्द्धहारवरार्द्धहार-वरमहावरौ च देवौ वसतः। जीवा० ३ प्रति०।

अद्धहारवरभद्द- पुं० *[अर्धहारवरभद्र]*
अर्द्धहारवरद्वीपाधिपतौ देवे, जीवा० ३ प्रति०।

अद्धहारवरमहावर- पुं० *[अर्धहारवरमहावर]*
अर्द्धहारसमुद्राधिपतौ देवे, जीवा० ३ प्रति०।

अद्धहारवरवर- पुं० *[अर्धहारवरवर]*
अर्द्धहारवरसमुद्राधिपतौ देवे, जीवा० ३ प्रति०।

अद्धहारोभास- पुं० *[अर्धहारावभास]*
स्वनामख्याते द्वीपभेदे, समुद्र भेदे च। तत्र अर्द्धहारावभासे द्वीपे अर्द्धहारावभासभद्रार्द्धहारावभासमहाभद्रौ, अर्द्धहाराव-भासे समुद्रे अर्द्धहारावभासवरा-र्द्धहारावभासमहावरौ देवौ वसतः । जीवा० ३ प्रति०।

अद्धहारोभासभद्द- पुं० *[अर्धहारावभासभद्र]*
अर्द्धहारावभासद्वीपाधिपतौ देवे, जीवा० ३ प्रति०।

अद्धहारोभासमहाभद्द- पुं० *[अर्धहारावभासमहाभद्र]*
अर्द्धहारावभासद्वीपाधिपतौ देवे, जीवा० ३ प्रति०।

अद्धहारोभासमहावर- पुं० *[अर्धहारावभासमहावर]*
अर्द्धहारावभाससमुद्राधिपतौ देवे, जीवा० ३ प्रति०।

अद्धहारोभासवर- पुं० *[अर्धहारावभासवर]* अर्द्धहारावभाससमुद्रा-धिपतौ देवे, जीवा० ३ प्रति०।

अद्धा- स्त्री० *[अद्धा]*
समयादिषु कालभेदेषु, संकेतादिवाचकोऽप्यस्ति। भग० ११ श० ११ उ०। अनु०।
अवधिज्ञानाऽऽवरणक्षयोपशमलाभरूपायां लब्धौ, विशे०।
अर्धतृतीयद्वीपसमुद्रान्तर्वती समयादिलक्षणः। विशे०

अद्धाउय- न० *[अद्धायुष्]*
अद्धा कालस्तत्प्रधानमायुःकर्मविशेषोऽद्धायुः। भवात्ययेऽपि कालात्ययेऽपि कालान्तरानुगामिनि, ठा०२ ठा० ३ उ०।
कायस्थितिरूपे आयुष्कर्मभेदे, ठा० २ ठा०४ उ०।
यथा- मनुष्यायुः कस्याऽपि भवात्यय एव नागच्छति। 'दोण्णं अद्धाउए पण्णत्ते। तं जहामणुस्साणं चेव पंचिंदियतिरिक्ख-जोणियाणं चेव'। ठा० २ ठा० ३ उ०।

अद्धाकाल- पुं० *[अद्धाकाल]*
अद्धासमयादयो विशेषाः, तद्रूपः कालोऽद्धाकालः।चन्द्रसूर्यादि क्रियाविशिष्टेऽर्द्धतृतीयसमुद्रान्तर्वर्तिनि समयादौ कालभेदे, भग० ११ श० ११ उ०। विशे०। आव०म०। आव०चू०।

अद्धाखिण्ण- त्रि० *[अध्वखिन्न]*
पथि बहुचलनेन परिश्रान्ते, जो पुण अद्धाखिन्नं, अतिहिं पूएइ तं दाणं। पिंड०।

अद्धाढय- पुं० *[अर्द्धाढक]*
मगधदेशसंबन्धिनि मानविशेषे, उव०।

अद्धाण- न० *[अध्वान]*
प्रयाणके, 'अद्धाणेहिं सुहेहिं पातरासेहिं जेणेव सालाडवी चोरपल्ली तेणेव उवागच्छइ'। विपा० १ श्रु० ३ अ०।

अद्धाणगमण- न० *[अध्वगमन]* पथि विहरणे, 'णण्णत्थ अद्धाण-गमणे णो कप्पइ, सगडं वा जाव संदमाणियं वा दुरूहित्ताणं गच्छित्तए'। उव०। ठा०।

अद्धाणनिग्गय- त्रि० *[अध्वनिर्गत]*
मार्गनिर्गते, वव०८ उ०।

अद्धाणपडिवन्न- त्रि० *[अध्वप्रतिपन्न]*
मार्गप्रतिपन्ने, भग०२ श०१ उ०।
(अन्तरापथे वर्तमाने) विहारं वा कुर्वति, बुह०५ उ०।

अद्धाणवायणा- स्त्री० *[अध्ववाचना]*
अध्वनि मार्गे सूत्रार्थप्रदाने, वव०१ उ०।

अद्धाणसीसय- न० *[अध्वशीर्षक]*
कान्तारादिनिर्गमरूपे प्रवेशरूपे, पिंड०।
ततः परं समुदायेन सार्थकेन सह गन्तव्यम्।तस्मिन्, वव० ४उ
निर्भयमार्गान्ते, बुह० ३ उ०।

अद्धाणिय- त्रि० *[आध्वनिक]*
पथिके, बुह०४ उ०।

अद्धापच्चक्खाण- न० *[अद्धाप्रत्याख्यान]*
कालख्यामद्धामाश्रित्य पौरुष्यादिकालमाने, आव०६ अ०।
एतच्च दशमं प्रायश्चित्तमित्थं प्रतिपादितम् –अद्धाकाले प्रत्या-ख्यानं यद्, तत्कालप्रमाणच्छेदेन भवति पुरिमार्द्धपौरुषीभ्यां मुहूर्त्तमासार्द्धमासैरिति गाथासंक्षेपार्थः । आव०चू०६ अ०।

अद्धापज्जाय- पुं० *[अद्धापर्याय]*
कालकृतधर्मे, ठा०७ ठा०।

अद्धामीसय- नं० *[अद्धामिश्रक]*
कालविषये सत्यमृषाभेदे, यथा कस्मिंश्चित्प्रयोजने सहायाँस्त्व-रयन् परिणतप्राये वासर एव रजनी वर्तत इति ब्रवीतीति। ठा० १० ठा०।

अद्धामीसिया- स्त्री० *[अद्धामिश्रिता]*

अद्धा कालः, स चेह प्रस्तावाद् दिवसो रात्रिर्वा परिगृह्यते, संमिश्रितो यथा साऽद्धा मिश्रिता। सत्यमृषाभाषाभेदे, यथा-दिवसे वर्तमान एव वदतिउत्तिष्ठ रात्रिर्जातेति, रात्रौ वा वर्तमानायामुत्तिष्ठोद्गतः सूर्य इति। पन्न० ११ पद०।

अद्धावक्कंति- स्त्री० *[अर्धापक्रान्ति]*

अर्द्धस्य समप्रविभागरूपस्य एकदेशस्य वा एकादिपदात्मक-स्यापक्रमणमवस्थानं, शेषस्य तु द्व्यादिपद०संघातस्यैकदेशस्य उर्ध्वं गमनं यस्यां रचनायां साऽर्द्धापक्रान्तिः। (समय परिभा-षया) पद०त्रयमध्यादेकदेशाऽपक्रान्तौ, विशे०।

अद्धासमय-१ पुं० *[अद्धासमय]*

अद्धा कालः, तल्लक्षणः समयः क्षणोऽद्धासमयः।

। भग० २ श० १० उ०।

अद्धायाः समयो निर्विभागो भागः समयः संकेतादिवाचकोऽपि अस्ति, ततो विशिष्यतेऽद्धारूपः समयः । अनुओ० ।

पट्टसाटिकादृष्टान्तसिद्धे सर्वसूक्ष्मे पूर्वापरकोटिविप्रमुक्ते वर्तमाने एकस्मिन् कालांशे, । अनुओ०। जीवा०।

अद्धासमय-२ पुं० *[अद्धासमय]*

षड् द्रव्याणि, तत्र पञ्च धर्मास्तिकायादयोऽस्तिकायाः, षष्ठोऽ-द्धासमयः। अस्य अस्तिकायत्वाभावः, वर्तमानक्षणलक्षणत्वेन एकत्वात्,अतीताऽनागतयोरसत्त्वात्।भग०२श०१०उ०।अनु०

बहुप्रदेशत्व एव हि अस्तिकायत्वम्। अत्र त्वतीतानागतयोः विनष्टाऽनुत्पन्नत्वेन वर्तमानस्येव कालप्रदेशस्य सद्भावाद् न त्वेवमावलिकादिकालाभावः, समयबहूत्व एव तदुपपत्तेरिति चेद्, भवतु तर्हि, को निवारयिता ? 'समयावलियमुहुत्ता दिवसमहोरत्तपक्खमासा य' इत्याद्यागमविशेध इति चेत्। नैवम्। अभिप्रायापरिज्ञानात्। व्यवहारनयमतेनैव तत्र त्वभ्युपगमात्, अत्र तु निश्चयनयमतेन तदसत्त्वप्रतिपादनात्। नहि पुद्गलस्कन्धे परमाणुसंघात इवावलिकादिगतसमय-संघातः कश्चिदवस्थितः समस्तीति तदसत्त्वमसौ प्रतिपद्यते, इत्यलं विस्तरेण। अनुओ०।

अद्धिइकरण- न० *[अधृतिकरण]*

अधिकरणे (कलहे), निसि०१० उ०।

अद्धीकारग- त्रि० *[अर्द्धीकारक]*

अर्द्धमहं करोमि, अर्द्धं पुनस्त्वया कर्तव्यमित्येवंकारके, बुह०३

अद्धुट्ठ- त्रि० *[अर्धचतुष्क]*

अर्द्धाधिकत्रिषु, पण्हा०४ अ०।

अद्धुत्त- त्रि० *[अर्धोक्त]*

अर्द्धभाषिते, 'अद्धुत्तेण उ पंचाला' वव० १० उ०।

अद्धुव- त्रि० *[अध्रुव]*

अवश्यभावि त्रियामान्ते सूर्योदयवद् ध्रुवम्। न तथा यत्तदध्रुवम्। आचा०१ श्रु०५ अ०२ उ०।

अनियतसत्त्वे, 'अधुवा अणियता असासया सटणपटण विद्धंसण धम्मा कामभोगा'। नाया०१ अ०।

अस्थिरे, अध्रुवा, अस्थिरा धनानां गणिमादीनां, धान्यानां शाल्यादीनां, कोशा आश्रया येषां स्थिरत्वेऽपि तत्परिभोगेन वर्जिताश्च ये ते तथा। पण्हा० ३ अ०।

चले, आचा० १ श्रु० ८ अ०१ उ०। दशा०।

अद्धोवमिय- न० *[अद्धौपम्य]*

औपम्यमुपमा पल्यसागररूपा तत्प्रधाना अद्धा कालोऽद्धौप-म्यम्। राजदन्तादिदर्शनादौपम्यशब्दस्य परनिपातः। पल्योपम आदि उपमाकाल, ठा० ८ ठा०।

उपमानमन्तरेण यत्कालप्रमाणमनतिशयिना गृहीतुं न शक्यते, तदद्धौपमिकमिति भावः। 'दुविहे अद्धोवमिए पन्नते। तं जहा -पलिओवमे चेव, सागरोवमे चेव'। ठा० २ ठा० ४ उ०।

**स च भेदप्रभेदाभ्यां समासतोऽष्टविधः–

अट्ठविहे अद्धोवमिए पन्नत्ते। तं जहा- पलिओवमे १ सागरो-वमे २ ओसप्पिणीए ३ उस्सप्पिणीए ४ पोग्गलपरियट्टे ५ अतीतऽद्धा ६ अनागयऽद्धा ७ सव्वऽद्धा ८।

पल्योपमसागरोपमयोरुपमाकालता स्पष्टाः, अवसर्पिण्यादीनां तु सागरोपमनिष्पन्नत्वादुपमाकालत्वं भावनीयम्। समयादि-शीर्षप्रहेलिकान्तः कालोऽनुपमाकालः। ठा० ८ ठा०।

अध- अव्य० *[अथ]*

आनन्तर्ये, निसि० ।

अधण्ण- त्रि० *[अधन्य]*

निन्द्ये, 'अधन्ना सूलग्गभिन्नदेहा'। पण्हा० ३ अ०।

'नरगा उवट्टिया अधन्ना ते वि य दीसंति'। पण्हा० १ अ०।

अधम- त्रि० *[अधम]*

जघन्ये,'निग्घिणमणसोऽहमविवागं' अधमो जघन्यो नरकादि-प्राप्तिलक्षणो विपाकः परिणामो यस्य तत्तथाविधम्। (आर्त-ध्यानम्)। आव० ४ म०।

मानेन अधमा गतिर्भवति। गर्दभोष्ट्रमहिषसूकरादिगतिः स्यात् उत्त०९ अ०।

अधम्म-१ पुं० *[अधर्म]*

गतिपरिणतानां तत्स्वभावाधरणादधर्मः। अनु०।

न धर्मोऽधर्मः। अधर्मास्तिकाये जीवपुद्गलानां स्थित्युपष्टम्भ-कारिणि, ठा० १ ठा० १ उ०।

एकोऽधर्मोऽसंख्यप्रदेशोऽपि द्रव्यार्थतया। सम० १ सम।

अधम्म-२ पुं० *[अधर्म]*

मिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषाययोगरूपे कर्मबन्धकारणे आत्म-परिणामे, । सूय०२ श्रु०५ अ० ।

अधम्म-३ पुं० *[अधर्म]*

सावद्यानुष्ठानरूपे पापे, अधर्मेण पापेन सावद्यानुष्ठानेनैव दहनाङ्कननिर्लाञ्छनादिना कर्मणा वृत्तिर्वतनं कल्पयन् कुर्वाणो विहरति, नाया० १८ अ० । रा० । विपा० । भग० । आव० ।

अधम्म-४ पुं० *[अधर्म]*

षोडशे गौणाब्रह्मणि च, तस्याऽचारित्ररूपत्वात् ।पण्हा०४अ०

अधम्मक्खाइ- त्रि० *[अधर्मख्याति]*

अधर्मेण ख्यातिर्यस्य । रा० ।

न धर्माद् ख्यातिर्यस्येति च । भग० १२ श०२ उ० ।

अविद्यमानधर्मोऽयमित्येवं प्रसिद्धिके, विपा०१ श्रु०१ अ० ।

अधम्मक्खाइ- त्रि० *[अधर्माऽऽख्यायिन्]*

अधर्ममाख्यातुं शीलं यस्य स तथा । नाया० १८ अ० ।

न धर्ममाख्यातीत्येवंशीलो वा । भग० ३ श० ७ उ० ।

अधर्मप्रतिपादके, विपा०१ श्रु०१ अ० ।

अधम्मजुत्त- न० *[अधर्मयुक्त]*

पापसंबद्धे तद्दोषाहरणभेदे, ठा० ।

अधम्मत्थिकाय- पुं० *[अधर्मास्तिकाय]*

न धारयति गतिपरिणतावपि जीवपुद्गलाँस्तत्स्वभावतयानाऽ-वस्थपयति, स्थित्युपष्टम्भकत्वात्तस्येति अधर्मः,स चासौ अस्ति-कायश्च । उत्त० ३५ अ० ।

जीवपुद्गलानां स्थितिपरिणामपरिणतानां तत्परिणामोपष्टम्भ-केऽमूर्तेऽसङ्ख्यातप्रदेशसङ्घातात्मके द्रव्यविशेषे, पन्न० पद० । अनु० । ठा० । आव० ।

अधम्मदाण- न० *[अधर्मदान]*

अधर्मकारणश्चासौ दानं च, अधर्मपोषकं वा दानमधर्मदानम् । दानभेदे,यथा-'हिंसाऽनृतचौर्योद्यतपरपरिग्रहप्रसक्तेभ्यः ।यद्दी--यते हि तेषां, तज्जानीयादधर्माय' । इति । ठा० १० ठा० ।

अधम्मदार- न० *[अधर्मद्वार]*

आश्रवद्वारे, पढमं अहम्मदारं सम्मत्तं ति बेमि ।पण्हा० १ अ० ।

अधम्मपक्ख- पुं० *[अधर्मपक्ष]*

अनुपशान्तस्थाने,'अधम्मपक्खस्स विभंगे एवमाहिए, तस्स णं इमाइं तिन्नि तेवट्ठाइ पावदुयसयाइं भवंतीति माक्खाई । तं जहा-किरियावाईणं, अकिरियावाईणं, अन्नाणियवाईणं, वेण-इय वाईणं' । सूय० २ श्रु० २अ० ।

अधम्मपजणण- त्रि० *[अधर्मप्रजनन]*

अधर्मंजनयतीति अधर्मप्रजननःलोकानामप्यधर्मोत्पादके,रा० ।

अधम्मपडिमा- स्त्री० *[अधर्मप्रतिमा]*

अधर्मविषया प्रतिमा । अश्रुतचारित्रविषयायां प्रतिज्ञायाम्, अधर्मप्रधाना वा प्रतिमा अधर्मप्रतिमा । अधर्मप्रधाने शरीरे, एका अधर्म प्रतिमा, सर्वस्य परिक्लेशकारणतयैकरूपत्वात् । । ठा०१ ठा०१ उ० ।

अधम्मपलज्जण- त्रि० *[अधर्मप्ररज्जन]*

न धर्मे प्ररज्यन्ते आसजन्ति ये ते । भग० १२ श०२ उ० ।

अधर्मप्रायेषु कर्मसु प्रकर्षेण रज्यते इत्यधर्मप्ररज्जनः ।

। नाया०१८ अ० ।

अधर्मरागिणि, विपा० १ श्रु०१ अ० ।

अधम्मपलोइ- त्रि० *[अधर्मप्रलोकिन्]*

न धर्ममुपादेयतया प्रलोकयति यः सोऽधर्मप्रलोकी,

। भग० १२ श० २ उ० ।

अधर्ममेव प्रलोकयितुं शीलं यस्यासावधर्मप्रलोकी

। नाया० १८ अ०

अधर्मस्यैव उपादेयतया प्रेक्षके(परिभाषके), । विपा० १ श्रु० १ अ० ।

अधर्मानेव–परसम्बन्धि दोषानेव प्रलोकयति–प्रेक्षते । विपा०

अधम्मराइ- त्रि० *[अधर्मरागिन्]*

अधर्मे एव रागो यस्य सोऽधर्मरागी । दशा० ६ अ० ।

अधम्मरुइ- त्रि० *[अधर्मरुचि]*

न विद्यते धर्मे रुचिर्येषां ते अधर्मरुचयः । दश० १ अ० ।

अधम्मसमुदायार- त्रि० *[अधर्मसमुदाचार]*

न धर्मरूपश्चारित्रात्मकः समुदाचारः समाचारः सप्रमोदो वाऽऽ-चारो यस्य य तथा । भग०१२ श०२ उ० ।

चारित्रविकले दुराचारे, विपा०१ श्रु०१ अ०

अवम्मसीलसमुदायार- त्रि० *[अधर्मशीलसमुदाचार]*

अधर्म एव शीलं स्वभावः समुदाचारश्च यत्किञ्चनानुष्ठानं यस्य स तथा ।स्वभावतश्चेष्टया चाऽधर्मिके, नाया० १८ अ० । विपा० ।

अधम्माणुय- त्रि० *[अधर्मानुग]*

धर्मं श्रुतरूपमनुगच्छतीति धर्मानुगः न धर्मानुगोऽधर्मानुगः । भग० १२ श० २ उ० ।

श्रुतचारित्राभावमनुगते, विपा०१ श्रु०१ अ० ।

अधर्मे कर्त्तव्येऽनुज्ञाऽनुमोदनं यस्यासावधर्मानुज्ञः, । नाया०१८ अ० ।

अधर्मानुज्ञायके, विपा०१ श्रु०१ अ० ।

अधम्मिजोय- पुं० *[अधर्मियोग]*

निमित्तवशीकरणादिप्रयोगे, सम० ३० सम ।

अधम्मिट्ठ- त्रि० *[अधर्मिष्ठ]*
अतिशयेन धर्मी धर्मिष्ठः, न धर्मिष्ठोऽअधर्मिष्ठः
। भग० १२ श० २ उ० ।
अतिशयेन निर्धर्मे निस्त्रिंशकर्मकारित्वादतिशयेन धर्मवर्जिते, नाया० १८ अ० । विपा० । रा० । सूय० ।

अधम्मिट्ठ- त्रि० *[अधर्मीष्ट]*
अधर्मिणामिष्टः। अधर्मिणां वल्लभे, भग० १२ श०२ उ० ।

अधम्मिट्ठ- त्रि० *[अधर्मेष्ट]*
धर्मः श्रुतचारित्ररूपः एवेष्टः पूजितो वा यस्य स धर्मेष्टः। न धर्मेष्टोऽधर्मेष्टः। अधर्म एव इष्टो वल्लभः पूजितो वा यस्य स तथा। अधर्मैषके, अधर्मसभाजके वा। भग०१२ श०२ उ० ।

अधम्मिय-१ त्रि० *[अधार्मिक]*
धर्मेण श्रुतचारित्रात्मकेन चरतीति धार्मिकः । न धार्मिकोऽ-धार्मिकः। भग०१२ श०२ उ० ।
अधर्मेण चरतीति अधार्मिकः। नाया० १८ अ० ।
धर्मे भवं, धर्मो वा प्रयोजनमस्येति धार्मिकम्, धार्मिकविप-र्यस्ते, ठा०४ ठा०१ उ० ।

अधम्मिय-२ त्रि० *[अधार्मिक]* अधर्मानेव–परसम्बन्धि दोषानेव प्रलोकयति–प्रेक्षते इत्येवंशीलः। विपा०
पापिनि, विपा०१ श्रु० ३ अ० ।
असंयते, ठा० ।

अधर- पुं० *[अधर]*
अधस्तनदशनच्छदे, जंबू०२ वक्ष० । नं० । उपा० । पण्हा० ।
आत्यन्तिके कारणे, बुह० ३ उ० ।

अधरगमण- न० *[अधरगमन]*
अधोगतिगमनकारणे, 'तहा गवालीकं च गरुयं भणंति अधर-गमणं' । पण्हा०२अ०

अधरिम- त्रि० *[अधरिम]*
अविद्यमानं धरिममृणद्रव्यं यस्मिंस्तत्तथा। नाया०१अ० । विपा०
उत्तमर्णाधमर्णाभ्यां परस्परं तद्दणार्थं न विवदनीयं, किन्तु अस्मत्पार्श्वे द्युम्नं गृहीत्वा ऋणमुत्कलनीयमिति राजाज्ञाविशिष्टे नगरादौ, जंबू० ३ वक्ष० । विपा० ।

अधरी- स्त्री० *[अधरी]*
पेषणशिलायाम्, 'अधरीसंठाणसंठिया दो वि तस्स पाया' । उपा० १ अ० ।

अधरीलोट्ठ- पुं० *[अधरीलोष्ट]*
शिलापुत्रके, 'अधरीलोट्ठसंठाणसंठिआओ पाएसु अंगुलीओ' । उपा० १ अ० ।

अधरुट्ठ- न० *[अधरोष्ठ]*
उपरिस्थाधःस्थोष्ठयुग्मे, । पण्हा० ३ अ० ।
अधस्तनदन्तच्छदे, । नं० ।

अधवा- अव्य० *[अथवा]*
विकल्पे, । निसि०१० उ० ।

अधारणिज्ज- त्रि० *[अधारणीय]*
अविद्यमानो धारणीयोऽधमर्णो यस्मिंस्तत्तथा। नाया०१ अ० ।
अविद्यमानाधमर्णे पुरादौ, विपा० १ श्रु० ३ अ० ।
आत्मनो धारयितुमशक्ये, भग०७ श०९ उ० ।
अयापनीये, यापनां कर्तुमात्मनोऽशक्ये च। नाया० ८ अ० ।
विपा० । जंबू० ।

अधि- अव्य० *[अधि]*
आधिक्ये, भग०१ श०१ उ० ।

अधिइ- स्त्री० *[अधृति]*
धृतेरभावे, । आव०४ अ० ।

अधिग- त्रि० *[अधिक]*
अत्यर्थे, बुह०१ उ० ।

अधिगम- पुं० *[अधिगम]*
अधिगम्यन्ते परिच्छिद्यन्ते पदार्थो येन सोऽधिगमः। आव० ३अ०
जुगवं पि समुप्पन्नं, सम्मत्तं अहिगमं विसोहेइ' ।आव० ३ अ० ।

अधिगमरुइ- पुं०स्त्री० *[अधिगमरुचि]*
सरागदर्शनार्यभेदे, पन्न०१ पद० ।
तत्स्वरूपं च– सो होइ अभिगमरुई, सुअनाणं जस्स अत्थओ दिट्ठं, एक्कारस अंगाइं, पइन्नगा दिट्ठिवाओ य। यस्य श्रुतज्ञानम् अर्थतो दृष्टं, किमुक्तं भवति ? येन श्रुतज्ञानस्य अर्थोऽधिगतो भवतीति। किं पुनस्तच्छ्रुतज्ञानम्? -एकादशाङ्गानि आचाराङ्गा-दीनि, प्रकीर्णकान्युत्तराध्ययननन्द्यध्यनादीनि, दृष्टिवादः परि-कर्मसूत्राद्यङ्गत्वेऽपि पृथगुपादानमस्य प्राधान्यख्यापनार्थम् च शब्दादुपाङ्गानि औपपातिकादीनि, स भवत्यधिगमरुचिः ।ठा०

अधिगमसम्मदंसण- न० *[अधिगमसम्यग्दर्शन]*
गुरूपदेशादिजन्ये सम्यग्दर्शनभेदे। 'अभिगमसम्मदंसणे, दुविहे पन्नत्ते। पडिवाई चेव, अपडिवाई चेव।' प्रतिपतनं शीलं प्रतिपाति, सम्यग्दर्शनमौपशमिकं, क्षायोपशमिकं वा। अप्रति-पाति क्षायिकम्। ठा० २ ठा० १ उ० ।

अधिगय-१ न० *[अधिकृत]*
अधिकारे, दश०१ अ०

अधिगय-२ त्रि० *[अधिगत]*
प्राप्ते, उत्त० १० अ० । विज्ञाते, वव०२ उ० ।

अधिगरण- न० [अधिकरण]
अधिक्रियतेऽस्मिन्निति अधिकरणम्। आधारे, यथा चक्रमस्तके घटः। निसि० १ उ०।
अधिक्रियते नरकगतियोग्यतां प्राप्यते आत्माऽनेनेत्यधिकरणम्। कलहे, प्राभृते च। बुह० १ उ०। सम०।

अधिगरणकिरिया- स्त्री० [अधिकरणक्रिया]
अधिकरणविषयिका क्रिया अधिकरणक्रिया। कलहविषयके व्यापारे, अधिकरणक्रिया द्विविधा- निर्वर्त्तनाधिकरणक्रिया, संयो-जनाधिकरणक्रिया च। तत्राद्या-खड्गादीनां तन्मुष्ट्यादीनां निर्वर्तनलक्षणा। द्वितीया तु तेषामेव सिद्धानां संयोजन-लक्षणेति। अथवा प्राणिनां दुर्गत्यधिकारित्वकारणे, क्रियामात्रे च। 'अहिगरणकिरियापवत्तगा बहुविहं अनत्थं अवमद्दं अप्पणो परस्स य करेंति'। पण्हा० २ अ०।

अधिगरणिया- स्त्री० [आधिकरणिकी]
अधिक्रियते स्थाप्यते नरकादिष्वात्मा येन तदधिकरणमनुष्ठान-विशेषो बाह्यं वस्तु चक्रखड्गादि, तत्र भवा, तेन वा निर्वृत्ता, आधिकरणिकी। पन्न० २१ पद०।
खड्गादिनिर्वर्तनलक्षणे क्रियाभेदे, सम० ७ सम०। ठा०।

अधिगरणी- स्त्री० [अधिकरणी]
कर्मारोपकरणविशेषे, यत्र लोहकारा अयोघनेन लोहानि कुट्ट-यन्ति। भग०६ श० १ उ०।

अधिगार- पुं० [अधिकार]
ओघतः प्रपञ्चप्रस्तावे, 'अहिगारो पुव्वुतो चउव्विहो बिइय-चूलियज्झयणं'। दश० १ अ०।
प्रयोजने, 'अहिगारो इह तुमो एणं'। वव०९ उ०। निसि०।
व्यापारे, । आचा०१ श्रु०२ अ०१ उ०।

अधिट्ठंत- त्रि० [अधितिष्ठत्]
निवसति, निसि०१२ उ०।

अधिट्ठावण- न० [अधिस्थापन]
संनिषद्यावेष्टित एव रजोहरणादेरुपवेशने, 'जे भिक्खू रयहरणं अहिट्ठेइ, अहिट्ठंतं वा साइज्जइ'। निसि० ५ उ०।

अधिट्ठेइत्ता- अव्य० [अधिष्ठाय]
ममेदमिति गृहीत्वेत्यर्थे, निसि० १२ उ०।

अधिमासग- पुं० [अधिमासक]
अभिवर्द्धितवर्षद्वादशभागे, 'एस अभिवड्ढियवरिसबारसभागो अधिमासगो।जो पुण ससिसूरगतिविसेसनिप्पन्नो अधिमासगो उणतीसं दिना विसंतिभागा य बत्तीसं भवंति।निसि०२० उ०

अधिवइ- पुं० [अधिपति]
प्रजानामतीव सुरक्षके, वव०१ उ०।

अधीरपुरिस- पुं० [अधीरपुरुष]
अबुद्धिमति पुरुषे, उत्त०९ अ०।

अधेकम्म- न० [अधःकर्मन्]
अधोगतिनिबन्धनं कर्म अधःकर्म। आधाकर्मणि।
तथाहि भवति साधूनामाधाकर्म भुञ्जानानामधोगतिः, तन्निबंधन प्राणातिपाताद्याश्रवेषु प्रवृत्तेः। पिंड०।

अधोहि- पुं० [अधोऽवधि]
परमावधेरधोवर्त्यवधिर्यस्य सोऽधोऽवधिः। परमावधेरधोवर्त्य-वधियुक्ते जीवे, 'अधोहि समोहएणं चेव अप्पाणेणं आया अहेलोगं जाणइ'। ठा० २ ठा० २ उ०।

अप- स्त्री० [अप्]
जल, 'पुव्वापोट्ठवया नक्खत्ते किं देवयाए पन्नत्ते? अपदेवया'। सूर० १ पाहु०।

अपइट्ठाण- पुं० [अप्रतिष्ठान]
न विद्यते प्रतिष्ठानमौदारिकशरीरादेः। कर्मणो वा यत्र सोऽप्रतिष्ठानः। मोक्षे, आचा०१ श्रु०५ अ०६ उ०।
सप्तम्यां नरकपृथिव्यां पञ्चानां कालादीनां नरकावासानां मध्य वर्तिनि नरकावासे, ठा०४ ठा० ३ उ०। सूय०।
तस्येन्द्रे च। जीवा० ३ प्रति०।
सप्तम्यां नरकावासविशेषः। पन्न० ८३।

अपइट्ठिय- त्रि० [अप्रतिष्ठित]
प्रतिष्ठानरहिते, ठा० ४ ठा० १ उ०।
क्वचिदप्रतिबद्धे, अशरीरिणि च। आचा० २ श्रु०।

अपइण्णपसरियत्त- न० [अप्रकीर्णप्रसृतत्व]
सुसंबन्धस्य सतः प्रसरणे, असंबद्धाधिकारित्वातिविस्तारयो: अभावे सत्यवचनातिशये, सम० ३५ सम। उव०।

अपएस- त्रि० [अप्रदेश]
अवयवाभावाद् निरंशे, भग०२० श०५ उ०।
निरन्वये, विशे०। ठा०।

अपंडिय- पुं० [अपण्डित]
सद्बुद्धिरहिते, बुह०१ उ०।

अपंथ- पुं० [अपथ]
अशस्त्रोपहतपृथिव्याम्, बुह०१ उ०।

अपक्क- त्रि० [अपक्व]
पाकमप्रापिते, पण्हा०५ अ०।

अपक्कोसहिभक्खणया- स्त्री० [अपक्वौषधिभक्षणता]
अपक्वाया अग्निनाऽसंस्कृताया ओषधेः शाल्यादिकायाभक्षणता भोजनमपक्वौषधिभक्षणता। भोजनत उपभोगपरिभोग व्रता-तिचारभेदे, उपा० १ अ०।

अपक्खग्गाहि(ण्)- त्रि० *[अपक्षग्राहिन्]*
न पक्षं गृह्णातीत्यपक्षग्राही। शास्त्रबाधितपक्षाग्रहणशीले, ठा० ९ ठा०।

अपगंड- *[अपगण्ड]*
अपगतं गण्डं दोषो यस्मात्तदपगण्डम्। निर्दोषे, उदकफेने च। सूय० १ श्रु० ६ अ०।

अपगंडसुक्क- त्रि० *[अपगण्डशुक्ल]*
अपगतं गण्डमपद्रव्यं यस्य तदपगतगण्डम्, तच्च शुक्लम्। निर्दोषार्जुनसुवर्णवच्छुक्ले, तथा अपगण्डमुदकफेनं तत्तुल्यमपगण्डशुक्लम्। उदकफेनवदवदाते, 'अनुत्तरं धम्ममुईरइत्ता, अनुत्तरं झाणवरं झियाइ। सुसुक्कसुक्कं अवगंडसुक्कं, संखिंदुएगंतऽवदातसुक्कं'। सूय० १ श्रु० ६ अ०।

अपचय- पुं० *[अपचय]*
अभावे, उत्त०१ अ०।

अपच्चक्ख- त्रि० *[अप्रत्यक्ष]*
अचाक्षुषे, आव०म०।

अपच्चक्खाण- पुं० *[अप्रत्याख्यान]*
न विद्यते प्रत्याख्यानमणुव्रतादिरूपं येषु। ठा० ४ ठा० १ उ०।
न विद्यते स्वल्पमपि प्रत्याख्यानं येषामुदयात्तेऽप्रत्याख्यानाः। देशविरत्यावारकेषु कषायेषु, यदभाणि- 'नाल्पमप्युत्सहेद्येषां, प्रत्याख्यानं महोदयात्। अप्रत्याख्यानसंज्ञाऽतो, द्वितीयेषु निवेशिता'। ते चत्वारः क्रोधमानमायालोभाः। कल्प०।
मनागपि विरतिपरिणामाभावे, नं०। पन्न०।

अपच्चक्खाणकिरिया- स्त्री० *[अप्रत्याख्यानक्रिया]*
अप्रत्याख्यानेन निवृत्त्यभावेन क्रिया कर्मबन्धादिकरणमप्रत्याख्यानक्रिया। भग० १ श० २ उ०।
अप्रत्याख्यानजन्ये कर्मबन्धे, अप्रत्याख्यानमेव क्रिया। अप्रत्या-ख्यानक्रियाया अभावे, भग० १ श० ९ उ०।

अपच्चक्खाणकिरिया- स्त्री० *[अप्रत्याख्यानक्रिया]*
अपच्चक्खाणकिरिया दुविहा पन्नत्ता। तं जहा-जीवअपच्चक्खाणकिरिया चेव, अजीवअपच्चक्खाणकिरिया चेव। (जीवअपच्चक्खाणकिरिया चेव त्ति) जीवविषये प्रत्याख्यानाभावेन यो बन्धादिर्व्यापारः सा जीवाप्रत्याख्यानक्रिया। तथा (अजीवअपच्चक्खाणकिरिया चेव त्ति) यदजीवेषु मद्यादिष्वप्रत्याख्यानात्। कर्मबन्धनं सा अजीवाप्रत्याख्यानक्रियेति। ठा० २ ठा० १ उ०। आव०चू०।

सा च अविरतस्य–

अपच्चक्खाणकिरिया णं भंते ! कस्स कज्जइ ? गोयमा ! अन्नयरस्स वि अपच्चक्खाणिस्स। अप्रत्याख्यानक्रिया अन्यतरस्याप्यप्रत्याख्यानिनः, अन्यतरत् अपि, न किंचिदपीत्यर्थः। यो न प्रत्याख्याति, तस्येति भावः। पन्न० २२ पद०।

भंते ! त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, वंदइत्ता नमंसइत्ता एवं वयासी- से नूनं भंते ! सेट्ठिस्स य तणुयस्स किवणस्स खत्तियस्स य समा चेव अपच्चक्खाणकिरिया कज्जइ ? हंता गोयमा ! सेट्ठियस्स० जाव अपच्चक्खाणकिरिया कज्जइ।

से केणट्ठेणं भंते !? गोयमा ! अविरइं पडुच्च, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ- सेट्ठिस्स य तणु० जाव कज्जइ।

(भंते ! इत्यादि) तत्र हे भदन्त ! इति, एवमामन्त्र्येति शेषः। अथवा- भदन्त इति कृत्वा, गुरुरितिकृत्वेत्यर्थः। (सेट्ठिस्स त्ति) श्रीदेवताध्यासितसौवर्णपट्टविभूषितशिरोवेष्टनोपेतपौरजननायकस्य (तणुयस्स त्ति) दरिद्रस्य (किवणस्स त्ति) रङ्कस्य (खत्तियस्स त्ति) राज्ञः (अपच्चक्खाणकिरिय त्ति) प्रत्याख्यानक्रियायां अभावोऽप्रत्याख्यानजन्यो वा कर्मबन्धः, (अविरइ त्ति) इच्छाया अनिवृत्तिः, सा हि सर्वेषां समैवेति। भग० १ श० ९ उ०।

'से नूनं भंते! हत्थिस्स य कुंथुस्स य समा चेव अप्पच्चक्खाणकिरिया कज्जइ ? हंता गोयमा ! हत्थिस्स य कुंथुस्स य० जाव कज्जइ। से केणट्ठेणं एवं वुच्चइ० जाव कज्जइ? गोयमा! अविरइं पडुच्च से तेणट्ठेणं० जाव कज्जइ'। भग०७ श०८ उ०।

अपच्चक्खाणि- त्रि० *[अप्रत्याख्यानिन्]*
अप्रत्याख्यातरि,अविरते यो न प्रत्याख्याति । पन्न० २२ पद० । भग०

अपच्चक्खाय- त्रि० *[अप्रत्याख्यात]*
अकृतप्रत्याख्याने, भग०८ श०५ उ०।

अपच्चय- पुं० *[अप्रत्यय]*
अविश्वासे, निसि०१९ उ०।
प्रत्ययाभावरूपे चतुर्विंशगौणालीके, पण्हा०२ अ०।
सप्तदशे गौणादत्तादाने च,तस्य अप्रत्ययकारणत्वात्।पण्हा० ३

अपच्चयकारग- त्रि० *[अप्रत्ययकारक]*
विश्वासविनाशके, पण्हा० २ अ०।

अपच्चल- त्रि० *[अप्रत्यल]*
अयोग्ये, निसि०११ उ०।
असमर्थे,अनलोऽप्रत्यलःअयोग्यएकार्थाः।निसि०११ उ०,आव

अपच्छाणुतावि- त्रि० *[अपश्चात्तापिन्]*
आलोचितेऽपराधे पश्चात्तापमकुर्वति निर्जराभागिनि आलोचना - दानयोग्ये, भग० २५ श० ७ उ०।

अपश्चात्तापी नाम यः पश्चात्परितापं न करोति-
'हा ! दुष्ठु कृतं मया यद् आलोचितमिदानीं प्रायश्चित्तं तपः कथं करिष्यामीति? किन्त्वेवं मन्यते- कृतपुण्योऽहं यत्प्रायश्चित्तं प्रतिपन्नवानिति। वव० १ उ०। ठा०।

अपच्छायमाणा- त्रि० *[अप्रच्छादयत्]*
प्रच्छादनमकुर्वति, अनिण्हवमाणा अपच्छायमाणा जहाभूयम् अवितहमसंदिद्धं एयमट्ठं आइक्खइ' नाया० १ अ०।

अपच्छिम- त्रि० *[अपश्चिम]*
न विद्यते पश्चिमोऽस्मादित्यपश्चिमः। सर्वान्तिमे, 'तित्थयराणं अपच्छिमे जयइ'। नं०।

अपश्चिमम्–चरमम्। आव० ।

चरमे मरणे, कल्प०। आव०। आव०म०।

पश्चात्कालभाविन्यः। सम० ।

पश्चिमैवामङ्गलपरिहारार्थमपश्चिम ।ठा०।

अकारस्त्वमङ्गलपरिहारार्थः। पश्चात्कालभाविनि, सम० ।

'अपच्छिमे दरिसणे भविस्सइ त्ति कट्टु' अकारस्यामङ्गल परिहारार्थत्वात्, पश्चिमं दर्शनं भविष्यति एतत्केशदर्शनमपनीतकेशावस्थस्य मेघकुमारस्य दर्शनं सर्वदर्शनं पाश्चात्यं भविष्यतीति भावः।

अथवा न पश्चिममपश्चिमं पौनःपुन्येन मेघकुमारस्य दर्शनमेतद्दर्शनेन भविष्यतीत्यर्थः। नाया० १ अ०। भग०। आव०।

अपच्छिममारणंतियसंलेहणाझूसणा- स्त्री० *[अपश्चिममारणान्तिकसंलेखनाजोषणा]*
पश्चिमैवाऽमङ्गलपरिहारार्थमपश्चिमा, मरणं प्राणत्यागलक्षणम्, इह यद्यपि प्रतिक्षणमावीचीमरणमस्ति तथापि न तद् गृह्यते, किं तर्हि ? विवक्षितसर्वायुष्कक्षयलक्षणमिति।

मरणमेवान्तो, मरणान्तः, तत्र भवा मारणान्तिकी, संलिख्यते कृशीक्रियतेऽनया शरीरकषायादीति संलेखना, तपोविशेष लक्षणा, ततः कर्मधारयादपश्चिम मारणान्तिक संलेखना।

तस्या जोषणा सेवा, अपश्चिममारणान्तिकसंलेखनाजोषणा। मरणकाले संलेखना- नाम्ना तपसा शरीरस्य कषायादीनां च कृशीकरणे,। भग० ७ श० २ उ०। कल्प०। सम०।

अपच्छिममारणंतियसंलेहणाझूसणाझूसिय- त्रि० *[अपश्चिममारणान्तिकसंलेखनाजोषणाजोषित झूषित]*
अपश्चिम मारणान्तिकसंलेखनाजोषणया जोषितः सेवितस्तथा अपश्चिममारणान्तिकसंलेखनायुक्ते, अपश्चिममारणान्तिकसंलेखनाजोषणया झूषितः क्षपित इति।

अपश्चिममारणान्तिक-क्षपितदेहे, ठा० २ ठा० २ उ०।

अपच्छिममारणंतियसंलेहणाझूसणाराहणता- स्त्री० *[अपश्चिममारणान्तिकसंलेखनाजोषणाराधनता]*
अपश्चिममारणान्तिकसंलेखनाजोषणाऽस्य आराधनमखण्डकालकरणं तद्भावोऽपश्चिममारणान्तिकजोषणाराधनता। देशोत्तरगुणप्रत्याख्यानभेदे, 'एत्थ सामायारी आसेवियगिहधम्मेण किल सावगेण पच्छा निक्खमियव्वं, एवं सावगधम्मे उज्जमिओ होइ, न सक्कई ताहे भत्तपच्चक्खाणकाले संथारसमणेण होयव्वं ति विभासा अहोत्तं' अपश्चिममारणान्तिकसंलेखनाजोषणाराधना चातिचाररहिता सम्यक्पालनीयेति वाक्यशेषः। आव०६ अ०। उव०।

अस्या अतिचारः–
तयाणंतरं च णं अपच्छिममारणंतिय संलेहणाझूसणाराहणाए पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा। तं जहा- इहलोगासंसप्पओगे १, परलोगा संसप्पओगे २, जीविया संसप्पओगे ३, मरणासंसप्पओगे ४, कामभोगासंसप्पओगे ५। उपा०१ अ०। आव०। कल्प०।

अपज्जत्त- त्रि० *[अपर्याप्त]*
अपर्याप्तकर्मोदयेनानिर्वृत्ते ठा०१ ठा०१ उ०।

तत्र द्वेधा अपर्याप्ताः-लब्ध्या करणैश्च। तत्र ये अपर्याप्तका एव सन्तो म्रियन्ते, न पुनः स्वयोग्यपर्याप्तीः सर्वा अपि समर्थयन्ति, ते लब्ध्यपर्याप्ताः, ये च पुनः करणानि शरीरेन्द्रियादीनि न तावन्निर्वर्तयन्ति, अथ चाऽवश्यं पुरस्तान्निर्वर्त्तयिष्यन्ति ते करणापर्याप्ताः।

इह च एवमागमः-लब्ध्यपर्याप्ता अपि नियमादाहारशरीरेन्द्रियपर्याप्तिपरिसमाप्तावेव म्रियन्ते, नार्वाक्। यस्मादागामिभवायुर्बद्ध्वा म्रियन्ते सर्व एव देहिनः, तच्चाहारशरीरेन्द्रियपर्याप्तिपर्याप्तानामेव बध्यत इति। नं०। पण्हा०। सम० ।

अपज्जत्तग- पुं० *[अपर्याप्तक]*
'दुविहा नेरइया पन्नत्ता। तं जहा-पज्जत्तगा चेव, अपज्जत्तगा चेव, जाव वेमाणिया'। ठा० २ ठा० २ उ०।

अपज्जत्तणाम- न० *[अपर्याप्तनामन्]*
अपर्याप्तयो विद्यन्ते येषां ते अपर्याप्ता इति कृत्वा तन्निबन्धनं नाम अपर्याप्तनाम। यदुदयाद् जन्तवः स्वयोग्यपर्याप्ति- (परिसमाप्ति)-समर्थाः न भवन्ति, तस्मिन्नामकर्मणि, सम० ।

अपज्जत्ति- स्त्री० *[अपर्याप्ति]*
पर्याप्तिप्रतिपक्षेऽर्थे, जीवा०१ प्रति०।

अपज्जवसिय- त्रि० *[अपर्यवसित]*
अनन्ते, एत्थ णं सिद्धा भगवंतो सादिया अपज्जवसिया चिट्ठंति अपर्यवसिता रागाद्यभावेन प्रतिपातासंभवात्। पन्न० २ पद०।

अपज्जुवासणा- स्त्री० *[अपर्युपासना]*
असेवनायाम्, नाया० १३ अ० ।

अपज्जोसणा- स्त्री० *[अपर्युषणा]*
अप्राप्तायामतीतायां वा पर्युषणायाम्, निसि० १० उ० ।

अपट्ठविय- स्त्री० *[अप्रस्थापित]*
अकृतप्रस्थाने, निसि० ५ उ० ।

अपडिकम्म- न० *[अप्रतिकर्मन्]*
प्रतिकर्मरहिते, 'सुण्णागारे व अप्पडिकम्मे' पण्हा० ५ अ० ।
शरीरप्रतिक्रियावर्जपादपोपगमने, ठा०२ ठा०४ उ० ।
शरीरप्रतिकर्मवर्जितम् । भग०

अपडिक्कंत- त्रि० *[अप्रतिक्रान्त]*
दोषादनिवृत्ते, उव० ।

अपडिचक्क- त्रि० *[अप्रतिचक्र]*
न विद्यते प्रति अनुरूपं समानं चक्रं यस्य तदप्रतिचक्रम् । परचक्रैरसमाने, 'अप्पडिचक्कस्स जओ होइ सया संघचक्कस्स' अप्रतिचक्रस्य चरकादि च तैरसमानस्य । नं० ।

अपडिण्ण- त्रि० *[अप्रतिज्ञ]*
नास्य मयेदमसदपि समर्थनीयमित्येवंप्रतिज्ञा विद्यतेऽस्येत्य-प्रतिज्ञः । रागद्वेषरहिते, । सूय० १ श्रु० ३अ० ३उ० । आचा० ।
नाऽस्य प्रतिज्ञा इहलोकपरलोकाशंसिनी विद्यत इत्य प्रतिज्ञः ।
ऐहिकामुष्मिकाकाङ्क्षाराहित्येनतपोऽनुष्ठातरि,सूय०१श्रु०१० अ०
न विद्यते प्रतिज्ञा निदानरूपा यस्य सोऽप्रतिज्ञः । सूय० १ श्रु०२ अ०२ उ० ।
प्रतिज्ञारहिते, आचा०१ श्रु०९ अ०२ उ० । सूय० ।
अनिदाने, यो हि वसुदेववत्सुसंयमानुष्ठानं कुर्वन् निदानं न करोति प्रतिज्ञा च कषायोदयादविरतिः । तद्यथा- क्रोधोदयात् स्कन्दकाचार्येण स्वशिष्ययन्त्रपीडनव्यतिकरमवलोक्य सबल-वाहनराजधानीसमन्वितपुरोहितोपरि विनाशप्रतिज्ञा अकारि, तथा- मानोदयाद् बाहुबलिना प्रतिज्ञा व्यधायि, यथा- कथमहं शिशून् स्वभ्रातृन् उत्पन्ननिरावरणज्ञानान् छद्मस्थः सन् द्रक्ष्यामीति, तथा- मायोदयान्मल्लिस्वामिजीवेन यथाऽपरयति विप्रलम्भो भवति तथा प्रत्याख्यानप्रतिज्ञा जगृहे । तथा-लोभो-दयाद्वाऽविदितपरमार्थाः साम्प्रतेक्षिणो यत्याभासा मासक्षणा-दिका अपि प्रतिज्ञाः कुर्वते । आचा० १ श्रु०२ अ०५ उ० ।

अपडिपुण्ण- त्रि० *[अप्रतिपूर्ण]*
गुणशून्यत्वादिभिस्तुच्छे इतरपुरुषाचीर्णत्वात् सद्गुण विरहात् तुच्छे , सूय० २ श्रु० २ अ० ।

अपडिपोग्गल- न० *[अप्रतिपुद्गल]*
दारिद्र्ये । निसि० ५ उ० ।

अपडिबज्झंत- त्रि० *[अपडिबध्यमान]*
कर्मकर्तर्ययं प्रयोगः । क्वचिदपि प्रतिबन्धमकुर्वति, वव०२ उ० ।

अपडिबद्ध- त्रि० *[अप्रतिबद्ध]*
प्रतिबन्धरहिते, 'अपडिबद्धो अनलो व्व' पण्हा० ५ अ० । महा० ।

अपडिबद्धया- स्त्री० *[अप्रतिबद्धता]*
मनसि निरभिष्यङ्गतायाम्, नीरोगत्वे, उत्त० २९ अ० ।

अपडिबद्धया- स्त्री० *[अप्रतिबद्धता]*
अप्पडिबद्धयाए णं भंते ! जीवे किं जणयइ ? अप्पडिबद्ध-याए णं निस्संगत्तं जणयइ, निस्संगत्तेणं जीवे एगे एगग्गचित्ते दिया य राओ य असज्जमाणे अपडिबद्धे यावि विहरइ ।
अप्रतिबद्धतया मनसि निरभिष्वङ्गतया निःसङ्गत्वं बहिः सङ्गाभावं जनयति, निःसङ्गत्वेन जीव एको रागादिविकलतया तत एवैकाग्रचित्तो । धर्मैकतानमना एकाग्रतानिबन्धकहेत्वभावे दिवा च रात्रौ वाऽसजन्, कोऽर्थः ? सर्वदा बहिः सङ्गं त्यजन् अप्रतिबद्धश्चापि विहरति । कोऽभिप्रायः ? विशेषतः प्रतिबन्ध विकलो मासकल्पादिनोद्यतविहारेण पर्यटति । उत्त०२९ अ० ।

अपडिबुज्झमाण- त्रि० *[अप्रतिबुध्यमान]*
शब्दान्तराण्यनवधारयति, भग०९ श० ३३ उ० ।

अपडिबुज्झमाण- त्रि० *[अप्रत्यूह्यमान]*
वैरागतमानसत्वादनपह्रियमाणमानसे, ।भग० ९ श० ३३ उ० । उव० ।

अपडियार- पुं० *[अप्रतीकार]*
व्यसनापरित्राणे, आचा० ।

अपडिरूव- त्रि० *[अप्रतिरूप]*
अपरानुवृत्त्यात्मके विनये, दश० ९ अ० १ उ० ।

अपडिलद्ध- त्रि० *[अप्रतिलब्ध]*
असंजाते, नाया० १ अ० ।

अपडिलद्धसम्मत्तरयणपडिलंभ- त्रि० *[अप्रतिलब्धसम्यक्त्वरत्नप्रति-लम्भे]* असंजातविपुलकुलसमुद्भवे, नाया० १ अ० ।

अपडिलेस्स- त्रि० *[अप्रतिलेश्य]*
अतुलमनोवृत्तिषु, 'अप्पडिलेस्सासु सामण्णरया दंता इणमेव निग्गंथं पावयणं पुरओ काउं विहरति' । उव० ।

अपडिलेहण- न० *[अप्रत्युप्रेक्षण]*
न प्रत्युप्रेक्षणमप्रत्युप्रेक्षणम् । गोचरापन्नस्य शय्यादेश्चक्षुषाऽ-निरीक्षणे, आव०६ अ० ।

अपडिलेहणासील- त्रि० *[अप्रतिलेखनाशील]*
दृष्ट्वा प्रमार्जनशीले, कल्प० ।

अपडिलेहिय- त्रि० *[अप्रतिलेखित]* (अप्रत्युपेक्षित)
जीवरक्षार्थं चक्षुषाऽनिरीक्षिते, उपा० १ अ०।

अपडिलेहियदुप्पडिलेहियउच्चारपासवणभूमि- स्त्री० *[अप्रत्युपेक्षित-दुष्प्रत्युपेक्षितोच्चारप्रश्रवणभूमि]*
अप्रत्युपेक्षिता जीवरक्षार्थं चक्षुषा न निरीक्षिता दुष्प्रत्युपेक्षिता-ऽसम्यग् निरीक्षिता उच्चारः पुरीषः प्रश्रवणं मूत्रं तयोर्निर्मित्तं भूमिः स्थण्डिलमप्रत्युपेक्षितदुष्प्रत्युपेक्षितोच्चारप्रश्रवणभूमिः। पोषधोपवासस्य तृतीयातिचारभेदे, उपा० १ अ०। आव०चू०

अपडिलेहियदुप्पडिलेहियसिज्जासंथारय- पुं० *[अप्रत्युपेक्षितदुष्प्रत्यु-पेक्षितशय्यासंस्तारक]*
अप्रत्युपेक्षितो जीवरक्षार्थं चक्षुषा न निरीक्षित उद्भ्रान्तचेतो-वृत्तितयाऽसम्यग् निरीक्षितः शय्या शयनं तदर्थं संस्तारकः। कुशकम्बलफलकादिः- शय्यासंस्तारकः। ततः पदत्रयस्य कर्मधारये भवत्यप्रत्युपेक्षितदुष्प्रत्युपेक्षितशय्यासंस्तारकः। पोषधोपवासस्य प्रथमातिचारभेदे, अतिचारत्वं चास्य उपभोगस्या-तिचारहेतुत्वात्। उपा० १ अ०। आव०चू०।

अपडिलेहियपणग- न० *[अप्रतिलेखितपञ्चक]*
तूली १ , आलिङ्गनिका २, मस्तकोपधानं ३, गल्लमसूरिका ४, आसनक्रिया ५ पञ्चके, जीत०।

अपडिलोमया- स्त्री० *[अप्रतिलोमता]*
आनुकूल्ये, भग०२५ श०७ उ०। ठा०।

अपट्ठविय- त्रि० *[अप्रस्थापित]*
अकृतप्रस्थाने, 'पुव्वण्हउ पट्ठविते अवरण्हे उट्ठितेसु य'।

अपडिवाइ- त्रि० *[अप्रतिपातिन्]*
प्रतिपतनशीलं प्रतिपाति, न प्रतिपाति अप्रतिपाति। सदाऽव-स्थायिनि, नं०।
आमरणान्तभाविनि, आव०म०।
आकेवलोत्पत्तेः स्थिरे, कल्प०। ठा०।
केवलज्ञानादर्वाग् भ्रंशमनुपयाति अवधिज्ञानविशेषे, । नं०। विशे०। आव०म०।

अपडिसंलीण- त्रि० *[अप्रतिसंलीन]*
अकुशलेन्द्रिय कषायाद्यनिरोधके, ठा०।
चत्तारि अपडिसंलीणा पन्नत्ता। तं जहा- कोहअपडिसंलीणे, मानअपडिसंलीणे, मायाअपडिसंलीणे, लोभअपडिसंलीणे।
चत्तारि अपडिसंलीणा पन्नत्ता। तं जहा-मनअपडिसंलीणे, वइअपडिसंलीणे, कायअपडिसंलीणे, इंदियअपडिसंलीणे। ठा० ४ ठा० २ उ०।
पंच अपडिसंलीणा पन्नत्ता। तं जहा-सोइंदियअपडिसंलीणे, जाव फासिंदियअपडिसंलीणे। ठा० ५ ठा० २ उ०।

अपडिसुणेत्ता- अव्य० *[अप्रतिश्रुत्य]*
प्रतिश्रवणमकृत्वेत्यर्थे, आव० ४ अ०।

अपडिहड- अव्य० *[अप्रतिहृत्य]*
अर्पणमकृत्वेत्यर्थे, बुह० ३ उ०।

अपडिहणंत- त्रि० *[अप्रतिघ्नत्]*
तद्वचनमविकुट्टयति, बुह० १ उ०।

अपडिहय- त्रि० *[अप्रतिहत]*
प्रतिघातरहिते अखण्डिते, नाया० १६ अ०।
कटकुड्यपर्वतादिभिरस्खलिते सम० १ सम।
अविसंवादके, उव०। भग०।
केनापि अनिवारिते, उत्त० ११ अ०।
अन्यैश्च लङ्घयितुमशक्ये, उत्त० ११ अ०।

अपडिहयगइ- त्रि० *[अप्रतिहतगति]*
अप्रतिहतविहारे, 'अपडिहय-गई गामे गामे य एगरायं नगरे नगरे पंचरायं दूइज्जंते य जिइंदिए'। पण्हा० ५ अ०।
संयमे गतिः प्रवृत्तिर्नहन्यतेऽस्य कथञ्चिदिति भावः।ठा०९ठा०

अपडिहयपच्चक्खायपावकम्म- त्रि० *[अप्रतिहतप्रत्याख्यातपापक-र्मन्]* प्रतिहतं निराकृतमतीतकालकृतं, निन्दादिकरणेन प्रत्या-ख्यातं च वर्जितमनागतकालविषयं पापकर्म प्राणातिपातादि येन स प्रतिहतप्रत्याख्यातपापकर्मा, तन्निषेधादप्रतिहत प्रत्याख्यात पापकर्मा। अनिषिद्धातीतानागतपाप कर्मणि, । भग० १ श० १ उ०

अपडिहयबल- त्रि० *[अप्रतिहतबल]*
अप्रतिहतं केनाप्यनिवारितं बलं यस्य स अप्रतिहतबलः,उत्त० अप्रतिहतमन्यैश्च लङ्घयितुमशक्यं बलं सामर्थ्यमस्येति अप्रति-हतबलः। सहजसामर्थ्यवति, उत्त० ११ अ०।

अपडिहयवरणाणदंसणधर- पुं० *[अप्रतिहतवरज्ञानदर्शनधर]*
अप्रतिहते कटकुड्यादिभिरस्खलिते, अविसंवादके वा। अत एव क्षायिकत्वाद्वा वरे प्रधाने ज्ञानदर्शने केवलाख्ये विशेष-सामान्यबोधात्मके धारयति यः स तथा। केवलज्ञान-दर्शनोपयुक्ते जिने, भग० १ श० १ उ०। सम०। उव०।

अपडिहयसासण- त्रि० *[अप्रतिहतशासन]*
अखण्डिताऽऽज्ञे,'अपडिहयसासणे अ सेनावई'। नाया० १६ अ० ।

अपडिहारय- पुं० *[अप्रतिहारक]*
प्रत्यर्पणायोग्ये शय्यासंस्तारकं आचा० २ श्रु० २ अ० ३ उ०।

अपडीकार- त्रि० *[अप्रतीकार]*
सूतिकर्मादिरहिते, 'किं ते सीउण्हतण्हखुहवेयण अपडीकार अडविजम्मणा निच्चभउव्विग्गवासजगाणं' पण्हा० १ अ०।

अपडुप्पण्ण- त्रि० *[अप्रत्युत्पन्न]*
अनागमिके प्रतिपत्त्यकुशले, । वव०६ उ०। निसि०चू ।

अपढम- त्रि० *[अप्रथम]*
प्रथमताधर्मरहिते, अनादौ, भग० १८ श०१ उ०।

अपढमसमय- पुं० *[अप्रथमसमय]*
द्वितीयादिके समये, ठा० २ ठा० २ उ०।

अपढमसमयउववण्णग- पुं० *[अप्रथमसमयोपपन्नक]*
प्रथमसमयोपपन्नव्यतिरिक्तेषु नैरयिकादिषु वैमानिकपर्यन्तेषु, 'नेरइया दुविहा पन्नत्ता। तं जहा-पढमसमयोववण्णगा चेव, अपढमसमयोववन्नगा चेव० जाव वेमाणिया। ठा०२ठा०२उ०

अपढमसमयउवसंतकसायवीयरागसंजम- पुं० *[अप्रथमसमयोपशा-न्तकषायवीतरागसंयम]*
न प्रथमः समयः प्राप्तो येन सोऽप्रथमसमयः, स चाऽसौ उप-शान्तकषायवीतरागसंयमश्च तथा। उपशमश्रेणिप्रतिपन्नवीत-रागसंयमभेदे, ठा० ८ ठा०।

अपढमसमयएगिंदिय- पुं० *[अप्रथमसमयैकेन्द्रिय]*
प्रथमसमयैकेन्द्रियभिन्ने, यस्यैकेन्द्रियस्यैकेन्द्रियत्वे प्रथमः समयो नाऽस्ति। ठा० १० ठा०।

अपढमसमयक्खीणकसायवीयरागसंजम- पुं० *[अप्रथमसमयक्षीण-काषायवीतरागसंयम]*
न प्रथमः समयः प्राप्तो येन सोऽप्रथमसमयः, स चाऽसौ उप-शान्तकषायवीतरागसंयमश्च तथा। उपशमश्रेणिप्रतिपन्नवीत-रागसंयमभेदे, ठा० ८ ठा०।

अपढमसमयजोगिभवत्थ- पुं० *[अप्रथमसमयसयोगिभवस्थ]*
अप्रथमो द्व्यादिः समयो यस्य सयोगित्वे स तथा, स चाऽसौ भवस्थश्चेति अप्रथमसमयसयोगिभवस्थः। सयोगिभवस्थभेदे, ठा० २ ठा० १ उ०।

अपढमसमयसिद्ध- पुं० *[अप्रथमसमयसिद्ध]*
न प्रथमसमयसिद्धोऽप्रथमसमयसिद्धः। परम्परासिद्ध विशेषणा - प्रथमसमयवर्तिनि, सिद्धत्वसमयाद् द्वितीयसमयवर्तिनि सिद्ध विशेषे, पन्न० १ पद०। ठा०।

अपढमसमयसुहुमसंपरायसंजम- पुं० *[अप्रथमसमयसूक्ष्मसंपराय-संयम]*
न प्रथमः समयः प्राप्तो येन सोऽप्रथमसमयः, स चाऽसौ सूक्ष्मः किट्टीकृतः संपरायः कषायः संज्वलनलोभलक्षणो वेद्यमानो यस्मिन्, स तथा। सरागसंयमभेदे, ठा० ८ ठा

अपण्णविय- त्रि० *[अप्रज्ञापित]*
प्रज्ञापनामप्रापिते, 'सो य सेज्जातरो अपन्नविओ, पन्नविओ वा घरे भणाति'। निसि० २ उ०

अपत्त-१ त्रि० *[अपात्र]*
अयोग्ये, बुह०१ उ०।
अभाजने, निसि० १९ उ०।

अपत्त-२ त्रि० *[अप्राप्त]*
अनधिगते, वव० ४ उ०। पिंड०।

अपत्तजात- त्रि० *[अपत्रजात]*
न विद्यते पत्रजातं पक्षोद्भवो यस्यासावपत्रजातः। अजात-पक्षोद्भवे पक्षिजाते, । सूय०१ श्रु०१४ अ० ।

अपत्तजोवणा- स्त्री० *[अप्राप्तयौवना]*
यौवनावस्थामप्राप्तायाम्, सा च गर्भं न धरति, प्राय आह्लाद-शवर्षकादार्तवाभावात्। ठा० ५ ठा० २ उ०।

अपत्तभूमिग- पुं० *[अप्राप्तभूमिक]*
न प्राप्ता भूमिका येन सोऽप्राप्तभूमिकः। दूरस्थत्वेनेष्टस्थानम् अप्राप्ते 'जोयणमादि अपत्तभूमिआ बारसओ जाव'। निसि० 'जे जोयणमादीसु ठाणेसु जाव बारस जोयणा, ते सव्वे अपत्तभूमिया भवंति' निसि० १० उ०।

अपत्तविसय- त्रि० *[अप्राप्तविषय]*
अप्राप्तोऽसंबद्धोऽसंक्लिष्टो विषयो ग्राह्यवस्तुरूपो यस्य तदप्रा-प्तविषयं लोचनम्। अप्राप्तकारिणि इन्द्रियजाते, 'लोयणमपत्त-विसयं, मणो व्व जमणुग्गहाइ सुणति' विपा० १ श्रु०२ अ०।

अपत्तिय- त्रि० *[अपात्रिक]*
अविद्यमानाधारे, भग० १६ श० ३ उ०।

अपत्थण- न० *[अप्रार्थन]*
अभिलाषस्याऽकरणे, उत्त० ३२ अ०।

अपत्थिय- त्रि० *[अप्रार्थित]*
अमनोरथगोचरीकृते, जंबू० ३ वक्ष०।

अपत्थियपत्थय- त्रि० *[अप्रार्थितप्रार्थक]*
अप्रार्थित केनाप्यमनोरथगोचरीकृतं प्रस्तावान्मरणं, तस्य प्रार्थकोऽभिलाषी। मरणार्थिनि, जंबू० ३ वक्ष०।
'कसणं एस अप्पत्थियपत्थए दुरंतपंतलक्खणे'। भग० ३ श० २ उ०। उपा०।
अप्रार्थितं प्रार्थयते यः सः। भग०

अपद-१ न० *[अपद]*
वाहनवृक्षादौ, चरणहीने, परिग्रहे, आव०चू० ६ अ०।
दाडिमाऽऽम्रबीजपूरकादौ वृक्षे, विशे०। अनुओ०।

अपद-२ न० *[अपद]*
अष्टादशे *दोषभेदे, यत्र हि पद्यबन्धेऽन्यच्छन्दोऽधिकारेऽन्य-च्छन्दोऽभिधानम्, यथाऽऽर्यापदेऽभिधातव्ये वैतालीयमभिद-ध्यात्। विशे०।

अपद- ३ न० *[अपद]*
यत्र गाथाबद्धे गीतिकापदं वानवासिकापदं वा क्रियते। बुह०१ उ०। आव०म०।

अपद-४ न० *[अपद]*
न विद्यते पदमवस्थाविशेषो यस्य सोऽपदः। मुक्तात्मनि, 'अपयस्स पयं नत्थि'। आचा० १ श्रु० ५ अ० ६ उ०।

अपदंस- पुं० *[अपदंश]*
पित्तरुचि, निसि० १ उ०।

अपदुस्समाण- त्रि० *[अप्रद्विष्यत्]*
प्रद्वेषमगच्छति, अंत० ४ वर्ग०।

अपद्दवंत- त्रि० *[अपद्रवत्]*
म्रियमाणत्वे, भग० २ श०१ उ०।

अपभु- पुं० *[अप्रभु]*
भृतकादौ, ओह०।

अपमज्जणसील- त्रि० *[अप्रमार्जनशील]*
अप्रमार्जनशीले, कल्प०।

अपमज्जियचारि- पुं० *[अप्रमार्जितचारिण्]*
अप्रमार्जिते, अवस्थाननिषीदनशयनादि करणनिक्षेपोच्चारादि परिष्ठापनं च कुर्वति, 'अपमज्जियचारीया वि भवइ' इति षष्ठं समाधिस्थानम्। दशा० १ अ०। पण्हा०।

अपमज्जियदुप्पमज्जियउच्चारपासवणभूमि- स्त्री० *[अप्रमार्जितदुष्प्रमार्जितोच्चारप्रस्रवणभूमि]*
पोषधोपवासस्यातिचारभेदे, उपा० १ अ०। आव०।

अपमज्जियदुप्पमज्जियसिज्जासंथार- पुं० *[अप्रमार्जितदुष्प्रमार्जितश-य्यासंस्तार]*
पोषधोपवासस्यातिचारे, इह प्रमार्जनं शय्यादौ सेवनकाले वस्त्रोपान्तादिनेति, दुष्टमविधिना प्रमार्जनं दुष्प्रमार्जनम्। । आव० ६ अ०। उपा०।

अपमत्त-१ त्रि० *[अप्रमत्त]*
न प्रमत्तोऽप्रमत्तः। यद्वा-नास्ति प्रमत्तमस्येत्यप्रमत्तः। आचा०। अज्ञाननिद्राविकथादिषष्ठप्रमादरहिते, गच्छा०२ अधि०।
न विद्यते प्रमत्तः प्रमादो मद्यविषयकषायविकथाप्रमादाख्यो यस्य। अप्रमादिनि, पण्हा०५ अ०।
निद्रादिप्रमादरहिते, । आचा० १ श्रु० ९ अ० २ उ०।
' सुस्सूसए आयरियमप्पमत्ते' । दश० ।
प्रयत्नवति च। 'अप्पमत्तो अहिंसओ'। दश०१ अ०।

अपमत्त-२ त्रि० *[अप्रमत्त]*
ते च प्रायो जिनकल्पिकपरिहारविशुद्धिकयथालन्दकल्पिक-प्रतिमाप्रतिपन्नाः, तेषां सततोपयोगसम्भवात्। नं०। सम० ।

अपमत्तसंजय- पुं० *[अप्रमत्तसंयत]*
सर्वप्रमादरहिते सप्तमगुणस्थानकवर्त्तिनि, सम० १४ सम०।

अपमाण- न० *[अप्रमाण]*
प्रमाणातिरिक्ते, बुह० ३ उ०।
यदा सिद्धान्ते पुरुषस्याहार उक्तोऽस्ति तस्मादाहारप्रमाणात् स्वादुलोभेन अधिकमाहारं करोति, तदाऽप्रमाणो द्वितीय आहारदोषः। उत्त ० २४ अ०।

अपमाणभोइ- त्रि० *[अप्रमाणभोजिन्]*
द्वात्रिंशत् कवलाधिकाहारभोक्तरि, पण्हा० ३ अ०।

अपमाय-१ पुं० *[अप्रमाद]*
न प्रमादोऽप्रमादः। प्रमादवर्जनलक्षणे षड्विंशयोगसंग्रहे, सम० ३२ सम०।
प्रमादाभावे, आचा० १ श्रु० ५ अ० ४ उ०।

अपमाय-२ पुं० *[अप्रमाद]*
उपयोगपूर्वकरणक्रियायाम्, निसि० १ उ०।

अपमाय-३ पुं० *[अप्रमाद]*
सम्यक्त्वपराक्रमाख्ये एकोनत्रिंशे उत्तराध्ययने, सम०३५ सम०

अपमाय-४ पुं० *[अप्रमाद]*
प्रमादवर्जनरूपायां ४९ गौणाहिंसायाम्, पण्हा० १ अ०।

अपमायपडिलेहा- स्त्री० *[अप्रमादप्रत्युपेक्षणा]*
षड्विधा अप्रमादेन प्रमादविपर्ययेण प्रत्युपेक्षणा अप्रमादप्रत्यु-पेक्षणा। अप्रमादेन प्रत्युपेक्षायाम्, छव्विहा अप्पमायपडिलेहा पन्नत्ता। तं-'अनच्चाविवं अचलितं, अनानुबंधीममोसलिं चेव। छप्पुरिमा नव खोडा, पाणीपाणविसोहणी', ठा० ६ ठा०।

अपमायभावणा- स्त्री० *[अप्रमादभावना]*
मद्यादिप्रमादानामनासेवने, आचा० २ श्रु० १५ अ०।

अपमायपडिसेवणा- स्त्री० *[अप्रमादप्रतिसेवना]*
अप्रमत्तकल्पप्रतिसेवायाम्, निसि० १ उ०।

अपमित्यक त्रि० *[अप्रमित्यक]*
षष्ठः शबलदोषः। पण्हा० १४४।

अपमेय- त्रि० *[अप्रमेय]*
प्रमाणेनापरिच्छेद्ये, पण्हा० ४ अ०।
अनंतमप्पमेयभवियधम्मचाउरंतचक्कवट्टी नमोत्थु ते अरहंतो त्ति कट्टु वंदइ। अप्रमेयः, तद्गुणानां परैरप्रमेयत्वात्। आव०म०।

अपय– न० *[अपद]*
पद्यविधौ पद्ये विधातव्येऽन्यच्छन्दोऽभिधानम्। *दोष-विशेषः। आव० ३७४।
न विद्यते पदम्–अवस्थावि–शेषो यस्य स। आचा० २३१।

अपया- स्त्री० *[अप्रजा]*

अपत्यविकलायां स्त्रियाम्, बृह० १ उ०।

अपर- पुं० *[अपर]*

न विद्यते परः प्रधानोऽस्मादित्यपरः। संयमे, आचा० १ श्रु० ३ अ० ३ उ०।

पूर्वोक्तादन्यस्मिन्, अपरा नाम जा सा पुव्विं भणिता, ततो जा अन्ना सा अपरा। निसि० २ उ०।

अपरक्कम- त्रि० *[अपराक्रम]*

न विद्यते पराक्रमः सामर्थ्यस्मिन्नित्यपराक्रमम्। जङ्घाबलपरि क्षीणे, आचा० १ श्रु० ८ अ० १ उ०।

अपरक्कममरण- न० *[अपराक्रममरण]*

न विद्यते पराक्रमः, सामर्थ्यमस्मिन्नित्यपराक्रमम्। सामर्थ्ये नष्टे मरणे, किं तत् मरणम् ? तच्च यथा- जङ्घाबलपरिक्षीणानाम् उदधिनाम्नामार्यसमुद्राणामपराक्रमं मरणमभूत्, अयमादेशाद् दृष्टान्तो, वृद्धवादादायात इति। आचा० १ श्रु० ८ अ०१ उ०।

अपरपरिग्गहिय- त्रि० *[अपरपरिगृहीत]*

अनन्यस्वामिना परिगृहीते अव्याकृते, न परोऽपरस्तेन परिगृहीतमपरपरिगृहीतम्। द्वितीयैरपरैः साधुभिः परिगृहीते, 'अव्वोगडेसु अपरपरिग्गहेसु, अपरपरिग्गहिएसु'। बृह० ३ उ०।

अपराइय-१ त्रि० *[अपराजित]*

अन्येनाऽजिते, सूय० १ श्रु० २ अ० २ उ०।

अपरिभूते, पण्हा० ४ अ०।

अपरैरन्यैरभ्युदयविघ्नहेतुभिरजिता अनभिभूता अपराजिताः। उत्त० ३६ अ०।

अपराइय-२ पुं० *[अपराजित]*

द्वासप्ततितमे महाग्रहे, । दो अपराजिया, ठा०२ ठा० ३ उ०।

अपराइय- ३ पुं० *[अपराजित]*

अनुत्तरोपपातिकदेवविशेषेषु, पन्न० १ पद०।

तद्विमाने च, जीवा० ३ प्रति०। ठा०।

अपराइय-४ पुं० *[अपराजित]*

सप्तमे प्रतिवासुदेवे, कल्प०।

अपराइय-५ पुं० *[अपराजित]*

जम्बूद्वीपस्य चतुर्थे, लवणसमुद्रस्य धातकीखण्डस्य पुष्करोदसमुद्रस्य कालोदस्य समुद्रस्य च द्वारे, जीवा० ३ प्रति०।

अपराइय-६ पुं० *[अपराजित]*

श्रीऋषभस्वामिनां त्रिषष्टितमे पुत्रे, कल्प०।

अपराइय-७ न० *[अपराजित]*

स्वनामख्याते चतुर्दशपूर्वधरे आचार्ये च, मेरोरुत्तरे रुचकपर्वतस्य कूटभेदे, ठा० ८ ठा०।

अपराइया-१ स्त्री० *[अपराजिता]*

महावत्साभिधानविजयक्षेत्रे वर्तमाने पुरीयुग्मे,। ठा० २ ठा० ३ उ०

वप्रकावतीविजयक्षेत्रे वर्तमाने पुरीयुगले च।ठा०२ ठा० ३उ०

अपराइया-२ स्त्री० *[अपराजिता]*

अपराजिता राजधानी, वैश्रमणकूटो नाम वक्षस्कारादिः। जंबू० ४ वक्ष०।

अपराइया- ३ स्त्री० *[अपराजिता]*

दशमरात्रौ, जंबू० ७ वक्ष०। कल्प०।

अपराइया-४ स्त्री० *[अपराजिता]*

अङ्गारस्य महाग्रहस्याग्रमहिष्याम्, ठा० ४ ठा०२ उ०।

सर्वेषां ग्रहादीनां चतुर्थी अग्रमहीषी अपराजिता, जीवा० ३ प्रति०

अपराइया-५ स्त्री० *[अपराजिता]*

रुचकवासिन्यामष्टम्यां दिक्कुमारीमहत्तरिकायाम्, जंबू०५ वक्ष०। आव०म०। ठा०। आव०चू०।

अपराइया-६ स्त्री० *[अपराजिता]*

अष्टमबलदेववासुदेवयोर्मातरि, आव० १ अ०।

अपराइया-७ स्त्री० *[अपराजिता]*

अष्टमतीर्थकरस्य निष्क्रमणशिबिकायाम्, सम० ७२ सम०।

अपरिआइत्तए- अव्य० *[अपर्यादाय]*

अगृहीत्वेत्यर्थे, भग० २५ श० ७ उ०।

अपरिआविय- त्रि० *[अपरितापित]*

स्वतः परतो वाऽनुपजातकाय-मनःपरितापे, आव०।

अपरिकम्म- त्रि० *[अपरिकर्मन्]*

साधुनिमित्तमालेपनादि-परिकर्मवर्जिते, निसि०।

अपरिक्कम- त्रि० *[अपराक्रम]*

पराक्रमरहिते, अपराक्रमो निष्पादितस्वफलाभिमान विशेष रहितत्वात्, अचङ्क्रमणतो वा। नाया० १ अ०।

अपरिक्खदिट्ठ- त्रि० *[अपरीक्ष्यदृष्ट]*

अविमृश्योक्ते, 'अपरिक्खदिट्ठं ण हु एव सिद्धी'। सूय० १ श्रु० ७ अ०।

अपरिक्खिय-१ त्रि० *[अपरीक्षित]*

अपरिक्खिओ पुव्वद्धं अपरिक्खिउं अनालोच्य आयो लाभः प्राप्तिरित्यर्थः। व्ययो लब्धस्य प्रणाशः। ते च आयव्वए अनालोचितं पडिसेवमाणस्स अपरिक्खपडिसेवणा भवतीत्यर्थः। अपरिच्छ त्ति गतं। निसि० १ उ०।

अपरिक्खिय-२ अव्य० *[अपरीक्ष्य]*

अनालोच्येत्यर्थे, निसि० १ उ०।

अपरिखेदितत्त- न० *[अपरिखेदितत्व]*

अनायाससम्भवात्मके चतुस्त्रिंशे बुद्धवचनातिशये, उव०।

अपरिग्गह- पुं० *[अपरिग्रह]*

न विद्यते धर्मोपकरणाद् ऋते शरीरोपभोगाय स्वल्पोऽपि परिग्रहो यस्य स तथा। प्रत्याख्यातपरिग्रहे साधौ, सूय० १ श्रु० १ अ०४ उ०।

'अपरिग्गहा अणारंभा, भिक्खू ताणं परिव्वए'। सूय० १ श्रु० १ अ० ४ उ०। आचा०।

न विद्यते परि समन्तात् सुखार्थं गृह्यत इति परिग्रहो यस्याऽसावपरिग्रहः। सूय० १ श्रु० ५ अ० २ उ०।

धनादिरहिते, पण्हा० ३ अ०।

अपरिग्गहसंवुड- त्रि० *[अपरिग्रहसंवृत]*

धनादिरहिते इन्द्रियसंवरेण च संवृते, पण्हा० ३ अ०।

अपरिग्गहा- स्त्री० *[अपरिग्रहा]*

न विद्यते परिग्रहः कस्यापि यस्याः साऽपरिग्रहा। बुह०६ उ०। साधारणस्त्रियाम्, 'अपरिग्गहाणियाए सेवगपुरिसो उ कोइ आलत्तो'। वव०२ उ०।

अपरिग्गहिया- स्त्री० *[अपरिगृहीता]*

वेश्यायामन्यसत्कायां गृहीतभाटिकुलाङ्गनायाम्, अनाथायाम्, उत्त०। आव०।

देवपुत्रिकायां, घटदास्यां च। 'अपरिग्गहिया नाम जो मातादीहिं न परिग्गहिया, अव्विं कुलटा य सा। अन्ने पुण भणंति- देवपुत्तिया घडदासी वा-एवमादि, सो पुण भाडीए वा अभाडीए गच्छति, जो भाडीए गच्छति, तस्स जदि अन्नेणं पढमं भाडी दिन्नो सा न वट्टति परनियतस्स गंतुं, जा पुण अभाडीए गच्छति, सा जइ अन्नेणं भणिओ- अज्ज अहं तुमए समं सुविस्सामि, ताए य पुच्छित्तं तस्स न व त्ति अंतराइयं काउं'। आव०चू०५ उ०।

अपरिग्गहियागमण- न० *[अपरिगृहीतागमन]*

अपरिगृहीतायां गमनमपरिगृहीतागमनम्। अपरिगृहीतया सह मैथुनकरणस्वरूपे अस्वदारसन्तोषाख्यचतुर्थाणुव्रतातिचारभेदे, अतिचारताऽस्य अतिक्रमादिभिः। उपा० १ अ०।

परदारत्वेन रूढत्वात्। आव०

अपरिचत्तकामभोग- पुं० *[अपरित्यक्तकामभोग]*

न परित्यक्ताः कामभोगा येन। गृहीतकामभोगे, कामो च शब्दरूपे, भोगाश्च गन्धरसस्पर्शाः, कामभोगाः। अथवा-काम्यन्त इति कामाः, मनोज्ञा इत्यर्थः। ते च ते भुज्यन्त इति भोगाश्च शब्दादय इति कामभोगाः। न परित्यक्ताः कामभोगा येन स तथा। ठा० २ ठा० ४ उ०।

अपरिच्छ- त्रि० *[अपरीक्ष]*

युक्तपरीक्षाविकले, वव० १० उ०।

अपरिच्छण्ण- त्रि० *[अपरिच्छन्न]*

परिच्छदरहिते, वव० ३ उ०।

परिवाररहिते, वव०१ उ०।

अपरिच्छय- त्रि० *[अपरीक्षक]*

उत्सर्गापवादयोरायव्ययावनालोच्य प्रतिसेवमाने, जीत०।

अपरिणय-१ त्रि० *[अपरिणत]*

न परिणतं रूपान्तरमापन्नमपरिणतम्। स्वरूपेणावस्थिते परिणाममप्राप्ते, यथा दुग्धं दुग्धभाव एवावस्थितं दधिभावम् अनापन्नमपरिणतम्। पिंड०।

स्वभाववर्णे, निसि० १७ उ०।

अपरिणय-२ त्रि० *[अपरिणत]*

अपरिणतमिति यद्देयं न सम्यगचित्तीभूतं दातृग्राहकयोर्वा न सम्यग्भावोपेतम्। आचा० २ श्रु० १ अ० ७ उ०।

अपरिणामग-पुं० *[अपरिणामक]*

न विद्यते परिणामो यदुक्तार्थ-परिणमनं यस्य तथा। वव० १ उ०।

उत्सर्गैकरुचौ पुरुषे, नं०। जीवा०१ प्रति०।

यो द्रव्यक्षेत्रकालभावकृतं तद् न श्रद्दधाति तं तथा अश्रद्दधतं जानीहि अपरिणामकं साधुम्। बुह० १ उ०।

अपरिणिव्वाण-न० *[अपरिनिर्वाण]*

परि समन्ताद् निर्वाणं सुखं परिर्निवाणं, न परिनिर्वाणमपरिनिर्वाणम्।समन्तात् शरीर मनःपीडाकरे,आचा०१ श्रु०१ अ०६उ

अपरिण्णत्त-त्रि० *[अपरिज्ञप्त]*

अज्ञापिते, कल्प०।

अपरिण्णाय- त्रि० *[अपरिज्ञात]*

ज्ञपरिज्ञया स्वरूपोऽनवगते, प्रत्याख्यानपरिज्ञया चाप्रत्याख्याते, ठा०५ ठा०२ उ०। आचा०।

अपरितंत-त्रि० *[अपरितान्त]*

अपरितान्ते परिश्रममगच्छति, नं०। पण्हा०। पंच० भा०।

'अपरितन्तो सुत्तत्थतदुभएसु'। पंच० चू०।

अपरितंतजोगि-त्रि० *[अपरितान्तयोगिन्]*

अपरितान्तोऽविश्रान्तो योगः समाधिर्यस्य सोऽपरितान्तयोगः। स्वार्थिके न्नन्तत्वाच्चापरितान्तयोगी। अंत० ७ वर्ग।

अविश्रान्तसमाधौ, अणु० ३ वर्ग।

अपरितान्ता अश्रान्ता योगा मनः प्रभृतयः सदनुष्ठानेषु यस्य स तथा, तत अपरिश्रान्तसंयमे प्रयते, पण्हा० १ अ०।

अपरिणतावणया- स्त्री० *[अपरितापनता]*

शरीरपरितापानुत्पादने, भग० ५ श०९ उ० ।

अपरिताविय-त्रि० *[अपरितापित]*

स्वतः परतो वाऽनुपजातका-यमनःपरितापे, जीवा० ३ प्रति० ।

अपरित्त- पुं० *[अपरीत]*

साधारणशरीरे, ठा० ३ ठा० २उ० ।

अनन्तसंसारे वा जीवे, भग० ६ श० ३ उ० ।

अपरित्ते दुविहे पन्नत्ते। तं जहा कायअपरित्ते य, संसारअपरित्ते य। कायापरीतोऽनन्तकायिकः, संसारापरीतः सम्यक्त्वादिना-ऽकृतपरिमितसंसारः। पन्न० १८ पद० ।

कायपरीतः साधारणः, संसारापरीतः कृष्णपाक्षिकः। जीवा० २ प्रति० ।

तत्र- संसरापरीतो द्विधा-अनाद्यपर्यवसितो यो न कदाचनापि संसारव्यवच्छेदं करिष्यति, यस्तु करिष्यति सोऽनादि सपर्य-वसितः। पन्न० १८ पद० ।

अनादिकोऽपर्यवसितो येन जातुचिदपि सिद्धिं गन्ता, अनादिको वा सपर्यवसितो भवविशेषः। जीवा० २ प्रति० ।

अपरिभुत्त– त्रि०अपरिभुक्त,

अनाक्रान्तः। ओह० ५७ ।

अपरिभूय-त्रि० *[अपरिभूत]*

अपरिभवनीये, ठा०७ ठा० ।

अपरिभोग- पुं० *[अपरिभोग]*

परिभागाभावे, ठा० ५ ठा० २ उ० । निसि० ।

अपरिमाण-१ त्रि० *[अपरिमाण]*

न विद्यते परिमाणं यस्य स तथा। श्रेत्रतः कालतो वा इयत्तारहिते, अपरिमाणं वि आणाइ, इहमेगेसिमाहियं। सूय० १ श्रु० १ अ० ४ उ० । निसि० ।

अपरिमाण-२त्रि० *[अपरिमाण]*

अपरिमाण–अनन्त। आचा०

अपरिमिय- त्रि० *[अपरिमित]*

अपरिमाणे, न परिमितोऽपरिमितः। अनुओ० ।

परिमाणरहिते, अपरिमियमहिच्छकलुसमतिवाउवेउद्धम्ममाणं अपरिमिता अपरिमाणा ये महेच्छा बृहदभिलाषा अविरता लोकास्तेषां कलुषाऽविशुद्धा मतिः स एव वायुवेगस्तेन उत्पा-द्यमानं यत्तत्तथा। पण्हा० ३ अ० । आव० ।

बृहति, 'अपरिमियं च वसाणे, कव्वं गज्जं ति', दश० २अ० ।

अपरिमियपरिग्गह-पुं० *[अपरिमितपरिग्रह]*

अपरिमितश्चासौ परिग्रहणं परिग्रहः। परिमाणरहितपरिग्रहे, आव० ६ अ० ।

अपरिमियबल- त्रि० *[अपरिमितबल]*

अपरिमितं बलं यस्य सोऽपरिमितबलः। निर्विशेषवीर्यान्तरा-यक्षयादनन्तबलशालिनि, ततो बला बलभद्दा, अपरिमियबला जिणवरिंदा। विशे० । सूय० ।

अपरिमियबलवीरियजुत्ते अपरिमितानि बलादीनि तैर्युक्तो, यः स तथा। उपा० २ अ० ।

अपरिमियमणंततण्हा-स्त्री० *[अपरिमितानन्ततृष्णा]*

अपरिमाणद्रव्यविषया अनन्ता वाऽक्षया या तृष्णाऽविद्यमान-द्रव्याऽऽयेच्छा। अपरिमतवाञ्छायाम्, पण्हा० ३ अ० ।

अपरिमियसत्तजुत्त- त्रि० *[अपरिमितसत्त्वयुक्त]*

अपरिमितमियत्तारहितं यत्सत्त्वं धृतिबलं तेन युक्तः। अपरिमित धैर्ये, बुह० ३ उ० ।

अपरियाइत्ता-अव्य० *[अपर्यादाय]*

परितः समन्तादगृहीत्वेत्यर्थे, ठा० २ ठा० १ उ० ।

सामस्त्येनागृहीते, ठा० १ ठा० १ उ० ।

अपरियार- त्रि० *[अपरिचार]*

प्रविचारणा मैथुनोपसेवारहिते, अप्रविचारे, पन्न० ३४ पद० ।

अपरिसाइ- पुं० *[अपरिस्राविन्]*

परिस्रवितुं शीलमस्य परिस्रावी। न परिस्रावी अपरिस्रावी। द्रव्यतः स्रावरहिते तुम्बकादौ, भावतः श्रुतार्थक्षरणाकारकेऽनु-योगदानयोग्ये। बुह० ।

परिस्रवति आस्रवति कर्म बध्नातीत्येवंशीलः परिस्रावी, तन्निषे-धादपरिस्रावी।अबन्धके निरुद्धयोगे,अयं च पञ्चमः स्नातकभेदः उत्तराध्ययनेषु त्वर्हन् जिनः केवलीत्ययं पञ्चमो भेद उक्तः, अपरिस्रवीति तु नाधीतम्। भग० २५ श० ६ उ० । ठा० ।

न परिस्रवति नालोचकदोषानुपसृत्याऽन्यस्मै प्रतिपादयति, य एवं शीलः सोऽपरिस्रावी। आलोचकदोषाऽप्रख्यापके आलो-चनां प्रतीच्छके, ''जो अन्नयस्स उ दोषे न कहेइ, अपरिस्साई सो होइ'' ठा० ८ ठा। वव० ।

यो न परिस्रवति परिकथितात्मगुह्यजलमित्येवं शीलोऽपरि-स्रावी। आलोचनामाश्रित्य आचाराङ्गोक्ततृतीयभङ्गतुल्यइत्यर्थः। गच्छा० १ ।

अपरिसाडि-पुं० *[अपरिशाटि]*

परिशाटिवर्जिते,पण्हा० १ अ० ।

शश्यासंस्तारके, निसि० २ उ० ।

फलकादिमये, बुह० ३ उ० ।

अनवयोज्झने च, ''अपरिसाडिं अक्खोवंजणवणामुलेवणभूयं ति''। भग० ७ श० १ उ० ।

अपरिसाडिय-त्रि० *[अपरिशाटि]*
परिशाटरहिते, उत्त० १ अ०।
परिशाटिवर्जितम्। पण्हा०।
अपरिसुद्ध-त्रि० *[अपरिशुद्ध]*
सदोषे, अयुक्तियुक्ते, आव० १ अ०।
अपरिसेस-त्रि० *[अपरिशेष]*
निःशेष, पण्हा० २ अ०।
अपरिहारिय-पुं० *[अपरिहारिक]*
न परिहारिकोऽपरिहारिकः ।पार्श्वस्थावसन्नकुशीलसंसक्त यथाच्छन्दरूपे, आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ०।
मूलोत्तरगुणदोषामपरिहारके,मूलोत्तरगुणानां वाऽधारके, अन्य तीर्थिकगृहस्थे वा। निसि० २ उ०।
अपरोवतावि-पुं० *[अपरोपतापिन्]*
साधूनां वर्णवादिन। पंच० चू०।
अपलिउंचमाण-त्रि० *[अप्रतिकुञ्चयत्]*
अगोपयति, आचा० २ श्रु० ५ अ० १ उ०।
अपलिउंचि-त्रि० *[अपरिकुञ्चिन्]*
अमायाविनि,। वव० १ उ०।
अपलिउंचिय-१ त्रि० *[अपरिकुञ्च्य]*
न परिकञ्च्यमपरिकुञ्च्यम्। अकौटिल्ये, वव० १ उ०।
अपलिउंचिय-२ अव्य० *[अपरिकुञ्च्य]*
मायामकृत्वेत्यर्थे, वव० १ उ०। निसि०।
अपलिच्छण्ण- त्रि० *[अपरिच्छन्न]*
परिच्छदरहिते। वव० ३ उ०।
अपलिमंथ-पुं० *[अपरिमन्थ]*
परिमन्थः स्वाध्यादिकृतिस्तदभावोऽपरिमन्थः । उत्त०।
स्वाध्यायादौ निरालस्ये। उत्त० २९ अ०।
अपलीण- त्रि० *[अप्रलीन]*
असंबद्धे, सूय० १ श्रु० १ अ०।
अपवग्ग-पु० *[अपवर्ग]*
जन्ममरणप्रबन्धोच्छेदतया सर्वःदुखप्रहाणलक्षणे मोक्षे, । सूय० १ श्रु० १३ अ०। संथा०।
अपसंसणिज्ज- त्रि० *[अप्रशंसनीय]*
साधुजनैः प्रशंसां कर्तुमोग्ये, तं०।
अपसज्झ-त्रि० *[अप्रसह्य]*
अप्रधृष्ये, वव० ७ उ०।
अपसज्झपुरिसाणुग-त्रि० *[अप्रसह्यपुरुषानुग]*
अप्रधृष्टपुरुषानुसारिणि, । वव० २ उ०।
गणिणी गुणसंपण्णाऽपसज्झपुरिसाणुगा'। वव० २ उ०।

अपसत्थ-त्रि० *[अप्रसस्त]*
अशोभने, आव०५ अ०। विशे०। भग०। वव०।
अश्रेयसि, अनादेये, ठा० ३ ठा० ३ उ०।
बलवर्णादिनिमित्तं प्रतिसेविनि, वव० १० उ०।
अपसत्थखेत्त-न० *[अप्रशस्तक्षेत्र]*
शरीरादक्षेत्रे, निसि० १० उ०।
अपसत्थदव्व-न० *[अप्रशस्तद्रव्य]*
अस्थ्यादौ अशोभनद्रव्ये, निसि० ११ उ०।
अपसत्थलेस्सा- स्त्री० *[अप्रशस्तलेश्य]*
कृष्णनीलकापोतासु तिसृषु लेश्यासु, उत्त० ३४ अ०।
अपसारिया-स्त्री० *[अपसारिका]*
पटालिकायाम्, बुह० २ उ०।
अपसु-पुं० *[अपशु]*
द्विपदचतुष्पदादि (परिग्रह) रहिते, आचा० २श्रु० ७अ०१ उ०
अपस्समाण-त्रि० *[अपश्यत्]*
अनीक्षमाणे, । सम० ३० सम०।
अपहिट्ठ-त्रि० *[अप्रहृष्ट]*
अहसति, दश० ५ अ० १ उ०।
अपहुव्वंत- त्रि० *[अप्रभुवत्]*
अप्रभाववति, वव० १० उ०।
अपाइया-स्त्री० *[अपात्रिका]*
पात्ररहितायाम् (निर्ग्रन्थ्याम्), बुह० ५ उ०।
अपाउड- त्रि० *[अप्रावृत]*
न विद्यते प्रावृतं प्रावरणं यस्येत्यप्रावृतकः। ठा० ५ ठा० १ उ०।
औपक्षिकाद्यपरितनोपकरणरहिते, बुह० ५ उ०।
अपाणय-त्रि० *[अपानक]*
जलवर्जिते, जंबू० २ वक्ष०।
' छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं'। जंबू० २ वक्ष०।
पानकसदृशेषु शीलतत्वेन दाहोपशमहेतुषु स्थालीपानकादिषु, गोशालकसम्मतपदार्थेषु च। भग० १५ श० १ उ०।
पानकाहारवर्जिते, जंबू० ४ वक्ष०।
पानीयपानपरिहारवति, ठा० ६ ठा०।
अपाय-त्रि० *[अपाद]*
विशिष्टच्छन्दरचनायोगात् पादवर्जिते, दश० १ अ०। उत्त०।
अपायच्छिण्ण-त्रि० *[अपादच्छिन्न]*
अच्छिन्नचरणे, निसि० १४ उ०।
अपार-त्रि० *[अपार]*
अनन्ते, सम० ।

अपारंगम-त्रि० *[अपारङ्गम]*

पारस्तटः परकूलं तद् गच्छतीति पारङ्गमः, न पारङ्गमोऽपारङ्गमः। पारगतोपदेशाभावादपारंगमे, एते कुतीर्थिकादयः अपारङ्गमा इत्यादि। पारगतोपदेशाभावादपारङ्गता इति भावनीयम्। न च ते पारगतोपदेशमृते पारङ्गमनायोद्यता अपि पारं गन्तुमलम्। अथवा गमनं गमः, पारस्य पारे वा गमः पारगमः। सूत्रेत्वनुस्वारोऽलाक्षणिकः, न पारगमोऽपारगमनाय ते न भवन्तीत्युक्तं भवति। ततश्चानन्तमपि संसारान्तर्वत्तिन एवासते। यद्यपि पारगमनायोद्यमयन्ति, तथापि ते सर्वज्ञोपदेशविकलाः। स्वरुचिविरचितशास्त्रवृत्तयौ नैव संसारपारं गन्तुमलम्। आचा० १ श्रु० २अ० ३उ०।

अपाव-त्रि० *[अपाप]*

अपगताशेषकर्मकलङ्के, सूय० १ श्रु० १ अ० ३उ०।

अपावभाव-त्रि० *[अपापभाव]*

लब्ध्ययाद्यपेक्षारहिततया शुद्धचित्ते, दश० ६अ० १ उ०।

अपावमाण-त्रि० *[अप्राप्नुवत्]*

अनासादयति, ओह०।

अपावय-पुं० *[अपापक]*

शुभचिन्तारूपे प्रशस्तमनोविनये, ठा० ७ ठा०।

अपापवाक्प्रर्वतनरूपे वाग्विनये, भग० २५ श०७ उ०।

अपावा-स्त्री० *[अपावा]*

अपापाऽपरनाम्न्यां पुर्याम्, यत्र श्रीमहावीरस्वामी निर्वृत्तः।ठा०

अपास-पुं० *[अपाश]*

अबन्धने, आचा० १ श्रु० १ अ० ३ उ०।

अपासत्थया-स्त्री० *[अपार्श्वस्थता]*

न पार्श्वस्थोऽपार्श्वस्थस्तस्य भावस्तत्ता। पार्श्वस्थता परिहारे, अनया चागमिष्यद्भद्रताकारणानि कुर्वता आशंसाप्रयोगो न विधेयः। ठा० १०ठा०।

अपासिऊण- अव्य० *[अदृष्ट्वा]*

अनालोच्येत्यर्थे, निसि० १ उ०।

अपि--अव्य० *[अपि]*

सम्भावने, उत्त० ४उ०। ठा०।

बाढार्थे, रा०।

अपिट्टणया- स्त्री० *[अपिट्टनता]*

यष्ट्यादिताडनपरिहारे, भग० ७ श० ६उ०।

अपिय--त्रि० *[अप्रिय]*

अप्रीतिकरे, भग० ६ श० ३३ उ०।

अप्रियदर्शने, जीवा०१ प्रति०।

'अचियत्तं त्ति वा अपियत्तं ति वा एगट्ठं' वव० २ उ०

अपिवणिज्जोदग-पुं० *[अपानीयोदक]*

अपाव्यजले मेघे, भग० ७ श० ६ उ०।

अपिसुण-त्रि० *[अपिशुन]*

छेदनभेदनयोरकर्तरि, दश० ६ अ० ३ उ०।

अपीइकारग- त्री० *[अप्रीतिकारक]*

अमनोज्ञे, ठा० ३ठा० १ उ०।

अपीइतर- त्री० *[अप्रीतितर]*

अमनोज्ञतरे, विपा० १ श्रु० १ अ०।

अपुच्छिय-त्रि० *[अपृष्ट]*

पृच्छामगते, 'अपुच्छिओ न भासिज्जा, भासमाणस्स अंतरा। पिट्ठिमंसं न खाइज्जा, मायामोसंविवज्जए' । दश० ८ अ०।

अपुज्ज-त्रि० *[अपूज्य]*

अवन्दनीये, आव० ३ अ०।

अपुट्ठ- त्रि० *[अपुष्ट]*

दुर्बले, बृह० ३ उ०।

अपुष्कले, सूय० १ श्रु० १४ अ०।

अपुट्ठ-त्रि० *[अपृष्ठ]*

अज्ञीप्सिते, भग० ३ श० १ उ० ।

अपुट्ठधम्म-पुं० *[अपुष्टधर्मन्]*

अपुष्टोऽपुष्कलः सम्यगपरिज्ञातो धर्मः श्रुतचारित्राख्यो दुर्गतिप्रसृतजन्तुधरणस्वभावो येनासावपुष्टधर्मा। अगीतार्थे, सम्यगपरिणतधर्मपरमार्थे, सूय० १ श्रु० १४ अ० ।

अपुट्ठलाभिय-पुं० *[अपृष्टलाभिक]*

न पृष्टलाभिकोऽपृष्टलाभिकः। हे साधो! किं ते दीयते? इत्यादि प्रश्नमन्तरेण भिक्षां लभमाने भिक्षाचरकभेदे, धर्मधर्मिणोरभेदोपचाराद् भिक्षाचर्या भेदे च । उव०।

अपुट्ठवागरण- न० *[अपृष्टव्याकरण]*

अपृष्टे प्रतिपादने, । भग० ३ श० १ उ०।

अपुणच्चव-पुं० *[अपुनश्च्यवनं]*

च्यवोऽपुनश्च्यवः, देवेभ्यश्च्युत्वा तिर्यगादिषूत्पत्त्यभावे,उत्त०३अ

अणुब्भव- त्रि० *[अपुनर्भव]*

पुनर्भवसम्भवरहिते, यतः पुनर्जन्म न भवति, (ब्रह्मचर्यं), ततः पुनर्भवसम्भवाऽभावात्। पण्हा० १ अ०।

अपुणरागम-त्रि० *[अपुनरागम्]*

नित्ये, जन्मादिरहिते च। दश० १ चू०।

अपुणरावत्तय-पुं० *[अपुनरावर्तक]*

कर्मबीजाभावाद्भवावताररहितम्। भग० ७।

अविद्यमान पुनर्भवावतारे, सिद्धिगत्याख्येऽर्थे, पुनर्भवबीजकर्माऽभावात्,तत्प्राप्तानां पुनरजननात्।सम०१ सम। उव०।

'अपुनरावत्तयं सिद्धगइणामधेयं ठाणं संपाविउकामेणं',। भग० १ श० १ उ०।

अपुणरुत्त-त्रि० *[अपुनरुक्त]*
पुनरुक्तिदोररहिते, 'अपुणरुत्तेहि महावित्तेहि संथूणइ'। रा०। जंबू०। आव०म०।

अपुण्ण-१ त्रि० *[अपुण्य]*
अविद्यमानपुण्ये, विपा० १ श्रु० ७अ०।
तीव्राऽसातोदये वर्तमाने, सूय० १ श्रु० अ०१ उ०।
अनार्ये पापाऽऽचारे, आचा० १ श्रु० ९अ० १ उ०।

अपुण्ण-२ त्रि० *[अपूर्ण]*
पूर्वव्यतिरिक्ते अपूर्णाः, अपूर्णमनोर्थत्वात्। विपा०१श्र०७अ०

अपुण्णकप्प-पुं० *[अपूर्णकल्प]*
असमाप्तकल्पे, वव० ४ उ०।

अपुण्णकप्पिय- पु० *[अपूर्णकल्पिक]*
गीतार्थे असहाये, वव० १ उ०।

अपुत्त- त्रि० *[अपुत्र]*
सुतरहिते, स्वजनबन्धुरहिते, निर्ममे च। आचा० २ श्रु० ६ अ० २ उ०।

अपुप्फिय– त्रि० *[अपुष्पितं]*
तरिकारहितम्। ओह० १२२।

अपुम-पुं० *[अपुंस्]*
नपुंसके, ओह०। बुह०।
'अहमेत्तिए अुपमं भणिओ परिसेवामि'। निसि० १ उ०।

अपुरक्कार-पुं० *[अपुरस्कार]*
पुरस्करणं पुरस्कारः। गुणवानयमिति गौरवाऽध्यारोपः, न तथाऽपुरस्कारः। अवज्ञाऽऽस्पदत्वे,। उत्त० २९ अ०।

अपुरक्कारगय- त्रि० *[अपुरस्कारगत]*
अपुरस्कारं गतः प्राप्तोऽपुरस्कारगतः। सर्वत्राऽवज्ञाऽऽस्पदीभूते उत्त० २९ अ०।

अपुरिस- पुं० *[अपुरुष]*
न पुरुषः। नपुंसके, ठा० ६ ठा०।

अपरिसक्कारपरक्कम-त्रि० *[अपुरुषकारपराक्रम]*
पुरुषकारः पराक्रमश्च न विद्येते यस्य सोऽपुरुषकारपराक्रमः। अनिष्पादितप्रयोजनने निष्पादितप्रयोजनेन वा पौरुषाऽभिमानेन रहिते। विपा० १ श्रु० ३अ०। भग०।

अपुरिसवाय-पुं०स्त्री० *[अपुरुषवाद]*
अपुरुषो नपुंसकः तद्वादः, वाग् वा। बुह०६ उ०।
नपुंसकोऽयमित्येवंवार्तायाम्,अपुरिसवायं वयमाणे, दासवायं वयमाणे, इच्चेइ कप्पस्स' द्वितीयः प्रस्तारः। ठा०६ ठा०।

अपुरोहिय- त्रि० *[अपुरोहित]*
नाऽस्ति पुरोहितो यत्र। शान्तिकर्मकारिरहिते, यत्र तथाविध-प्रयोजनाऽभावात् पुरोहितो नाऽस्ति। भग० ३ श० १ उ०।

अपुव्व- त्रि० *[अपूर्व]*
अभिनवे अनन्यसदृशे, अवृत्तपूर्वे, । आव०म०।

अपुव्वकरण-न० *[अपूर्वकरण]*
अपूर्वामपूर्वां क्रियां गच्छतीत्यपूर्वकरणम्। तत्र च प्रथमसमय एव स्थितिघातरसघातगुणश्रेषिगुणसंक्रमाः, अन्यश्च स्थिति-बन्धः, इत्येते पञ्चाऽप्यधिकारा यौगपद्येन पूर्वमप्रवृत्ताः प्रवर्तन्ते इत्यपूर्वकरणम्। आचा० १ श्रु० ९अ० १ उ०।
अप्राप्तं पूर्वमपूर्वम्, स्थितिघातरसघाताद्यपूर्वाऽर्थनिर्वर्तनं वा। अपूर्वं च तत्करणं च अपूर्वकरणम्। भव्यानां सम्यक्त्वाद्यनुगुणे विशुद्धतररूपे परिणामविशेषे, आव०म०। बुह०।

अपुव्वणाणग्गहण- न० *[अपूर्वज्ञानग्रहण]*
अपूर्वस्य ज्ञानस्य निरन्तरं ग्रहणमपूर्वज्ञानग्रहणम्। तच्चाष्टादशं तीर्थकरनामकर्मबन्धकारणम्। अपूर्वस्य ज्ञानस्य निरन्तरं ग्रहणे आव० म०

अपुस्सुय-त्रि० *[अल्पोत्सुक]*
अविमनस्के, आचा० २ श्रु० ३अ० १ उ०

अपुहत्त-त्रि० *[अपृथत्त्व]*
अविद्यामानं पृथक्त्वं प्रस्तावत् संयमयोगेभ्यो विमुक्तत्वस्वरूपं यस्याऽसावपृथक्त्वः। सदा संयमयोगवति,। उत्त०।
संयमयोगेभ्योऽभिन्ने, उत्त० २९ अ०।

अपुहत्ताणुओग-पुं० *[अपृथक्त्वाऽनुयोग]*
अनुयोगभेदे, यत्रैकस्मिन्नेव सूत्रे सर्व एव चरणाऽऽदयः प्ररूप्यन्ते, अनन्तगमपर्यायत्वात् *स्य । दश० १ अ०।

अपूया-स्त्री० *[अपूजा]*
पूजाऽभावे, । ठा० ५ ठा० ३ उ०।

अपूरेंत-त्रि० *[अपूरयत्]*
अनाचरति, आव०म०।

अपेय-त्रि० *[अपेय]*
मद्यमांसरसादिके (पातुमनर्हे), निसि० २उ०।

अपेयचक्खु- त्रि० *[अपेतचक्षुष्]*
लोचनरहिते, बुह० १ उ०।

अपेहय- त्रि० *[अपेक्षक]*
अपेक्षिणि, निर्जरापेक्षिकर्मक्षयापेक्षक इति। आव० ४ अ०।

अपाग्गल-पुं० *[अपुद्गल]*
न विद्यन्ते पुद्गला येषां तेऽपुद्गलाः सिद्धाः।
पुद्गलरहिते, ठा० २ ठा० १ उ०।

अपोरिसिमय- त्रि० *[अपौरुषिक]*

पुरुषः प्रमाणस्येति पौरुषिकम्, तन्निषेधापौरुषिकम। पुरुष-प्रमाणाभ्यधिकेऽगाधजलादौ, अत्थाहमपोरिसियं पक्खिवेज्जा । नाया० ५अ० ।

अपोरिसीय- त्रि० *[अपौरुषेय]*

पुरुषः परिमाणं यस्य तत्पौरुषेयं, तन्निषेधादपौरुषेयम्। पुरुष-प्रमाणाभ्यधिकेऽगाधे जलादौ ''अत्थाहमतारमपोरिसीयं ति'' । नाया०१४ अ० ।

पुरुषेणाकृते वचने, अपौरुषेयः वेदः, वेदकारणस्याश्रूयमाण-त्वात्। ठा०१ ठा०। नं०।

अप्प-१ त्रि० *[अल्प]*

स्तोके, सूय० १ श्रु० ५ अ० २ उ०। आचा०। पिंड०। पन्न०। उव०। पण्हा०। आव०। ठा०। चंद० । निसि० । सूर० आव०चू०।

अभावे, । आचा० १ श्रु० ८ उ०। उत्त०। अनुओ०। आव०म०। रा०

अल्पशब्दोऽभाववाचकः। ठा० ७ ठा०। बुह०।

अप्प-२ पुं० *[आत्मन्]*

अत सातत्यगमने। अतति सततं गच्छति विशुद्धिसंक्लेशात्मक परिणामान्तराणीत्यात्मा। उत्त० १ अ०। आव० चू०।

जीवे, यत्ने, मनसि, वृत्तौ बुद्धौ, अर्के, वह्नौ, वायौ, स्वरूपे च। आत्मना स्वयमेव। भग० १ श० ३उ०।

आत्मनाऽऽत्मनः कर्मक्षयं कर्तुमिति। नाया० ५ अ०। आचा०

अप्पणोभासाए परिणामेणं-भाषापरिणामेनेत्यर्थः।उत्त० २अ०

देहे, आत्मन आधारभूतत्वात्। उत्त० ३ अ०।

अप्पओयण-न० *[अप्रयोजन]*

अप्रयोजने निष्कारणतायाम्, अनर्थोऽप्रयोजनम्-अनुपयोगो निष्कारणतेति पर्यायाः। आव० ६अ०।

अप्पंड- त्रि० *[अल्पाण्ड]*

अल्पान्यण्डानि कीटकादीनां यत्र तदल्पाण्डम्। अल्पशब्दो-ऽत्राभावे वर्तते। अण्डकरहिते, आचा० १ श्रु० ८अ० ६उ०।

अप्पकंप-त्रि० *[अप्रकम्प]*

अविचलितसत्त्वे मेरुरिवानुकूलाद्युपसर्गैः अविचलितसत्त्वः। ठा० ४ ठा० ३ उ०।

अप्पकम्मतर-त्रि० *[अल्पकर्मतर]*

स्तोककर्मतरे, अकर्मतरे च।

'इंगालभूए मुम्मुरभूए छारियभूए तओ पच्छा अप्पकम्मतराए चेव अङ्गाराद्यवस्थामाश्रित्याल्पशब्दः स्तोकार्थः। क्षारावस्थायं त्वभावार्थः। भग० ५ श० ६ उ०।

अप्पकम्मपच्चायाय-त्रि० *[अल्पकर्मप्रत्यायात]*

अल्पैः स्कतौकैः कर्मभिः करणभूतैः प्रत्यायातः प्रत्यागतो मानुषत्वमिति अल्पकर्मप्रत्यायातः। एकत्र जनितत्वात्ततोऽल्प-कर्मा सन् यः प्रत्यायातः,। लघुकर्मतयोत्पन्ने,ठा०४ ठा०१ उ०

अप्पकाल- त्रि० *[अल्पकाल]*

अल्पः कालो यस्य तदल्पकालम्। इत्वरकाले, अनुओ०।

अप्पकिरिय- त्रि० *[अल्पक्रिया]*

लघुक्रिये, ठा० ४ ठा० ३ उ०।

अप्पकिरिया-स्त्रि० *[अल्पक्रिया]*

निरवाद्यायां वसति,। बुह०।

अप्पकिलंत-त्रि० *[अल्पक्लान्त]*

अल्पं स्तोकं क्लान्तं क्लमो येषां ते अल्पक्लान्ताः। अल्पवेदनेषु, 'खवणिज्जो भे किलामो अप्पकिलंताणं बहु-सुभेणं दिवो वइक्कंतो' आव० ३ अ०।

अप्पकुक्कुइय-त्रि० *[अल्पकौकुच्य]* ।

अल्पस्पन्दने, करादिभिरल्पमेव चलति, अल्पशब्दोऽभाववाची अल्पमसत्, कौकुच्यं करचरणभ्रूभ्रमणाद्यसचद्चेष्टात्मकमस्य इत्यल्पकौकुच्यः। हस्तपादशिरः प्रमुखशरीरावयवानधुन्वाने, 'निसीएज्जऽप्पकुक्कुए'। उत्त० १ उ०।

अप्पकोउहल्ल-त्रि० *[अल्पकौतूहल]*

स्त्रीरूपदर्शनादिषु अविद्यमानकौतूहले, अल्पशब्दस्येहाविद्य-मानार्थत्वात् , बुह० ३ उ०।

अप्पकोह-पुं० *[अल्पक्रोध]*

अविद्यामानकषायभेदे, भावावमोदरिकां प्रतिपन्ने, उव०।

अप्पक्खर-न० *[अल्पाक्षर]*

अल्पान्यक्षराणि यस्मिस्तदल्पाक्षरम्। उव०।

मिताक्षरे, गुणवति सूत्रे, यथा सामायिक*म्। अप्रभूताक्षरे, विशे०। उव०। अनुओ०। आव० म०।

अप्पक्खरं महत्तं अणुग्गहत्थं सुविहियाणं। ओह०।

अप्पग-पुं० *[आत्मन्]*

स्वस्मिन्, 'जइ अप्पगं न साहयामि, तो कहं अन्नं विणिग्गतो नगराओ''। आव० ४ अ०। आचा०। सूय०। पण्हा०।

अप्पगास- पुं० *[अप्रकाश]*

अन्धकारे, निसि० १ उ०।

अप्पचिंतय-पुं० *[आत्मचिन्तक]*

अभ्युद्यतमरणं वा प्रतिपत्तुं निश्चित्ते, वव० १ उ०।

अप्पछंदमइ-त्रि० *[अल्पच्छन्दमति]*

आत्मच्छन्दा आत्मायत्तामतिर्यस्य कार्येष्वसावात्मच्छन्दमतिः। स्वाभिप्रायकार्यकारिणी, आव०म० । विशे०।

अप्पज्ज-त्रि० *[आत्मज्ञ]*
आत्मानं जानातीति आत्मज्ञः। अपरायत्ते, निसि० १ उ०।

अप्पज्झ– त्रि० *[आत्मवश]*
स्वस्थचित्तम्। बृह०।

अप्पझंझ-त्रि० *[अल्पझञ्झ]*
विगततथाविधविप्रकीर्णवचने, ठा० ८ ठा०। भग०।
भावावमोदरिकां प्रतिपन्ने, रा०।
अविद्यमानकलहविशेषः। औप०

अप्पडिकंटय-त्रि० *[अप्रतिकण्टक]*
न विद्यते प्रतिमल्लः कण्टको यत् तदप्रतिकण्टकम्। अप्रति-मल्ले, रा०।

अप्पडिवरिय- पुं० *[अप्रतिवृत]*
प्रादोषिके काले ''अप्पडिवरियं कालं घेत्तूण य वेयए'' प्रादोषिकालं यथा साधवः प्रतिजारितं गृह्णन्ति। बुह० १ उ०।

अप्पण-त्रि० *[आत्मीय]*
अपभ्रंशे, स्वस्मिन्, उत्त० १ अ०। पण्हा०। चंद०
शरीरे, आचा० १ श्रु० २ अ० ४ उ०।

अप्पणाण-न० *[आत्मज्ञान]*
वादादिव्यापारकाले किममुं प्रतिवादिनं जेतुं मम शक्तिरस्ति न वेति आलोचनरूपे प्रयोगमतिसंपद्भेदे, उत्त० १५ अ०

अप्पणिज्ज- त्रि० *[आत्मीय]*
स्वकीये,अप्पणिज्जियाए महिलाए । आव०म०। निसि०। दशा०।

अप्पणो- अव्य० *[स्वयम्]*
स्वमित्यव्ययार्थे, ''अप्पणो सेसाइं ति'' आत्मन आत्मीयानि। विपा० १ श्रु० २ अ०।

अप्पतर-त्रि० *[अल्पतर]*
अतिशयिते स्तोके, 'अप्पतराए से पावे कम्मे कज्जइ'। भग० ८ श० ६ उ०। आचा०। सूय०।

अप्पतुमतुम्- त्रि० *[अल्पतुमतुम]*
विगतक्रोधमनोविकारविशेषे, ठा० ८ ठा०।

अप्पत्तिय- न० *[अप्रीतिक]*
आर्षत्वात्तथारूपम्। अप्रेम्णि, भग०७ श०१उ०। आव० म०।
अप्रीतिस्वभावे, भग० १ ३ श० १ उ०।
मनसः पीडायाम्, आचा० २ श्रु० ७ अ० २ उ०।
क्रोधे, सूय० १ श्रु० १ अ० २ उ०।
अपकरणे, निसि० १ उ०।

अप्पत्थाम- त्रि० *[अल्पस्थामन्]*
अल्पसामर्थ्ये, सूय०१ श्रु० अ० ३ उ०।

अप्पधण- त्रि० *[अल्पधन]*
अल्पमूल्ये, 'महाधणे अप्पधणे व वत्थे,'। बुह० ३ उ०।

अप्पपएसग- त्रि० *[अल्पप्रदेशक]*
अल्पं स्तोकं प्रदेशाग्रं कर्म दलिकपरिमाणं यस्य सः। स्तोक-प्रदेशाग्रके कर्मणि, भग० १ श० १ उ०।

अप्पपरिणियत्ति- स्त्री० *[आत्मपरनिवृत्ति]*
आत्मनः परेषां च परेभ्यो निवृत्तौ, आलोचनाप्रदानतः स्वय-मात्मनो दोषेभ्यो निवृत्तिः,
कृतानां तद् दृष्ट्वाऽप्यन्ये आलोचनाभिमुखा भवन्तीत्यन्येषामपि दोषेभ्यो निवर्तनमिति । वव० १ उ०।

अप्पपरिग्गह-पुं० *[अल्पपरिग्रह]*
अल्पधनधान्याादिस्वीकारे, उव०।

अप्पपाण- त्रि० *[अल्पप्राण]*
अल्पशब्दोऽभावाभिधायी तथेहापि, प्राणाः प्राणिनः, अल्पाः अविद्यमानाः प्राणिनो यस्मिँस्तदल्प प्राणम्।
अवस्थितागन्तुक जीवविरहिते उपाश्रयादौ, उत्त० १ अ०

अप्पपाणासि-त्रि० *[अल्पपानाशिन्]*
अल्पं पानमशितुं शीलमस्यासावल्पपानाशी। यत् – किञ्चन पानपातरि, सूय० १ श्रु० ८ अ०।

अप्पपिंडासि-त्रि० *[अल्पपिण्डाशिन्]*
अल्पं स्तोकं पिण्डमशितुं शीलमस्यासावल्पपिण्डाशी। यत्कि-ञ्चनाशिनि, तथा च आगमः- 'हे जन्तवः! आसीय, जत्थ तत्थ व सुहोवगयनिद्दा। जेण व तेण व संतुट्ठ वीरमुणिओ सिते अप्पा'।। सूय० १ श्रु० ९ अ०।

अप्पभिक्त- त्रि० *[अल्पभक्षिन्]*
स्तोकाहारकारिणि, उत्त० १५ अ०।

अप्पभासि- त्रि० *[अल्पभाषिन्]*
कारणे परिमितवक्तरि, दश०८ अ०।
'अप्पं भासेज्ज सुव्वए'। तथा सुव्रतः साधुरपल्पं परिमितं हितं च भाषेत, सर्वदा विकथारिहतो भवेदित्यर्थः।सूय०१श्रु०९ अ०

अप्पभूय- त्रि० *[अल्पभूत]*
अल्पसत्त्वे, ठा० ५ ठा० १ उ०।

अप्पमत्त– त्रि० *[अप्रमत्तः]*
गुरुपारतन्त्र्यापहारिप्रमादपरिहर्त्ता। उत्त०।
अप्रमत्तसंयतगामः, भूतग्रामस्य सप्तमं गुणस्थानम्। आव० ।
आत्महितेषु जाग्रन्। आचा० १७२। प्रयत्नवान्। ओह० ।

अप्पमहग्घाभरण-त्रि० *[अल्पमहार्घाभरण]*
अल्पानि स्तोकभारवन्ति महार्घाभरणानि बहुमूल्यवद्भूषणानि यस्यासौ तत्तथा। अल्पभारवद्बहुमूल्यभूषणयुक्ते,

'ण्हाए सुद्धप्पावेसाइं अप्पमहग्घाभरणा साओ गिहाओ पडिनिक्खमइ''। उपा० १ अ०।

अप्परय-१ त्रि० *[अल्परत]*

अल्पमिति अविद्यमानं रतमिति क्रीडितं मोहनीयकर्मोदयजनितमस्येति अल्परतः।क्रीडाविरहिते लवसप्तमादौ, उत्त०१ अ०

कण्डूयपरिगते कण्डूयनकल्परतरहिते, दश० ९ अ० ४ उ०।

अप्परय-२ त्रि० *[अल्परजस्]*

रजोरहिते, उत्त० २अ०।

प्रतनुबध्यमानकर्मणि, 'सिद्धे वा हवइ सासए देवे वा अप्परए महिड्डिए'। उत्त० १ अ०।

अप्पलाहलद्धि-पुं० *[अल्पलाभलब्धि]*

अल्पा तुच्छा वस्त्रपात्रादिलाभे लब्धिर्यस्य सोऽल्पलाभलब्धि। क्लेशेन वस्त्र पात्राद्युत्पादके, बुह० १ उ०।

अप्पलीण- त्रि० *[अप्रलीन]*

असंबद्धे तीर्थिकेषु गृहेस्थेषु पार्श्वस्थादिषु संश्लेषमकुर्वति, 'अणुक्कस्से अप्पलीणे, मज्झेण मुणि जावए' सूय० १ श्रु० १ अ० ४ उ०।

अप्पलीयमाण- त्रि० *[अप्रलीयमान]*

कामेषु मातापित्रादिके वा लोके न प्रलीयमाना अप्रलीयमानाः अनभिषक्ते, आचा० १ श्रु० ६ अ० २ उ०।

अप्पलेवा- स्त्री० *[अल्पलेपा]*

निर्लेपं पृथुकादि गृह्णतश्चतुर्थ्यां पिण्डेषणायाम्, आव०४ अ०। आचा०। सूय०।

'जस्स दिज्जमाणदव्वस्स निप्पावचणगादिस्स लेवो न भवति सा अप्पलेवा'। निसि० १६ उ०। आव० चू०।

अल्पलेपिकाऽप्यत्र, ठा० ७ ठा०।

अप्पवस- त्रि० *[आत्मवश]*

स्ववशे, गच्छा०२ अधि०।

अप्पवाइ- पुं० *[आत्मवादिन्]*

पुरुष एवेदं सर्वमित्यादि प्रतिपन्ने वादिनि, न०

अप्पवीय-त्रि० *[अल्पबीज]*

अविद्यमानानि बीजानि शाल्यादीनि नीवारश्यामाकादीनां यस्मिंस्तत् अल्पबीजम्। बीजस्योपलक्षत्वात् एकेन्द्रियादिरहिते उत्त० १ अ०। आचा०।

अप्पवुट्ठिकाय-स्त्री० *[अल्पवृष्टिकाय]*

अल्पः स्तोकोऽविद्यमानो वा, वर्षणं वृष्टिरधःपतनं वृष्टिप्रधानः कायो निकायोऽल्पवृष्टिकायः। वर्षणधर्मयुक्तं च उदकं वृष्टिः, तस्याः कायो राशिर्वृष्टिकायः। अल्पश्चासौ वृष्टिकायश्चाल्पवृष्टि कायः। स्तोके व्योमनि पतदप्काये, ठा० ३ ठा० ३ उ०।

अप्पसंतमइ-त्रि० *[अप्रशान्तमति]* अपरिणतशिष्ये, "अप्रशान्तमतौ शास्त्रसद्भावप्रतिपादनम्। दोषायाभिनवोदीर्णशमनीयमिव ज्वरे। सूय० १ श्रु० १४ अ०।

अप्पसत्तम्- त्रि० *[आत्मसप्तम्]*

आत्मना सप्तमः। सप्तानां पूरणः। आत्मा वा सप्तमो यस्यासावात्मसप्तमः। अन्यैः षड्भिः सह विद्यमाने ''मल्लीणं अरहा अप्पसत्तमे मुंडे भवित्ता''। ठा० ७ ठा०।

अप्पसत्तिय-त्रि० *[अल्पसात्त्विक]*

निःसारे, 'सुसमत्था वऽसमत्था, कीरति अप्पसत्तिया पुरिसा। दीसंति सूरवादी, नारीवसगा न ते सूरा।सूय० १ श्रु० ४ अ० १ उ०

अप्पसद्द-पुं० *[अल्पशब्द]*

विगतराव्यां ध्वनौ ठा० ८ ठा०।

रात्र्यादावसंयतजागरमभयात्। भग०२५ श०७ उ०।

अल्प-कलहे, कलहक्रोधकार्ये। उव०।

अप्पसरयक्ख-न० *[अल्पसरजस्क]*

अल्पे तृणादौ, आचा० २ श्रु० १ अ० ५ उ०।

अप्पसार-न० *[अल्पसार]*

अल्पं च तत्सारं चेत्यल्पसारम्। प्रमाणतोऽल्पे वस्तुनः सारे, नाया० १ अ०।

'अप्पसारं तुत्थंति जीवा बंधणं'। आव०म०।

'अप्पसारियं णेउं उवचरति'। निसि०१ उ०।

अप्पसावज्जकिरिया- स्त्री० *[अल्पसावद्यक्रिया]*

शुद्धायां वसतौ, आचा० २ श्रु० २ अ० २ उ०।

अप्पसुह-त्रि० *[अल्पहरित]*

अल्पानि हरितानि दूर्वाप्रवालादीनि यत्र तत्तथा। दूर्वादिरहिते आचा० २ श्रु० ८ अ० ६ उ०।

अप्पहिंसा-स्त्री० *[अल्पहिंसा]* अल्पशब्दोऽभाववाची। अल्पानामेव प्राणिनां हिंसायाम्, वव०१ उ०।।

अप्पहिंसा-स्त्री० *[अल्पहिंसा]*अल्पशब्दोऽभाववाची। अल्पा-नामेव प्राणिनां हिंसायाम्, वव०१ उ०।

अप्पा-पुं० *[आत्मन्]*

अतति सातत्येन गच्छति ताँस्तान् ज्ञानदर्शनसुखादिपर्यायानित्याद्यात्मादिशब्दव्युत्पत्तिनिमित्तसंभवात्। आव०म० जीवे० उत्त० २।

अभिहितरूपस्तदाधाररूपो वा देहः। उत्त०।

आत्मा–स्वभावः।ठा०६१।

अप्पाइय- त्रि० *[आप्यायित]*

मनोज्ञाहारैः स्वस्थीभूते, बुह० १ उ०।

अप्पाउअ-त्रि० *[अल्पायुष्क]*
स्तोकजीविते, पण्हा० १ अ०।

अप्पाउअत्ता-स्त्री० *[अल्पायुष्कता]*
अल्पमायुर्यस्यासावल्पायुष्कः, तद्भावस्तत्ता। अल्पायुष्कतायाम् । भग० ५ श० ६ उ०।
अल्पमायुर्जीवितं यद् तदल्पायुः, तद्भावस्तत्ता। जघन्यायुष्टे। ठा० ३ ठा० १ उ०।

अप्पाउड- पुं० *[अप्रावृत]*
प्रावरणवर्जके अभिग्रहविशेषग्राहके, सूय० २ श्रु० २ अ०।

अप्पाउरण-न० *[अप्रावरण]*
प्रावरणत्यागरूपेऽभिग्रहप्रत्याख्यानभेदे, अत्र पञ्च आकाराः- 'अभिग्गहेसु अप्पाउरणं कोइ पच्चक्खाइ, तस्स पंच आगारा अन्नत्थऽणाभोगे, सहसागारे, चोलपट्टागारे, महत्तरागारे सव्वसमाहिवत्तियागारे य'। तथा च *म- अप्पाउरणं पडिवज्जति अन्नत्थऽणाभोगेणं, सहसागारेणं, चोलपट्टागारेणं महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरइ त्ति । आव० ६ अ०।

अप्पाणरक्खि-त्रि० *[आत्मरक्षिन्]*
आत्मानं रक्षति पापेभ्यः कुगतिगमनादिभ्य इत्येवंशील आत्मरक्षी। आत्मनः पापेभ्यो निवारके, उत्त० ४ अ०।

अप्पाधार- पुं० *[अल्पाधार]*
अल्पस्य *स्य अर्थस्य वा आधारोऽल्पाधारः। सूत्रार्थपुण्यविकले, वव० १ उ०।

अप्पाबहुय-न० *[अल्पबहुत्व]*
अल्पं च स्तोकं बहु च प्रभूतमल्पबहु, तद्भावोऽल्पबहुत्वम्। दीर्घत्वासंयुक्तत्वे च प्राकृतत्वादिति। ठा० ४ ठा० २ उ०।

अप्पाहिगरण- पुं० *[अल्पाधिकरण]*
अल्पमविद्यमानमधिकरणं स्वपक्षपरपक्षविषयो यस्य तत्तथा। ठा० ६ ठा० १० उ०।
निष्कलहे, ठा० ८ ठा०।

अप्पिच्छ-त्रि० *[अल्पेच्छ]*
अल्पा स्तोका धर्मोपकरणप्राप्तिमात्रविष्यत्वेन, न तु सत्कारादिकामितया महती, अल्पशब्दस्याभाववाचित्वेनाविद्यमाना इच्छा वाञ्छा यस्येत्यल्पेच्छः। उत्त० ३ अ०।
अमहेच्छे० उव०।
धर्मोपकरणमात्रधारिणि, उत्त० २ अ०।
न्यूनोदरतयाऽऽहारपरित्यागिनि, दश० ८ अ०।
अल्पाः स्तोकाः परिग्रहार्थेष्विच्छाऽन्तःकरणप्रवृत्तिर्येषां ते तथा। सूय०२ श्रु०२ अ०।
मणिकनकादिविषयप्रतिबन्धरहिते, जीवा० ३ प्रति०। जंबू०।

अप्पिय- अ० *[अप्रिय]*
प्रियस्याभावोऽप्रियम्।चित्तदुःखासिकायाम्, । सूय० १ श्रु० ४ अ० १ उ० ।
न प्रियमप्रयम्। अप्रीतिहेतौ, भग० १ श० ५ उ०। उपा० द्वेष्ये, सम० ।
यद्धि दर्शनायातकालेऽपि न प्रियबुद्धिमुत्पादयति। जीवा०१
प्रेमाऽविषये, ठा० ८ ठा०।
अणिट्ठा अकंता अप्पिया अमणुन्ना अमणा एकट्ठा। विपा०१ श्रु०१ अ०
कोहं असच्चं कुव्विज्जा, धारिज्जा पियमप्पियं। अप्रियमपि कर्णकटुकतया, तदनिष्टमपि, गुरुवचनमिति गम्यते। उत्त०१

अप्पिय- त्रि० *[अर्पित]*
प्राकृतसुकृतेन ढौकिते, उत्त० ३ अ०।
आहिते, भग०९ श०७ उ०।
ढौकिते विपा०१ श्रु०२ अ०।
विशेषिते, ठा०१० ठा०।

अप्पियकारिणी-स्त्री० *[अप्रियकारिणी]*
श्रोतुर्मृनिवेदनादिरूपायां भाषायाम, । दश०९ अ० ३ उ०।

अप्पियणय- पुं० *[अर्पितनय]*
अर्प्यते विशेष्यते इत्यर्पितो विशेषः, तद्वादी नयोऽर्पितनयः। विशेष एवास्ति, न सामान्यमिति समयप्रसिद्धे न ये, विशे०।

अप्पियता-स्त्री० *[अप्रियता]*
अप्रेमहेतुतायाम्। भग०६ श० ३ उ।

अप्पियववहार-पुं० *[अर्पितव०हार]*
अर्पित इति व०हारो यस्मिन् सोऽयमर्पितव०हारः। स्वाधारे भाववति, ज्ञाताऽयमित्यादिरूपेण ज्ञानमस्येत्यादिरूपेण वचनव्यापारेण वक्रा स्थापिते व्यवहारे, उत्त०१ अ०।

अप्पियवह-त्रि० *[अप्रियवध]*
अप्रियं दुःखकारणं तद् घ्नन्तीति अप्रियवधाः। दुःखहेतुनिवारके, 'सव्वे पाणा पियाउया सुहसाया दुक्खपडिकुला अप्पियवहा' । आचा०१ श्रु० २ अ० ३ उ०।

अप्पियस्सर- त्रि० *[अप्रियस्वर]*
प्रेमाऽविषयस्वरे, ठा० ८ ठा०।

अप्पियाणप्पिय-न० *[अर्पितानर्पित]*
द्रव्यं ह्यर्पितं विशेषितं, यथा जीवद्रव्यम् किंविधम्? संसारीति, संसार्यपि त्रसरूपंच० त्रसरूपमपि पञ्चेन्द्रियम्, तदपि नररूपम् इत्यादि। अनर्पितमविशेषितमेव, यथा जीवद्रव्यमिति। ततश्चाऽर्पितं चद तदनर्पितं चेत्यर्पिताऽनर्पितं द्रव्यं भवतीति समन्यविशेषकथनरूपं द्रव्यानुयोगभेदे, ठा० १० ठा०।

अप्पीकय-त्रि० *[आत्मीकृत]*
आत्मना गाढतरमागृहिते । विशे० ।
आत्मप्रदेशैस्तनुलग्नतोयवद् मिश्रीभूतम् । आव०म० ।

अप्पाट्ठाइ– त्रि० *[अलोत्थायिन्]*
अल्पमुत्थातुं शीलमस्येत्यल्पोत्थायी । प्रयोजनेऽपि अपुनः-पुनरुत्थानशीले, उत्त० १ अ० ।
'अप्पुट्ठाई निरुट्ठाई निसीएज्जऽप्पकुक्कुए' । उत्त० १ अ० ।

अप्पुत्तिंगपणगदगमट्ठियामक्कडसंताण-त्रि० *[अल्पोत्तिङ्गपनकोदक-मृत्तिकामर्कटसन्तान]*
उत्तिङ्गपनकोदकमृत्तिकामकर्टसन्तानरहिते,तत्रोत्तिङ्गःपिपीलका सन्तानकः, पनको भूम्यादावुल्लिविशेषः, उदकमृत्तिका अचिराऽप्कायार्द्रीकृता मृत्तिका मर्कटसन्तानको लूतातन्तु-जालम् । आचा० १ श्रु० ८ अ० ६ उ० ।

अप्पुदय-त्रि० *[अल्पोदक]*
भौमान्तरिक्षादकरहिते, आचा० १ श्रु०८ अ०६ उ० ।

अप्पुस्सुय- त्रि० *[अल्पौत्सुक्य]*
औत्सुक्यवर्जिते, उव० । भग० ।
अनुत्सुके, नाया०१ अ० ।
अविमनस्के, आचा०२ श्रु० ३ अ० ३ उ० ।

अप्पोलंभ-पुं० *[आप्तोपालम्भ]*
आप्तेन हितेन, गुरुणेत्यर्थः। उपालम्भो विनेयस्याविहित-विधायिन आप्तोपालम्भः। अविधिप्रवृत्तस्य शिष्यस्य गुरुणा मार्गे स्थानाय उपालम्भे, (तीर्थकृता) । नाया०१ अ० ।

अप्पोल्ल- त्रि० *[देशी]*
दृढवेष्टनादशुषिरे, 'अप्पोल्लंमिदुपण्हं च, पडिपुन्न हत्थ पुरिसं । बुह० ३ उ० । निसि० ।

अप्पोवहित्त- न० *[अल्पोपधित्व]*
अनुल्बणयुक्तस्तोकोपधिसेवित्वे दश०२ चू० ।

अप्पोस-त्रि० *[अल्पावश्याय]*
अधस्तनोपरितनावश्यायवि प्रुङ्वर्जिते,आचा०१श्रु०८ अ०६ उ०

अप्पोसमिमंतबल-त्रि० *[अल्पौषधिमन्त्रबल]*
अल्पं स्तोकमौषधिमन्त्रबलं यस्य स तथा। स्तोकेनौषधि-मन्त्रबलेन युते, । आव० ४ अ० ।

अप्फालण-न० *[आस्फालन]*
हस्तेनाऽऽताडने उत्तेजने, उव० । दशा०
भम्भाहोरम्भाणं वादनमास्फालनमिति प्रसिद्धम् । रा० । आव० चू०

अप्फालिज्जंत-त्रि० *[आस्फल्यमान]*
हस्तेनाऽऽताड्यमाने,अप्फालिज्जंतीणं भंभाणं होरंभाणं रा० ।

अप्फालिय-त्रि० *[आस्फालित]*
आ समन्तात्स्फारं प्रापिते, वव० १ उ० ।

अप्फालेइ– धा० [आस्फालयति]
हस्तेनाऽऽताडयति–उत्तेजयति । उव० ।

अप्फिह-त्रि० *[अस्पृह]*
स्पृहाविरहिते उपसर्गानिष्टेष्टान्नेकोऽभीरस्पृहः क्षमेत् । आव०म० ।

अप्फुडिय-त्रि० *[अस्फुटित]* अजर्जरे, जंबू० २ वक्ष० ।
अखंडऽफुडिया कायव्व अस्फुटिताः सर्वविराधना-परित्यागेन, दश० ६ अ० ।

अप्फुडियदंत- त्रि० *[अस्फुटितदन्त]*
अस्फुटिता अजर्जराजरा रहिता दन्ता येषां तेऽस्फुटितदन्ताः । जीवा० ३ प्रति० ।
अजर्जरदन्तेषु जंबू० २ वक्ष० । उव० ।
राजिरहितदन्तेषु, तं० । वव० कल्प० ।

अप्फुण्ण- त्रि० *[आक्रान्त]*
व्याप्ते, 'अप्फुण्णा समाणी' निसि० ।
अप्फुणा त्ति, आस्पृष्टा व्याप्ता, आक्रान्ता इति यावत् । अनुओ० । जंबू० रा० ।

अप्फोआ – स्त्री० *[अफोया]*
वनस्पतिविशेषे, जीवा० ३ प्रति० । वव० । जंबू० । पन्न० ।

अप्फोडिअ- न० *[आस्फोटित]*
कराऽऽस्फोटे, जंबू०३वक्ष० ।पण्हा० ।भग० ।नाया० । कल्प०

अप्फोव-पुं० *[अप्फोव]*
वृक्षाद्यकीर्णे, अफोव इति किं मुक्तं भवति आस्थीर्ण-वृक्षगुच्छगुल्मलतासंछन्न इत्यर्थः, इति वृद्धाः । उत्त०१८ अ० ।

अप्फोवमंडव-पुं० *[अप्फोवमण्डप]*
अफोवश्चासौ मण्डपः । नागवल्लीद्राक्षादिः भिवेष्टिते स्थाने, 'अप्फोवमंडवम्मि, झायइखवियासवे' । उत्त० १ अ० ।

अफरुस- न० *[अपरुष]*
अनिष्ठुरे मनः प्रह्लादके, वव० ३ उ० ।

अफरुसभासि-त्रि० *[अपरुभाषिन्]*
अपुरुषनिष्ठुरं तद्भाषणशीलोऽपरुषभाषी । वाग्विनयविशेषं प्रतिपन्ने, वव० १ उ० ।

अफलवादि-पुं० *[अफलवादिन्]*
न विद्यते कस्याश्चित् क्रियायाः फलमित्येवंवादिनि, । सूय० १ श्रु० १ अ०१ उ० ।

अफास-त्रि० *[अस्पर्श]*
अशुभस्पर्शे एकान्तोद्वेजनीये, सूय० १ श्रु०५ अ० १ उ० ।

अफासुय-न० *[अप्रासुक]*
न प्रगता असवोऽसुमन्तो यस्मात्, तदप्रासुकम्। सजीवे। भग० ५ श०६ उ०।
सचित्ते, आचा०१ श्रु०१ अ०१ उ०। सूय०। ठा०।

अफासुयपडिसेवि(ण)- त्रि० *[अप्रासुकप्रतिसेविन्]*
अप्रासुकं सचित्तं प्रतिसेवितुं शीलमस्य स भवत्यप्रासुक प्रतिसेवी। सचेतनजलादिवस्सतुप्रतिसेवनशीले, 'अफासुय-पडिसेविय, नामं भुज्जो य सीलवादी य। सूय०१ श्रु०७ अ०।

अफुस- त्रि० *[अस्पृश्य]*
स्पर्ष्टुमयोग्ये, 'अफुसं दुक्खं' अस्पृश्यं कर्माकृतत्वादेव। ठा० ३ ठा० २ उ०।

अफुसमाणगइ- पुं० *[अस्पृशद्गति]*
अस्पृशन्ती सिद्ध्यन्तराल प्रदेशान् गतिर्यस्य सोऽस्पृशद्गतिः। अन्तरालप्रदेशानामस्पर्शने नैवोर्ध्वं गच्चति सिद्धे, उव०।
'अफुसमाणगती बितियं समयं ण फुसति, अहवा जेसु अवगाढो जे य फुसति उड्ढमविगच्छमाणो तत्तिए चेव आगासपदेसे फुसमाणो गच्छति'। आव० चू० २ अ०।

अबंझ- त्रि० *[अवन्ध्य]*
न वन्ध्यमवन्ध्यम्। अवश्यकार्यकारिणि, सूय०।
अवन्ध्यमेकादशं पूर्वम् वन्ध्यं नाम निष्फलं, न विद्यते वन्ध्यं यत्र तदवन्ध्यम्ष सफलमित्यर्थः। तत्र हि - सर्वेऽपि ज्ञान- तपः संयमयोगाः शुभफलेन सफला वर्ण्यन्ते अप्रशस्ताश्च प्रमादा-दिकाः सर्वे अशुभफला वर्ण्यन्तेऽतोऽवन्ध्यम्। तस्य च परिमाणं षड्विंशतिपदकोटयः। सम०।
'अबंझपुव्वस्स णं बारस वत्थू पन्नत्ता' नं०। सम०
अवश्यकार्यकर्तरि, सूय० २ श्रु० १ अ०।

अबंधग- पुं० *[अबन्धक]*
निरुद्धयोगे, भग० २५ श० ६ उ०। आव० म०।

अबंधव- त्रि० *[अबान्धव]*
स्वजनसम्पाद्यकार्यरहिते, पण्हा०१ अ०।

अबंभ- न० *[अब्रह्मन्]*
अकुशले कर्मणि, तच्च मैथुनं विवक्षितम्, अत्यन्ताकुशलत्वात् तस्य। पण्हा०४ अ०।
तच्चाष्टादशधा- अट्ठारसविहे अबंभे ओरालिअं च दिव्वं, मण-वयकाएणजोएणअणुमोअणकारावणकरणेणऽट्ठारसाऽबंभं इह मूलतो द्विधाऽब्रह्म भवति- औदारिकं तिर्यङ्मनुष्याणां, द्विव्यं च भवनवास्यदीनां, च शब्दस्य व्यवहितः संबन्धः। मनो-वाक्कायाः कारणं त्रिधा योगेन त्रिविधेनैवनुमोदनकारण करणेन निरुपितं, पश्चात्तु पूर्वोपन्यासः अब्रह्माऽष्टादशधा भवति। इयं भावना-औदारिकं स्वयं न करतो मनसा वाचा कायेन, नाऽन्यनेन कारयति मनसा वाचा कायेन, कुर्वन्तं नाऽनुमोदते मनसा वाचा कायेन। एवं वैक्रियमपि। आव०४ अ०।
एतच्च प्रश्नव्याकरणानां चतुर्थेऽध्ययने यथा याद्दशादिद्वार-पञ्चकेन। द्वारपञ्चकं चेदम्- 'जारिसओ १ जं नामा २, जह य कओ ३ जारिसं फलं दिंति ४। जे वि य करेतिं पावा ५, पाणवहं तं निसामेह'। पण्हा० ५ अ०।
अब्रह्म मैथुनमिति पर्यायौ। ('अबंभचरियं घोरं पमायं दुरहि-ट्ठियं। नायरंति मणी लोए, भेयापणविवज्जणे दश०६ अ०।

अबंभवज्जण- न० *[अब्रह्मवर्जन]*
दिवा रात्रौ वा पत्न्याद्याश्रित्य मैथुनत्यागरूपायां षष्ठ्यामु पासकप्रतिमायाम्, तत्स्वरूपं, पण्हा० १ अ०।

अबज्झ-त्रि० *[अवध्य]*
वधानर्हे, "अवमाणयं बज्झाणं'' अकारलोपे 'बज्झाणं' इति भवति। तत्र अवध्यानां वधानर्हाणामपि विद्वेषिवचनतो वध्यत्वेन स्थापितानां सुदर्शनसुजातादीनामिव देवता प्रातिहार्य तो निराकृतवध्यत्वदोषाणम्। संथा०।

अबज्झसिद्धंत-पुं० *[अबाध्यिसिद्धान्त]*
अबाध्यः परैर्बाधितुमशक्यः सिद्धान्तः स्याद्वादश्रुतलक्षणोऽस्य तथा। कुतीर्थिकोपन्यस्तकहेतुसमूहाशक्यबाधस्याद्वाददरूप-सिद्धान्तप्रणयनभणनाद् वचनातिशयसंपन्न तीर्थकरे, अबाध्य-सिद्धान्तममर्त्यपूज्यम्' ठा०।

अबज्झा-स्त्री० *[अबाध्या]*
अयोध्यायाम् जंबू० ४ वक्ष०। ।
गन्धिलाख्यविजयक्षेत्रयुगले पुरीयुगले, 'दो अबज्झाओ' ठा०२ ठा० ३ उ०।

अबद्ध- न० *[अबद्ध]*
पद्यगद्यबन्धनरहिते ग्रन्थे, आव० म०।

अबद्धट्ठिय- न० *[अबद्धास्थिक]*
अबद्धमस्थि यस्य तदबद्धास्थिकम्। अनिष्पन्ने फले,
'भिन्ने य बद्धट्ठिए वि एवं एमेव य होंति बहुबीए'। विशे०। आव०म०।
अथाऽप्यबद्धबीजे अनिष्पन्ने, बुह० १ उ०।

अबद्धसुय-न० *[अबद्धश्रुत]*
गद्यात्मके श्रुते, विशे० आव०म०।

अबद्धिय-पुं० *[अबद्धिक]*
स्पृष्टं जीवेन कर्म,न स्कन्धबन्धबद्धद्रुमवदबद्धं, तदेषामस्ती-त्यबद्धिकाः। स्पृष्टकर्मविपाकप्ररूपकेषु निह्नवभेदषु, ठा०७ ठा०। आव० म०। विशे०।

अबल- न० *[अबल]*

न बलं सामर्थ्यमुत्कर्षो वा। बलाऽभावे, शरीरबलवर्जिते, विपा०१ श्रु० ३ अ० सूय०। भग०।

विषमपदादौ गन्तुमसमर्थे, भारं वोढुमसमर्थे। च सूय० १ श्रु० २ अ० ३ उ०। जंबू०। नाया०।

अबलत्त- न० *[अबलत्व]* अबलस्य भावोऽबलत्वम्। बलाभावे, बुह० ६ उ०।

आबला- स्त्री० *[अबला]*

अकिञ्चित्करायाम् बुह० १ उ०।

अबहिट्ठ- न० *[अवहित्थ]*

मैथुने, सूय० १ श्रु० ९ अ०।

अबहिम्मण- त्रि० *[अबहिर्मनस्]*

न विद्यते बहिर्मनो यस्यासावबहिर्मनाः। सर्वज्ञोपदेशवर्तिनि, आचा०१ श्रु०५ अ०५ उ०।

अबहिल्लेस्स- त्रि० *[अबहिर्लेश्य]*

अविद्यमाना बहिः संयमाद् बहिस्ताल्लेश्या मनोवृत्तिर्यस्यासा-वबहिर्लेश्यः। भग०२ श०१ उ० पण्हा०। उव०।

अबहुवादि- त्रि० *[अबहुवादिन्]*

असकृदव्याकुर्वाणे, आचा० १ श्रु० ९ अ० ४ उ०।

अबहुस्सुय- पुं० *[अबहुश्रुत]*

बहु श्रुतं यस्य बहुश्रुतः, न बहुश्रुतोऽबहुश्रुतः। अनधीत-निसीधाध्ययने, अश्रुताधस्तनश्रुते च। निसि० १ उ०।

अबहुश्रुतो नाम येनाचारप्रकल्पो निशीथाऽध्ययननामकः *तोऽर्थतश्च नाऽधीतः। वव० ३ उ०।

न बाधा अबाधा। अनाक्रमणे, रा०। जीवा०। ठा०। उव०।

अबाहिरिय- त्रि० *[अबाहिरिक]*

प्राकारबहिर्वर्तिनो गृहपद्धतिरित्यर्थः। न विद्यते बाहिरिका यत्र तदबाहिरिकम्। यस्य प्राकाराद् बहिर्गृहाणि न सन्ति तस्मिन् स्थाने, बुह० १ उ०।

अबाहिरिय- त्रि० *[अबाह्य]*

ग्रामस्यात्यन्तमबहिर्भूते, ''अबाहिरए कप्पइ हेमं त-गिम्हासु मासं वत्थए''। वव० १ उ०।

अबाहूणिया- स्त्री० *[अबाधोनिका]*

अबाधया उक्तलक्षणया ऊनिका अबाधोनिका। भग० ६ श० ३ उ०।

अबाधाकालपरिहीनायाम्, 'अबाहूणिय कम्पट्ठिई पन्नत्ता''। जीवा० २ प्रति०।

अबिद्ध- त्रि० *[अविद्ध]*

वेधरहिते। वव० ८ उ०। तं०।

अबीय- त्रि० *[अद्वितीय]*

केनचिदपरेण सहाऽवर्तमाने, यथाहि ऋषभश्चतुस्सहस्त्रया राज्ञां सार्द्धं मल्लिपार्श्वौ त्रिभिस्त्रिभिः, शतैः वासुपूज्या षड्भत्या, शेषास्च सहेण सह प्रव्रजितास्तथा भगवान् न केनाऽप्य-तोऽद्वितीयः। कल्प०।

अबुद्ध- त्रि० *[अबुद्ध]*

अविपश्चिति दश०२अ०।

अविवेकिनि, सूय०१ श्रु०११ अ०।

अबुद्धजागरिया- स्त्री० *[अबुद्धजागरिका]*

छद्मस्थाज्ञानवतां जागरिकायाम्, भग०।

'अबुद्धा अबुद्धजागरियं जागरंति त्ति' अ-बुद्धाः केवलज्ञाना-भावेन यथा संभवं शेषज्ञानसद्भावाच्च बुद्धसदृशाः, ते च अबुद्धनां छद्मस्थज्ञानवतां या जागरिका, सा तथा, तां जाग्रति। भग०१२ श० उ०।

अबुद्धिअ- त्रि० *[अबुद्धिक]*

तत्त्वज्ञानरहिते, गच्छा०१ अधि०।

अज्ञानिनि पंच० चू०।

बुद्धिरहिते, सूय०१ श्रु०१ अ०१ उ०।

अबुह- पुं० *[अबुध]*

अजानाने, सूय० १ श्रु० २ अ०१ उ०।

बालिशे पण्हा०१ अ०।

तत्त्वपरिज्ञानविकले, बुह०१ उ०।

अबुहजण- त्रि० *[अबुधजन]*

अबुधोऽविपश्चिज्जनः परिजनो यस्य स अबुधजनः, अकल्याण मित्रपरिजने, विसयसुहेसु पसत्थं अबहुजणकाम रागपडिबद्धं। दश०२ अ०।

अबोहंत- त्रि० *[अबोधयत्]*

अजागरयति, उत्त० २६ अ०

अबोहि- स्त्री० *[अबोधि]*

अज्ञाने, सूय०२ श्रु०६ अ०।

जिनधर्मानवाप्तौ, औत्पत्यादिबुद्ध्यभावे च।भग०१ श०९ उ०।

मिथ्यात्वकार्य ज्ञाने, । आव०४ अ०।

कस्याऽबोधर्भवति ? मिच्छादंसणरता, सनिदाणा किण्ह-लेसमोगाढा। इह जे मरंति जीवा, तेसिं दुलहा भवे बोही। मिथ्यादर्शनं विपर्यस्तदर्शनं, मिथ्यात्वं तु मिथ्याक्रियाद्यभि-लाषरूपं तत्र रताः, तथा सह निदानेन देवत्वादि प्रार्थनारूपेण वर्तन्त इति सनिदानाः। तथा कृष्णां सर्वाधर्मरूपां लेश्यां जीवपरिणामरूपामवगाढाः प्राप्ता इहाऽस्मिन जगति एवंविधा ये जीवा म्रियन्ते, तेषां दुर्लभो भवेद बोधिः। आतु०।

अबोहिकलुस- त्रि० *[अबोधिकलुष]*
मिथ्यादृष्टौ, दश० ४ अ०।

अबोहिबीय-न० *[अबोधिबीज]*
अबोधेर्जन्मान्तरे जिनधर्माऽप्राप्तौ बीजमिव बीजं हेतुरबोधि-बीजम्। सम्यग्दर्शनाभावहेतौ, आव०

अबोहिय-न० *[अबोधिक]*
मिथ्यात्वफले (अज्ञाने), दश० ६ अ०।
न विद्यते बोधिर्यस्य सोऽबोधिकः। बोधरहिते, 'निच्छयत्थं न जाणंति, मिलक्खु व्व अबोहिया''। सूय०१ श्रु०१ अ०२ उ०।
अविद्यमानबोधिके, उव०।
अविदयमानो बोधोऽस्मात्। भवान्तरप्राप्तव्यजिनधर्मलाभा-प्रतिजागरेणाऽज्ञे, 'अप्पणो य अबोहीए, महोमोहं पकुव्वइ'। सम० ३० सम०।

अब्भ-न० *[अभ्र]*
अपो बिभर्तीति अब्भ्रम। मेघे, रा०
आकाशे 'अब्भवद्दलए विउव्वइ''। अभ्रे यानि वार्दलकानि, तानि विकुर्वन्ति, आकाशे मेघान् विकुर्वन्तीत्यर्थः। रा०। ठा०। आव० म०।

अब्भंग- पुं० *[अभ्यङ्ग]*
स्तोकेन तैलादिना मर्दने, एकवारं तैलमर्दने च।निसि०३ उ०।

अब्भंगण- न० *[अभ्यञ्जन]*
घृतवशादिना पण्हा० ४ अ०
सहस्रपाकतैादिभिर्वा आचा०१ श्रु० ९ अ० ४ उ०
म्रक्षणे, कल्प० ३
क्षण। ठा० निसि० आव० म०। बुह०।
अब्भंगणं विहिपरिमाणं करेइ। उपा० १ अ०।

अब्भंगिएल्लय-त्रि० *[अभ्यङ्गित]*
स्नेहाभ्यक्तशरीरे, बुह० १ उ०। पिंड०। आव० म०। ओह०।

अब्भंगित्ता-अव्य० *[अभ्यज्य]*
तैलादिना अभ्यङ्गं कृत्वेत्यर्थे, ठा० ३ ठा० १ उ०। आचा०।

अब्भंगिय-त्रि० *[अभ्यङ्गित]*
स्नेहेन, मर्दिते, पिंड०।

अब्भंतर-त्रि० *[अभ्यन्तर]*
पुत्रकलत्रादिवत् प्रत्यासन्ने, ठा० ८ ठा०।

अब्भंतर - त्रि० *[अभ्यन्तरे]*
भवमाभ्यन्तम्। मध्यस्थे, ठा०२ ठा०१ उ०। पिंड०। विपा०। नाया०।
अभ्यन्तरभागवर्तिनि, रा०। जीवा०।
सव्वब्भंतराणंतरं मंडलं उवसंकमिता चारं चरइ।जंबू०७वक्ष०

अब्भंतरकरण- न० *[अभ्यन्तरकरण]*
भावसंग्रहभेदे, वव०।
तच्च अभ्यन्तरकरणं नाम द्वयोः साध्योर्गच्छमेढेभूतयोरभ्यनतरे कुलादिकार्यनिमित्तं परस्परमुल्लपतोस्तृतयीस्योशुश्रूपोर्बहिः करणं, अथवाऽपदिष्टः सत्रभ्यन्ते गत्वा तद् गच्छादिप्रयोजन ब्रूते एतदभ्यन्तरकरणम्। यदि वा तेन सह ये बाह्यभावं मन्यते, तानपि तथाऽनुवर्तयति, यथा तं तजेस्विनमभिमन्यन्ते, एतदभ्यन्तकरणम्, वव०

अब्भंतरग- पुं० *[आभयन्तरक]*
आसन्नमन्त्रिप्रभृतौ, विपा०१ श्रु० ३ अ०। ठा०।
अभ्यन्तः मध्य भवं। ठा०।

अब्भंतरठाणिज्ज- पुं० *[अभ्यन्तरस्थानीय]*
आभ्यन्तरनामसु प्रेष्यपुरुषेषु, 'अब्भिंतरट्ठावणिज्जे पुरिसे सद्दा-वेइ'। नाया० १३ अ०।

अब्भंतरतव- न० *[अभ्यन्तरतपस्]*
अभ्यन्तरमन्तरस्यैव शरीरस्य तापनात्सम्यग्दृष्टिभिरेव तप्तया प्रतीयमानत्वाच्च, तच्च तत्तपश्चेति अभ्यन्तरतपः। उव०।
लौकिकैरनभिलभ्यत्वात् तत्रान्तरीयं परमार्थतोऽनासेव्यमान-त्वात् मोक्षाप्राप्त्यन्तरङ्गत्वाच्च-ऽभ्यनतरमिति। ठा० ६ ठा०। भग०। उत्त०
अभ्यन्तरस्यैव शरीरस्य कार्मणलक्षणस्य तापकत्वादभ्यन्तर-तपः। पण्हा० ५ अ०।
प्रायश्चितादौ तपोभेदे, उव०।

'प्रायश्चितं ध्यानं, वैयावृत्त्यं विनयमथोत्सर्गः।
स्वाध्याया इति तपः षट् प्रकारमाभ्यन्तरं भवति'
गच्छा०। उत्त०।

'छव्विहे अब्भंतिरए तवे पन्नते। तं जहा पायच्छित्तं विणओ वेयावच्चं सज्झाओ झाण विउस्सग्गो'। ठा० ६ ठा०।

अब्भंतरतो- अव्य० *[अभ्यन्तरतस्]*
अभ्यन्तरे मध्ये इत्यर्थे, । आव० म० ।

अब्भंतरपरिस-पुं० *[अभ्यन्तरपरिषत्]*
वयस्यमण्डलीस्थानीयायां परममित्रसदृश्यांमित्यपर नामिका-यां देवेन्द्राणां पर्षदि, रा०। ठा०।

अब्भंतरपाणीय- त्रि० *[अभ्यन्तरपानीय]*
अभ्यन्तरे पानीयं यस्य स तथा। मध्यस्थलजयुकते चौर-पल्यादावर्थे, नाया० १८ अ०।

अब्भंतरपुक्खरद्ध-न० *[अभ्यन्तरपुष्करार्द्धं]*
मानुषोत्तरपर्वतादर्वाग्भवे, पुष्करवद्वीपस्याऽर्द्धे,जीवा० ३ प्रति०। सूर०। चंद।

अब्भंतरपुप्फफल-त्रि० *[अभ्यन्तरपुष्पफल]*
अभ्यन्तराणि अभ्यन्तरभागवर्त्तीनि पुष्पाणि च फलानि च पुष्पफलानि येषाम्। पत्रावृत्तत्वाद् बहिरदृष्टपुष्पफलके वृक्षे, रा०।

अब्भंतरबाहरिय-त्रि० *[अभ्यन्तरबाहिरिक]*
सहाऽभ्यन्तरेण नगरमध्यभागेन बाहिरिका नगरबहिर्भागे यत्र तत्ततथा। नगरमध्ये बाहरिकाया विद्यमानत्वं, दशा०१० अ०।

अब्भंतरय-पु० *[आभ्यन्तरक]*
राजानमतिप्रत्यासन्नीभूयाऽवलगति, वव० १ उ०।

अब्भंतरय-पुं० *[आभ्यन्तरक]*
राजानमतिप्रत्यासन्नीभूयाऽवलगति, वव० १ उ०।

अब्भंतरसंबुक्का-स्त्री० *[अभ्यन्तरशम्बूका]*
यस्यां क्षेत्रबहिर्बागाच्छङ्गवृत्तत्वगत्याऽटन क्षेत्रमध्यभागमायाति साऽभ्यन्तरशम्बूका। ठा० ६ ठा०।

अब्भंतरसगडुद्धिया- स्त्री० *[अभ्नतरशकटोद्धिका]*
अङ्गुष्ठौ मीलयित्वा विस्तार्य पार्ष्णी तु बाह्यतस्तिष्ठत्युत्सर्गे, एष भणितोऽभ्यन्तरशकटोद्धकादोष इति। कायोत्सर्गस्योद्धिका-दोषभेदे, आव०।

अब्भंतरोहि- पुं० *[अभ्यन्तरावधि]*
अवधिभेदे, अयं ह्यभ्यन्तरावधिः प्रदीपप्रभापटलवदवधिमता जीवेन सह सर्वतो नैरन्तर्येण सम्बद्धोऽखण्डो देशरहित एक स्वरूपोऽत एवाऽयं सम्बद्धावधिर्देशवधिश्चोच्यते। विशे०।

अब्भंतरिया-स्त्री० *[आभ्यन्तरिकी]*
अभ्यन्तरभागवर्तिन्यां जनवनिकायाम्, नाया० १ अ०।

अब्भक्खइज्ज-त्रि० *[अभ्याख्यातव्य]*
अभ्याख्यानदाप्ये, अभ्याख्यानं नामाऽसदभियोगः, यथा चौरं चौरमित्याह। आचा० १ श्रु० १ अ० ३ उ०।

अब्भक्खाण- न० *[अभ्याख्यान]*
आभिमुख्येन आख्यानं दोषाविष्करणमभ्याख्यानम्ष भग० ५ श० ६ उ०। उव०।
प्रकटमसद्दोषापरोपणे, पन्न० २२ पद०। पण्हा०। आव०।
असद् दूषणाभिधाने, पण्हा० २ अ०।
अभिन्यसने, असदध्यारोपणे च। आव० ५ अ०।
परस्याभिमुखं दूषणवचने पण्हा० २ अ०।
असदभियोगे, यथा चौरं चौरमित्याह। आचा० १ श्रु० १ अ० ३० उ०। उव०। सूय०।
एगे अब्भक्खाणे। ठा० १ ठा०१ उ०।
असतां दोषाणामाख्यानम्, अधर्मद्वारस्य सप्तदशं नाम।पण्हा०

अब्भच्छण्ण-त्रि० *[अभ्रच्छन्न]*
मेघावृते, बुह० १ उ०।

अब्भणुण्णा- स्त्री० *[अभ्यनुज्ञा]*
कर्तव्यानुमतिदाने, ठा०।

अब्भणुण्णाय-त्रि० *[अभ्यनुज्ञात]*
कर्तव्यतयाऽनुमते, ठा०५ ठा०१ उ०।

अब्भत्थणा- स्त्री-*[अभ्यर्थना]*
जइ अब्भत्ते अपरं , कारणजाते करेज्ज सो को वि। तत्थ वि इच्छाकारो , न कप्पइ बलाभिओगाओ आव० म०।

अब्भपडल- न० *[अभ्रपटल]*
मेघवृन्दे, पृथिवीकायपिरमाणविशेषे च । अभ्रपटलमिव मेघ-वृन्दमिव बृहच्छायाहेतुत्वात् अभ्रपटलं, पिङ्गलं च कपिशं सुवर्णकच्छिकानिर्मितत्वात् उज्ज्वलं निर्मलं यत्त-त्तथा। अथवा अभ्रमभ्रकं पृथिवीकायपरिणामविशेषस्तत्पटलमिव पिङ्गलं चोज्ज्वंलं च तत्तथा। तेन। उव० ।सूय०। जीवा०। पन्न०।
मणिभेदः, पृथिवीभेदः। आचा० । उत्त०।

अब्भबालुया- स्त्री० *[अभ्रवालुका]*
अभ्रपटलमिक्षिवालुकारूपे खरबादरपृथिवीकायभेदे, पन्न० १ पद०। जीवा०। सूय०।

अब्भरहिय- त्रि० *[अभ्यर्हित]*
राजामात्यादिपुत्रे गौरविके, बुह० १ उ०।
राजमान्ये, बुह० १ उ०। निसि०।

अब्भराग- पुं० *[अभ्रराग]*
सायं सूर्यकरयोगाद् मेघानां नानावर्णे, पन्न० १७ पद०।

अब्भरुक्ख- पुं० *[अभ्रवृक्ष]*
अभ्रात्मको वृक्षोऽभ्रवृक्षः। भग० ३ श० ६ उ०।
वृक्षाकारेण परिणतेऽभ्रे, जीवा० ३ प्रति०। अनुओ०।

अब्भवद्दलय- न० *[अभ्रवार्दलक]*
अभ्ररूपं वारो जलस्य दलकं कारणमभ्रवार्दलकम्। मेघे, भग०१५ श० १ उ० ।
अभ्रे आकासे वार्दलकमभ्रवार्दलकम्। न भोगतमेघे, अब्भवद्दलयाइं विउव्वइ । आव० म० ।
अभ्राणि मेघास्तैर्वार्दलकम्। मेघैः कृते, ठा० ३ उ०। रा०।

अब्भवालुया– स्त्री० *[अभ्रवालुका]*
अभ्रपटलमिश्रा वालुका। पन्न०। उत्त०। जीवा० ।

अब्भसंज्ञा- स्त्री० *[अभ्रसन्ध्या]*
सन्ध्याकाले नीलाद्यभ्रपरिणतौ, जीवा० ३ प्रति०।

अब्भसंथड-न० *[अभ्रसंस्तृत]*
मेघैराकाशाच्छादने, ठा० ४ उ०।

अब्भसण-न० *[अभ्यसन]*
अब्भसणं ति वा गुणणं ति वा एगट्ठा। दशा० १ ।

अब्भहिय- त्रि० *[अभ्यधिक]*

अत्यर्थे, पण्हा० ४ अ० । भग०

अब्भहियभीमभेरवप्पगारेणं। अभ्यधिकं यथा भवत्येवं भीम-भरेवोऽतिभीष्मो रवप्रकारो यस्य स तथा तेन । नाया०१ अ०। पन्न० ।

अब्भहियं सोभितुमाढतो । आव० म० ।

अब्भहियरायतेयलच्छीए। कल्प० ३ ।

अब्भाइक्खिज्ज– त्रि० *[अभ्याख्यान]*

असदभियोगः। आचा० ।

प्रकटमसद्दोषारोपणम्। ठा०।

अब्भिहियतरग-त्रि० *[अभ्यधिकतरक]*

विपुलतरे (विस्तीर्णे) नं०।

अभ्भागम्- पुं०[अभ्यागम]

आभिमुख्येनाऽऽगम्यतेऽत्र। आसन्नवासे, निसि० २ उ०।

अब्भागमिय-पुं० *[अभ्यागमिक]*

आगन्तुकेषु, सूय० १ श्रु० २ अ० ३ उ०।

अब्भागय- पुं० *[अभ्यागत]*

तिथिपर्वोत्सवाः सर्वे येन त्यक्ता महात्मना अतिथिं तं विजानीयाच्छेषमभ्यागतं विदुः।१ । इत्यतिथेर्भेदोऽस्य । आचा० १ श्रु० २ अ० २ उ०।

अब्भावगासिय-न० *[अभ्रावकाशिक]*

सहकारादेर्मूलाधोभागवर्तिनि प्रतिश्रये, बुह० ३ उ०।

अब्भास-पुं० *[अभ्यास]*

अभ्यसनमभ्यासः। ठा०४ ठा०४ उ०।

गुणने, अनुओ०।

भावनायाम्, अब्भास त्ति वा भावण त्ति वा एकार्थम् । बुह० १ उ० ।

अब्भासकरण- न० *[अभ्यासकरण]*

पार्श्वस्थादिधर्माच्च्युतस्य पुनस्तत्रैव संस्थानलक्षणे संभोगभेदे, सम० ९ सम०। वव०।

यं अभ्यासगतास्तेषामात्मसमीपवर्तित्वकरणे, वव० ३ उ०।

जो धम्मच्चुओ तं पुणो धम्मे ठवेंतेण। निसि०

अब्भासग-पुं० *[अभ्यासकरण]*

पार्श्वस्तादिधर्माच्च्युतस्य पुनस्तस्तत्रैव संस्थानलक्षणे संभोगभेदे, सम० ९ सम०। वव०।

ये अभ्यासगतास्तेषामात्मसमीपर्तित्वकरणे, वव० ३ उ०।

अब्भासग- पुं० *[अभ्यासक]*

निक्षेपे, णिक्खेवो स्थापनाऽभ्यासक इत्यनर्थान्तरम् आव० चू०१ अ०।

अब्भासगुण- पुं० *[अभ्यासगुण]*

गुणभेदे, सच भोजनादिविषयः। तद्यथातदहर्जातबालकोऽपि भवान्तराभ्यासात् स्तनादिकं मुख एव प्रक्षिपति, उपरतरुदि-तश्च भवति। यदि वाऽभ्यासवशात्सतमसेऽपि कवलादेर्मुख-विवरप्रक्षेपाद् व्याकुलितचेतसोऽपि च तुद्गात्रकण्डूयनमिति। आचा०१ श्रु०२ अ०१ उ०।

अब्भासत्थ- त्रि० *[अभ्याशस्थ]*

निकटवर्त्तिनि, वव० ६ उ०।

अब्भासवत्तिअ-१ न० *[अभ्याशवर्तित्व]*

अभ्याशो गौरव्यस्य समीपं, तत्र वर्तितुं शीलमस्येत्यभ्या-शवर्त्ती, तद्भावोऽभ्याशवर्तित्वम्। भग० २५ श० ७ उ०। गुरुपादपीठिकाप्रत्यासन्नवर्त्तित्वलक्षणे लोकोपचारविनये, वव० १ उ०। उव०। ठा०। गच्छा०।

अब्भासवत्तिअ-२ पुं० *[अभ्यासप्रत्यय]*

अभ्यासो हेवाको वर्णनीयासन्नता वा प्रत्ययो निमित्तं यत्र दीयते, तदभ्यासप्रत्ययम्। हेवाकेन वर्णनीयासन्न तया वा प्रकाशनादौ,एतेन सतो गुणान् दीपयति। दृश्यते ह्याभ्या-सान्निर्विषयाऽपि निष्फलाऽपि च प्रवृत्तिः, सन्निहितस्य च प्रायेण गुणानामेव ग्रहणमिति ठा० ४ ठा० ४ उ०, निसि०।

अब्भासवत्तिअ- ३ -न० *[अभ्यासप्रीतिक]*

अभ्यासे प्रीतिकं प्रेम अभ्याप्रीतिकम्। लोकापचारविनयभेदे, भग० २ श० ५ उ०।

अब्भासवित्ति- स्त्री० *[अभ्याशवृत्ति]*

नरेन्द्रादीनां समीपेऽवस्थाने, दश० ९ अ० १ उ०।

अब्भासासण-न० *[अभ्याशासन्]*

उपवरणीयस्यान्तिकेऽवस्थाने, सम० ९१ सम०।

अब्भासिय-त्रि० *[अभाषित]*

द्रविडादिदेशोद्भवे, बुह० ३ उ०।

अब्भाहत– त्रि० *[अभ्याहत]*

मत्तः। उत्त०।

अब्भिंग-पुं० *[अभ्यङ्ग]*

स्नेहने, नाया० १८ अ०।

पश्चादुन्मर्दने, दशा० ६ अ०।

अब्भिंगिय –त्रि० *[अब्यङ्गित]*

अभ्यङ्गः क्रियते स्म यस्य। तस्मिन् , नाया० १ अ०।

अब्भुक्खणीया-स्त्री० *[अभ्युक्षणीया]*

पवनप्रेरितासु उदक कर्णिकासु, बुह० १ उ०।

अब्भुग्गम- पुं० *[अभ्युद्गम्]*

उदये, सूय० १ श्रु० १४ अ०।

अब्भुग्गय- १ त्रि० *[अभ्युद्गत]*

अभिमुखमुद्गतोऽभ्युद्गतः। उत्पाटिते, उव०।

आभिमुख्येन सर्तो विनिर्गते, चंद० १८ पाहु०।

अङ्कुरवदुत्पन्ने वर्द्धितुं प्रवृत्ते, उन्नते च। नाया०१ अ०। जंबू०। विपा०।

अग्रिमभागे मनागुन्नते, रा० जंबू०।

अभ्युत्कटे, रा०। जीवा०। विपा०।

अग्रिमभागे मनागुन्नते, रा०। जंबू०।

अभ्युत्कटे, रा० जीवा०

भद्वयमध्यतो विनिर्गते, जंबू०२ वक्ष०।

अतिरमणीयतया द्रष्टृणां प्रत्यभिमुमुत्प्राबल्येन स्थिते रा०। अब्भुग्गयमउल मल्लियाविमलधवलदंतं अभ्युद्गतमुकुला आयातकुडमाला ये मल्लिकाविचकिलास्तद्वद् विमलौ दन्तौ यस्य। अथवा प्राकृतत्वात् मल्लिकामुकुलवदभ्युद्गतावुन्नतौ विमलधवलदन्तौ यस्य तदभ्युदगतमुकुलमल्लिकाविमलध-वलदन्तम्। उपा० २।

अब्भुग्गयमउलमल्लियाधवलसरिससंठाणं अभ्युद्गतान्युन्नतानि मुकुलमल्लिकेय कोरकावस्थविचकिलकुसुमवद्धवलानि तथा सदृशं समं संस्थानं येषां तानि। जंबू० ७ वक्ष० १

अब्भुग्गयसुकयवइश्वेइयतोरणवररियलीलट्ठिय सालिभंजियागं अभ्युद्गतो उच्छ्रिते सुकृतवज्रवेदिकायाः सम्बन्धिनि तोरणवरे रचिता लीलीस्थिताः शालभञ्चिका यस्यां सा तथा ताम् । (शिबिकाम्) भग०९श० ३३ उ०। आव०म०। नाया०। रा०।

अङ्कुखदुत्पन्ने च, नाया० १ अ०।

अब्भुग्गय-२ त्रि० *[अभ्रोद्गत]*

उच्चे, भग० १२ श० ५ उ०।

युद्वा आकाशे उद्गता प्रबलतया सर्वतस्तिर्यक् प्रसृता। जम्बू० ७ वक्ष० ।

अब्भुग्गयभिंगार- *[अभ्युद्गतभृङ्गार]*

अभ्युद्गतोऽभिमुखमुद्गत उत्पा-टितो भृङ्गारो यस्य स तथा। तथाभूते महाभागे, उव०। भग० दशा०।

अब्भुग्गयमुसिय- त्रि०

अभ्युद्गतोच्छ्रित अभ्युद्गतश्चासावुच्छ्रितश्चेत्यभ्युद्गतोच्छ्रितः। अत्यर्थमुच्चे भग०।

अब्भुग्गयमुसियपहसिया अभ्युद्गतमभ्रोदग्तं वा यथा भवत्येवमुच्छ्रितश्चेतयभ्युद्गतोच्छ्रितः। अत्यर्थमुच्च इत्यर्थः। प्रथमैकवचनलोपश्चात्र दृश्यः। तथा प्रहसित इव प्रभापटल परिगतया प्रहसितः। प्रभया वि सितः शुक्लः संबद्धो वा प्रभासित इति।भग० २ श० ८ उ०।सम० ।जंबू०। जीवा०।

अब्भुज्जय- त्रि० *[अभ्युद्यत]*

वर्द्धितुं प्रवृत्ते, अब्भुग्गएसु अब्भुज्जएसु अब्भुट्ठिएसु (मेघेषु) नाया० १ अ० ।

सोद्यमे, नाया० ५ अ०।

उद्यतविहारिणि, वव०४ उ०।

अब्भुज्जयं दुविधं अब्भुज्जयमरणेण, अब्भुज्जयविहारेण वा। निसि० १६ उ०।

अब्भुज्जयमरण-न० *[अभ्युद्यतमरण]*

अभ्युद्यतस्य मरणे,तन्निषिद्धमिति अनन्तरमुक्तम। बुह०१ उ०। निसि०। पंच० भग०। संथा०।

अब्भुट्ठाण-न० *[अभ्युत्थान]*

आभिमुक्येनोत्थानमुद्गमनमभ्युत्थानम। गच्छा०२ अधि०। उत्त०। तदुचितस्यागतस्य अभिमुखमुत्थाने, दश०।

विनयार्हस्य दर्शनादेवाऽऽसनत्यजने, ठा०७ ठा०।

संसभ्रममासनमोचने, उत्त० ३ अ०। वव०।

पुनर्नैतत्करिष्यामीत्यभ्युपगमे, ठा० ३ ठा० ३ उ०।

प्रयत्ने, ठा०२ ठा०१ उ०।

आसनत्यागरूपे, संभोगाऽसंभोगस्थाने यथा पार्श्वस्थादेः अभ्युत्थानं कुर्वस्तद्विसंभोग्यः।सम०१२सम।आव०।आव०चू गुरूनागतान् दृष्ट्वा स्वकीयस्थानादूर्ध्वीभवने, उत्त० ३३ अ०।

अब्भुट्ठित्तए-अव्य० *[अभ्युत्थातुम्]*

अभ्युपगन्तुमित्यर्थे, ठा० २ ठा० १ उ०।

अब्भुट्ठिय- त्रि० *[अभ्युत्थित]*

कृतोद्यमे, अब्भुट्ठियं रायरिसिं पव्वज्जाठणमुत्तमं‘ ।उत्त०९ अ० ‘अब्भुट्ठिएसु मेहेसु’ प्रर्वषणाय कृतोद्यमेषु, नाया०१ अ०।

अभ्युदिते, उत्त० ९ अ०। सम० ।

अब्भुट्ठेत्ता- त्रि० *[अभ्युत्थातृ]*

अभ्युपगन्तरि, ठा०५ ठा०१ उ०।

अबभुट्ठेयवव- त्रि० *[अभ्युत्थातव्य]*

अभ्युपगन्तव्ये, ठा०८ ठा०।

अब्भुण्णय-त्रि० *[अभ्युन्नत]*

उन्नतिमति, नाया०१ अ०।

अब्भुण्णयरइयतलिणतंबसुइनिद्धनखा-अभ्युन्नता रतिदाः सुख-दाः, रचिता इव रचिताः, तलिनाः प्रतलाः, ताम्रा आरक्ताः शुचयः पवित्राः, स्निग्धाः कान्ताः, नखा येषां ते ।पण्हा०४ अ० ‘अब्भुण्णयपीणरइयसंठियपओहरा’ अभ्युन्नतावुच्चौ पीनौ स्थूलौ रतिदौ सुखप्रदौ संस्थितौ विशिष्टसंस्थानवन्तौ पयोधरौ स्तनौ यस्याः सा तथा।(वरतरुणी) जीवा० ३ प्रति०। नाया०।

अत्युत्कटे, आव०म०। जंबू०। रा०।

अब्भुदय-पुं० *[अभ्युदय]*
राजलक्ष्म्यादिलाभे, नाया० २ अ० ।
अभ्युदयो यथेह राज्याभिषेकादिप्रीतये भवति, तथा स्वर्गापवर्ग प्राप्तिहेतुत्वादस्य संस्तारकस्य, अत एषोऽप्यभ्युदः ।
। संथा० ।

अब्भुय-त्रि० *[अद्भुत्]*
सकलभवनातिशायिनि श्रुतशिल्पत्यागतपः- शौर्यकर्मादिके अपूर्वे वस्तुनि, उपचारात् तद्दर्शन श्रणादिभ्यो जाते विस्मयरूपे रसविशेषे, पुं० । अनुओ० ।

अब्भुवगम-पुं० *[अभ्युपगम्]*
अङ्गीकरणे, ठा० २ ठा० ४ उ० ।

अब्भुवगमसिद्धंत-पु० *[अभ्युपगमसिद्धान्त]*
सिद्धान्तभेदे, बुह०
जं अब्भुविच्च कीरइ, सेच्छाए कहा स अब्भुवगमो उ।
सीतो वन्ही गयजूह तणग्गे मग्गुखरसिंगा।।
यत अभ्युपेत्य स्वेच्छया अभ्युपगम्य वादकथा क्रियते। यथाशीतो वह्निः, गजयूथं तृणाग्रे, मद्गोजर्जलकाकस्य, खरस्य च श्रङ्गम् इत्येषोऽभ्युपगमसिद्धान्तः। बुह० १ उ०।
अपरीक्षितार्थाभ्युपगमात्तद्विशेषपरीक्षणमभ्युपगमसिद्धान्तः। तद्यथा- किं शब्दः? इति विचारे कश्चिदाह- असतु द्रव्यं शब्दः, स तु किं नित्योऽथाऽनित्य इत्येवं विचारः। सूय०१श्रु०१२ अ०।

अब्भुवगय- त्रि० *[अभ्युपगत]*
अभि आभिमुख्येनोपगतः। आचा० २ श्रु० ३ अ० १ उ०।
अब्युपगमावति, वव० ७ उ०।
संप्राप्ते, श्रुतसंपदोपसंपन्ने, आव०म०।

अब्भोवगमिया- स्त्री० *[आभ्युपगमिकी]*
अभ्युपगमेनाङ्गीकरणेन निर्वृत्ता, तत्र भवा वाऽऽभ्युपगमिकी। स्वमभ्युपगतायां (वे-दनायाम)। ठा० २ ठा० ४ उ०।
या हि स्वमभ्युपगम्यते, यथा साधुभिः प्रव्रज्यापरतिपत्तितो ब्रह्मचर्यभूमिशयनकेशोल्लुञ्चनातापनादिभिः
शरीरपीडाभ्युपग- मनम्। भग०१ श०४ उ०।
'दुविहा वेदणा पन्नत्ता । तं जहा अब्भोवगमिया य उवक्कमिया य'। पन्न० ३४ पद०।

अभग्ग- त्रि० *[अभग्न]*
न भग्नोऽभग्नः। सर्वथाऽविनाशिते, अपीडितम्। आव० ५ अ०। आव० चू०।

अभग्गसेण- पु० *[अभग्नसेन]*
विजयाभिधानचौरसेनापतिपुत्रे, विपा० ३ श्रु० ६ अ०।
वारतपुरराजनि, आव०चू० ६ अ०।

अभज्जिय- त्रि० *[अभग्न]*
अमर्दिते, अवराधिते, आचा० १ श्रु० १अ० १ उ०।

अभडप्पवेसा- स्त्री० *[अभटप्रवेशा]*
अविद्यमानो भटानां राजाऽऽज्ञादायिनां पुरुषाणां प्रवेशः कुटुम्बिगृहेषु यस्या सा तथा। यत्र राजाज्ञां दातुं भटाः प्रवेष्टुं न शक्नुवन्ति तादृश्यां पुर्याम्, भग० १२ श० ४ उ०। जंबू०। नाया०। विपा०।

अभत्तट्ठ- पुं० *[अभक्तार्थ]*
भक्ते न भोजनेनाऽर्थः प्रयोजनं, भक्ताऽर्थः, न भक्तार्थोऽभक्तार्थः। अथवा न विद्यते भक्तार्थो यस्मिन् प्रत्याख्यानविशेषे सोऽभक्तार्थः। उपवासे, आव० ।

अभत्तट्ठिय- पुं० *[अभक्ताऽर्थिक]*
उपवासिके, ओह०।

अभत्तपाण- न० *[अभक्तपान]*
भक्तपानाऽलाभे, वव० ७उ०।

अभय- न० *[अभय]*
विशिष्टे आत्मनः स्वास्थये निश्रेयसे धर्मभूमिकानिबन्धनभूतायां धृतौ, । रा०।
अभयं पत्थिवा तुब्भं, अभयदाया भवाहि य। उत्त० १८ अ०।
प्राणिरक्षायाम्, सूय० १ श्रु०६ अ०।
अविद्यमानं भयमस्मिन् सत्त्वानामित्यभयः। सप्तदशविधे संयमे, आचा०१ श्रु०१ अ०५ उ० ।
सप्तप्रकारकभयरहिते, त्रि०। सूय०१ श्रु०६ अ०।
श्रेणिकपुत्रे अभयकुमारे, पु०। आव०चू० १ अ०। आव०म०।

अभयंकर- त्रि० *[अभयङ्कर]*
अभयं प्राणिनां प्राणरक्षारूपं स्वतः परतश्च सदुपदेशदानात् करोतीत्यभयङ्करः । स्वतो हिंसानिवृत्तत्वेन परतश्च हिंसां मा कार्षीरित्युपदेशदानेन प्राणिनामनुकम्पके, अभयंकरे वीरअणंतचक्खू। सूय० १ श्रु० ६ अ०।
निर्भयकरे, तं०।

अभयकुमार- पु० *[अभयकुमार]*
श्रेणिकस्य राज्ञः नन्दादेव्यामुत्पन्ने पुत्रे, नाया० १ अ०। नं०। निसि०। ठा०। विशे०। आव०म०।

अभयप्पदाण- न० *[अभयप्रदान]*
दानभेदे, 'दाणाण सेट्ठं अभयप्पदाणं' तथा स्वपरानुग्रहार्थमर्थिने दीयत इति दानमनेकधा, तेषां मध्ये जीवानां जीवितार्थि त्राणकारित्यादभयदानं श्रेष्ठम्।सूय० १ श्रु०६ अ०।

अभयसेण- पुं० *[अभयसेन]*
वारतकपुरराजनि, पिंड०। आव०।

अभया- स्त्री० *[अभया]*
दधिवाहनभूपस्य स्वनामख्यातायां राज्ञयाम्, । तं० ।
हरीतक्याम्, निसि० १५ उ० । आचा० ।

अभयारिष्ट- न० *[अभयारिष्ट]*
स्वनामख्याते मद्यविशेषे, सूय० १ श्रु० ८ अ० ।

अभवसिद्धिय- पुं० *[अभवसिद्धिक]*
न भवसिद्धिकोऽभवसिद्धिकः । अभव्ये, ठा० १ठा०१उ० । नं० 'नेरइया दुविहा पन्नत्ता। तं जहाभवसिद्धिया चेव, अभवसिद्धिया चेव० जाव वेमाणिया' । ठा० २ ठा० २ उ० ।

अभविय- पुं० *[अभव्य]*
तथाविधाऽनादिपारिणामिकभावत् (कदाचनाऽपि) सिद्धिगमन अयोग्ये जीवे, विशे० । नं० । बुह० । दशा० ।

अभाव- पुं० *[अभाव]*
अशुभभावे, उत्त० १ अ० ।
जीवादयः पदार्था अन्याऽपेक्षया अभावाः । निषेधे, भग० ४२ श० १ उ० ।
विनाशे, बुह० १ उ० । असम्भवे, दश० १ उ० ।
असत्तायाम्, सम० ।
परिचाराऽभावो द्विविधः-विद्यमानाऽभावोऽविद्यमानाऽभावः । अविद्यमानः सन्, अभावोऽविद्यमानाऽभावः । वव० २ उ० ।

अभाविय- त्रि0० *[अभावित]*
असंसर्गप्राप्ते प्राप्तसंसर्गे वा वज्रतन्दुलकल्पे, अयोग्ये च। 'अभाविया परिसा' तृतीयमाश्चर्यम्। ठा० १० ठा० ।

अभावियक्खेत्त- न० *[अभावितक्षेत्र]*
संविग्नसाधुविषयश्रद्धाविकल्पे, पार्श्वस्थादिभाविते च क्षेत्रे, बुह० ३ उ० ।

अभावुग- न० *[अभावुक]*
वेल्लुकादिरुपभावुकविलक्षणे चलनादौ, । आव० ।

अभासग- पुं० *[अभाषक]*
भाषाऽपर्याप्ते अयोगिसिद्धे, एकेन्द्रिये च। ठा० २ ठा० ४ उ० । अनुओ० । चंद० । सूर० ।

अभासा- स्त्री० *[अभाषा]*
मृषाभाषायाम्, सत्यामृषायां च। भग० २५ श० ३ उ० ।

अभासिय- त्रि० *[अभासिक]*
अदीप्तिमति भूम्यादिके द्रव्ये, निसि० १३ उ० ।

अभि- अव्य० *[अभि]*
आभिमुख्ये, अनुओ० । आचा० । विपा० ।
संमुखे,नं० ।
विकल्पे, पदार्थसंभावने च। निसि० १ उ० ।

अभिआवण्ण- त्रि० *[अभ्यापन्न]*
अभिमुखं समापन्ने, सूय० १ श्रु० ४ अ० २ उ० ।

अभिइ- न० *[अभिजित्]*
ब्रह्मदेवताके नक्षत्रभेदे, ठा० २ ठा० ३ उ० । अनुओ० ।
दो अभिई' । ठा० २ ठा० ३ उ० । जंबू०
नक्षत्रेण सहाऽस्य योगस्तत्रैव। ज्यो० ६ पाहु० ।
वीतभयनगरराजस्योदायनस्य प्रभावत्यां देव्यामुत्पन्ने पुत्रे, स च प्रव्रजता स्वपित्रा तद्भागिनेये केशिकुमारश्रमणे राज्यमधिष्ठापिते द्विष्टः सन्, संलेखनया मृतः सन्, असुरकुमारदेवत्वेनोत्पन्नः । भग० १३ श० ६ उ० । ठा० ।
नक्षत्रविशेषः । सूर्य० । ठा० ।

अभिउंजिय- अव्य० *[अभियुज्य]*
सम्बन्धमुपागत्य प्रतिस्पर्द्धे, ठा० ३ ठा० ४ उ० ।
वशीकृत्याऽऽश्लिष्य वा इत्येतेषामर्थे, दशा० १० अ० ।

अभिओग- पुं० *[अभियोग]*
अभियुज्यमानतायाम्, स द्विविधो–दैवो मानुषिकश्च। वव० ८ उ० ।
आदेशकर्मणि, उव० । पण्हा० ।
आज्ञायाम्, ठा० १० ठा० ।
वशीकरणे, निसि० १ उ० ।
अभिभवे, आव० ५ अ० । बुह० । सूय० ।
गर्वे, आव० ५ अ० ।
अभियोजन विद्यामन्त्रादिभिः परेषां वशीकरणादिरभियोगः । बुह० ।

अभिओगी- स्त्री० *[आभियोगी]*
आ समन्तादाभिमुख्येन युज्यन्ते प्रेष्यकर्मणि व्यापार्यन्ते इत्याभियोग्याः किङ्करस्थानीया देवविशेषास्तेषामियमाभियोगी भावनायाम्, बुह० ।

अभिओयण- न० *[अभियोजन]*
परेषा विद्यामन्त्रादिभिर्वशीकरणे, पन्न० २० पद० । आव० ।

अभिकंखमाण- त्रि० *[अभिकाङ्क्षत्]*
कर्तुमिच्छति, दश० ९ अ० ३ उ० ।

अभिकंखा- स्त्री० *[अभिकाङ्क्षा]*
अभिलाषे, सूय०१ श्रु०२ अ० २ उ० । आचा० ।

अभिक्कंत- त्रि० *[अभिक्रान्त]*
अतिलङ्घिते, आचा०१ श्रु०४ अ०५ उ० ।
भावे निष्ठाप्रत्ययः । अभिक्रमणे, दश०४ अ० ।

अभिक्कंतकिरिया- स्त्री० *[अभिक्रान्तक्रिया]*
चरकादिभिरनवसेवितपूर्वायां वसतौ,आचा०२ श्रु०२ अ०२उ०

अभिक्कंतकूरकम्म- त्रि० *[अभिक्रान्तक्रूरकर्मन्]*
हिंसादिक्रिया प्रवृत्ते, सूय० २ श्रु० २ अ० । आचा० ।
अभिक्कंतवय- न० *[अभिक्रान्तवयस्]*
जरामतिमृत्यु वाऽतिक्रान्ते, आद्यवयोद्वयातिक्रमे जराभिमुखे वयसि, बालादीनां चयोपचयवत्यवस्था, तामभिमुखमाक्रान्ते, आचा० १ श्रु० २ अ० १ उ० ।
अभिक्कमण- न० *[अभिक्रमण]*
अभिमुखं क्रमणे, आचा० १ श्रु० ८ अ०८उ० ।
अभिक्कममाण- त्रि० *[अभिक्रममाण]*
गच्छति, आचा० १ श्रु० १ अ० २ उ० ।
अभिक्कम्म- अव्य० *[अभिक्रम्य]*
आभिमुख्येन क्रान्त्वेत्यर्थे, सूय० १ श्रु० १ अ० २ उ० ।
अभिक्खणं- अव्य० *[अभीक्ष्णम्]*
अनवरते, आव०म० ।भग० ।पण्हा० ।विशे० ।सूय० ।आचा० ।
पुनः शब्दार्थे ठा० ५ ठा० १ उ० ।
अभीक्ष्णं पुनः पुनः । विशे० । बुह० । निसि० । दश० । सम०
भूयोभयः । दशा० १० अ० । रा० ।
वारंवारम् । कल्प० ९ । उत्त० ।
असकृत् । दशा० २ अ० ।
भृशम् । सम० ३० सम० ।
अभिक्खणिसेवण- न० *[अभीक्ष्णनिषेवण]*
अभीक्ष्णप्रतिसेवने, वव० ३ उ० ।
अभिक्खमाइण- त्रि० *[अभीक्ष्णमायिन्]*
बहुशो मायाविनि, वव० ३ उ० ।
अभिक्खसेवा- स्त्री० *[अभीक्ष्णसेवा]*
प्रमाणाधिकसेवायाम्, निसि० १ उ० ।
अभिक्खालाभिय- पुं० *[अभिक्षालाभिक]*
अतुच्छानवज्ञानग्राहके भिक्षाचर्याविषयकाभिग्रहविशेषधारके साधौ, उव० । सूय० ।
अभिक्खासेवणा- स्त्री० *[अभीक्ष्णासेवना]*
असकृदा सेवनायाम्, निसि० १ उ० ।
अभिगज्जंत- न० *[अभिगर्जत्]*
घनध्वनिमुञ्चने, उपा०२अ० ।
अभिगम- पुं० *[अभिगम]*
सम्यग्धर्मप्रतिपत्तौ, दशा० ।
अभिगमाः –थेरे भगवंते पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छंति- तं जहा सचित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए, अचित्ताणं दव्वाणं अविउसरणयाए, एगसाडिएणं उत्तरसंगकरणेणं, चक्खुफ्फासे अंजलिपगहेणं,मनसा एगत्तीकरणेणं ।भग०२श०५उ० । सूय० वस्तुनः परिच्छेदे प्राप्तौ अभिगम्यतेऽस्मिन्नित्यभिगमः, इति व्युत्पत्त्या वस्तुपरिच्छेदाधिकरणे, दश० ४ अ० ।
अभिगमण- न० *[अभिगमन]*
अभिमुखगमने, दशा० १०अ० । नाया० । निसि० । सूय० ।
सर्वबाह्यमण्डलादभ्यन्तरप्रविशने,सूर०१३पाहु ।चंद०१ ३पाहु
अभिगमणट्ठयाए,अवगमलक्षणायाऽर्थायेत्यर्थः ।नाया०१२अ०
अभिगमणजोग्ग- त्रि० *[अभिगमनयोग्य]*
अभिमुखगमनायोचिते, रा० ।
अभिगमरुइ- पुं० *[अभिगमरुचि]*
अभिगमो विशिष्टं परिज्ञानं, तेन रुचिर्यस्याऽसौ अभिगम-रुचिः । सम्यक्त्वभेदे, तद्वति च, सो होइ अभिगमरुई, सुयनाणं जस्स अत्थओ दिट्ठं ।एक्कारस अंगाइं, पइण्णगा दिट्ठिवाओ य । यस्य श्रुतज्ञानमर्थतो दृष्टमेकादशाङ्गानि, प्रकीर्णकमित्यत्र जातावेकवचनम् । ततोऽयमर्थः–प्रकीर्णानि उत्तराध्ययनादीनि दृष्टिवादः, चशब्दादुपाङ्गानि च, स भवत्यधिगमरुचिः ।
पन्न० १ पद० । उत्त० ।
अभिगमसम्मत्त- न० *[अभिगमसम्यक्त्व]*
जीवाऽजीवपुण्य पापाऽऽश्रवसंवरनिर्जराबन्धमोक्षेषु परीक्षित-नवपदार्थाऽभिगमप्रत्ययिके सम्यक्त्वभेदे, आव०चू० ४ अ० ।
‘अभिगमसम्मदंसणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा– पडिवाई चेव, अपडिवाई चेव’ । ठा० २ ठा० १ उ० ।
अभिगय- पुं०न० *[अभिगत]*
आभिमुख्येन गतः । प्रविष्टे, बुह० १ उ० ।
अभिगिज्झ- अव्य० *[अभिगृह्य]*
अङ्गीकृत्य अभिमुखीभूयेत्यर्थे, ठा० २ ठा० १ उ० ।
अभिगिज्झंत- त्रि० *[अभिग्रध्यत्]*
आभिमख्येन लभ्यमाने लोभवशगीभवने, सूय० २श्रु० २ उ०
अभिग्गह- पुं० *[अभिग्रह]*
आभिमुख्येन ग्रहोऽभिग्रहः । निसि० २ उ० ।
अभिगृह्यत इत्यभिग्रहः । प्रतिज्ञाविशेषे, आव० ६ अ० ।
साध्वाचारविशेषे, यथेत्थमाहारादिकममीषां कल्पते, इत्थं च न कल्पते । बुह० १ उ० ।
स च द्रव्यादिविषयभेदाच्चतुर्विधः । तत्र द्रव्याभिग्रहो लेप-कृदादिद्रव्यविषयः, क्षेत्राभिग्रहः स्वग्रामपरग्रामादिविषयः, कालाभिग्रहः पूर्वाह्नादिविषयः, भावाभिग्रहस्तु गानहसनादि-प्रवृत्तपुरुषादिविषयः । उव० ।
प्रत्याख्यानभेदे, आव० ६ अ० ।
इदं दर्शनं शोभनं नाऽन्यदेवंरूपे कुमतपरिग्रहे,ठा०२ ठा० १
एष कायिकविनयभेदः । वव० १ उ० । दश० । सम० ।

अभिग्गहियसिज्जासणिय- पुं० *[अभिगृहीतशय्याऽऽसनिक]*
शय्याऽऽसनाऽभिग्रहयुते साध्वाचारे, कल्प०।

अभिग्गहिया- स्त्री० *[अभिगृहीता]*
'अभिग्गहरहिया एसणा जिणकप्पियाणं' । निसि० ४ उ०।
प्रतिनियताऽवधारणे, यथा इदमिदानीं कर्तव्यमिदं नेति। पन्न० ११ पद०।

अभिघट्टिज्जमाण- त्रि० *[अभिघट्यमान]*
वेगेन गच्छति, रा०।

अभिघाय- पुं० *[अभिघात]*
अभिहनने, पण्हा० १ अ०।
लकुटादिप्रहारे, जीत०। निसि०।

अभिचंद- पुं० *[अभिचन्द]* अवसर्पिण्या भरतक्षेत्रे जाते पञ्चदशानां दशमे, सप्तानां चतुर्थे वा कुलकरे, जंबू० २ वक्ष०।
'अभिचंदे णं कुलगरे छधणुसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था'। ठा० २ ठा० १ उ०। आव०। आव०म०। कल्प०।
दशार्हपुरुषभेदे, अंत० १ वर्ग० ।
दिवस्य षष्ठे मुहूर्त्ते, चंद० १० पाहु०। सम० । ज्यो० ।

अभिजाइ- स्त्री० *[अभिजाति]*
कुलीनतायाम्, उत्त० ११ अ०।

अभिजाय- त्रि० *[अभिजात]*
अभि प्रशस्तं जातं जन्म यस्य सः। कुलीने, जंबू०।
लोकोत्तररीत्या दिवसभेदे, चंद० १० पाहु०। ज्यो० ।

अभिजायत्त- न० *[अभिजातत्व]*
चक्षुः प्रतिपाद्यस्येव भूमिकाऽनुसारितायां सत्यवचनाऽतिशयरूपायाम्, सम० ३५ सम०।

अभिजायसड्ढ- त्रि० *[अभिजातश्रद्ध]*
उत्पन्नतत्त्वरुचौ, उत्त० १४ अ०।

अभिजुंजित्ता- अव्य० *[अभियोक्तुम्]*
विद्यादिसामर्थ्यतः, तदनुप्रवेशेन व्यापारयितुम्। भग० ३ श० ५ उ०।

अभिजुंजिय- अव्य० *[अभियुज्य]*
वशीकृत्य, आशिलप्य, भग० २श० ५उ०।
व्यापार्य, स्मारयित्वा, एषामर्थे, सूय० १ श्रु० ५अ० २उ०।

अभिजुत्त- त्रि० *[अभियुक्त]*
पण्डिते, नं०।
संपादितदूषणे, नाया० १४ अ०। ठा०।

अभिज्झा- स्त्री० *[अभिध्या]*
अभिध्यानमभिध्या । सम० ५२ सम०।
तवात्मके गौणमोहनीयकर्मणि, सम० ५२ सम०।

अभिट्ठुय- त्रि० *[अभिष्टुत]*
आभिमुख्येन स्तुतोऽभिष्टुतः। आव० २ अ०।
स्वानामभिः कीर्तिते, ल०। अनुओ०।

अभिड्डुय- त्रि० *[अभिद्रुत]*
अध्यवसायरूपेण व्याप्ते, गर्भाऽऽधानादिदुःखैः पीडिते, सूय० १ श्रु० २अ० ३उ०।

अभिणंदण- पुं० *[अभिनन्दन]*
अस्यामवसर्पिण्या जाते भरतक्षेत्रीये चतुर्थे तीर्थकरे, आव०म०।
तथा अभिनन्द्यते देवेन्द्रादिभिरित्यभिनन्दनः। सर्व एव भगवन्तो यथोक्तस्वरूपा इत्यतो विशेषहेतुप्रतिपादनायाह– 'अभिनंदए अभिनंदाणा तेण' शक्रो गर्भादारभ्याभीक्ष्णं प्रतिक्षणं यमभिवन्दितवानिति अभिनन्दनः। तथा च वृद्ध सम्प्रदायः – गब्भप्पभिई अभिक्खणं सक्केण अभिवंदिया इतो तेण सो अभिनंदणो त्ति नामं कयं । आव०म०। सम० । आव०चू०। आव०।
अभिन्दणो अ भरहे, परवए नंदिसेणाजिणचंदे त्ति। ठा०।
लोकोत्तररीत्या श्रावणमासे, सूर० १० पाहु०।

अभिणंदंत- त्रि० *[अभिनन्दयत्]*
राजानं समृद्धिमन्तमाचक्षाणे, उव०।
जय जीवेत्यादिभण्णतोऽभिवृद्धिमाचक्षणे, भग० ८श० ८ उ०।
प्रीतिं कुर्वति, संथा०।

अभिणंदिज्जमाण- त्रि० *[अभिनन्द्यमान]*
जनमनःसमूहैः समृद्धिमुपनीयमाने जय जीव नववेत्यादिपर्यालोचनात्। उव०। सस्तूयमाने, ठा०९ ठा०।

अभिणय- पुं० *[अभिनय]*
चउव्विहे अभिणए पन्नत्ते। तंजहा– दिट्ठंतिए, पडिसुए, सामंतोवणिए लोगमज्झवासिए। ठा०४ ठा०४ उ०।
अप्येककाश्चतुर्विधमभिनयमभिनयन्ति। तद्यथादार्ष्टान्तिकं, प्रातिश्रुतिकं, सामान्यतो विनिपातिकं, लोकाध्यवसानिकमिति। एते नाट्यविधयोऽभिनयविधयश्च भरतादिसङ्गीतशास्त्रज्ञेभ्योऽवसयाः। आव०म०। रा०।

अभिणव- त्रि० *[अभिनव]*
विशिष्टवर्णादिगुणोपेते, जीवा० ३ प्रति०।

अभिणवधम्म- पुं० *[अभिवधर्मन्]*
अधुनैव गृहीतप्रव्रज्ये, बुह० ४ उ०।

अभिणिक्कंत- त्रि० *[अभिनिष्क्रान्त]*
अधीताऽऽचारादिशास्त्रे, तदर्थभावनोपबृंहितचरणपरिणामे च। आचा०१ श्रु०६अ०१ उ०।

अभिणिगिज्झ- अव्य० *[अभिनिगृह्य]*

अवरुध्येत्यर्थ, आचा० १ श्रु० ३ अ० ३ उ०।

अभिणिचारिया- स्त्री० *[अभिनिचारिका]*

आभिमुख्येन नियता चरिका, सूत्रोपदेशेन बहुव्रजिकादिषु दुर्बलानामाप्यायनिमित्तं पूर्वाह्ने काले समुत्कृ ष्टसमुदाने लघुगमने, वव० ४उ०।

अभिणिपया- स्त्री० *[अभिनिप्रजा]*

अभि प्रत्येकं नियता विविक्ता प्रजा अभिनिप्रजा। प्रत्येकं विविक्तायां प्रजायाम्, वव०९ उ०।

अभिणिबोह- पुं० *[अभिनिबोध]*

अर्थाऽभिभिमुखो नियतः प्रतिनियतस्वरूपो बोधो बोध-विशेषोऽभिनिबोधः। अभि निबुध्यतेऽनेनाऽस्मादस्मिन् वेति। मतिज्ञाने, तदावरणक्षयोपशमे च। आव०म०। । नं०। आव०। ठा०।

आभिमुख्येन निश्चितत्वेन च बुध्यते संवेदयते आत्मा तदित्यभिनिबोधः। अवग्रहादिज्ञाने, अभिनिबुध्यते वस्त्वि-गच्छतीति अभिनिबोधः। मतिज्ञानात्मनि, विशे०।

अभिणियट्टण- न० *[अभिनिवर्तन]*

व्यावर्तने, आचा० १ श्रु० ३ अ० ४ उ०।

अभिणिविट्ठ- त्रि० *[अभिनिविष्ट]*

बद्धाऽऽदरे, उत्त० १४ अ०।

बद्धाऽऽग्रहे, उत्त० १४अ०।

अभिविधिना निविष्टम्। भग० १२ श० ३ उ०।

जीवप्रदेशेषु अभिव्याप्त्या निविष्टे अतिगाढतां गते, भग० १३ श० ७ उ०।

अभिणिवेह- त्रि० *[अभिनिवेध]*

उन्माने, आव०म०।

अभिणिव्वगडा- स्त्री० *[अभिनिवगडा]*

अभि प्रत्येकं नियतो वगडः परिक्षेपो यस्यां सा अभिनिवगडा। पृथक्परिक्षेपायाम्, वव० ६ उ०।

अभिणिव्वगडा- स्त्री० *[अभिनिर्व्याकृता]*

पृथग्विविक्तद्वारायां वसतौ, वव० १ उ०।

अभिणिव्वट्ट- त्रि० *[अभिनिर्वृत्त]*

साङ्गोपाङ्गस्नायुशिरोरमादिकमाभिनिर्वर्त्तनात् संपादिते, आचा० १ श्रु० ६ अ० १ उ०।

अभिणिव्वट्टित्ता- अव्य० *[अभिनिर्वर्त्य]*

समाकृष्येत्यर्थे, अभिणिव्वट्टित्ता णं उवदंसेज्जा।सूय०२श्रु०१

विधायेत्यर्थे, दंडसहस्सं अभिणिव्वट्टित्ता णं उवदंसित्तए। भग० ५ श० ४ उ०।

अभिणिव्वुड- त्रि० *[अभिनिर्वृत]*

क्रोधाद्युपशमेन शान्तीभूते, मुक्ते, सूय०१ श्रु०२ अ०१ उ० विषयकषायाद्युपशमाच्छीतीभूते, आचा०१ श्रु०९ अ०४ उ०। लोभादिजयात् निरातुरे, खंतेऽभिनिव्वुडे दंते, वीतगिद्धी सदा जाए। क्रोधादिपरित्यागात् शान्तीभूते, सूय० १ श्रु०८ अ०। पावाओ विरतेऽभिनिव्वुडे। सूय०१ श्रु०२अ०१ उ०।

अभिनिव्वुडे अमाई० अभिनिर्वृतग्रहणं संसारमहातरुकन्दो-च्छेद्यविप्रतिपत्त्या। आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

अभिणिसज्जा- स्त्री० *[अभिनिषद्या]*

अभि रात्रिमभिव्याप्य स्वाध्यायनिमित्तमागता निषीदन्त्यस्या-मित्यभिनिषद्या। अभिनैषेधिक्यां स्वाध्यायं कृत्वा रात्रिमुषित्वा प्रत्यूषे प्रतियातायां वसतौ, वव० १ उ०।

अभिणिसड- त्रि० *[अभिनिस्सट]*

अभिविधिना निर्गताः सटाः तदवयवरूपाः, केशरिस्टकन्धसटा वा यस्य तदभिनिः सटम्। बहिरभिनिर्गताऽवयवे, भग० १५ श० १ उ०।

अभिणिसिट्ठ- त्रि० *[अभिनिसृष्ट]*

बहिर्भागाऽभिमुखं निसृष्टे जीवा० ३ प्रति०। रा०।

अभिणिसेहिया- स्त्री० *[अभिनैषेधिकी]*

निषेधः स्वाध्यायव्यतिरेकेण सकलव्यापारप्रतिषेधः, तेन निर्वृत्ता नैषेधिकी। अभि आभिमुख्येन संयतप्रायोग्यतया नैषे-धिकी अभिनैषेधिकी। दिवा स्वाध्यायं कृत्वा रात्रौ प्रतिगन्त-व्यायां वसतौ, वव० १ उ०।

अभिणिस्सड- त्रि० *[अभिनिस्सृत]*

बहिष्टान्निर्गते, 'बहिया अभिणिस्सडओ पभासेंति'। भग० १४ श० ९ उ०।

अभिणूमकड- त्रि० *[अभिनूमकृत]*

आभिमुख्येन कर्मणा मायया वा कृते, 'अभिणुमकडेहि मुच्छिए, तिव्वं से कम्मेहिं किच्चती'। सूय०१ श्रु०२अ०१ उ०

अभिण्ण- त्रि० *[अभिन्न]*

अविशीर्णे, उपा० २अ०।

भिन्नशब्दाऽर्थविरुद्धे, बृह० ३ उ०। निसि०।

अभिण्णाय अव्य० *[अभिज्ञाय]*

ज्ञात्वेत्यर्थे, आचा० १ श्रु० ९ अ० १ उ०।

बुद्ध्वेत्यर्थे, आचा० १ श्रु० ६ अ० ६ उ०।

आभिमुख्येन परिच्छिद्य इत्येतेषां शब्दानामर्थेषु, आचा० १ श्रु० ३ अ० उ०।

अभिण्णायदंसण- त्रि० *[अभिज्ञातदर्शन]*

सम्यक्त्वभावनया भाविते, आचा० १ श्रु०९ अ० १ उ०।

अभिण्णायार– पुं० *[अभिन्नाचार]*
न भिन्नो न केनचिदप्यती चारविशेषेण खण्डित आचारो ज्ञानाचारादिको यस्याऽसावभिन्नाचारः। वव०।
जात्योपजीवनादिपरिहरति, वव० ३ उ०।

अभितत्त- त्रि० *[अभितप्त]*
अग्निना आभिमुख्येन सन्तापिते, सूय० १ श्रु० ४ अ० १ उ०।

अभितप्पमाण- त्रि० *[अभितप्यमान]*
कदर्थ्यमाने, सूय० १ श्रु० ५ अ० १ उ०।

अभिताव- अव्य० *[अभिताप]*
तापाऽभिमुखे, आचा० १ श्रु० ९ अ० ४उ०।
क्रकचपाटन–कुम्भीपाक–तप्तत्रपुपानशाल्मल्यालिङ्गनाऽऽदि-रूपे सन्तापे, सूय० २श्रु ० ३ अ०।
दाहे, सूय० १ श्रु० ५ अ० १ उ०।

अभितुर– त्रि० *[अभितुर]*
अभि–आभिमुख्येन त्वरस्व–शीघ्रो भव। उत्त०

अभित्थुय- त्रि० *[अभिष्टुत]*
विशिष्टगुणोत्कीर्तनेन व्यावर्णिते, संथा०।

अभित्थुव्वमाण- त्रि० *[अभिष्टुवत्]*
संस्तुवति, ठा० ९ ठा०।

अभित्थुव्वमाण- त्रि० *[अभिष्टूयमान]*
अभिनन्द्यमाने संस्तूयमाने, ठा०९ ठा०। कल्प०। आव०म०।

अभिदुग्ग- पुं० *[अभिदुर्ग]*
कुम्भीशाल्यल्यादौ, सूय०।
अतिविषमे, सूय० १ श्रु० ५ अ० २ उ०।
अग्निस्थाने, सूय०१ श्रु० ५ अ० १ उ०।

अभिदुय- त्रि० *[अभिद्रुत]*
अध्यवसायरूपेण व्याप्ते, सूय०१ श्रु० ३ अ० ३ उ०।
गर्भाऽऽधानादिदुःखैः पीडिते, सूय० १ श्रु० २ अ० ३ उ०।

अभिधारण- न० *[अभिधारण]*
प्रव्रज्यार्थमाचार्यदिर्मनसा संकल्पने, तच्च द्विधा – अनिर्दिष्टं, निर्दिष्टं च। अनिर्दिष्टं नाम अभिधारयन् कमप्याचार्यं विशेषतो न निर्दिशति । स च अभिधारको द्विधा–संज्ञी, असंज्ञी च । पुनरेकैको द्विधा–गृहीतलिङ्गः, अगृहीतलिङ्गश्च। बृह०।
मनसि करणे, बृह० ३ उ०। वव०।

अभिधेज्ज- त्रि० *[अभिधेय]*
अर्थे शब्दवाच्ये, यथा–घटशब्देन घटोऽभिधीयते। विशे०। निसि०।

अभिपवुड्ठ- त्रि० *[अभिप्रवृष्ट]*
कृतवर्षे,वासावासे अभिपवुट्ठे बहवे पाणा।आचा०२श्रु० ३अ०

अभिप्पाइयणाम- न० *[आभिप्रायिकनामन्]*
अभिप्रायतः क्रियमाणे नामनि, अनुओ०।
से किं तं अभिप्पाइयणामे ? अभिप्पाइयणामे अंबए निंबुए बकुलए पलासए सिणए पीलुए करीरए । से तं अभिप्पाइय नामे।
इह यद्वृक्षादिषु प्रसिद्धम् 'अम्बम–निम्बक' इत्यादि नाम देशरूढया स्वाभिप्रायानुरोधतो गुणनिरपेक्षं पुरुषेषु व्यवस्था-प्यते, तदभिप्रायिकं स्थापनानामेति । भावाऽर्थः – तदेतत्स्था-पनाप्रमाणनिष्पन्नं सप्तविधं नामेति। अनुओ०।

अभिप्पाय- पुं० *[अभिप्राय]*
मनोविकल्पे, विशे०।
बुद्धिविपर्यये, आव०म०।
बुद्धेरध्यवसाये, आव०म०।
चेतःप्रवृत्तौ, आचा०१ श्रु०४ अ०१ उ०।
अभिप्रायश्चतुर्विधः –औत्पत्तिकी, वैनयिकी, कर्मजा, पारिणा-मिकीत्यादिना। आव०चू०।
संविज्ञानमवगमो भावोऽभिप्राय इत्यनर्थाऽन्तरम्। आव०म०।

अभिप्पायसिद्ध- पुं० *[अभिप्रायसिद्ध]*
बुद्धिसिद्धे, आव०म०।

अभिप्पेय- त्रि० *[अभिप्रेत]*
मनोविकल्पिते, विशे०। आचा०।
कामयति, दश०६ अ०।
अभिप्रेतविषये, संयोगे च। उत्त०१ अ०।
अभिप्रेतः। कामयन्। दश०।
अभिप्रेते–अभिरुचिते। उत्त०।

अभिभव- पुं० *[अभिभव]*
अभियोगे, आव०५ अ०।
पराजये, आचा० १ श्रु०९ अ०२ उ०। आव०चू०।
अभिभवो नामादिभेदतश्चतुर्धा। द्रव्याऽभिभवो रिपुसेनादि पराजयः, आदित्यतेजसा वा चन्द्रग्रहनक्षत्रादितेजोऽभिभवः। भावाऽभिभवस्तु परीषहोपसर्गाऽनीकजयात् ज्ञानदर्शनाऽऽव-रण मोहाऽन्तरायकर्मनिर्दलनं, परीषहोपसर्गादिसेनाविजयाद् विमलं चरणं, चरणशुद्धेर्ज्ञानावरणादिकर्मक्षयः, तत्क्षयात् निरावरणमप्रतिहतमशेषज्ञेयग्राहि केवलमुपजायते। इदमुक्तं भवति–परीषहोपसर्गज्ञानदर्शनाऽवरणीयमोहाऽन्तरायाण्यभि-भूय केवलमुत्पाद्य तैरुपलब्धमिति। आचा० १श्रु०१ अ०४ उ०
अभिभवकायोत्सर्गः–उपसर्गाभियोजने द्वितीयः। आव०

अभिभविय- अव्य० *[अभिभूय]*
जित्वेत्यर्थे, भग० ९ श० ३३ उ०।

अभिभूय-१ अव्य० *[अभिभूय]*
आभिमुख्येन पीडयित्वेत्यर्थे, सूय० २श्रु० १ अ०।
जित्वेत्यर्थे, पण्हा० २ अ०।
पराजित्येर्थे, सूय०१ श्रु० ६अ०। दश०।
तिरस्कृत्येत्यर्थे च। आचा०१ श्रु०५अ०६उ०।
सर्वथा तत्सामर्थ्यमुपहत्य। उत्त० ।

अभिभूय-२ त्रि० *[अभिभूत]*
व्याप्ते, जंबू० २ वक्ष०।
तिरोहितशुभव्यापारे च। आचा० १ श्रु० ३अ० १ उ०।

अभिभूयणाणि- पुं० *[अभिभूयज्ञानिन्]*
अभिभूय पराजित्य मत्यादिनी चत्वार्यपि ज्ञानानि, यद् वर्तते ज्ञानं केवलाऽऽख्यं तेन ज्ञानेन ज्ञानी। केवलिन, । सूय० १ श्रु० ६ उ०।

अभिमंतिऊण- अव्य० *[अभमन्त्र्य]*
मन्त्रपाठेन संस्कृत्येत्यर्थे, 'रायगणे जे खंभा, अच्छति ते अभिमंतिय आगासेण उप्पाइया' । आव०म०। निसि०।

अभिमय- त्रि० *[अभिमत]*
इष्टे, सूय० २श्रु० ४अ०। विशे०।

अभिमयट्ठ- पुं० *[अभिमतार्थ]*
अवधारितार्थे, नाया०१ अ०।

अभिमाण- पुं० *[अभिमान]*
'अभिमाणो माणो भण्णति'। निसि० १ उ०।

अभिमाणबद्ध- त्रि० *[अभिमानबद्ध]*
अभिमानाऽऽस्पदे, सूय० १ श्रु० १३ उ०।

अभिमार- पुं० *[अभिमार]*
विशेषतोऽग्निजनके वृक्षविशेषे, उत्त० ३ उ०।

अभिमुह- त्रि० *[अभिमुख]*
अभि भगवन्तं लक्ष्यीकृत्य मुखमस्येति अभिमुखः। भगवतः संमुखे, रा०।
कृतोद्यमे, चंद०। नाया०। ठा०। सूर०। उव०।

अभियंद- पुं० *[अभिचन्द्र]*
महाबलस्य राज्ञः स्वनामख्याते प्रियवयस्ये, नाया० ८अ०।

अभियावण्ण- त्रि० *[अभ्यापन्न]*
आभिमुख्येन भोगाऽनुकूल्येनाऽऽपन्नो व्यवस्थितः। सावद्यानुष्ठानेषु प्रतिपन्ने, सूय० १ श्रु०.० ४ अ० २उ०।

अभिरइ- स्त्री० *[अभिरति]*
लोकेऽर्थादिभ्य आभिमुख्येन रतौ, विशे०।

अभिरमंत- त्रि० *[अभिरममाण]*
अभितो रतिं कुर्वाणे, 'अभिरममाणा तुट्ठा' । पण्हा०१ अ०।

अभिराम- त्रि० *[अभिराम]*
रम्ये, नाया०१ ३अ०। उव०।
अभिरमणीये, चंद० २० पाहु०। विपा०। रा०। आव०म०। सम० । मनोज्ञे, नाया० १७ अ०।

अभिरामयंति– धा० [अभिरमयन्ति]
आभिमुख्येन विनयादिषु युञ्जते। दश० २५६।

अभिरुइय- त्रि० *[अभिरुचित]*
स्वादुभावमिवोपगते, भग० ९ श० ३३ उ०।

अभिरूव- त्रि० *[अभिरूप]*
अभि आभिमुख्येन सदाऽवस्थितानि रूपाणि राजहंसचक्रवाक सारसादीनि गजमहिषमृगयुथादीनि वा जलाऽन्तर्गतानि करिमकरादीनि वा यस्मिंस्तदभिरूपमिति। सूय० २ श्रु० १ अ०।
अभिद्रष्टृन् प्रति प्रत्येकमभिमुखमतीव चेतोहारित्वाद् रूपमाकारो यस्य स अभिरूपः। रा०।
अभि सर्वेषां द्रष्टृणां मनःप्रसादाऽनुकूलतया अभिमुखं रूपं यस्य, तत् अभिरूपम्। अत्यन्तकमनीये, तं०। जीवा०। पन्न०। ठा०।
अभिमतरूपे, विपा०१ श्रु० २ अ०। जंबू०।
द्रष्टारं द्रष्टारं प्रत्यभिमुखं, न कस्यचिद् विरागहेतुरूपमाकारो यस्य सोऽभिरूपः। रा०।
अभिमुखमतीवोत्कटं रूपमाकारो यस्य सः। सूर०१ पाहु०। मनोज्ञरूपे, नाया०१ अ०। उपा०। उव०। भग०।
अभि प्रतिक्षणं नवं नवमिव रूपं यस्य तदभिरूपम्। आव०म०।
अनुसमयमहीयमानरूपे, सम० ।
'अभिरूवं अभिरूवं पडिरूवं पासादीयं पासादीयं'। आचा० २ श्रु० ४ अ० २ उ०।

अभिल्लप- त्रि० *[अभिलाप्य]*
कथनयोग्ये, प्रज्ञापनयोग्ये, आव०म०। सूय०।
'जे पुण अभिलप्पा, ते दुविहा भवंति। तं जहा–पण्णवणिज्जा, अपण्णवणिज्जा य । तत्थ जे ते अपण्णवणिज्जा, तेसु वि ण चेव अहिगारो अत्थि त्ति। जे पुण पण्णवणिज्जा भावा, ते केवलणाणेण पासिऊण तित्थयरो तित्थकरनामकम्मोदएण सव्वसत्ताणं अणुग्गहनिमित्तं भासति'। आव०चू० १ अ०।

अभिलाव- पुं० *[अभिलाप]*
अभिलप्यते आभिमुख्येन व्यक्तमुच्यते अनेनार्थ इत्यभिलापः। वाचके शब्दे, तद्विषये संयोगे च। उत्त० १ अ०। आव०म०। विशे०। पन्न०।

अभिलावपुरिस- पुं० *[अभिलापपुरुष]*
अभिलप्यतेऽनेनेति अभिलापः शब्दः, स एव पुरुषः पुंलिङ्ग-तयाऽभिधानात्। पुरुष–भेदे, यथा–घटः कुटो वेति। आह च–अभिलावो पुंलिगांऽभिहाणमेत्तं, घडो व्व। ठा० ३ ठा०१ उ०। आव०चू०। विशे०। आव०म०।

अभिलास- पुं० *[अभिलाष]*
इच्छायाम्, ठा० ५ ठा० २ उ०।
लब्धेऽप्यधिकतरस्य वाञ्छायाम्, ठा० ४ ठा० ३ उ०।
यदिदमहं प्राप्नोमि, ततो भव्यं भवतीत्याद्यक्षराऽनुविद्धायां प्रार्थनायाम्, नं०।
ममैवंरूपं वस्तु पुष्टिकारि, तद्यदीदमवाप्यते, ततः समीचीनं भवतीत्येवं शब्दार्थोल्लेखानुविद्धे स्वपुष्टिनिमित्तभूतप्रति नियतवस्तुप्राप्त्य-ध्यवसाये, नं०। आव०म०।
दृष्टेषु शब्दादिषु भोगेच्छायाम्, नाया०९ अ०।
तीव्रलोभोदयप्रभव आत्मपरिणामः। आव०

अभिवड्ढिय- त्रि० *[अभिवर्द्धित]*
मासभेदे, संवत्सरभेदे च। ठा०।
तत्र एकत्रिंशद् दिनानि, एकविंशत्युत्तरशतं चतुर्विंशतिउत्तर-शतभागानामाभिवर्द्धितमासः, एवंविधेन मासेन द्वादशप्र-माणोऽभिवर्द्धितसंवत्सरः। स च प्रमाणेन त्रीणि शतान्यह्नां त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्विषष्टिभागाः, ठा० ५ ठा० ३ उ०। बुह० । कल्प०। सम० । चंद० । वव०।
यस्मिन् संवत्सरे अधिकमाससंभवेन त्रयोदेश चन्द्रमासा भवन्ति, सोऽभिवर्द्धितसंवत्सरः। उक्तं च–'तेरस य चंदमासा, एसो अभिवड्ढिओ उ नायव्वो'। जंबू० २ वक्ष०।

अभिवड्ढेमाण- त्रि० *[अभिवर्द्धयत्]*
अभिवृद्धिं कुर्वाणे, जंबू० ७ वक्ष०।

अभिवायण- न० *[अभिवादन]*
वाङ्नमस्कारे, दश०२ चू०। उत्त०।
पादयोः प्रणिपतने, तं०। कायेन प्रणिपाते, संथा०। आचा०।

अभिवायमाण- त्रि० *[अभिवादयत्]*
अभिवादने कुर्वाणे, आचा० १ श्रु० ९ अ० १ उ०।

अभिवाहार- पुं० *[अभिव्याहार]*
अभिव्याहरणमभिव्याहारः।कालिकादिश्रुतविषये उद्देश-समु-द्देशादौ, आलोचनादिषु अष्टमे नये, विशे०। आव०म०।

अभिविहि- पुं० *[अभिविधि]*
सामस्त्ये, आव०म०।

अभिवुड्ढि- पुं० *[अभिवृद्धि]*
अहिर्बुध्नापरनामके उत्तरभाद्रपद०नक्षत्रे, जंबू०७ वक्ष०।

अभिवुड्ढित्ता- अव्य० *[अभिवर्ध्य]*
अभिवृद्धिंकारयित्वेत्यर्थे, सूर० १ पाहु०।

अभिव्वंजण- न० *[अभिव्यञ्जन]*
स्वरूपतः प्रकाशने, सूय० १ श्रु०१ अ० १ उ०।

अभिसंका- स्त्री० *[अभिशङ्का]*
तथ्याऽनिर्णये, सूय० २श्रु० ६अ०। ठा०।
'भूयाऽभिसंकाइ दुगुंछमाणे, ण णिव्वहे मंतपदेण गोयं' भूतेषु प्राणिषु अभिशङ्का उपमर्दशङ्का, तयाऽऽशीर्वादं सावद्यं, जुगुप्सां वा न ब्रूयात्। सूय० १ श्रु० १४अ०।

अभिसंकि(ण्)- त्रि० *[अभिशङ्किन्]*
'उज्जू माराऽभिशंकी मरणा पमुच्चति'। मरणंमारः, तदभिशङ्कीमरणादुद्विग्नः, तत्करोति येन मरणात् प्रमुच्यते। आचा० १ श्रु० ३ अ० १ उ०।

अभिसंग- पुं० *[अभिष्वङ्ग]*
भावरागे, विशे०।
अध्युपपत्तौ, ठा० ३ ठा० ४ उ०।

अभिसंजाय- त्रि० *[अभिसंजात]*
पेशीं यादुत्पन्ने, आचा० १ श्रु० ६ अ० १ उ०।

अभिसंधारण– न० *[अभिसंधारण]*
पर्यालोचने, आचा०१ श्रु० ६ अ० १ उ०।

अभिसंधिय- त्रि० *[अभिसंधित]*
गृहीते, आचा० १ श्रु० ४ अ० २उ०।

अभिसंभूय- त्रि० *[अभिसंभूत]*
यावत्कललं तावदभिसंभूताः। आचा०१ श्रु०६ अ०१ उ०।
प्रादुर्भूते, आचा०२ श्रु० ३ अ०१ उ०।

अभिसंवड्ढ- त्रि० *[अभिसंवृद्ध]*
धर्मश्रवणयोग्यावस्थायां वर्तमाने,आचा० १ श्रु० ६ अ० १ उ०

अभिसमन्नागय- त्रि० *[अभिसमन्वागत]*
अभिराभिमुख्येन सम्यगिष्टानिष्टावधारणतया अन्विति शब्दादिस्वरूपाऽपगमात् पश्चादागतो ज्ञातः परिच्छिन्नः। आचा० १ श्रु० ३ अ० १ उ०। पन्न०।
आभिमुख्येन व०स्थिते, सूय०२ श्रु०१ अ०। आचा०।
परिभोगत उपभोगं प्राप्ते, नाया० २ श्रु०।
विशेषतः परिच्छिन्ने, भग० ५ श० ४ उ०।
मिलिते, भग०१५ श०१ उ०।
अभिविधिना, सर्वाणीत्यर्थः। समन्वागतानि संप्राप्तानि जीवेन रसानुभूतिं समाश्रित्य। भग० १२ श० ४ उ०।
उदयाऽऽवलि-कायामागतेषु, भग० १३ श० ७ उ०।
भोग्यावस्थां गतेषु, ठा०४ ठा० ३ उ०।

अभिसमागम- पुं० *[अभिसमागम]*
अभीत्यर्थाभिमुख्येन, न तु विपर्यासरूपतया समिति सम्यक्, न संशयतया तथा । आमर्यादया गमनमभिसमागमः। वस्तु परिच्छेदे, । ठा० ३ ठा० ४ उ०।

अभिसमागम्म- अव्य० *[अभिसमागम्य]*
अभिराभिमुख्ये, समेकीभावे, आङ्–मर्यादाऽभिविध्योः। गम्लृ–सृप्लु–गतौ, सर्व एव गत्यर्था ज्ञानार्था ज्ञेयाः। आभिमुख्यं सम्यग्ज्ञात्वेत्यर्थे, दश०५ अ०। आचा०।

अभिसमेच्च- अव्य० *[अभिसमेत्य]*
आभिमुख्येन सम्यगित्वा ज्ञात्वा। आचा० १श्रु० ३ अ० ३ उ०।
आभिमुख्येन सम्यक् परिच्छिद्य पृथक् प्रवेदितं वा। आचा० १ श्रु० ४ अ० २ उ०।
अवगम्येत्यर्थे, ठा० ९ ठा०। आचा०।
समधिगम्य अवबुध्य, इत्यर्थे, अभिसमेत्य धर्मं यावत्केवलित्वमुत्पादयेत्। 'धर्मोपादेयतां ज्ञात्वा, संजातेच्छोऽत्र भावतः। दृढं स्वशक्तिमालोच्य, ग्रहणे संप्रवर्तते' ठा० २ ठा० १ उ०।

अभिसरण- न० *[अभिसरण]*
आपेक्षिकसंमुखाऽभिगमने, पण्हा० १ अ०।

अभिसरित- त्रि० *[अभिसरित]*
रत्यर्थं सङ्केतस्थलं प्रापिते, आचा०१ श्रु० २ अ० ५ उ०।

अभिसित्त- त्रि० *[अभिषिक्त]*
कृताऽभिषेके जाताऽभिषेके, 'अणेण अमयकलसेण अभिसित्तो अब्भहियं सोभितुमाढत्तो'। आव० म० ।

अभिसेग- पुं० *[अभिषेक]*
शुक्रशोणितनिषेकाऽऽदिक्रमे, आचा० १ श्रु० ६ अ०१ उ०।
सर्वौषधि-समुपस्कृत-तीर्थोदकैः राज्याधिष्ठातृत्वादि-प्राप्त्यर्थं मन्त्रोच्चारणपूर्वकं तद्योग्यशिरसोऽभ्युक्षणम्। संथा०।
आचार्यपदेऽभिषित्तो यः सोऽभिषेकः। निसि०१५ उ०।
सूत्राऽर्थतदुभयोपेते आचार्ये, वव० १ उ०।
आचार्यपद०स्थापनाऽर्हे, बुह० ३ उ०।
उपाध्याये, जीत०। गणावच्छेदके, निसि०१५ उ०।

अभिसेगजलपूयप्प(ण)- पुं० *[अभिषेकजलपूताऽऽत्मन्]*
अभिषेकतो जलेन पवित्रित आत्मा यैस्ते तथा। तथाविधजलचोक्षेषु वानप्रस्थेषु, उव०।

अभिसेगपेढ- पुं० *[अभिषेकपीठ]*
अभिषेकमण्डपाऽन्तर्गते अभिषेकसिंहासनाऽधिष्ठाने पीठे, जंबू० ३ वक्ष०।

अभिसेगभंड- न० *[अभिषेकभाण्ड]*
अभिषेकयोग्ये उपस्करे, रा०। जीवा०।

अभिसेगसभा- स्त्री० *[अभिषेकसभा]*
अभिषेकाऽर्थसभायाम्, यस्यां राज्याऽभिषेकेणाऽभिषिच्यते। ठा० ५ ठा० ३ उ०।

अभिसेगसिला- स्त्री० *[अभिषेकशिला]*
तीर्थकराणामभिषेकाऽर्थ-शिलायाम्, ठा०।
जंबू ! मंदरपव्वयपंडुगवणे चत्तारि अभिसेगसिलाओ पन्नत्ताओ। तं जहा–पंडुकंबलसिला, अतिपंडुकंबलसिला, रत्तकंबलसिला, अतिरत्तकंबलसिला।
अभिषेकशिला चूलिकायाः पूर्वदक्षिणाऽपरोत्तदासु दिक्षु क्रमेणाऽवगम्या इति। ठा० ४ ठा० २ उ०।

अभिसेगा- स्त्री० *[अभिषेका]*
गच्छमहत्तरिकायाम्, निसि० ९ उ०।
प्रवर्तिनी आगमपरिभाषयाऽभिषेकेत्युच्यते, भिक्षुक्यां च। निसि० १५ उ०।

अभिसेज्जा- स्त्री० *[अभिशय्या]*
अभिनिषद्यायाम्, वव० १ उ०।
यस्यां नैषेधिक्यां दिवा निशायां वा स्वाध्यायं कृत्वा रात्रिमुषित्वा प्रातर्वसतिमुपयान्ति। वव० १ उ०।

अभिहट्टु- अव्य० *[अभिहत्य]*
बलात्कृत्वेत्यर्थे, 'सेवं वदंतस्स परो अभिहट्टु अंतो पडिग्गहंसि बहुअट्ठियं मंसं परिभाएत्ता णिहट्टु दलएज्जा'। आचा० २ श्रु० १ अ० १० उ०।।

अभिहड- न० *[अभिहृत]*
अभिसाध्वभिमुखं हृतमानीतं स्थानाऽन्तरादभिहृतम्। अभ्याहृते, साधुदानाय स्वग्रामात् परग्रामाद् वा समानीते एकादशोद्‌गमदोषदुष्टे, पिंड०।

अभिहणण- न० *[अभिहनन]*
वेदनोदीरणे, पण्हा० १ अ०।
पादाभ्यामाभिमुख्येन हनने, भग० ८ श० ७ उ०।
अभिमुखमागच्छतो हनने, भग० ५ श० ६ उ०। आचा०।

अभिहणमाण- त्रि० *[अभिघ्नत्]*
पादाभ्याममिघातं कुर्वति, खुरचलणचंचूपुडेहिं धरणिअलं अभिहणमाणं। जंबू० ३ वक्ष०।

अभिहाण- न० *[अभिधान]*
अभिधीयते येन तदभिधानम्। निसि० १ उ०।
संज्ञायाम्, विशे०।
शब्दे, विशे०।
नाम्नि, विशे०।
अर्थाऽभिधानप्रत्ययाश्च लोके सर्वत्र तुल्यनामधेयाः। विशे०।

उच्चारणे, सूय० १ श्रु० १ ६अ० ।
इह द्विविधमभिधानं भवतिसतामसतां च। सतां यथा जीवा-दीनाम्, असतां यथाशशविषाणादीनाम्। आव०चू० १ अ०।

अभिहाणभेय- पुं० *[अभिधानभेद]*
वाचकध्वनिभेदे, विशे०।

अभिहाणहेउकुसल- पुं० *[अभिधानहेतुकुशल]*
अभिधानेषु शब्देषु हेतुसाध्यगमकेषु कुशलो दक्षोऽभिधान-हेतुकुशलः। शब्दमार्गे चाऽतीव क्षुण्णे, वव० ९ उ०। बुह०।

अभिहित- त्रि० *[अभिहित]*
उक्ते, आचा० १ श्रु० ८ अ० ५ उ०।

अभिरु- त्रि० *[अभीरु]*
सप्तप्रकारभयरहिते, आचा०२ श्रु० १५ अ०१ उ० ३ चू०।
सत्त्वसंपन्ने, ओह०।
उत्पन्ने महत्यपि कार्येऽबिभ्यति, बुह० १ उ०।
अभीरुर्नाम कुतश्चिदपि स्तेनोद्भ्रामकादेविविधां बिभीषिकां दर्शयतो न बिभेति। बुह० १ उ०।
मध्यमग्रामस्य मूर्छनाभेदे, ठा० ७ ठा०।

अभुज्जंतग- त्रि० *[अभ्युज्यमान]*
अव्यापार्यमाणे, बुह० २ उ०।

अभुत्तभोग- त्रि० *[अभुक्तभोग]*
स्त्रीभोगानभुक्त्वा प्रव्रजिते कौमारकभावप्रतिबद्धे, । निसि० १ उ० ।

अभूइभाव- पुं० *[अभूतिभाव]*
अभूतेर्भावोऽभूतिभावः। असंपद्भावे, दश० ९ अ० १ उ०।

अभूयाभिसंकण- पुं० *[अभूताऽभिशङ्कन]*
न भूतान्यभिशङ्कन्ते बिभ्यति यस्मात् स तथा। प्रशस्त-वाग्विनयभेदे, ठा०७ ठा०। भग०।

अभेज्ज- त्रि० *[अभेद्य]*
भेद्यः सूच्यादिना चर्मवत्, तन्निषेधादभेद्यः।भग०२ श०५ उ०
सूच्यादिना भेत्तुमशक्ये, 'तओ अभेज्जा पन्नत्ता। तं जहा–समए पएसे परमाणु'। ठा० ३ ठा०२ उ०।

अभेज्जकवय- पुं० *[अभेद्यकवच]*
परप्रहरणाऽभेद्याऽऽवरणे, भग०७ श० ९ उ०।

अभेय- पुं० *[अभेद]*
सामन्ये अविशेषे, आव०म०।

अभोग- पुं० *[अभोग]*
अव्यापारणे संयमोपबृंहणार्थस्वसत्तायाः स्थापने,बुह० १ उ०।

अभोज्जघर- न० *[अभोज्यगृह]*
अहिण्डनीयकुलेषु रजकादिसंबन्धिषु, बुह० १ उ०।

अभोयण- न० *[अभोजन]*
अनभ्यवहारे, पिंड०।

अमइल- त्रि० *[अमलिन]*
स्वच्छे निर्मले, पण्हा०४ अ०।

अमंगलनिमित्त- त्रि० *[अमंगलनिमित्त]*
अङ्गस्फुरणादिषु अमाङ्गलिकनिमित्तेषु, पण्हा० २ अ०।

अमग्ग- पुं० *[अमार्ग]*
'अमग्गं परियाणामि, मग्गं उवसंपज्जामि'। आव० ४ अ०।
मिथ्यात्वादिः। आव०।

अमग्घाय- पुं० *[अमाघात]*
मा लक्ष्मीः, सा च द्वेधा–धनलक्ष्मीः प्राणलक्ष्मीश्च। तस्या घातो हननं, तस्याऽभावोऽमाघातः, अद्रव्याऽपहारे, अमारि प्रदाने, प्राणिघातनिवारणे च। उपा०। पण्हा०।

अमच्च- पुं० *[अमात्य]*
सहजन्मनि मन्त्रिणि, कल्प० ३ । संथा०। निसि०।
राज्यचिन्तक, पण्हा० ४ अ०। निसि०।
राज्याऽधिष्ठायक, उव०। भग०। नाया०।
अष्टादशानां प्रकृतीनां महत्तरे, बुह० ३ उ०।
राजमन्त्री । बुह०।

अमच्छरि- त्रि० *[अमत्सरिन्]*
परसंपदद्वेषिणि, दश० १ चू०।
परगुणग्राहिणि, पण्हा० ४ अ०।

अमच्छरियया- स्त्री० *[अमत्सरिकता]*
मत्सरिकः परगुणानामसोढा, तद्भावनिषेधोऽमत्सरिकता। भग० ८ श० ९ उ०।
परगुणग्राहितायाम्, उव०।

अमज्जाइल्ल- पुं० *[अमर्यादावत्]*
'मज्जाया सीमावत्था, न मज्जाया अमज्जाया, तीए जो वट्टति सो अमज्जाइल्लो' निसि० १ उ०।
मर्यादाया अवेत्तरि प्रवर्तके आचार्ये च । निसि० ४ उ०।

अमज्झ- त्रि० *[अमध्य]*
विभागचयं कर्तुमशक्ये, 'तओ अमज्झा पन्नत्ता। तं जहा– समए, पएसे, परमाणु'। ठा० ठा० ४ उ०।
विषमसंख्याऽवयवाऽभावात् क्षेत्रपरमाणौ, भग०२०श०६ उ०

अमण- न० *[अमन]*
अधिगमने, अन्तः परिच्छेदे च। ठा० ३ ठा० ४ उ०।

अमण- न० *[अमनस्]*
मनोविद्वेषिण्यर्थे, 'तिविहे अमणे पन्नत्ते। तं जहा– णोतम्मणे णोतयन्नमणे अमणे'। ठा० ३ ठा० ३ उ०।

अविद्यमानान्तःकरणे। 'झायइ सुणिप्पकम्पो, झाणं अमणो जिणो होइ' प्रयन्तविशेषाद्मनः अपनीय अमना अविद्यमानान्तःकरणो जिनो भवति। आव० ४ अ०। जंबू०।

अमणा- अव्य० *[अमनाक्]*

न मनागमनाक् । नितरां शब्दार्थे, सूय० २ श्रु० १ अ०।

अमणाम- त्रि० *[अमनआप]*

न जातुचिदपि भोज्यतया जन्तूनां मनांसि आप्नोति। जीवा०१ प्रति०।

न मनसा आप्यते प्राप्यते चिन्तया यत्तत्तथा। उपा० ८ अ०।

अमणाम- त्रि० *[अमनोऽम]*

न मनसा अम्यते गम्यते, पुनः पुनः स्मरणतो यत्, तदमनोऽमम्। अत्यर्थं मनोऽनिष्टे, भग० १ श० ५ उ०।

अमणाम-त्रि० *[अवनाम]*

अवनामयतीति अवनामः। पीडाविशेषकारिणि, अमणुन्नाओ अमणामओ दुक्खाओ' सूय० २ श्रु० १ अ०।

अमणुण्ण- त्रि० *[अमनोज्ञ]*

मनसोऽनुकूलं मनोज्ञं, न मनोज्ञममज्ञोनम्। आव० ४ अ०।

न मनसा ज्ञायते सुन्दरतया, इत्थममनोज्ञम्। भग० ९ श० ३३

स्वरूपतोऽशोभने, (कदन्ना–ऽऽदौ)। ठा० ३ ठा०१ उ०।

मनःप्रतिकूले, सूय० १ श्रु० ९ अ०।

असुन्दरे, पण्हा० ५ अ०।

अनिष्टे, गच्छा० १ । ठा०।

अशुभस्वाभावे, ठा० ८ ठा०। विपा०।

अमनःप्रह्लादहेतौ विपाकतो दुःखजनके, जीवा० १ प्रति०।

असाम्भोगिके, बुह० ३ उ०। निसि०।

अमणुण्णतर- त्रि० *[अमनोज्ञतर]*

अकान्ततरे, अप्रीततरे च। विपा० १ श्रु० १ अ०।

अमणुण्णसमुप्पाय- त्रि० *[अमनोज्ञसमुत्पाद]*

न मनोज्ञममनोज्ञमसदनुष्ठानम्। तस्मादुत्पादः प्रादुर्भावो यस्य दुःखस्य तदमनोज्ञसमुत्पादम्। स्वकृर्ताऽसदनुष्ठानाज्जाते दुःखे, सूय० १ श्रु० १ अ० ३ उ०।

अमणुस्स- पुं० *[अमनुष्य]*

देवादौ, नं०।

नपुंसके, निसि० १ उ०।

अमत्त- न० *[अमत्र]*

भाजने, सूय० १ श्रु० ९ अ०।

अमम- त्रि० *[अमम]*

ममत्वरहिते, कल्प० ६ क्ष०। उत्त०। दश०।

निर्लोभत्वात्। उव०।

निरभिष्वङ्गाद् अविद्यमानममेत्यभिलापे, ठा० ९ ठा०।

युगलिकमनुष्यजातिभेदे, जंबू० ४ वक्ष०।

उत्सर्पिण्यां भविष्यति द्वादशे तीर्थंकरे, अंत० ५ वर्ग। सम०

अवसर्पिण्यां जातो नवमो वासुदेवः कृष्णो भारते वर्षे पुण्ड्रेषु जनपदेषु शतद्वारे नगरे द्वादशस्तीर्थंकरो भविष्यति। ठा० ८ ठा०।

पञ्चविंशतितमे दिवसमुहूर्ते च। चंद० १० पाहु०। ज्यो० ।

अममत्तय- त्रि० *[अममत्वक]*

न विद्यते ममत्वं मूर्छा यस्य, स अममत्वकः। मूर्छारहिते, बुह० १ उ०।

अममायमाण- त्रि० *[अममीकुर्वत्]*

अस्वीकुर्वति मनसाऽपि अनाददाने, । आचा० १ श्रु० २अ० ५ उ० ।

अमम्मणा- स्त्री० *[अमन्मना]*

अनवरतवञ्चमानायां वाचि, उपा० २ अ०। रा०।

अमय- न० *[अमृत]*

क्षीरोदधिमथिते, आव०म०।

अमृतस्य क्षीरोदधिजलस्य मथितस्य यः फेनपुञ्जो डिण्डीरपूरस्तत्सन्निकाशं तत्समप्रभम्। रा०।

अमयकलस- पुं० *[अमृतकलश]*

अमृतपूर्णघटे, 'अमयकलसेण अभिसित्ता'। आव०म०।

अमयघोस- पुं० *[अमृतघोष]*

काकन्द्या नगर्याः स्वनामख्याते राजनि, स च स्वपुत्रं राज्ये स्थापयित्वा धर्ममनशनं प्रतिपन्न इति। संथा०।

अमयफल- न० *[अमृतफल]*

अमृतोपमफले, नाया० ९ अ०।

अमयभूय- त्रि० *[अमृतभूत]*

माधुर्यादिभिर्गुणैः साधुसहोदरे, बुह० २ उ०।

अमयवास- पुं० *[अमृतवर्ष]*

तीर्थकृज्जन्मादौ देवैः कृतायाममृतवृष्टौ, आचा०२ श्रु० १५ अ०

अमर- पुं० *[अमर]*

देवे, आव०। आव०म०।

त्रयोदशे ऋषभदेवपुत्रे, कल्प०७

सिद्धेषु च, तेषामायुषोऽभावात्। उव०।

'इमस्स चेव पडिवूहणट्ठाए अमरायइ महासड्ढी' अमरायते – न मरः सन् द्रव्ययौवन-प्रभुत्वरूपाऽवसक्तोऽमर इवाऽऽचरति अमरायते । आचा० १ श्रु० २ अ० ५ उ०।

अमरपरिग्गहिय- त्रि० *[अमरपरिगृहीत]*

देवैः स्वीकृते, बुह० ३ उ०।

अमरवइ- पुं० *[अमरपति]*
देवेन्द्रे, 'अमरवइ माणिभद्दे'। भग० ३ श० ९ उ०। पन्न०।
मल्लिनाथेनाऽर्हता सहाऽनुप्रव्रजिते ज्ञातकुमारे, नाया० ८ अ०

अमरवर- पुं० *[अमत्र]*
भाजने, सूय० १ श्रु० ९ अ०।

अमरसुह- न० *[अमरसुख]*
देवसुखे, आव०४ अ०।

अमरसेण- पुं० *[अमरसेन]*
मल्लिनाथेनाऽर्हता सहाऽनुप्रव्रजिते स्वनामख्याते ज्ञातकुमारे, नाया० ८ अ०।

अमरिस- पुं० *[अमर्ष]* न मत्सरविशेषे, आव०म०।
महाकदाग्रहे, उत्त० ३४ अ०।
कोपे, पण्हा० ३ अ०।

अमरिसण- त्रि० *[अमर्षण]*
अपराधाऽसहिष्णौ, पण्हा० ४ अ०।
अपराधिष्वकृतक्षमे, समः ।

अमसृण- पुं० ।
प्रयोजनेष्वनलसे, सम० ।

अमरिसिय- त्रि० *[अमर्षित]*
अमर्षः संजातोऽस्याऽमर्षितः। संजातमत्सरविशेषे, आव०म०

अमल- पुं० *[अमल]*
न विद्यते मल इव मलो निसर्गनिर्मलजीवमालिन्यापादन-हेतुत्वादष्टप्रकारकं कर्म येषां ते अमलाः। सिद्धेषु प्रव० २१४ द्वार। निर्मलमात्रे, त्रि०। आव०म०।
ऋषभदेवस्य सप्तमे पुत्रे, कल्प० ७ क्ष०।

अमला- स्त्री० *[अमला]* स्वनामख्यातायां शक्राऽग्रमहिष्याम्, भग० १० श० ५ उ०। ठा०।

अमहग्घय- त्रि० *[अमहार्घक]*
महती अर्घा यस्य, स महार्घः। महार्घ एव महाऽर्धकः, न महार्घकोऽमहाऽर्घकः। अबहुमूल्ये, उत्त०२० अ०।

अमाइ- त्रि० *[अमायिन्]*
माया अस्याऽस्तीति मायी । न मायी अमायी ।वव० १ उ०।
कौटिल्यशून्ये, दश० ९ अ० ३ उ०।
सर्वत्र विश्वास्ये, स चाऽऽलोचनादेरर्हः।आचा०१श्रु०१अ० १उ
'नो पलिउंचेऽमाई'। ठा० १० ठा०। वव०।

अमाइरूव- त्रि० *[अमायिरूप]* अमायिनो रूपं यस्याऽसावमा-यिरूपः। अशेषच्छद्मरहिते, सूय० १ श्रु० १३ अ०।

अमाइल्ल- त्रि० *[अमायाविन्]*
मायारहिते, आचा० १ श्रु०९ अ०४ उ०।

अमाइल्लया- स्त्री० *[अमायाविता]*
माइल्लो मायावान्, तदभावस्तता । मायात्यागे, निरुत्सुक-तायाम्, ठा० १० ठा०।

अमाणिय- त्रि० *[अमान्य]*
अभ्युत्थानाऽकरणादित्यक्ते, 'जया य माणियो होइ, पच्छा होइ अमाणियो। सिट्ठी व कब्बडे छूढो, स पच्छा परितप्पई'।।
दश० १ चू०।

अमावासा- स्त्री० *[अमावास्या]*
एकस्मिन वर्षे द्वादशः अमावस्याः। तद् यथा–
बारस अमावसाओ पन्नत्ताओ। तं जहा–साविट्ठी, पोट्ठवती, अस्सोती, कत्तिया मग्गसिरी, पोसी, माही, फग्गुणी, चेत्ती, विसाही, जेट्ठामूली, आसाढी। चंद० १० पाहु०। सम० -प्र०।

अमिज्ज- त्रि० *[अमेय]*
अमिताऽनेकवस्तुयोगात्क्रय–विक्रयनिषेधाद् वा। कल्प० ५ ।
अविद्यमानदातव्ये नगरादौ, जंबू० ३ वक्ष०।
अविद्यमानमाये, भग० ११ श० ११ उ०।
विक्रयप्रतिषेधादेवाविद्यमानमातव्यां, अविद्यमानमायां वा। भग०।

अमिज्झ- न० *[अमेध्य]*
अशुचिद्रव्ये, ठा० १० ठा०।
विष्ठायाम्, तं०।
'अमिज्झेण लित्तोसि, न जाणइ केण विलित्तो'। आव०म०।

अमिज्झपुण्ण- त्रि० *[अमेध्यपूर्ण]*
विष्ठावृते, तं०।

अमिज्झमय- त्रि० *[अमेध्यमय]*
अमेध्यं प्रचुरमस्मिन्निति। गूथाऽऽत्मके, तं०।

अमिज्झरस- पुं० *[अमेध्यरस]*
विष्ठारसे, तं०।

अमिज्झसंभूय- त्रि० *[अमेध्यसंभूत]*
विष्ठासंभवे, तं०।

अमित्त- न० *[अमित्र]*
अहितसाधके, ठा० ४ ठा० ४ उ०। आचा०।

अमिय-१ त्रि० *[अमृत]*
अमरधर्मिणि, विशे०।
मरणाऽभावे, आव०म०।
तत्पथ्ये, आव०४ अ०।
वर्षासु लवणममृतं, शरदि जलं गोपयश्च हेमन्ते। शिशिरे चाऽऽमलकरसो, घृतं वसन्ते गुडश्चाऽन्ते । सूय० १ श्रु० १ अ० १ उ० ।

अमिय-२ त्रि० *[अमित]*

अपरिशेषे, आव०चू० १ अ०

अनन्ते, असंख्येये वनस्पतिपृथिवीजीवद्रव्यादौ च। 'केवली पुरच्छिमेणं मियं पि जाणइ, अमियं पि जाणइ'। भग० ५ श० ४ उ०।

केवलज्ञाने च । विशे०।

अमियणाणि- पुं० *[अमितज्ञानिन्]*

अमितं च तद् ज्ञानं चाऽमितज्ञातम्, तद् यस्याऽस्ति सोऽमितज्ञानी । आव० म०।

सर्वज्ञे, सम० ।

अपरिशेषज्ञानिनि, अनन्तज्ञानिनि च। आव०चू० १ अ०।

केवलिनि, पंच० चू०।

अमियभूय- न० *[अमृतभूत]*

भूतशब्द उपमार्थः। परमपदहेतुत्वाज्जरामरणादिविघातकत्वेनाऽमृततुल्ये जिनवचने, आतु०।

अमियमेह- पुं० *[अमृतमेघ]*

दुष्षमदुष्षमाऽन्तेवर्षिणि चतुर्थे महामेघे, जंबू०।

अमियरसरसोवम- त्रि० *[अमृतरसरसोपम]*

अमृतरसेनरसस्योपमा यत्र तदमृतरसरसोपमम्। सुधाऽऽस्वादमधुरे, । आव०म०।

अमियवाहण- पुं० *[अमितवाहन]*

औत्तराहदिक्कुमारेन्द्रे, ठा० २ठा० ३उ०। भग०। पन्न०। सम०

अमिल- न० *[अमिल]*

ऊर्णावस्त्रे, दश०। निसि०। आचा०।

अमिलक्खु- पुं० *[अम्लेच्छ]*

आर्येम्लेच्छभाषाऽनभिज्ञे, सूय० १ श्रु० १ अ० २ उ०।

अमिला- स्त्री० *[अमिला]*

नमिनाथस्य प्रथमशिष्यायाम्, सम० ।

पडिकायां ह्रस्वमहिष्याम्, बुह० १ उ०।

उरभ्रा । ओह० ।

ऊर्णिया । दश० ।

वस्त्राणि । निसि० ।

अम्लान ।ठा ०

अमिलाण- त्रि० *[अम्लान]*

अमलिने, उव०। निसि०।

अमिलाय- त्रि० *[अम्लान]*

न म्लायते शीघ्रं तदिति। चिरममलिने, निसि० २उ०।

अमिलायमल्लदाम- न० *[अम्लानमाल्यदामन्]*

अम्लानपुष्पदामनि, भग० ११ श० ११ उ०। विपा०।

अमिलिय- त्रि० *[अमिलित]*

असंसक्ते, विशे०।

अनेकशास्त्रसंबन्धीनि सूत्राण्येकत्र मीलयित्वा यत्र पठति, तत् मिलितम्। असदृशधान्यमेलकवत्। अथवा परावर्तमानस्य यत्र पदादिविच्छेदो न प्रतीयते, तत् मिलितम्, न तथा, अमिलितम्। मिलितदोषविप्रमुक्ते *गुणे, अनुओ०। पंच०चू०। गच्छा०।

अमिलितं यद् ग्रन्थान्तरवर्तितिः पदैरमिश्रितं, यथा सामायिकसूत्रे दशवैकालिकोत्तराध्ययनादिपदानि न क्षिपति।बुह०१उ०

अमूइ- त्रि० *[अमोचिन्]*

अमोचनशीले, बुह० ४ उ०।

'अमुइ समुत्ते वि जो ण मुए'। पंच०भा०। पंच०चू०।

अमुग- त्रि० *[अमुक]*

अदः शब्दार्थे अज्ञातनामरूपे विवक्षितेऽर्थे, 'अमुगंहि भोउं' अमुकस्मिन् भवतु। पण्हा० २ अ०।'

अमुगं गामं वच्चामो, तत्थ दो तिन्नि वा दिवसा अच्छिस्सामो'। आव०म०।

अमुग्ग- त्रि० *[अमुद्‌ग]*

अविद्यमानमुद्‌गे, अनुओ०।

अमुच्छिय- त्रि० *[अमूर्छित]*

न मूर्च्छितोऽमूर्च्छितः। सूय० १ श्रु० १० अ०। दश०।

पिण्डे शब्दादिषु वा गृद्धे, दश० ५ अ० १ उ०। आचा०।

अमुण- पुं० *[अज्ञ]* अज्ञे, मूर्खे च। बुह० १ उ०।

अमुणिय- न० *[अज्ञात]*

नाऽस्ति मुणितं ज्ञातं यत्र, तदमुणितम्। ज्ञानविकले, पण्हा० २ अ०।

अमुत्त- त्रि० *[अमुक्त]*

लोकव्यापारप्रवृत्ते सकर्मणि, ठा० १० ठा०।

अमूर्त्त- त्रि०।

अरूपिणि, आव० ४ अ०।

अमुत्ति- स्त्री० *[अमुक्ति]*

मुक्तिर्मोक्षगतिः, न मुक्तिरमुक्तिः ।संसारसुखाऽभिलाषे, आतु० सलोभतायां षड्विंशे गौण– परिग्रहे, पण्हा० ५ अ०।

अमुत्तिमग्ग- न० *[अमुक्तिमार्ग]*

न विद्यते मुक्तेरशेषकर्मप्रच्युतिलक्षणाया मार्गः सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रात्मको यस्मिन्, तदमुक्तिमार्गम्। अधर्मपक्षे विभगङ्गस्थाने, सूय० २ श्रु० २ अ०।

अमुय- त्रि० *[अस्मृत]*

मनोऽपेक्षया स्मृतिमनागते, भग० ३ श० ६ उ०।

अमुयग- त्रि० *[अमृतक]*

अबाह्याऽभ्यन्तरपुद्गलरचिताऽवयवशरीरिणि जीवे, ठा०।
'अमुयगो जीवेति' देवानां बाह्याऽभ्यन्तरपुद्गलादानविरहेण वैक्रियवतां दर्शनाद् बाह्याऽभ्यन्तरपुद्गलरचितावयवशरीरो जीव इत्यध्यवसायवत् पञ्चमं विभङ्गज्ञानाम्। ठा० ७ ठा०।

अमुसा- अव्य० *[अमृषा]*

सत्ये, सूय० १ श्रु० १० अ०।

अमुह- त्रि० *[अमुख]*

निरुत्तरे, वव० ९ उ०।

अमुहरि- त्रि० *[अमुखरिन्]*

अवाचाले, उत्त० १ अ०।

अमूढ- त्रि० *[अमूढ]*

अविप्लुते, दश० १० अ०।
सन्मार्गज्ञे, सूय० १ श्रु० १४ अ०।

अमूढणाण- त्रि० *[अमूढज्ञान]*

यथाऽवस्थितज्ञाने, आव०म०।

अमूढदिट्ठि- स्त्री० *[अमढिद्दष्टि]*

अमूढा बालतपस्वीतपोविद्याऽतिशयादिकुतीर्थिकर्द्धिदर्शनेऽप्यमोहस्वभावादविचलिता, सा च दृष्टिश्च सम्यग्दर्शनममूढदृष्टिः । बुद्धिमत्कुतीर्थिकदर्शनेऽप्यविगीतमेवाऽस्मद्दर्शनमिति मोहविरहितायां बुद्धौ, उत्त० २ अ०।
ऋद्धिमत्कुतीर्थिकदर्शनेऽप्यनवगीतमेवास्मद्दर्शनमिति मोहविरहिता सा चासौ दृष्टिश्च–बुद्धिरूपा। उत्त० २ अ०।
अमूढबुद्धिसंपन्ने, मुह्यते स्म अस्मिन्निति मूढः। न मूढोऽमूढस्तस्य दृष्टिः। याथातथ्यदृष्टौ, निसि० १ उ०।
बालतपस्वितपोविद्यऽतिशयदर्शनैर्न मूढा स्वरूपात् न चलिता दृष्टिः सम्यग्दर्शनरुपेण यस्याऽसौ अमूढदृष्टिः। गच्छा० १।
इदाणिं अमूढदिट्ठित्ति दारमुह्यते स्म अस्मिन्निति मूढः, न मूढोऽमूढः। अमूढदृष्टिः, याथातथ्यदृष्टिरित्यर्थः। निसि० १ उ०।
अचलितसम्यग्दृष्टिः। दश०।

अमूढलक्ख- त्रि० *[अमूढलक्ष]*

यथावस्थितवस्तुवेदिनि, बुह० १ उ०।
समस्ततत्त्वाविपरीतवे दने, आव०म०।

अमेहा- स्त्री० *[अमेधा]*

मेधोपघाते, निसि० १ उ०।

अमोसलि– न० *[अमुशलि]*

न मुशली क्रिया यस्मिन् प्रत्युषे क्षणे, तदमुशलि। सुप्रत्युपेक्षणभेदे, ओह०। ठा०। उत्त०। निसि०।

अमोह- त्रि० *[अमोघ]*

अर्थबलाऽऽयातत्वेन विफले, अमिथ्यारूपे, विशे०।
अवन्ध्ये, दश० ८ अ०।
आदित्योदयास्तसमययोरादित्यकिरणविकारजनितेषु आतामेषु कृष्णेषु श्यामेषु वा शकटार्द्ध संस्थितेषु (सूर्यबिम्बस्याऽधःस्थेषु कदाचिदुपलभ्यमानेषु रेखारूपेषु) दण्डेषु,भग० ३श० ६उ० । जीवा०। अनुओ०।

अमोह- त्रि० ।

मोहनं मोहो वितथग्राहः, न मोहोऽमोहः।अवितथग्राहे, विशे० मोहरहिते।जम्बूमन्दरस्य रुचकवरे पर्वते कूटभेदे,ठा० ८ ठा०। शोभाञ्जन्या नगर्या उत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे चैत्ये पूज्यमाने यक्षे, विशे०।

अमोहणाधारि- पुं० *[अमोहनाधारिन्]*

अमोहनं मोहरहितं, समस्तम्, आ समन्ताद् धारयतीत्येवंशीलोऽमोहनाधारी। सूत्राऽऽदेर्निर्मोहं धारके, वव० १०उ०।

अमोहदंसि- पुं० *[अमोघदर्शिन्]*

अमोघं पश्यति यथावत् पश्यति, दश० ६ अ०।

अमोहवयण- न० *[अमोहवचन]*

धर्मदेशनारूपेऽव्यर्थवचने, ठा० ४ ठा० ३ उ०।

अमोहा- स्त्री० *[अमोघा]*

जम्ब्वाःसुदर्शनाया नाम्नि, (मोघं निष्फलम्) न मोघा अमोघा। अनिष्फला इत्यर्थः। तथाहि–शाश्वतस्वामिभावेन प्रतिपन्ना सती जम्बूद्वीपाधिपत्यमुपजनयति, तदन्तरेण तद्विषयस्य स्वामिभावस्यैवाऽयोगात्,ततोऽनिष्फलेति।जीवा०३प्रति०। जंबू० उत्तराऽञ्जनाऽद्रेर्दक्षिण दिग्भागवर्तिन्यां पुष्करिण्याम्, ठा०। जीवा०।

अम्बकूणगहत्थगय- त्रि० *[आम्रफलहस्तगत]*

स्वकीयतपस्तेजोजनितदाहोपशमनार्थमाम्राऽस्थिकं चूषति, भग० १५ श० १ उ०।

अम्मड- पुं० *[अम्मड]*

स्वनामख्याते परिव्राजके, । भग० १४ श० ८ उ०। उव०। ठा०।

अम्मया- स्त्री० *[अम्बा]*

पुत्रमतारि, नाया० १ अ०। पण्हा०। भग०। निसि०।

अम्मापितिसमाण- पुं० *[अम्बापितृसमान]*

मातापितृभ्यां समाने पुत्रेषु मातापित्रोरिव व०हारादिष्वविषमदर्शिनि, वव० ३ उ०।
उपचारं विनाऽपि साधुषु एकान्तेनैव वत्सले श्रमणोपासके, ठा० ४ ठा० ३ उ०।

अम्मापियर- पुं० *[अम्बापितृ]*
मातापित्रोः, ठा० ३ ठा० १ उ० ।

अम्मापेइय- न० *[अम्बापैतृक]*
मातापितृसम्बन्धिनि, भग० । अम्मापेइए णं भंते ! सरीरए केवइयं कालं संचिट्ठए ? गोयमा ! जावइयं कालं से भव-धारणिज्जे सरीरए अव्वावण्णे भवइ, एवइयं कालं संचिट्ठइ । अहे णं समए समए वोयसिज्जमाणे चरिमकालसमयंसि वोच्छिण्णे भवइ । भग० १ श० ७ उ० ।

अय- पुं० *[अज]*
अजैकपाद्–देवे, स च पूर्वाभाद्रपदानक्षत्रस्य देवता । ज्यो० ६ 'दो अया' ठा० २ ठा० ३ उ० । अनुओ० ।

अय- पुं० ।
अयनमयः, आव०म० ।
वेदने, लाभे, प्राप्तौ च । विशे० । आव०म० । आव० ।
इष्टफले, न० । ठा० १ ठा० १ उ० ।
शुभे, ठा० १० ठा० ।

अयस्- न० ।
लोहे, निसि० ५ उ० । जीवा० । पण्हा० । उत्त० ।

अयआगर- पुं० *[अयआकर]*
लोहाऽऽकरे, यत्र लोहमुत्पद्यते । निसि० ५ उ० ।
यत्र वा लोहकारो लोहं ध्मापयति । ठा० ७ ठा० ।

अयंत- त्रि० *[आयत्]*
आगच्छति प्रविशति, 'जाव अयंतो निसीहियं कुणइ' । आव०म० ।

अयंपुल- पुं० *[अयंपुल]*
आजीविकोपासके गोशालकशिष्ये, भग० ८ श० ५ उ० ।

अयंसंधि- त्रि० *[अयंसन्धि]* '
'अयं संधीति' अयमिति प्रत्यक्षगोचराऽऽपन्न आर्यक्षेत्रसुकुलो-त्पत्तीन्द्रियनिर्वृत्तिश्रद्धासंवेगलक्षणः सन्धिः । आचा० १ श्रु० ५ अ० २ उ० ।

अयकंत- पुं० *[अयस्कान्त]*
सन्निधिमात्रेण लोहाकर्षके, (चुम्बक) इतिख्याते प्रस्तरभेदे च । अयसां प्रियत्वात्, तथात्वम् । आव०म० ।

अयकक्करभोइ-त्रि० *[अजकर्करभोजिन्]*
अजस्य छागादेः कर्करमतिभ्रष्ट, यच्चणकवद् भुज्यमानं कर्करायते, तन्मेदो-दन्तुरं पक्वं शूलाकृतं मांसं, तद् भुङ्क्ते इत्येवंशीलोऽजकर्करभोजी । अजादेः कर्करायितमांसभुजि, 'अयकक्करभोई य, तुन्दिल्ले चिय सोणिए । आउयं नरए कंखे, जहा एसं व एलए' । ७ । उत्त० ७ अ० ।

अयकडिल्ल- न० *[अयःकडिल्ल]*
अयो लोहं, तन्मयं यत् कडिल्लं तत् । लोहकटाहे, ओह० ।

अयकरय- पुं० *[अजकरक]*
सप्तदशे महाग्रहे, सूर० २० पाहु० । कल्प० । चंद० । जंबू० । 'दो अयकरगा' । ठा० २ ठा० २ उ० ।

अयकोट्ठय- न० *[अयःकोष्ठक]*
लोहप्रतापनार्थे कुशूले, भग० १६श० १उ० । उपा० । जीवा०

अयक्खंत- पुं० *[अयस्कान्त]*
लोहाऽऽकर्षके चुम्बके मणौ, आव०म० ।

अयगर- पुं० *[अजगर]*
शयुःपर्याये, उरःपरिसर्पविशेषे, पण्हा० १ अ० ।
महाकायसर्पे, जंबू० २ वक्ष० ।
से किं तं अयगरा ? अयगरा एगागारा पन्नत्ता, से तं अयगरा । पन्न० १ पद० । जीवा० ।

अयगोलय- पुं० *[अयोगोलक]*
अयो लोहं, तस्य गोलः पिण्डोऽयोगोलः । निसि० १ उ० ।
अयःपिण्डे, दशा० ७अ० । सूय० ।

अयण- न० *[अयन]*
गमने, आव०म० । उत्त० । ठा० । नाया० ।
प्रापणे, अनुओ० ।
परिच्छेदे, नं० ।
षड्मासात्मके काले, तं० । जंबू० । भग० । अनुओ० ।
अयनानिषाण्मासिकानि दक्षिणायनोत्तरायणलक्षणानि । कल्प० ५ । ज्यो० ११ पाहु० । चंद० । सूर० ।

अयपाद- न० *[अयःपात्र]*
लोहपात्रे, 'अयपादाणि वा तंबपादाणि वा' । आचा०२ श्रु०६ अ०६ उ० ।

अयमग्ग- पुं० *[अजमार्ग]*
द्रव्यमार्गभेदे, यत्र वस्त्येनाऽजेन गम्यते । तद्यथा– सुवर्णभूम्यां चारुदत्तो गतः । सूय० १ श्रु० ११ अ० ।

अयवीहि- स्त्री० *[अजवीथि]*
हस्तचित्रास्वातीविशाखाऽनुराधा-पञ्चकरूपमहाग्रहचारविशेष-मार्गे, ठा० ९ ठा० ।

अयसी- स्त्री० *[अतसी]*
मालवकप्रसिद्धे धान्यविशेषे, (तीसी–अलसी) नाया० ५ अ० पन्न० । आव०म० । उव० । अंत० । जंबू० । रा० । उत्त० ।
भङ्गी, धान्यविशेषः । भग० ६ श० ७ उ० ।
धान्यविशेषः । दश० । भग०
कुसुंभिआ । ओह० ।

अयसीकुसुमप्पयास- त्रि० *[अतसीकुसुमप्रकाश]*
नीले, नाया० १ अ० । अंत० । उपा० । रा० ।

अयसीपुप्फ- न० *[अतसीपुष्प]*
धान्यविशेषस्य प्रसूने, उत्त० ३४ अ० ।

अयसीवण्ण- त्रि० *[अतसीवर्ण]*
अतसीकुसुमवर्णे श्यामवर्णे, उत्त० १९ अ० ।

अयहारि- त्रि० *[अयोहारिन्]*
लोहस्याऽऽहर्तरि, सूय० १ श्रु० ३ अ० ४ उ० ।

अयाकिवाणिज्ज- न० *[अजाकृपाणीय]*
ममोपरिकृपाणं पतिष्यतीत्यजा न वेत्ति, तथा सति अजागले कृपाणपतनरूपे अतर्कितोपस्थिते, आचा० १श्रु० १अ० १ उ०

अयाकुच्छि- त्रि० *[अजाकुक्षि]*
अजायाः कुक्षिरिव कुक्षिर्यस्य तदजाकक्षि । उपा० २ अ० ।

अया– स्त्री० *[अजा]*
द्विखुरविशेषः । पन्न० ४५ ।

अयागर- पुं० *[अयआकर]*
लोहाकरे, येषु निरन्तरं महामूषास्वयोदलं प्रक्षिप्याऽय उत्पाद्यते । जीवा० ३ प्रति० ।
लोहाकरः–यत्र लोहं ध्मायते । भग० ।

अयाणंत- त्रि० *[अजानत्]*
अविदुषि, 'पावस्स फलविवागं अयाणमाणा वट्टंति' । पण्हा० १ अ०

अयावय- पुं० *[अजाव्रज]*
अजावाटके, 'केइ पुरिसे अयासयस्स एगं महं अयावयं करेज्जा' । भग० १९ श० ३ उ० ।

अयावयट्ठ- पुं० *[अयावदर्थ]*
न यावदर्थः । अपरिसमाप्ते, दश० ५ अ० २ उ० ।

अर- पुं० न० *[अर]*
चक्रनाभिनेभ्योर्मध्यस्थे काष्ठे शीघ्रे च । नं० ।
सर्वोत्तमे महासत्त्वकुले य उपजायते तस्याऽभिवृद्धये वृद्धैर-सावर उदाहृतः ।१ इति वचनाद्, अरः । त गर्भस्थेऽस्मिन् जनन्या स्वप्ने सर्वरत्नमयोऽरो दृष्ट इति अरः । जम्बूद्वीपे भरत क्षेत्रे वर्त्तमानायामवसर्पिण्यां जाते सप्त चक्रवर्त्तिनि, सम० । अष्टादशे तीर्थकरे, सम० । आव० । ठा०
सुमिणे अरं महरिहं, पासइ जणणी अरो तम्हा ।।तत्थ सव्वे वि सव्वुत्तमे कुले सुविढ्ढिकरा एव जायंति, विसेसो पुण्य (सुमिणो अरं महरिहं ति) गाहापच्छद्धं । गब्भगते माताए सुमिणे सव्वरयणमयो अइसुंदरो अइपमाणो जम्हा अरो दिट्ठो, तहा अरो त्ति णामं कतं ति गाथार्थः ।आव० २ अ० ।आव०चू०

अरइ- स्त्री० *[अरति]*
रमणं रतिः, संयमविषया धृतिः, तद्विपरीता तु अरतिः । उत्त० २ अ० ।
संयमविषयेऽधैर्ये, उत्त० २ अ० ।
संयमोद्विग्नतायाम्, आचा० १ श्रु० ६ अ० ३ उ० ।
उद्वेगक्षणे मोहनीयोदयजे चित्तविकारे, ठा० १ ठा० उ० । सूय० । दश० । दशा० ।
वातादिजन्ये चित्तोद्वेगे, उत्त० ११ अ० ।
मोहनीयोदयाच्चित्तोद्वेगः । भग० ।
अमनोज्ञेषु शब्दादिविषयेषु संयमे वा जीवस्य चित्तोद्वेगे, बुह० १ उ० । सूय० ।
इष्टप्राप्तिविनाशोत्थे मानसे विकारे, आचा०१ श्रु० ३अ०१ उ० । सूय० । सम० ।
रमणं रतिस्तदभावोऽरतिः तां पञ्चविधाऽऽचारविषयां मोहोद-यात्कषायाभिष्वङ्गजनितां मातापितृकलत्राद्युत्थापितां, (स इति) अरतिमान्, आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ० ।
अरतिं चाऽनभिमतक्षेत्रादिविषयां । आतु० ।

अरइकम्म- न० *[अरतिकर्मन्]*
नोकषायवेदनीयकर्मभेदे, यदुदयात्, सचित्ताऽचित्तेषु बाह्य-द्रव्येषु जीवस्याऽरतिरुत्पद्यते । ठा० ९ ठा० ।

अरइकारग- त्रि० *[अरतिकारक]*
अरतिजनके, दश० १ चू० ।

अरइपरिसह- पुं० *[अरतिपरिषह]*
रमणं रतिः संयमविषया धृतिः, तद्विपरीता त्वरितः, सैव परीषहः, अरतिपरीषहः । उत्त० २ अ० ।
अरतिर्मोहनीयजो मनोविकारः, सा च परीषहः, तन्निषेधनेन सहनादिति । भग० ८ श० ८ उ० ।
विहरतस्तिष्ठतो वा यद्यरतिरुत्पद्यते, तत्रोत्पन्नारतिनाऽपि सम्यग्धर्मारामरतेनैव संसारभावमालोच्य भवितव्यम् । परीषह भेदे, आव० ४ अ० ।

अरइरइ- स्त्री० *[अरतिरति]*
मोहनीयोदयाच्चित्तोद्वेगोऽरतिः, रतिः मोहनीयोदयाच्चित्त-प्राप्तिः । इति द्वन्द्वः । कल्प० ६ ।
रत्यरत्योर्द्वन्द्वे, 'एगा अरतिरती' । अरतिश्च तन्मोहनीयोदयज-श्चित्तविकार उद्वेगलक्षणः, रतिश्च तथाविधानन्दरूपा, अरति-रति इत्येकमेव विवक्षितम्, यतः क्वचन विषये या रतिस्तामेव विषयाऽन्तराऽपेक्षया अरतिं व्यपदिशन्ति, एवमरतिमेव रतिम्, इत्यौपचारिकमेकत्वमनयोरस्तीति । रत्यरत्योरेकतायाम्, ठा० १ ठा० १ उ० ।

अरइसमावण्णचित्त- त्रि० *[अरतिसमापन्नचित्त]*
संयमे उद्वेगगताऽभिप्राये, दश० १ चू०।

अरंजर- न० *[अरञ्जर]*
लञ्जरमिति प्रसिद्धे उदककुम्भे, ठा०९ ठा०।

अरक्खरी- स्त्री० *[अरक्षापुरी]*
चन्द्रध्वजनृपपलिते स्वनामख्याते प्रत्यन्तनगरे, 'ततः प्रत्यन्तनगरे, अरक्खरीति नामनि। अस्ति माण्डलिकस्तत्र, जिनचन्द्रध्वजाऽभिधः'। आव० । आव० चू०। आव०म० ।

अरगाउत्त- त्रि० *[अरकायुक्त]*
अरकैरभिविधिनाऽन्विते, भग० ३ श० १ उ०।

अरगाउत्तासिय- त्रि० *[अरकोत्रासित]*
अरका उत्–त्रासिता आस्फालिता यत्र। आस्फालिताऽरके, भग० ३ श० १ उ०।

अरज्जुयपास- पुं० *[अरज्जुकपाश]*
रज्जुकं विना बन्धने, तं०।

अरज्झिय- त्रि० *[अरहित]*
निरन्तरे, अरहितो निरन्तरोऽभितापो दाहो येषां तेऽरहिता-ऽभितापाः। सूय० १ श्रु० ५ अ० १ उ०।

अरणि- पुं० *[अरणि]*
अग्न्यर्थं निर्मन्थनीयकाष्ठे,निर०३वर्ग० ।विशे० ।आव०। नाया०
अरणिं महिऊण अग्गिं पाडेइ। आव० म०।
'अत्थि णं घाणसहगया अरणिसहगया' अरणिरग्न्यर्थं निर्मन्थ-नीयकाष्ठं, तेन सह गतो यः स तथा। भग० २५ श० ८ उ०।

अरणिया- स्त्री० *[अरणिका]*
स्कन्धबीजवनस्पतिभेदे, आचा० १ श्रु० १ अ० ५ उ०।

अरण्ण- न० *[अरण्य]*
कान्तारे, ठा० १ ठा० १ उ०। उत्त०। आव०।
वने, उत्त० १४ अ०।

अरण्णवडिंसग- न० *[अरण्यावतंसक]*
एकादशदेवलोकविमानभेदे, सम० २२ सम०।

अरत्त- त्रि० *[अरक्त]*
रागरहिते, आचा० १ श्रु० ३ अ० २ उ०।

अरजस्- त्रि० ।
स्वाभाविकरजोरहिते, सम०। कल्प०। पन्न०।
त्रयः सप्ततितमे महाग्रहे, 'दो अरया'। ठा० २ ठा०३ उ०। चंद०। कल्प०। सूर०।
ब्रह्मलोकस्थविमानप्रस्तटभेदे, नं०। ठा० ६ ठा०।
कुमुदविजयस्थराजधान्याम्, जंबू० ४ वक्ष०।
रजसोऽभावे (न०) उत्त० १८ अ०।

अरत- त्रि०।
आरम्भनिवृत्ते, निर्ममत्वे च।आया० १ श्रु० ५अ० ३ उ०। सूय०।

अरयंबवत्थधर- त्रि० *[अरजोऽम्बरवस्त्रधर]*
अरजांसि रजोरहितानि च तानि अम्बरवस्त्राणि स्वच्छतया-ऽऽकाशकल्पवसनान्यरजोऽम्बरवस्त्राणि, तानि धारयतीति यः स तथा। तथाविधवस्त्रधारके देवादौ, भग० ३ श० २ उ०। उत्त०। पन्न०। जंबू० ।

अरयणि- पुं० *[अरत्नि]*
वितताऽङ्गुलौकरे, ठा० ४ ठा० ४ उ०।

अरविंद- न० *[अरविन्द]*
पद्मविशेषे (कमले,) आव०म०। पन्न०।
'पुप्फेसु वा अरविंदं पहाणं'। सूय०१ श्रु० ६ अ०। ठा०।

अरस- न० *[अरस]*
अविद्यमानाऽऽहार्यरसे हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृते, पण्हा० ५ अ० अप्राप्तरसे, दश० ५ अ० २ उ०। नाया०। भग०। उव०।

अरसजीवि- पुं० *[अरसजीविन्]*
अरसेन जीवितुं शीलमाजन्माऽपि यस्य स तथा। अरसाऽऽहारे, ठा० ५ ठा० १ उ०।

अरसाल- त्रि० *[अरसाल]*
विरसे,'अरसालं पि भोयणं सुभं गंधजुत्तं'। निसि० २ उ०।

अरसाहार- पुं० *[अरसाहार]*
अरसं हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतमाहारयन्तीति, अरसो वाऽऽहारो यस्यासावरसाहारः। तथाविधाऽभिग्रहविशेषधारके, ठा० ५ ठा० १ उ०। भग०। उव०।

अरह- पुं० *[अरहस्]*
न विद्यते रह एकान्तो गोप्यमस्य, सकलसन्निहितव०हित-स्थूलसूक्ष्मपदार्थसार्थसाक्षात्कारित्वात्, इत्यरहाः। ठा० ४ ठा० १ उ०।
न विद्यते रहो वीजनं यस्य सर्वज्ञात्वादसावरहाः।ठा० ९ ठा०

अरह- पुं० *[अर्हत्]*
शोकाद्यष्टमहाप्रातिहार्यादिरूपां पूजामर्हतीति अर्हन्। कल्प०। ठा०। उत्त०।
अशोकादिप्रातिहार्य-पूजायोग्ये, कल्प० ६ । सूय०।
इन्द्रादिभिः पूज्ये, उत्त० ६ अ०।
तीर्थकृति, सूय० १ श्रु० ६ अ०।
जिने, ठा० ३ ठा० ४ उ०।
'तओ अरहा पन्नत्ता। तं जहा–ओहिनाणअरहा, मणपज्जव-णाणअरहा, केवलणाणअरहा'। ठा० ३ ठा० ४ उ०।

अरहंत- पुं० *[अर्हत, अरहत]*
अर्हन्ति देवादिकृतां पूजामित्यर्हन्तः। अथवा नास्ति रहः प्रच्छन्नं किञ्चिदपि येषां प्रत्यक्षज्ञानित्वात् तेऽरहन्तः। शेषं प्राग्ववत्। एते च सलेश्या अपि भवन्तीति।ठा० ३ ठा०४ उ०
अमरवरनिर्मिताऽशोकादिमहाप्रातिहार्यरूपां पूजामर्हन्तीत्यर्हन्तः । अविद्यमानरहस्येषु, अनु०। दशा० १ अ०।
अरहंता असेसकम्मक्खएणं णिद्दड्ढभवंकुरत्ताओ न पुणो हि भवंति, जम्मंति, उव्वज्जंति वा, अरहंता वा णिम्महियनिहयनिद्दलियविल्लुयनिट्ठवियअभिभूयसुदुज्जाया । महा० ३ अ०। दश०।
त्रिभुवनपूजायोग्येषु तीर्थकरेषु ऋषभादिषु, कल्प० १ ।
आजीविककल्पनया गोशालकोऽप्यर्हन्, अत एव तेऽर्हद्–देवताका इत्युच्यन्ते। 'अरहंतदेवयागा' गोशालकस्य तत्कल्पनयाऽर्हत्वात्। भग० ८ श० ५ उ०।

अरहंत- न० *[अरहोऽन्तरम्]* ।
अविद्यमानं रह एकान्तरूपो देशोऽन्तश्च मध्यं गिरिगुहादीनां सर्ववेदितया समस्तवस्तुस्तोमगतप्रच्छ-न्नत्व–स्याऽभावेन येषां ते अरहोन्तरः। अर्हत्सु जिनेषु। भग० २ श० १ उ०।

अरहंत- पुं० *[अरथान्त]*
अविद्यमानोरथःस्यन्दनः सकलपरिग्रहोपलक्षणभूतः, अन्तश्च विनाशो जराद्युपलक्षणभूतो येषां तेऽरथाऽन्ताः। भग० १ श० १ उ०।

अरहंत-पुं० *[अरहयत्]*
क्वचिदप्यासक्तिमगच्छत्सु क्षीणरागत्वात् प्रकृष्टरागादिहेतुभूत-मनोज्ञेतरविषयसंपर्केऽपि वीतरागत्वादिकं स्वभावमत्यजत्सु जिनेषु, भग० १ श० १ उ०।

अरहंतमग्गगामि- त्रि० *[अर्हन्मार्गगामिन्]*
अर्हदुपदिष्टेन मार्गेण गन्तुं शीलं यस्य। जैन साधौ, 'अरहंत-मग्गगामी, दिट्ठंतो साहुणो वि समचित्ता। पागरएसु गिहीसुं, एसंते अवहमाणा उ'।। दश० १ अ०।

अरहट्ट- पुं० *[अरघट्ट]*
घटीयन्त्रे, 'जम्मणमरणारहट्टे, भित्तूण भवा विमुच्चिहिसि'। आतु०। आव०।
अरघटिक। आतु० ।
अरघट्टः। ओह०।

अरहण्णय- पुं० *[अर्हन्नत]*
अर्हन्मित्रभ्रातरि, गच्छा०। आव० म०। आव० चू०।
मुनिविशेषः। मरण०।
ईर्यासमितौ यस्य देवतया पादच्छिन्नः। आव०।

अरहण्णय-पुं० *[अरहन्नक]*
तारानगर्यामर्हन्मित्राऽऽचार्यपार्श्वे प्रव्रजितया दत्तवणिग्भार्यया सह प्रव्रजिते पुत्रे, उत्त० २ अ०। (स चोष्णपरीषहमसहमान उत्प्रव्रजित नाया० ८ अ०। ठा०।

अरहमित्त- पुं० *[अर्हन्मित्र]*
अर्हन्नतलघुभ्रातरि, यस्मिन् आसक्तया भ्रातृजाययाऽर्हन्नतो मारितः। गच्छा० २ अधि०।
द्वारवतीवास्तव्ये रुग्णत्वे वैद्योपदिष्टं मांसं निर्बन्धेऽप्य-खादितवत्या अनुद्धर्याः पत्यौ, आव० चू० ४ अ०। आव०।

अरहस्सधारक- पुं० *[अरहस्यधारक]*
नाऽस्ति अपरं रहस्याऽन्तरं यस्मात् तदरहस्यम्। अत एव रहस्यं छेदशास्त्राऽर्थतत्त्वमित्यर्थः। तद् यो धारयति, अपात्रेभ्योय न प्रयच्छति, सोऽरहस्यधारकः। योग्यायैव छेद*दायके, बृह० ६ उ०।

अरहस्सभागि- पुं० *[अरहस्यभागिन्]*
रहस्यस्य प्रच्छन्नस्याऽभावो-ऽरहस्यं, तद् भजते, इत्यरहस्य भागी। अर्हति, ठा० ९ ठा०। कल्प०।

अरहस्सर- त्रि० *[अरहःस्वर]*
अप्रकटस्वरे महाशब्दे, सूय० १ श्रु० ५ अ० १ उ०।
बृहदाक्रन्दशब्दे, सूय० १ श्रु० ५ अ० २ उ०।
अतीवरहस्यभूतं छेदशास्त्रार्थतत्त्वम्। बृह०

अराइ- पुं० *[आरति]*
व्याधौ, आव० म० । आचा०। विशे०।

अरि- पुं०–अरि ।
द्विषत्प्रत्यर्थिरिपुपर्यायः। निर्दये रिपौ, तं०। सामान्यतः शत्रौ, जंबू० २ वक्ष०। नाया०। जीवा०। आव०म०। आव०।
जन्मान्तरवैरिणि, सूय० १ श्रु० ५ अ० २ उ०।

अरिंजय- पुं० *[अरिञ्जय]*
श्रीऋषभदेवस्य द्व्यशीतितमे पुत्रे, कल्प० ७

अरिछव्वग्ग- पुं० *[अरिषड्वर्ग]*
कामक्रोधलोभमानमोहमदाऽऽख्ये आन्तरशत्रुषट्के, सूय० १ श्रु० १ अ० ४ उ०।

अरिट्ठ– पुं० *[अरिष्ट]*
पिचुमन्दे, पन्न० १ पद०।
काके, फलविशेषे च। उव०।
पञ्चदशस्य तीर्थकरस्य प्रथमशिष्ये, सम०।
अप्रशस्ते, आव० चू० २ अ०।

अरिट्ठकुमार- पुं० *[अरष्टिकुमार]*
कौमार्ये वर्त्तमानेऽरिष्टनेमौ, 'भृशमरिष्टकुमार ! । कल्प० ७

अरिट्ठणेमि- पुं० *[अरिष्टनेमि]*

धर्मचक्रस्य नेमिवन्नेमिः, गर्भस्थे मात्राऽरिष्टरत्नमयनेमेरुत्पतन दर्शनादरिष्टनेमिः, अवसर्पिण्यां भरतक्षेत्रजे द्वाविंशे तीर्थकरे, अनु०

धर्मचक्रस्य नेमिवन्नेमिः। 'सव्वे धम्मचक्कस्स नेमीभूय त्ति सामन्नं, विसेसो गब्भगते तस्स मायाए अरिट्ठरयणमयो (मह त्ति) महालयो नेमी उप्पिज्जमाणो सुमिणे दिट्ठो त्ति तेण सोऽरिट्ठनेमि त्ति' आव०२ अ०। आव० चू०।

तीर्थकरविशेषः। बृह० ३०। अंत० २, ५।

समुद्रविजयस्य प्रथमः पुत्रः। उत्त० ४९६।

अरिट्ठा– स्त्री० *[अरिष्टा]*

कच्छविजयक्षेत्रवर्त्तिराजधानीयुगले, जंबू० ४ वक्ष०।

'दो अरिट्ठाओ'। ठा० २ ठा० ३ उ०।

अरित्ता– स्त्री० *[अरिता]*

सामान्यतः शत्रुभावे, भग० १९ श० ५ उ०।

अरिण– त्रि० *[अरय]*

इन्द्रियविषयकषायपरीषहवेदनोपसर्गरूपाः। आव०।

अरिदमण– पुं० *[अरिदमन]*

सप्ततितमे श्रीऋषभपुत्रे, कल्प० ७ ।

वसन्तपुरराजनि, यस्य पत्न्याऽभयं दत्त्वा चौरो मोचितः । सूय० १ श्रु० ६ अ०।

अरिसिल्ल– त्रि० *[अर्शस]*

अर्शोरुग्णे, 'अरिसिल्लस्स व अरिसा, मा खुब्भं तेण बंधए कमणी'। निसि० २ उ०।

अर्शोवतः पादतलदौर्बल्यादर्शांसि मा क्षुभ्येरन् इति कृत्वा क्रमणिके असौ बध्नाति। बृह० ३ उ०।

अर्ह– त्रि०।

योग्ये, सूय० १ श्रु० ३ अ० २ उ०। ठा०।

लक्षणोपेततयाऽऽचार्यपद०योग्ये, वव० १० उ०।

पूज्ये, विशे०।

प्रशस्ततया पूज्ये, सम०।

अरिहंत– पुं० *[अर्हत्]*

अर्हन्त्यशोकाऽऽद्यष्टप्रकारां परमभक्तिपरसुराऽसुरविसरविरचितां जन्माऽन्तरमहाऽलवालविरूढाऽनवद्यवासनाजालाऽभिषिक्तपुण्यमहातरु-कल्याणफल-कल्पां महा-प्रातिहार्यरूपां निखिलप्रतिपत्तिप्रक्षयात् सिद्धिसौधशिखराऽऽरोहणं चेत्यर्हन्तः। ठा० २ ठा० १ उ०। आव०। जंबू०। सूय०। अनु०। जीवा०। आव०चू०। विशे०। आचा०।

तीर्थकृत्सु, आव०म०।

सम्प्रति प्राकृतशैल्या अनेकधाऽर्हच्छब्दनिरुक्तसंभव इति दर्शयन्नाह– इंदियविसयकसाए, परीसहवेयणाए उवसग्गे। एए अरिणो हंता, अरिहंता तेण वुच्चंति।। इन्द्रियादयः पूर्ववत्। वेदना त्रिविधा–शारीरी, मानसी, उभयरूपा च। एए अरिणो हंता० ततोऽयमर्थः–एतेषामरीणां हन्तारोऽर्हन्त।

साम्प्रतं प्रकाराऽन्तरतोऽरय आख्यायन्ते, ते चाऽष्टौ ज्ञानावरणादिसंज्ञाः सर्वसत्त्वानामेव । तथाचाऽऽह– अट्ठविहं पि य कम्मं, अरिभूयं होऽ सव्वजीवाणं। तंकम्ममरीहंता, अरिहंता तेण वुच्चंति।। अष्टविधमष्टप्रकारम्, अपिशब्दादुत्तर प्रकृत्यपेक्षया अनेकप्रकारम्। चशब्दो भिन्नक्रमः, सचाऽवधारणे। ज्ञानावरणादि कर्मैव अरिभूतं शत्रुभूतं भवति सर्वजीवानां सत्त्वानाम्, अनवबोधादिदुःखहेतुत्वात्। तत्कर्माऽरिहन्तारो यतः, तेनाऽर्हन्त उच्यन्ते। अथवा–

अरिहंति वंदण-नमंसणाणि अरिहंति पूयसक्कारं।
सिद्धिगमणं च अरिहा, अरिहंता तेण वुच्चंति।।

अर्ह–पूजायाम्। अर्हन्ति वन्दननमस्करणे, तत्र वन्दनं शिरसा, नमस्करणं वाचा। तथा–अर्हन्ति पूजासत्कारं, तत्र वस्त्र–माल्यादिजन्या पूजा, अभ्युत्थानादिसंभ्रमः सत्कारः। तथा–सिध्यन्ति निष्ठितार्था भवन्त्यस्यां प्राणिनः सिद्धिः लोकान्तक्षेत्र–लक्षणा। वक्ष्यति–इह बोंदिं चइत्ता णं, तत्थ गन्तूण सिज्झइ। तद्गमनं प्रति अर्हन्तीत्यर्हाःयोग्याः। तेन कारणेनाऽर्हन्त उच्यन्ते। अर्हन्तीत्यर्हन्तः। तथा–

देवाऽसुरमणुएसु य, अरिहा पूया सुरुत्तमा जम्हा।
अरिणो हंताऽरिहंता, अरिहंता तेण वुच्चंति।।

देवाऽसुरमनुजेभ्यः– सूत्रे पञ्चम्यर्थे सप्तमी, प्राकृतत्वात् पूजा–मर्हन्ति प्राप्नुवन्ति। कुत इति चेत् ? अत आह–यस्मात् सुरोत्तमा उपचितसकलजनासाधारणपुण्यप्राग्भारतया समस्तदेवाऽसुरमनुजोत्तमाः, ततः पूजामष्टमहाप्रातिहार्यलक्षणामर्हन्तीत्यर्हन्तः। इत्थमनेकधा त्वर्थमभिधाय पुनः सामान्यविशेषाभ्यामुपसंहरन् आह–यतोऽरीणां हन्तारः, तथा–रजो बध्यमानकं कर्म, तस्य रजसो यतो हन्तारः, तेनाऽर्हन्त उच्यन्ते।' अरिहन्तारः' इति वा स्थितस्य अर्हन्त इति निष्पत्तिः प्राग्वत्। आव०म०। नं०। ओ०। सूर०। आव०।

अडवीए देसियत्तं, तहेव निज्जामया समुद्दम्मि। छक्कायरक्खणट्ठा, महगोवा तेण वुच्चंति। रागद्दोसकसाए, य इंदियाणि य पंचवि परीसहे। उवसग्गे नामयंता,नमोऽरिहा तेण वुच्चंति। विशे०। आव०चू०।

एकस्मिन् क्षेत्रे एकसमये द्वावर्हन्तौ नोत्पद्येते इति कपिलवासुदेवं प्रति मुनिसुव्रतोक्तिः। नाया० १६ अ०।

अरिहंतचेइय– न० *[अर्हच्चैत्य]*
अशोकाद्यष्टमहाप्रातिहार्यादिरूपां पूजामर्हन्तीति अर्हन्तः तीर्थकराः, तेषां चैत्यानि प्रतिमालक्षणानि अर्हच्चैत्यानि। इदमत्र भावना–चित्तमन्तःकरणं, कृते चैत्यम्। तत्राऽर्हतां प्रतिमाः प्रशस्तसमाधिचित्तोत्पादकत्वाद् अर्हच्चैत्यानि भण्यन्ते
अर्हत्–प्रतिमासु, अरिहंतचेइयाणं करेमि काउस्सग्गं०।
आव० ५ अ०। आव० चू०।

अरिहंतभासिय– त्रि० *[अर्हद्भाषित]*
अर्हद्भिःसम्यगाख्याते, सूय० १ श्रु०६ अ०।

अरिहंतमणुण्णाय– त्रि० *[अर्हदनुज्ञात]*
अर्हद्भिः कर्त्तव्यतयाऽनुज्ञाते, पन्न० १३ पद०।

अरिहंतसमणसिज्जा– स्त्री० *[अर्हच्छ्रमणशय्या]*
अर्हतां श्रमणानां च शय्याऽर्हच्छ्रमणशय्या। चैत्याऽऽलयोपाश्रय रूपासु शय्यासु, जीत०।

अरिहंतसासण– न० *[अर्हच्छासन]*
जिनाऽऽगमे, पण्हा० ५ अ०

अरिहदत्त– पुं० *[अर्हद्दत्त]*
आर्यसुस्थितसुपतिबुद्धयोः पञ्चमे शिष्ये, कल्प० ८

अरिहदिण्ण– पुं० *[अर्हद्दत्त]*
सिंहगिरेश्चतुर्थे शिष्ये, कल्प० ८।

अरुउवसग्ग– पुं० *[अरुगुपसर्ग]*
रोगरहिते उपसर्गे, तं०।

अरूपोपसर्ग– पुं०। रूपरहिते उत्पाते, तं०।

अरुग– न० *[अरुक]*
व्रणे, 'अरुगं इहरा कुत्थइ' । बुह० ३ उ०।

अरुण–१ पुं० *[अरुण]*
नन्दीश्वरवरसमुद्रस्य परतोऽरुणोदसमुद्रपरिवेष्टिते द्वीपभेदे, स च वृत्तवलयाऽऽकारसंस्थानसंस्थितः। तत्र अशोकवीतशोकौ देवौ। सूर० १९ पाहु०। अनु०। जीवा०। पन्न०। नं०। ठा०।
हरिवर्षनामाऽकर्मभूमिवृत्तवैताढ्यपर्वतस्याऽधिपतौ देवे, ठा० ४ ठा० ३ उ०।
अरुणोपपातग्रन्थप्रतिपाद्ये देवे, ठा० १० ठा०। उपा०। सूर०
विमानभेदे, अरुणादीनि दश विमानानि, यथा– 'अरुणे १ अरुणाभे २ खलु, अरुणप्पह ३ अरुणकंत ४ सिट्ठे ५। अरुणज्झए य छट्ठे ६, भूय ७ वडिंसे ८ गवे ९ कीले १०'।। शिष्टादिनामान्यरुपणदपूर्वाणि द्दश्यानि। उपा० ९ उ०।
नन्दीश्वरसमुद्रानन्तरं द्वीपः, तदनन्तरं समुद्रोऽपि। पन्न० ।

अरुण–२ पुं० *[अरुण]*
सप्तमहाकुष्ठेषु प्रथमभेदः। आचा० ।

अरुणप्पभ– पुं० *[अरुणप्रभ]*
चतुर्थेऽनुवेलन्धरनागराजे, तदावासपर्वते च। जीवा० ३ प्रति०। ठा०।
विमानभेदे, उपा० ९ उ०।
राहोश्चन्द्रं गृह्णतो दशमे कृत्स्नपुद्गले, चंद० २० पाहु०। सूर० २० पाहु०।

अरुणप्पभा– स्त्री० *[अरुणप्रभा]*
नवमस्य तीर्थकरस्य निष्क्रमण शिबिकायाम्, सम०।

अरुणवर– पुं० *[अरुणवर]*
स्वनामख्याते द्वीपे, समुद्रे च। तत्र अरुणवरे द्वीपे अरुणवरभद्राऽरुणवरमहाभद्रौ, अरुणवरे समुद्रे अरुणभद्राऽरुणमहाभद्रौ देवौ। सूर० १९ पाहु०। जीवा०। अनु०। देविं०।

अरुणवरोभास– पुं० *[अरुणवराऽवभास]*
स्वनामख्याते द्वीपविशेषे, समुद्राऽविशेषे च। तत्राऽरुणवराऽवभासे द्वीपे अरुणवराऽवभासभद्राऽरुणवराऽवभासमहाभद्रौ, अरुणवराऽवभाससमुद्रे अरुणवराऽवभासवराऽरुणवराऽवभास महावरौ देवौ। सूर० १९ पाहु०। जीवा० । चंद०१९ पाहु०।

अरुणाभ– पुं० *[अरुणाभ]*
अरुणकान्तौ, चन्द्रं गृह्णतो राहोर्दशमे कृत्स्नपुद्गले, सूर०२० पाहु०। चंद० २० पाहु०।
विमानभेदे, सम० ८ सम०। ठा०।

अरुणुत्तरवडिंसग– न० *[अरुणोत्तराऽवतंसक]*
विमानभेदे, सम० ८ सम०।
ब्रह्मलोककल्पे विमानविशेषः। सम०।

अरुणोदग– पुं० *[अरुणोदक]*
अरुणद्वीपस्य परितः प्रसृते समुद्रे, अरुणोदे समुद्रे सुभद्र–मनोभद्रौ देवौ। सूर० १९ पाहु०। चंद० १९ पाहु०। भग०।

अरुणोवय– पुं० *[अरुणोपपात]*
अरुणो नाम देवः, तत्समयनिबद्धो ग्रन्थस्तदुपपातहेतुररुणोपपातः। संक्षेपिकानां दशानां षष्ठेऽध्यने, ठा०।
द्वादशवर्षपर्यायस्य श्रमणस्य कल्पतेऽरुणोपपातः। वव० १उ०

अरुय–१ न० *[अरुस्]*
व्रणे, नाऽतिकंडूइयं सेयं, अरुयस्साऽवरज्झति। अरुषो व्रणस्याऽतिकण्डूयितं नखैः विलेखनं न श्रेयो न शोभनं भवति, अपि त्वपराध्यति, तत्कण्डूयनं व्रणस्य दोषमावहति। सूय० १ श्रु० ३ अ० ३ अ०।

अरुय–२ त्रि०।*[अरुज्]*
आधिव्याधिवेदनारहिते। शरीरमनसोरभावाद् अविद्यमानरोगे सिद्धिस्थाने, सम० १ सम०। उव०। जीवा०। कल्प०।

अरुय–३ पुं० *[अरुह]*
क्षीणकर्मबीजत्वात् (अरुहः) । आह च–दग्धे बीजे यथाऽत्यन्ते, प्रादुर्भवति नाऽङकुरः। कर्मबीजे तथा दग्धे, न रोहति भवाऽङकुरः। १ । भग० १ श० १ उ०। आव०।

अरूवि– त्रि० *[अरूपिन्]*
रूपं मूर्तिर्वर्णादिमत्त्वं, तदस्याऽस्तीति रूपी, न रूपी अरूपी। अमूर्त्ते, ठा० ५ ठा० ३ उ०।
धर्माऽस्तिकायादौ, पन्न० १ पद०। भग०। आव०।

धम्मत्थिकाए तद्देसे, तप्पएसे य आहिए।
अहम्मे तस्स देसे य, तप्पएसे य आहिए।। ५।।
आगासे तस्स देसे य, तप्पएसे य आहिए।
अद्धासमयए चेव, अरूवी दसहा भवे । ६। उत्त० ३६ अ०।

रूपातीते अमूर्त्ते आत्मनि, भग० १७ श० २ उ०।
कर्मरहिते सिद्धे, आव०म०।
मुक्ते, ठा० २ ठा० १ उ०।
'अरूवी सत्ता, अपयस्स पयं नत्थि, से णं सद्देण रूवेण गंधेण रसेण फासेण इच्चेतावंति त्ति बेमि'। (अरूवी सतत्ति) तेषां मुक्ताऽऽत्मनां या सत्ता, साऽरूपिणी। अरूपित्वं च दीर्घादि-प्रतिषेधेन प्रतिपादितम्। आचा० १ श्रु० ५ अ० ६ उ०।

अरूविअजीवपण्णवणा– स्त्री० *[अरूप्यजीवप्रज्ञापना]*
रूपव्यतिरेकेणाऽरूपिणो धर्माऽस्तिकायादयः, ते च ते अजीवाश्च अरूप्यजीवाः, तेषां प्रज्ञापना अरूप्यजीवप्रज्ञापना। अजीवप्रज्ञापनाभेदे, पन्न० १ पद०।

अरुहंत– पुं० *[अरोहन्]*
क्षीणकर्मबीजत्वादनुपजायमानः। भग० ३। अरोहन्, अनुपजायमानः क्षीणकर्मबीजत्वात्। भग० ३।

अरोग– त्रि० *[अरोग]*
निष्पीडे,भग० १८ श० १ उ०।
अशेषद्वन्द्वरहिते सिद्धे, सूय० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

अल– न० *[अल]*
अभीष्टकार्यसमर्थे, आचा० २ श्रु० ५ अ० १ उ०।
अलादेव्याः सिंहासने, नाया० २ श्रु०।

अलं– अव्य० *[अलम्]*
पर्याप्ते, निसि० १ उ०। आचा०। भग०। नाया०। दश०।
समर्थे, सूय० १ श्रु० ९ अ०।
अत्यर्थे, उव०।
प्रतिषेधे, सूय० २ श्रु० ७ अ०।

अलंकरण– न० *[अलङ्करण]*
शोभाकारके, कल्प० ३।

अलंकार– पुं० *[अलङ्कार]*
अलङ्क्रियते भूष्यतेऽनेनेत्यलङ्कारः। कटककेयूरादिके, सूय० १ श्रु० ३ अ० २ उ०। उव०। पण्हा०। रा०। दशा०।
आभरणाविशेषे, रा०। आव० म०। बुह०।
'चउव्विहे अलंकारे पन्नत्ते। तं जहा– केसाऽलंकारे वत्थाऽलंकारे मल्लाऽलंकारे आभरणाऽलंकारे'। ठा० ४ ठा० ३ उ०। आव० चू०।

अलंकारिय– पुं० *[अलङ्कारिक]*
नापिते, नाया० १३ अ०।

अलंकारियकम्म– न० *[अलङ्कारिककर्मन्]*
मण्डनादौ, नाया० २ अ०।
क्षुरकर्मणि, विपा० १ श्रु० ६ अ०।

अलंकारियसहा– स्त्री० *[अलङ्कारिकसभा]*
नापितकर्मशालायाम्, नाया० १३ अ०।
अलङ्कारिकसभा यस्यामलङ्क्रियते। ठा० ५ ठा० ३ उ०।

अलंकिय– त्रि० *[अलङ्कृत]*
मुकुटादिभिः । पण्हा०।
विभूषिते, दसा० १० अ०। उव०। नाया०।
कृताऽलङ्कारे, भग० ९ श० ३३ उ०।
उत्प्रेक्षादिभिरलङ्कारैर्विभूषिते, विशे०। अनु०।
अन्याऽन्यस्फुटशुभस्वरविशेषाणां करणादलङ्कृतम्। ठा० ७ ठा०। अनु०।
अन्याऽन्यस्वरविशेषकरणेनाऽलङ्कृतमिव गीयमाने गीतगुणभेदे, जीवा० ३ प्रति०।

अलंचपक्खगाहि– पुं० *[अलञ्चापक्षग्राहिन्]*
'अलंचपक्खगाही, एरिसया रुवजक्खाओ'। न कस्याऽपि लञ्चामुत्कोचं गृह्णन्ति, नाऽप्यात्मीयोऽयमिति कृत्वा पक्षं गृह्णन्ति, ते एतादृशा अलञ्चापक्षग्राहिणः। रूपेण मूर्त्या यक्षा इव रूपयक्षाः, मुर्तिमन्तो धर्मैकनिष्ठा देवा इत्यर्थः। द्रव्यं गृहीत्वाऽऽत्मीयत्वेन पक्षापरिग्राहकेषु रूपयक्षेषु, वव०१ उ०।

अलंबुसा– स्त्री० *[अलम्बुषा]*
उत्तरदिग्भागवर्त्तिरुचकवासिन्यां दिक्कुमार्याम्, जंबू० ५ वक्ष०। आव० म०। आव० । ठा०। आव० चू०।

अलंभोगसमत्थ– त्रि० *[अलंभोगसमर्थ]*
अत्यर्थं भोगाऽनुभवनसमर्थे, उव०।

अलक्क– पुं० *[अलर्क]*
वाराणसीनगर्या राजभेदे, अंत० ७ वर्ग०। ठा०।

अलगापुरी– स्त्री० *[अलकापुरी]*
वैश्रवणयक्षपुर्याम्, अंत० १ वर्ग०।

अलत्त– पुं॰ *[अलक्त]*
लाक्षारसे, अनुओ॰।

अलत्तय– पुं॰ *[अलक्तक]*
लाक्षारसेन रक्ते, जे रत्तए, ते अलत्तए। यो रक्तो लाक्षारसेन स एव अलक्तक उच्यते। अनुओ॰।

अलद्ध– त्रि॰ *[अलब्ध]*
अनुपाते, ठा॰ ५ ठा॰२ उ॰।
अप्राप्ते च सूय॰ १ श्रु॰ २ अ॰ ३ उ॰।

अलद्धिय– त्रि॰ *[अलब्धिक]*
अलब्धिमति लब्धिरहिते, ओह॰।

अलभसिरी– स्त्री॰ *[अलभश्री]*
अलादेव्या मातरि, नाया॰ २ अ॰।

अलमंथु– पुं॰ *[देशी]*
समयभाषया समर्थे, ठा॰ ४ ठा॰ २ उ॰।

अलमत्थु– त्रि॰ *[अलमस्तु]*
अलमस्तु, निषेधो भवतु। य एवमाह, सोऽलमस्तिवत्युच्यते। निषेधके, ठा॰ ४ ठा॰ २ उ॰।

अलय– पुं॰ *[अलक]*
वृश्चिककण्टके, 'अलए भंजावेइ' इति वृश्चिककण्टकान् शरीरे प्रवेशयतीत्यर्थः। विपा॰ १ श्रु॰ ६ अ॰।

अलया– स्त्री॰ *[अलका]*
वैश्रवणयक्षपुर्याम् नाया॰ ४ अ॰।

अलव– त्रि॰ *[अलप]*
घोषिताऽनेकतर्कविचित्रदण्डकाः, तथा न लपा अलपाः। मौनव्रतिकेषु निष्ठितयोगेषु गुटिकादियुक्तेषु, यद्वशाद् अभिधेय विषया वागेव न निस्सरति। सूय॰ २ श्रु॰ ६ अ॰।

अलवणसक्कय– त्रि॰ *[अलवणसंस्कृत]*
विशिष्टसंस्काररहिते, वव॰ ४ उ॰।

अलस– त्रि॰ *[अलस]*
निरुद्यमे, बुह॰१ उ॰।
मन्दे, जीवा॰।
असमर्थे च। सूय॰२ श्रु॰२ अ॰। ठा॰।
गण्डोलके, पुं॰। 'अलसो त्ति वा गंडुलगो त्ति वा सुसुणागो त्ति वा एगट्ठं'। निसि॰ १ उ॰।

अलसग– पुं॰ *[अलसक]*
'नोर्ध्वं व्रजति, नाऽधस्तादाहारो न च पच्यते। आमाऽऽशयेऽलसीभूतस्तेन सोऽलसकः स्मृतः'। इत्युक्तलक्षणे विशुचिकाविशेषलक्षणे, उपा॰ ८ अ॰।
हस्तपादादिस्तम्भे श्वयथौ, आचा॰१ श्रु॰२ अ॰ १ उ॰।

अलसमाण– त्रि॰ *[अलसायमान]*
अनलसोऽलसो भवतीति अलसायते, अलसायत इति अलसायमानः। आलस्यं भजमाने, गच्छा॰ १ अधि॰।

अलससत्त– न॰ *[अलससत्त्व]*
कापुरुषे, बुह॰ १ उ॰।

अलसी– स्त्री॰ *[अतसी]*
धान्यभेदे, आचा॰ १ श्रु॰ १ अ॰ ५ उ॰।

अलहुय– न॰ *[अलघुक]*
अत्यन्तसूक्ष्मे, ठा॰ १० ठा॰।

अला– स्त्री॰ *[अला]*
विद्युत्कुमारीमहत्तरिकाभेदे, ठा॰ ६ ठा॰।
धरणस्य नागकुमारेन्द्रस्याग्रमयहिष्याम्, नाया॰ २ श्रु॰।

अलाउ– न॰ *[अलाबु]*
तुम्बके, उव॰। अनु॰। सूय॰।
अलाबुतुम्बयोर्लम्बत्ववृत्तत्वकृतभेदः। जम्बू॰

आलाउच्छेय– न॰ *[अलाबुच्छेद]*
अलाबुकं छिद्यते येन, तत् अलाबुच्छेदम्। तुम्बच्छेदके पिप्लादिशस्त्रे, सूय॰ १ श्रु॰ ४ अ॰ २ उ॰।

अलाउपाय– न॰ *[अलाबुपात्र]*
तुम्बकभाजने, उव॰। आचा॰। ठा॰।

अलाघवया– स्त्री॰ *[अलाघवता]*
अविद्यमानं लाघवं लघुता यस्य तथा तद्भावोऽलाघवता। लाघवाऽभावे, बुह॰ २ उ॰। निसि॰।

अलाभ– पुं॰ *[अलाभ]*
लभनं लाभः, न लाभोऽलाभः। अभिलषितविषयाऽप्राप्तौ, उत्त॰ २ अ॰।

अलाभपरिसह– पुं॰ *[अलाभपरिषह]*
अलाभः प्रतीतः, तत्परिषहणं च, तत्र दैन्याऽभावः। भग॰ ८ श॰ ८ उ॰। सम॰। पण्हा॰।

अलाय– न॰ *[अलात]*
उल्मुके, बुह॰ ५ उ॰।नाया॰।जीवा॰। पन्न॰। दश॰। ठा॰।
अग्रभागे ज्वलत्काष्ठे, नं॰।

अलावडिंसक– न॰ *[अलावतंसक]*
अलादेव्या भवने, नाया॰ २ श्रु॰।

अलावु– न॰ *[अलाबु]* तुम्बे, जंबू॰ ३ वक्ष॰।
'अलावुगा ण भरिज्जति'। निसि॰ १ उ॰।

अलाहि- अव्य॰ *[अलम्]*
पर्याप्तौ, अलमत्यर्थं पर्याप्तः शक्तः। भग॰ १५ श॰ १ उ॰।
हलम्। आव॰। भग॰। ओह॰।

अलिंजर– न० *[अलिञ्जर]*
महदुदकभाजनविशेषे, उपा० ७ अ०।
उदककुम्भे, ठा० ४ ठा० २ उ०।

अलिंदग– पुं० *[अलिन्दक]*
गृहाद् बहिर्द्वाराऽग्रवर्तिछण्डिकायाम्, बृह० २ उ०। निसि०।

अलिंदुग– न० *[अलिन्दुक]*
छण्डत्वे, अनु०।

अलित्त न० *[अरित्र]*
नौक्षे, पणकाष्ठोपकरणभेदे, आचा० २ श्रु० ३ अ० १ उ०।

अलिपत्त– न० *[अलिपत्र]*
वृश्चिकपुच्छाकृतौ, विपा० १ श्रु०६ अ०।

अलिय– न० *[अलीक]*
कषायवशात् मिथ्याभाषणे, अनृतभाषणे, उत्त० १ अ०।
मृषावादे, ठा०। पण्हा०।
द्विधा अलीकम् अभूतोद्भावनं, भूतनिह्नवश्च। यथा–'ईश्वर कर्तृकं जगत्' इत्याद्यभूतोद्भावनम्। 'नाऽस्त्यात्मा' इत्यादिस्तु भूतनिह्नवः। विशे०। आव०म०। निसि० । अनु०। भग०।
अलीकवादजनितकर्माऽग्नौ, पण्हा०२ अ०।
अलियनियडिसातिजोयबहुलं० अलीकः शुभफलाऽपेक्षया निष्फलो यो निकृतेर्बन्धनप्रच्छादनार्थवचनस्य अविश्रम्भस्य च अविश्वासवचनस्य योगो व्यापारस्तेन बहुलं प्रचुरं यत् तत्तथा। पण्हा० २ अ०।

अलियणिमित्त– न० *[अलीकनिमित्त]*
मृषावादप्रत्यये, वव० २ उ०।

अलियभीरु– पुं० *[अलीकभीरु]*
सत्यावादिनि, वव० ७ उ०।

अलियवयण– न० *[अलीकवचन]*
वितथभाषणे, यथाकिं दिवा प्रचलायसि ? इत्यादिप्रश्ने– न प्रचलयामि इत्यादिभणने, । उत्त०। ठा०।

अलुक्खि– त्रि० *[अरूक्षिन्]*
अरूक्षस्पर्श सद्भावादरूक्षि।स्निग्धस्पर्शवति,भग०११श०४उ०

अलुद्ध– त्रि० *[अलुब्ध]*
अलम्पटे लोभरहिते, पण्हा०५ अ०।
'आरादुक्कोसं जो, लद्धूणं तयं न अत्तट्ठे। एस अलुद्धो दारं। पंच०भा० । भग०।

अलेवकड– न० *[अलेपकृत]*
वल्लचणकादावपिच्छिले द्रव्ये, पिंड०।

अलेसी– पुं० *[अलेश्यिन्]*
लेश्यारहिते अयोगिनि, सिद्धे च। ठा० ३ ठा०४ उ०।

अलोग– पुं० *[अलोक]* ।
धर्मादीनां द्रव्याणां वृत्तिर्भवति यत्र तत्, तादृशक्षेत्रमिह लोकः, तद्विपरीतं ह्यलोकाऽऽख्यं क्षेत्रम्। आव०५ अ०।
लोकविरुद्धे अनन्ताकाशास्तिकायमात्रे सूय०१ श्रु०१२ अ०। आव०म०।
यत्र क्षेत्रे समवगाढौ धर्मास्कायाऽधर्मास्तिकायौ, तावत्प्रमाणो लोकः, शेषः, त्वलोकः। जीवा०१ प्रति०।
'एगे अलोए' एकोऽलोकोऽनन्तप्रदेशोऽपि द्रव्यार्थतया। सम० १ सम०। सूर०।
केवलाकाशरूपः। औप०।

अलोभया– स्त्री० *[अलोभता]*
लोभत्यागरूपेऽष्टमे योगसंग्रहे, सम० ३२ सम०। पण्हा०। आव०।

अलोल– त्रि० *[अलोल]*
अलुब्धे, निसि० १०उ०।
अप्राप्त प्रार्थनाऽततप्रे, दश० १०अ०।

अलोलुप– पुं० *[अलोलुप]*
सरसाहारादिलाम्पट्यरहिते, उत्त० २ अ०।
अप्पडिबद्धो। दश०।

अल्ल– त्रि० *[आर्द्र]*
जलसंपृक्ते, 'अल्लं चम्मं दुरूहइ'। आर्द्रं चर्माधिरोहति। नाया० १२ अ०।

अल्लईकुसुम– न० *[अल्लकीकुसुम]*
पीतवर्णे लोकप्रसिद्धेगुच्छविशेषपुष्पे, पन्न० १ पद०। जंबू० । रा०।

अल्लग– न० *[आर्द्रक]*
श्रृङ्गबेरे, जंबू० ।

अल्लिअ– धा० *[उप+सृप्]*
समीपगमने,। दश० १ उ०।

अल्लियावणबंध– पुं० *[आलायनबन्ध]*
द्रव्यस्य द्रव्यान्तरेण श्लेषादिनाऽऽलीनकरणरूपे बन्धे, 'से किं तं अल्लियावणबंधे ? अल्लियावणबंधे चउव्विहे पन्नत्ते। तं जहा–लेसणाबंधे, उच्चयबंधे, समुच्चयबंधे, साहणणा बंधे' १ भग० ८ श० ९ उ०।

अल्लियावणवंदणय– न० *[आलायनवन्दनक]*
आचार्यादीनामा-श्रयणाय प्रतिक्रमणान्ते ज्येष्ठानुक्रमेण वन्दने, आव०४ अ०।

अल्लीउं– अव्य० *[आलीतुम्]*
आश्रयितुमित्यर्थे, बृह०६ उ०।

अल्लीण– त्रि० *[आलीन]*

आ–ईषद् लीनः। जीत०।

आश्रिते, आतु०। कल्प०। प्रति०। नाया०।

गुरुसमाश्रिते संलीने, आ समन्तात् सर्वासु क्रियासु लीनो गुप्तः। अनुल्बणचेष्टाकारिणी, जीवा० ३ प्रति०। तं०। गुरुजनमाश्रितेऽनुशासनेऽपि न गुरुषु, द्वेषमापद्यमाने, जंबू० २वक्ष०। नाया०।

ज्ञानादिषु आसम-न्ताल्लीने, वव० १० उ०।

अल्लीणपलीणगुत्त– त्रि० *[आलीनप्रलीनगुप्त]*

अङ्गोपाङ्गानि सम्यक्संयमयति, दश०८ अ०।

अव– अव्य० *[अव]*

आधिक्ये, सम० १ सम०।

अधःशब्दार्थे, विशे०। आव०म०। पन्न०। नं०।

गमने वेदने, आव०म०। विशे०। ठा०।

अधस्तात्। आचा०।

अवइ– पुं० *[अव्रतिन्]*

अविरतसम्यग्दृष्टौ, बुह०१ उ०।

अवउज्जिय– अव्य० *[अवकुब्ज्य]*

अधोऽवनम्येत्यर्थे, आचा० २ श्रु०१ अ०७ उ०।

अवउज्झिऊण– अव्य० *[अपोह्य]*

परित्यज्येत्यर्थे, 'अवउज्झिऊण इड्ढी'। बुह० ३ उ०।

अवउडग– न० *[अवकोटक]*

कृकाटिकाया अधोनयने, विपा० १ श्रु०२ अ०। पण्हा०।

अवउडगबंधण– त्रि० *[अवकोटकबन्धन]*

अवकोटकेन कृकाटि-कायां अधोनयनेन बन्धनं यस्य स तथा। ग्रीवायाः पश्चाद्भागानयनेन बद्धे, विपा०१ श्रु०२ अ०। बाहुशिरसां पृष्ठदेशे बन्धने, पण्हा०१ अ०।

अवंक– पुं० *[अवक्र]*

वक्रोऽसंयतः, न वक्रोऽवक्रः। संयते विरते, वव०१ उ०। सर्वोपाधिशुद्धे ऋजौ, आचा०१ श्रु० ३ अ०१ उ०।

अवंग– पुं० *[अपाङ्ग]*

नयनोपान्ते, जंबू० १ वक्ष०। नाया०। आचा०।

अवंगुयदुवार– त्रि० *[अपावृतद्वार]*

कपाटादिभिरस्थगितगृहद्वारे, 'अवंगुयदुवारा' सद्दर्शनलाभेन कुतोऽपि पाखण्डिकाद् बिभ्यति शोभनमार्गपरिग्रहेणोद्धाट-शिरसस्तिष्ठन्तीति भाव इति वृद्धव्याख्या।

अन्ये त्वाहुः–भिक्षुकप्रवेशार्थमौदार्यादस्थगितगृहद्वारा इत्यर्थः। भग०२ श०५ उ०। दशा०। उव०।

उद्घाटितद्वारे, न०। बुह०१ उ०। रा०।

अवंजणजाय– त्रि० *[अव्यञ्जनजात]*

व्यञ्जनान्युपस्थरोमाणि जातानि यस्य स तथा। अजातोपस्थरोमणि, वव० १०उ०।

अवंझ– न० *[अवन्ध्य]*

एकादशपूर्वनाम।ठा० १९९।

अवंतरसामन्न– न० *[अवान्तरसामान्य]*

द्रव्यत्वकर्मत्वादौ सत्ताघट-कापरसत्तायाम्, आव०म०।

अवंतिवड्ढण– पुं० *[अवन्तिवर्द्धन]*

अवन्तिराजप्रद्योताऽऽत्मजपालकराजस्य पुत्रे, आव० ४ अ०। आव०क०। आव०चू०। संथा०।

अज्ञातोदाहरणे प्रद्योतात्मजपा–लकसुतः। आव० ४ अ० ।

अवंती– स्त्री० *[अवन्ती]*

उज्जयिनीनगरीप्रतिबद्धे जनपद०विशेषे, आव०म०।

अवंतीगंगा– स्त्री० *[अवन्तीगङ्गा]*

गोशालकमतप्रसिद्धे कालविशेषे, 'एगा अवंतीगंगा, सत्त अवंतीगंगाओ, सा एगा परमाऽवंतीगंगा'।भग०२४ श०१ उ०

अवंदिम– त्रि० *[अवन्द्य]*

वन्दनानर्हे, 'पच्छा होइ अवंदिमो'। दश०१ चू०।

अवकंखमाण– त्रि० *[अवकाङ्क्षत्]*

पश्चाद्भागमवलोकयति, नाया०९ अ०।

अवकंखा– स्त्री० *[अवकाङ्क्षा]*

अभिलाषे, आचा०१ श्रु०२ अ० २ उ०। सूय०।

औत्सुक्ये, ठा०४ ठा० ३ उ०।

अवकिरण– न० *[अवकिरण]*

उत्सर्गे, आव०५ अ०।

अवकिरियव्व– न० *[अवकिरणीय]*

विक्षेपणीये त्याज्ये, पण्हा० ५ अ०।

अवक्कंत– त्रि० *[अपक्रान्त]*

सर्वशुभभावेभ्योऽपगते भ्रष्टे, तदन्येभ्ययोऽतिनिकृष्टे अपक्रमणीये, 'जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए छ अवक्कंतमहानिरया पन्नत्ता। तं जहा– लोले, लोलुए, उद्दड्ढे, निद्दड्ढे, जरए, पज्जरए। चउत्थीए णं पंकप्पभाए पुढवीए छ अवक्कंतमहाणिरया पन्नत्ता। तं जहा– आरे, वारे, मारे, रोरे, रोरुए, खाडखड्डे'। ठा०६ ठा०।

अव्युत्क्रान्त– त्रि० ।

न व्युत्क्रान्तमव्युत्क्रान्तम्। सचेतने, मिश्रे च। निसि० १ ७उ०

अवक्कंति– स्त्री० *[अपक्रान्ति]*

गमने, आचा०१ श्रु०८ अ०६ उ०।

परित्यागे, नाया०८ अ०।

अवक्कमण– न० *[अपक्रमण]*
विनिर्गमे, ठा०७ठा०। आचा०।
अपसर्पणे, दश०१ अ०।
अपसरणे, भग०१५ श०१ उ०। नाया०।
निग्गमणमवक्कमणं, निस्सरणं पलायणं य एगट्ठा।वव०१० उ०

अवक्कमित्ता– अव्य० *[अवक्रम्य]*
गत्वेत्यर्थे, दश०५ अ०१ उ०।

अवक्कमण– न० *[अपक्रमणे]*
विनिर्गमे, ठा०७ठा०। आचा०।
अपसर्पणे, दश०१ अ०।
अपसरणे, भग०१५ श०१ उ०। नाया०।
निग्गमणमवक्कमणं, निस्सरणं पलायणं य एगट्ठा। वव०१०उ०

अवक्कमित्ता– अव्य० *[अवक्रम्य]*
गत्वेत्यर्थे, दश०५ अ०१ उ०।

अवक्कम्म– अव्य० *[अवक्रम्य]*
विनिर्गत्येत्यर्थे, वव०१ उ०। बुह०।

अवक्कय– पुं० *[अवक्रय]*
भाटकप्रदाने, बुह० १ उ०।

अवक्कास– पुं० *[अपकर्ष]*
अपकर्षणमवकर्षणं वा अपकर्षः। अभिमानादात्मनः परस्य वा क्रियारम्भात् कुतोऽपि व्यावर्त्तने, भग०१२ श०५ उ०।

अवक्कास– पुं० *[अप्रकाश]*
अभिमानादान्ध्ये, भग० १२ श० ५ उ०।
तदात्मके मोहनीयकर्मणि, सम० १२ सम०।

अवक्खारण–१ न० *[अपक्षारण]*
अपशब्दक्षारणे, पण्हा०२ अ०।
अपशब्दं क्षारायमाणं वचनं, पण्हा० २ अ०।

अवक्खारण–२ न० *[अपक्षरण]*
सान्निध्याऽकरणे, पण्हा०२ अ०।

अवक्खेवण– न० *[अवक्षेपण]*
अधःस्थानसंयोगहेतौ, क्रियाविशेषे अधःपातने च। आव०म०

अवगंडसुक्क– त्रि० *[अपगण्डशुक्ल]*
अपगतं गण्डमद्रव्यं यस्य तदपगतगण्डम्, तद्वच्छुक्लम्। निर्दोषाऽर्जुनसुवर्णवच्छुक्ले, यदि वा गण्डमुदकफेनम्, तद्वच्छुक्लम्। उदकफेनतुल्यशुभ्रे, सूय० १ श्रु० ६ अ०।

अवगण्णियभवदंड– त्रि० *[अचकर्णितभवदण्ड]*
अवधीरित संसारभये, जीवा०१ अधि०।

अवगम–१ पुं० *[अपगम]*
विनाशे, विशे०।

अवगम–२ पुं० *[अवगम]*
विनिश्चये, विशे०।

अवगय– त्रि० *[अवगत]*
अवधारिते, आचा०१ श्रु० १ अ०१ उ०।

अवगाढ– त्रि० *[अवगाढ]*
आश्रिते, ठा०१ ठा०१ उ०।

अवगाढगाढ– त्रि० *[गाढावगाढ]*
अधोव्याप्ते, 'अवगाढ–गाढसिरीए अतीव उवसोभेमाणा उवसोभेमाणा चिट्ठंति'। गाढं बाढमवगाढस्तैरेव सकलक्रीडा-स्थानपरिभोगनिहितमनोभिरधोऽपि व्याप्ताः, गाढावगाढा इति वाच्ये, प्राकृतत्वादव-गाढगाढाः। इह च देवत्वयोगस्य जीवस्याऽभिधानेन तदयोग्यः सामर्थ्यादवसीयत एवेति। भग०१ श०१ उ०।

अवगार– पुं० *[अपकार]*
विरूपाचरणे, 'अपकारसमेन कर्मणा, न नरस्तुष्टिमुपैति शक्ति-मान्। अधिकां कुरुते हि यातनां, द्विषतां यातमशेषमुद्धरेत्' सूय० १ श्रु०८ अ०।

अवगास– पुं० *[अवकाश]*
गमनादिचेष्टास्थाने, आव० ६अ०।
'ततो लद्धावगासो सयं बुद्धो भणइ'। आव०म०।
अवस्थाने, ठा० ४ ठा० ३ उ०।
यद्यस्योत्पत्तिस्थानम्। सूय०२ श्रु० ३ अ०।

अवगाह– पुं० *[अवगाह]*
अवकाशे, उत्त०२८अ०।

अवगाहणा– स्त्री० *[अवगाहना]*
जीवादीनामाश्रये, देहे च। ठा०४ ठा० ३ उ०।

अवगाहणागुण– पुं० *[अवगाहनागुण]*
अवगाहना जीवादीनामाश्रयो गुणः कार्यं यस्य सः। तस्या वा गुण उपकारो यस्मात् सोऽवगाहनागुणः। ठा० ५ ठा० ३ उ०।
जीवादीनामवकाशहेतौ बदराणां कुण्ड इवाऽऽकाशाऽस्तिकाये, भग०२ श०१० उ०।

अवगिज्झिय– अव्य० *[अवगृह्य]*
उद्दिश्येत्यर्थे, कल्प०९।

अवगीत– पुं० *[अवगीत]*
वाङ्मात्रेणापि केनचिदप्यननुवर्त्यमानः। आचा०।

अवगुंत– त्रि० *[अवगुणत्]*
अपावृण्वति, भग०१५ श०१ उ०।

अवगूढ– त्रि० *[अवगूढ]*
व्याप्ते, नाया०८ अ०।

अवग्गह– पुं० *[अवग्रह]*

अवग्रहणमवग्रहः। विषयः सामान्यविशेषात्मकोऽर्थः, विषयी चक्षुरादिः, तयोः समीचीनो भ्रान्त्याद्यजनकत्वेनाऽनुकूलो निपातो योग्यदेशादि अवस्थानं, तस्मादनन्तरं समुद्भूतमुत्पन्नं यत् सत्तामात्रगोचरं निःशेषविशेषवैमुख्येन सन्मात्रविषयं दर्शनं निराकारो बोधः,तस्माज्जातमाद्यं सत्त्वसामान्यादवान्तरैः सामान्याऽऽकारैर्मनुष्य त्वादिभिर्जातिविशेषैर्विशिष्टस्य वस्तुनो यद् ग्रहणं ज्ञानं तदवग्रह इति नाम्ना गीयते। आव०। पन्न०। ठा०।

अवगृह्णाति इति अवग्रहः। उपधौ, ओह०।

अवचय– पुं० *[अपचय]*

अपचये, अनु०। दश०। सूय०।

देशतोऽपगमे, भग०११ श०११ उ०।

क्षयोपगमे, सूय०१ श्रु०२ अ० ३ उ०।

अवचिय– त्रि० *[अपचित]*

शोषिते, उत्त०२५ अ०।

जीवप्रदेशैर्विरहिते, अनु०।

अवचितमंससोणिय– न० *[अपचितमांसशोणित]*

शोषितमांसरुधिरे, उत्त० २५ अ०।

अवचुल्ली– स्त्री० *[अवचुल्ली]*

चुल्लया अव पश्चाद् अवचुल्ली। राजदन्तादित्वादवशब्दस्य पूर्वनिपातः। अवह्लके, पिंड०।

अवच्च– न० *[अपत्य]*

न पतन्ति यस्मिन्नुत्पन्ने दुर्वतौ अयशः– पङ्के वा पूर्वजास्तदपत्यम्। पुत्रादौ, कल्प०८।

पुत्रे, पुत्र्यां च। आव० १ अ०।

संयत्या अपत्ये जनिते आभवनव०हारः वव०।

अवच्चामेलिय– न० *[अव्यत्याम्रेडित]*

एकस्मिन्नेव शास्त्रेऽन्यान्यस्थानिबद्धान्येकार्थानि सूत्राण्येकत्र स्थाने समानीय पठतो व्यत्याम्रेडितम्। अथवा आचारादि*मध्ये मतिचर्चितानि तत्सद्दशानि सूत्राणि कृत्वा प्रक्षिपतो व्यत्याम्रेडितम्। अस्थानविरतिकं वा व्यत्याम्रेडितं, न तथाऽव्यत्याम्रेडितम्। व्यात्याम्रेडितदोषरहिते *गुणे, अनु०। गच्छा०। विशे०। पं०चू०।

अवच्छलत्त– न० *[अवत्सलत्व]*

अवात्सल्यकरणे, वव०१ उ०।

अवच्छेय– पुं० *[अवच्छेद]*

विभागेअंशे, ठा० ३ ठा० ३ उ०।

अवजाणमाण– त्रि० *[अवजानान]*

अपलपति, सूय०१ श्रु०४ अ०४ उ०।

अवजाय– पुं० *[अपजात]*

अप इत्यपसदो हीनः पितुः सम्पदोजातोऽपजातः। पितुः सकाशादीषद्धीनगुणे पुत्रभेदे, यथाआदित्ययशाः, भरताऽपेक्षया तस्य हीनत्वात्। ठा० ४ ठा० १ उ०।

अवजुय– त्रि० *[अवयुत]*

पृथग्भूते, वव० ७ उ०।

पृथग्भावे, निसि० १९ उ०।

अवज्ज– न० *[अवद्य]*

पाप, आव०म० ।आव० ।आव०चू०। सूय०। विशे०। आचा० निर्दोषे, उत्त०६ अ०। बुह०। संथा०।

मिथ्यात्वकषायलक्षणे, आव०म०।

गर्ह्य, सूय०१ श्रु०१ अ०२उ०। विशे०।

‘कम्ममवज्जं जं गरहियंति कोहाइणो व चत्तारि’। कर्माऽनुष्ठानमवद्यं भण्यते। किमविशेषेण ? न, इत्याहयत् गर्हितं निन्द्यम्, अथवा क्रोधादयश्चत्वारोऽवद्यं, तेषां सर्वाऽवद्यहेतुतया कारणे कार्योपचारात्। आव०म०। भग०।

अवज्जकर– पुं० *[अवद्यकर]*

अवद्यं पापं तत्करणशीलः। पापिनि, सूय० १ श्रु०४ अ०२ उ०

अवज्जभीरु– त्रि० *[अवद्यभीरु]*

पापभीरौ, साधु, ओह०।

पापाच्चकिते, बुह० ३ उ०।

अवज्झा– स्त्री० *[अवध्या]*

गन्धिलविजयराजधानी। जम्बू०।

अवज्झाण– न० *[अपध्यान]*

अप्रशस्तं ध्यानमपध्यानम्। आर्त्तादिध्याने, उव०। पापकर्मोपदेशे हिंसकार्पणे। इह देवदत्तश्रावककोङ्कणसाधुप्रभृतय उदाहरणानि। आव० ६ अ०।

अवज्झाणया– स्त्री० *[अपध्यानता]*

आर्त्तरौद्रादिध्यायित्वे, ठा० ३ ठा० ३ उ०।

अवज्झाणायरिय– पुं० *[अपध्यानाचरित]*

अपध्यानमार्त्तरौद्ररूपं, तेनाऽऽचरित आसेवितो योऽनर्थदण्डः, स तथा। अनर्थदण्डभेदे, उत्त० ३ अ०।

अवज्झाय– त्रि० *[अपध्यात]*

दुर्ध्यानविषयीकृते, उत्त०६ अ०।

दुष्टचिन्तावति, नाया०१४ अ०।

अवट्टु– पुं० *[अवटु]*

कृकाटिकायाम्, भग० १ ५श० १ उ०। विपा०।

अवट्ठंभ– पुं० *[अवष्टम्भ]*

स्तम्भाद्यवलग्ने। ओह० १६ द्वार०।

अवट्ठाण– न० *[अवस्थान]*

व्यवस्थायाम्, व्यवस्था संस्थितिः स्थितिरवस्थानमवस्था चैतान्येकार्थिकानि पदानि। बृह०५ उ०।

स्थितौ, आव० ४ अ०।

अवट्ठिइ– स्त्री० *[अवस्थिति]*

मर्यादायाम्, ठा० ३ ठा० ४ उ०।

अवस्थाने निष्प्रकम्पतया वृत्तौ, आव० ४ अ०।

अवट्ठिय– त्रि० *[अवस्थित]*

शाश्वत, ठा० ३ ठा० ३ उ०। नित्य, नाया० ५ अ०।

सिज्जायरपिंडे य १, चाउज्जामे य २ पुरिसजेट्ठे य ३। किइकम्मस्स य करणे ४, चत्तारि अवट्ठिया कप्पा ठा० ६ ठा०।

निश्चले, ठा० ५ ठा० २ उ०।

अवर्धिष्णौ, जीवा० ३ प्रति०।

यन्न हीयमानं, न वा वर्द्धमानम्। तं०। सम०।

'अवट्ठियसुविभत्त–विचित्तमंसू' ।अवस्थितान्यवर्द्धिष्णूनि सुविभक्तानि विविक्तानि विचित्राणि अतिरम्यतयाऽद्भुतानि श्मश्रुणि कूर्चकेशा येषां तेऽवस्थितसुविभक्तोविचित्रश्मश्रवः। जीवा० ३ प्रति०।

अनन्तपर्यायात्मके वस्तुनि, तत्र पर्यायाणामानन्त्येन अविरहाद् द्रव्यावस्थितत्वम्। भग०२ श०१ उ०।

स्वप्रमाणे स्थित, जीवा० ३ प्रति०।

अनवस्थित-विलक्षणे अनुयोगदानयोग्ये स्वलिङ्गाऽवस्थिते, संविग्नविहारा-ऽवस्थिते च। बृह०१ उ०।

स्थित्या रक्षिते, 'अवट्ठिए आणाए आराहए यावि भवइ'। आचा०२ श्रु०१५ अ०चू०।

अवधेः पञ्चमभेदः। पन्न०। आव०।

स्वप्रमाणेऽवस्थिता मानुषोत्तरपर्वताद्बहिः समुद्रवत्। जम्बू०

अवट्ठिया कप्प– न० *[अवस्थिताः कल्प]*

सामायिकसाधूनामवश्यं भविनः। ठा०।

अवड– पु० *[अवट]*

कूपे, ठा० २ ठा०४ उ०। अनु०। पन्न०। आव० म०।

अवड्ढ– पुं० *[अपार्द्ध]*

अपगतमर्द्धं यस्य तदपाऽर्द्धम् ।अर्द्धमात्रे,सूर०१०पाहु०। चंद० अर्द्धदिवसे, भग०१ ६श० ३उ०।

अवड्ढखेत्त– न० *[अपार्द्धक्षेत्र]*

अपगतमर्द्धं यस्य तदपार्द्धमर्द्धमात्रम्। अपार्द्धमर्द्धमात्रं क्षेत्रमहोरात्रप्रमितं येषां चन्द्रयोगस्यादिमधिकृत्य तान्यपार्द्धक्षेत्राणि। चंद० १० पाहु०। सूर० १० पाहु०।

समयक्षेत्राऽपेक्षया पञ्चदशमुहुर्त्तेषु, ठा० ६ ठा०।

अवड्ढगोलगोलच्छाया– स्त्री० *[अपार्द्धगोलगोलच्छाया]*

गोलैर्बहुविधैर्मिलित्वा यो निष्पादित एको गोलः, स गोल–गोलस्तस्य छाया गोलगोलच्छाया, अपार्द्धमात्रस्य गोल-गोलस्य छाया अपार्द्धगोलगोलच्छाया। अर्द्धमात्रमिलितानेक-गोलच्छयायाम्, चंद० ८ पाहु०।

अवड्ढगोलच्छाया– स्त्री० *[अपार्द्धगोलच्छाया]*

अपार्द्धमात्रय गोलस्य छायायाम्, सूर०८पाहु० ।चंद०८ पाहु०

अवड्ढगोलपुंजच्छाया– स्त्री० *[अपार्द्धगोलोपुञ्जच्छाया]*

गोलानां पुञ्जो गोलोत्कर इत्यर्थः। तस्य छाया गोलपुञ्जच्छाया, अपार्द्धस्य गोलपुञ्जस्य छाया अपार्द्धगोलपुञ्चच्छाया। अपार्द्ध-मात्रगोल-पुञ्जच्छायायाम्, चंद० ८पाहु०। सूर० ८पाहु०।

अवड्ढगोलावलिच्छाया– स्त्री० *[अपार्द्धगोलावलिच्छाया]*

गोलानामावलिर्गोलावलिस्तस्याः छाया गोलावलिच्छाया, अपार्द्धाया गोलावलिच्छाया, अपार्द्धगोलावलिच्छाया ।अपार्द्ध मात्रगोलावलिच्छायायाम्,। चंद० ८ पाहु०। ठा०।

अवड्ढचंदसंठाण– न० *[अपार्द्धचन्द्रसंस्थान]*

अपकृष्टमर्द्धं चन्द्रस्याऽपाऽर्द्धचन्द्रः, तस्य यत्संस्थानमाकारः। गजदन्ताऽऽकृतौ, ठा० २ ठा० ३ उ०।

अवड्ढभाग– पुं० *[अपार्द्धभाग]*

चतुर्थभागे,आचा० २श्रु० १ अ० १ उ०।

अवड्ढोमोयरिया– स्त्री० *[अपार्द्धावमौदरिका]*

अवमस्योनस्योदरस्य करणमवमौदरिका, अपकृष्टं किञ्चिदू-नमर्द्धं यस्यां साऽपार्द्धा, द्वात्रिंशत्कवलापेक्षया द्वादशानाम् अपाऽर्द्धरूपत्वात्। अपार्द्धा च साऽवमौदरिका चेति। अवमौ-दरिकाभेदे, 'दुवालस कुक्कुडिअंडगप्पमाणमेत्ते कवले आहार-माहारेमाणे अवड्ढोमोयरिया। द्वादश कुक्कुटाण्डकप्रमाणमात्रान् कवलानाहारमाहारयति अपार्द्धाऽवमौदरिका उक्तशब्दार्था भवतीत्येवं सप्तम्यन्तव्याख्यानं नेयम्। प्रथमान्तव्याख्यानं तु धर्मधर्मिणोरभेदादपार्द्धावमौदरिका साधुर्भवतीत्येवं नेतव्यम्। भग०७ श०१ उ०। वव०।

अवण– न० *[अवन]*

गमने, वेदने च। नं०।

अवणंत– त्रि० *[अपनयत्]*

अशक्नुवति, निसि० १ उ०।

अवणमंत– त्रि० *[अवनमत्]*

नीचीभवति, रा०।

अवणय– पुं० *[अपनय]*

पूजासत्कारादेरपनयने, ठा० ८ ठा०।

दोषभाषणे, निन्दायां च। आव०म०।

अवनत– त्रि० ।
द्रव्यतो नीचकाये, भावतोऽदीने, दश०५ अ० ।

अवणयण– न० *[अपनयन]*
निषेधने, विशे० ।

अवणीयउवणीयवयण– न० *[अपनीतोपनीतवचन]*
अरूपवती स्त्री, किन्तु सद्वृत्तेतिरूपे षोडशवचनानां द्वादशे, आचा०२ श्रु० ४ अ०१ उ० । पन्न० । प्रव० ।

अवणीयचरय– पुं० *[अपनीतचरक]*
अपनीतं देयद्रव्यमध्यादपसारितम्, अन्यत्र स्थापितमित्यर्थः । तदर्थमभिग्रहतश्चरति तद्गवेषणाय गच्छतीति । अपनीत-चरकः । अभिग्रहविशेषधारके, उव० ।

अवण्ण– त्रि० *[अवर्ण]*
अश्लाघायाम्, । ठा० ।
अयशसि अकीर्तौ, निसि० १० उ० ।
वर्णताया अकरणे, उव० ।
एकदिग्व्याप्यसाधुवादवादे, गच्छा०२ अधि० ।

अवण्णवंत– त्रि० *[अवर्णवत्]*
अश्लाघाकारिणि, सम० ३० सम० ।

अवण्णवाइ(ण्)– पुं० *[अवर्णवादिन्]*
अवर्णं वदितुं शीलमस्येत्यवर्णवादी । अकीर्तिकरे, 'नाणस्स केवलीणं, धम्माऽऽयरियाण सव्वसाहूणं । माई अवण्णवाई, किव्विसियं भावणं कुणइं' गच्छा०२ अधि० । बुह० ।

अवण्णवाय– पुं० *[अवर्णवाद]*
अश्लधायाम्, अश्लाघावादे, दश० ।
'अवन्नवायं च परमुहस्स, पच्चक्खओ' (न भासिज्ज) अवर्णवादं चाऽश्लाघावादं पराङ्मुखस्य पृष्ठतः प्रत्यक्षतश्च, न भाषेत इत्यर्थः । दश० ९ अ० ३उ० ।
पंचहिं ठाणेहिं जीवा दुल्लभबोहियत्ताए कम्मं पकरेंति । तं जहा–अरहंताणमवन्नं वदमाणे, अरहंतपण्णत्तस्स धम्मस्स अवन्नं वदमाणे, आयरियउवज्झायाणमवन्नं वदमाणे, चाउवन्नसंघस्स अवन्नं वयमाणे, विविक्कतवबंभचेराणं देवाणं अवन्नं वदमाणे । ठा० ५ ठा० २ उ० ।

अवण्णा– स्त्री० *[अवज्ञा]*
अनादरे, उव० ।

अवण्हवण– न० *[अवह्वन]*
मृषादण्डे, आचा० १ श्रु० ५ अ० १ उ० ।

अवण्हाण– न० *[अपस्ना]*
तथाविधसंस्कृतजलन स्नाने । विपा० १ श्रु० १ अ० ।
स्नेहाऽपनयनहेतुद्रव्यसंस्कृतजलेन स्नाने, नाया० १३ अ० ।

अवतट्ठ– त्रि० *[अवतष्ट]*
तनूकृते, सूय० १ श्रु० ५ अ०२ उ० ।

अवत्त– पुं० *[अव्यक्त]*
अद्याऽप्यपरिणततवयसि, बुह० १ उ० ।
शब्दोऽयं रूपादिर्वा इत्यादिना प्रकारेणाऽनिर्देश्ये, विशे० ।
छगणलिम्पनादिना संस्कृते, ठा० ।
अवत्ता नाम वसतिः, छगणमृत्तिकाभ्यां जलेन चोपलिप्तभूमि-तला अव्यक्तस्थानयुक्ता वा, निर्वाता वा । गच्छा० १ । निसि० । अगीतार्थे, निसि० २उ० ।

अवत्तव्व– त्रि० *[अवक्तव्य]*
अनुच्चारणीये, दश० ७ अ० ।
आनुपूर्व्यनानुपूर्वी प्रकाराभ्यां वक्तुमशक्ये द्रव्ये, अनुओ० ।
द्विप्रदेशिकस्कन्धोऽवक्तव्यमित्याख्यायते । अनुओ० ।

अवत्तव्वगसंचिय– त्रि० *[अवक्तव्यकसञ्चित]*
यः परिणामविशेषो न कति नाऽप्यकतीति शक्यते वक्तुं सोऽवक्तव्यकः, स चैक इति, तत्सञ्चिता अवक्तव्यकसञ्चिताः । समये समये एकतयोत्पन्नेषु नैरयिकादिषु, उत्पद्यन्ते हि नारका एकसमये एकादयोऽसंख्येयान्ताः । उक्तं च–'एगे व दो व तिन्नि व, संखमसंखा य एगसमएणं । उववज्जंते चइया, उव्वट्टंता वि एमेव' ठा० ३ ठा०१ उ० ।

अवत्तव्वा– स्त्री० *[अवक्तव्या]*
अमुत्रस्थिता पल्लीति कौशिकभाषावत्, सावद्यत्वेनाऽनुच्चा-रणीयायां भाषायाम्, दश० ७ अ० ।

अवत्तासण– न० *[अवत्रासन]*
बाहुभ्यां स्त्रिया निष्पीडने कामाऽङ्गे, निसि० १ उ० ।

अवत्थग– न० *[अपार्थक]*
पौर्वापर्याऽयोगादप्रतिसंबद्धाऽर्थे *दोषे, यथादश दाडिमानि, षडपूपाः, कुण्डं बदराणि । आव०म० । पण्हा० । विशे० । यस्याऽवयवेष्वर्थो विद्यते, न समुदाये, असंबद्धमित्यर्थः । यथा–शङ्खः कदल्यां, कन्दली भेर्याम् । अथवा– वंजुलपुप्फु-म्मीसा, उंबरकडकुसुममालिया सुरभी । वरतुरगस्स वि रायइ, ओलइया अग्गसिंगेसु बुह०१ उ० ।

अवत्थाभरण– न० *[अवस्थाभरण]*
अवस्थोचिते आभरणे, ठा० ८ ठा० ।

अवत्थिय– त्रि० *[अवस्तृत]*
प्रसारिते, नाया० ८ अ० ।

अवत्थु– न० *[अवस्तु]*
असति, आव०म० ।
अविद्यमानं वस्त्वभिधेयोऽर्थो यत्र तदवस्तु ।अनर्थके, पण्हा०२

अवदग्ग– न० *[अवदग्र]*
पर्यन्ते, सूय० २ श्रु०२ अ०।
अवसाने, सूय० २ श्रु०५ अ०।

अवदल– पुं० *[अपद०ल]*
अपदलमपसदं द्रव्यं कारणभूतं मृत्तिकादि यस्याऽसौ अपदलः अवदलति वा दीर्यते इत्यवदलः। आमपक्कतया असारे, ठा०४ ठा० ४ उ०।

अवदाय– पुं० *[अवदात]*
गौर, पण्हा० ४ अ०।

अवदालिय– त्रि० *[अवदारित]*
विकाशिते, विवृतीकृते, उपा० २ अ०।
'अवदालियपुंडरीयवयणा(नयणा)' अवदारितं रविकिरणैः विकाशितं यत्पुण्डरीकं सितपद्मं तद्वद्वदनं मुखं, नयने वा येषां ते तथा। जंबू० २ वक्ष०।

अवद्दार– न० *[अवद्वार]*
द्वारिकायाम्, नाया० २ अ०।
'तेणं अवद्दारेणं, सो अतिगतो असोगवणियाए'। आव०म०।

अवद्दाहण– न० *[अपदाहन]*
तथाविधदम्भन, विपा०१ श्रु०१ अ०।

अवद्धंस– पुं० *[अपध्वसं]*
अपध्वंसनमपध्वंसः। चारित्रस्य तत्फलस्य चाऽसुरादिभावना-जनिते निवास, ठा०।
चउव्विहे अवद्धंसे पन्नत्ते।तं जहा–आसुरे, अभियोगे, संमोहे, देवकिव्विस।ठा० ४ ठा० ४ उ०।

अवधीरिय– त्रि० *[अवधीरित]*
अपमानिते, बुह० ४ उ०।

अवधूय– पुं० *[अपधूत]*
स्वनामख्याते लौकिके अध्यात्मचिन्तके आचार्ये, यदाहाऽव-धूताऽऽचार्यः –न प्रत्ययाऽनुग्रहमन्तरेण तत्त्वशुश्रूषादयः, उदकं पयोऽमृतकल्पज्ञानाऽजनकत्वात्। विक्षिप्ते, आव० ४ अ०।

अवप्पओग– पुं० *[अवप्रयोग]*
विरुद्धौषधियोगे, बुह० १ उ०।

अवबद्ध– त्रि० *[अवबद्ध]*
अर्थग्रहणपूर्वकं विद्याऽऽदिग्रहणनिमित्तं विवक्षितकाल-परायत्ते,। गच्छा०।

अवबोह– पुं० *[अवबोध]*
निद्रापरिहारे, ज्ञानित्वे, विशे०।
संज्ञायाम्, स्मृतौ, संज्ञा, स्मृतिरवबोधः, इत्यनर्थाऽन्तरम्। आचा०१ श्रु०१ अ०१ उ०।

अवबोहि– पुं० *[अवबोधि]*
निश्चयाऽर्थप्रतिपत्तौ, आव०चू० १ अ०।

अवभास– पुं० *[अवभास]*
तेजसो ज्ञानस्य च प्रतिभासे, सूर० ३ प्राहु०।

अवभासिय– त्रि० *[अवभासित]*
प्रकाशित, विशे०।

अवभासिय– त्रि० *[अपभाषित]* ।
दुष्टाभाषित, वव० १ उ०।
दुष्टभाषणं, विरूपं भाषते। वव०

अवमण्णंत– त्रि० *[अवमन्यमान]*
परिहरति, 'मा एयं अवमन्नंता, अप्पेणं लुंपहा बहुं'। सूय०१ श्रु० ३ अ०४ उ०।

अवमद्द– पुं० *[अपमर्द]*
अपवर्त्तने, 'अवमद्दं अप्पणो परस्स य करेंति'। पण्हा०२ अ०

अवमाण– न० *[अपमान]*
अनादरे, उत्त० १९ अ०।
विनयभ्रंशे, पण्हा० ५ अ०।

अवमाण– न० *[अवमान]*
हस्तादौ द्रव्यप्रमाणे, ठा० ४ ठा० १ उ०।

अवमाणण– न० *[अपमानन]*
यूयमित्यादिवाच्ये त्वमित्यादिरूपे अपूजावचने,पण्हा०५अ०। अनभ्युत्थानादिभिः अपूजने, उव०। पण्हा०।

अवमाणिय– त्रि० *[अपमानित]*
अपमानं ग्राहिते, 'अवमाणिनो नरिन्देण'। व०१ उ०। बुह०।

अवमाणियदोहला– स्त्री० *[अवमानितदोहदा]*
क्षणमपि लेशेनाऽपि च अनापूर्णमनोरथायाम्, भग० ११ श० ११ उ०।

अवमार– पुं० *[अपस्मार]*
चित्तविकृतिजे गदे, स च वातपित्तश्लेष्मसंनिपातजत्वा च्चतुर्धा तदुक्तम्–'भ्रमाऽऽवेशः ससरम्भो द्वेषोद्रेको हतस्मृतिः। अप-स्मार इति ज्ञेयो, गदो घोरश्चतुर्विधः'आचा०१ श्रु०६ अ०१ उ०

अवमारिय– त्रि० *[अपस्मारित]*
अपस्मारः संजातोऽस्य। अपस्माररोगवति अपगतसदसद्विवेक भ्रममूर्च्छादिकामवस्था मनुभवति, आचा०१ श्रु०६ अ०१ उ०।

अवमिय– त्रि० *[अवमित]*
व्रणिते, बुह० ३ उ०।

अवय– न० *[अपद०]*
वृक्षादौ, सूय० १ श्रु० ११ अ०।
गोशीर्ष–चन्दनप्रभृतौ, सूय० १ श्रु० ८ अ०। आव०चू०।

अवय– न० *[अब्ज]* ।
पद्मे, पन्न०१ पद० ।
अवय– त्रि० *[अवच]* ।
अनुच्चे, उत्त० ३ अ० ।
जघन्ये, सूय०१ श्रु० १० अ० ।
अवयक्खंत– त्रि० *[अवप्रेक्षमाण]*
पृष्ठतोऽभिमुखं निरूपयति, ओह० ।
अवयक्खमाण– त्रि० *[अपेक्षमाण]*
अपेक्षमाणे, अवकाङ्क्षति च। 'मग्गे रूवाइं अवयक्खमाणस्स' अवकाङ्क्षतोऽपेक्षमाणस्य वा। भग० १० श० २ उ० ।
अवयग्ग– न० *[देशी]*
पर्यन्ते, ठा० ३ ठा०१ उ० ।
'अवयग्गं' इति देशीवचनोऽन्तवाचकः। भग०१ श०१ उ० ।
अवयण– न० *[अवचन]*
नञः कुत्सार्थत्वात् कुत्सिते वचने, ठा० ६ ठा० ।
अवचनानि बुह० ६ उ० ।
अवयव– पुं० *[अवयव]*
अवयविन एकदेशे, अनु० ।
अनुमिति–वाक्यैकदेशेषु, ते च पञ्च–प्रतिज्ञाहेतूदाहरणोपनय-निगमनानि अवयवाः। दश० १ अ०। सूय० ।
दशाऽवयवा वा– प्रतिज्ञा प्रतिज्ञाविशुद्धिः, हेतुर्हेतुविशुद्धिः, दृष्टान्तो दृष्टान्तविशुद्धिः, उपसंहार उपसंहारविशुद्धिः, निगमनं निगमनविशुद्धिः। दश० १ अ० ।
अवयवि– त्रि० *[अवयविन्]*
प्रदेशिद्रव्ये, ठा० ।
नाऽप्यनैकान्तिकत्वविरुद्धत्वे, सर्ववस्तुवस्थायाः प्रतिभासाधी-नत्वात्। अन्यथा न किञ्चनापि वस्तु सिद्ध्येदिति। आचा० । ठा० १ ठा० १ उ० ।
अवसायण– *[श्लेषण]* न० ।
वृक्षादीनामालिङ्गापने, बुह० १ उ० ।
अवयासाविय– त्रि० *[आश्लेषित]*
आलिङ्गिते, विपा०१ श्रु० ४ अ० ।
अवयासेऊण– अव्य० *[अवकाश्य]*
प्रकाश्यप्रकटीकृत्येत्यर्थे, तं० ।
अवर– त्रि० *[अपर]*
अन्यस्मिन्, सूय०२ श्रु०२अ० ।पण्हा० ।निसि० ।सूर० । नाया०
'अवरं वोच्छं' अपरमिति उक्तादन्यद् वक्ष्यामि। सूय० १ श्रु० ३ अ० २ उ० ।
द्वितीयस्मिन्, चंद० ३ पाहु० । सूर० ३ पाहु० ।
पश्चात्कालभाविनि, । आचा० १ श्रु० ३ अ० ३ उ० । आव०म० ।
पश्चिमे, 'अवरेण पभासं ताहे सिंधुदेविं ओवेइ' आव०म० ।
न परोऽपरः। स्वस्मिन्, बुह० ३ उ० ।
अवरकंका– स्त्री० *[अपरकङ्का]*
धातकीखण्डभरतक्षेत्रराजधान्याम्, नाया० १ अ० ।
एतदर्थप्रतिपादके ज्ञाताधर्मकथायाः षोडशेऽध्ययने, सम० १८ सम० । पण्हा० । नाया० । आव० । ठा० ।
'कण्हस्सऽवरकंका' कृष्णस्य नवमवासुदेवस्य द्रौपदीनिमित्तम् अपरकङ्कागमनमाश्चर्यम्। कल्प० २ ।
अवरच्छ– न० *[अपरोक्ष]*
अविद्यमानानि परेषामक्षीणि द्रष्टव्यतया यत्र, तदपरोक्षम्। असमक्षे, त्रिंशत्तमे गौणचौर्ये च। पण्हा० ३ अ० ।
अवरज्झंत– त्रि० *[अपराध्यत्]*
दोषमावहति, सूय० १ श्रु० ३ अ० ३ उ० ।
रजसा श्लिष्यमाणे, सूय० १ श्रु० १ अ० ३ उ० ।
नश्यति, उत्त० ७ अ० ।
अवरण्ह– पुं० *[अपराह्न]*
दिनस्य चरमप्रहरे, ठा० ४ ठा० २ उ० ।
'पुव्वावरण्हकालसमयंसि'। पाश्चात्त्यापराह्णकालसमयो दि-नस्य चतुर्थप्रह २लक्षणः। निसि० ३ वर्ग ।
अवरण्हकाल– पुं० *[अपराह्णकाल]*
सूर्यस्य गतिपरिणतस्य पश्चिमेन गमने, आव०चू० १ अ० ।
अवरत्त– पुं० *[अपररात्र]*
रात्रेरपरे भागे, ठा० ४ ठा० २ उ० ।
'पुव्वाऽवररत्तकालसमयंसि'। विपा० १ श्रु० ९ अ० ।
अवरदारिय– न० *[अपरद्वारिक]*
पश्चिमद्वारिकेषु नक्षत्रेषु, सम० ७ सम० ।
'पुस्साइया णं सत्त णक्खत्ता अवरदारिया पन्नत्ता। तं जहा– पुस्सो, असिलेसा, मघा, पुव्वाफग्गुणी, उत्तराफग्गुणी, हत्थो, चित्ता'। ठा० ४ ठा० ४ उ० ।
अवरदाहिणा– स्त्री० *[अपरदक्षिणा]*
नैर्ऋत्या, दिशि, वव०७ उ० ।
अवरद्ध– न० *[अपराद्ध]*
अपराधनमपराद्धम्। पीडाजनकतायाम्, पिंड० ।
विनाशिते, त्रि०। नाया०१ अ० ।
अवरद्धिय– पुं० *[अपराद्धिक]*
अपराधनमपराद्धम्–पीडाजनकता, तदस्यास्तीति अपराद्धिकः लूतास्फोटे, सर्पाऽऽदिदंशे च। पिंड० ।

अवरफाणु– स्त्री० *[अपरपार्ष्णी]*
पार्ष्णिकायाम्, वव० ८ उ०।

अवरमम्मवेहित्त– न० *[अपरमर्मवेधित्व]*
परमर्माऽनुद्घट्टनस्वरूपत्वे विंशतिममे सत्यवचनाऽतिशये, सम० ३५ सम०।

अवरराय– पुं० *[अपररात्र]*
रात्रेः पाश्चात्त्ये यामद्वये, आचा० १ श्रु० ५ अ० ३ उ०।

अवरविदेह– पुं० *[अपरविदेह]*
अपराश्चाऽसौ विदेहश्च। ठा० २ ठा० ३ उ०।
जम्बूद्वीपे पश्चिमतो महाविदेहभागे, ठा० १० ठा०।
तत्र सदा दुष्षमसुषमोत्तमर्द्धिः। ठा०२ ठा० ३ उ०। जंबू०।
'दो अवरविदेहाई' ठा०२ ठा० ३ उ०।
महाविदेहापरभागः।ठा०।

अवरविदेहकूड– न० *[अपरविदेहकूट]*
निषधस्य वर्षधरपर्वतस्य नीलवर्षधरपर्वतस्य च स्वनामख्याते कूटे, जंबू० ४ वक्ष०। ठा०।

अवराइया– स्त्री० *[अपराजिता]*
महावत्सविजयक्षेत्रस्य राजधानीयुगले, जंबू० ४ वक्ष०। ठा०।
शङ्ख विजयक्षेत्रयुगले राजधानीयुगले, ठा०२ ठा० ३ उ०। जंबू०। उत्त०।

अवराह– पुं० *[अपराध]*
गुरुविनयलङ्घने, आव०१ अ०।
'एत्थ मे अवराहं मरिसेह'। आव०म०।

अवराहपय– न० *[अपराधपद०]*
मोक्षमार्गं प्रत्यपराधस्थाने, दश०।
अपराधपदमाह– इंदियविसयकसाया, परीसहा वेयणा
य उवसग्गा। एए अवराहपया, जत्थ विसीयंति दुम्मेहा।
। दश० २ अ०। आव०चू०।

अवराहुत्त– पुं० *[अपराभृत]*
पश्चान्मुखे,। आव०४ अ०।

अवरुत्तरा– स्त्री० *[अपरोत्तरा]*
वायव्यां दिशि, वव०७ उ०।

अवरोह– पुं० *[अवरोध]*
अन्तःपुर, उव०।
परचक्रेणाऽऽवेष्टन, निसि० ८ उ०।

अवलंब– त्रि० *[अवलम्ब]*
अधोमुखतयाऽवलम्बमाने, उव०।

अवलंबग– न० *[अवलम्बक]*
दण्डक, वव०४ उ०।

अवलंबण– न० *[अवलम्बन]*
अवलम्ब्यत इति अवलम्बनम्। विशेषसामान्यार्थावग्रहे, नं०।
अवलम्ब्यते इत्यवलम्बनम्। अवतरतामुत्तरतां चाऽवलम्बन-हेतुभूते अवलम्बनबाहातो विनिर्गतेऽवयवे, जंबू० १ वक्ष०। रा०। जीवा०। आव०म०।
अवलम्ब्यते इत्यवलम्बनम्। वेदिकायाम्, मस्तकाऽवलम्बे च। निसि०।
अवलंबण तु दुविहं, भूमीए संकमे य णायव्वं।
दुहतो व एगतो वा, वि वेदिता सा तु णायव्वा।।
अवलंबण दुविहं–भूमिए वा, संक्रमे वा भवति। भूमिए विसमे लग्गणणिमित्तं कज्जति। संकमे वि लग्गणणिमित्तं कज्जति। सो पुण दुहज्जो एगओ य भवति। सा पुण (वेइयत्ति) मतावलंबो, निसि० १ उ०।
बाह्यादिमात्रैकदेशग्रहणम्। बृह०।

अवलंबणया– स्त्री० *[अवलम्बनता]*
अवलम्बनस्य भावोऽवलम्बनता, अवग्रहे, नं०।

अवलंबणबाहा– स्त्री० *[अवलम्बनबाहा]*
उभयोः पार्श्वयोरवलमबमानानामाश्रयभूतायां भित्तौ, आव०म०। जंबू०। जीवा०।।
उभयोरुभयोः पार्श्वयोरवलम्बनाश्रयभूता भित्तिः। जीवा०

अवलंबिऊण– अव्य० *[अवलम्ब्य]*
आश्रित्येत्यर्थे, गच्छा०।
विषयीकृत्येत्यर्थे, आव० ५ अ०।

अवलंबित्तए– अव्य० *[अवलम्बितुम्]*
आकर्षयितुमित्यर्थे, दशा० ७ अ०।

अवलंबिय– त्रि० *[अवलम्बित]*
अविच्छिन्ने, नाया०। १ अ०।

अवलंबिय–अव्य० *[अवलम्ब्य]*
लगित्वेत्यर्थे, 'णो गाहावतिकुलस्स दुवारसाहं अवलंबिय अवलंबिय चिट्ठेज्जा'। आचा० २ श्रु० १ अ० ६ उ०।

अवलद्ध– त्रि० *[अपलब्ध]*
न्यक्कारपूर्वतया लब्धे, ठा० ९ ठा०।
'परघरप्पवेसे लद्धावलद्धाइं'। अंत०५ वर्ग।

अवलाव– पुं० *[अपलाप]*
निह्नवे, निसि०।
यथा कस्य सकाशेऽधीतम् ? इति प्रश्ने अन्यसकाशेऽधीत-मन्यस्मै कथयति। निसि० १ उ०। आव०।

अवलिंब– पुं० *[अवलिम्ब]*
देशविशेषे, ठा० २ ठा०४।

अवलेहणिया– स्त्री० *[अवलेखनिका]*
अवलिख्यमानस्यवंशशलाकादेर्वा प्रतन्व्यां त्वचि, ठा० ४ ठा० २ उ०।
वर्षावासकर्दमस्फेटनिकायां पादलेखनिकायाम्, निसि० १ उ०

अवलोअण– न० *[अवलोकन]*
दर्शने, रत्नाधिकादौ मृते क्षपणम स्वाध्यायश्च कार्यः। ततोऽन्यदिने परिज्ञानायाऽवलोकनं कार्यम्। आव० ४ अ०।
गवाक्षः। बुह० ।

अवलोव– पुं० *[अवलोप]*
वस्तुसद्भावप्रच्छादने त्रिंशत्तमे गौणाऽलीके, पण्हा० २ अ०।

अवल्लय– न० *[अवल्लक]*
नौकाक्षेपणोपकरणभेदे, आचा०२ श्रु० ३ अ० १ उ०।

अवव– न० *[अवव]*
सङ्ख्याविशेषे, चतुरशीतिरववाङ्गशतसहस्राणि, एकमववम्। जीवा० ३ प्रति०। भग०। जंबू० । अनु०। ठा०।

अववंग– न० *[अववाङ्ग]*
संख्याविशेषे, चतुरशीतिरडडसहस्राणि, एकमववाङ्गम्। जीवा० ३ प्रति०। अनु०। ठा०।

अववक्का– स्त्री० *[अवपाक्या]*
तापिकायाम्, भग० ११ श० ११ उ०।

अववग्ग– पुं० *[अपवर्ग]*
मोक्षे, आव०म०।

अववयमाण– त्रि० *[अवपतत्]*
मृषावादमकुर्वति, आचा०१ श्रु० ५ अ०२ उ०।

अववरोवित्ता– स्त्री० *[अव्यवरोपयिता]*
अभ्रंशकतायाम्, जिब्भामयाओ सोक्खाओ अववरोवेत्ता भवइ। ठा० ६ ठा०।

अववाय– पुं० *[अपवाद]*
परदूषणभिधाने, पण्हा०२ अ०।
विशेषोक्तविधौ, यथा–पुढवाइसु आसेवा, उप्पन्ने कारणम्मि जयणाए। मिगरहियस्स ठियस्सा, अववाओ होइ । निसि० ।
उत्सर्गस्य प्रतिपक्षे, बुह०१ उ०।
अनुज्ञायाम्, निसि० १ उ०।
निश्चयकथायाम्, निसि० ५उ०।

अववायसुत्त– न० *[अपवाद*]*
अपवादिकार्थप्ररूपके *भेदे, बुह० १ उ०।

अवविह– त्रि० *[अवविध]*
स्वनामख्याते आजीविकोपासके (गोशालकमतोपासके), भग० ८ श० ५ उ०।

अवस– पुं० *[अवश]*
कर्मपरवशे, उत्त०६अ०।
परवशे, सूय० १ श्रु० ३अ० १ उ०। उत्त०। पण्हा०।

अवसउण– न० *[अपशकुन]*
अशुभसूचके निमित्तभेदे, बुह०।

अवसक्कि– त्रि० *[अवष्वष्किन्]*
अवसर्पणशीले, सूय० २ श्रु० ६ अ० २उ०।
दूरगमनशीले, सूय० १ श्रु० ३ अ० २उ०।

अवसप्पि– त्रि० *[अवसर्पिन्]*
परिहारिणि, सूय० १ श्रु० २ अ० २ उ०।

अवसय– त्रि० *[अपसद]*
तुच्छे, ठा० ४ ठा० ४ उ०।

अवसर– पुं० *[अवसर]*
प्रस्तावे, विभागे च। दश० १ अ०।

अवसवस– त्रि० *[अपस्ववश]*
अपगतात्मतन्त्रत्वे, नाया० १६ अ०।

अवसह– पुं० *[अवसथ]*
गृहे, उत्त० ३२ अ०।

अवसावण– न० *[अवश्रावण]*
काञ्जिके, 'अवसावणं लाडाणं कंजिअं भन्नइ' त्ति। इह लाटदेशेऽवश्रावणकं काञ्जिकं भण्यते। बुह० १ उ०।

अवसिद्धंत– पुं० *[अपसिद्धान्त]*
सिद्धान्तादपक्रान्ते,'संसारकारणाद् घोरादपसिद्धान्त देशनात्' । ठा० १० ठा०।

अवसेस– पुं० *[अवशेष]*
अवशिष्टे, ठा० ७ ठा०। आतु०।
तदतिरिक्ते, उपा० १ अ०।

अवस्स– त्रि० *[अवश्य]*
अवश्यपर्यायोऽवश्यशब्दोऽकारान्तोऽप्यस्ति। आव०म०। पण्हा० ।
नियते, आव०४उ०।

अवस्सकम्म– न० *[अवश्यकर्मन्]*
अवश्यक्रियायाम्, आव०चू० १ अ०।

अवस्सकरणिज्ज– न० *[अवश्यकरणीय]*
मुमुक्षुभिरवश्यं क्रियते इति अवश्यंकरणीयम्। विशे०। आवश्यके, मुमुक्षुभिर्नियमा–ऽनुष्ठेयत्वात्तस्य। अनु०।

अवस्सकिरिया– स्त्री० *[अवश्यक्रिया]*
पापकर्म निषेधे, 'अवस्सकम्मंति वा अवस्सकिरियंति वा एगट्ठा'। आव०चू० १ अ०।

अवहइ– स्त्री० *[अपहित]*

विनाशे, विशे०। आव०म०।

अवहट्टु– अव्य० *[अपहृत्य]*

परिहृत्य,उव०।

परित्यज्य, सूय० १ श्रु०४अ०१ उ०। दश०।

निकृष्येत्यर्थे, आचा०२श्रु० ५ अ०२उ०।

अपहृत्य, त्यक्त्वा। भग०।

आहृत्य–निष्कृष्य, त्य–त्त्वा। आचा०।

अवहड– त्रि० *[अवहृत*

परिहृते, निसि० १०उ०। आव०।

'वालग्गं अवहाय० अवहडे विसुद्धे भवइ'। निःशेषवालाग्र-लेपापहारात्। भग० ६ श० ७ उ०। निसि० । आव०।

अवहत्थिय– त्रि० *[अपहस्तित]*

निराकृते, नं०।

अवहट्टुसंजम– पुं० *[अपहृत्यसंयम]*

अवधिनोच्चारादीनां परिष्ठापनतः क्रियमाणे, सम०१७ सम०।

अवहन्न– न० *[अवहनन]*

उदूखले, बुह०१ उ०।

अवहर धा० *[अव+हृ]*

चोरणे, ठा०५ ठा०१ उ०।

स्वीकरणे, सूय० १ श्रु० ९ अ०। पण्हा०। उपा०।

अवहाय– अव्य० *[अपहाय]*

त्यक्त्वेत्यर्थे, भग० १५ श० १ उ०। सूय०।

अवहार– पुं० *[अपहार]*

अपहरणमपहारः। आव०म० ।

गर्भादेर्बहिष्करणे, निसि० ।

चौर्ये, उत्त०४अ०। पण्हा०।

जलचरविशेषे, पण्हा०२ अ०।

अवहारवं– पुं० *[अवधारवत्]*

अवधारणावति, ठा० १० ठा०।

अवहि– पुं० *[अवधि]*

अवशब्दोऽधःशब्दार्थः। अव अधो विस्तृतं वस्तु धीयते परिच्छिद्यतेऽनेनेतयिवधिः। यद्वा– अवधिर्मर्यादा रूपिष्वेव वस्तुषु द्रव्येषु परिच्छेदकतया प्रवृतिरूपतया, तदुपलक्षितं ज्ञानमप्यवधिः। प्रत्यक्षज्ञानभेदे, पन्न० २८ पद०।

अवहेडिय– त्रि० *[अवकोटित]*

अधस्तादामोटिते, 'अवहेडियपट्ठिस-उत्तमंगे'।उत्त० १ २अ०।

अवहोलेंत– त्रि० *[अवदोलयत्]*

दोलायमाने, नाया० ८अ०।

अवाईण–१ त्रि० *[अवातीन]*

वातीनानि, वातोपहतानि, न वातीनानि अवातीनानि। वातेनापतितेषु, रा०। जीवा०। नाया०।

अवाईण–२ *[अवाचीनम्]*

अधोमुखम्। औप० ७।

अवाउड– त्रि० *[अप्रावृत]*

प्रावरणरहिते, दश० ३अ०।

प्रावरणाऽभावे, न०। भग० २ श० १ उ०।

न विद्यते प्रावरणकम्। ठा० २९९।

अवागिल्ल– त्रि० *[अवाग्मिन्]*

अवाचाले, वव० ७ उ०।

अवामणिज्ज– न० *[अवामनीय]*

संसर्गजं गुणं दोष वा संसर्गान्तरेणाऽवमति द्रव्ये, ठा० १० ठा०।

अवाय– पुं०।

रागादिजनितेषु प्राणिनामैहिकामुष्मिकेष्वनर्थेषु, ठा० १ ठा०।

अपायोऽनर्थः, स यत्र द्रव्यादिषु अभिधीयते, यथा–एतेषु द्रव्यादिविशेषेषु अस्त्यपायः, विवक्षितद्रव्यादिविशेषेष्विव, हेयता चाऽस्य यत्राभिधीयते तदाहरणमपाय इति। उदाहरण भेदे, ठा० ४ ठा० ३ उ०।

विश्लेषे, नं०।

अवायणिज्ज– पुं० *[अवाचनीय]*

वाचनाया अयोग्ये, ठा० १ ठा० ४ उ०।

चत्तारि अवायणिज्जा पन्नत्ता। तं जहा–अविणीए, विगइ-पडिबद्धे, अविउसवियपाहुडे, माई। ठा० ४ ठा० ३ उ०।

अवायदंसि– पुं० *[अपायदर्शिन्]*

अपायान् दुर्भिक्षदुर्बलत्वादिकान् ऐहिकाननर्थान् पश्यति। अथवा–दुर्लभबोधिकत्वादिकान् सातिचाराणां तान् दर्शयती-त्येवंशीलोऽपायदर्शी। अपायाननर्थान् चित्तभङ्गाऽनिर्वाहादीन् दुर्भिक्ष–दौर्बल्यादिकृतान् पश्यतीत्येवंशीलः।सम्यगालोचनायां च दुर्लभबोधिकत्वादीनपायान् शिष्यस्य दर्शयतीति अपायदर्शीति। ठा० ८ ठा०।

इहलोकापायदर्शनशीले आलोचनार्हभेदे, वव० १ उ०।

अवायविजय– न० *[अपायविच य]*

अपाया रागादिजनिताः प्राणिनामैहिकामुष्मिका अनर्थाः। प्राकृतत्वेन विजयमिति। अपाया वा विजीयन्ते अधिगमद्वारेण परिचितीक्रियन्ते यस्मिन्नित्यपायविजयम्।।

ठा० ४ ठा० २ उ०। गच्छा०।

धर्मध्यानस्य प्रथमे भेदे, आव०४ अ०। आव०चू०।

अवायाण– न० *[अपादान]*

अपादीयते वियुज्यते यस्मात्, तद् वियुज्यमानावधिभूतम् अपादानम्। अनु०।

दोऽवखण्डने। दानं खण्डनम्। अपसृत्य आ मर्यादया दानं खण्डनं वियोजनं यस्मात् तदपादानम्। विशे०। आव०चू०।

अपादीयते अपायतो विश्लेषतः आ मर्यादया दीयते, दोऽवखण्डने इति वचनात्, खण्ड्यते भिद्यते, आदीयते वा गृह्यते यस्मात् तदपादानम्। अवधिमात्रे, तत्र पञ्चमी भवति। यथाअपनय गृहाद् धान्यम्, इतो वा कुशूलाद् गृहाणेति।

ठा० ८ ठा०।

अवायाणुप्पेहा– स्त्री० *[अपायानुप्रेक्षा]*

अपायानां प्राणाऽतिपाताद्याश्रवद्वारजन्यानर्थानामनुप्रेक्षाऽनु-चिन्तनमपायाऽनुप्रेक्षा। गच्छा०१ । भग०।

शुक्लध्यानाऽनुप्रेक्षाभेदे, यथा–'कोहो य माणो य अणिग्ग-हीया, माया य लोभो य पवड्ढमाणा। चत्तारि एते कसिणा कसाया, सिंचिंति मूलाईं पुणब्भवस्स'। १ । आसवदारावाए, तह संसारोऽसुहाणुभावं च। भवसंताणमनंतं, वत्थूणं विपरिणामं च'। ठा० ४ ठा० १ उ०।

आश्रवाणामपायानामनुप्रेक्षा। ठा०।

अवारिय– त्रि० *[अवारित]*

अनिवारिते, अकृत्यं कुर्वति, तत्प्रवर्तकेनाऽनिषिद्धे, निरङ्कुशे, 'अज्जा अवारियाओ, इत्थीरज्जं न तं गच्छं'। गच्छा०२ ।

अवारिय–अव्य० *[अवतार्य]* ।

अध उत्तार्येत्यर्थे, दश० ५ अ० २ उ०।

अवावकहा– स्त्री० *[अवापकथा]*

शाकघृतादीन्येतावन्ति, तस्यां रसवत्यामुपयुज्यन्त इत्येवं-रूपायां कथायाम्, ठा० ४ ठा० २ उ०।

अवि– अव्य० *[अपि]*

सम्भावने, उत्त० ३ अ०। ठा०। आचा०। सूय०। वव०। निसि० । दश०। आव०म०।

पदार्थसंभावने, निसि० ४ उ०।

समुच्चये, भग०१ श० ३उ०।

अवधारणायाम्, निसि० १ उ०। आचा०।

वाक्योपन्यासे, आचा० १ श्रु० ६अ० १ उ०।

प्रेरणायाम, निर्णयभवनहेतौ च । खल्वर्थे, वव० १ उ०।

अविअ– अव्य० *[अपिच]*

समुच्चये, जंबू० ४ वक्ष०।

अविइय– त्रि० *[अद्वितीय]*

द्वितीयरहिते, द्वितीयभिन्ने च। भग० ३ श० २ उ०।

अविउट्टमाण– त्रि० *[अवित्रुट्यमान]*

पीड्यमाने, सूय० २श्रु० २ अ०।

अविउप्पगडा– स्त्री० *[अव्युत्प्रकटा]*

न विशेषतः उत्प्राबल्यतश्चप्रकटा अव्युत्प्रकटा। विशेषतोऽ-प्रकटायाम्, भग० ७ श० १० उ०।

अविद्वत्प्रकृता– स्त्री० ।

अविद्वद्भिरजानद्भिः प्रकृता प्रस्तुता वा अविद्वत्प्रकृता। भग० १८ श० ७ उ०।

अविज्ञप्रकृतायाम्, भग० १ श० १ उ०।

'अम्ह इमा कहा अविउप्पकडा'। भग० १८ श० ७ उ०।

'अविउप्पकडे त्ति' अपिशब्दः सम्भावनार्थः। उत्प्राबल्येन प्रस्तुता प्रकटा वोत्प्रकृतोत्प्रकटा वा, अथवा अविद्वद्भिरजा-नद्भिः प्रकृता प्रस्तुता वा अविद्वत्प्रकृता।भग० १८ श० ७ उ०

अविउसरणया– स्त्री० *[अव्युत्सर्जनता]*

अत्यागे, भग० १ श० ५उ०।

अविउस्सग्ग– पुं० *[अव्युत्सर्ग]*

अमुत्कलने, वव० १ उ०।

अविओग– पुं० *[अवियोग]*

पुत्रामित्राद्यविरहे, तं०।

अविओसिय– त्रि० *[अव्यवसित]*

अनुपशान्ते, बुह०४ उ०।

अनुपशान्ते द्वन्द्वे, । सूय० १ श्रु० १ ३अ०।

अविओसियपाहुड– त्रि० *[अव्यवसितप्राभृत]*

अव्यवसितमनुपशान्त प्राभृतमिव प्राभृतं (नरकपालकौश-लिक)तीव्रक्रोधलक्षणं यस्यासावव्यवसितप्राभृतः।बुह० ४उ०

अनुपशान्त-कोपे, ठा० ४ ठा० ३ उ०।

'अप्पे वि पारमाणिं, अवराहे वयइ खामियंतं च। बहुसो उदीरयंतो, अविओसियपाहुडो स खडुं'।। पारमाणिं परमक्रोधसमुद्घातं व्रजतीति भावः। ठा० ३ ठा० ४ उ०।

अविंदमाण– त्रि० *[अविन्दमान]*

अलभमाने, विपा० १ श्रु० २अ०।

अविकंपमाण– त्रि० *[अविकम्पमान]*

क्रोधकार्यस्य कम्पनस्याऽकर्तरि, 'विगिंच कोहं अविकंप-माणे'। क्रूराध्यवसायः क्रोधस्तं त्यज, तस्य च कार्यं कम्पनं तत्प्रतिषेधं दर्शयत्यविकम्पनः। आचा० १ श्रु० ४अ० ३उ०।

अविकत्थण– पुं० *[अविकत्थन]*

नातिबहुभाषिणि, स्वल्पेऽपि केनचिदपराद्धे पुनः पुनस्तदुत्कीर्तनेन रहिते गुणवत्सूरौ, । गच्छा०।

हितमितभाषिणि, आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

अविकरण– न० *[अविकरण]*
पूर्वगृहीतवस्तूनां यथास्थानम् प्रक्षेपे, 'संथारय आयाए, अविकरणं कडुय संपव्वइत्ताए'। अविकरणं कृत्वा, अविकरणं नाम यत्साधुनां करणं कृतं तृणानां प्रस्तरणं, कम्बिकानां बन्धनं, फलकस्य स्थापनं तदपनीय संप्रव्रजितुं विहर्तुम्। बुह० ३ उ०।

अविकार– त्रि० *[अविकार]*
गीतादिविकाररहिते, बुह० १ उ०।

अविकारि(ण)– पुं० *[अविकारिन्]*
अनुद्भटवेषे, अकन्दर्पशीले च। बुह० ३उ०।

अविगइय– त्रि० *[अविकृतिक]*
निर्विकृतिके घृतादिविकृतित्यागिनि, सूय०२ श्रु०२ अ०।

अविगडिय– त्रि० *[अविकटित]*
अनालोचिते, वव० १ उ०।

अविगय– त्रि० *[अविगत]*
अभ्रष्टे, पिंड०।

अविगलकुल– त्रि० *[अविकलकुल]*
ऋद्धिपरिपूर्णकुले, भग० ८ श० ३३ उ०।

अविगियवयण– त्रि० *[अविकृतवचन]*
अनत्यन्तनिर्वादितमुखे, ओह०।

अविगीय– पुं० *[अविगीत]*
विशिष्टगीतार्थरहिते, वव० ३ उ०।
निर्धर्मणि, वव० १ उ०।

अविग्गह– पुं० *[अविग्रह]*
वक्ररहिते, उव०।

अविग्गहगइसमावन्न– पुं० *[अविग्रहगतिसमापन्न]*
उत्पत्तिक्षेत्रोपपन्ने, भग० १४ श० ५ उ०।
अविग्रहगतिनिषेधाद् ऋजुगतिके अवस्थिते, भग० २५ श० ३ उ०।

अविग्घ– न० *[अविघ्न]*
विघ्नाभावे, कल्प० ५ । उव०।
निष्प्रत्युहे, बुह०१ उ०।

अविघुट्ठ– न० *[अविघुष्ट]*
विक्रोशनमिव यद्विस्वरं न भवति तदविघुष्टम्, अनु०। विक्रोशन इवाविस्तरे, रा०। ठा०। जीवा०।

अविचित्त– त्रि० *[अविचित्र]*
लोहिते, अविचित्तो लोहिल्लमितर्य्थः। निसि० १६ उ०।

अविच्चुइ– स्त्री० *[अविच्युति]*
तदुपयोगादविच्यवनमविच्युतिः धारणभिदे, नं०। आव०म०।

अविच्छिण्ण– त्रि० *[अविच्छिन्न]*
विच्छेदाननुबद्धे, ठा० ४ ठा० १ उ०।

अविजाणअ– त्रि० *[अजानत्]*
लुप्तप्रज्ञे, अपगतावधिविवेके, जंसी गुहाए जलणेतिउट्टे,अविजाणओ डज्झइ लुत्तपण्णो।सूय० १श्रु०५अ०१उ०। पण्हा०।

अविज्जमाणभाव– पुं० *[अविद्यमानभाव]*
नास्तिभावे,'असंपज्जयत्ति वा णत्थिभावो त्ति वा अविज्जमाणभावो त्ति वा एगठ्ठा'। आव०चू० १ अ०।

अविज्जा– स्त्री० *[अविद्या]*
अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते। विद्यया मृत्यु तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते' । नं०।

अविज्जापुरिस– पुं० *[अविद्यापुरुष]*
अविद्या–मिथ्यात्वोपहतकुत्सितज्ञानात्मिका तत्प्रधानाः पुरुषाः। अविद्यमाना वा विद्या प्रभूतश्रुतं येषां ते। उत्त० ।

अविणय– पुं० *[अविनय]*
कुशास्त्रे, उत्त० ३४ अ०।
विशिष्टो नयो विनयः प्रतिपत्तिविशेषः, तत्प्रतिषेधोऽविनयः। अप्रतिपत्तिविशेषे, ठा०।

अविणासि– त्रि० *[अविनाशिन्]*
क्षणापेक्षयाऽपि अनिरन्वयनाशधर्मिणि, दश० ४ अ०।

अविणीय– त्रि० *[अविनीत]*
अविनयवति, उत्त० १ अ०।
विनयविरहिते, उत्त० ११ अ०।
सूत्रार्थदातुर्वन्दनादिविनयरहिते, बुह० ४ उ०।
अविनीता नाम ये बहुशोऽपि प्रतिनोद्यमानाः प्रमाद्यन्ति। बुह० १ उ०
सूत्रार्थदातुर्वन्दनादिविनयरहिते, ठा० १ ठा०४ उ०।

अविणीयप्प– पुं० *[अविनीतात्मन्]*
विनयरहिते अनात्मज्ञे, पन्न० ३ पद०। दश०।

अविण्णा– स्त्री० *[अविज्ञा]*
अविज्ञानमविज्ञा। अनाभोगकृते, सूय० श्रु०१ अ०१ उ०।

अविण्णाय– त्रि० *[अविज्ञात]*
अविदिते, आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

अविण्णायकम्म– न० *[अविज्ञातकर्मन्]*
अविज्ञातमविदितं कर्म क्रिया व्यापारो मनोवाक्कायलक्षणो यस्य। अज्ञातमन आदिव्यापारे, आचा० १श्रु० १ अ० १उ०।

अविण्णायधम्म– त्रि० *[अविज्ञातधर्मन्]*
पापादनिवृत्ते अज्ञातधर्मणि, अविरतसम्यग्दृष्टौ च। भग० ८ श० १० उ०।

अविण्णोवइय– न० *[अविज्ञोपचित]*
अविज्ञानमविज्ञा, तयोपचितम् ।अनाभोगकृते कर्मणि, सूय० तत्र बध्यते शाक्यसमये। यथा– मातुः स्तनाद्याक्रमणेन पुत्र-व्यापत्तावप्यनाभोगान्न कर्मोपचीयते। सूय०१श्रु०१ अ०१उ०
केवलकायक्रियोच्छेदे कर्मणि, सूय० १ श्रु० १ अ० २उ०।

अवितक्क– पुं० *[अवितर्क]*
न विद्यते वितर्कोऽश्रद्दधानक्रियाफलं देहरूपो यस्य (भिक्षोः) सोऽवितर्कः। कुतर्करहिते, 'सुसमाहितलेसस्स अवितक्कस्स भिक्खुणो'। दशा० ५ दशा०।

अवितह– त्रि० *[अवितथ]*
न वितथमवितथम्–सत्यम्। आव० ४ अ०।
अव्यभिचारिणि, 'णिग्गंथं पावयणं अवितहमेयं'। पूर्वमभि-मतप्रकारयुक्तमपि सदन्यदा विगताभिमतप्रकारमपि किञ्चित-स्यात्। अत उच्यते–अवितथमेतत्, न कालान्तरेऽपि विगता-भिमतप्रकारमिति। भग० १० श० ५ उ०। पण्हा०। आचा०।
तथ्ये, आव०चू० ४ अ०।
यथास्थिते, कल्प० १ ।
याथातथ्येन व्यवस्थिते, सूय० १ श्रु० १३ अ०।
यथावदनुष्ठिते, सूय० १ श्रु० २ अ० २ उ०।
यथाऽवस्थितपिण्डिताऽर्थवचने, सूय० १ श्रु० १६ अ०।
सद्भूतार्थे उव०।
सत्यम्। आव०। भग०।

अवितिण्ण– त्रि० *[अवितीर्ण]*
तितीर्षौ पारमगते, सूय० १ श्रु० २ अ० १ उ०।

अविदिण्ण– त्रि० *[अवितीर्ण]*
अदत्ते, बुह० ३उ०। आव०म०। निसि० ।

अविद्धत्थ– त्रि० *[अविध्वस्त]*
अव्युत्क्रान्ते, अपरिणते, आचा० २ श्रु० १ अ० ८ उ०।
अप्रासुके, आचा० २ श्रु० १ अ० ७उ०।
प्ररोहसमर्थे बीजादौ, दश० ४ अ०।

अविधि– पुं० *[अविधि]*
असमाचार्याम्, बुह० ३ उ०।

अविधिपरिहारि– पुं० *[अविधिपरिहारिन्]*
संयमार्थे आयुक्ते, 'संजमट्ठाए त्ति वा आउत्ते त्ति वा अविधि-परिहारि त्ति वा एगट्ठा'। आव०चू० १ अ०।

अविप्पओग– पुं० *[अविप्रयोग]*
रक्षायाम्, 'सुक्खाणं अविप्पओगेणं'। ठा० ४ ठा० ४उ०।

अविप्पकट्ठ– त्रि० *[अविप्रकृष्ट]*
न विप्रकृष्टं दूरम्। आसन्ने, नाया० १ अ०।

अविप्पणास– पुं० *[अविप्रणाश]*
शाश्वातत्वे, विशे०।

अविबुद्ध– त्रि० *[अविबुद्ध]*
भावसुप्ते, वव० ३ उ०।

अविभज्ज– त्रि० *[अवभाज्य]*
विभक्तुमशक्ये, ठा० ३ ठा० २ उ०। ज्यो० ।

अविभत्त– त्रि० *[अविभक्त]*
अकृतविभागे, बुह०।
तत्र यावान् सागारिकादीनां साधारणचोल्लक उपस्कृतस्ता-वानद्याप्यखण्डः पुञ्ज एव अधस्तनाभागादिविवक्षा कृता सा अंशिका अविभक्तेत्युच्यते। बुह० २ उ०।

अविभत्ति– स्त्री० *[अविभक्ति]*
विभागाभावे, वव० ३ उ०।

अविभव– पुं० *[अविभव]*
अद्रारिद्र्ये, वव० ६ उ०।

अविभाइम– त्रि० *[अविभागिम]*
अविभागेन निर्वृत्तोऽविभागिमः ।एकरूपे, भग०२० श०५ उ०
विभागेन निर्वृत्तो विभागिमः, तन्निषेधादविभागिमः। भाग-शून्ये, ठा० ३ ठा० २ उ०।

अविभाइय– त्रि० *[अविभाज्य]*
विभक्तुशक्ये, 'तओ अविभाइया पन्नत्ता। तं जहा–समए, पएसे, परमाणू'। ठा० ३ ठा० २ उ०।

अविभाग– पुं० *[अविभाग]*
संबद्धो विभागो नैरन्तर्याभावः, तदभावोऽविभागः। नैरन्तर्ये, पिंड०।

अविभागपलिच्छेय– पुं० *[अविभागपरिच्छेद]*
परिच्छिद्यन्त इति परिच्छेदा अंशाः, ते च सविभागा भवन्त्यतो विशेष्यन्ते। अविभागाश्च ते परिच्छेदाश्चेत्यविभागपरिच्छेदाः। निरशेषु अंशेषु, भग० ८ श० १० उ०।

अविभाव– त्रि० *[अविभाव्य]*
अविभावनीयस्वरूपे, पण्हा० १ अ०।

अविभूसिय– त्रि० *[अविभूषित]*
विभूषारहिते, बुह०१ उ०।

अविभूसियप्प(ण)– त्रि० *[अविभूषितात्मन्]*
विभूषाविरहितदेहे, आव०।

अविमण– त्रि० *[अविमनस्]*
अविगतचेतसि, अनु०।
अशून्यचित्ते, अंत० ७ वर्ग०। पण्हा०।
अलाभादिदोषात् अविगतमानसे, पण्हा० १ अ०।

अविमुत्तया– स्त्री० *[अविमुक्तता]*
सपरिग्रहतायाम्, ठा० ४ ठा० ४ उ० ।
अविमुत्ति– स्त्री० *[अविमुक्ति]*
गृद्धौ, निसि० २ उ० ।
अविमोयणया– स्त्री० *[अविमोचनता]*
वस्त्रादीनामत्यागे, भग०९ श० ३३ उ० ।
अविय– अव्य० *[अपिच]*
अभ्युच्चये, तं० । भग० ।
अविय– पु० *[अविक]*
मेषे, आचा० १ श्रु०१ अ०६ उ० ।
अवियत्त– त्रि० *[अव्यक्त]*
अपरिस्फुटे, सूय० १ श्रु० ४ अ० २ उ० ।
मुग्धे, सहजविवेकविकले च । सूय० १ श्रु० १ अ० २उ० ।
अवियत्त– न० *[देशी]*
अप्रीतिके, आव०म० । ठा० । गच्छा० ।
अप्रीतिकारणि, पण्हा०१ अ० । उत्त० । प्रति० । दश० । ठा० ।
अवियत्तजंभग– त्रि० *[अव्यक्तजृम्भक]*
अन्नाद्यविभागेन जृम्भके, भग० १४ श० ८उ० ।
अवियत्तविसोहि– पुं० *[अवियत्तविशोधि]*
अवियत्तस्याप्रीतिकस्याविशोधिः, तन्निवर्त्तनादवियत्तविशोधिः विशोधिभेदे, ठा० १० ठा० ।
अवियत्तोवघाय– पुं० *[अवियत्तोपघात]*
अप्रीतिकेन विनयादेरुपघाते, ठा० १० ठा० ।
अवियाउरी– स्त्री० *[अविजनित्री]*
अपत्यानामविजननशीलायां स्त्रियाम्, नाया० २ अ० ।
अवियाणय– त्रि० *[अविज्ञायक]*
विशिष्टावबोधरहिते, आचा० १ श्रु०१ अ०२उ० ।
अविजानन्, हिताहितप्राप्तिपरिहारशून्यमनाः । आचा० ।
अवियार– न० *[अविचार]*
न विद्यते विचारोऽर्थव्यञ्जनयोरितरस्मादितरत्र, तथा–मनः-प्रभृतीनामन्यतरस्मादन्यत्र, यस्य तदविचार इति । गच्छा०१
अर्थव्यञ्जनयोगान्तरतोऽसंक्रमणे,आव०४अ० । भग० ।
'एगत्तवितक्के अवियारे' शुक्लध्यान भेदे, ठा० ४ठा० १ उ० ।
अवियारमणवयणधकायवक्क–त्रि० *[अविचारमनोवचनकायवाक्य]*
अविचाराण्यविचारितरमणीयानि परमार्थाविचारगुणनया युक्त्या वा विघटमानानि मनोवाक्कयवाक्यानि यस्य स तथा। अविचाराण्यविचारणीयानि अशोभनतया निरूपणीयानि अपर्यालोचनीयानि मनोवाक्कायवाक्यानि यस्य स तथा। अविचार युगन्तःकरणवाग्देहवाक्ये, सूय० २श्रु० ४अ० ।

अविरइ– स्त्री० *[अविरति]*
प्राणातिपातादीनामनिषेधे, जीत० ।
अब्रह्मणि, ठा० ६ ठा० ।
अविरमणेषु, पण्हा० ५ अ०
अप्रत्याख्याने, ठा० १० ठा० ।
इच्छाया अनिवृत्तिः । भग० ।
अप्रत्याख्यानमथवा अविरतिरूपो भावः, शस्त्रम् ।ठा०
अविरइवाय– पुं० *[अविरति]*
अविरतिरब्रह्म, तद्वादो वार्ता । मैथुनचर्चायाम्, ठा० ६ ठा० ।
अविरइया– स्त्री० *[अविरतिका]*
न विद्यते । विरतिर्यस्याः सा अविरतिका । स्त्रियाम्, ठा० ६ ठा० । बुह० ।
अविरत्त– त्रि० *[अविरक्त]*
अनुरक्ते, उव० ।
अविरय– त्रि० *[अविरत]*
सावद्यादविरते, ठा० २ठा० १ उ० । उत्त० । चंद० ।
पापस्थानेभ्योऽनिवृत्ते, दश०१०अ० । पण्हा० ।
प्राणातिपातादिविरतिरहिते विशेषेण तपस्यरते, भग० १ श० १ उ० ।
गृहस्थे, सूय०१ श्रु०१ अ०१ उ० ।
मिथ्यादृष्टौ च । आव०४अ० ।
अविरयवाइ– पुं० *[अविरतवादिन्]*
वदनशीलो वादी, अविरतस्य वाद्यविरतवादी। परिग्रहवति, आचा०१ श्रु०४ अ० १ उ० ।
अविरयसम्मद्दिट्ठि– पुं० *[अविरतसम्यग्दृष्टि]*
विरतिर्विरतम्,देशविरते श्रावके, सम० १ ४सम० । आव० ।
अविरल– त्रि० *[अविरल]*
घने, उव० ।
अविरलदंत– त्रि० *[अविरलदन्त]*
अविरला दन्ता यस्य । घनरदने, उव० ।
यस्य हि यथा अनेकदन्ता अपि सन्त एकाकारदन्तपङ्क्तय इव लक्ष्यन्ते । तं० ।
अविरलपत्त– त्रि० *[अविरलपत्र]*
घनपत्रे, 'अविरलपत्ता अछिद्दपत्ता'। अत्र हेतौ प्रथमा। ततोऽयमर्थः–यतोऽविरलपत्रा अतोऽच्छिद्रपत्राः। जीवा० ३ प्रति० । रा० ।
अविरह– पुं० *[अविरह]*
विरहाभावे, वव० १ उ० ।
सातत्येनावस्थाने, आचा० १ श्रु० १ अ० ६उ० ।

अविराहिय– त्रि० *[अविराधित]*
अपराद्धे, पण्हा० ३अ०।

अविराहियसंजम– पुं० *[अविराधितसंयम]*
प्रव्रज्याकालादारभ्याऽ-भग्नचारित्रपरिणामे संज्वलन-कषाय-सामर्थ्यात् प्रमत्तगुणस्थानकसामर्थ्याद्वास्वल्पमायाऽऽदि दोष-सम्भवेऽप्यनाचरितचरणोपघाते, भग० १ श० २ उ०।

अविराहियसामण्ण– त्रि० *[अविराधितश्रामण्य]*
आराधितचरणे, भग० १५ श० १ उ०।

अविरिक्क– त्रि० *[अविरिक्त]*
अविभक्तीकृते, वव० ९ उ०।

अविरिक्क– त्रि० *[अविरिक्थ]*
अविभक्तरिक्थे वव० २ उ०।

अविरिय– त्रि० *[अवीर्य]*
वीर्यरहिते, विपा० १ श्रु० ३अ०।

अविरुद्ध– त्रि० *[अविरुद्ध]*
पूर्वपुरुषमर्य्यादाऽनतिक्रमेणाऽविरोधभाजि, वव० १ उ०।
विरुद्धराज्यविरहिते ग्रामादौ, बृह० १ उ०।

अविरुद्धवेणइय– पुं० *[अविरुद्धवैनयिक]*
क्षितीशमातापितृगुरूणामविरोधेन विनयकारिणि, अनुओ०।

अविलंबिय– त्रि० *[अविलम्बित]*
नातिमन्थरे, भग० १ श० ७ उ०। कल्प०।

अविला– स्त्री० *[अवी]*
ऊरण्याम्, पिंड०।

अविलुत्त– त्रि० *[अविलुप्त]*
संसृतराज्य, वव० ७ उ०।

अविसंधि– पुं० *[अविसन्धि]*
अव्यवच्छिन्ने, आव० ४ अ०। आव०चू०।

अविसंवायणजोग– पुं० *[अविसंवादनयोग]*
विसंवादनमन्यथाप्रतिपन्नस्यान्यथाकरणं, तद्रूपो योगो व्यापारः तेन वा योगः संबन्धो विसंवादनयोगः, तन्निषेधोऽविसंवा-दनयोगः। भग० ८ श० ९ उ०।
अनाभोगादिना गवादिकमश्वादिकं यद् वदति, कस्मैचित् किञ्चिदभ्युपगम्य वा यन्न करोति सा विसंवादना, तद्विपक्षेण योगः सम्बन्धोऽविसंवादनायोगः। संवादनासंबन्धे, ठा० ४ ठा० १ उ०।

अविसम– त्रि० *[अविषम]*
समतले, तं०।

अविसहण– त्रि० *[अविसहन]*
कस्यापि पराभवाऽसोढरि, बृह० १ उ०।

अविसाइ– त्रि० *[अविषादिन्]*
विषादवर्जिते, अनुत्त० ३ वर्ग।
अदीने, पण्हा०१ अ०।
खेदरहिते, किं मे जीवितेनेत्यादिचिन्तादिरहित, अंत०७ वर्ग।
अदीनस्य पञ्चमं नाम। अंत० २२।

अविसारय– त्रि० *[अविशारद]*
अचतुर, उत्त० २८ अ०।

अविसुद्ध– त्रि० *[अविशुद्ध]*
विशुद्धवर्णादिरहित, ठा० ३ ठा० ४ उ०।

अविसुद्धलेस्स– त्रि० *[अविशुद्धलेश्य]*
कृष्णादिलेश्ये, जीवा० ३ प्रति०।
विभङ्गज्ञानिनि, भग०६श०९उ०।

अविसेस– त्रि० *[अविशेष]*
नगनगरनद्यादिकृतविशेषरहिते अविशेषलक्षणो भूभागादौ, ठा० २ ठा० ३ उ०।

अविसेसिय– त्रि० *[अविशेषित]*
विभागरहित, बृह० २ उ०।
अनर्पित, ठा० १० ठा०।

अविसोहि– पुं० *[अविशोधि]*
उपघाते, शबलीकरणे च। ओह०।
अतिचारे, आव०चू० १ अ०।

अविसोहिकोडि– स्त्री० *[अविशोधिकोटि]*
आधाकर्मादिगुणेऽविशुद्धवर्गे, ताश्चषडिमाः– स्वतो हन्ति घात-यति घनन्तमनुजानीते। तथा– पचति, पाचयति, पचन्तमनु-जानीते इति। आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

अविस्ससणिज्ज– त्रि० *[अविश्वसनीय]*
विश्वासकर्तुमयोग्ये, तं०।

अविस्सामवेयणा– स्त्री० *[अविश्रामवेदना]*
विश्रान्तिरहितायामसातवेदनायाम्, पण्हा० १ अ०।

अविहडा– पुं०, देशी०।
बालक, बुह० १ उ०।

अविहण्णमाण– त्रि० *[अविहन्यमान]*
न विहन्यमानोऽविहन्यमानः। विविधपरिषहोपसर्गै रहन्यमाने, 'अविहण्णमाणो फलगावतट्ठी'। विघातमक्रियमाणे, आचा० १ श्रु० ६ अ० ५उ०।

अविहवबहू– स्त्री० *[अविधववधू]*
जीवत्पत्तिकनार्याम्, भग० १२ श० २उ०।

अविहाड– स्त्री० *[अविघाट]*
अविकटावर्ते, वव० ७उ०।

अविहि– स्त्री० *[अविधि]*
अविधिः। आव०। अयतना। बुह०।

अविहिंस– त्रि० *[अविहिंस]*
न विद्यते विहिंसा येषां तेऽविहिंसाः। विविधैरूपायैरहिंसकेषु, आचा० १ श्रु० ६अ० ४उ०।

अविहिंसा– स्त्री० *[अविहिंसा]*
विविधा हिंसा विहिंसा, न विहिंसा अविहिंसा। विविधप्राणातिपातवर्जने, 'अविहिंसामेव पव्वए, अणुधम्मो मुणिणा पवेदितो'। सूय० १ श्रु० २अ० १ उ०।

अविहिण्णु– त्रि० *[अविधिज्ञ]*
न्यायमार्गाऽप्रवेदिनि, दश० १ अ०।

अविहिगहिअ– त्रि० *[अविधिग्रहण]*
अशुद्धस्य–उद्गमादिदोषान्वितस्य यद् ग्रहणं, अथवा गुडादेर्द्रव्यस्य मण्डकादिना प्रच्छाय यदेकत्र पात्रकदेशे स्थापनं तत्। ओघ० १९२।

अविहिभोयण– न० *[अविधिभोजन]*
'कागसियालयभुत्तं दवियस्सं सव्वओ परामुट्ठं। एसो उ हवे अविही'। इत्युक्तलक्षणे काकदुष्टादिभोजने, ओह ०।

अविहेडय– पुं० *[अविहेठक]*
न क्वचिदप्युचिते आदशून्ये, 'अविहेडए जो स भिक्खू'। दश० १० अ०।

अवीइदव्व– न० *[अवीचिद्रव्य]*
न वीचिद्रव्यमवीचिद्रव्यम्। सम्पुर्णे आहारद्रव्ये, सर्वोत्कृष्टायामाहारवर्गणायां च। भग० १३ श० ९ उ०।

अवीइमंत– त्रि० *[अवीचिमत्]*
अकषायसंबन्धवति, भग० १० श० २ उ०।

अवीइय– अव्य० *[अविविच्य]*
अपृथग्भूयेत्यर्थे, भग० १० श० २उ०।

अवीइय–अव्य० *[अविचिन्त्य]*
अविकल्प्येत्यर्थे, भग० १० श० २उ०।

अवीय– त्रि० *[अद्वितीय]*
न एकाकिनि, कल्प० ६ ।
असहाये, विपा० १ श्रु० २अ०।

अवीरिय– पुं० *[अवीर्य]*
मानसशक्तिवर्जिते, भग० ७ श० ९ उ०।

अवीसंभ– पुं० *[अविश्रम्म]*
अविश्वासे, गौणे तृतीये प्राणातिपाते च। पण्हा०।
प्राणवधप्रवृत्तो हि जीवानामविश्रम्भणीयो भवतीति प्राणवधस्याविश्रम्भकारणत्वादविश्रम्भव्यपदेशः। पण्हा० १ अ०।

अवीसत्थ– त्रि० *[अविश्वस्त]*
विश्वासरहिते, गच्छा० २ अधि०।

अवुग्गहट्ठाण– न० *[अविग्रहस्थान]*
कलहाऽनाश्रये, ठा०।
'आयरियउवज्झायस्स णं गणंसि पंच अवुग्गहट्ठाणा पन्नत्ता। तं जहा आयरियउवज्झाए णं गणंसि आणं वा धारणं वा सम्मं पउंजित्ता भवइ १ , एवं महाराइणियाए सम्मं० २, आयरियउवज्झाए णं गणंसि जेसु य पज्जवजाए धारेइ ते काले सम्मं० ३, एवं गिलाणसेहवेयावच्चं सम्मं० ४, आयरिय-उवज्झाणं गणांसि आपुच्छियचारी यावि भवइ, नोअणापुच्छियचारी"। ठा० ५ ठा० १ उ०।

अवुत्त– त्रि० *[अनुक्त]*
केनाप्यप्रेरिते, ठा० ८ ठा०।

अवुसराइय– पुं० *[अवसुराज]*
रत्नश्रेष्ठे, तद्वद्दीप्तिमति पदार्थमात्रे, निसि० ।

अवेक्खमाण– त्रि० *[अपेक्षमाण]*
निरीक्षमाणे, नाया० ९ अ०।

अवेय– पुं० *[अवेद]*
पुरुषवेदादिवेदरहिते, पन्न० २ पद०।
सिद्धादौ, ठा० २ ठा० १ उ०।

अवेयइत्ता– अव्य० *[अवेदयित्वा]*
वेदनमकृत्वेत्यर्थे, पण्हा० १ अ०।

अवेयण– त्रि० *[अवेदन]*
न विद्यते वेदना यस्य स अवेदनः। अल्पवेदने वेदनारहिते, उत्त०१६ अ०।
साताऽसातवेदना-भावात् सिद्धे च। पन्न०२ पद०।

अवेयवच्च– त्रि० *[अपेतवाच्च]*
वचनीयतारहिते, बुह०१ उ०।

अवेरमणज्झाण– न० *[अविरमणध्यान]*
न विरमणमविरमणम्, तस्य ध्यानम्। मा भूत् पुत्रयोर्विरतिबुद्धिरित्यङ्गीकृतामपि देशविरतिं परित्यज्य प्रान्तग्रामसमाश्रितयोः 'एते साधवो मांसाशिनो राक्षसाः' इत्यतस्तत्पार्श्वे न गन्तव्यमिति।तनयविहितविप्रतारणयोर्भृगुपुत्रयोरिव, जयदेवेन प्रतिबोद्ध्यमानस्यापि मुहुर्मुहुर्विरतिं त्यजतस्तद्भातुरिव, मेतार्यस्येव वा दुध्याने, आतु०।

अवोगडा– स्त्री० *[अव्याकृता]*
अतिगम्भीरशब्दार्थायाम्–अव्यक्ताक्षरप्रयुक्तायां वा अविभावितार्थत्वाद् भाषायाम्, पण्हा० १ अ०।
अव्याकृता, यथाबालकादीनां थपनिका। दश० ७अ०।

अवोच्छिण्ण– त्रि० *[अव्युच्छिन्न]*
उत्तरोत्तरानृवृत्त्या व्यवच्छेदशून्ये, आचा० १ श्रू० ४अ० ४उ० ।
अवोच्छिण्णा– त्रि० *[अव्युच्छिन्ना]*
यावदेकोऽपि तिष्ठति तावत्। आव० ।
अवोच्छित्तिणय– पुं० *[अव्यवच्छित्तिनय]*
श्रुतस्य कालान्तरप्रापणे, ठा० ५ ठा० ३ उ० ।
अव्यवच्छित्तिप्रतिपादनपरोनयोऽव्यवच्छित्तिनयः। द्रव्यास्तिक -नये, नं० ।
अवोच्छित्तिणयट्ठया– स्त्री० *[अव्यवच्छित्तिनयार्थता]*
अव्यवच्छित्तिनयार्थस्य भावोऽव्यवच्छित्तिनयार्थता। द्रव्यापे-क्षायाम्, नं० ।
अवोसिरण– न० *[अव्युत्सर्जन]*
अपरित्यागे, दशा० १० दशा० ।
अवोह– पुं० *[अपोह]*
अपोहनमपोहः। निश्चये, नं० । आव०म० ।
प्राप्तार्थे, 'तत्तो अवोहए वा' ततः पर्यालोचनानन्तरमपोहते। आव०म० ।
अपगत ऊहो वादिसमुद्भावितस्तर्को यस्मात्। बुह० ।
अवोहरणिज्ज– त्रि० *[अव्यवहरणीय]*
जीर्णे, निसि० १ उ० ।
अव्वईभाव– पुं० *[अव्ययीभाव]*
अनव्ययमव्ययं भवत्यनेन ।व्याकरणप्रसिद्धे समासभेदे, अनु०
अव्वए– त्रि० *[अव्ययम]*
व्ययरहितम्। भग० ११९।
अव्वंग– न० *[अव्यंग]*
अक्षते, यस्य क्षतं कृतं न विद्यते। वव० ७ उ० ।
अव्वक्खित्त– त्रि० *[अव्याक्षिप्त]*
स्थिरे, 'अव्वक्खित्तेण चेयसा'। अव्याक्षिप्तेन स्थिरेण चेतसा। उत्त० २० अ० ।
अन्यत्रोपभोगमगच्छतेत्यर्थः। दश० ५ अ० १ उ० ।
व्याक्षेपमकुर्वति, प्रतीच्छनायोग्ये, वक्खेवणा दुसड्ढा, दिवस-एसु लीहाले। दुगमादी जो य पढंतो न करेति विक्खेवं। अव्वक्खित्तो एसो, आउत्तो अणण्हमणसो उ। पंच० भा० ।
अव्वग्गमण– त्रि० *[अव्यग्रमनस्]*
अव्यग्रमनाकुलितमसमञ्ज सचित्तोपरमतो मनश्चित्तमस्येत्यव्य-ग्रमनाः। अनुकूलचित्ते, उत्त० १५ अ० ।
अव्वत्त– न० *[अव्यक्त]*
न व्यक्तमव्यक्तम्। अनिर्देश्ये स्वस्वरूपनाजात्यादिकल्पना-रहिते, नं० ।
सर्वप्रकृतौ साङ्ख्यपरिकल्पिते प्रधाने। आव०म० । ठा० ।
अव्यक्तादव्यक्तं प्रभवति, ततः षष्टितन्त्रं जातम्। आव०म० ।
श्रुतवयोभ्यां लघौ, आचा०२ श्रु० ५ अ० ३ उ० ।
वयसा लघौ श्रुतेनात्यल्पश्रुते, जीत० । वव० ।
यावत्कक्षादिषु रोमसंभवो न भवति तावदव्यक्तो भवति। निसि० १८ उ० । वव० ।
अव्यक्तोऽष्टानां वर्षाणां मध्ये बालः। ओह० ।
अगीतार्थे, निसि० २ उ० ।
अव्यक्तोऽगीतार्थस्तस्याऽव्य-क्तस्य गुरोः पुरतो यदपराधा-लोचनं तदव्यक्तम्। आलोचनादोषे, वव०१ उ० । ठा० ।
'जो य अगीयत्थस्सा, आलोए तं तु होइ अव्वत्तं' सत्यासत्य-भामेतिवदव्यक्तवादी। संयताऽभ्युपगमे संदिग्धबुद्धौ निह्नवे, आव०म० ।
जाव कक्खादिसु रोमसंभवो न भवति, ताव अहवा जाव सोलसवरिसो ताव अव्वत्तो। निशी० ।
अव्वत्तगम– त्रि० *[अव्यक्तगम]*
गमनाभावे, नंष्टुमसमर्थे च । सूय० १ श्रु० १४ अ० ।
अव्वत्तव्वगसंचिय– पुं० *[अवक्तव्यकसंचित]*
द्व्यादिः संख्या व्यवहारतः शीर्षप्रहेलिकायाः परतोऽसंख्यायाश्च संख्यात्वेनासंख्यात्वेन च वक्तुं न शक्यते असाववक्तव्यः। स च एककस्तेनाऽवक्तव्येन एककेन एकत्वोत्पादेन संचिता अवक्तव्यकसंचिताः। कतित्वेनाऽकतित्वेन चानिर्वचनीयोत्पा-देषु, भग० २० श० १० उ० ।
अव्वत्तदंसण– पुं० *[अव्यक्तदर्शन]*
अव्यक्तमस्पष्टं दर्शनमनुभवः स्वप्नार्थस्य यत्रासावव्यक्तदर्शनः । स्वप्नदर्शनभेदे, भग० १६ श० ६ उ० ।
अव्वत्तमय– पुं० *[अव्यक्तमत]*
न ज्ञायतेऽत्र कोऽपि संयतः कोऽप्यसंयत इत्यव्यक्तस्यैव सर्वस्याभ्युपगमात्र व्यक्तमस्फुटमव्यक्तं मतं येषां तेऽव्यक्त-मताः। संयताद्यवगमे संदिग्धबुद्धिषु निह्नवेषु, विशे० । आव०म० । आव०चू० ।
अव्वत्तरूव– त्रि० *[अव्यक्तरूप]*
अमूर्तत्वादव्यक्तं रूपमस्याऽसावव्यक्तरूपः। तथा–करचरण-शिरोग्रीवाद्यनवयवतयास्वतोऽवस्थानाज्जीवे, सूय०२श्रु०६अ०
अव्वत्तस्य– त्रि० *[अव्यक्तस्य]*
अगीतार्थस्य सूत्रार्थापरिनिष्ठितस्य। आचा० १९६।
अव्वत्तिय– पुं० *[अव्यक्तिक]*
अव्यक्तमस्फुटं वस्तु अभ्युपगमतो विद्यते येषां ते अव्यक्तिकाः संयताद्यवगमे संदिग्धबुद्धिषु, ठा० ७ ठा० । उत्त० । उव० ।

अव्वय– पुं० *[अव्यय]*
अखण्डने, कियतामप्यवयवानां व्ययाऽभावात्। नाया०५अ०
सदाऽवस्थायिनि, विशे०। ठा०। सूय०।
'धुवे णियए सासए अक्खए अव्वए' अव्ययः, तत्प्रदेशानामव्ययत्वात्। भग० २ श० १ उ०।

अव्ववसिय– त्रि० *[अव्यवसित]*
अनिश्चयवति, पराक्रमवति च। ठा०।

अव्वसण– पुं० *[अव्यसन]*
लोकोत्तररीत्या द्वादशे दिवसे, जंबू० ७ वक्ष०।

अव्वह– न० *[अव्यथ]*
देवाद्युपसर्गजनितं भयं चलनं वा व्यथा, तदभावेऽव्यथा। व्यथाऽभावे शुक्लध्यानालम्बने, भग० २५ श० ७ उ०। ठा०। गच्छा०। उव०।

अव्वहिय– त्रि० *[अव्यथित]*
परेणानापादितदुःखे, जीवा० ३ प्रति०।
अताडिते, भग० ३ श० २ उ०।
अदीनमनसि, दश० ८ अ०।
निष्प्रकम्पमाने धीरे, बुह० १ उ०।

अव्वाइद्ध– न० *[अव्याविद्ध]*
*गुणभेदे, अव्याविद्धं यत्तस्य *स्याधस्तनपद०मुपरितनम्, उपरितनमधो न क्रियते। बुह० १ उ०।

अव्वाइद्धक्खर– न० *[अव्याविद्धाक्षर]*
विपर्यस्तरत्नमालागतरत्नानि इव व्याविद्धानि विपर्यस्तानि अक्षराणि। यत्र तद् व्याविद्धाक्षरं, न तथाऽव्याविद्धाक्षरम्। व्याविद्धाक्षरत्वदोषरहिते *गुणे, गच्छा०२ अधि०। आव०म०। अनु०।

अव्वागड– त्रि० *[अव्याकृत]*
अव्यक्तेऽपरिस्फुटे, आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

अव्वाबाह– न० *[अव्याबाध]*
न विद्यते व्याबाधा यत्र तदव्याबाधम्। द्रव्यतः खड्गाद्यभिघातकृतया, भावतो मिथ्यात्वादिकृतया, द्विरूपयाऽपि व्याबाधया रहिते वन्दने, अव्वाबाहं दुविहं–दव्वे, भावे य द्रव्यतः खड्गाद्यभिघातव्याबाधाकारणविकले, भावतः सम्यग्दृष्टेश्चारित्रवतो वन्दने, आव० ३ अ०।
शरीरबाधानामभावे, 'किं तं भंते ! अव्वाबाहं ? सोमिला ! जं मे वातियपित्तियसंमिय-सण्णिवाइयविविह रोगायं का सरीरगया दोसा उवसंता णो उदीरेंति। से तं अब्वावाहं'। भग० १ ८श० १०उ०।
विविधा आबाधा व्याबाधा, तन्निषेधात्। उव०।
व्याबाधावर्जितसुखे, उव०।
'अव्वाबाहमुवगयाणं'। आव०म०।
'अव्वाबाहमव्वाबाहेणं'। अव्याबाधमव्याबाधेन, सुखं सुखेनेत्यर्थः। भग० ५श० ४ उ०। कल्प०।
अमूर्त्तत्वात्। रा०।
परेषामपीडाकारित्वात्। भग० १ श० १ उ०।
केनापि व्याबाधयितुमशक्यत्वात्। जीवा० ३ प्रति०।
व्याबाधारहिते सिद्धिस्थाने, रागादयो हि न तद् बाधितुं प्रभविष्णवः। पन्न० ३९ पद०। कल्प०। रा०।
क्षुधादिबाधारहितत्वात्। ब्रह्मचर्यम्। पण्हा० ४अ०।
गन्धर्वादिलक्षणभावव्याबाधाविकलो(ध्यानदेशः) अव्याबाध–शब्देन विशिष्यते। आव०५अ०।
व्याबाधन्ते परं पीडयन्तीति व्याबाधाः, तन्निषेधादव्याबाधाः। त्रि०। भग० १४ श० ८ उ०।
उत्तरयोः कृष्णराज्योरन्तर्गतसुप्रतिष्ठाभविमानवासिलोकान्तिकदेवेषु, ठा० ८ठा०। भग०।
'अव्वाबाहाणं देवाणं नव देवा नव देवसया पन्नत्ता, एवं अगिच्छा वि, एवं रिट्ठा वि।' ठा० ८ ठा०।

अव्वावड– त्रि० *[अव्यापृत]*
व्यापारवर्जिते, 'सडियपडियं न कीरइ, जहियं अव्वागडं तयं वत्थु' ।यत् शटितपतिते यत्र व्यापारः कोऽपि न क्रियते तद्वास्तु अव्यापृतमुच्यते। इति लक्षितस्वरूपे वास्तुभेदे, बुह० ३ उ०।

अव्वावन्न– त्रि० *[अव्यापन्न]*
अविभिन्ने, वव० १ उ०।
अविनष्टे, भग० १ श० ७उ०।

अव्वावारपोसह– पुं० *[अव्यापारपौषध]*
व्यापारप्रत्याख्यानपूर्वकं क्रियमाणे पोषधोपवासव्रते, 'अव्वापारपोसहो दुविहोदेसे, सव्वे य। देसे अमुगं वावारं करेमि, सव्वे ववहारे से बलसगडघरपरिकम्मादयो न कीरइ।
आव० ६ अ०

अव्वावारसुहिय– त्रि० *[अव्यापारसुखित]*
तथाविधव्यापाररहिततया सुखिनि, बुह० ३ उ०।

अव्वाहय– त्रि० *[अव्याहत]*
स्वपराविरोधिनि, वव० १ उ०।
अव्याधिते, नं०।

अव्वाहयपुव्वारत्त– न० *[अव्याहतपूर्वापरत्व]*
पूर्वापरवाक्याऽविरोध-रूपे सत्यवचनातिशये, रा०। सम०।

अव्वाहिय– त्रि० अव्याहृत अनाहूते, जीवा० ३प्रति०।
अकथिते, 'अव्वाहिते कसाइया'। आचा० १ श्रु० ९अ०२उ०।

अव्वुक्कंत– त्रि० *[अव्युत्क्रान्त]*
अपरिणतविध्वस्तप्रासुके, गच्छा० २ अधि०।

अव्वोगड– त्रि० *[अव्याकृत]*
अविशेषिते, बुह०२ उ०।
'अव्वोगडमविभत्तं'। अव्याकृतं नाम यद्दायादैरविभक्तमिति।
वास्तुभेदे, बुह० ३ उ०।
अविसंसृते, दशा० ३अ०।

अव्वोच्छिन्न– त्रि० *[अव०च्छिन्न]*
स्ववंशस्य परम्परया समागते, वव० ७ उ०।

अव्वोच्छित्ति– त्रि० *[अव०च्छित्ति]*
'अमानोनाः प्रतिषेधे' न व्युच्छित्तिरव्युच्छित्तिः। प्रतिपत्तौ, यः स्वयं कृतार्थोऽप्युत्तममवाप्य धर्मं परेभ्य उपदिशति। पंच०चू० अव्यवच्छित्त्या श्रुतं वाचयेत्, श्रुतस्य शिष्यप्रशिष्य परम्परागततयाऽव्यवच्छित्तिर्भूयादितिपञ्चममव्यवच्छित्तिः कारणम् आव०म०।

अव्वोच्छित्तिणयट्ठ– पुं० *[अव्यवच्छित्तिनयार्थ]*
अव्यवच्छित्तिप्रधानोनयोऽव्यवच्छित्तिनयः, तस्यार्थः। द्रव्ये, भग० ७ श० ३ उ०।

अव्वोयडा– स्त्री० *[अव्याकृता]*
गम्भीरशब्दार्थायां मन्मनाक्षरप्रयुक्तायां वा अभावितार्थायां वा भाषायाम्, भग० १० श० ४ उ०।

असइ– स्त्री० *[असृति]*
अश्नुते तत्प्रभवेन समस्तधान्यमानानि व्याप्नोति इत्यसृतिः। अवाङ्मुखहस्ततलरूपे, तत्परिच्छिन्ने धान्ये च। अनु०। प्रसृतेरर्द्धे, नाया० ७अ०।
'दो असईओ पसई'। ओह०।

असइं– अव्य० *[असकृत्]*
अनेकश इत्यर्थे, आचा०। भग०।
'असइं तु मणुस्सेहिं, मिच्छादंडो पजुंजइ' असकृद् वारंवारम्। उत्त० ९ अ०। जीवा०।
'असइं वोसट्ठचत्तदेहे'। न सकृदसकृत्, सर्वदेत्यर्थः। दश० १० अ०।

असई– स्त्री० *[असती]*
दुःशीलायाम्, दास्याम्, भग० ८ श० ९उ०।

असईजणपोसणया– स्त्री० *[असतीजनपोषण]* न०।
असतीजनस्य दासीजनस्य पोषणं तद्भाटिकोपजीवनार्थं यत् तत्तथा। एवमन्यदपि क्रूरकर्मकारिणः प्राणिनः पोषणमसतीजनपोषणमेवेति। दासीजनस्य क्रूरकर्मकारिणो वा पोषणे, उपा० १ अ०।

असंक– न० *[अशङ्क]*
न विद्यते शङ्का यस्य मनसस्तदशङ्कम्। निःशङ्के, आचा० १ श्रु० २अ० ३उ०।

असंकणिज्ज– त्रि० *[अशङ्कनीय]*
कूटपाशादिरहिते अशङ्काहे स्थाने, सूय० १ श्रु० १ अ० २उ०।

असंकप्पिय– त्रि० *[असङ्कल्पित]*
स्वार्थं संस्कुर्वता साध्वर्थतया मनसाऽप्यकल्पिते, भग० ७श० १ उ०।

असंकमण– त्रि० *[अशङ्कमनस्]*
अशङ्कं मनो यस्यासौ अशङ्कमानाः। तपोदमनियमफलत्वाऽऽशङ्कारहिते आस्तिक्यमत्युपपेते, आचा०१ श्रु०२ अ० ३ उ०।
न विद्यते शङ्का यस्य मनसस्तदशङ्कम् अशङ्कं मनो यस्य स। आचा०१ श्रु०२ अ०

असंकि– त्रि० *[अशङ्किन्]*
शङ्कामकुर्वाणे, सूय० १ श्रु० १ अ० २ उ०।

असंकिय– त्रि० *[अशङ्कित]*
अशङ्कनीये, 'असंकियाइं संकंति, संकियाइं असंकिणो। सूय० १ श्रु० १ अ० २उ०।

असंकिलिट्ठ– त्रि० *[असंक्लिष्ट]*
विशुद्धाध्यवसाये, आतु०।
निर्दूषणे, 'असंकिलिट्ठाइं वत्थाइं'। उव०।
विशुध्यमानपरिणामवति, पण्हा० १ अ०

असंकिलिट्ठायार– पुं० *[असंक्लिष्टाचार]*
असंक्लिष्टइहपरलोकाशंसारूपसंक्लेशविप्रमुक्त आचारो यस्य सोऽसंक्लिष्टाचारः। वव० ३उ०।
सकलदोषपरिहारिणि, वव० ३उ०।

असंकिलेस– पुं० *[असंक्लेश]*
विशुद्ध्यामानपरिणामहेतुके संक्लेशाभावे, 'तिविहे असंकिलेसे पण्णत्ते, नाणसंकिलेसे, दंसणसंकिलेसे, चरित्तसंकिलेसे'। ठा०२ ठा०४ उ०।
'दसविहे असंकिलेसे पन्नत्ते। तं जहा–उवहिअसंकिलेसे, जाव चरित्त असंकिलेसे'। ठा० १० ठा०।

असंख– त्रि० *[असङ्ख्य]*
अविद्यमानसङ्ख्ये, उत्त० ५ अ०।

असंखड– न० *[असंखड]*
वाचिके कलहे, निसि० १ उ०। गच्छा०। बुह०। ओह० कलहः, वैरं वा। बुह०।

असंखडिय– पुं० *[असंखडिक]*
कलहशीले, बुह० १ उ०।

असंखय– त्रि० *[असंस्कृत]*
उत्तरकरणेनात्रुटिते पटादिवत्संधातुमशक्ये, उत्त०।
असंस्कृतंजीवितमित्युक्तमतस्तद्व्याचिख्यासुराह निर्युक्तिकृत–
उत्तरकरणेण कयं, जं किं वी संखयं तु णायव्वं।
सेसं असंखयं खलु, असंखयस्सेस णिज्जुत्ती।।
। उत्त० । निसि०१ ।
उत्तराऽध्ययनेषु चतुर्थेऽध्ययने, तच्च प्रमादाप्रमादाऽभिधाय-कमप्यादानपदेनासंक्षयमित्युच्यते। सूय० १ श्रु० १०अ०।

असंखेज्ज– त्रि० *[असंख्येय]*
संख्याऽतीते, भग० १ श० ५ उ०।
गणनामतिक्रान्ते, आव०चू० १ अ०

असंखेज्जकालसमयट्ठिइ– पुं० *[असंङ्ख्येयकालसमयस्थिति]*
पल्योपमाऽसङ्ख्येयभागादिस्थितिषु नैरयिकादिषु एकेन्द्रियविक–लेन्द्रियवर्जं वैमानिकपर्यन्तेषु, ठा०।
'दुविहा णेरइया पन्नत्ता। तं जहासंखेज्जकालसमयट्ठिइया चेव, असंखेज्जकालसमयट्ठिइया चेव। एवं एगिंदियविगलेंदिय-वज्जा० जाव वाणमंतरा'। ठा० २ ठा० २ उ०।

असंखेज्जगुणपरिहीण– त्रि० *[असंख्यातगुणपरिहीण]*
असंख्यातगुणेन परिहीणो यः स तथा। असंख्येयभागमात्रे, उव०।

असंखेज्जजीविय– पुं० *[असङ्ख्यातजीवित]*
असंख्यजीवात्मकेषु वृक्षेषु, भग०।
'से किं तं असंखेज्जजीविया ? असंखेज्जजीविया दुविहा पन्नत्ता तं जहा–एगट्ठिया, बहुट्ठिया य'। भग० ८ श० ३ उ०।

असंखेज्जय– न० *[असंख्येयक]*
गणनासंख्याभेदे, अनु०।

असंखेज्जवित्थड– त्रि० *[असंख्येयविस्तृत]*
असंख्येयानि योजनसहस्राणि आयामविष्कम्भेण, असंख्ये-यानि योजनसहस्राणि परिक्षेपेण च विस्तृते, जीवा० ३प्रति०।

असंग– त्रि० *[असङ्ग]*
बाह्याभ्यन्तरसङ्गरहिते, पन्न० २ पद०। आव०।
न विद्यते सङ्गोऽमूर्त्तत्वाद् यस्य स तथा। आचा० १ श्रु० ५ अ० ९ उ०।

असंगह– पुं० *[असंग्रह]*
असंग्रहशीले, वव०४उ०।

असंगहरूइ– पुं० *[असंग्रहरुचि]*
न विद्यते संग्रहे रुचिर्यस्य सः। गच्छोपग्रहकरस्य पीठादि-कस्योपकरणस्यैषणादोषविमुक्तस्य लभ्यमानस्यात्मम्भरित्वेन संग्रहे रुचिमनाददाने, पण्हा० ३ अ०

असंगहिय– पुं० *[असंग्रहिक]*
व्यवहारनयमतानुसारिणी विशेषवादिनी । विशे०।

असंगहिय– त्रि० *[असंगृहीत]*
अनाश्रिते, ठा०८ठा०।

असंघयण– न० *[असंहनन]*
आद्यैस्त्रिभिः संहननैर्वर्जिते, निसि० २० उ०।

असंघाइम– त्रि० *[असंघातिम]*
द्विकादिफलकेषु कपाटवदसंघातेन निर्वत्तेषु, निसि० २ उ०।

असंचयित– त्रि०
असंजातसंचये, मासिक-त्रैमासिक-चातुर्मासिक-पाञ्चमासिक-षाण्मासिके वा प्रायश्चित्ते वर्त्तमाने, वव० १ उ०।

असंजई– स्त्री० *[असंयती]*
अविरतिकायाम्, बुह० १ उ०।

असंजण– न० *[असज्जन]*
असङ्गे, अगृद्धौ च । निसि० १ उ०।

असंजम– पुं० *[असंयम]*
न संयमोऽसंयमः। प्रतिषिद्धकरणे, आव०चू० ४अ०।
सावद्यानुष्ठाने, सूय० १ श्रु० १३ अ०।
प्राणातिपातादौ, 'असंजमं परियाणामि, संजमं उवसंपज्जामि पण्हा०। आव०चू०।
प्राणवधस्य चतुर्दशपर्यायः। पण्हा० ५।
बालभावे, आचा० १ श्रु० ५अ० ५उ०।
'अस्संजममन्नाणं मिच्छत्तं सव्वमेव य ममत्तं' असंयमं विराधना स्वभावमेकविधम्। आतु०। सूय०।
'एगिंदिया णं जीवा समारंभमाणस्स पंचविहे असंजमे कज्जइ। तं जहा–पुढविकाइयअसंजमे० जाव वणस्सइकाइय असंजमे ठा० ५ ठा० २ उ०।
इह चाव्यपरोपणमसंयोजनं च संयमोऽनाश्रवरूपत्वादितर-दसंयम इति। ठा० ६ ठा०।
'चउदिरिंया णं जीवा समारंभमाणस्स अट्ठविहे असंजमे कज्जइ। तं जहा –चक्खुमाओ सोक्खाओ ववरोवेत्ता भवइ, चक्खुमएणं दुक्खेणं संजोएत्ता भवइ'। ठा० ८ ठा०।
पंचिंदिया णं जीवा समारंभमाणस्स पंचविहे असंजमे कज्जइ। तं जहा–सोइंदियअसंजमे० जाव फासिंदियअसंजमे' । ठा०।
'सव्वपाणभूयजीवसत्ताणं समारंभमाणस्स पंचविहे असंजमे कज्जइ। तं जहा–एगेंदियअसंजमे, जाव पंचेंदियअसंजमे'। ठा० ५ ठा० २उ०।
'सत्तविहे असंजमे पन्नत्ते। तं जहापूढविकाइयअसंजमे० जाव तसकाइयअसंजमे अजीवकाइयअसंजमे'। ठा०७ ठा०।

'दसविहे असंजमे पन्नत्ते। तं जहापुढविकाइयअसंजमे, अजीवकाइयअसंजमे'। ठा० १०ठा०।
सत्तरसविहे असंजमे पन्नत्ते। तं जहा–पुढविकाइयअसंजमे, आउकाइयअसंजमे, तेउकाइयअसंजमे, वाउकाइयअसंजमे, वणस्सकाइयअसंजमे, बेइंदियअसंजमे, तेइंदियअसंजमे, चउरिंदियअसंजमे, पंचिंदियअसंजमे, अजीवकायअसंजमे, पेहाअसंजमे, उपेहाअसंजमे, अवहट्टुअसंजमे अप्पमज्जणा असंजमे, मणअसंजम, वइअसंजमे, कायअसंजमे।
समा० १ ७समा०। पण्हा०। पंच०भा०। आव०चू०।
अधर्मद्वारस्य षष्ठं नाम। पण्हा० ४३।

असंजमकार– त्रि० *[असंयमकर]*
साधुनिमित्तमसंयमकरणशीले, पिंड०।

असंजमट्ठाण– न० *[असंयमस्थान]*
असमाधिस्थानादिषु, वव०। महा० ७अ०।

असंजमपंक– पुं० *[असंयमपङ्क]*
पृथिव्याद्यपमर्दकर्दमे, बुह० १ उ०।

असंजय– त्रि० *[असंयत]*
न विरतोऽसंयतः। अविरते, आव० ४ अ०। ठा०।
मिथ्यादृष्ट्यादौ, भग० ६श० ३उ०।
अविरतसम्यग्दृष्टिपर्यन्ते, आतु०। नं०।
कुतश्चिदप्यनिवृत्ते, सूय० १ श्रु० १० अ०। दश०।
गृहस्थे, आचा०२श्रु०२अ०१ उ०। निसि० ।
स च श्रावकः, प्रकृतिभद्रको वा स्यात्। आचा० २ श्रु० १ अ० २ उ०।
गृहस्थकर्मकारिणि प्रव्रजिते, सूय०१ श्रु० ७अ०।
असाधौ, संयमरहिते,भग० १ श०१ उ०। उव०। पण्हा०। नाया०
असंयमवति आरम्भपरिग्रहप्रमत्ते अब्रह्मचाराणि, ठा० १० ठा०
चरणपरिणामशून्यः। भग०

असंजल– पुं० *[असंज्वल]*
अनन्तजिनसमकालीने ऐरवतजिने, 'भरहे अणंतए जिणो, एरवए असंजले जिणवरिंदो'। सम०।

असंजोएत्ता– त्रि० *[असंयोगयितृ]*
संयोगमकारयति, 'सोयामएणं दुक्खेणं असंजोएत्ता भवइ'। ठा० १० ठा०।

असंजोगि– पुं० *[असंयोगिन्]*
संयोगरहिते, सिद्धे च। ठा० २ ठा० १ उ०।

असंठविय– त्रि० *[असंस्थापिते]*
असंस्कृते, नं०।

असंत– त्रि० *[असत्]*
अविद्यमाने, निसि० १ उ०।
अशोभने, सूय० १ श्रु० ९ अ०। पण्हा०।

असंत–त्रि० *[अशान्त]*
अनुपशान्ते, पण्हा० २अ०।

असंतइ–स्त्री० *[असन्तति]*
शिष्यप्रशिष्यादिसन्तानानुपजनने, बुह० १ उ०।

असंतग– न० *[असत्क]*
असदर्थाभिधानरूपत्वात् पञ्चमे गौणालीके, पण्हा० २ अ०।
अविद्यमानार्थके असत्ये, पण्हा० २अ०।
असद्भूते वचने अशोभने, पण्हा० २अ०।

अशान्तक– न०
अनुपशमप्रधाने, पण्हा० २ अ०।

असंतय– न० *[असान्तत]*
रागादिप्रवर्त्तने, पण्हा० २ अ०।

असंति– स्त्री० *[अशान्ति]*
शान्त्यभावे, अनिर्वाणे, संसृतौ च। सूय० १ श्रु० ९अ०।

असंथड– त्रि० *[असंस्तृत]*
शकट इव विशरारुतया संचरितुमशक्नुवति, वव०७उ०। बुह०
असमर्थे, आचा० २ श्रु० १ उ०।

असंथरण– न० *[असंस्तरण]*
अनिर्वाहे, बुह०१ उ०।
'संथरणम्मि असुद्धं, दुण्हं पि गिहंतदितंयाण हियं। आउरदिट्ठंतेणं, तं चेव हियं असंथरणे'। निसि० १ उ०।

असंथरमाण(असंथरंत)– त्रि० *[असंस्तरत्]*
गवेषणामप्यकुर्वति, वव० ४ उ०।

असंथुय– त्रि० *[असंस्तुत]*
असंबद्धे, सूय०१ श्रु० १२अ०।

असंदिद्ध– त्रि० *[असंदिग्ध]*
संदेहवर्जिते, दशा० ४अ०। कल्प०।
निश्चिते सकलसंशयादिदोषरहिते, ठा० ६ ठा०।

असंदिद्ध– त्रि० *[असंदिग्ध]*
संदेहवर्जिते, दशा० ४अ०। कल्प०।
निश्चिते सकलसंशयादिदोषरहिते, ठा० ६ ठा०।

असंदिद्धत्त– न० *[असंदिग्धत्व]*
असंशयकारितायाम्, एकादशे सत्यवचनातिशये च। सम० ३५ सम०। उव०। रा०।
सैनध्वशब्दवल्लवणवसनतुरगपुरुषाद्यनेकार्थसंशयकारित्वदोष मुक्ते *गुणे, विशे०। अनु०। आव०म०।

असंदिद्धवयणया– स्त्री० *[असंदिग्धवचनता]*
परिस्फुटवचनतारूपे वचनसम्पद्भेदे, उत्त० १ अ०। ठा०।

असंदीण– त्रि० *[असंदीन]*
पक्षमासावुदकेनाऽप्लाव्यमाने सिंहलद्वीपादौ, आचा० १ श्रु० ६ अ० ३ उ०।

असंधिम– त्रि० *[असन्धिम]*
अपान्तराले सन्धिरहिते, बृह० ५ उ०।

असंपउत्त– त्रि० *[असंप्रयुक्त]*
अयुक्ते, निसि० १ उ०।

असंपओग– पुं० *[असंप्रयोग]*
अयोगे, भग० २५ श० ७ उ०।

असंपगहियप्प– त्रि० *[असंप्रगृहीतात्मन्]*
असंप्रगृहीतोऽनुत्सेकवानात्मा यस्य सोऽसंप्रगृहीतात्मा। निरभिमाने, अहमाचार्यो बहुश्रुतः तपस्वी सामाचारीकुशलो जात्यादिमान् वा इत्यादिमदरहिते, दशा० ३ दशा०।

असंपगहियया– स्त्री० *[असंप्रगृहीतता]*
संप्रग्रहरहिततारूपेआचार्यसम्पद्भेदे, वव०।

असंपग्गह– पुं० *[असंप्रगह]*
समन्तात् प्रकर्षेण जात्यादिप्रकृतलक्षणेन ग्रहणमात्मनोऽव-धारणं संप्रग्रहः। तदभावोऽसंप्रग्रहः। उत्त० १ अ०।
आत्मनो जात्याद्युत्सेकरूपग्रहवर्जने, वाचनासंपद्भेदे, ठा० ८ ठा०

असंपत्त– त्रि० *[असंप्राप्त]*
असंलग्ने, रा०।

असंपत्ति– स्त्री० *[असंपत्ति]*
प्रायश्चित्तभारवहनासामर्थ्ये, 'असंपत्तीए मासलहु संपत्तीए मासगुरु'। निसि० १ उ०।
'असंपत्तिपत्ताणं रयहरणं पच्चुपेहिज्जा'। महा० ७ अ०।

असंपहिट्ठ– त्रि० *[असंप्रहृष्ट]*
अहर्षिते, उत्त० १ ५अ०।
'अवग्गमणे असंपहिट्ठा जे से भिक्खू'। उत्त० १५ अ०।

असंपुड– त्रि० *[असंपुट]*
अव्यावृत्ते, 'मुहं वा असंपुडंवाताऽरंभदोसेण अच्छेज्ज'। निसि० २० उ०।

असंफुर– त्रि० *[असंस्फुर]*
असंवृते, बृह० ३ उ०।

असंबद्ध– त्रि० *[असंबद्ध]*
असंश्लिष्टे, 'असंबद्धो हविज्जा जगणिस्सिए'। पद्मिनीपत्रो-दकवद् गृहस्थैः। दश० ८ अ०।

असंबुद्ध– त्रि० *[असंबुद्ध]*
अनवगतत्त्वे, उत्त० १ अ०।

असंभंत– त्रि० *[असंभ्रान्त]*
यथावदुपयोगादि कृत्वाऽनाकुले, दश० १ अ०।
भ्रमरहिते, विपा० १ श्रु० १ अ०। रा०।
अनुत्सुके, भग० ११ श० ११ उ०।

असंभम– पुं० *[असंभ्रम]*
भयाऽकरणे, ओह०।

असंमोह– पुं० *[असंमोह]*
देवादिकृतमायाजनितस्य, सूक्ष्मपदार्थविषयस्य च समोहस्य मूढताया निषेधे, उव०। गच्छा०। ठा०।

असंलप्प– त्रि० *[असंलप्य]*
संलपितुमशक्येषु अतिबहुषु, अनु०।

असंलोय– पुं० *[असंलोक]*
अप्रकाशे, आचा०।
अनापातेऽसंलोके स्थण्डिले व्युत्सृजेत्। असंलोकं गत्वो चारं प्रस्रवणं वा कुर्यात्। आचा० २ श्रु० १० अ०।

असंवरं– पुं० *[असंवर]*
आश्रवे, ठा०।
'पंचविहे असंवरे पन्नत्ते। तं जहा– सोइंदियअसंवरे० जाव फासिदियअसंवरे'। ठा० ५ ठा० २ उ०।
'छव्विहे असंवरे पन्नत्ते। तं जहा–सोइंदियअसंवरे० जाव फासिंदियअसंवरे णोइंदियअसंवरे'। ठा० ६ ठा०।
'अट्ठविहे असंवरे पन्नत्ते–तं जहा सोइंदियअसंवरे० जाव कायअसंवरे'। ठा० ८ ठा०।
'दसविहे असंवरे पण्णते। तं जहा– सोइंदियअसंवरे० जाव सुइकुसग्गअसंवरे'। ठा० १० ठा०।

असंवलिय- त्रि० *[असंवलित]*
अवर्धिते, तं०।

असंविग्ग- त्रि० *[असंविग्न]*
न संविग्नोऽसंविग्नः। पार्श्वस्थादौ, निसि० १ उ०।

असंविभाग- पुं० *[असंविभाग]*
संविभागाभावे, दश० ९ अ०।

असंविभागि- पुं० *[असंविभागिन्]*
संविभजति आनीताहारमन्येभ्यः साधुभ्यः प्रापयतीत्येवंशीलः संविभागी, न संविभागी असंविभागी। आहारेण स्वकीयमेव उदरं बिभर्ति इत्यर्थः। अन्यस्मै न ददाति। उत्त० ३ ३अ०।
आचार्यग्लानादीनामेषणागुणविशुद्धिलब्धमविभजमाने, पण्हा० ३ अ०।

यत्र क्वचन लाभेऽसंविभागवति, 'असंविभागी न हु तस्स मोक्खो'। दश० ९ अ०।

असंवुड- त्रि० *[असंवृत]*

इन्द्रियनोइन्द्रियैरसंयते, सूय० १ श्रु० १ अ० ३ उ०।

हिंसादिस्थानेभ्यो निवृत्ते असंयतेन्द्रिये,सूय० १ श्रु० २अ० १ उ० अनिरुद्धाश्रवद्वारे, भग० १ श० १ उ०।

प्रमत्ते, भग० ७श० २उ०।

असंसइय- त्रि० *[असंशयित]*

निःसंशयिते, सूय० २ श्रु० २ अ०।

असंसट्ठ- त्रि० *[असंसृष्ट]*

अन्यदीयपिण्डैः सहाऽमीलिते, बुह० २ उ०।

अखरण्टिते, उव०।

असंसट्ठचरय- पुं० *[असंसृष्टचरक]*

असंसृष्टेन हस्तादिना दीयमानस्य ग्राहके, उव०।

असंसट्ठा- स्त्री० *[असंसृष्टा]*

असंसृष्टेन हस्तेनाऽसंसृष्टेन च पात्रकेण (सावशेषं द्रव्यं) भिक्षां गृह्णतः साधोः प्रथमायां पिण्डैषणायाम्, । ठा०। आव०चू०। निसि०। आव०। आचा०। सूय०।

असंसत्त- त्रि० *[असंसक्त]*

असंमिलिते, उत्त० २ अ०। विशे०।

अप्रतिबद्धे, दश० ८ अ०।

असंबद्धे, उत्त० ३ अ०।

असंसय- न० *[असंशय]*

निःसंदेहे, बुह० १ उ०।

असंसार- पुं० *[असंसार]*

न संसारोऽसंसारः। संसारप्रतिपक्षभूते मोक्षे, जीवा०१ प्रति०।

असंसारसमावण्ण- पुं० *[असंसारसमापन्न]*

न संसारोऽसंसारो मोक्षस्तं समापन्नः असंसारसमापन्नः। मुक्ते, पन्न० १ पद०।

सिद्धे, ठा०२ ठा०१ उ०। जीवा०।

असक्कय- त्रि० *[असंस्कृत]*

न विद्यते संस्कृतं संस्कारो यस्य सोऽसंस्कृतः। अविद्यमान-संस्कारे, पण्हा० १ अ०।

असक्कयमसक्कय- त्रि० *[असंस्कृतासंस्कृत]*

मकारोऽत्रालाक्षणिकः । अत्यन्तमसंस्कृते, पण्हा० ४ अ०।

असगडा- स्त्री० *[अशकटा]*

शकटैरुत्पथं नीतत्वात्स्वनामख्याते आभीरकन्यारत्ने, । दश० ३अ० ।

असच्च- न० *[असत्य]*

सत्यविपरीते, नास्ति जीव एकान्तसद्रूपो वेत्यादिकुविकल्पन-परे, । उत्त०।

अलीके, पण्हा० २ अ० ।

असत्यं च महत्तमं पातकं यतो योगशास्त्रान्तरश्लोके 'एकत्राऽसत्यजं पापं, पापं निःशेषमन्यतः। द्वयोस्तुलाविधृतयोरा-द्यमेवातिरिच्यते'।। पण्हा०। आव०चू०।

सद्भ्योऽहितः। पण्हा० ३०।

असच्चरुइ- पुं० *[असत्यरुचि]*

असत्ये मृषाभाषणे, असंयमे वा रुचिर्यस्याऽसावसत्यरुचिः।

असत्यं रोचयमाने, वव० ३ उ०।

असच्चसंधत्तण- न० *[असत्यसंधत्व]*

असत्यमलीकं संदधाति करोतीति असत्यसन्धः, तद्भावोऽ-सत्यसन्धत्वम्। षड्विंशे गौणालीके, पण्हा० २ अ०।

असच्चामोसा- स्त्री० *[असत्यामृषा]*

'जं णेव सच्चं, णेव मोसं, णेव सच्चमोसं–असच्चामोसं णाम, तं चउत्थं भासज्जातं' चतुर्थी भाषायोच्यमाना न सत्या, नापि मृषा, नापि असत्यामृषा आमन्त्रणाऽऽज्ञापनादिका साऽत्रा-सत्यामृषेति। आचा० २ श्रु० ४ अ० १ उ०।

असज्ज- त्रि० *[असज्जत्]*

सङ्गमकुर्वति, 'असज्जमित्थीसु वएज्ज पूयणं'। आचा० १ श्रु० ५ अ० ४ उ०।

असज्जमाण- त्रि० *[असज्जत्]*

सङ्गमकुर्वति, उत्त० १४ अ०।

'असज्जमाणो य परिव्वएज्जा' असज्जमानःसङ्गमकुर्वन् गृह-पुत्रकलत्रादिषु परिव्रजेदुद्युक्तविहारी। सूय० १ श्रु० १ अ०।

असज्झय- त्रि० *[असाध्य]*

अशक्ये, पिंड०।

अनिवर्त्तनीयस्वभावे, आव०म०।

असज्झाइयं– अस्वाध्यायिकम्,

अशोभन आध्याय एव, रुधिरादिकारणे कार्योपचारात् । । आव० ।

असज्झाइयणिज्जुत्ति- स्त्री० *[अस्वाध्यायिकनिर्युक्ति]*

अस्वाध्यायिकप्रतिपादकाऽऽवश्यकान्तर्गतप्रतिक्रमणाध्ययन-मध्यगते भद्रबाहुस्वामिकृते निर्युक्तिग्रन्थे, आव०।

असढ- पुं० *[अशठ]*

शठभावरहिते, ओह०।

रागद्वेषरहिते कालिकाचार्यादिवत्प्रमाणस्थे, बुह० ३उ०।

अमायाविनि, जीत०।

सरलात्मनि, जीत०। आव०म०।

इन्द्रियविषयनिग्रहकारिणि, निसि० १० उ०।

असढकरण– पुं०*[अशठकरण]*

मायामदविप्रयुक्ता भूत्वा यथोक्त विहितानुष्ठानकारके, बुह०६उ०।

'असढकरणो नाम सव्वत्थादानतो अप्पाणं मायाए ठाति असढो होऊणं कसिणं करेति'। निसि० २०उ०।

असढभाव- पुं०*[अशठभाव]*

अमायाविनि, वव० ४उ०।

शुद्धचित्ते, आव० ६ अ०।

स्ववीर्य प्रति मान्द्यं कुर्वाणे, निसि० २०उ०।

असण- न०*[अशन]* ।

भोजने, निसि० ११ उ० । ठा०। सूय०।

एवं लोके, लोकोत्तरिके तु आशु क्षुधां शमयति इति 'खीर-लयादि फलाणि वा'। आव०चू० ६अ०।

ओदनाभिक्ते, आचा०। आव०। उत्त०।

नीलवर्णे बीजकाभिधाने वृक्षविशेषे, आचा० २ श्रु० १ अ०। पन्न०। रा०।

असणग- पुं०*[अशनक]*

बीजकाभिधाने वनस्पतिभेदे, उव०।

असणदाण- न०*[अशनदान]*

अश्यत इत्यशनमोदनादि, तस्य दानमशनदानम्। तस्मिन्नशन-दाने अशनशब्दः पानाद्युपलक्षणार्थः। आहारदाने। आव०।

असणि- पुं०*[अशनि]*

आकाशे पतत्यग्निमये कणे, पन्न०१ पद०।

विशेषे, सूर०२० पाहु०। तं०।

असणिमेह- पुं०*[अशनिमेघ]*

करकादिनिपातवति पर्वतादिदारणसमर्थजलत्वेन वा वज्रमेघे, भग० ७श० ६उ०।

असणी- स्त्री०*[अशनी]*

बलेः सोमस्य महाराजस्याग्रमहिष्याम्,भग०१०श०५उ० ।ठा०

असण्णि- पुं०*[असंज्ञिन्]*

'णेरइया दुविहा पन्नत्ता। तं जहा–सण्णि चेव, असण्णि चेव। एवं पंचिंदिया सव्वे, विगलिंदियवज्जा० जाव वेमाणिया'। ठा०२ ठा०२ उ० ।नं०।

असण्णि दुविहा–अणागाढमिच्छदिट्ठी, आगाढमिच्छदिट्ठी य। निसि० ५ उ०।

असणिआउय- न०*[असंज्ञयायुष्]*

असंज्ञिना सता बद्धे परभवप्रायोग्ये आयुषि,भग०१ श०२ उ०

असण्णिभूय- पुं०*[असंज्ञिभूत]*

मिथ्यादृष्टौ, भग० १ श० २ उ०।

असण्णिसुय- न०*[असंज्ञिश्रुत]*

मिथ्यादृष्टिश्रुते, तच्च कालिकोपदेशेन हेतूपदेशेन दृष्टिवादो-पदेशेन च त्रिविधम्। नं०। आव०चू०।

असण्णिहिसंचय- पुं०*[असंनिधिसंचय]*

न विद्यते संनिद्येः पर्युषितखाद्यादेः सञ्चयो धारणं येषां ते तथा।संनिधिशून्ये युगलिकमनुष्ये,जंबू०२वक्ष० ।तं०। जीवा०

असती- स्त्री०*[असती]*

असंप्राप्तौ, निसि० १२ उ०।

'पमाएण वा असती चुक्कखलिएण वा'। महा० ५ अ०।

असत्त- त्रि०*[असक्त]*

अपाकृतमदनतया समतृणमणिलेष्टुकाञ्चने समतापन्ने, आचा०

'जे असता पावेहि कम्मेहिं' ये अपाकृतमदनतया समतृण-मणिलेष्टुकाञ्चनाः समतापन्नाः पापेषु कर्मस्वसक्ताः पापोपादा-नानुष्ठानाऽरताः। आचा०१ श्रु० ५ अ० २ उ०।

असत्त- न० *[असत्त्व]*

नास्तित्वे, ठा०।

पररूपेणाविद्यमानत्वे, नं०।

असत्थ- न०*[अशस्त्र]*

निरवद्यानुष्ठानरूपे संयमे,

'से असत्थस्स खेयण्णे, जे असत्थस्स खेयण्णे से पज्जवजातस्स खेयण्णे'। आचा० १ श्रु० ३ अ० १ उ०।

असत्थपरिणय- त्रि०*[अशस्त्रपरिणत]*

अशस्त्रोपहते, आचा० २श्रु० १ अ० ८उ०।

असद्द- पुं०*[अशब्द]*

अर्द्धदिग्व्याप्यसाधुवादे, गच्छा०२ अधि०। सम०।

शब्दवर्जिते, बुह० ३ उ०।

असद्दहंत- त्रि०*[अश्रद्दधत्]*

श्रद्धामकुर्वति, 'भरुअच्छे वाणिओ असद्दहंतो उज्जेणिए'। बुह० ३ उ०।

'एक्को देवो असद्दहंतो'। निसि० १ उ०।

असप्पलावि- त्रि०*[असत्प्रलापिन्]*

असद्भावप्रलापिनि, निसि० १९ उ०।

असबल- पुं०*[अशबल]*

मालिन्यमात्ररहिते, पण्हा०१ अ०

शबलस्थानदूरवर्त्तिनि, आतु०।

निरतिचारे, ठा० ५ ठा० ३ उ०।

अतिचारपङ्काभावात्। एकान्तविशुद्धचरणे,भग०२५श०७ उ०

असबलायार- पुं० *[अशबलाचार]*
विशुद्धाचारे, अशबलः सितासिवर्णोपेतबलीवर्द इवाऽकर्बुर आचारो विनयशिक्षाभाषागोचरादिको यस्य सोऽशबलाचारः। वव० ३ उ०।

असब्भ- त्रि० *[असभ्य]*
सभोपवेशनाऽयोग्ये खले, उव०। आव०। ठा०।
अशोभने असद्भावप्ररूपवेकऽसभ्ये, यथा–श्यामाकतण्डुल मात्रोऽयमात्मा, इतिवदन्तः पण्डिताः। निसि० १९ उ०।

असब्भवयण- त्रि० *[असभ्यवचन]*
खरकर्कशादिके दुर्वचने, असब्भवयणेहि य कलुणा विवन्नत्था। दश० ८अ० २ उ०।

असब्भाव- त्रि० *[असद्भाव]*
अविद्यमानार्थे, उव०। पण्हा०। नाया०।
अतथ्यभावे, आव० ५अ०।
सद्भावस्याभावे, पिंड०।
अविद्यमानाः सन्तःपरमार्थसन्तः, भावा जीवादयोऽभिधेयभूता यस्मिन् तदसद्भावम्। सर्वव्याप्यादिरूपात्मादिप्रतिपादके कुप्रवचने, उत्त० ३ अ०।

असब्भावठ्ठवणा- स्त्री० *[असद्भावस्थापना]*
अक्षादिषु मुन्याकारवत्यां स्थापनायाम्, साध्वाद्याकारस्य तत्राऽसद्भावात्। अनु०।
असद्भावस्थापना, असद्भावकल्पना। जीवा०
एक एवाक्षः पिण्डकल्पनया बुद्ध्या कल्प्यते तत्। ओघ०

असब्भावपठ्ठवणा- स्त्री० *[असद्भावप्रस्थापना]*
असद्भूतार्थ कल्पनायाम्, भग० ११ श० १० उ०। जीवा०।

असब्भावुब्भावणा- स्त्री० *[असद्भावोद्भावना]*
अविद्यमानार्थानामुत्प्रेक्षणे, उव०।
यथाऽस्यात्मा सर्वगतः, श्यामाक तण्डुलमात्रो वेत्यादि। दश०४ अ०।
अचौरेऽपि चौरोऽयमित्यादि वा। भग० ५ श० ६ उ०।

असब्भूय- न० *[असद्भूय]*
न सद्भूतमसद्भूतम्। अनृते, आव०४ अ०।

असमंजस- त्रि० *[असमञ्जस]*
अघटमानके, 'असमंजसं केइ जंपंति'। आचा०।

असमण- पुं० *[अश्रमण]*
श्रामण्यादविच्युते, गंतुं ताय पुणो गच्छे, ण य तेणासमणो सिया। सूय० १ श्रु० ३ अ० २ उ०।

असमणपाउग्ग- त्रि० *[अश्रमणप्रायोग्य]*
साधूनामनाचरणीये, आव० ।

असमणुन्न- त्रि० *[असमनोज्ञ]*
अनिष्टे, ठा० ४ ठा० १ उ०।
शाक्यादौ, आचा०१ श्रु०८ अ०१ उ०।
त्रिषष्ट्यधिके प्राज्ञकशतत्रये, आचा० १ श्रु० ८ अ० १ उ०।
असमनोज्ञेभ्यस्तु दानग्रहणं प्रति सर्वनिषेध इति। आचा० १ श्रु० ८ अ० २ उ०।
असमनोज्ञाः, असाम्भोगिकाः। ओघ० ५४।

असमणुण्णाय- त्रि० *[असमनुज्ञात]*
'यदि भवान् कस्मैचिद् ददाति तदा ददातु' इत्येवमननुज्ञाते, आचा०२ श्रु०१ अ०८ उ०।
'असमणुण्णायंतस्स अदेंतस्स'। निसि० १ उ०।

असमत्त- त्रि० *[असमाप्त]*
अपूर्णो, निसि० २उ०।
असमाप्तकल्पे, वव०४ उ०।

असमत्तदंसि(ण)- पुं० *[असम्यक्त्वदर्शिन्]*
न सम्यगसम्यक्, तस्य भावोऽसम्यत्त्वम्, तद् द्रष्टुं शीलमस्य स तथा। मिथ्यादृष्टौघ, सूय० १ श्रु०८ अ०।

असमत्थ- त्रि० *[असमर्थ]* अशक्ते, पंच० व०१ द्वार।
भ्रूक्षेपमात्रभीरौ, सूय०१ श्रु०४ अ०१ उ०।

असरिसवेसग्गहण- न० *[असदृशवेषग्रहण]*
स्वयमार्यः सन् अनार्यवेषं करोति, पुरुषो वा स्वरूपमन्तर्हितः सन् स्त्रीरूपं विदधातीत्यादि। तदेतदसदृशवेषग्रहणम्। बुह० १ उ०।

असमवाइकारण- न० *[असमवायिकारण]*
यथातन्तुसंयोगाः कारणरूपद्रव्यान्तरस्य दूरवर्तित्वादसमवायिनः, त एव कारणमसमवायिकारणम्।आव०म०।आव०चू०

असमाण- पुं० *[असमान]*
न विद्यते समानो यस्य सोऽसमानः। गृह स्थान्यतीर्थिकेभ्यः सर्वोत्कृष्टे, 'असमाणो चरे भिक्खू'। उत्त०।
न विद्यते समानोऽस्य गृहिष्वाश्रयामूर्च्छितत्वेनाऽन्यतीर्थिकेषु वा नियतविहारादिनाऽनन्यसमानोऽसदृशः। यद्वा–समानः साहङ्कारो, न तथेत्यसमानः। अथवा अ'समाणो त्ति' प्राकृतत्वादसन्निव सन् यत्राऽऽस्ते। तत्राऽप्यसन्निहित इति। हृदयसन्निहितो हि सर्वः स्वाश्रयस्योदन्तमावहति, अयं तु न तथेति, एवंविधः स चरेद्, अप्रतिबद्धविहारितया विहरेद्, भिक्षुर्यतिः। उत्त० ३ अ०।

असमारंभ- पुं० *[असमारम्भ]*
समारम्भाऽभावे, सत्तविहे असमारंभे पन्नत्ते। तं जहा–पुढविकाइयअसमारम्भे० जाव अजीवकायअसमारंभे। ठा० ७ठा०

असमारंभमाण- त्रि० *[असमारम्भमाण]*
अव्यापादयति, ठा० ६ ठा०।

असमाहड- त्रि० *[असमाहृत]*
अशुद्धे 'वितिगिच्छसमावण्णेणं अप्पाणेणं असमाहडाए लेस्साए' अशुद्ध्या लेश्ययोद्गमादि दोषदुष्टमिदमित्येवं चित्त-विप्लुत्या। आचा० २ श्रु० १ अ० ३ उ०।

असमाहडसुद्धलेस्स- त्रि० *[असमाहृतशुद्धलेश्य]*
असमाहृताऽनङ्गीकृता शुद्धा शोभना लेश्या येन स तथा। आर्त्तध्यानोपहततयाऽशोभनलेश्ये, सूय०२ श्रु० ३ अ०।

असमाहि- पुं० *[असमाधि]*
अपध्याने, सूय०१ श्रु०२ अ०२ उ०।
समाधानं समाधिः स्वास्थ्यम, न समाधिरसमाधिः। अस्वा-स्थ्यनिबन्धनायां कायादिचेष्टायाम्, आव०म०। ठा०।
दसविहा असमाही पन्नत्ता। पाणाइवाए० जाव परिग्गहेईरिया असमिइ० जाव उच्चारपासवणखेलसिङ्घाणगपारिट्ठावणिया असमिई। ज्ञानादिभावप्रतिषेधे अप्रशस्ते भावे, ठा०१० ठा०।

असमाहिकर– त्रि० *[असमाधिकर]*
अमाधिकरणशीलोऽसमाधिकरः। आव०म०।
चित्ताऽस्वाथ्यकर्त्तरि, पण्हा० ३ अ० आव०चू०।
असमाधिमरणे च, वव० ४ उ०।

असमाहिट्ठाण- न० *[असमाधिस्थान]*
असमाधिर्ज्ञानादिभावप्रतिषेधः, अप्रशस्तो भाव इत्यर्थः। तस्य स्थानानि पदानि असमाधिस्थानानि। ठा० १० उ०।
चित्ताऽस्वास्थ्यस्याश्रयेषु, पण्हा० ५ अ०
यैर्हि आसेवितैरात्मपरोभयानामिह परत्रोभयत्र वाऽसमाधिः उत्पद्यते। ठा० १० ठा०।

असमाहिमरण– न० *[असमाधिमरण]*
बालमरणे, आतु०।

असमाहिमरणज्झाण– न० *[असमाधिमरणध्यान]*
'असमाधिना एष म्रियताम्' इति चिन्तनमसमाधिमरणध्यानम् स्कन्दकाचार्यं प्रतिक्षुण्णं प्रथमं, यत्रे पीलयतोऽभव्यपालक-स्येव दुर्ध्याने, आतु०।

असमाहिय– त्रि० *[असमाहित]*
अशोभने बीभत्से दृष्टे च। सूय० १ श्रु० ३ अ०१ उ०।
सत्साधुप्रद्वेषित्वात् शुभाध्यवसायरहिते, सूय०१श्रु०३अ० ३उ०
मोक्षमार्गाख्याद् भावसमाघेरसंवृततया दूरेण वर्तमाने, सूय० १ श्रु० ११ अ०।

असमिक्खियकारि– त्रि० *[असमीक्षितकारिन्]*
अनालोचितकारिणि, दश०६ अ०।

असमिक्खियप्पलावि– पुं० *[असमीक्षिप्रलापिन्]*
अपर्यालोचितानर्थकवादिनि, पण्हा०२ अ०।
'अणूहितं पुव्वावरं इहपरलोगगुणदोसं वा जो सहसा भणइ, सो असमिक्खियप्पलावी'। निसि० ८ उ०।
बुद्धीए अणूहियं पुव्वावरं इहपरलो–यगुणद्दोसं वा जो सहसा भणइ। निसि० ।

असमिक्खियभासि– पुं० *[असमीक्षितभाषिन्]*
अपर्यालोचितवक्तरि, पण्हा०२ अ०।

असमिय– पुं० *[असमित]*
ईर्यादिषु समितिषु अनुपयुक्ते, कल्प० ।
'एसो समिओ भणिओ, अण्णो पुण असमिओ इमो होइ। सो काइयभोमादी, एक्केक्कं नवरि पडिलेहे, ।। नव तिन्नि तिन्नि पेहे, वेति किमत्थं निविट्ठाहो। 'आव० ४ अ०।

असमिय –त्रि० *[असम्यच्]*
असङ्गते, आचा०।
असमियं ति मण्णमाणस्स एगदा समिया होइ, समियं तिमण्णमाणस्स एगदा असमिया होइ।
कस्यचिन्मिथ्यात्वलेश्यानुविद्धस्य–कथं पौद्गलिकः शब्दः ? इत्यादिकमसम्यगिति मन्यमानस्यैकदेति मिथ्यात्वपरमाणू–पशमतया शङ्काविचिकित्साऽऽद्यभावे गुर्वाद्युपदेशतः सम्य-गिति भवति। आचा० १ श्रु०५ अ०५ उ०।

असमोहय– त्रि० *[असमवहत]*
दण्डापुरते, अकृतसमुद्घाते च। भग० १९ श० ३ उ०।

असम्मत्त– न० *[असम्यत्त्व]*
दर्शनादुद्वेगे, आव० ४अ०।

असम्मत्तपरीसह– पुं० *[अससम्यत्त्वपरीषह]*
असम्यत्त्वसहनकारिणि, सर्वपापस्थानेभ्यो विरतः प्रकृष्टतपो-ऽनुष्ठायी निस्सङ्गश्चाऽहं, तथाऽपि धर्माधर्मात्मदेवनारकादिभावं नेक्षे, अतो मृषा समस्तमेतदिति असम्यत्त्वपरीषहः।
तत्रैवमालोच्यते–धर्माधर्मौ पुण्यपापलक्षणौ यदि कर्मरूपौ पुद्गलात्मकौ, ततस्तयोः कार्यदर्शनादनुमानसमाधिगम्यत्वम्। अथ क्षमाक्रोधादिकौ धर्माऽधर्मौ, ततः स्वानुभवत्वादात्म-परिणामरूपत्वात्प्रत्यक्षविरोधः। देवास्त्वत्यन्तसुखासक्तत्वात् मनुष्यलोके च कार्याभावादमनुष्यभावाच्च न दर्शनगोचर-मायान्ति। नारकास्तु तीव्रवेदनार्ताः पूर्वकृतकर्मोदयनिगडब-न्धनवशीकृतत्वादस्वतन्त्राः कथमायान्तीत्येवमालोचयतोऽ–सम्यकत्वपरीषहजयो भवति। आव० ४ अ०।

असयं– अव्य० *[अस्वयम्]*
परत इत्यर्थे, भग० ९ श० ३२ उ०।

असरण– त्रि० *[अशरण]*
अत्राणे, ठा० ४ ठा० १ उ०।
स्वार्थ प्रापकवर्जिते, पण्हा०१ अ०।
शरणरहितः, अर्थप्रापकाभावात्। पण्हा०
शरणमनालम्बमाने, आचा०।
शरणं गृहं, नाऽत्र शरणमस्तीति अशरणः। संयमे, सोगे अदक्खू एताइं सोउलाइं गच्छति णायपुत्ते असरणाए। आचा० १ श्रु० ८अ० १ उ०।
शरणमनालम्बमानोऽदीनमनस्कः। आचा०।

असरणाणुप्पेहा– स्त्री० *[अशरणाऽनुप्रेक्षा]*
जन्मजरामरणभयैरभिद्रुते व्याधिवेदनाग्रस्ते। जिनवरवचनात् अन्यत्र, नाऽस्ति शरणं क्वचिल्लोके।। इत्येवमशरणस्य (अत्राणस्य) अनुप्रेक्षायाम्, ठा० ४ ठा० १ उ०।

असरिस– त्रि० *[असदृश]*
विसदृशे,'असरिसजणउल्लावा न हु सहियव्वा' ।आव०४ अ०

असरीर– त्रि० *[अशरीर]*
अविद्यमानशरीरेऽ-शरीरः। औदारिकादि-पञ्चविध-शरीररहिते, आव०म०।
सिद्धे, 'असरीरा जीवघणा दंसणनाणोवउत्ता'। उव०। ठा०।

असरीरपडिबद्ध– त्रि० *[अशरीरप्रतिबद्ध]*
त्यक्तसर्वशरीरे, भग० १८ श० ३ उ०।

असलाहा– त्रि० *[अश्लाघा]*
अकीर्तिसाधने असाधुवादे, गच्छा० २ अधि०।

असलिलप्पलाव– पुं० *[असलिलप्लाव]*
अजलप्लावे, जलं विना रेल्लिरित्यर्थः। तं०।

असलिलप्पवाह– पुं० *[असलिलप्रवाह]*
अजलप्रवाहे, तं०।

असव्वण्णु– त्रि० *[असर्वज्ञ]*
छद्मस्थे अर्वाग्दर्शिनि, 'सर्वज्ञोऽसाविति ह्येतत्, तत्कालेऽपि बुभुत्सुभिः। तज्ज्ञानज्ञेयविज्ञानरहितैर्गम्यते कथम् ?' सूय० १ श्रु० १ अ० २ उ०।

असव्वय– न० *[असद्व्रत]*
असत्ये, 'मिच्छ त्ति वा, वितह त्ति वा, असच्चं ति वा, असव्वयं ति वा, अकरणीयं ति वा एगट्ठा' ।आव०चू० १ अ०।

असव्वासि – त्रि० *[असर्वाशिन्]*
अल्पभोजिनि, वव०१ उ०।

असह– त्रि० *[असह]*
असमर्थे, वव० १ उ०। जीत०।

असहाय– त्रि० *[असहाय]*
एकाकिनि, बुह० ४ उ०। आव० म०।
अविद्यमानसहाये, यः कुतीर्थिकप्रेरितोऽपि सम्यक्त्वादविचलनं प्रति परसाहाय्यमनपेक्षमाणस्तस्मिन्, दशा० १० अ०। उव०।

असहिज्ज– त्रि० *[असाहाय्य]*
न विद्यते साहाय्योऽस्य। साहाय्यमनपेक्षमाणे, उपा०१ अ०।

असहीण– त्रि० *[अस्वाधीन]*
अस्ववशे, 'असहीणेहिं सारहीचाउरंगेहि'। दश० ८अ०।

असहु– त्रि० *[असह]*
चरणकरणे अशक्ते, पंच० भा०।
सुकुमारे राजपुत्रादौ प्रव्रजिते, ठा० ३ ठा० ३ उ०।
असमर्थे, ओह०।
ग्लाने, निसि० १ उ०।

असहिष्णु– त्रि०
राजादिदीक्षिते सुकुमारपादे, बुह० ३ उ०।

असहुवग्ग– पुं० *[असहवर्ग]*
असमर्थे राजपुत्रादौ,। पंच० चू०।

असहेज्ज– पुं० *[असाहाय्य]*
अविद्यमानं साहाय्यं परसाहायिकमत्यन्तसमर्थत्वाद् येषां तेऽसाहाय्याः। आपद्यपि देवादिसाहाय्यकानपेक्षेषु स्वयं कृतं कर्म स्वयमेव भोक्तव्यमित्यदीनमनोवृत्तिषु, भग०२श०५ उ०।
ये पाखण्डिभिः प्रारब्धाः सम्यक्त्वाद् विचलनं प्रति, किन्तु न परसाहायिकमपेक्षन्ते स्वयमेव तत्प्रतीघातसमर्थत्वाज्जिनशास-नात्यन्तभावितत्वात् तेषु तथाविधेषु श्रावकेषु,भग०२श०५उ०

असागारिय– त्रि० *[असागारिक]*
सागारिकसंपातरहिते प्रदेशादौ, वव० ३ उ०।
गृहस्थेनादृश्यमाने, निसि० १ उ०।

असाय– न० *[असात]*
दुःखे, सूय० २ श्रु०१ अ० १५ उ०।
असुखे, आचा०१ श्रु०२ अ० ३ उ०। ठा०।
असातवेघकर्मणि, सविपाकजे, आचा०१ श्रु०४ अ०६ उ०।
मनःप्रतिकूले दुःखे, आचा० १ श्रु० ४ अ० २ उ०।
अप्रीत्युत्पादके, अनु०।
असातवेदनीयकर्मोदये, पण्हा० १ अ०।
'छव्विहे आसाए पन्नत्ते। तं जहा– सोइंदियअसाए० जाव नोइंदियअसाए'। ठा० ६ ठा०।
असातवेदनीये कर्मणि, उत्त० ३३ अ०।
असाताख्यवेदनीये वेदनीयकर्मभेदप्रभवायाम् ।पण्हा०१ अ०। दुःखरूपायां वेदनायाम्, स्त्री०। पन्न० ३४ पद०।

असायज्जण– न० *[अस्वादन]*
अननुमनने, वव० २ उ०।

असायण– पुं० *[आश्वायन]*
अश्वर्षिसन्ताने, जंबू० ७ वक्ष०।

असायबहुल– त्रि० *[असातबहुल]*
दुःखप्रचुरे, संथा०।
'भुज्जो असायबहुला मणुस्सा'। दशा० १ चू०।

असायवेयणिज्ज– न० *[असातवेदनीय]*
वेदनीयकर्मभेदे, ठा० ७ ठा०।

असार– त्रि० *[असार]*
साररहिते तं०।
'उग्गमुप्पायणासुद्धं, एसणादोसवज्जियं। साहारणं अयाणंतो, साहू होइ असारओ'। ओह०।

असारंभ– पुं० *[असारम्भ]*
प्राणिवधार्थमसंकल्पे, 'सत्तविहे असारंभे पन्नत्ते। तं जहा– पुढविकाइयअसारंभे० जाव अजीवकाइयअसारंभे।ठा० ७ ठा

असावज्ज– त्रि० *[असावद्य]*
अपापे, 'असावज्जमकक्कसं'। दश० ७ अ०।
'अहो जिणेहि असावज्जा, वित्ती साहूण देसिया'।दश० ५ अ०
चौर्यादिगर्हितकर्मानालम्बने प्रशस्तमनोविनयभेदे, ठा० ७ठा०
आयतनस्य प्रथमः पर्यायः। ओघ०।

असासय– त्रि० *[अशाश्वत]*
तेन तेन रूपेणोदकधारावच्छश्वद् भवतीति शाश्वतं ततोऽन्यद-शाश्वतम्। आचा० १ श्रु० ५ अ० २ उ०।
अशश्वद्भवनस्वभावे, रा०।
प्रतिक्षणं विशरणे, पण्हा० ५ अ०।
प्रतिक्षणमावीचीमरणेन मरणम्। आचा० ।
क्षणं क्षणं प्रति विनश्वरे, तं०। आव० म०। भग०। आचा०।
अपराऽपरपर्यायप्रापिते, ठा० १० ठा०। उत्त०।
स्वप्नेन्द्रजालसदृशे अनित्ये, सूय० १ श्रु० १ अ० ३ उ०।
संसारिणि, ठा० २ ठा० १ उ०।
'अशाश्वतानि स्थानानि, सर्वाणि दिवि चेह च। देवासुर– मनुष्याणामृद्धयश्च सुखानि च'। सूय० १ श्रु० ८ अ०।
जन्ममरणादिसहितत्वात् संसारिणि, ठा० ४ ठा० ४ उ०।
(भावप्राधान्येन तु) विनाशे, पश्न० ३ अ०।
अविद्यमानं शाश्वतमस्मिन्नित्यशाश्वतः संसारः। अशाश्वतं हि सकलमिह राज्यादि। उत्त० ८ अ०।

असाहीण– त्रि० *[अस्वाधीन]*
परायत्ते, आचा०१ श्रु०२ अ० १ उ०।

असाहु– त्रि० *[असाधु]*
अमङ्गले बुह० १ उ०।
अशोभने, सूय० १ श्रु० ५ अ० २ उ०।
असद्वृत्ते, सूय० २ श्रु० २ अ०।
अनर्थोदयहेतौ, सूय० १ श्रु० २ अ० २ उ०।
निर्वाणसाध-कयोगापेक्षया। दश० ७ अ०।
आजीविकादौ कुदर्शनिनि, निसि० ३ वर्ग।
असंयते, ठा० ७ ठा०।
षड्जीवनिकायवधाऽनिवृत्ते औद्देशिकादिभोजिनि अब्रह्मचा-रिणि , ठा० १० ठा०।
अविशिष्टकर्मकारिणि, सूय० १ श्रु० १२ अ०।
अपगतभावसाधुत्वः। उत्त०।

असाहुकम्म– न० *[असाधुकर्मन्]*
क्रूरकर्मणि, सूय० १ श्रु० ५ अ० १ उ०।
जन्मान्तरकृताऽशुभानुष्ठाने, सूय० १ श्रु० ५ अ० २ उ०।

असाहुदिट्ठि– पुं० *[असाधुदृष्टि]*
परतीर्थिकदृष्टौ, वव० ४ उ०।

असाहुधम्म– पुं० *[असाधुधर्म]*
वस्तुदानस्नानतर्पणादिके असंयतधर्मे, सूय० १ श्रु० १४ अ०।

असाहुया– स्त्री० *[असाधुता]*
कुगतिगमनादिकरूपायाम्, सूय० १ श्रु० ४ अ० २ उ०।
द्रोहस्वभावतायाम्, उत्त० ३ अ०।

असाहुवं– अव्य० *[असाधुवत्]*
असाधुमर्हति यत्प्रेक्षणं भ्रुकुटिभङ्गादियुक्तं तस्मिन्, असाधुना तुल्यं वर्तने, उत्त० ३ अ०।

असाहुया– कृ० *[असाधुत]*
द्रोहस्वभावता। उत्त० ११४।

असि–१ पुं० *[असि]*
खड्गे०। उपा० २ अ०। निसि० । जीवा०। रा०। वव०। विपा०। संथा०। उव०।
तलवारः। आव०।
'असिमोगगरसत्तिकुंतहत्था' असिमुद्गरशक्तिकुन्ता हस्ते येषां ते असिमुद्गरशक्तिकुन्तहस्ताः। जीवा० ३ प्रति०।
अस्युपलक्षिते सेवकपुरुषे, 'असिमषीकृषीवाणिज्यवर्जिताः 'तत्रासिनोपलक्षिताः सेवकाःपुरुषाः असंयमाः मष्युपलक्षिता लेखनजीविनः मषयः, कृषिरिति कृषिकर्मोपजीविनः, वाणिज्यमिति वणिग्जनोचितवाणिज्यकलोपजीविनः। तं०।
असिना यो देवो नारकान् छिनत्ति सोऽसिरेव। परमाधार्मिक-निकाये, भग० ३ श० ६ उ०।

असि–२ पुं० *[असि]*
असिनामानो नरकपाला अशुभकर्मो दयवर्तिनो नारकानेवं कदर्थयन्ति।तद्यथा–हस्तपादोरुबाहुशिरःपार्श्वादीन्यङ्गप्रत्यङ्गानि छिन्दन्ति प्रकामममत्यर्थं खण्डयन्ति, तुशब्दोऽपरदुःखोत्पादन विशेषणार्थ इति। सूय० १ श्रू० ५अ० १ उ०।

असिअ–१ त्रि० *[असित]*
कृष्णमशुभं च संसारानुबन्धित्वात्। आव०

असिअ–२ त्रि० *[असित]*
अबद्धः–तैः सार्धं संगमकुर्वत् भिक्षुः। आचा० ।

असिक्खग– त्रि० *[अशिक्षक]*
चरप्रव्रजिते, दश० १ अ०।

असिखुरधार– पुं० *[असिक्षुरधार]*
क्षुरस्येव धारा यस्य असेः। अतिच्छेदके खङ्गे, उपा०२ अ०।

असिखेडग– न० *[असिखेटक]*
असिना सह फलके, पण्हा० १ अ०।

असिचम्मपाय– न० *[असिचर्मपात्र]*
स्फुरके, भग०।
'असिचम्मपायं गहाय'। असिचर्मपात्रं स्फुरकः। अथवा– असिश्च खड्गः, चर्मपात्रं च स्फुरकः, खड्ग कोशको वा असिचर्मपात्रं, तद् गृहीत्वा। 'असिचम्मपायहत्थकिच्चगएणं अप्पणेणं ति' असिचर्मपात्रं हस्ते यस्य सतथा, कृत्यं संघादिप्रयोजनं गतः आश्रितः कृत्यगतः, ततः कर्मधारयः, अतस्तेन आत्मना। अथवा–असिचर्मपात्रं कृत्वा हस्ते कृतं येनाऽसौ असिचर्म-पात्रहस्त–कृत्वाकृतः, तेन। प्राकृतत्वाच्चैवं समासः। अथवा- असिचर्मपात्रस्य हस्तकृत्यं हस्तकरणं गतः प्राप्तोः यः स तथा, तेन। भग० ३ श० ५ उ०।

असिट्ठ– त्रि० *[अशिष्ट]*
अनाख्याते, निसि० २ उ०।
अकथिते, बुह० २ उ०। आव० म०।

असिणाण– त्रि० *[अस्नान]*
'असिणाणवियडभोई' अस्नानोऽरात्रिभोजी चेत्यर्थः। उपा० १ अ०। आचा०। दश०६अ०।

असिद्ध– पुं० *[असिद्ध]*
संसारिणि, नं०। जीवा०। ठा०। सूय०।

असिद्धिमग्ग- न० *[असिद्धिमार्ग]*
न विद्यते सिद्धेर्मोक्षस्य विशिष्टस्थानोपलक्षितस्य मार्गो यस्मिंस्तदसिद्धिमार्गम्। सिद्ध्यहेतौ, सूय० २ श्रु०२ अ०।

असिधारव्वयं- न० *[असिधाराव्रत]*
असिधारायां संचरणीयमित्येवं रूपे नियमे, नाया० १ अ०।

असिधाराग- न० *[असिधाराक]*
असेर्धारा यस्मिन् व्रते आक्रमणीयतया, तदसिधाराकम्। असिधारावदनाक्रमणीये, भग०।
'असिधारागं वयं चरिव्वयं' असेर्धारा यस्मिन् व्रते आक्रमणी–यतया तदसिधाराकं, व्रतं नियमः, चरितव्यमासेवितव्यम्, तदेतत्प्रवचनानुपालनं तद्वद् दुष्करमित्यर्थः।भग०९श०३३ उ०

असिधारागमण- न० *[असिधारागमन]*
खड्गधारायां चलने, उत्त० १६ अ०।

असिपंजर- न० *[असिपञ्जर]*
खड्गशक्तिपञ्जरे, पण्हा० २ अ०

असिपंजरगय- त्रि० *[असिपञ्जरगत]*
असिपञ्जरे शक्तिपञ्जरे गतः । खड्गशक्तिव्यग्रकररिपुपुरुष-वेष्टिते, पण्हा० २ अ०

असिपत्त-१ न० *[असिपत्र]*
असिः खड्गः, स एव पत्रम्। ठा० ४ ठा० ४ उ०।
असिः खड्गस्तस्य पत्रमसिपत्रम्। जीवा० ३ प्रति०।
अस्याकारपत्रे, भग० ३ श० ६ उ०।
खड्गे, नाया० १६ अ०। सम०।
असिः खड्गस्तदाकारपत्रवद्वनं विकुर्व्य यस्तत्समाश्रित नार-कानसिपत्रपातनेन तिलशश्छिनत्ति सोऽसिपत्रः। पुं०। सम० १५ सम०। भग०।

असिपत्त-२ न० *[असिपत्र]*
नवमे परमाऽधार्मिके। सूय० १ श्रु० ५ अ० १ उ०

असिप्पजीवि- पुं० *[अशिल्पजीविन्]*
न शिल्पजीवी अशिल्पजीवी। चित्रकरणादिविज्ञानेनाऽऽजीवि-कामकुर्वति, उत्त० १५ अ०।
'असिप्पजीवे अगिहे अमेत्ते'। उत्त० १५ अ०।

असिमसिसरिच्छ- त्रि० *[असिमषिसदृक्ष]*
करवालकज्जलतुल्ये, तं०।

असिय- त्रि० *[असित]*
कृष्णे, पण्हा० ३ अ०। आव० म०।
श्यामे, जंबू० १ वक्ष०।
अशुभे, विशे०।
अनवबद्धे मूर्च्छामकुर्वाणे पङ्काधारपङ्कजवत्तत्कर्मणा दिह्यमाने, सूय० १ श्रु० २ अ० १ उ०।
असङ्गं कुर्वति, आचा० १ श्रु० ५ अ० ४ उ०।

असियकेस- त्रि० *[असितकेश]*
असिताः कृष्णाः केशाः येषां ते असितकेशाः। कृष्णकेशे (युगलिके), जीवा० ३ प्रति०।

असियग- न० *[असितक]*
दात्रे, भग० १४ श० ७ उ० । आचा० ।
असियगिरि- पुं० *[असितगिरि]*
स्वनामख्याते पर्वते, 'सव्वाणि वि असियगिरिम्मि तावसा समं तत्थ गया' । आव०४ अ० । आव० चू० ।
असिरयण- न० *[असिरत्न]*
चक्रवर्त्तिनां रत्नोत्कृष्टे खड्गे, ठा०७ ठा० । सम० ।
असिलक्खण- न० *[असिलक्षण]*
खड्गलक्षणपरिज्ञाने, जंबू० ।
असिलक्षणप्रतिपादके शास्त्रे, सूय० १ श्रु० १ अ० १ उ० ।
असिलट्ठि- स्त्री० *[असियाष्टि]*
खड्गलतायाम्, विपा० १ श्रु० ३ अ० । नाया० । उव० ।
असिलाहा- स्त्री० *[अश्लाघा]*
असद्दोषोद्घट्टने, ठा०४ अ०१ उ० ।
असिलेसा- स्त्री० *[अश्लेषा]*
सर्पदेवताके नक्षत्रभेदे, ज्यो० ६ पाहु० । सूर० । चंद०
'असिलेसाणक्खत्ते छत्तारे पन्नत्ते' । ठा० ७ ठा० ।
असिलोग- पुं० *[अश्लोक]*
अकीर्तौ, सम०७ सम० ।
अयशसि, आव० ४ अ० ।
अप्रशंसायाम्, आव० १ अ० ।
अवर्णे, वव० ६ उ० ।
असिलोगभय- न० *[अश्लोकभय]*
अश्लोकोऽश्लाघाऽकीर्तिरित्यनर्थान्तरम् । स एव भयमश्लोकभयम् । अकीर्त्तिभये, यथा केनचिद्दानादिना श्लाघोपार्जिता, पश्चादपि तद्विनाशभीत्याऽकाम एव दानादौ प्रवर्त्तत इति । एवं हि क्रियमाणो महदयशो भवतीति तद्भयान्न प्रवर्त्तत इति । ठा० ७ ठा० । आव० । ठा० ।
असिव- न० *[अशिव]*
क्षुद्रदेवताकृतज्वराद्युपद्रवे, वव० २ उ० । ओह० ।
व्यन्तरकृते व्यसने, आव० ४ अ० । निसि० ।
मारौ, वव० ४ उ० ।
असिवण- न० *[असिवन]*
खड्गाकारपत्रवने, पण्हा० १ अ० ।
असिवप्पसमणी- स्त्री० *[अशिवप्रशमनी]*
कृष्णवासुदेवस्य भेर्याम्, 'सा तत्थ तालिज्जइ जत्थ छम्मासे सव्वरोगा पसमंति जो तं सद्दं सुणति ।' बुह० १ उ० ।
असिवाइखेत्त- न० *[अशिवादिक्षेत्र]*
अशिवादिप्रधानक्षेत्रे, । दश० १ अ० ।

असिवावण- न० *[अशिवापन]*
विनाशप्राप्तौ, वव० ७ उ० ।
असिह- पुं० *[अशिख]*
यः शिरसो मुण्डनमात्रं कारयति, न च रजोहरणदण्डकपात्रादिकं धारयति, तस्मिन् गृहस्थभेदे, वव० ४ उ० ।
असीइ- स्त्री० *[अशीति]*
विंशत्यूनशतसंख्यायाम्, पन्न० २ पद० । तं० ।
असीभरक- पुं० *[असीभरक]*
सीभरो नाम उल्लपन् परं लालया सिञ्चति, तत्प्रतिषेधादसीभरः । प्राकृतत्वात्स्वार्थिकप्रत्ययविधानादसीभरकः । लालया परमसिञ्चति, वव० ३ उ० ।
असीलया- स्त्री० *[अशीलता]*
चारित्रवर्जित्वे, पण्हा० २ अ० ।
अब्रह्मणः सप्तदशं नाम । पण्हा० ।
असीलमंत- त्रि० *[अशीलवत्]*
सावद्ययोगाविरते, अविरतमात्रे च । सूय० १ श्रु० ७ अ० ।
असुअ- त्रि० *[असुत]*
अपुत्रे, उत्त० २ अ० ।
असुइ- त्रि० *[अशुचि]*
अपवित्रे, आव० म० । पन्न० ।
अस्पृश्यत्वात् । नाया० ६ पद० ।
अशौचवति, उव० ।
विष्ठाऽसृक्कल्दप्रधाने, सूय० २ श्रु० २ उ० । दशा० ।
स्नानब्रह्मचर्यादिवर्जितत्वात्तथाविधे साधौ, भग० ७श० ६ उ०
स्नानब्रह्मचर्यादिवर्जिताः, अश्रुतयः, शास्त्रवर्जिताः । जम्बू० ।
सदाऽविशुद्धे, तं० ।
विष्ठायाम्, दश० । पिंड० ।
अमेध्ये, ठा० ९ ठा० । जीवा० ।
विगन्धं शरीरमलादि । जीवा० ।
जंणं अम्ह किंचि असुई भवति, तंणं उदएण य मिट्टआए अ पक्खालिअं सुई भवति, एवं खलु अम्ह चोक्खा चोक्खायारा सुइसुइसमायारा भवेत्ता अभिसेअ-जलपूआप्पाणो अविग्घेण सग्गं गमिस्सामो । उव० । रा० । तं० ।
'असुइविलीणवियवीभच्छादरिसणिज्जे' । अशुचिषु विलीनो मनसः कलिमलपरिणामहेतुः,विप्रनष्टं तदभिमुखतया प्राणिनां गतं नमनं यस्मिन् स तथा, बीभत्सया निन्दयाऽदर्शनीयो बीभत्सादर्शनीयः । ततो विशेषणसमासः । अशुचिविलीनविगतबीभत्सादर्शनीयः । जीवा० ३ प्रति० ।
आहाराद्यर्थमव्यवहारिणि, वव० ।

असुइ- त्रि० *[अश्रुति]*
शास्त्रवर्जिते, भग० ७ श० ६ उ०। पण्हा०।
अश्रुतयः, शास्त्रवर्जिताः। जम्बू०।
अमेध्यानि मूत्रपुरीषाणि।ठा०।

असुइकुणिम- न० *[अशुचिकुणिम]*
अपवित्रमांसे, तं०।

असुइजायकम्मकरण- न० *[अशुचिजातकर्मकरण]*
अशुचीनां जातकर्मणा करणे, भग० ११ श० ११ उ०। रा०।
नालच्छेदादिकरणे, कल्प० ५।

असुइट्ठाण- न० *[अशुचिस्थान]*
विट्प्रधाने स्थाने, आव० ३ अ०।

असुइबिल- न० *[अशुचिबिल]*
परमाऽपवित्रविवरे, तं०।

असुइय- त्रि० *[अशुचिक]*
अपवित्रस्वरूपे, तं०। नाया०। ठा०।
अमेध्ये मूत्रपुरीषादौ, ठा० १० ठा०।

असुइसंकिलिट्ठ- न० *[अशुचिसंक्लिष्ट]*
अमेध्येन दुष्ट, भग० ९ श० ३३ उ०।

असुइसमुप्पण्ण- त्रि० *[अशुचिसमुत्पन्न]*
अपवित्रोत्पन्ने, तं०।

असुइसामंत- न० *[अशुचिसामन्त]*
अमेध्यानां मूत्रपुरीषादीनां समीपे, ठा० १० ठा०।

असुज्झमाण- त्रि० *[अशुध्यत्]*
अनपगच्छति, 'असुज्झमाणे छेयविसेसा विसोहंति'। निसि०

असुद्ध- त्रि० *[अशुद्ध]*
सावद्ये, पण्हा० २ अ०।
अविशुद्धकारिणि, सूय० १ श्रु० ८ अ०।
'असुद्धपरिणामसंकिलिट्ठं भणंति'। अशुद्धपरिणामेन संक्लिष्टं संक्लेशवत्तत् तथा भणन्ति। पण्हा० १ अ०।

असुन्नकाल- न० *[अशून्यकालः]*
नारकभवानुगसंसारावस्थानकालस्य द्वितीयभेदः। भग०।

असुभ- त्रि० *[अशुभ]*
अशुभरसगन्धस्पर्शयुक्ते, जीवा० १ प्रति०।
अशुभकारिणि, सूय० १ श्रु०५ अ० १ उ०।
पापप्रकृतिरूपे कर्मणि, ठा० ४ ठा० ४ उ०। आव०।
अपुण्यबन्धे, ठा० ५ ठा० १ उ०।
अशर्मणे, दशा० ८ अ०।

असुभकम्मबहुल- त्रि० *[अशुभकर्मबहुल]*
कलुषकर्मप्रचुरे, पण्हा० १ अ०।

असुभणाम- न० *[अशुभनामन्]*
अशुभानुबन्धि नामकर्मभेदे, उत्त० ३३ अ०।
यदुदयात् नाभेरधस्तनाः अवयवा अशुभा भवन्ति। पन्न०।
अशुभनामकर्मणः प्रकृतयो मध्यमभेदविवक्षया चतुस्त्रिंशद्भेदा भवन्ति। तद्यथा–नरकगति १ तिर्यग्गति २ एकेन्द्रिय ३ द्वीन्द्रिय ४ त्रीन्द्रिय ५ चतुरिन्द्रियजाति ६ ऋषभनाराच ७ नाराच ८ अर्द्धनाराच ९ कीलिका १० सेवार्तकसंहनानि ११ न्यग्रोधम-ण्डलसंस्थान १२ सादि १३ वामन १४ कुब्ज १५ हुण्डक १६ अप्रशस्तवर्ण १७ अप्रशस्तगन्ध १८ अप्रशस्तरस १९ अप्रशस्त–स्पर्श २० नरकानुपूर्वी २१ तिर्यगानुपूर्वी २२ उपघात २३ अ–प्रशस्तविहायोगति २४ स्थावर २५ सूक्ष्म २६ साधारण २७ अपर्याप्त २८ अस्थिर २९ अशुभ ३० दुभर्ग ३१ दुःस्वर ३२ अनादेय ३३ अयशोऽकीर्त्ति ३४ रिति। उत्त० ३३ अ०।
अशुभमनादेयत्वादि। अपूज्ये च कर्मभेदे, ठा० २ ठा० ४ उ०

अशुभत्त- न० *[अशुभत्व]*
अमङ्गलतायाम्, भग० ६ श० ३उ०।

असुभदुक्खभागि- त्रि० *[अशुभदुःखभागिन्]*
अशुभानुबन्धि यद्दुःखं तद्भागिनः। पण्हा० १ अ०।
दुःखानुबन्धिदुःखभागिषु, भग० ७ श० ६ उ०।

असुभविवाग- न० *[अशुभविपाक]*
असातादित्वेनोदयवति कर्मणि, ठा० ४ ठा० ४ उ०।

असुभाणुप्पेहा- स्त्री० *[अशुभानुप्रेक्षा]*
संसाराऽशुभत्वानुचिन्तने, भग० २५ श० ७ उ०। गच्छा०।
'कोहो य माणो य अणिग्गहीया, माया या लोभो य पवड्ढमाणा। चत्तारि एते कसिणा कसाया, सिंचंति मूलाइ पुणब्भवस्स'। ठा० ४ ठा० १ उ०।

असुय- त्रि० *[अश्रुत]*
अनाकर्णिते, ठा० ८ ठा०। आचा०।
प्रवचनद्वारेणानुपलब्धे, भग०२ श०८ उ०।

असुयणिस्सिय- न० *[अश्रुतनिश्रित]*
सर्वथा शास्त्रसंस्पर्शरहितस्य तथातथाविधक्षयोपशमभावत एवमेव यथावस्थितवस्तुसंस्पर्शमतिज्ञानरूपे बुद्धिचतुष्के, नं०।

असुर- पुं० *[असुर]*
भवनपतिव्यन्तरलक्षणे देवभेदद्वये, ठा० ३ ठा० १ उ०।
पदैकदेशे पदसमुदायोपचारादसुरकुमारे, नं०।पण्हा०।भग०। उव०। आव० म०। सूय०। ठा०।
असुरस्थानोत्पन्नेषु नागकुमारादिषु, सूय० १ श्रु०१ अ० ३ उ०।
दानवे, अनु०।

असुरकुमार- पुं० *[असुरकुमार]*
असुराश्च ते नवयौवनतया कुमाराश्चेत्यसुरकुमाराः। ठा० १ ठा० १ उ०।
भवनपतिविशेषः, भवनपतिव्यन्तरा वा। ठा०।
भवनपतिभेदेषु, पन्न० १ पद०। ठा०
देवविशेषः। भग० १९७।

असुरदार- न० *[असुरद्वार]*
सिद्धायतनस्य द्वितीयं द्वारम्, सिद्धायतनानां दक्षिणद्वारेषु, यत्राऽसुरा वसन्ति। ठा० ४ ठा० २ उ०।

असुरसुर- त्रि० *[असुरसुर]*
सुरसुरेत्यनुकरणशब्दोऽयम्। भग० ७ श० १ उ०।
सुरसुरेत्येवंभूतशब्दवर्जिते, पण्हा० १ अ०

असुरिंद- पुं० *[असुरेन्द्र]*
चमरे, बलिनि च। सम०।

असुरिंदवज्जिय- त्रि० *[असुरेन्द्रवर्जित]*
चमरबलिवर्जिते, भग० १४ श० ९ उ०।

असुवण- न० *[अस्वपन]*
निद्राऽऽलस्यघाते, बुह० १ उ०।

असुविर- त्रि० *[अस्वापिन्]*
अनिद्रालौ, निसि० १० उ०।

असुह- न० *[असुख]*
दुःखे, ठा० ३ ठा० ३ उ०।

असूइय- त्रि० *[असूचित]*
व्यञ्जनादिरहिते, अकथयित्वा वा ददते भोजनादौ, दश० ५ अ० २ उ०।

असूण- त्रि० *[अशून]*
अबलवति, सूय० १ श्रु० ७ अ०।

असूया- स्त्री० *[असूचा]*
परस्य दोषप्रतिषेधेनात्मनस्ताद्दग्दोषभाषणे, 'अप्पणो दोसं भासति, ण परस्स, एसा असूया। यथा –'अम्हे मो धणहीणा, आसि आगारम्मि इड्ढिमं तुब्भे। एस असूया सूया, णवरं परवत्थुणिद्देसो'। निसि० १० उ०।

असूरिय- पुं० *[असूर्य]*
न विद्यते सूर्यो यस्मिन् सोऽसूर्यः। बहुलान्धकारे कुम्भी-पाकाकृतौ, सर्वस्मिन् वा नरकावासे, 'असूरियं नाम महा-भितावं, अधंतमं दुप्पतरं महंतं'। सूय० १ श्रु० ५अ० १ उ०।

असेज्जायर- पुं० *[अशय्यातर]*
वसतित्यागादिहेतुभिः शय्या तरत्वेनाव्यवहार्ये वसतिदातरि, निसि० २ उ०।

असेलेसिपडिवन्नग- पुं० *[अशैलेशीप्रतिपन्नक]*
शैलेशीनामाऽयोग्यवस्था, तां प्रतिपन्नाः शैलेशीप्रतिपन्नाः। तद्व्यतिरिक्ताः अशैलेशीप्रतिपन्नकाः। अयोग्यवस्थामनापन्ने सयोगिनि संसारिणि, पन्न० २२ पद०।

असेस- त्रि० *[अशेष]*
शेषरहिते कृत्स्ने, सूय० २ श्रु० ५ अ०।
सर्वस्मिन्, । आचा०।

असेहिय- न० *[असैद्धिक]*
सांसारिके, क्रियासिद्धौ अजाते आकस्मिके, सूय०।
सुखं सैद्धिकं–सिद्धौ मोक्षे भवं सैद्धिकं, यदि वा दुःखमसैद्धिकं सांसारिकम्। अथवा– सैद्धिकमसैद्धिकं च सुखम्। यथा– स्रक्चन्दनाङ्गनाद्युपभोगक्रियासिद्धौ भवं सैद्धिकम्, आन्तरं सुखमानन्दरूपमसैद्धिकम्। तथा– सैद्धिकमसैद्धिकम्, च दुःखम्। यथा कशाताडनाङ्कनादिक्रियासिद्धौ भवं सैद्धिकम्, ज्वरशिरोऽर्तिशूलादिरूपमङ्गोत्थमसैद्धिकं दुःखम्। सूय० १ श्रु० १ अ० २ उ०।

असोग-१ पुं० *[अशोक]*
कङ्केल्लीनामके एकास्थिकवृक्षभेदे,उव० ।पन्न० ।कल्प०। ठा०
अशोकादयः पञ्च वर्णा भवन्ति ततो विशेषणम्, 'किण्हासोएइ वा'। रा०। आचा०। अनु०।
मल्लिजिनस्य चैत्यवृक्षोऽशोकः। सम०।

असोग-२ पुं० *[अशोक]*
पुर्वभवे चतुर्थबलदेवजीवे, सम०।

असोग- ३ पुं० *[अशोक]*
चतुःसप्ततितमे महाग्रहे, 'दो असोगा'। ठा०२ ठा० ३ उ०। चंद०। सूर० । कल्प०।

असोग-४ पुं० *[अशोक]*
अशोकवनदेवे च, जीवा० ३ प्रति०।

असोग-५ पुं० *[अशोक]*
वीतशोके, त्रि०। वाच०।

असोगचंद- पुं० *[अशोकचन्द्र]*
श्रेणिकपुत्रे कूणिके, स च पितुः श्रेणिकस्य पूर्ववैरीति दास्या अशोकवाटिकायामुज्झित इत्यशोकचन्द्रनामाऽभवत्। आव० चू०४ अ०। आव०।
'राया तए असोगचंदए वेसालिं नगरिं गहेत्थि'। आव०म०। आव०चू०।

असोगजक्ख- पुं० *[अशोकयक्ष]*
विजयपुरे नगरे नन्दनवने उद्याने स्वनामख्याते यक्षे, विपा० २ श्रु० ३ अ०।

असोगलया- स्त्री० *[अशोकलता]*
तिर्यक्शाखाप्रसराभावाल्लताकृतिष्वशोकवृक्षेषु, जंबू०१वक्ष०

असोगवडिंसग- न० *[अशोकावतंसक]*
सौधर्मादिविमानानां पूर्वस्यां दिश्यवतंसके। रा०। पन्न०। जीवा०।

असोगवण- न० *[अशोकवन]*
अशोकप्रधाने वने, अनु०।

असोगवणिया- स्त्री० *[अशोकवनिका]*
अशोकप्रधाने लघुवने, आव०म०।
पुष्करिण्यां वनम्।ठा०।

असोगवरपायव- पुं० *[अशोकवरपादप]*
अत्युष्कृष्टे अशोकवृक्षे, 'ईसिं असोगवरपायवसमुवट्ठिया उ'। जीवा० ३ प्रति०। रा०।

असोगसिरि- पुं० *[अशोकश्री]*
चन्द्रगुप्तस्य पौत्रे बिन्दुसारस्यपुत्रे, पाटलिपुत्रे नगरे वीरमोक्ष-अनन्तरं चन्द्रगुप्तोबिन्दुसारोऽशोकश्रीः सम्प्रतिः, राजानश्चैते उत्तरोत्तरं समृद्धिभाजो महाराजा अभवन्। कल्प० ८ क्ष०। 'चंदगुत्तपपुत्तो उ, बिंदुसारस्स नत्तुओ। असोगसिरिणो पुत्तो, अंधो जायइ कागणिं'। विशे०। बुह०। निसि०।

असोगा- स्त्री० *[अशोका]*
धरणनागकुमारेन्द्रसत्ककालमहाराजस्याऽग्रमहिष्याम्, ठा० ४ ठा० १ उ०।
नलिनविजयक्षेत्रपुरीयुगले, नलिनो विजयश्च अशोका पूः। जंबू० ४ वक्ष०।

असोच्चा- अव्य० *[अश्रुत्वा]*
प्राकृतधर्मानुरागादेव धर्मफलादिप्रतिपादकवचनमनाकर्ण्येति अर्थे भग०।

असोम्मग्गहचरिय- न० *[असौम्यग्रहचरित]*
क्रूरग्रहचारे, पण्हा० २ अ०।

असोयणया- स्त्री० *[अशोचनता]*
शोकानुत्पादने, भग०।

असोहिट्ठाण- न० *[अशोधिस्थान]*
कुशीलसंसर्ग्याम्, ओह०।

अस्स- पुं० *[अश्व]*
घोटके, दश० १ अ०। तं०। पन्न०।
अश्विनी नक्षत्रदेवतायाम्, ज्यो० १५ पाहु०। सूर०।

अस्स- पुं० *[अस्व]*
न विद्यते स्वं द्रव्यमस्य सोऽयमस्वः। निर्ग्रन्थे, आचा० २ श्रु० १ अ० १ उ०।

अस्सकण्ण- पुं० *[अश्वकर्ण]*
अश्वमुखस्य परतोऽन्तद्वीपे, नं०।

अस्सकण्णी- स्त्री० *[अश्वकर्णी]*
कन्दभेदे, भग० ७ श० २ उ०। जीवा०। पन्न०।
साधारणबादरवनस्पतिकायविशेषः। पन्न०।

अस्सकरण- न० *[अश्वकरण]*
यत्राऽश्वानुद्दिश्य किञ्चित् क्रियते तस्मिन् स्थाने, आचा० २ श्रु० १० अ०।

अस्सचोरग- पुं० *[अश्वचोरक]*
घोटकचौरे, पण्हा० ३ अ०।

अस्सतर- पुं० *[अश्वतर]*
एकखुर (खच्चर) भेदे, पन्न० १ पद०।

अस्समुह- पुं० *[अश्वमुख]*
आदर्शमुखस्य परतोऽन्तर्द्वीपे, पन्न० १ पद० । नं०।

अस्समेह– पुं० *[अश्वमेध]*
'षट् सहस्राणि युज्यन्ते, पशूनां मध्यमेऽहनि। अश्वमेघस्य वचनाद्, न्यूनानि पशुभिस्त्रिभिः'। अनु०। विशे०। ठा०।

अस्ससेण- पुं० *[अश्वसेन]*
पार्श्वनाथस्य जिनस्य पितरि, आव०।
चतुर्दशे महाग्रहे, चंद०२० पाहु०। सूर०२० पाहु०। । ठा०।

अस्साउद्दिण्ण- त्रि० *[असादोदीर्ण]*
असादनेन कर्मणोदीरिते, पण्हा० ३ अ०।

अस्साएमाण- त्रि० *[अस्वादयत्]*
ईषत्स्वादयति इक्षुखण्डादेरिव बहु त्यजति, भग० १२ श० १ उ०। आचा०।

अस्सात- पुं० *[आस्वाद]*
रसनाऽऽह्लादके स्वादे, बुह० १ उ०।

अस्सावि- त्रि० *[आस्राविण्]*
आ समन्तात् स्रवति तच्छील आस्रावी। सच्छिद्रे, 'जहा अस्सविणिं नावं, जाइ अंधो दुरूहए। सूय० १ श्रु० १ अ० २उ०

अस्सि- पुं० *[अस्रि]*
चतुर्दिग्विभागोपलक्षितासु कोटिषु, ठा०६ ठा०।

अस्सि- पुं० *[अश्विन्]*
अश्विन्या देवतायाम्, ठा० २ ठा० २ उ०।

अस्सिणी- स्त्री० *[अश्विनी]*
नक्षत्रभेदे, जंबू० ७ वक्ष०। ठा०। अनु०।
अश्विन्या अश्वो देवता। सूर० १० पाहु०।
'अस्सिणी नक्खत्ते तितारे पन्नत्ते।' सम० ३ सम०।

अस्सेसा- स्त्री० *[अश्लेषा]*
नक्षत्रभेदे, जंबू० ७ वक्ष०। विशे०।

अस्सोक्कंता- स्त्री० *[अश्वोत्क्रान्ता]*
मध्यमग्रामस्य पञ्चम्यां मूर्च्छनायाम्, ठा०७ ठा०।

अस्सोती- स्त्री० *[आश्वयुजी]*
अश्वयुजि भवाऽऽश्वयुजी। अश्वयुङ्गासभाविन्याममायां, पौर्णमास्यां च। चंद० १० पाहु०। सूर० १० पाहु०। ।

अह-१ अव्य० *[अथ]*
आनन्तर्ये, आव०चू०४ अ०। सूय०। निसि० । अनु०।
उपन्यासे, नं०।
वक्तव्याऽन्तरोपन्यासे, उत्त० ३ अ०।
अवसानमङ्गलार्थे, सूय० १ श्रु० १६ अ०।
वाक्योपन्यासे, आचा०१ श्रु० ६ अ० १ उ०। सूय०।
उपप्रदर्शने, आचा० १ श्रु० ८ अ०। १ उ०। उत्त०।
पक्षान्तरद्योतने, भग० ५ श० ६ उ०।
विकल्पे, जीवा० १ प्रति०।
विशेषे, ठा० ७ ठा०।
प्रक्रियादिष्वर्थेषु, यत उक्तम्–अथ प्रक्रिया प्रश्नाऽऽनन्तर्यमङ्गलोपन्यासप्रतिवचनसमुच्चयेषु। बुह० १ उ०। जीवा०। आव० म०। दश०। अनु०। ठा०। पण्हा०।
यथार्थे, आव० म० प्र०।
वाक्याऽलङ्कारे, सूय० १ श्रु० ७ अ०।
अधः–बुध्ने। ओघ०

अह-२ न० *[अधस्]*
अधस्ताच्छब्दार्थे, आचा० ०१ श्रु० १ अ० ५ उ०। ठा०। सूर० । जीवा०।
अधोगतौ, 'अहो च्छिन्नं' पण्हा० ३ अ०।
अधोलोके, ठा० ३ ठा०४ उ०।
दिग्भेदे, ठा० ६ ठा०।

अहं- सर्व० *[अहम्]*
अस्मदः आत्मनिर्देशे, आव०म०। आव०।

अहंकार- पुं० *[अहङ्कार]*
अहोऽहं, नमो मह्यमित्येवमहङ्करणमहङ्कारः। निजगुणेषु बहुमाने, विशे०।
ऐश्वर्यजात्यादिमदजनिते अभिमाने, सूय० १ श्रु० ९ अ०।
सुख्यहं न दुःखीत्येवमात्मनः प्रत्यये, सूय० १ श्रु० २ अ०। आव० म०।
अहमिति स्वस्थभावेनोन्मादपरे परभावकरणे कर्तृतारूपे।सूय० अभिमाने, आव० ३ अ०।

अहक्कम- अव्य० *[यथाक्रम]*
यथापरिपाटि इत्यर्थे दश० ४ अ०।

अहक्खाय- न० *[यथाख्यात]*
अथाख्यात अथशब्दो यथार्थे, आङ्अभिविधौ, याथातथ्येन, अभिविधिना च यत् आख्यातं (कथितमकषायं चारित्रमिति) तदथाख्यातम्। यथा सर्वस्विन् जीवलोके ख्यातं प्रसिद्धमकषायं भवति चारित्रमिति तथैव यत् तद् यथाख्यातं प्रसिद्धम्। आव० म० प्र०।
अकषाये चारित्रे, आव० चू० १ अ०।
तदपि द्विविधमुपशमकक्षयकश्रेणिभेदात्। शेषं तथैवेति। भग० ८ श० २ उ०।
यथास्थितः। संस्ता०।

अहक्खायसंजम- पुं० *[अथाख्यातसंयम]*
अथशब्दो यथार्थः, तथैवाऽकषायतयेत्यर्थः।आख्यातमभिहितमथाख्यातम्। तदेव संयमोऽथाख्यातसंयमः। अयं च छद्मस्थस्योपशान्तमोहस्य क्षीणमोहस्य च स्यात्, केवलिनः सयोगस्याऽयोगस्य च स्यादिति। अकषायसंयमे, ठा० ५ ठा० २ उ०

अहक्खायसंजय- पुं० *[यथाख्यातसंजत]*
अकषायचारित्रिणि, 'अहक्खायसंजए पुच्छा। गोयमा! दुविहे पन्नत्ते। तं जहा–छउमत्थे य केवली य'।भग० २५ श०७ उ०

अहगुरु– पुं० *[यथागुरु]*
येन प्रव्राजितो यस्य पार्श्वे अधीतः, रत्नाधिकतरकः। वव० ।

अहत- त्रि० *[अहत]*
अक्षते, अन्यथानीते च। चंद० १९ पाहु०। सूर० १९ पाहु०।

अहत्त- न० *[अधस्त्व]*
जघन्यतायाम्, भग० ६ श० ३ उ०।

अहत्थ- त्रि० *[यथास्थ]*
यथावस्थिते, ठा० ५ ठा० ३ उ०।

अहत्थ- त्रि० *[यथार्थ]*
यथाप्रयोजने, यथाद्रव्ये च। 'अहत्थे वा भावे जाणिस्सामि'। ठा० ५ ठा० ३ उ०।

अहत्थिच्छिण्ण- त्रि० *[अहस्तच्छिन्न]*
हस्तौ अच्छिन्नौ यस्य स तथा। अकृत्तकरे, निसि० १४ उ०।

अहत्थाम- न० *[यथास्थाम]*
प्राकृतलक्षणेन यकारस्य लोपे केवलं स्वरः। यथाबले, निसि० १ उ०।

अहप्पहाण- अव्य० *[यथाप्रधान]*
प्रधानमनुरुध्येत्यर्थे, यो यः प्रधानो जन इत्यर्थः। भग० १५ श० १ उ०।

अहम- त्रि॰ *[अधम]*

जघन्ये, भाव॰ ४ अ॰।

निन्द्ये, उत्त॰ १३ अ॰।

निकृष्टे, 'नरेंदजाई अहमा नराणं'। उत्त॰ १३ अ॰। सूय॰।

क्षुद्रे, ठा॰ ४ ठा॰। ४ उ॰।

अहमंति- पुं॰ *[अहमन्तिन्]*

अहमेव जात्यादिभिरुत्तमतया पर्यन्तवर्तीत्यभिमानवति, ठा॰ १० ठा॰।

अहमहमितिदप्पिय- त्रि॰ *[अहमहमितिदर्पित]*

अहमहमित्येवं दर्पवति, पण्हा॰ ३ अ॰।

अहम्म- पुं॰ *[अधर्म]*

पापे, सूय॰ १ श्रु॰ १ अ॰ २ उ॰। दश॰।

सावद्यानुष्ठाने, दशा॰ ६ अ॰।

अधर्मस्य वर्णे वदति, निसि॰ ।

धर्मरहिते, विपा॰ १ श्रु॰ २ अ॰।

अहम्मओ- अव्य॰ *[अधर्मतस्]*

अधर्ममङ्गीकृत्याऽर्थे, पण्हा॰ २ अ॰।

अहम्मकेउ- पुं॰ *[अधर्मकेतु]*

केतुर्ग्रहविशेषः, स इव यः, स तथा। पापप्रधाने, नाया॰ १८ अ॰।

अहम्मक्खाइ- पुं॰ *[अधर्माऽऽख्यायिन्]*

न धर्ममाख्यातीत्येवंशीलोऽधर्माख्यायी। अथवा– न धर्माख्यायी अधर्म्माख्यायी। धर्मकथनाऽशीले, दशा॰ ६ अ॰।

अहम्मक्खाइ- पुं॰ *[अधर्माख्याति]* ।

अधर्मादाख्यातिर्यस्य स अधर्माख्यातिः। पापकर्मतया प्रसिद्धे, दशा॰ ६ अ॰।

अहम्मजीवि-पुं॰ *[अधर्मजीविन्]*

अधर्मेण जीवति प्राणान् धारयतीति अधर्मजीवी। अधर्मेण प्राणधारके, दशा॰ ६ अ॰।

अहम्मट्ठाण- न॰ *[अधर्मस्थान]*

पापस्थाने, सूय॰ २ श्रु॰२ अ॰।

त्रयोदशसु क्रियास्थानेषु, सूय॰ २ श्रु॰ २ अ॰।

धर्मादपेते स्थाने, सूय॰ २ श्रु॰ २ अ॰।

अहम्मट्ठि- पुं॰ *[अधमार्थिन्]*

अर्थोऽस्याऽस्तीत्यर्थी, अधर्मेणाऽथी अधमाऽर्थी। अधर्मप्रयोजने, आचा॰ १ श्रु॰६ अ॰४ उ॰।

अहम्मदाण- न॰ *[अधर्मदान]*

अधर्मपोषकं दानमधर्मदानम्। अधर्मप्रतिपादकत्वाद् वाऽधर्म एव। चौरादिभ्यो दाने, ठा॰ १० ठा॰।

अहम्मसेवि- पुं॰ *[अधर्मसेविन्]*

कलत्रादिनिमित्तषट्कायोपमर्दकारिणि, दश॰ १ चू॰।

अहम्माणि- पुं॰ *[अहम्मानिन्]*

अहमेव विद्वानिति मानो गर्वोऽस्येति अहम्मानी। अहङ्कारिणि, आव॰।

अहम्मिट्ठ– पुं॰ *[अर्धमिष्ठ]*

अतिशयेनाधर्मो—धर्मरहितः। विपा॰ ४८।

अधर्मेष्टः अधर्मो—धर्मविपक्षः—पापमिति स इष्टः–अभिलषितो ऽस्येति, यद्वा अधर्मगुणयोगादधर्मः, अतिशयेनाधर्मः। उत्त॰ धर्म्मः—श्रुतरूप एवेष्टोवल्लभः पूजितो वा येषां ते धर्मेष्टः तत् निषेधादधर्मेष्टा अधर्मिष्टः। भग॰।

अहय- त्रि॰ *[अहत]*

अक्षते अव्याहते, आव॰म॰। जीवा॰।

नवे, भग॰ ८ श॰ ६ उ॰। रा॰।

अव्यवच्छिन्ने, कल्प॰ १ क्ष॰।

अखण्डिते, सूय॰ २ श्रु॰२ अ॰।

मलमूषादिभिरनुपद्रुते प्रत्यग्रे, नाया॰ १ अ॰।

अहर- पुं॰ *[अधर]*

अधस्तात्काये, आव॰ ३ अ॰।

अधस्तनदन्तच्छेदे, उव॰। पन्न॰। तं॰।

अहरगइगमण- न॰ *[अधरगतिगमन]*

अधोगतिगमनकारणे, पण्हा॰ २ अ॰।

अहरी- स्त्री॰ *[अधरी]*

पेषणशिलायाम्, उत्त॰।

अहवण- अव्य॰ *[अथवा]*

अखण्डमव्ययपद॰म्। अथवेत्यस्याऽर्थे, बुह॰ १ उ॰।

विकल्पप्रदर्शने, निसि॰ १ उ॰।

वाक्याऽलङ्कारे, अनु॰।

अहवा- अव्य॰ *[अथवा]*

संबन्धस्य प्रकारान्तरतोपद॰र्शने, वव॰१ उ॰।

पूर्वोक्तप्रकारापेक्षया प्रकारान्तरत्वद्योतने। निसि॰।गच्छा॰। भग॰ पक्षाऽन्तरे, सूय॰१ श्रु॰१३ अ॰।

वाक्योपन्यासे, सूय॰२ श्रु॰२ अ॰।

अहव्वण- पुं॰ *[अथर्वन्]*

ऋग्वेदादीनां चतुर्थे वेदे, भग॰ २ श॰ १ उ॰। अनु॰। उव॰।

अहस्स- न॰ *[अहास्य]*

हास्यपरित्यागे, आव॰४ अ॰।

अहा- अव्य॰ *[अधस्]*

दिग्भेदे, ठा॰६ ठा॰।

अहाउओवक्कमकाल- पुं० *[यथायुषकोपक्रमकाल]*

यथा बद्धस्ययुष्कस्योपक्रमणं दीर्घकालभोग्यस्योपक्रमणं यथा –युष्कोपक्रमः, स चाऽसौ कालश्च यथाऽऽयुष्कोपक्रमकालः। कालभेदे, विशे०।

यथायुष्ककालः, देवाद्यायुष्कलक्षणः। दश० ९।

अहाउणिव्वत्तिकाल- पुं० *[यथायुर्निर्वृत्तिकाल]*

कालभेदे, ठा०।

यथा यत्प्रकारं नारकादिभेदेनाऽऽयुः कर्मविशेषो यथाऽऽयुः। तस्य रौद्रादिध्यानादिना निर्वृत्तिर्बन्धनः, तस्याः सकाशात् यः कालो नारकादित्वेन स्थितिर्जीवानां स यथायुर्निर्वृत्तिकालः। अथवा–यथाऽऽयुषो निर्वृत्तिस्तथा यः कालो नारकादिभवेऽ–वस्थानं, स तथेति। अयमप्यद्धाकाल एवायुष्ककर्मानुभव-विशिष्टः सर्वसंसारजीवानां वर्तनादिरूप इति। उक्तं च आउयमित्तविसिट्ठो, स एव जीवाण वत्तणाऽऽदिमओ। भण्णइ अहाउकालो, वत्तइ जो जं चिरं तेण। ठा० ४ ठा०१ उ०।

'से किं तं अहाउणिव्वत्तिकाले ? अहाउणिव्वत्तियकाले जं णं णेरइएण वा तिरिक्खजोणिएण वा मणुस्सेण वा देवेण वा अहाउणिव्वत्तियं से तं पालेमाणे अहाउणिव्वत्तिकाले'। भग० ११ श० ११ उ०।

येन प्रकारेणायुषो निर्वृत्तिः–बन्धनं, तथा यः कालः। भग०

अहाउय- न० *[यथायुष्क]*

देवाद्यायुष्कलक्षणे कालभेदे, आव०म०।

यथाबद्धे आयुषि च। ठा०।

दो अहाउयं पालेइ। तं जहा–देवच्चेव नेरइयच्चेव। यथाबद्ध मायुर्यथायुः, पालयन्त्यनुभवन्ति नोपक्रम्यते तदिति यावत् इति। 'देवा नेराइया वि य, असंखवासाउया तिरियमणुया। उत्तमपुरिसा य तहा, चरमसरीरा निरुवकमती'।। इति वचने सत्यपि देवनारकयोरेवेह भणनं, द्विस्थानकाऽनुरोधादिति। ठा० २ ठा० ३ उ०।

अहाकड– त्रि० *[यथाकृत]*

आत्मार्थमभिनिर्वर्तिते आहारादौ, 'अहागडेसु रीयंति, पुप्फेसु भमरो जहा'। दश० १ अ०। निसि० । बुह०।

अहाकप्प- अव्य० *[यथाकल्प]*

यथाऽत्रोक्तं तथाकरणे कल्पोऽन्यथा त्वकल्प इति यथाकल्पम् कल्प० ९ क्ष०।

प्रतिमाकल्पानतिक्रमे तत्कल्पवस्त्वनतिक्रमे, दशा०७अ०। ठा०। नाया०।

अहापडिग्गहिय- त्रि० *[यथाप्रतिगृहीत]*

यथाप्रतिपन्ने पुनर्ह्रासमनीते, भग० २ श० ५ उ०।

अहाछंद- पुं० *[यथाछन्द]*

यथा छन्दोऽभिप्राय इच्छा, तथैवाऽऽगमनिरपेक्षं यो वर्तते, स यथाछन्दः। वव० १ उ०। निसि० ।

यथाकथंचित् नाऽऽगमपरतन्त्रतया छन्दोऽभिप्रायो बोधः प्रवचनार्थेषु यस्स स यथाछन्दः। भग०१ श०४ उ०। स्वच्छन्दमतिविकल्पिते, आव० ३ अ०।

आचार्ये यथाच्छन्दे जातेऽन्यत्रोपसंपत्। वव० ४ उ०।

अहाछंदविहारि(ण)– पुं० *[यथाछन्दविहारिन्]*

आजन्मापि यथाछन्दे, भग० १० श० ४ उ०।

अहाजाय– न० *[यथाजात]*

यथाजातं नाम यथा प्रथमतो जननीजठरान्निर्गतो, यथा च श्रमणो जातस्तथैव जातत्वक्रमेण दीयमाने वन्दनके, बुह० ३ उ०।

यथाजातं जन्म श्रमणत्वा-माश्रित्य, योनिनिष्क्रमणं च, तत्र रजोहरणमुखवस्त्रिकाचोलपट्टकमात्रया श्रमणो जातः, रचित-करपुटस्तु योन्या निर्गतः, एवम्भूत एव वन्दति, तद्व्यतिरेकाच्च यथाजातं भण्यते कृतिकर्मवन्दनम्। आव० ३ अ०।

अहाणुपुव्वी– स्त्री० *[यथानुपूर्वी]*

यथाक्रमे, ज्यो० २ पाहु०।

'अहाणुपुव्वीए स पत्थिया'। रा०।

अहातच्च– न० *[यथातत्त्व]*

अभिधानार्थानतिक्रमे, अन्वर्थसत्यापने च। ठा०५ ठा०१ उ०। दशा०।

शब्दार्थानतिक्रमे तत्त्वानतिक्रमे च। भग० २ श० १ उ०।

अहातच्च–न० *[यथातथ्य]*

सत्ये, कल्प० ९ क्ष०। वव०।

एकान्ततः यथा येन प्रकारेण तथ्य सत्यं, 'तत्त्वं वा' तेन यो वर्त्ततेऽसौ यथातथ्यो 'यथातत्त्वं' वा। दृष्टार्थाविसंवादिनि, फलाविसंवा-दिनि च स्वप्नभेदे, भग०।

तत्र दुष्टार्थाविसंवादी स्वप्नः, किल कोऽपि स्वप्नं पश्यति, यथा–मह्यं फलं हस्ते दत्तं, जागरितस्तत्तथैव पश्यतीति। फलाविसंवादी तु किल कोऽपि गोवृषकुञ्जराद्यारूढमात्मानं पश्यति, बुद्धश्च कालान्तरे सम्पदं लभत इति। भग० १६ श०६ उ०।

अहापज्जत्त– त्रि० *[यथापर्याप्त]*

यथालब्धे, अनुत्त० ३ वर्ग०।

अहापडिरूव– त्रि० *[यथाप्रतिरूप]*

उचिते, उव०। निसि० ।

येन प्रतिरूपेण साधूचितस्वरूपं तस्मिन्, विपा०१ श्रु०१ अ०।

अहापणिहिय– त्रि० *[यथाप्रणिहित]*
यथाऽवस्थिते, 'अहापणिहिएहिं गाएहिं' भग० ३ श०२ उ०।
यथाप्रतिगृहीतम्, यथाप्रतिपन्नम्। भग०।

अहापरिग्गहिय– त्रि० *[यथापरिगृहीत]*
परिग्रहणानुरूपेण स्वीकृते, अहापडिग्गहियाइं वत्थाइं धारेज्जा। आचा० १ श्रु० ८ अ० ४ उ०।

अहापरिग्गहिय– त्रि० *[यथापरिज्ञात]*
परिज्ञानोनुरूपेणोभ्युपगते, आचा०२ श्रु०२ अ० ३ उ०।
'अहापरिण्णातं वसामो' यथा–परिज्ञातं यावन्मात्रं क्षेत्रम-नुजानीते भवान् तावत्क्षेत्रम्। आचा० २ श्रु०२ अ० ३ उ०।

अहाबायर– त्रि० *[यथाबादर]*
असारे, भग० ३ श० १ उ०।
स्थूलप्रकारे,। भग० ६ श०१ उ०। कल्प०।

अहाबीय– न० *[यथाबीज]*
यद् यस्योत्पत्तिकारणं, तस्मिन्, सूय० २ श्रु० ३ अ०।

अहाभद्दग– पुं० *[यथाभद्रक]*
साध्वनुकूले श्रावके, बुह० १ उ०। आव०।
शासनबहुमानवति, बुह० १ उ०।

अहाभाग– अव्य० *[यथाभाग]*
यथाविषये, दश०५ अ०।

अहाभूय– पुं० *[यथाभूत]*
तात्त्विके, ठा० १ ठा० १ उ०।

अहामग्ग– अव्य० *[यथामार्ग]*
ज्ञानादिमोक्षमार्गानतिक्रमेण क्षयोपशमभावानतिक्रमे, दशा० ७ दशा०। नाया०। ठा०।
औदयिकभावापगमे, ठा०७ ठा०। वव०। कल्प०। भग०।

अहारायणिय– अव्य० *[यथारात्निक]*
यथा यथा रत्नैरधिको भवेत्तदनतिक्रमे, बुह० ३ उ०।

अहारि– त्रि० *[अहारिन्]*
मनसोऽनिष्टे, आचा० १ श्रु० ६ अ० २ उ०।

अहारिय–१ अव्य० *[यथर्जु]*
ऋजुताऽनतिक्रमे, 'अहारियं रिएज्जा' यथा ऋजुभवति, तथा गच्छेद्, नार्दवितर्दं, विकारं वा कुर्वन् गच्छेत्। आचा० २ श्रु० ३ अ०२ उ०।

अहारिय–२ अव्य० *[यथारीत]*
रीतं रीतिः, स्वभाव इत्यर्थः। तदनतिक्रमेण यथारीतम्। स्वभावानतिक्रमे, 'अहारीयं रीयइ' यथारीतं रीयते गच्छति, यथा स्वाभाविकौदारिकशरीरगत्या गच्छतीत्यर्थः। भग० ५ श० २ उ०।

अहारिह– त्रि० *[यथार्ह]*
यथोचिते, ठा०२ ठा०१ उ०।

अहालंद– पुं० *[यथालन्द]*
यावन्मात्रे काले, आचा० २ श्रु० ७ अ०१ अ०।
यावन्मात्रं कालं भवाननुजानाति। आचा०।
मध्यममष्टपौरुषीमानम्। बुह०३५ ।
जघन्येन तरुणीदकार्द्रकरशोषकालः,उत्कृष्टतः पूर्वकोटी।बुह० अथेत्यव्ययम्, लन्दशब्देन कालं उच्यते। तत्र यावता काले-नोदकार्द्रः करः शुष्यति, जघन्यतस्तावति काले, कल्प०८ क्ष०

अहालहुस्सय– न० *[यथालघुस्वक]*
यथेति यथोचितानि लघुस्वकानि अमहास्वरूपाणि, महतां हि तेषां नेतुं गोपयितुं वा शक्यत्वादिति यथालघुस्वकानि। अथवा लघूनि महान्ति वरिष्ठानीति च वृद्धाः। अमहास्वरूपेषु, भग०।
अनेकान्तलघुके वीणाग्रहणग्राह्ये, वव० ७ उ०।
स्तोके, वव०।
स्तोकप्रायश्चित्तदानम्।बुह०।

अहावगास– अव्य० *[यथावकाश]*
यो यस्याऽवकाशः यद् यस्योत्पत्तिस्थानम्। अथवा भूम्यम्बु-कालाऽऽकाशबीजसंयोगः, तदनतिक्रमे, सूय०।
'तेसि च णं अहाबीहणं अहावगासेणं इत्थीए'। यथाऽ-वकाशेनेति। यो यस्याऽवकाशो मातुरुदरकुक्ष्यादिकस्तत्राऽपि किल वामा स्त्रियो, दक्षिणा कुक्षिः पुरुषस्योभयाश्रितः षण्ढ इति। अत्र चाऽविध्वस्ता योनिरविध्वस्तं बीजमिति चत्वारो भङ्गा। तत्राप्याऽऽद्य एव भङ्ग उत्पत्तेरवकाशो, न शेषेषु त्रिष्विति। सूय० २ श्रु० ३ अ०।

अहावच्च– पुं० *[यथापत्य]*
यथाऽप्यानि तथा ये, ते यथापत्याः। पुत्रस्थानीयेषु, भग० ३ श०६ उ०। कल्प०।

अहावच्चाभिण्णाय– त्रि० *[यथापत्याभिज्ञात]*
यथाऽपत्यमेवमभिज्ञाता अवगता यथापत्याभिज्ञाताः, अथवा–यथाऽपत्याश्च तेऽभिज्ञाताश्चेति कर्मधारयः। पुत्रस्थानीयेष्वभि-ज्ञातेषु, भग० ३ श० ६ उ०।

अहासंखड–न० *[यथासंखड]*
निष्प्रकम्पे पट्टादौ, निसि० २उ०।

अहासंथड– न० *[यथासंस्कृत]*
शयनयोग्ये, आचा०२ श्रु० २ अ० ३ उ०।

अहासंथड– न० *[यथासंस्कृत]*
यत् तृणादि यथोपभोगाऽर्ह भवति, तथैव लभ्यते, तस्मिन्, ठा० ३ ठा० ४ उ०। आचा०।

अहासंविभाग– पुं० *[यथासंविभाग]*
यथा सिद्धस्य स्वार्थं निर्वर्तितस्येत्यर्थः, अशनादेः समिति सङ्गतत्वेन पश्चात्कर्मादिदोषपरिहारेण विभजनं साधवे दान-द्वारेण विभागकरणं यथा–संविभागः। अतिथिसंविभागव्रते, उपा०१ श्रु० १ अ०।
'अहासंविभागो णाम जदि अहाकम्मं देति, तो साधुमहे भजति हेट्ठिल्लेहिं संजमट्ठाणेहिं उत्तारेति, तेण आहाकम्मेण सो अहासंविभागो भवति। जो अहापवत्ताणं अण्णपाणवत्थ–ओसहभेसज्जपीढफलसगेज्जासंथारगादीण संविभागो, सो अहासंविभागो भवति। फासु एसणिज्जं संविभागो त्ति भणियं होइ'। आव०चू० ६ अ०। उपा० १ अ०।

अहासच्च– न०*[यथासत्य]*
यथातथ्ये, आचा० १ श्रु० ४ अ० २ उ०।

अहासुत्त– अव्य०*[यथा*]*
सामान्यतः सूत्राऽनतिक्रमे,दशा०७अ० ।ठा० ।उपा०। नाया० सूत्राऽनुसारेणाऽऽपादितसत्यता, वव० ९ उ०।
सूत्राऽविरुद्धे, कल्प०९ क्ष०।

अहासुह– अव्य०*[यथासुख]*
सारे, भग० ३श०१ उ०।
'अहाबायरे पुग्गले परिसाडेइ'। कल्प० २ क्ष०।

अहि– पुं०*[अहि]*
उरःपरिसर्पभेदे, उत्त० ३६ अ०।
सर्पे, उत्त० ३४ अ०। नाया०। सूय०।
अस्य भेदाः– से किं तं अही ? अही दुविहा पन्नत्ता। तं जहा– दव्वीकरा य, मउलिणो य। पन्न०१ पद०। आचा०।

अहिअ– त्रि०*[अहित]*
हिताऽकारिणि, सम० ३० सम०।

अहिंसअ– त्रि०*[अहिंसक]*
अवधके, पण्हा० १ अ०

अहिंसा– स्त्री०*[अहिंसा]*
न हिंसाऽहिंसा। निसि० २ उ०।
प्राणवियोगप्रयोजनव्यापाराऽभावे, प्राणिघातवर्जने। आव०।

अहिंसासमय– पुं०*[अहिंसासमय]*
अहिंसाप्रधाने आगमे, संकेते चोपदेशरूपे, सूय०१श्रु० ११अ०

अहिंसिय– त्रि०*[अहिंसित]*
अमारिते, सूय० १ श्रु० १ अ० ४ उ०।

अहिकरण– न०*[अधिकरण]*
नरकनिर्यग्गतिषु, आत्मनोऽधिकरणं वा तुल्यसत्त्वे इत्यर्थः। कलहे, निसि० ४ उ०।

अहिकरणी– स्त्री०*[अधिकरणी]*
सुवर्णकारोपकरणे, ठा० ८ ठा०।

अहिकिच्च– अव्य०*[अधिकृत्य]*
प्रतीत्येत्यर्थे, 'पडुच्च त्ति वा पप्प त्ति वा अहिकिच्च त्ति वा एगट्ठा'। आव०चू० १ अ०।
अधिकृत्य–आश्रित्य। भग०।

अहिगम–१ पुं०*[अधिगम]*
अवबोधे, ठा० ७ ठा०।
'णाणं ति वा संवेदणं ति वा अहिगमो त्ति या वेयणि त्ति'। आव० चू० १ अ०।
विशिष्टं परिज्ञानम्। पन्न०।

अहिगम–२ पुं०*[अभिगम]*
उपचारे, 'अभिगमेणं अभिगच्छंति'। उव०।

अहिगमण– न०*[अधिगमन]*
परिच्छेदने, विशे०।

अहिगमास– पुं०*[अधिकमास]*
अभिवर्द्धितमासे, ज्यो० १ पाहु०।

अहिगयजीवाजीव– त्रि०*[अधिगतजीवाजीव]*
अधिगतौ सम्यग्विज्ञातौ जीवाजीवौ येन स तथा। जीवाऽ-जीवयोः परमार्थतो विज्ञानवति, रा०।

अहिगयट्ठ– पुं०*[अधिगताऽर्थ]*
अधिगतोऽर्थो येन स तथा, अधिगताऽर्थो वाऽर्थावधारणात्, तत्त्वज्ञे, दशा० १० अ०।

अहिगरण– न०*[अधिकरण]*
अधिक्रियतेऽधिकारीक्रियते दुर्गतावात्मा येन तदधिकरणम्। बाह्ये वस्तुनि, ठा० २ ठा० १ उ०। आव०।
पापोत्पत्तिस्थाने, आतु०।
दुरनुष्ठाने, पण्हा० ३ अ०
स्वपक्षपरपक्षविषये विग्रहे, ठा० ७ ठा०।
राटौ, तत्करवचने च। कल्प० ९ क्ष०।
कलहे, गच्छा० ३ अधि०।
खड्गनिवर्त्तनादौ, नाया० ५ अ०। उव०। सूय०।
कषायाद्याश्रयभूते हलशकटादौ, भग० ७ श० १ उ०।
स्वपरिणामे च सामायिकमव्यवच्छिन्नं धरतीत्यधिकरणम्। अधिकरणपरिणामाऽनन्ये सामायिककर्तरि साध्वादौ, विशे०।

अहिगरणकर– त्रि०*[अधिकरणकर]*
अधिकरणं कलहः, तत् करोति, तच्छीलश्चेत्यधिकरणकरः। कलहकरे, अहिकरणकडस्स भिक्खुणो। सूय० १ श्रु०२ अ० २ उ०। आचा०।

अहिगरणकिरिया– स्त्री० *[अधिकरणक्रिया]*
दुर्गतौययाऽधिक्रियन्ते प्राणिनः सा। पण्हा० ३७।

अहिगरणज्झाण– न० *[अधिकरणध्यान]*
अधिकरणं पापोत्पत्तिहेतुस्थानं, तस्य ध्यानमधिकरणध्यानम्, वापीध्यानतत्परस्य नन्दिमणिकारस्येव। दुर्ध्याने, आतु०।

अहिगरणसाल– न० *[अधिकरणशाल]*
लोहपरिकर्मगृहे, भग० १६ श० १ उ०।

अहिगरणसिद्धंत– पुं० *[अधिकरणसिद्धान्त]*
यत् सिद्धावन्यस्याऽर्थस्याऽनुषङ्गेण सिद्धिः, तस्मिन् सिद्धान्त भेदे, सूय० १ श्रु० १२ अ०।
स चाऽसौ अहिगरणो, जहियं सिद्धे सेसं अणुत्तमवि सिज्झे, जह निच्चत्ते सिद्धे अन्नत्तामुत्तत्तसंसिद्धी यस्मिन् सिद्धे शेषमनुक्तमपि सिध्यति, यथाऽऽत्मनो नित्यत्वे सिद्धे, शरीरादन्यत्वसंसिद्धिरमूर्त्तत्वसंसिद्धिश्च। एषोऽधिकरणसिद्धान्तः। सूय०।

अहिगरणि– स्त्री० *[अधिकरणि]*
अधिक्रियते कुट्टनार्थं लोहादि यस्यां साऽधिकरणिः। लोहकारसुवर्णकाराद्युपकरण, भग० १६ श० १ उ०। ठा०।

अहिगरणिखोडि– स्त्री० *[अधिकरणखोटि]*
अधिकरणनिवेशनकाष्ठे, यत्र काष्ठेऽधिकरणी निवेश्यते। भग० १६ श० १ उ०।

अहिगरणिया– स्त्री० *[अधिकरणिकी]*
अधिकरणविषये व्यापारे, पण्हा०।
अधिक्रियते नरकादिष्वात्माऽनेनेति अधिकरणं–अनुष्ठानविशेष बाह्यं वा वस्तु चक्रखड्गादि, तत्र भवा एक क्रियाभेदः। भग०
सा च द्विविधा–निवर्त्तनाऽधिकरणक्रिया, संयोजनाऽधिकरणक्रिया च। तत्राऽऽद्या खड्गादीना तन्मुष्ठ्यादीनां निवर्तन लक्षणा। द्वितीया तु – तेषामेव सिद्धानां संयोजनलक्षणेति। दुर्गतौ यकाभिरधिक्रियते प्राणी तासु। पण्हा०२अ०। आव०।
अहिगरणिया णं भंते ! किरिया कतिविहा पन्नत्ता ? गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता। तं जहासंयोजयणाहिगरणिया य, णिव्वत्तणाहिगरणिया य। पन्न० २२ पद०।

अहिगार– पुं० *[अधिकार]*
प्रयोजने, प्रस्तावे च। विशे०। आव० म०। दश०। निसि० व्यापारे। आचा० १ श्रु०२अ०१ उ०।

अहिच्छत्ता– स्त्री० *[अहिच्छत्रा]*
जङ्गलदेशप्रतिबद्धेपुरीभेदे, 'अहिच्छत्ता जंगलो चेव' अहिच्छत्रा नगरी, जङ्गलो देशः, आर्यक्षेत्राणि। सूय०।।
'चंपाए नयरीए उत्तरपुरिच्छमे दिसिभाए अहिच्छत्ता नामं नयरी होत्था'। नाया० १६ अ०।

अहिजाय– त्रि० *[अभिजात]*
कुलीने, 'अहिजायं महक्खमं' अभिजातं कुलीनं महती क्षमा यत्र तथा पूज्यं क्षमं समर्थ्यत्वं यत् तत् तथा। अथ वा–अभिजातानां मध्ये महत् पूज्यं क्षमं समर्थं च यत्तत्तथा। भग० ९ श० ३३ उ०।

अहिज्जग– त्रि० *[अधीयान]*
प्रकृतिप्रत्ययलोपाऽऽगम-वर्णविकार-कालकारकादिवेदिनि, दश० ५ अ०।

अहिज्जमाण– त्रि० *[अधीयमान]*
पठति, वव० ४ उ०। सूय०।

अहिज्जिउं– अव्य० *[अध्येतुम्]*
अध्येतुम्, पठितुम्, श्रोतुम्, भावयितुम्।, दश० ४ अ०।

अहिज्जित्ता– अव्य० *[अधीत्य]*
अध्ययनं कृत्वेत्यर्थे। उत्त० १ अ०।
पठित्वेत्यर्थे, उत्त० १ अ०।

अहिज्झियता– स्त्री० *[अभिध्यितता]*
भिध्या लोभः, सा संजाता यत्र स भिध्यितः। न भिध्यितोऽभिध्यितः। तद्भावस्तत्ता। अलोभे, भग० ६ श० ३ उ०।

अहिट्ठए– अधिष्ठाता,
तपःप्रभृतीनां कर्त्ता। दशवै० २३८।
अधितिष्ठति यथावत् करोति। दशवै० २५६।

अहिट्ठाण– न० *[अधिष्ठान]*
सन्निषद्याऽऽवेष्टिते एवोपवेशने, निसि० ५ उ०।
आश्रयणे। सूय० १ श्रु० २ अ० ३ उ०।
'अहिट्ठाणं काऊण ठितो'। आव० म०।
पतित्वे, स्वामित्वे च। आचा० २ श्रु०७ अ० १ उ०।
अपानप्रदेशः। आव० ४१९।

अहिट्ठिज्जमाण– त्रि० *[अधिष्ठीयमान]*
समाक्रम्यमाणे, ठा० ४ ठा० १ उ०।

अहिट्ठित्तए– अव्य० *[अधिष्ठातुम्]*
निषदवादिना परिभोक्तुमित्यर्थे, बुह० ३ उ०।

अहिट्ठिय– त्रि० *[अधिष्ठित]*
अध्यासिते, नाया० १४ अ०।
'संबोजुद्धमहिट्ठितो'। आव०म०।
आविष्टे, ठा०५ ठा०२ उ०।
वश्यतां गते, 'राजाहिट्ठिया' राजाधिष्ठताः राजाधीनाः। नाया० १४ अ०।

अहिणव– त्रि० *[अभिनव]*
नूतन-विशिष्टवर्णादिगुणोपेते, रा०।

अहिणवसड्ढ– पुं० *[अभिनवश्राद्ध]*
व्युत्पन्नश्रावके, पिंड०।

अहिणिवोह– पुं० *[आभिनिबोध]*
अर्थाऽभिमुखो नियतः प्रतिस्वरूपको बोधविशेषोऽभिनिबोधः मतिज्ञाने, अभिनिबुध्यतेऽस्मादस्मिन् वेति अभिनिबोधः। मत्यावरणक्षयोपशमे। पन्न० २९ पद०।

अहितत्त– त्रि० *[अभितप्त]*
अत्यन्तपीडिते, उत्त० २ अ०।

अहित्ता– अव्य० *[अधीत्य]*
पडित्वेत्यर्थे, 'अट्ठंगमेयं बहवे अहित्ता, लोगंसि जाणंति अणा-गताइं'। सूय० १ श्रु० १२ अ०।

अहिधारणा– स्त्री० *[अभिधारणा]*
प्रस्विन्नो यद्बहिरवतिष्ठते वातागमनमार्गे तस्मिन्, आचा० १ श्रु० १ अ० ७ उ०।

अहिमड– पुं० *[अहिमृत]*
मृताऽहिदेहे, जीवा० ३ प्रति०।
सर्पकलेवरे, विपा०१ श्रु०१ अ०।

अहिमर– पुं० *[अभिमर]*
अभिमुखाः परं मारयन्ति ये तेऽभिमराः। पण्हा० ३ अ०।
दर्दरचोरेषु अश्वहरेषु, निसि० १ उ०।
अभिमुखमाकार्य मारयति म्रियते वेति। ओघ०।

अहिमाइय– पुं० *[अह्यादि]*
उरःपरिसर्पादौ, उत्त० ३६ अ०।

अहिमास– पुं० *[अधिमास]*
अभिवर्द्धितमासे, आव०१ अ०।
अधिकमासे। आव०।

अहिय–१ त्रि० *[अधिक]*
आधिक्यविशिष्टे, आरूढो सोहइ अहियं सिरे चूडामणि जहा। उत्त० २२अ०। जंबू० । उव०।
अक्षरपदा-दिभिरतिमात्रमधिके, अनु०।
हेतोर्दृष्टान्तस्य चाधिक्ये सति, अधिकं यथाअनित्यः शब्दः, कृतकत्वप्रयत्नाऽनन्तरीयकत्वाभ्याम्, घटपटवदित्यादि। एक-स्मिन् साध्ये एक एव हेतुर्दृष्टान्तश्च वक्तव्यः। अत्र च प्रत्येकं द्वयाऽभिधानाऽधिक्यमिति भावः। अनु०। विशे०। बुह०। अधिकं यत्पञ्चानामवयवानामन्तरेण समधिकम्। बुह०१ उ०। आव०म०।
'अहियसस्सिरीयं' अधिकरूपेण सश्रीकउ शोभनो यः स तथा तम्। कल्प० ३ क्ष०।
अर्गलं, शीघ्रतरम्। उत्त० ।

अहिय–२ त्रि० *[अहित]*
अपथ्ये। भग०७ श०६ उ०। ठा०।
अपाये, ठा० ५ ठा० १ उ०।
भावप्रधानोऽयं निर्देशः। परिणामासुन्दरत्वे, दशा० ९ अ०।

अहियदिण– न० *[अधिकदिन]*
दिनवृद्धौ, ठा० ६ ठा०।

अहियपोरिसीय– त्रि० *[अधिकपौरुषीक]*
पुरुषप्रमाणाऽधिके, 'कुंभीमहंताहियपोरिसीया, समूसिता लोहियपूयपुण्णा'। सूय० १ श्रु० ५ अ० १ उ०।

अहियप्पण्णाण– त्रि० *[अहितप्रज्ञान]*
अहितं प्रज्ञानं बोधो यस्य सोऽहितप्रज्ञानः। अहितबोधे, सूय० १ श्रु०१ अ० २ उ०।

अहियरूवसस्सिरीय– त्रि० *[अधिकरूपसश्रीक]*
अतिशोभिते, कल्प०।

अहियहिय– त्रि० *[अहितहित]*
अतिबहुकादिषु तथाविधे भोजने । पिंड०।

अहियास– पुं० *[अध्यास]*
परीषहादीनां सम्यक्तितिक्षायाम्, आचा० १ श्रु० ६ अ० ६उ०
वर्तने पालने, सूय० १ श्रु०७ अ०।

क्षान्तं न क्षमया गृहोचितसुखं त्यक्तं न सन्तोषतः,
सोढा दुःसहतापशीतपवनाः क्लेशान्न तप्तं तपः।
ध्यातं वित्तमहर्निशं नियमितं द्वन्द्वैर्न तत्त्वं परं,
यद्यत्कर्म कृतं सुखार्थिभिरहो ! तैस्तैः फलैर्वञ्चिताः।

सूय० १ श्रु०२ अ० १ उ०। आचा०। उत्त०। ठा०।
अविचलकायतया । नाया० १ अ०।
सौष्ठवाऽतिरेकेण सहने, ठा०४ ठा० ३ उ०।

अहियासणया– स्त्री० *[अहिताऽऽसनता]*
अहितमननुकूलं टोलपाषाणाद्यासनं यस्य स तथा तद्भावः, तत्ता। अननुकूलाऽऽसने, ठा० ९ ठा०।

अहियासणया– स्त्री० *[अध्यशनता]*
अध्यशनमेवाऽध्यशनता। दीर्घत्वं तु प्राकृतत्वात्। अजीर्णे भोजने, 'अजीर्णे भुज्यते यत्तु, तदध्यशनमुच्यते' इति वचनात्। स्थ० ९ ठा०।

अहियासित्तए– अव्य० *[अध्यासयितुम्]*
अधिसोढुमित्यर्थे, आचा० १ श्रु०८ अ०४ उ०।

अहियासित्ता– अव्य० *[अधिसह्य]*
सोढ्वेत्यर्थे, सूय० १ श्रु० ३ अ०४०।

अहियासिय– त्रि० *[अध्यासित]*
कृतेऽधिसहने, दवियाण पासअहियासियं।आचा०१ श्रु०६ अ०

अहियासेत्तु– अव्य० *[अध्यासह्य]*
अधिकमासह्य। अत्यर्थं सोढ्वेत्यर्थे,आचा०१ श्रु० ६अ० १ उ०

अहियासेमाण– त्रि० *[अध्यासयत्]*
सम्यक्तितिक्षमाणे, आचा० १ श्रु०६ अ० १ उ०।

अहिरण्णसोवण्णिय– पुं० *[अहिरण्यसौवर्णिक]*
हिरण्यं रजतं, सुवर्णं च हेम, ते विद्येते यस्य स हिरण्यसौवर्णिकः। तथा न। पण्हा० ३ अ०।

अहिराय– पुं० *[अधिराज]*
मौलपृथिवीपतौ, बुह० ३ उ०।

अहिरियया– स्त्री० *[अह्रीकता]*
निर्लज्जतायाम्, उत्त० ३४ अ०। पिंड०।

अहिरीमण– त्रि० *[अह्रीमनस्]*
लज्जाकारिणि शीतोष्णादौ परीषहे, आचा० १ श्रु० ६अ० २उ०

अहिलाण– न० *[अहिलान]*
मुखबन्धनविशेषे, नाया० १ ७अ०।
मुखसंयमने, जंबू० ३ वक्ष०। उव०।
कविके, नाया० ४ अ०।

अहिलावित्थी– स्त्री० *[अभिलापस्त्री]*
अभिलप्यत इत्यभिलापः, स एव स्त्री। स्त्रीलिङ्गाभिधाने शब्दे, यथा–शालामालासिद्धिरिति। सूय० १ श्रु० ४ अ० १ उ०।

अहिलोयण– न० *[अभिलोकन]*
अभिलोक्यते अवलोक्यते यत्र तदभिलोकनम्। उन्नतस्थाने, पण्हा०४ अ०।

अहिल्लियाए– अहिन्निका,
मैथुने दृष्टान्तः। पण्हा० ८९।

अहिवइ– पुं० *[अधिपति]*
नायके, ठा०५ ठा०१ उ०।
रक्षके, जंबू० १ वक्ष०।
नरेन्द्र, पण्हा०४ अ०।

अहिवइजंभग– पुं० *[अधिपतिजृम्भक]*
राजादिनायकविषये जृम्भक, भग० १ ४ उ० ८ उ०।

अहिवडंत– त्रि० *[अधिपतत्]*
आगच्छति, ओह०।

अहिसक्कण– न० *[अभिष्वष्कण]*
विवक्षितकालस्य संवर्द्धने परतः करणे, बुह०१ उ०।

अहिसरिय– त्रि० *[अभिसृत]*
प्रविष्टे, आव०म०।

अहिसहण– न० *[अधिसहन]*
तितिक्षणे, ठा० ६ठा०।

अहीकरण– न० *[अधीकरण]*
अधीरबुद्धिमान् पुरुषः, स तं करोतीत्य धीकरणम्। कलहे, निसि० १०उ०।

अहीण– त्रि० *[अधीन]*
स्वायत्ते, पण्हा० ४ अ०

अहीण– त्रि० *[अहीन]*
अन्यूने, अहीनान्यन्यूनानि स्वरूपतः प्रतिपूर्णानि लक्षणतः पञ्चाऽपीन्द्रियाणि यस्मिन् तत् तथाविधं शरीरं यस्याः सा तथा। उव०। नाया०। विपा०। भग०।
अहीनमङ्गोपाङ्गप्रमाणतः परिपूर्णपञ्चेन्द्रियं, प्रतिपुण्यपञ्चेन्द्रियं वा शरीरं यस्य सोऽहीनपरिपूर्णपञ्चेन्द्रियशरीरोऽहीन प्रतिपुर्ण पञ्चेन्द्रियशरीरो वा। ठा० ९ ठा०। कल्प०।

अहीणक्खर– न० *[अहीनाक्षर]*
एकेनाप्यक्षरेणाऽहीने, गच्छा० २ अधि०। सूय०।

अहीणदेह– त्रि० *[अहीनदेह]*
परिपूर्णदेहाऽवयवे, वव० ३उ०।

अहीय– त्रि० *[अधीत]*
आगमिते, 'उवयारो त्ति वा अहीतं ति वा आगमियं ति वा एगट्ठं'। निसि० १ उ०। ठा०।

अहुणोधोय– त्रि० *[अधुनाधौत]*
अचिरधौते, अपरिणते च। दश० ५ अ०।

अहुणुव्वासिय– त्रि० *[अधुनोद्वासित]*
अचिरोद्वासिते, ओह०।
साम्प्रतोद्वासिते, वव० ४ उ०।

अहुणोवलित्त– त्रि० *[अधुनोपलिप्त]*
साम्प्रतोपलिप्ते, दश० ५ अ०।

अहुणोववण्णग– त्रि० *[अधुनोपपन्नक]*
अचिरोपपन्ने, ठा०।

अहे– *[अधस्]*
दिग्भेदे। निसि० १८ उ०। भग०।

अहे– अव्य० *[अथ]*
अथाऽर्थे, भग० १ श० ६ उ०।
'अहे णं से' अथ चैतत्, ठा० ३ ठा० १ उ०। आचा०।
क्षेपे, नियोगे च। सम०।

अहेउ– पुं० *[अहेतु]*
यथोक्तहेतुप्रतिपक्षे, सम०।
अनुमानाऽनुत्थापके हेत्वाभासे, ठा०।
न विद्यते हेतुरस्येति, अनाद्यपर्यवसिते नित्य। सूय० १ श्रु० १ अ०१ उ०। भग०।

अहेकम्म– न० *[अधःकर्मन्]*
विशुद्धसंयमस्थानेभ्यः प्रतिपत्त्याऽऽत्मानमविशुद्धसंयमस्थानेषु यदधोऽधः करोति, तदधःकर्म। बुह० ४ उ०।
अधो नरकादेर्येन भक्तेन भुक्त वाऽत्मा क्रियते, तदधःकर्म। दश० ५ अ०।
अन्नविशुद्धेभ्यः संयमादिस्थाने-ऽधोऽधस्तरामागमने, पिंड०। आधाकर्मणि पिंड०।

अहेकाय– पुं० *[अधःकाय]*
उवादिके, सूय० १ श्रु० ४ अ० १ उ०।

अहेगारवपरिणाम– पुं० *[अधगौरवपरिणाम]*
येनाऽऽयुःस्वभावेन जीवस्याऽद्यो दिशि गमनशक्तिलक्षण-परिणामो भवति, तस्मिन् गौरवपरिणामभेदे, ठा०९ ठा०।

अहेचर– पुं० *[अधश्चर]*
बिलवासित्वात् सर्पादौ, आचा०१ श्रु०८ अ० ८ उ०।

अहेतारग– पुं० *[अधस्तारक]*
पिशाचभेदे, पन्न० १ पद०।

अहेपन्नगद्धरूव– त्रि० *[अधःपन्नगार्द्धरूप]*
अधोऽधस्तनं, यत् पन्नगस्य सर्पस्याऽर्द्धं तस्येव रूपमाकारो येषां तेऽधः पन्नगाऽर्धरूपाः। अधः पन्नगाऽर्द्धं वदति, सरलेषु दीर्घेषु च। जीवा० ३ प्रति०। रा०।

अहेसणिज्ज– त्रि० *[यथैषणीय]*
उत्कर्षणाऽपकर्षणरहिते,अपरिकर्मणि, ।आचा०१श्रु०८अ०४उ

अहेसत्तमा– स्त्री० *[अधःसप्तमी]*
तमस्तमायां पृथिव्याम्, अधोग्रहणं विना सप्तमी उपरिष्टाच्चिन्त्यमाना रत्नप्रभाऽपि स्यादित्यधोग्रहणम्। 'अहे-सत्तमाए पुढवीए' ठा० २ठा० ४ उ०।

अहो– अव्य० *[अहो]*
विस्मये, आव०म०। दश०। भग०। ठा०। उत्त०। सूय०।
आश्चर्ये, आचा०। विपा०।
दैन्ये, आमन्त्रणे च। गच्छा०२ अधि०। अनु०। सूय०।

अहोकरण– न० *[अधःकरण]*
अधोऽधस्तादात्मनः करणम्। कलहे, निसि० १०उ०।

अहोकाय– पुं० *[अधःकाय]*
अधस्तात् कायोऽधःकायः। पादे, आव० ३ अ०।

अहोणिस– न० *[अहर्निश]*
अहोरात्रे, । सूय० १ श्रु०५ अ० १ उ०।

अहोतरण– न० *[अधस्तरण]*
अधोऽधस्तादवतारभूमिं गृहनिःश्रेण्या इव करणमधःकरणम्। कलहे, निसि० १०उ०।

अहोदाण– न० *[अहोदान]*
विस्मयनीये दाने, अहो इति विस्मये, विस्मयनीयमिदं दानं कोऽन्यो दाता ? उत्त० २ अ०। कल्प०। आव०म०।
अहोदान- एवं दीयते, एवं हि दत्तं भवतीति। आव०१ अ०।

अहोदिसिव्वय– न० *[अधोदिग्व्रत]*
दिगधोऽधोदिक्, तत्संबन्धि, तस्या वा व्रतमधोदिग्व्रतम्। एतावती दिग्ध इन्द्रकूपाद्यवतारणादवगाहनीया, न परत इत्येवंरूपे दिग्व्रतभेदे, आव० ६ अ०।

अहोभागि– त्रि० *[अधोभागिन्]*
अधस्ताद् भागिनि, सूय० २ श्रु० ३ अ०।

अहोरत्त– पुं० *[अहोरात्र]*
त्रिंशन्मुहूर्ताऽऽत्मके, ज्यो० २ पाहु०। जंबू० । भग०।
दिवसरात्र्युभयाऽऽत्मके, सूर०१० पाहु०। सूय०। विशे०। अनु०। आव०म०। उत्त०। ठा०।
कालभेदे, न०। 'तिविहे अहोरत्ते तीते, पडुप्पन्ने, अणागए'। ठा० ३ ठा० ४ उ०।
अहोरात्रे, आव०चू० १ अ०। आव०म०।

अहोराइया– स्त्री० *[अहोरात्रिकी]*
'अहोराइंदिया णवरं छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं बहियागमस्स वा० जाव दोवि पादे वग्घारितपाणिस्स ट्ठाणं ठाइ तए, सेसं तं चेव० जाव अणुपालिया भवइ'। आव०चू० ४ अ०।
अहोरात्रप्रमाणा एकादश भिक्षु प्रतिमा। सम०।

अहोलोय– पुं० *[अधोलोक]*
लोक्यते केवलिप्रज्ञाया परिच्छिद्यते इति लोकः। अधोव्यवस्थितो लोकोऽधोलोकः। अथवाऽधः शब्दोऽशुभ पर्यायः, तत्र च क्षेत्रानुभावाद् बाहुल्येनाशुभ एव परिणामो द्रव्याणां, जायतेऽतोशुभपरिणामवद् द्रव्ययोगादधोऽशुभो लोकोऽधोलोकः।
अहवा अहो परिणामो, खेत्ताणुभावेण जेण उसण्णं।
असुभो अ होति भणिओ, दव्वाणं तेणऽहोलोगो त्ति।।
लोकभेदे, स च अस्यां रत्नप्रभायां बहुसमभूभागे मेरुमध्ये नभः प्रतरद्वयश्च प्रदेशो रुचकः, समस्थितस्य च प्रतरद्वयस्य मध्ये एकस्मादधस्तनप्रतरादारभ्याऽधोऽभिमुखं नवयोजनश-तानि परिहृत्य परतः सातिरेकसप्तरज्जवायतोऽधोलोकः। अनु० चमरादिभवने, आव०१ अ०। ठा०। पन्न०। आव०म०।
तिर्यग्लोकस्याधस्ताल्लोकः। पन्न०।

अहोवाय– पुं० *[अघोवात]*
अधो गच्छन् यो वाति वातः सोऽधोवातः। पन्न०१ पद०।
अधोनिमज्जति वायुभेदे । नाया०१ पद०।

अहोवियड– त्रि० *[अधोविकट]*
अधः कुड्यादिरहिते, छन्ने हि उपरि तदभावे च। आचा० १ श्रु० ९ अ० २ उ०।

अहोविहार– पुं० *[अहोविहार]*
अहो ! इत्याश्चर्ये, विहरणं विहारः। आश्चर्यभूतोऽहोविहारः। संयमाऽनुष्ठाने, समुट्ठिए अहोविहारए।आचा०१ श्रु०२अ०१ उ०

अहोसिर– त्रि० *[अधःशिरस्]*
अधोमुखाः कण्टकाः भवन्तीति चतुर्दशस्तीर्थकराऽतिशयः। सम० ३४ सम०।
अधोमस्तके, उत्त०२ ३अ०।अधोमुखो नोर्ध्वं तिर्यग् वा विक्षिप्त दृष्टिः, किन्तु नियतभूभाग–नियमितदृष्टिः। नाया० १ अ०। विपा०। जंबू० । सूर०। भग०। उव०। चंद०। निसि०।

अहोहि– त्रि० *[अधोऽवधि]*
परमावधेरधोवर्त्यवधिर्यस्य सोऽधोऽवधिःपरमावधेरधोवर्त्यव-धियुक्ते, रा०। ठा०।

अहोहिय– त्रि० *[यथावधि]*
यत्प्रकारोऽवधिरस्येति यथाऽवधि नियतक्षेत्रविषयाऽवधि-ज्ञानिनि, ठा० २ ठा० ९ उ०। सम०।

---x---x---x---x---x---x---x---

अ-कारादि शब्द-परिभाषाः समाप्ताः

आ-कारादि शब्द-परिभाषाः

आ-अव्य० *[आ]*
आ-अभिविधिना-सकलश्रुत व्याप्तिरूपेण मर्यादया वा। आव०म० १ अ०।
मर्यादया अभिविधिना वा। ओह०
मर्यादायाम्, (सीम्नि) पन्न० ३६ पद०। आव० म०। भग०। ओह०। सूय०।
समन्तादित्यर्थे, उत्त० १ अ० १। सम०। रा०। सूय०।
अवागर्थे, (अधोभूमौ), पन्न० २ पद० ।
ईषदर्थे, आङः मर्याद्विषत्वात्। आचा०। सूय०।
अमर्षे, आभिमुख्ये, रा०।
अनुकम्पायाम्, समुच्चये, अङ्गीकारे, कोपे, पिडायाम,एकार्थाः आः किमेतदित्येवम विस्मये, ठा० ५ ठा० ३ उ० सूय०।

आइ-१ पुं० *[आदि]* आदीयते-(गृह्यते) इति आदिः-प्रथमः। यस्मा-त्परमस्ति, न पूर्वं स आदिः। अनुओ० ७४ *।
मूलकारणे, पन्न०११ पद० १, ६५ *।
मूलमादिरित्यनर्थान्तरमिति। आव० चू० १ अ०।
प्रथमोत्पत्तौ, सूय० २ श्रु०५ अ०२ *।
प्राथम्ये, उत्त० १ अ० ३३ *।
प्रधाने, आचा०२ श्रु०१ चू०१ अ०४ उ०२२ *।
उत्सेधाख्ये नाभेरधस्तते देहभागे, ठा० ६ ठा० ३ उ० ४९५*।
भेदे, (प्रकारे,) निसि० १ उ०।
सामीप्ये, व्यवस्थायाम्, अवयवे च। आह च 'सामीप्ये च, व्यवस्थायां, प्रकारेऽवयवे तथा। चतुर्ष्वर्थेषु मेधावी, ह्यादि-शब्दं तु लक्षयेत्।।१ ।।'पण्हा० १ अ० ३*।

आइ-२ स्त्री० *[आजि]*
अजन्त्यस्यामिति, संग्रामे, समरभूमौ। संथा० ६७*।

आइअंतियमरण- न० *[आत्यन्तिकमरण]*
अत्यन्तं भवमात्यन्तिकं तच्च तन्मरणं चेति कर्मधारयः। भग० १२ श० ६ उ० ४९*।

आइं- अव्य० *[आइं]*
वाक्यालङ्कारे,पण्हा० ३ अ० २६ *।
'आइं' ति निपातः। भग० १५ श० १ उ० ५५० *।
'तक्करं एवं वयासी-अवि-आइं अहं विजया ! 'अपिः' संभा-वने 'आइं' ति भाषायाम्। नाया० १ श्रु० २ अ०।

आइकडिल्ल- नं० *[आदिकडिल्ल]*
आद्यगहने,तच्चादिकडिल्लमुद्गमोत्पादनैषणारूपं ज्ञानादिरूपम् । बुह० १ उ०*।
कंटगमादीसु जधा,आदकडिल्ले तधा जयंतस्स। निसि०४ उ०

आइक्ख- धा० *[आ+ख्या]*
सामान्येन, कथने, ।' सामान्येन भाषते इत्यर्थः। उव०२७* सामान्येनाचष्टे। विपा० २ श्रु० १ अ० ३३*।

आइक्ख- त्रि० *[आख्येय]*
कथनीये, ठा० ४ ठा० २ उ० ३९६ *।

आइक्खग- पुं० *[आख्यायक]*
शुभाशुभमाख्याय जीविकां कुर्वत्या जीविकाविशेषे, जंबू० २ वक्ष० ३०* ।

आइक्खण- न० *[आख्यान]*
सामन्यतः कथेन, संहिताकर्षणपूर्वककथने च। उव०२७ *। 'संहियकट्टणमादिक्खणं तु'। इह संहिवाया अस्खलित पदोच्चारणरूपाया यदाकर्षणं तत् आख्यानमुच्यते, तच्चेदम्, व्रतसमितिकषायाणां धारणरक्षणविनिग्रहाः सम्यक् दण्डेभ्यश्चोपरमो धर्मः पञ्चेन्द्रियदमश्चैवं भिक्षां गते गृहस्थानां धर्मकथनार्थं संहिताकर्षणं करोति। बुह० ३ उ०।

आइक्खमाण- त्रि० *[आचक्षाण]*
कथयति, 'आइक्खमाणो'। सूय० १ श्रु० १४ अ०।

आइक्खिय- न० *[आख्यायिक]*
पापश्रुतविशेषे, सा च मातङ्गविद्या यदुपदेशादतीतादि कथयतीति। ठा० ९ ठा० ३ उ० ६७८*

आइक्खित्तए- अव्य० *[आख्यातुम]*
कथयितुमित्यर्थे, बुह० ३ उ० २३*।

आइगर- त्रि० *[आदिकरे]*
आदौ प्रथमतः श्रुतधर्म्माचारादि ग्रन्थात्मकं कर्म करोति तदर्थप्रणायकत्वेन प्रणयतीत्येवं शीलः। भग०१ श०१ उ० ५*। आदिः-श्रुतधर्मस्य प्रथमा प्रवृत्तिस्तत्करणशीलः। रा०।
स्वस्वतीर्थापेक्षया धर्मस्येति।कल्प०१अधि०२ १५*।जीवा०। श्रुतधर्मस्य प्रथमप्रवृत्तिकारकेतीर्थकरे।आव०५अ०१*। सम०

आइगुण- पुं० *[आदिगुण]*
आदौ गुणः सप्तमीतत्पुरुषः। सहभाविनि गुणे,आव०४ अ०१।

आइच्च- पुं० *[आदित्य]*
कृष्णराज्यवकाशान्तरस्थलोकान्तिकसंज्ञकार्चिर्मालिविमानस्थे लोकान्तिकदेवविशेषे, नाया०१ श्रु०४ अ०७७*।ठा०। भग० ग्रैवेयकविमानविशेषे, तन्निवासिनि वैमानिकदेवविशेषे च। समयावलिकादीनामादौ भवे।सूर० २०पाहु० १०५*। भग०। सूर्य्य, आव० ४ अ०।

आइच्चगय- चि० *[आदित्यगत]*
सूर्य्याऽऽक्रान्ते नक्षत्रादौ, 'आइच्चगए अनिव्वाणी'। रविगते नक्षत्रे शुभप्रयोजने प्रारभ्यमाणेऽसुखम्।बुह०१ उ०।

आइच्चजस- पुं० *[आदित्ययशस्]*
ऋषभदेववंशजे भरतात्मजे नृपभेदे, आव०चू०१ अ०। 'राया आइच्चजसे०'।। ३६३।। आव० म० १ अ०। ठा०। आदित्ययशःप्रभृतयो भगवन्नाभेयवंशजाः त्रिखण्डभरतार्द्धमनुपाल्य पर्यन्ते पारमेश्वरीं दीक्षामतिगृह्य तत्प्रभावतः सकल कर्मक्षयं कृत्वा सिद्धिमगमन्निति। नं० ५६*।

आइच्चपीढ- न० *[आदित्यपीठ]*
गजपुरस्थे श्रेयांसेन कारिते आदितीर्थकरस्य रत्नमये पादपीठे, आव० म०।

आइच्चमास- पुं० *[आदित्यमास]*
आदित्यस्यायमादित्यः। आदित्यचारनिष्पन्नत्वादुपचारतो वाऽऽदित्यः स चासौ मासश्च कर्मधारयसमासः। आदित्यचारनिष्पन्ने मासभेदे, स चैकस्य दक्षिणायनस्योत्तरायणस्य वा त्र्यशीत्यधिकशतदिनप्रमाणस्य षष्ठभागप्रमाणः।वव०१ उ०।

आइच्चसंवच्छर- पुं० *[आदित्यसंवत्सर]*
प्रमाणसंवत्सराणांमध्ये चतुर्थे संवत्सरविशेषे, यावता कालेन षडपि प्रावृडादय ऋतवः परिपूर्णा आवृत्ता भवन्ति तावान् कालविशेष आदित्यसंवत्सरः। उक्तं च–'छप्पि उऊ परियट्टा, एसो संवच्छरो उ आइच्चो' तत्र यद्यपि लोकेषष्ट्यहोरात्रप्रमाणः प्रावृडादिक ऋतुः प्रसिद्धः, तथापि परमार्थतः स एकषष्ट्यहोरात्रप्रमाणो वेदितव्यः तथैवोत्तरकालमव्यभिचारदर्शनात् अत एवास्मिन् संवत्सरे त्रीणि शतानि षट्षष्ट्याधिकानि रात्रिंदिवानां भवन्ति। चंद० १० पाहु० २० पाहु०पाहु० । सूर० १० पाहु० २० पाहु०पाहु० ।
तत्र त्र्यशीत्यधिकशततमोऽहोरात्रः प्रथमस्य षण्मासस्य पर्य्यवसानम्।षट्षष्ट्यधिकत्रिंशत्तमोऽहोरात्रो द्वितीयस्य षण्मासस्य पर्य्यवसानम्। एष एवंप्रमाण आदित्यसंवत्सरः। चंद० १ पाहु० । सूर० १ पाहु० ।

आइज्ज- त्रि० *[आदेय]*
ठाह्ये, जंबू० २ वक्ष०।
उपादेये, उत्त० १ अ०।

आइज्जमाण- त्रि० *[आर्द्रयमाण]*
आर्द्रीक्रियमाणे, आचा० १ श्रु०५ अ० ३ उ०।

आइज्जवक्क- त्रि० *[आदेयवाक्य]*
ठाह्यवाक्ये, 'से सुद्धसुत्ते उवहाणवक्के, धम्मे च जे विन्दति तत्थ तत्थ। आदेज्जवक्के०'। एतद्गुणसम्पन्नश्चादेयवाक्यो भवति। सूय० १ श्रु० १४ अ०।

आइज्जवयण- त्रि० *[आदेयवचन]*
सकलजनग्राह्यवाक्ये, दशा० १ अ०। उत्त०। ठा०।

आइज्जवयणया- स्त्री० *[आदेयवचनता]*

सकलजनग्राह्यवाक्यताया ग्राह्यवचनतारूपे वचनसम्पद्भेदे, उत्त० १ अ०। ठा०।

आइट्ठ- न० *[आदिष्ट]*

चोदिते, त्रि०। सूय० १ श्रु०४ अ०१ उ०।

आदेशे, भग० १२ श० १० उ०।

विशेषरूपेण निर्दिष्टे, त्रि०। यथाऽयं देवदत्तोऽयं यज्ञदत्त इति। बुह० ४ उ०।

आविष्ट, अधिष्ठित, त्रि०। ठा० ५ ठा० २ उ०।

विशिष्टम्। बुह० ।

आइट्ठि- स्त्री० *[आदिष्टि]*

धारणायाम्, ठा० ७ ठा० ३ उ०।

आइड्ढि- स्त्री० *[आत्मर्द्धि]*

आत्मन ऋद्धिः। स्वकीय-शक्तौ, आत्मलब्धौ च। भग० १० श० ३ उ०।

आइड्ढिय- पुं० *[आत्मर्द्धिक]*

आत्मान एव ऋद्धिर्यस्य ६ बुह०।

स्वकीयशक्तिसम्पन्न, स्वकीयलब्धिसम्पन्ने च। भग०।

आइणग पुं० *[आजिनक]*

चर्ममयं वस्त्रम्, जम्बू० ३६।

मूषकादिचर्मनिष्पन्नानि। आचा० ३९४।

आइणाह- पुं० *[आदिनाथ]*

ऋषभदेवे, आव० म० १ अ०।

आइण्ण-१ त्रि० *[आकीर्ण]*

व्याप्ते (युक्ते) रा०।

आकीर्णे, समाकुले, बुह०१ उ०।

संकीर्णे, उव०।

संकुले, आचा०२ श्रु०१ चू०१ अ० ३ उ० १७*।

समन्तान्निक्षिप्तम्। भग०।

सम्बाधनं स्त्रीस्पर्शादिदोषाः। ओघ०।

गुणैर्व्याप्तः। जीवा० २७०।

आइण्ण-२ त्रि० *[आकीर्ण]*

आकीर्णाविमानवर्जना च विहारचर्य्या प्रशस्ता। दश० २ चू०।

आकीर्य्यतेव्याप्यते विनयादिगुणैरिति। जात्ये अश्वविशेषे च। स च जवविनयादिगुणैर्युक्तः। ठा० ४ ठा० ३ उ०।

'आइण्णवरतुरयसुसंपउत्ते' भग० ७ श० ८ उ०।

जात्यवरतुरगे, जीवा० ३ प्रति० ४ अधि०।

जवादिगुणयुक्ते अश्वे, नाया०१ श्रु०१७ अ०। ठा०।

पुरुषविशेषे च। स च विनयादिगुणोपेतः। स्था०४ठा०३ उ०

आइण्ण-३ त्रि० *[आचीर्ण]*

आचर्य्यत इति। कल्पनीये, निसि० १ उ०।

आइण्णं णाम जं साहूहिं आयरियं विणा वि ओमादिकारणेहिं गेण्हइ। निसि०१५ उ०।

आचीर्णम्-आसेवितं० तच्च नामदि षोढा, तद् व्यतिरिक्तं द्रव्याऽऽचीर्णं सिंहादेस्तृणादिपरिहारेण पिशितभक्षणम्० क्षेत्राऽऽचीर्णं वाल्हीकेषु सक्तवः। कोङ्कणेषु पेयाः। कालाचीर्णं त्विदम्-'सरसीचंदणपंका, अग्घइ सरसा य गंधकासादी। पाडलिसिरीसमिल्लय, पेयाइं काले निदाहम्मि।' भावाचीर्णं तु ज्ञानादिपञ्चकं, तत्प्रतिपादकश्चारग्रन्थः 'आइण्णं जं पुण अणुण्णायं।' आचा० १ श्रु०१ अ०१ उ०।

अनुज्ञाते, निसि० १५ उ०।

आइण्णजणमणुस्स- त्रि० *[आकीर्णजनमनुष्य]*

मनुष्यजनसंकुले, नाया० १ श्रु० १ अ०। उव०।

आइण्णट्ठाण- न० *[आकीर्णस्थान]*

हिरण्यादिवस्तुव्याप्ते स्थाने, 'आइण्णादीणि वज्जए ठाणे।' भिक्षार्थं प्रविष्टः साधुः आकीर्णादिस्थानं परिवर्जयेत्। यत्र हिरण्यादि। विक्षिप्तमास्ते तदाकीर्णस्थानं तच्च साधुना वर्जनीयम्। ओह०।

आइण्णणायज्झयण- न० *[आकीर्णज्ञाताध्ययन]*

ज्ञाताङ्गस्य सप्तदशेऽध्ययन, आव०चू०४अ०। आव०। सम०।

आइण्णमणाइण्णकल्प- पुं० *[आचीर्णाऽनाचीर्णकल्प]*

आसेवितेऽनासेविते आचारे, पंच०भा०।

आइण्णहय- पुं० *[आकीर्णहय]*

आकीर्णो-गुणौर्व्याप्तः स चासौ हयश्च आकीर्णहयः। सम०। जात्येऽश्वविशेषे, स च जवविनयादिगुणोपेतः।। 'आइण्णहय व्व निरुवलेवे' यथा जात्याऽश्वो मूत्रपुरीषाद्यनुपलिप्तगात्रः। जीवा० ३ प्रति०४ अधि०।

आइतित्थयर- पुं० *[आदितीर्थक]*

ऋषभदेवस्वामिनि,'भगवओ उसहसामिस्स आइतित्थयरस्स'। नं० ४३*।

आइतित्थयरमंडल- न० *[आदितीर्थकरमण्डल]*

श्रेयांसेन कारिते आदितीर्थकरस्य पीठे, आव०म० १ अ० ।

आइत्त- त्रि० *[आदीप्त]*

ईषद्दीप्ते, नाया० १ श्रु० १ अ०।

आइत्ता- त्रि० *[आदाता]*

गृहीतरि, ठा० ७ ठा० ३ उ०।

आइत्तु- अव्य० *[आदाय]*

गृहीत्वेत्यर्थे, आचा० १ श्रु० ४ अ०१ उ०१ २७*।

आइद्ध- त्रि० *[आदिग्ध]*
व्याप्ते। नाया० १ श्रु०१ अ०।

आइदाण- नं० *[आदान]*
ग्रहणे, पण्हा०।

आइमुहुत्त- नं० *[आदिमुहूर्त्त]*
प्रथमे मुहूर्त्ते, सम०।

आइमूल- न० *[आदिमूल]*
प्रधानकारणे भावमूलभेदे, संसारस्य त्वादिमूलं विषयकषाया: आचा०।

आइमोक्ख- पुं० *[आदिमोक्ष]*
आदिः-संसारस्तस्मान्मोक्षः आदिमोक्षः।संसारविमुक्तौ,सूय०। धर्मकारणानां शरीरं तावदादिभूतं तस्य मोक्षः-तद्विमुक्तिः यावज्जीवमित्यर्थः। शरीरपरित्यागे च। 'वियडे णं जीविज्ज य आदिमोक्खं यावज्जीवम्। सूय० १ श्रु० ७ अ०।
आदौ-प्रथमं मोक्षोऽस्येति। मोक्षोद्यते साधौ, आदि-प्रधानं मोक्षास्येति। मोक्षैकताने साधौ च। सूय०।

आइय- त्रि० *[आचित]*
व्याप्ते नाया० १ श्रु० ९ अ०।
गुम्फिते, ग्रथिते, 'तुलापलशतं तासां, विंशत्याभार आचित' इत्युक्तेर्भारात्मकेद्विसहस्रपलमाने,'आचितं दश भाराः स्यात्, शाकटो भार आचितः' इत्युक्ते दशभारमाने, नं०।

आइयत्तिय- पुं० *[आदियात्रिक]*
आदौ यात्राऽस्येति सार्थवाहादीनामारक्षके, बुह०।

आइयावण- न० *[आदापन]*
ग्राहणे,'आदियावेंति'आदापयन्ति-ग्राहयन्ति।सूय०२श्रु०१अ०

आइराय- पुं० *[आदिराज]*
ऋषभदेवे, ठा०६ ठा० ३ उ०।

आइल- त्रि० *[आविल]*
अस्वच्छे, कालुष्ययुक्ते, सूय० १ श्रु० ६ अ०।

आइल्ल- त्रि० *[आदिम]*
आद्ये। सम०। सूर०। चंद०

आइल्लचंद- पुं० *[आदिमचन्द्र]*
उत्तरोत्तरद्वीपसमुद्रचन्द्रापेक्षया पूर्व पूर्वद्वीपसमुद्रचन्द्रे, सूर०।

आइल्लसूर- पुं० *[आदिमसूर्य्य]*
उत्तरोत्तरद्वीपसमुद्रसूर्य्यापेक्षया पूर्व-पूर्वद्वीपसमुद्रसूर्य्ये सूर०१८ पाहु० । चंद० १८ पाहु० ।

आईण-१ न० *[आजिन]*
मूषकादिचर्मनिष्पन्ने वस्त्रे, आचा०२ श्रु०२ अ०६ उ०।
द्वीपविशेषे, समुद्रविशेषे च। पुं०। जीवा०३ प्रति० ४ अधि०।

आईण-२ नं० *[आदीन]*
आसमन्तादीनम्। अत्यन्तदीनतायाम्, सूय० १श्रु०५अ०१ उ०

आईणग- न० *[आजिनक]*
चर्म्ममये वस्त्रविशेषे, रा०।
तच स्वभावादतिकोमलं भवति। नाया०१ श्रु०१ अ०।
परिकर्मितकर्म्मणि, नाया०। आव० म०। निसि०। जीवा०।
'आईणगरूयवूरणवणीयतूलफासे' भग०११ श० ११ उ०।
'आईणाणि वा आईणपवराणिं वा०' सूय०।
आजिणं चम्मं तम्मि जे कीरंति ते 'आईणाणि' ।निसि० ७ उ०

आईणभद्द- पुं० *[आजिनभद्र]*
आजिने द्वीपे, आजिनभद्राजिनमहाभद्रौ। आजिनद्वीपस्थे देवे, जीवा० ३ प्रति०४ अधि०।

आईणभोइ- पुं० *[आदीनभोजिन्]*
पतितपिण्डोपजीविनि, सूय०।

आईणमहाभद्द- पुं० *[आजिनमहाभद्र]*
आजिनद्वीपस्थे देवे, जीवा० ३ प्रति०४, अधि०।

आईणमहावर- पुं० *[आजिनमहावर]*
आजिनसमुद्रस्थे देवे, आजिनवरसमुद्रस्थे देवे च। जीवा० ३ प्रति० ४ अधि०।

आईणवर- पुं० *[आजिनवर]*
द्वीपविशेषे, समुद्रविशेषे च। आजिनसमुद्रस्थे देवे, आजिन-वरसमुद्रस्थे देवे च। जीवा० ३ प्रति० ४ अधि०।

आईणवरभद्द- पुं० *[आजिनवरभद्र]*
आजिनवरद्वीपस्थे देवे, जीवा० ३ प्रति०४ अधि०।

आईणवरमहाभद्द- पुं० *[आजिनवरमहाभद्र]*
आजिनवरद्वीपस्थे देवे, जीवा० ३ प्रति०४ अधि०।

आईणवरोभास- पुं० *[आजिनवरावभास]*
द्वीपविशेषे, समुद्रविशेषे च। जीवा० ३ प्रति०४ अधि०।

आईणवरोभासभद्द- पुं० *[आजिनवरावभासभद्र]*
आजिनवरावभा-सद्वीपस्थे देवे, जीवा० ३ प्रति० ४ अधि०।

आईणवरोभासमहाभद्द- पुं० *[आजिनवरावभासमहाभद्र]*
आजिनवरावभासद्वीपस्थे देवे, जीवा० ३ प्रति०४ अधि०।

आईणवरोभासमहावर- पुं० *[आजिनवरावभासमहावर]*
आजिनवरावभाससमुद्रस्थे देवे, जीवा० ३ प्रति०४ अधि०।

आईणवरोभासवर- पुं० *[आजिनवरावभासवर]*
आजिनवरावभाससमुद्रस्थे देवे, जीवा० ३ प्रति०४ अधि०।

आईणवित्ति- पुं० *[आदीनवृत्ति]*
आ-समन्तादीनाकरुणास्पदा वृत्तिः-अनुष्ठान यस्य कृपण वनी-पकादेरित्यर्थः। अत्यन्तदीनवृत्तिके कृपणवनीपकादौ, सूय०।

आईणिय- पुं० *[आदीनिक]*
आ-समन्ताद्दीनमादीनं तद्विद्यते यस्मिन्सः। अत्यन्तदीनसत्त्वाश्रये, सूय०।

आईरण- त्रि० *[आजीरण]*
आजिः-संग्रामस्तमीरयति-प्रेरयति क्षिपात जयतीति यावत्। राज्यावस्थायां संग्रामजेतरि, संथा० ६६*।

आईवमाण- त्रि० *[आदीप्यत्]*
प्रकाशमाने, महा० २ अ०।

आउ-१ स्त्री० *[अप्]*
द्रवलक्षणे महाभूतविशेषे, 'आप्स्वयोगादापस्ताश्च रूपरसस्पर्शसंख्यापरिमाणपृथक्त्वसंयोगविभागपरत्वापरत्वगुरुत्वस्वाभाविकद्रवत्वस्नेहवगवत्यस्तासु च रूपं शुक्लमेव, रसोमधुर एव, स्पर्शः शीत एव' इति वैशेषिकाः सूय०।
'रसतन्मात्रादापो रसरूपस्पर्शवत्य' इति श्लेष्मासुगद्रवलक्षणा आपः। इति च सांख्या। सूय०१ श्रु०१ अ०१ उ०।
'अपां स्थानं रसनं' रसनेन्द्रियमिति।सूय०१ श्रु०१ अ०१ उ० तासां जीवत्वम्-'सात्मकमम्भौ भौमं, भूमिखनेनं स्वाभाविकसंभवाद्, ददुस्वत्' ।अथवा-'सात्मकमन्तरिक्षोदकं स्वभावतो व्योमसंभूतस्य पातात्, मत्स्यवत्'। आह च-'भूमिक्खय साभावियसंभवआ ददुरो व्व जलमुत्तं। अहवामच्छो व्व सहाववोमसंभूयपायाओ'।।१ इति। ठा०१ ठा०।
'आऊ वि जीवा'। आपश्च-द्रवलक्षणा जीवाः।सूय०१श्रु७ अ०

आउ-२ स्त्री० *[अप्]*
जलनामकेदेवविशेषे, तदधिष्ठातृकेपूर्वाषाढानात्र च। आपो जलनामा देवस्तेन पूर्वाषाढातोयमिति प्रसिद्धम्। जंबू० ७ वक्ष०। ठा०।
'पुव्वासाढा आउदेवताए' सूर० १० पाहु० १२ पाहु०पाहु०।
ननु स्वस्वामिभावसम्बन्धप्रतिपादकभावमन्तरेण कथं देवतानाम्ना नक्षत्रनाम सम्पद्यते ? उच्यते- अधिष्ठातरि अधिष्ठेयस्योपचाराद् भवतीति। जंबू ७ वक्ष०।
'दो आऊ' ठा० २ ठा० ३ उ०।

आउ-३ न० *[आयुस्]*
प्रतिसमयं भोग्यत्वेनायातीत्यायुः। निसि० ११ उ०।
स्वकीयावसरे एति च, आयाति चेत्यायुः। ठा० ४ ठा० २ उ०। उत्त०।
आ-समन्तादेति-गच्छति भवाद्भवान्तरसंक्रान्तौ जन्तूनां विपाकोदयमित्यायुः। दशा०।
जीवितविपाकवेद्ये भवोपग्राहिणि कर्मविशेषे, जंबू ४ वक्ष०। उत्त०। विशे०।
एतद्रूपं च-'दुक्खं न देइ आऊ न वि य सुहं देइ चउसु वि गइसु। दुक्खसुहाणाऽऽधारं धरेइ देहट्ठियं जीवं।।१।।' इति। ठा० २ ठा० ४ उ०।
आयुर्भवस्थितिहेतवः कर्मपुद्गलाः।आचा० १श्रु० २अ० १ उ० जीविते, ठा० ८ ठा० ३ उ०।
तेष्वविरकालं शरीरसम्बन्धः। तं०। ठा०।

आउ-४ अव्य० *[आहोस्वित्]*
आहो च स्विच्च। विकल्पे, प्रश्ने च। 'आहोस्वित् शाश्वतं स्थानं, तेषां तत्र द्विजोत्तम !' द्विपदमित्येके। 'किं देवाणं वयणं, गेज्जं आउ जिनवराणं' 'आउ' त्ति-आर्षत्वात्-आहोस्विदिति। उत्त० १ अ०।

आउंचण- न० *[आकुञ्चन]*
गात्रसंकोचने, आव०४ अ०।

आउंचणपट्टग- न० *[आकुञ्चनपट्टक]*
पर्यस्तिकापट्टे, बुह०।

आउंटण- न० *[आकुंचन]*
संकोचने, आव०४ अ०।
आउंटणे गात्रसंखेवो। आव०चू०४ अ०।

आउंटणपसारण- न० *[आकुञ्चनप्रसारण]*
आकुञ्चनं जङ्घादेः संकोचनं, प्रसारणं च तस्यैव जङ्घादेः सङ्कुचितस्य ऋजुकरणं आकुञ्चन-प्रसारणे च। जङ्घादिसङ्कोचनाकुञ्चितजङ्घाद्यृजुकरणयोस्तदात्मके एकासनप्रत्याख्यानस्याकार विशेषे च। आव०।
हत्थं वा पायं वा सीसं वा पसारे आउंटेज्ज वा पसारेज्ज वा ण भज्जेति। आव०चू०६ अ०।

आउअकरण- न० *[आयुष्करण]*
आयुषः करणमिति। जीवितविपाकवेद्यस्यायुष्कर्मविशेषस्य निर्वर्तने, 'आयुःकरणम्' इति-आयुषः-पञ्चमकर्मप्रकृत्यात्मामकस्य करणं-निर्वर्तनम्-आयुःकरणम्। उत्त० ०४ अ०।

आउकम्म- नं० *[आयुष्कर्मन्]*
एति-याति चेत्यायुस्तन्निबन्धनं कर्मायुष्कर्म। कर्मविशेषे, उत्त० १ अ०।

आउकाइय- पुं० *[अप्कायिक]*
आपो-द्रवास्ता एव कायः शरीरं यस्येति अप्काय एवाप्कायिकः एकेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवविशेषे, पन्न०१ पद०।

आउकाय- पुं० *[अप्काय]*
आपः कायो यस्सेति।
एकेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवभेदे, षट्कायभेदे च जीविनि, पन्न०१ पद०। सम०

आउक्कायविहिंसग- त्रि० *[अप्कायविहिंसक]*
सचित्तजलविराधक। गच्छा०१ अधि०।
आउक्काल- पुं० *[आयुष्काल]*
मृत्युकाल, आचा०१ श्रु०८ अ०८ उ०
आउक्खय- पुं० *[आयु:क्षय]*
आयुष्कर्मपुद्गलनिर्जरण, ठा० ८ ठा० ३ उ०।
आयुर्दलिकनिजरणे, निर० १ अ०।
कर्म-द्रव्यनिर्जरणे, विपा० २ श्रु० १ अ०।
कर्मणो दलिकनिर्जरणे, उव०। भग०
आउक्खेम- न० *[आयु:क्षेम]*
आयुषः क्षेममिति ।आयुषः सम्यक्पालने, जीविते च। आचा०
आउजीव- पुं० *[अब्जीव]*
आप एव जीवः। स्थावरजीवविशेषे, अबाश्रितो वा जीवः। उदकाश्रिते जीवे च। सूय० १ श्रु०११ अ
आउज्ज- न० *[आतोद्य]*
आ-समन्तात् तुद्यते। वीणादौ वाद्ये, आचा० १ श्रु० १ अ० ५ उ० । ठा०। अनुओ०। आव०। जीवा०।
तच्च द्विविधम्- ततविततभेदात्। ततवितते अपि द्विविधे - घन-शुषिरभेदात्। ठा०२ ठा० ३ उ०।
चतुर्विधम्-ततविततघनशुषिरभेदात्। बुह०१ उ०।
'ततं वीणादिकं ज्ञेयं !, विततं पटहादिकम्। घनं तु कांस्यतालादि, वंशादि शुषिरं मतम्'।। इति विवक्षाप्राधान्याच्च न विरोधो मन्तव्यः। ठा० १ ठा० ३ उ०। आचा०।
आवज्ज- पुं० *[आवर्जनमावर्जः]*
अभिमुखीकरणे,आवर्ज्यतेऽभिमुखीक्रियते मोक्षोऽनेनेति शुभ-मनोवाक्कायव्या पारविशेषे च। उक्तञ्च–'आवज्जणमुवओगो वावारो वा' । विशे०।
आवर्ज्यते-अभिमुखीक्रियत, अभिमुखीकर्त्तव्ये,पन्न०३६ पद०
आवज्ज- त्रि० *[आवर्ज्य]*
आवर्ज्यत इति। अभिमुखीकर्त्तव्ये, आव० म० १ अ०।
आउज्जण- न० *[आवर्जन]*
अभिमुखीकरणे, शुभमनोवाक्कायव्यापारे च। पन्न० ३६ पद०। विशे०।
आउज्जसद्द- पुं० *[आतोद्यशब्द]*
नोभाषाशब्दविशेषे, ठा०२ ठा० ३ उ०।
स च वेणुवीणामृदङ्गादीनां यो शब्दः। जीवा० ३ प्रति० ४ अधि०।
आउज्जिय- पुं० *[आयोगिक]*
उपयोगवति ज्ञानिनि, भग०२ श० ५ उ०।

आउज्जिय- त्रि० *[आवर्जित]*
अभिमुखीकृते तथा च लोके वक्तारः-आवर्ज्जितोऽयं मयाः, सम्मुखीकृत इत्यर्थः। पन्न० ३६ पद०।
आउज्जियकरण- न० *[आवर्जितकरण]*
आवर्जितस्य करणमिति केवलिसमुद्घातात्पूर्वं क्रियमाणे शुभ-योगव्यापारणे, तच्च भव्य त्वेनावर्जितस्य मोक्षगमनं प्रत्यभि-मुखीकृतस्य शुभयोव्यापारणम्। पन्न० ३६ पद०।
आउज्जिया- स्त्री० *[आयोजिका]*
व्यापारणे, आव० म० १ अ०।
आउज्जियाकरण- न० *[आयोजिकाकरण]*
आङ्-मर्य्यादया कचलिदृष्ट्या योजन-शुभानां योगानां-व्यापारणम्। तस्य करणमिति। केवलिसमुद्घातात्पूर्वं क्रियमाणे शुभव्यापारात्मके क्रियाविशेषे, पन्न० ३६ पद०। आव० म०।
आउज्जीकरण- न० *[आवर्ज्जीकरण]*
आवर्जनमावर्ज्जः तस्य करणमिति। केवलिसमुद्घातात्पूर्वं क्रियमाणे आत्मानं प्रति मोक्षस्याभिमुखीकरणेनात्मनो मोक्षं प्रत्युपयोजनकरणे, आवर्ज्यतेऽभिमुखीक्रियते मोक्षोऽनेनेति आवर्जस्तस्य करणम्। केवलिसमुद्घातात्पूर्वं क्रियमाणे शुभमनोवाक्कायव्यापारविशेषकरणे, पन्न० ३६ पद०।
आवर्ज्यते इत्यावर्जः, तस्य करणम्। केवलिसमुद्घातात्पूर्वं क्रियमाणे मोक्षे प्रत्यभिमुखीकर्त्तव्यस्य करणे, तच्चान्तर्मौ-हूर्त्तिक उदयावलिकायां कर्म्मपुद्गलप्रक्षेपव्यापाररूप उदीरणा विशेषः। आव० म० १ अ०। उव०। ठा०।
आउज्जोवण- न० *[अब्प्योजन]*
अप्काययंत्रयोजने, ओह०।
आउट्ट- पुं० *[आकुट्ट]*
आकुट्टनमाकुट्टः। छेदने, हिंसायां च। सा चात्र प्राण्यवयवानां छेदनभेदनादिरूपो व्या-पारः। सूय०१ श्रु०१ अ०२ उ०।
आउट्ट- त्रि० *[आतुष्ट]*
सन्तुष्टे, निसि०१ उ०।
आउट्ट- त्रि० *[आवृत्त]*
आ-समन्ताद् वृत्त इति। समन्ताद् व्यवस्थिते आचा०१ श्रु०७ अ०४ उ०।
समन्तात् हिंसायां प्रवृत्ते, 'आउट्टामो' प्रवर्तामहे। हिंसायाम्। आचा०१ श्रु०९ अ०९ उ०।
आउट्टंत- त्रि० *[आउट्टत्]*
कुर्वन्ति, कल्प० ३ अधि० १ क्षण। निसि०
आउट्टण- न० *[आकुट्टन]*
हिंसायाम्, सूय०१ श्रु०१ अ०२ उ०। आव० म०।

आउट्टण- न० *[आवर्तन्]*
अभिलाषायाम् आचा०२ श्रु०७ अ०१ उ० ।
आराधनायाम्, वव०
आवर्तनम्-आकम्पनं राज्ञो भक्तीभवनम्। वव०२उ०। निसि०
आवर्जने, वव० १० उ०।
अभिमुखीभूय वर्त्तने, नं० ३२ *।
निवर्तने, सूय० १ श्रु० १० अ०।
आवर्तते पूर्वभावतो निवृत्यान्यभावप्रतिपत्त्यभिमुखो वर्तते येन बोधपरिणामेन स आवर्त्तः। तथावर्तने, ईहातो निवृत्त्यापायभावप्रतिपत्त्यभिमुखीभूय वर्तनस्य हेतौ, बोधपरिणामे च। नं० ३२*।

आउट्टणया- स्त्री० *[आवर्तनता]*
आवर्त्ततेऽभिमुखीभूय वर्त्तते येन स तथा तद्भावस्तत्ता। आभिनिबोधिकज्ञानावशेषस्यापायस्य नामधेयविशेषे, सा चेहातो निवृत्यापायभावप्रतिपत्त्यभिमुखीभूय वर्त्तते, हेतुभूता बोधपरिणामता। नं० ३२ *।

आउट्टणा- स्त्री० *[आवर्त्तना]*
आराधनायाम्, निसि० २ उ०।
आकम्पने, वव० २ उ०।
आवर्जने, आवर्त्यआवर्ज्यात्मीकरोति। वव०१० उ०।

आउट्टावण- न० *[आवर्त्तन]*
अभिमुखीकरणे, आचा०२ श्रु०१ चू० २ अ०१ उ०।

आउट्टि-१ स्त्री० *[आकुट्टि]*
हिंसायाम् आचा०१ श्रु०९ अ०१ उ०।
इदं करोमीत्येवं ब्रुध्वोपेत्य करणे, जीत०। सम०। आव०।
आउट्टिया' नाम आभोगे जानान इत्यर्थः।बुह० ३ उ०।

आउट्टि-२ स्त्री० *[आवृत्ति]*
समन्तात्प्रवर्त्तने, आचा ०२ श्रु०१ चू०१ अ० ३ उ०।
अभिलाषायाम्, आचा०२ श्रु०२ चू०६० अ०।
आराधनायाम्, राज्ञो भक्तीभवनम्। वव०२ उ०। निसि०।
आवर्जने, वव० १०उ०।
अभिमुखीभूय वर्तते, नं०।
निवर्तने, सूय०१ श्रु०१० अ०।

आउट्टि-३ स्त्री० *[आवृत्ति]*
सूर्य्यस्य चन्द्रस्य च भूयो भूयो दक्षिणोत्तरगमने, सूर० १२ पाहु० । चंद० १२ पाहु०। ज्यो०।
आवृत्तयो द्विधा। तद्यथा–एकाः सूर्यस्यावृत्तयः, अपराश्चन्द्रमसः। तत्र युगे सूर्य्यस्यावृत्तयो दश भवन्ति, चतुस्त्रिंशच्छतमावृत्तीनां चन्द्रमसः। सूर०१२ पाहु० ।चंद०१२ पाहु०

आउट्टि- त्रि० *[आकुट्टिन्]*
यो हि जानन्-अवगच्छन् प्राणिनो हिनस्ति स आकुट्टी। 'कुट्ट' छेदने। आकुट्टनमाकुट्टः स विद्यते यस्येति। छेदनभेदानादिव्यापारवति, सूय०।
'जाणं कायेण-ऽणाउट्टी'। सूय०१ श्रु०१ अ०२ उ०।
ज्ञानपूर्वकव्यापारवति। अनापद्यप्यकार्य्यकारके च। 'आउट्टियाए पाणाइवायं करेमाणे सबले ।।' 'आउट्टीति'-यो जानन् करोत्यापद्रहितो वा करोति। दशा० २ अ०। सूय०।

आउट्टिऊण- अव्य० *[आवर्त्य]*
आवर्ज्येत्यर्थे, वव० १० उ०।

आउट्टिज्जमाण- त्रि० *[आकोट्यमान]*
संकोच्यमाने सूय० २ श्रु०१ अ०।

आउट्टिम- न० *[आकोट्टिम]*
उत्कीर्णे, आकोट्टिमं जधा रूवओ हेट्ठा वि उवरिं वि मुहं काऊण आउट्टिज्जति। दश० २ अ०।

आउट्टिय- त्रि० *[आउट्टित]* कृते,
कल्प० ३ अधि० ९ क्षण।

आउट्टिय- त्रि० *[आकुट्टित]*
छिन्ने, सूय०१ श्रु०१ अ०२ उ०।
ज्ञानपूर्वककृते, दशा०२ अ०।

आउट्टिया-१ स्त्री० *[आउट्टिका]*
करणे, कल्प० १ अधि० ६ क्षण।

आउट्टिया-२ स्त्री० *[आकुट्टिका]*
छेदनभेदनादिव्यापारे, सूय०१ श्रु०१ अ०२ उ०।
ज्ञानपूर्वकव्यापारे, दशा० २ अ०। जीत०। सम०।
आभोगे, निसि० १२ उ०।

आउट्टिया- स्त्री० *[आवृत्तिका]*
समन्तात्प्रवर्त्तने, अभिलाषायां च। आचा० २ श्रु०१ चू०१ अ० ३ उ०।
आराधनायाम्, वव० २ उ०। निसि०।
आवर्जने, वव०१० उ०।
अभिमुखीभूय वर्तने नं० ३२ *।
निवर्तने, सूय०१ श्रु०१० अ०।

आउट्टीकम्म- न० *[आकुट्टीकर्म्मन्]*
आकुट्या कृतं कर्म्म आगमोक्त कारणमन्तरेणोपेत्य प्राण्युपमर्द्दनेन विहिते कर्म्मणि, आचा०।

आउड- त्रि० *[आवृत्त]*
कृतावरणे, अप्रकाशावृते, आच्छादिते, ठा० ३ ठा० ३ उ०।
संकीर्णवर्णभेदे, पुं०। आव०।

आउडावेइत्ता- अव्य० *[आखोट्य]*
प्रवेशयित्वेत्यर्थे, विपा० १ श्रु०६ अ०।

आउडिज्जमाण-१ त्रि० *[आजोड्यमान]*
सम्बध्यमाने, 'जुड' बन्धने इति वचनात्। भग०५ श० ४ उ०१, ८५ *।

आउडिज्जमाण-२ त्रि० *[आकुट्यमान]*
परस्परेणामिहन्यमाने, भग० ५ श० ४ उ०।

आउडिय- त्रि० *[आकुट्टित]*
अङ्किते, अनुओ० १४८ *।

आउडेमाण- त्रि० *[आकुट्टयत्]*
ताडयति, भग०६ श० १ उ०।

आउत्त-१ त्रि० *[आगुप्त]*
संरक्षिते, ठा० ३ ठा० १ उ०। संयते, पुं०। संयतसम्बन्धिनि गमनादौ च। त्रि०। 'आउत्तं गमणं' (*-८०२) आगुप्तस्य-संयतस्य संबन्धि यत् तदागुप्तमेवेति। भग० २५ श० ७ उ०।
सम्यक् प्रवचनमालिन्यादिरक्षणतया। पन्न० २६८।

आउत्त-२ न० *[आयुक्त]*
उपयोगे, भग०
'आउत्तं वत्थपडिग्गहकं वलपायपुंछणं गेण्हमाणस्स'। (*-१५३) उपयोगपूर्वकमित्यर्थः। भग० ३ श० ३ उ०।
उपयोगवति, संथा०।
उपयुक्ते, ठा० २ ठा० १ उ०। सूय०

आउपरिणाम- पुं० *[आयुःपरिणाम]*
आयुषः-कर्मप्रकृतिविशेषस्य परिणामः-स्वभावः। आयुषः स्वभावे ठा० ३ ठा० १ उ०।

आउबहुल- त्रि० *[अब्बहुल]*
प्रचुरजलोपेते, सम०८० सम०।
'नो चेवणं आउबहुले भविस्सइ'(*-२८८) बह्वप्कायमित्यर्थः। भग० ७ श० ६ उ०।

आउबहुलकंड- न० *[अब्बहुलकाण्ड]*
प्रचुरजलोपेते रत्न प्रभायास्तृतीये काण्डे, सम०।

आउब्भेय- पुं० *[आयुर्भेद]*
आयुषो-जीवितस्य भेद-उपक्रमः आयु-र्भेदः।ठा०७ठा०३ उ०
आयुष उपघाते, आव०चू०१ अ०। आव० म०।

आउय- न० *[आयुष्क]*
जीविते, उत्त० ३ अ०। संथा०। आव० सम०।
भवस्थितिहेतौ, कर्म्मपुद्गले च। आचा० १ श्रु० २ अ० १ उ०।

आउय- पुं० *[आवुक]*
अवति-रक्षति। नाट्यात्तौ, जनक। ठा० २ ठा० ३ उ०।

आउयबंध- पुं० *[आयुष्कबन्ध]*
आयुषो बन्ध इति। ठा० ६ ठा० ३ उ०।
आयुषो निषेके, सम०।
स च प्रतिसमयं बहुहीनहीनतरस्य दलिकस्यानुभवनार्थं रचना। सम०।

आउट्टसंवट्टय- पुं० *[आयुष्कसंवर्त्तक]*
संवर्त्तनम्-अपवर्त्तनं संवर्त्तः स एव संवर्त्तकः, उपक्रम इत्यर्थः, आयुषः संवर्त्तक आयुः संवर्त्तकः। आयुष उपक्रमे, ठा०।

आउयसंवेदन- न० *[आयुःसंवेदन]*
आयुःकर्मोदयविपाकाऽनुभवने, भग० ३५ श० ।

आउयसदव्वया- स्त्री० *[आयुस्सद्रव्यता]*
आयुः-प्रदेशकर्म तस्य द्रव्यैस्सह मानता-आयुस्सद्रव्यता। जीवस्यायुष्कर्मद्रव्यसहचारितायाम्,'आउयसदव्वयभवेओघो' आयुस्स-द्रव्यता-ओघजीवितं सामान्यजीवितमिदं च सकल-संसारिणामविशेषेण सर्वदाभावीति। आव० म०१ अ०।

आउयाय- पुं० *[अप्काय]*
एकेन्द्रियसंसारसमापन्नजीवविशेषे, प्रज्ञा ०१ पद०। भग०।

आउर- त्रि० *[आतुर]*
ईषदर्थे, ग्लाने, (रोगिणि) ठा०१० ठा० ३ उ०। बुह०।
विविधदुःखोपद्रुते, (रोगादिपीडिते) बुह०१ उ०२ । उत्त०।
बुभुक्षादिभिः पीडिते, नाया० १ श्रु० १ अ०।
अस्वस्थमनसि, 'तत्थ तत्थ पुढो पास आतुरा परितावंति' - तत्र तत्र तेषु तेषु कारणेषुत्पन्नेषु वक्ष्यमाणेषु शरीरचर्म शोणित आदिषु च पृथग्विभिन्नेषु प्रयोजनेषु पश्येति शिष्यचोदना किं तत्पश्येति दर्शयति- मांसभक्षणादिगृद्धाः आतुराः-अस्वस्थ मनसः परिसमन्तात्तापयन्ति-पीडयन्ति। आचा० ।
किंकर्त्तव्यतामूढे, 'पासिय आतुरए पाणे अप्पमत्तो परिव्वए' 'पासिय' इत्यादि, स हि भावजागरस्तैर्भावः जागरस्वाप-जनितैः शारीरमानसैर्दुःखैरातुरान्किंकर्त्तव्यतामूढान् दुःख-सागरावगाढान् प्राणान्-भेदोपचारात् प्राणिनो दृष्ट्वा ज्ञात्वा अप्रमत्तः परिव्रजेत्-उद्युक्तः सन् संयमानुष्ठानं विदध्यात्। आचा०१ श्रु० ३ अ०१ उ०।
आकुलतनौ, उत्त०२ अ०।
क्वचिदपि स्वास्थ्यमलभमाने सत्याकुले, जीवा० ३ प्रति०१ ।
उत्सुके, बुह०१ उ० ३।
व्याकुले, नाया०१ श्रु०१ अ०।
'आउरं लोयमायाए'- 'आउरं' इत्यादि, लोकं मातापितृपुत्र कलत्रादिकं तमातुरं स्नेहानुषङ्गतया वियोगात्कार्यावसादेन वा। यदि वा-जन्तुलोकं कामरोगातुरमादाय ज्ञानेन परिगृहीत्वा

परि-च्छिद्य। आचा०१ श्रु०६ अ०२ उ०।
दु:स्थे, भग० १६ श० ४ उ०।
प्रथमद्वितीयपरीषहाभ्यां जिते, (क्षुत्पिपासापीडिते) चिकित्सा-क्रियाव्यपेते, मरणचिह्नान्युपलभ्याकुले च। नं० वव०।
'आउराण य अप्पेगइयाणं मच्छमंसाइं उवदिसइ' 'आउ-राणं' ति-चिकित्सायामविषयभूतानाम्। विपा० १ श्रु०७ अ०
आतुरत्वे च। (क्षुत्पिपासाव्याधिभिरभिभूतत्वे) 'संकिए सहसागारे, उभयाउरे आवतीसु य' भाव-प्रधानश्चायं निर्देश-स्ततोऽयमर्थः। वव०१ उ०।
'संभमभयाउरावइ' 'आउर' त्ति -भावप्रधानत्वान्निर्देस्यातुर पीडितत्त्वं क्षुत्पिपासाद्यैः। जीत०।
लुप्तभावप्रत्ययत्वाद्वा। ठा०९ ठा० ३ उ०।
अशक्नुवति, वव०४ उ०।
शरीरसमुत्थेनागन्तुकेन वा व्रणेन ग्लानः। दश०।

आउरचिन्न- त्रि० *[आतुरचीर्ण]*
आतुरः-चिकित्साया अविषयभूतो रोगी तस्य मर्तुकामस्य पथ्यापथ्याविवेकेन दीयमाने मनोज्ञाहारे, उत्त० ८ अ०।

आउरपच्चक्खाण- न० *[आतुरप्रत्याख्यान]*
आतुरः-क्रियातीतो ग्लानस्तस्य प्रत्याख्यानमातुरप्रत्याख्यानम्। चिकित्सकक्रिव्याव्यपेतस्य ग्लानस्य प्रत्याख्याने, नं०।
आतुर चिकित्स्यक्रियाव्यपेतस्तस्य प्रत्याख्यानं यत्राध्ययने विधिपूर्वकमुपवर्ण्यते तदातुरप्रत्याख्यानम्। उत्कालिकश्रुत-विशेषे च। विधिश्चातुरप्रत्याख्यानदानविषये चूर्णिकृतैवमुपद-र्शितः-'गिलाणं किरियातीयं नाउं गीयत्था पच्चक्खावेंति दिणे दिणे दव्वहासं करेत्ता अंते य सव्वदव्वदायणाए भत्तेवरग्गं जाणिता भत्ते वि त्तिण्हस्स भवचरिमपच्चक्खाणं कारवेंति, नं०

आउरपडिसेवणा- स्त्री० *[आतुरप्रतिसेवना]*
प्रतिसेवनाविशेषे, 'दप्प पमायऽणाभोगे, आउरे आवईसु य'। आतुरे-ग्लाने सति तत्प्रतिजागरणार्थमिति भावः। अथवा-आत्मन एवातुरत्वे सति लुप्तभावप्रत्ययत्वादयमर्थः-क्षुत्पिपासा-व्याधिभिरभिभूतः सन् यां करोति। उक्तं च–'पढमवीयद् दुवाहिओ व जं सेव आउराए साइत्ति'। ठा०१० ठा० ३ उ०।

आउरभेसज्जीय- न० *[आतुरभैषज्यीय]*
अवितर्कितसम्भवितुल्ये याद्दच्छिकन्याये, आचा०
यथा-आतुरभवनम्भैषज्योपकारश्चाबुद्धिपूर्विकैव, नाऽऽतुरस्य वुद्धिरस्ति मह्यम्भैषज्यमुपकरिष्यति, नापि भैषज्यस्यैताद्दशी बुद्धिरस्ति आतुरायोपकरिष्या-मीति अथ तत्तथैव भवत्येवं सर्वं जातिजरामरणादिकं लोके याद्दच्छिकमिति यद्दच्छावादिनः। आचा०१ श्रु०१ अ०१ उ०

आउरसरण- न० *[आतुरशरण]*
दोषातुरस्याश्रयदाने, दश० ३ अ०।

आउरसरण- न० *[आतुरस्मरण]*
क्षुधाद्यातुराणां पूर्वोपभुक्तस्मरणे, दश०
तथाऽऽतुरस्मरणानि च क्षुधाद्यातुराणां पूर्वोपभुक्तस्मरणानि च अनाचरितानि। आतुरशरणानि वा दोषातुराश्रयदानानि। दश० ३ अ०।
रोगादिपीडितस्य हा तात ! हा मातः ! इत्यादिरूपे स्मरणे च।
'आउरे सरणं तिगिच्छियं च तं परिण्णाय परिव्वए स भिक्खू'
'आउरे सरणं'ति- आतुरस्य रोगादिपीडितस्य शरणं-स्मरणं हा तात ! हा मातः ।इत्यादिरूपम्। उत्त० १५ अ०।
आरोग्गसाला। दश० ५१।

आउल-१ त्रि० *[आकुल]*
व्याप्ते, उव०। नाया०।
जनाऽऽकीर्णे, बुह०१ उ०।
प्रचुरे, भग०१ श० ९ उ०।
व्याकुले, (विह्वले) आव० म०१ अ०।
व्यग्रे, आव०४ अ०।
व्याप्ते, सूय०१ श्रु०१ अ०१ उ०।
संकीर्णे च। 'किमिजालाउलसं-सत्ते'कृमिजालैराकुलैः-वया-कुलैराकुलं वा संकीर्णं तथा भवतीत्त्येवं संसक्तं यत्तथा। नाया० १ श्रु०८ अ०।
राजगृहाङ्गणजनाकुलवदाकुलः ।भावस्कन्धविशेषेच। अनुओ०

आउल-२ त्रि० *[आकुल]*
'कलुसाऽऽउलं चित्तं' कलुषयन्ति आत्मानमिति कलुषाः-कषायास्तैराकुलं-व्याप्तं यत्तथोच्यते। आव०४ अ०।
अभिभूते, 'तह तिव्व-कोहलोहाउलस्स' तीव्रावुत्कटौ च तौ क्रोधलोभौ च ताभ्यामाकुलोऽभिभूतस्तस्य। आव०४ अ०।

आउल-३ त्रि० *[आकुल]*
क्षुब्धे, 'जत्थऽत्थमिए अणाउले' भिक्षुर्यत्रैवास्तमुमैति सविता, तत्रैव कायोत्सर्गादिना तिष्ठतीति। यत्रास्तमितस्तथाऽनाकुलः-समुद्रवन्नकादिभिः परीषहोपसर्गैरक्षुभ्यन् ।सूय०१श्रु०१ अ०।

आउलगमण– न० *[आकुलगमन]*
एकत्र मिलिता गच्छन्ति। ओघ० १२६।

आउलतर- त्रि० *[आकुलतर]*
अतिशयेनाकुले, तथा च षष्ठपृथिवीनरकापेक्षया सप्तम पृथिवीनारकाणां वर्णनमुपक्रम्योक्तम्–'णो आउलतरा चेव' 'आउलतरा चेव'त्ति- अतिकर्त्तव्यतया ये आकुलानारक लोकास्तेषामतिशयेन योगादाकुलतराः ।भग०१३ श० ४ उ०।

आउलमण- त्रि० *[आकुलमनस्]*

आकुरव्यग्रं मनः-अन्तःकरणं यस्य स तथा। व्यग्रान्तःकरणे, 'तप्पडियाराउलमणस्स' तत्प्रतीकारे-वेदनाप्रतीकारे चिकित्सा-यामाकुलं-व्यग्रं मनो यस्य स तथा। आव० ४ अ०।

आउलमाउला- स्त्री० *[आकुलाऽऽकुला]*

निद्राप्रमादाभिभूतस्य मूल गुणानामुत्तरगुणानां वा या नाना-विधोपरोधक्रिया तदात्मिकायाम्,अथवा–आकुलंनानाविधरूपं विवाहसंगमादिषु दृष्टमाचरितं वा पुनरपि आकुलाः तादृशा बहवो दृष्टा व्यापारास्तदात्मिकायांस्वप्नान्तिकक्रियायाम्,आव०

आउलि- स्त्री० *[आतुलि]*

पीतपुष्पके (तडउडा) नामकेवनस्पतिजातिविशेषे, 'तडउडा-कुसमेइ वा' तडउडाआउली। आव० म० १ अ०।

आउलिविशेष इत्यर्थः। ठा०४ ठा०१ उ०।

आउलीकरण- नं० *[आकुलीकरण]*

प्रचुरीकरणे, भग०।

आउविज्जा- स्त्री० *[आयुर्विद्या]*

वैद्यकेपापश्रुतविशेषे, आव० ४ अ०

आउविवागदसा- स्त्री० *[आयुर्विपाकदशा]*

प्रतिसमयभोगत्वेनायातीत्यायुः विपचनं विपाकः, आयुषोऽ-परिहाणिरित्यर्थः। अनुभागेन युक्तो विभागो दशा इत्युच्यते आयुर्विपाकस्य दशा आयुर्विपाकदशा आयुर्विपाकविभागे, 'जं जम्मि काले आउयं उक्कोसं दसधा विभत्तं दस आउविवागदसा भवन्ति' ततो य दसाओ दसवरिसपमाणातो वरिससयाउसो भवन्ति। निसि० ११ उ०।

आउव्वेय- पुं० *[आयुर्वेद]*

आयुः-जीवितं तद्विदन्ति-रक्षितुमनुभवन्ति चोपक्रमरक्षणेन विदन्ति वा लभन्ते यथाकालं तेन तस्मात्तस्मिन्वेत्यायुर्वेदः। चिकित्साशास्त्रे, ठा० ८ ठा० ३ उ०।

वैद्यकशास्त्रे, विपा०१ श्रु०७ अ०।

आउस- पुं० *[आक्रोश]*

'मृतोऽसि त्वम्' इत्यादिभिरसभ्यवचनरूपैः शापैरभिशापे, 'अप्पेगइए आउसिहिंति। आक्रोशान्दास्यति, भग० १५ श०। 'भंते ! अहं णं पुरिसं आउसेज्जा वा' 'आक्रोशयामि वामृतोऽसि त्वमित्यादिभिः शापैरभिशपामि। उपा० ७ अ०। दण्डमुष्ट्यादिभिर्हननव्यापारे च। सूय०।

आउसंत- त्रि० *[आजुषमाण]*

प्रीतिप्रवणमनसि, सम०१ सम०।

'सुयं मे आउसंतेणं' श्रवणविधिमर्यादया गुरूनासेवमानेन। ठा०१ ठा०। उत्त०। दशा०।

आउसंत-१ त्रि० *[आयुष्मत्]*

आयुरस्यास्तीति दशा० १ अ०। दश०

जीवति, प्राणधारणधर्मवति ठा० १ ठा०।

चिरजीविनि, उत्त०२ अ०।

आयुः-जीवितं तत्संयमप्रधानतया प्रशस्तं प्रभूतं वा विद्यते यस्यासावायुष्मान्। ठा०१ ठा०१ ।

चिरप्रशस्तजीविते, भग०१६ श० ९ उ०।

चिरायुः-(दीर्घायुः) आचा०१ श्रु०१ अ०१ उ०।

लक्षणगुणवति च शिष्यादौ, ठा० १ ठा०।

सकलगुणाधारभूतत्त्वेनायुश्च प्रधानो गुणः सति तस्मिन्न व्यवच्छित्तिभावात्। दशा०१ अ०। दश० ।

एतच्च शिष्यामन्त्रणे पुत्रादेरामन्त्रणे च प्रयुज्यते। उत्त० २ अ० दश० । दशा०।

श्रवणविधिमर्यादया गुरून् सेवमानेन। उत्त०। ठा०९।

गुरुमूलमावसन् वा। दश०।

आयुष्मदन्ते, आयुष्मता। नं०

आमृशता–गुरूक्रमयुगलं संस्पृशता। सम० २।

'अय-माउसो' आयुष्मन्निति पुत्रादेरामन्त्रणम्। भग०२ श० ५ उ०। दशा०।

आवसता गुरुकुले। सम० २।

परार्थप्रवृत्त्यादिना प्रशस्तमायुर्द्धारयति, न तु मुक्तिमवाप्यापि तीर्थनिकारादिदर्शनात्पुनरिहायातेनाभिमानादिभावतोऽप्रशस्त-मिति। तीर्थकरे, पुं०। उत्त०२ अ०। दशा०। ठा०।

यथोच्यते कैश्चित्–'ज्ञानिनो धर्म्मतीर्थस्य, कर्त्तारः परमं पदम्। गत्वा गच्छन्ति भूयोऽपि, भवं तीर्थनिकारतः।।१ ।।' एवं ह्यनुमूलितरागादिदोषत्वात्तद्वचसोऽप्रमाण्यमेव स्यान्निःशेषोन्मू-लने हि रागादीनां कुतः पुनरिहागमनसम्भवः। ठा०१ ठा०।

'सुयं मे आउसंतेणं भगवया एवमखायं'। आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ०। सम०। दश० । दशा०।

आउसंत२ त्रि० *[आयुष्मत्]*

विष्कुम्भावधिकेतृतीये योगे, विष्कुम्भः प्रीतिरायुष्मान्। ज्यो०

आउसुह- न० *[आयुःशुभ]*

तीर्थकरादिसम्बन्धिनि शुभे आयुष्कर्मणि दश० १ अ०।

आउसोय- न० *[अप्शौच]*

अद्भिः शौचमप्शौचम्। प्रक्षालनात्मके-शौचभेदे, 'जलशौचं तु पञ्चमम्' इति। ठा० ५ ठा० ३ उ०

आउस्सिय- न० *[आवश्यक]*

अवश्यं भावः मनोनाया०। वुञ् अवश्यंभावे, पन्न० ३६ पद० आव० म०।

आउस्सियकरण- न० *[आवश्यककरण]*

आवश्यकेन आवश्यं-भावेन करणमावश्यककरणम् केवलि-समुद्घातात्पूर्वं केवलिनामवश्यकर्त्तव्ये व्यापारविशेषे, तथादि समुद्घातकेऽपि कुर्वन्ति केचिच्च न कुर्वन्ति इदञ्चावश्यककरणं सर्वेऽपि केवलिनः कुर्वन्तीति प्रज्ञा ० ३६ पद० । आव० म० ।

आवश्यककरणम्, आवर्जिकरणम् । पन्न० ।

आउह– न० *[आयुध]*

क्षेप्यं शस्त्रम् । पण्हा० ।

अक्षेप्यम् । विपा० ।

आऽऽयुधं–अक्षेप्यशस्त्रं खड्गादि । भग० ३१८ ।

आउहघर- न० *[आयुधगृह]*

प्रहरणशालायाम्, जंबू ३ वक्ष० ।

आउहघरसाला- स्त्री० *[आयुधगृहशाला]*

प्रहरणगृहशालायाम्, जंबू ३ वक्ष० ।

आउहघरिय- पुं० *[आयुधगृहिक]*

आयुधाध्यक्षे । तए णं से आउहघरिए ततः चक्ररत्नोत्पत्तेरनन्तरं सः । आयुधगृहिको यो भरतेन राज्ञाऽऽयुधाध्यक्षः कृतोऽस्तीति गम्यम् । जंबू ३ वक्ष० ।

आउहागार- न० *[आयुधागार]*

प्रहरणशालायाम्, उव० । नाया० ।

प्रहरणकोशे, ठा०९ ठा० ३ उ० ।

आऊसिय- त्रि० *[आयूषित]*

प्रविष्टे, 'आऊसियवयणगंडदेसं' 'आऊसिय' त्ति प्रविष्टौ वदने गण्डदेशौ-कपोलभागौ यस्य तत्त ।संकुचिते,नाया०१श्रु०८ अ० 'आऊसियअक्खचम्मओट्ठगंडदेसं' 'आऊसिय' त्ति-संकुचितं यदक्षचर्म्म जलापकर्षणकोशस्तद्वत् -अपकृष्टौ-अपकर्षवतौ संकुटितौ गण्डदेशौ यस्य स तथा तम् । नाया०१ श्रु०८ अ० ।

आऊसिय- त्रि० *[आभूषित]*

संकुटिते, 'आऊसियअक्खचम्मओट्ठ-गंडदेसं' अन्ये त्वाहुः आमूषितानि-संकुटितानि अक्षाणिइन्द्रि-याणि चर्म्म ओष्ठौ च गण्डदेशौ च यस्य स तथा तम् । नाया०१ श्रु०८ अ० ।

आएज्ज- त्रि० *[आदेय]*

आकाङ्क्षणीये, जंबू० २ वक्ष० ।

उपादेये, जीवा० ३ प्रति ४ अधि०

ग्राह्ये, सूय० १ श्रु० १४ अ० ।

आएज्जवक्क- पुं० *[आदेयवाक्य]*

ग्राह्यवाक्ये, सूय० १ श्रु० १५ अ०

आएज्जवरण- त्रि० *[आदेयवचन]*

ग्राह्यवचने, दशा० ४ अ० । उत्त०

आएज्जवयणया- स्त्री० *[आदेयवचनता]*

सकलजनग्राह्यवाक्यतारूपेवचनसम्पद्भेदे,दशा०४अ० ।ठा०

आएस-१ पुं० *[आदेश]*

उपदेशे, आज्ञायाम्, आदिश्यते-आज्ञाप्यते संभ्रमेण परिजनो यस्मिन्नागते तदातिथेयाय । तदासनदानादिव्यापारे, स आदेशः । सूय० २ श्रु० १ अ० । आचा० । उत्त० ।

आदितीत्यादेशः । आयासकरे, वव०९ उ० ।

अभ्यर्हिते, उत्त०६ अ० ।

नायकादौ प्राघूर्णके, उत्त०६ अ० ।

'आएसो पाहुणगं' । आदेशं करोतीत्यादेशः । निसि०१ उ० ।

आचा० । आव० म० ।

'सागरियस्स आएसे' सागारिकपिंडस्य प्रतिपादकं यत् आदिमं सूत्रं तस्य संबन्धः, अनेन संबन्धेनायातस्यास्य व्या-ख्यासागरिको नाम शय्यातरस्तस्याऽऽदेश आयासकर आदेशः । यदि वा आदेशितः आदेशः । अथवा आदेशत इति शब्दसंस्कारस्तस्य व्युत्पत्तिमग्रे वक्ष्यामः । स च नायको मित्रं प्रभुः परतीर्थको वा द्रष्टव्यः । वव० ९ उ० ।

आएस-२ त्रि० *[एष्य]*

आगमिष्यति, सूय० । 'आएसा वि भवंति सुव्वया' आगमि-ष्यांश्च ये भविष्यन्ति । सूय०१ श्रु०२ अ० ३ उ० ।

आएस-३ पुं० *[आवेश]*

आविशतीत्यावेशः यस्मिन् स्थाने प्रविष्टे सागारिकस्याऽऽयासो जन्यते स आवेशः । ज्ञातिके, स्वजने, सुहृदि, प्रभौ, परतीर्थिके च । वव० ।

आएसकारिन्- पुं० *[आदेशकारिन्]*

आज्ञाकारिणि, कौटुम्बिकादौ, 'कोडुंवियपुरिसे सद्दावेंति' कौटुम्बिकपुरुषान्-आदेशकारिणः । नाया० १ श्रु० १ अ० ।

आएसग- त्रि० *[आदेशक]*

आदिशति । आदेश-कारके, आज्ञाकारके आदिश्यते यस्मिन्ना-गते संभ्रमेण परिजनस्तदासनदानादिव्यापारे स आदेशकः । प्राघूर्णके, सूय० २ श्रु०१ अ० ।

आएसग्ग-१ न० *[आदेशाग्र]*

आदिश्यत इत्यादेशो-व्यापारनियोजना अग्रशब्दोऽत्र परिमाण वाची, तत्र च यत्र परिमितानामादेशो; दीयते तदादेशाग्रम् । आचा० २ श्रु० १ चू० १ उ० १ अ०

आदिश्यते इत्यादशा निर्देश इत्यर्थः आदेशेनाग्रं आदेशाग्रम् । निसि०१ उ० । परिमिताना-मादेशे, तद्यथा–त्रिभिः पुरुषैः कर्म्म कारयन्ति तान्वा भोजयति । आचा० २ श्रु० १ चू०१ अ० १ उ० ।

आएसग्ग-२ न० *[आवेशन]* आ-विश आधारे ल्युटा वाच०। लोह-कारीदशालायाम्। आचा०२ श्रु०१ चू०२ अ०२ उ०। तानि चायस्कार कुम्भकारादिस्थानानि येषु लोका आविशन्ति। उव०

आएसण– न० *[आवेशन]*
अयस्कारकुंभकारादिस्थानम्। औप०।

आएसपर- त्रि० *[आदेशपर]*
आदिश्यते-आज्ञाप्यते इत्यादेशः। यः कस्यांचित्क्रियायां नियो-ज्यते कर्म्मकरादिः स चासौ परश्चादेशपरः। कस्यांचित्क्रियायां नियुक्ते कर्म्मकरादौ, आचा० २ श्रु० २ चू० ६ अ०।

आएसभत्त- न० *[आदेशभक्त]*
आएसो-पाहुणगो आगंतो तस्स भत्तं आदेशभक्तम्। प्राघूर्णक भक्ते। निसि० ९ उ०।

आएससव्व- पुं० *[आदेशसर्व]*
आदेशनमादेशः-उपचारो व्यवहारः। स च बहुतरे प्रधाने वा आदिश्यते, देशेऽपि यथा-विवक्षितं घृतमभिसमीक्ष्य बहुतरे भुक्ते; स्तोके च शेषे उपचारः क्रियते -'सर्वं घृतं भुक्तं' प्रधाने-ऽप्युपचारः क्रियते, यथा-ग्रामप्रधा-नेषु गतेषु पुरुषेषु' सर्वो ग्रामो गत इति व्यपदिश्यत इति। आदेशतः सर्वमादेशसर्वम् उपचारसर्वमित्यर्थः। ठा० ४ ठा० २ उ०।
उपचारेण सर्वस्मिन्, ठा० ४ ठा० २ उ०। आव० म०।

आएसिन्- त्रि० *[आदेशिन्]*
अभिलाषिणि, 'वण्णादेसी णारभेकंचण। वर्णः-साधुकारस्त-दादेशी वर्णादेशी-वर्णाभिलाषीसन्नारभते कञ्चना। आचा०१ श्रु०५ अ० ३ उ०।

आएसिय-१ त्रि० *[आदेशिक]*
उपदेष्टरि, सूय०।

आएसिय–२ त्रि० *[आदेशम्]*
विभागौद्देशिकतृतीयभेदः। पिण्ड० ७९।

आओग- पुं० *[आयोग]*
द्विगुणादिलाभे, ठा० ठा० ३ उ०।
द्विगुणादिवृद्ध्याऽर्थप्रदाने च। भग०२ श० ५ उ०।
परिकरे, 'भीमसंगामि आओगं' भीमः-सांग्रामिक आयोगः-परिकरो यस्या नाया० १ श्रु० १६ अ०।

आओगपओग- पुं० *[आयोगप्रयोग]*
आयोगस्य-अर्थलाभस्य प्रयोगाउपायाः। उव०।
आयोगेन द्विगुणादिलाभेन द्रव्यस्य प्रयोगोऽधमर्णानां दानम्। ठा०८ ठा० ३ उ०।
द्रव्योपार्जनोपायविशेषे, ठा०९ ठा० ३ उ०।
द्विगुणादिबुद्ध्याऽर्थप्रदाने कालान्तरे प्रयोगे ,भग०२श०५ उ०

आओगपओगसंपउत्त- वि० *[आयोगप्रयोगसम्प्रयुक्त]*
आवाहनविसर्जनकुशले, रा०।
आयोगो द्विगुणादिवृद्ध्यार्थप्रदानं प्रयोगश्च कालान्तरितौ सम्प्रयुक्तौ व्यापारितौ यैस्ते तथा। भग० २ श० ५ उ०।
आयोगप्रयोगा-द्रव्योपार्जनोपायविशेषाः सम्प्रयुक्ताः-प्रवर्त्तिता येन स तथा, ठा०१ ठा०।
आयोगस्य-अर्थलाभस्य प्रयोगा-उपायाः संप्रयुक्ता-व्यापारिता येन तेषु वा सम्प्रयुक्तो व्यापृतो यः सा, नाया० १ श्रु० १ अ०। उव०
प्रवर्त्तितद्रव्योपार्ज-नोपायविशेषे ठा०९ ठा० ३ उ०।
द्रव्योपार्जनोपायविशेषेषु प्रवृत्ते च। नाया०१ श्रु०१ अ०।
आयोगेन द्विगुणादिलाभेन द्रव्यस्य प्रयोगः अधमर्णानां दानम् तत्र संप्रयुक्तानि-व्यापूतानि तेन वा संप्रयुक्तानि-संगतानीति। ठा०८ ठा० ३ उ०।
द्विगुणादिलाभेन द्रव्यप्रयोगेषु व्यापृते, द्विगुणादिलाभार्थम् द्रव्यप्रयोगेण संगते च। ठा० ८ ठा० ३ उ०।

आकंखा- स्त्री० *[आकाङ्क्षा]*
अभिलाषायाम् आचा० १ श्रु० ५ अ० ६ उ०।

आकंदमाण- त्रि० *[आक्रन्दत्]*
आकन्दशब्दं कुर्वति, विपा० १ श्रु० ९ अ०।

आकंप- पुं० *[आकम्प]*
आवर्जने, ठा०१० ठा० ३ उ०। वव०।
आराधने, वव०१ उ०।

आकंपइत्ता- अव्य० *[आकम्प्य]*
आराध्येत्यर्थे, वव० १ उ०।
आवर्ज्येत्यर्थे, ठा०।

आकंपइत्तु- अव्य० *[आकम्प्य]*
आवर्जेत्यर्थे, ठा० १० ठा० ३ उ०।

आकंपण- न० *[आकम्पन]*
आराधने, आवर्जने च। वव० १ उ०।

आकड्ढ- पुं० *[आकर्ष]*
अभिमुखमाकर्षणे, पण्हा० १ अ०। निसि०।

आकड्ढण- न० *[आकर्षण]*
अभिमुखं कर्षणमाकर्षणम्। अभिमुखकर्षणे, पण्हा०१ अ०।
'आकड्ढणमाकसणं' अप्पणो तेण आगड्ढणमागसणं। निसि०१८ उ०।

आकड्ढविकड्ढ- पुं० *[आकर्षविकर्ष]*
अभिमुखकर्षणविपरीतकर्षणयोः, आकृष अभिमुखं कर्षणं कुरु। विकृष विपरीतं कर्षणं कुरु। पण्हा०१ अ०

आकड्ढविकड्ढिया- स्त्री० *[आकर्षविकर्षिका]*
अभिमुखमाकृष्टस्य विपरीतकर्षणे, पण्हा० १ अ०। 'आकड्ढविकड्ढिंकरेमाणे'। भग० १५ श०। निसि०।

आकण्णन- न० *[आकर्णन]*
श्रवणे, आचा०१ श्रु०१ अ०१ उ०।

आकण्णिय- त्रि० *[आकर्णित]*
श्रुते, आचा०१ श्रु०१ अ०१ उ०।

आकम्हिय- त्रि० *[आकस्मिक]*
अकस्मादेव यद्भवति तदाकस्मिकम्। विशे०
निर्युक्तिके, आचा० १ श्रु० ८ अ० १ उ०।
अहेतुके, विशे०।

आकरण– न० आगरण,
आह्वानम्। ओघ०।

आकिइ- स्त्री० *[आकृति]*
आगार त्ति वा आग त्ति वा संठाणं ति वा एगट्ठा, । आव० चू० १ अ० ।
रूपे, 'यत्राकृतिस्तत्र गुणावसन्ति' आचा०१ श्रु०१ अ०१ उ०

आकिइमंत- त्रि० *[आकृतिमत्]* प्रशस्तस्वरूपोपेते, 'जो वि अगीतो वि आगइमंतो' (९७x)। अगीतार्थोऽपि आकृतिमान्-रूपेण मकरध्वजतुल्यः स गणधरपदे निवेश्यते। वव० ३ उ०।

आकिंचणिय- नं० *[आकिंचन्य]*
आकिंचणियंनत्थि जस्स किंचण सो अकिंचणों तस्स भावो आकिंचणियं, कंमनिज्जरट्ठं सदेहादिसु विणस्समेण भवितव्वं। आव०चू० ४ अ०।

आकीलवास- पुं० *[आक्रीडावास]*
गौतमद्वीपस्थ-सुस्थित-लवणाधिपतेरत्यर्थ-क्रीडावासे भौमेय विहारे जीवा० ३ प्रति०४ अधि०।

आकुट्ठ- त्रि० *[आकृष्ट]*
वाग्भिराव्रुष्टं, आचा० १ श्रु०६ अ० ३ उ०।
'आक्रुष्टन मतिमता तत्वार्थविचारणे मतिः कार्या। यदि सत्यं कः कोपः, स्यादनृतं किं नु कोपेन।। सूय० १ श्रु० १४ अ०।

आकेवलिय- पुं० *[आकेवलिक]*
न केवलमकेवलं तत्र भवा आकेवलिकाः सद्वन्द्वे, (सप्रतिपक्षे) असम्पूर्णे च०। 'अकेवलिएहिं' आचा० १ श्रु० ६ अ०२ उ०।

आकोसायंत- त्रि० *[आकोशायमान]*
आकोशायते इत्याकोशायमानम्। विकचीभवति कमलादौ, 'आकोसायेतपउमगंभीरवियडा' ।आकोशायते इत्याकोशायमानं, विकचीभवदित्यर्थः। पद्मं तद्वद्गम्भीरा विकटा च नाभिर्येषां ते। जीवा० ३ प्रति० ४ अधि०।

आगइ- स्त्री० *[आगति]*
आगमनमागतिः नारकत्वादेरेव प्रज्ञापकप्रत्यासन्नस्थाने प्रतिनिवृत्तौ, (आगमने) ठा०१ ठा०। कल्प०।
गइं च जो जाणइऽणागइं च। यश्च जीवानामागतिम्-आगतम् कुतः समागता नारकास्तिर्यञ्चो मनुष्या देवाः। सूय० २ श्रु० १२ अ०।
'एगस्स जंतो गतिरागती या'। आगतिः-आगमनं भवान्तरादुपजायते कर्मसहायस्यैव। सूय० २ श्रु०१ ३ अ०।
उत्पत्तौ, ठा० ६ ठा० ३ उ०।
'एगा आगती। आगमन-आगतिर्नारकत्वादेरेव प्रतिनिवृत्तिस्तदेकत्त्वं गतेरिवेति) ठा० १ ठा०।
प्रत्यावृत्त्या–प्रातिकूल्येनागमनम्। आव०

आगंतगार- पुं०न० *[आगन्तागार]*
आगन्तुकानां कार्पटिकादीनाभावासार्थे गृहे, सूय०।
'आगंतागारे आरामगारे, समणे उ भीते न उवेति वासां' आगंतुकानां कार्पटिकादीनामगारमागन्तानाम्। सूय०२श्रु०६ अ०
ग्रामादेर्बहिरागत्यागत्य पथिकादय–स्तिष्ठन्ति। आचा० ३६५।

आगंता- त्रि० *[आगन्तृ]*
आ समंताद् गन्ता आगन्ता। सूय० १ श्रु० २ अ०१ उ०।
आगमनशीले, ठा० ३ ठा० ३ उ०।
'आगंतारो महब्भयं' महाभयं पौनःपुन्येन संसारपर्य्यटनतया नारकादिस्वभावं दुःखमागन्तारः- आगमनशीला भवन्ति। सूय० २ श्रु० ११ अ०।

आगंतार- पुं०न० *[आगन्ताऽऽगार]*
ग्रामवाह्याऽऽवासे, निसि०।
'आगंतारो जत्थ' आगत्य विहरंतीति आगंतारो जत्थ आगारा आगंतुं विहरंति तं०
आगंतागारं गामपरिसट्ठाणति वुत्तं भवति। आगंतुगाण वा कयं अगारं आगंतागारं बहियावसो त्ति। निसि० ३ उ०।
आगमारक्खा तेहिं कत्तं अगारं आगंतु जत्थ चिट्ठंति आगारा तं आगंतागारं परिसमंतागारणं गिहभावगतेत्यर्थः। पज्जायोपवज्जा सो य चरगपरिव्वायगसक्कआजीवगमादिऽणेगविधो। निसि० ३ उ०।

आगंतार- पुं०न० *[आगन्तार]*
यत्र ग्रामादेर्बहिरागत्याऽऽगत्य पथिकादयस्तिष्ठन्ति तान्यागन्तागाराणि। आचा०२ श्रु०१ चू०२ अ०२ उ०।
पत्तनाद्बहिर्गृहे आचा०२ श्रु०१ चू०१ अ०८ उ०।
प्रसङ्गायाता आगत्य वा यत्र तिष्ठन्ति तदागन्तारं तत्पुनर्ग्रामान्तनेगराद्बहिः स्थानम्। आचा०१ श्रु०९ अ०२ उ०। उव०।

आगंतारट्ठिय- त्रि० *[आगन्तुकागारस्थित]*
आगन्तुकागारोषिते प्राघूर्णकादौ, बुह०।

आगंतुय- त्रि० *[आगन्तुक]*
अन्यत आगते, बुह०४ उ०।
कार्पटिकादौ, सूय०।

आगच्छमाण- त्रि० *[आगच्छत्]*
प्रतिनिवर्तिनि, भग०१२ शु०६ उ०।

आगम- पुं० *[आगम]*
'जेण आगमो होइ'आगमो भवतिप्राप्तिर्भवति। दश० १ अ०।
ज्ञाने, 'आगमेत्ता आणवेज्जा'। ज्ञात्वाऽऽज्ञापयेत्। आचा०१ श्रु०५ अ०४ उ०।
'लाघवं आगममाणा' लाघवम् आगमयन्-अवबुध्यमान। आचा०१ श्रु०६ अ० ३ उ०।
आगमः—आ—अभिविधिना मर्यादया वा गमः—परिच्छेद इति। आव०।
आचार्यपारम्पर्येणागतः, आप्तवचनं वा। अनुओ०।
गुरुपारम्पर्येणागच्छतीति आगमः, आसमन्ताद्गम्यन्ते—ज्ञायन्ते जीवादयः पदार्था अनेनेति वा। अनुओ०।
आगम्यन्ते—परिच्छिद्यन्ते अर्था अनेनेति, केवलमनःपर्याया-वधिपूर्वचतुर्द्दशकदशकनवकरूप। ठा० ३१७।
सूत्रार्थोभयरूपः, सूत्रम्, अध्ययनम्। आव०।
आप्तप्रणीतः। आचा०।
आगम्यन्ते—परिच्छिद्यन्ते अर्था अनेन इति आगमः—आप्त वचनसम्पाद्यो विप्रकृष्टार्थप्रत्ययः। ठा०।
आ—अभिविधिना सकलश्रुतविषयव्याप्तिरूपेण मर्यादया वा यथावस्थितप्ररूपणारूपया गम्यन्ते—परिच्छिद्यन्तेऽर्था येन सः। नन्दी० ।
आगच्छति गुरुपारम्पर्येणेत्यागमः। भग०।

आगमकुसल- त्रि० *[आगमकुशल]*
आगमनिपुणे, आतु०।
'आगमकुसला सदाररया आगमः-श्रुतिस्मृत्यादिरूपस्तस्मिन् कुशलावागमकुशलाविति। उत्त० २५ अ०।

आगमण- न० *[आगमन]*
अन्यतः स्थानात् प्रज्ञापकसम्मुखं यदागम्यते तदागमनम्। बुह० १ उ० ३। वव०।

आगमणगहियविणिच्छय- त्रि० *[आगमनगृहीतविनिश्चय]*
आगमने गृहीतः-कृतो विनिश्चयो-निर्णयो येन स तथा। आगमनाय कृतनिश्चये, भग० ९ श० ३३ उ०।

आगमणगिह- न० *[आगमनगृह]*
पथिकादीनामागमनेनोपेतं, तदर्थं वा गृहमागमनगृहम्। बुह० २ उ०।
सभाप्रपादौ, सूय०।
'आगमणगिहंसि वा' ठा० ३ ठा० ४ उ०।

आगमणपह- पुं० *[आगमनपथ]*
आगमनमार्गे, निसि०।
आगमणपहंसिजंणं पहेण पक्खियादिसु आगच्छंति तंमि पहे। निसि० ४ उ०।

आगमणागमणपविभत्ति- न० *[आगमनागमनप्रविभक्ति]*
नाट्यविधिविशेषे, रा०।
'आगमणागमणपविभत्तिणामं दिव्वं नट्टविहिं उवंदसेति' रा०। चन्द्रागमनप्रविभक्तियुक्तमागमनप्रविभक्तिनाम सप्तमं नाट्य-विधिमुपदर्शयन्ति। रा०।

आगमपह- पुं० *[आगमपथ]*
लाभमार्गे, ठा० २ ठा० ४ उ०।

आगमबलिय- पुं० *[आगमबलिक]*
आगमज्ञानविशेषवति केवल्यादिके, भग०।
'आगमबलिया समणा णिग्गंथा' आगमबलिका उक्तज्ञान-विशेषबलवन्तः श्रमणानिर्ग्रन्थाः केवलिप्रभृतयः। भग० ८ श० ८ उ०।

आगममाण- त्रि० *[आगमयत्]*
आपादयति, 'लाघवियं आगममाणे' लाघविकमात्मानमागम-यन् आपादयन्। आचा०१ श्रु०८ अ०४ उ०।
आगमयति,(अवबुध्यमाने) 'लाघवं आगममाणा' आगमयन् -अवगमयन् अवबुध्यमानः। आचा०१ श्रु०६ अ० ३ उ०।

आगमववहार- पुं० *[आगमव्यवहार]*
आ-मर्य्यादाऽभिविधिभ्यां गम्यन्ते-परिच्छिद्यन्तेऽर्था येनासावा-गमः केवलमनःपर्य्यायावधिचतुर्द्दशदशनवपूर्वलक्षण व्यवहार भेदे, । व्यवहारता चास्य व्यवहारहेतुत्वाद्। ठा०।

आगमववहारि- पुं० *[आगमव्यवहारिन्]*
प्रत्यक्षज्ञानिनि, वव०।
आगम-सुय ववहारी, आगमतो छव्विहो उ ववहारी। केवलि मणोहि चोद्दस दस-नव पुव्वी उ नायव्वो, वव० १ उ०, जीय०

आगमवीमंस- पुं० *[आगमविमर्श]*
आगमपरिभावने, वव०१० उ०।

आगमसंपण्ण- पुं० *[आगमसम्पन्न]*
विशिष्टश्रुतधरे, दश० १ अ०।

आगमसत्थ- न० *[आगमशास्त्र]*
आ-अभिविधिना सकलश्रुतिविषयव्याप्तिरूपेण, मर्य्यादया वा यथावस्थितप्ररूपणारूपया गम्यन्ते परिच्छिद्यन्तेऽर्था येन स आगमः। नं०।
शिष्यते शिक्ष्यते-बोध्यतेऽनेनेति शास्त्रम् आगमरूपं शास्त्रम् आगमशास्त्रम्। श्रुतज्ञाने, विशे०।

आगमसिद्ध- पुं० *[आगमसिद्ध]*
आगमो-द्वादशाङ्गं प्रवचनम् तत्रासाधारणार्थवगमात् सिद्ध आगमसिद्धः। सिद्धभेदे, आव०।

आगमिय- त्रि० *[आगमित]*
गृहीते, 'उववारो त्ति वा अहीतंति वा आगमियंति वा गृहीतंति वा एगट्ठा' निसि० १ उ०।
'नायं आगमियं य एगट्ठं' ज्ञातम् आगमितमित्येकार्थम्। वव० १० उ०।

आगमिस्स- त्रि० *[आगमिष्यत्]*
आगामिनि, 'जे य आगमिस्सा अरहंता भगवंतो' ये चागामिनः। आचा० १ श्रु० ४ अ० १ उ०।
आगामिनि काले, 'किमस्सऽतीतं किंवाऽऽगीमस्सं०'।। 'किंवाऽऽगमिष्यति-आगामिनि काले सुखाभिलाषिणो दुःखद्विषो भावीति। आचा० १ श्रु० ३ उ०।
'सिजिस्सइ आगमिस्से णं' आगमिष्यति काले सेत्स्यति। ठा० ९ ठा० ३ उ०।
'सो आगमिस्साए जिणो भविस्सइ आगमिस्साए' आयत्याम्। आगामिनि काले, आव० ३ अ०।
'आगमिस्सा वि सुव्वया०' आगामिनि चानन्ते काले तथाभूताः सत्संयमानुष्ठायिनो भविष्यन्ति। सूय० १ श्रु० १५ अ०।
'आगमिस्सं च पावगं०'आगामिनि काले यत्करिष्यते तत्सर्वमिति। सूय० १ श्रु० ८ अ०।
'हवइ पुणो आगमिस्साणं आगमिस्साणं' ति-एष्यत्काले इत्यर्थः, आतु०।
'आगमिस्सेण होक्खइ' आगमिष्यता कालेन हेतुना भविष्यतीत्यर्थः। ठा०७ ठा० ३ उ०।
उत्तरकालभाविनि च। 'पडिक्कमे आगमिस्साणं' आगमिष्याणाम्, उत्तरकालभाविनाम्। आतु०।

आगमेत्ता- अव्य० *[आगत्य]*
ज्ञात्वेत्यर्थे, 'आगमेत्ता आणविज्जा' ज्ञात्वा आज्ञापयेदिति। आचा० १ श्रु० ५ अ०४ उ०।
'आगम्मुक्कु डुओ संतो' आगत्योत्कुटुकः त्यक्तासन इति। उत्त० १ अ०।

आगमेयव्व- त्रि० *[आगमयितव्य]*
आगमनम्-आगमनपरिज्ञानम्। तदगोचरत्वमानयितव्ये, बुह० १ उ० २।
ज्ञातव्यम्। बुह०।

आगमेसि- त्रि० *[आगमिष्यत्]*
आगामिनि, ठा० ८ ठा० ३ उ०। कल्प०।
आगमिष्यति काले, पण्हा०१ अ०।

आगमेसिभद्द- न० *[आगमिष्यद्भद्र]*
आगमिष्यति काले भद्रं कल्याणे यत्तदागमिष्यद्भद्रम्। आगमिष्यत्कालभाविनि कल्याणे, पण्हा०१ अ०।
आगमिष्यद्भद्रंयस्येति।आगमिष्यत्कालभाविकल्याणवति,ठा०
आगमिष्यत् भद्रा—द्वितीयभवे अन्तकृतः। उपा० २९।

आगय- त्रि० *[आगत]*
आयाते,। विशे०। भग०।
जाते, नाया० १ श्रु० ७ अ०।
उत्पन्ने, सूय० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

आगयगंध- त्रि० *[आगतगन्ध]*
जातसुरभिगन्धे, नाया० १ श्रु० ७ अ०।

आगयपण्ण- त्रि० *[आगतप्रज्ञ]*
आगता-उत्पन्ना प्रज्ञा यस्यासावागतप्रज्ञः। संजातकर्त्तव्याऽकर्त्तव्यविवेके सूय०।
'समितीसु गुत्तीसु य आगयपण्णे' सूय० १ श्रु० १४ अ०।

आगयपण्णाण- त्रि० *[आगतप्रज्ञान]*
आगतं-स्वीकृतं प्रज्ञानम् सदसद्विवेको यस्य स तथा। स्वीकृत सदसद्विवेके 'सया आगयपण्णाणे' आचा०१ श्रु०४ अ०२ उ०
'आगयपण्णाणाणं किसा बाहा भवंति' आगतं प्रज्ञानं पदार्थाविर्भावकं येषां ते तथा तेषामागतप्रज्ञा-नानां तपसा परिषहातिसहनेन च कृशा बाहवो भुजा भवन्ति। यदि वा-सत्यपि महोपसर्गपरिषहादावागतप्रज्ञानत्वाद् बाधाः-पीडाः कृशा भवन्ति। आचा० १ श्रु० ६ अ० ३ उ०।

आगहपण्हया- स्त्री० *[आगतप्रश्रवा]*
आयातप्रश्रवायाम्, 'तएणं सा देवाणंदा माहणी आगहपण्हया' आयात-प्रश्रवा; पुत्रस्नेहादागतस्तनमुखस्तन्येत्यर्थः। भग० ९ श० ३३ उ०। अंत०।

आगयभम- त्रि० *[आगतभ्रम]*
उत्पन्नभ्रमणे, कल्प०१ अधि० ३

आगयसमय- त्रि० *[आगतसमय]*
आसन्नीभूतोऽवसरो यस्य सः। आसन्नीभूतावसरे, नाया० १ श्रु० ९ अ०।

आगर- पुं० *[आकर]*
आकुर्वन्त्यस्मिन्नित्याकरः। उत्त० ३० अ०।
आगत्य तस्मिन् कुर्वन्तीत्याकरः। आचा०१ श्रु०१ अ०१ उ०
'धाउमणिसिलप्पबलरयणागरे य साहिंति' धातुमणिशिला-प्रवालरत्नानामाकराः-खनयस्तान साधयतीति। पण्हा०१ अ०
'गुणआगरं' गुणानां-ज्ञान-दर्शन-चारित्राणामाकरं खनिमिति। उत्त०१९ अ०।
निधाने, 'गुणसयाऽऽगरो संघो' गुणशतानामनेकेषां गुणाना-माकरोनिधानम् गुणशताकरः संघः। वव० २ उ०। बृह०।
मर्य्यादयाऽभिविधिनाऽऽक्रियन्ते वज्रादीनि तेष्विति। ओह०।
हिरण्याकरादौ, वव०१ उ०। जीवा०। पन्न०। आचा०। रा०।
स च हिरण्याद्युत्पत्तिभूमिः। नाया० १ श्रु० १७ अ०।ओह०।
उत्त०।
ताम्रादेरुत्पत्तिस्थानम्। आचा०१ श्रु०१ चू०१ अ०२ उत्त०।
लौहाद्युत्पत्तिभूमिः। ठा०२ ठा०४ उ०।
लौहाद्युत्पत्तिस्थानम्। अनुओ०। पण्हा०। भग०।
लौहादिधातुजन्मभूमिः। गच्छा०१ अधि०।
लवणाद्युत्पत्तिभूमिः। नाया०१ श्रु०१ अ०। उव०।
लवणाद्युत्पत्तिस्थानमिति। पण्हा०४ अ०। यत्र सन्निवेशे लवणाद्युत्पद्यते। ठा०९ ठा० ३ उ०।
रूप्यसुवर्णाद्युत्पत्तिस्थानम्। नं०। भग०।
'अयमाइआगरा खलु' अयो-लोहं तदादय आकरा उच्यन्ते यत्र पाषाणं धातुधमनादिना लोहमुत्पाद्यते स अयआकारः, आदिशब्दात्-ताम्ररूप्याद्याकरपरिग्रहः। बृह०१ उ० २ ।
'वइरे कणगे य रययलोहे य। चत्तारि आगरा खलु' वज्राणि-रत्नानि तेषामाकरः-खनिर्वज्राकरः, 'चिंतालोहागरिए' त्ति इत्यतः सिंहावलोकितन्यायेनाऽऽकरग्रहणं संबध्यते एतेन कारणेन 'होइ उ'त्ति- इत्यस्माद्भवति क्रिया सर्व्वत्र मीलनी-येति, कनकसुवर्णं तस्याऽऽकरो भवति द्वितीयः, रजतं-रूप्यं तद्विषयः तृतीयः आकारो भवति, चशब्दः, समुच्चये, अनेक-भेदभिन्नं रूप्याकरं समुच्चिनोति, 'लोहे य' त्ति-लोहमयस्त-स्मिन्, लोहे लोहविषयश्चतुर्थ आकरो भवति, चशब्दो मुदुक-ठिन-मध्यलोहसमुच्चायकः। चत्वार इति संख्याः आक्रियन्ते एतेष्वित्याकरास्तथा च मर्यादया अभिविधिना वा क्रियन्ते वज्रादीनितेष्विति, खलुशब्दो विशेषणे। ओह०।

आगरणिवेस- पुं० *[आकरनिवेश]*
आकरस्थाने, 'आगररनिवेसेसु'। पन्न० १ पद०।

आगरणी- स्त्री० *[आकरणी]*
लोहकराम्बरीषायाम्, ठा० ८ ठा० ३ उ०।

आगरपल्ली- स्त्री० *[आकरपल्ली]*
स्वर्णाद्युत्पत्तिस्थानस्थिते वृशवंशादिगहनाश्रिते प्रान्तजनस्थाने, उत्त०।
'निगमे य आगरे पल्ली' आकरः-स्वर्णाद्युत्पत्तिस्थानं तस्मिन् आकरे। पल्ली वृशवंशादिगहनाश्रिता प्रान्तजनस्थानम्। तस्यां पल्ल्याम्, उत्त० ३० अ०।

आगरमुत्ति- स्त्री० *[आकरमुक्ति]*
चिक्कणिकायाम्, सा च नो कर्म्म-द्रव्यलोभः। आव०१ अ०। आव० म०।
अण्णे भणंतिणो कम्मे आकरमोत्ती एवमादि आकरमोत्ति चिक्कणिवेति। आव०चू०१ अ०।

आगरि- त्रि० *[आकरिन्]*
आकरः-उत्पत्तिस्थानं प्राशस्त्येनाऽस्त्यस्येति इनि स्त्रियां ङीप्। प्रशस्ताकरजाते, 'दधतमाकरिभिः करिभिः क्षतैः' आकरवति, पण्हा० २ अ०।

आगरिस- पुं० *[आकर्ष]*
उदाने, आकर्षो नाम कर्मपुद्गलोपादानमिति। सम०।
आकर्षो नाम-तथाविधेन प्रयत्नेन कर्मपुद्गलोपादानम्। पन्न०६ पद० ७ द्वार।
ग्रहणे, आव० म०१ अ०। विशे०।
प्रथमतया ग्रहणे, मुक्तस्य ग्रहणे च। आव०म०१अ०। विशे० ग्रहणमोचनयोः, आकर्षणमाकर्षः। ग्रहणमोचनमित्यर्थः। आव० चू० १ अ०।
स च द्विविधः-एकभविको, नानाभविकश्चेति। आव०चू०। विशे०। अनुओ०। आव० म०।
प्राप्तौ, भग०।

आगरिसग- पुं० *[आकर्षक]*
आकर्षति सन्निकृष्टस्थं लौहम् (चुम्बक) इतिख्याते अयस्कान्ते, आकर्षणकर्त्तरि, । आव० म०१ अ०।

आगरिसण- त्रि० *[आकर्षण]*
आकृष्यत-इति आकर्षणम्। द्रविणे, आकृष्यत इति आगरि-सणं तं च दविणं। निसि० २ उ०।
प्रेरणे, आकड्ढणमाकरिसणं अप्पणो तेण। आघट्टणमागसण उदगगतेन प्रेरणमिति। निसि० १८ उ०

आगलण- न० *[आकलन]*
अध्यवसाये, 'धणुबलं वा आगलंति' 'आगलंति' त्ति-आकल-यन्ति-जेष्याम इत्यध्यवस्यन्तीति। भग० ३ श० २ उ०।

आगलिय- त्रि० *[आगलित]*
निवारिते, नाया० १ श्रु० ९ अ०।

आगल्ल- त्रि० *[आगल्ल]*
ग्लाने, 'तेनाऽयमागल्लो-ग्लानः संजातः । बुह० ४ उ० ।

आगाढ- त्रि० *[आगाढ]*
अत्यन्तदुर्भेदे, वव० ।
'आगाढपण्हेसु य संथवेसु' आगाढप्रश्नेषु चाऽत्यन्तदुर्भेदप्रश्नेषु परिचयेसु सत्स्विति। वव० १ उ० ।
कर्कशे, बुह० ।
आगाढे- कर्कशेऽधिकरणे उत्पन्ने। बुह० १ उ० ३ प्रक० ।
कारणे, निसि०६ उ० ।

आगाढजोग- पुं० *[आगाढयोग]*
योगभेदे, निसि० ।

आगाढपण्ण- न० *[आगाढप्रज्ञ]*
शास्त्रे, वव० ।
'आगाढपण्णेसु य भावियप्पा'आगाढप्रज्ञानि शास्त्राणि तेषु भावितात्मातात्पर्य्यग्राहितया तत्रातीवनिष्पन्नमतिः ।वव०३ उ०

आगाढपण्ह- पुं० *[आगाढप्रश्न]*
अत्यन्तदुर्भेदप्रश्ने, वव० ।

आगाढपरियावण- न० *[आगाढपरितापन]*
बहुतमपीडोत्पादनात्मके परितापे, जीत० ।
आगाढपरियावणुद्दवणे बहुतमपीडोत्पादनं चाऽऽगाढम् ।जीत०

आगाढमुसावाइ- (न्)त्रि० *[आगाढमृषावादिन्]*
आगाढे-कुलकार्य्ये, गणकार्ये, सङ्घकार्य्ये वा अनाभाव्यस्य आभाव्यस्य वा (नाभाव्यस्य वा) ज्ञानतया रागद्वेषाज्ञानस्य वा भणनात् मृषावदतीत्येवंशील आगाढमृषावादी। कार्य्ये सति मृषावादिनि। वव० ।

आगाढवयण- न० *[आगाढवचन]*
अत्यर्थ गाढम् आगाढम्। 'गाढुत्तगूहणकरं, गाहेउं व तेण आगाढं' गाढं उत्तं गाढुत्तं तं केरिसं ग्रहणकरं अन्यस्याख्यातुं न शक्यते। अथवा–शरीरस्योष्मा येनोक्तेन जायते तमागाढम् इत्युक्त-लक्षणे वचने। निसि० १० उ० ।

आगाढसुय- न० *[आगाढश्रुत]*
श्रुतभेदे, निसि० ।
आगाढसुयं भगगवतीमाइ, अणागाढं आयारमाति त्ति। निसि०१ उ० ।
'आगाढे एवमत्थे वि' आगाढे तु-उत्तराध्ययन-भगवत्या-दिकेश्रुते। जीत० ।

आगाढाऽऽगाढकारण- न० *[आगाढाऽऽगाढकारण]*
तथाविधे प्रयोजने, 'अण्णत्थ आगाढाऽऽगाढेहिं' अन्यत्र-तथाविधप्रयोजनात्। आचा० २ श्रु० १ चू० २ अ० १ उ० ।

आगामि- त्रि० *[आगामिन्]*
आगन्तुके, भविष्यत्कालवृत्तौ च ।लब्धव्ये। ठा०२ ठा०४ उ० ।

आगामिपह- पुं० *[आगामिपथ]*
आगामिनो-लब्धव्यस्य वस्तुनः पन्थाः आगामिपथः। लब्ध-व्यवस्तुमार्गे, ठा० २ ठा० ४ उ० ।

आगामिय- त्रि० *[आकामिक]*
अनभिलषणीये, ठा० ५ ठा० २ उ०

आगामिय- त्रि० *[अग्रामिक]*
ग्रामरहिते, ठा०
'अत्थेगइया णिग्गंथा य णिग्गंथीओ य एगमइं आगामियं छिन्नावायं दीहमद्धमडवि-मणुप्पविट्ठा'। ठा० ५ ठा०२ उ० ।

आगार- पुं० *[आकार]*
आकृतौ, आव०म०१ अ० ।कल्प० ।नाया० ।ठा० ।भग०। रा० संस्थाने, उव० ।
'सिंगारागारचारुवेसाए' श्रृङ्गारो-मण्डन-भूषणाटोपस्तत्प्रधान आकारः-आकृतिर्यस्याः सा तथा। तथा चारु वेशो-नेपथ्यो यस्याः सा तथा, ततः कर्मधारयः। रा०। उव० ।
सन्निवेशविशेषे, श्रृङ्गारः-श्रृङ्गाररसपोषकः आकारः-सन्निवेश-विशेषो यस्य। चंद० २० पाहु० ।
'आगारविगारं तह प्पयासंति'आकारं-मुखनयनस्तनाद्याकृतिः, विकारं च मुखनयनादिविकृतिः ।यद्वा-आकारस्य स्वाभाविका-कृतेर्विकारो विकृतिस्तं तथा प्रकाशयन्ति। गच्छा० ३ अधि० ।
आगारो णाम-आगारो त्ति वा, आगति त्ति वा, संठाणं ति वा, एगट्ठा। आव०चू० १ अ० ।
'कइवागयस्स आगारा' आकारा-आकृतयः स्वरूपाणीत्यर्थः ठा० ७ ठा० ३ उ० ।
रूपमाकारश्चक्षुर्विषयः। ठा० १ ठा० ।
प्रतिवस्तुनियते ग्रहणपरिणामे च। आगारो उ विसेसो' इति वचनादिति। जीवा० १ प्रति० ।
गृहम्। अनुओ० ।
आक्रियतेऽनेनाभिप्रेतं ज्ञायत इति, बाह्यभेष्टारूपः। आव० प्रत्याख्यानापवादहेतवोऽनाभोगादयः। आव०
आक्रियत इत्याकारः–प्रत्याख्यानापवादहेतुर्महत्तराद्याकारः। भग० २९६।
शरीरगता भावविशेषः। वव० ।

आगारचरित्तधम्म- पुं० *[आगारचरित्रधर्म्म]*
अगारं गृहं तद्योगादागारागृहिणस्तेषां यश्चरित्रधर्म्मः-सम्यक्त्वमूलाणुव्रतादिपालनरूपः स तथा। चारित्रधर्म्मभेदे, ठा० २ ठा० १ उ० ।

आगारधम्मं- पुं० *[आगारधर्म्म]*
द्वादशव्रतरूपो गृहस्थधर्मः। आव०

आगारभाव- पुं० *[आकारभाव]*
आकारस्य-आकृतेर्भावाः-पर्य्यायाः। भग०६ श० ७ उ०।
आकृतिलक्षणपर्य्याये, भग०१ श० ४ उ०।
आकारभावः स्वरूपविशेषः। जीवा० ३ प्रति०४ अधि०।

आगारभावपडोयार- पुं० *[आकारभावप्रत्यवतार]*
आकारस्य-आकृतेर्भावाः-पर्य्यावाः।अथवा-आकाराश्च भावाश्च आकारभावास्तेषां प्रत्यवतारः-अवतरणमाविर्भावः आकार-भाव प्रत्यवतारः भग०६ श० ७ उ०।
आकारभावस्य आकृतिलक्षणपर्य्यायस्य प्रत्यवतारः-अवतरण-माकारभावप्रत्यवतारः। भग०६ श० ७ उ०।
आकृतिलक्षणपर्य्यायस्याविर्भावे, जीवा०।

आगारलक्खण- न० *[आकारलक्षण]*
आक्रियते-अभिप्रेतं ज्ञायतेऽनेनेत्याकारो-बाह्यचष्टारूपः स एवान्तरोक्तगमकत्त्वाल्लक्षणमाकारलक्षणम्। लक्षणविशेषे, आन्तरोक्तगमकता चाकारस्य सुप्रसिद्धा। आव० म० १ अ०।

आगारविगार- पुं० *[आकारविकार]*
आकृतेर्विकृतौ, गच्छा०।

आगारिय- न० *[आगारिक]*
अगा-वृक्षास्तैः कृतमगारं गृहं तदस्यास्तीति, अगार- गृहस्थः तस्येदमागारिकम्। विशे०।

आगारेऊण- अव्य० *[आकार्य्य]*
आहूयेत्यर्थे, आव०।

आगाल- पुं० *[आगाल]*
आगालनमागालः। समप्रदेशावस्थाने, आचा०।
सोऽपि चतुर्द्धा-व्यतिरिक्त उदकादेर्निम्नप्रदेशावस्थानम्, भावा-गलो ज्ञानादिक एव तस्यात्मनि रागादिरहितेवस्थानमिति कृत्वा। आचा०१ श्रु०५ अ०१ उ०।

आगास- पुं० *[आकाश]* न०।
आकाशन्ते-दीप्यन्ते स्वधर्मोपेता आत्मादयो यत्र। तस्मिन्, दश० १ अ०।
आ-समन्तात् सर्वाण्यपि द्रव्याणि काशन्ते दीप्यन्ते अत्र व्यवस्थितानि। जीवा०१ प्रति०।
आ-मर्य्यादयाऽभिविधिना वा सर्वेऽर्थाः काशन्ते-प्रकाशन्ते स्वस्वभावं लभन्ते यत्र तदाकाशम्। भग०२ श० १ उ०।
आङिति मर्य्यादया स्वस्वभावापरित्यागरूपया काशन्ते-स्वरू-पेण प्रतिभासन्तेऽस्मिन् व्यवस्थिताः पदार्था इत्याकाशम्, पन्न०१ पद०। उत्त०।
सर्वभावावकाशनादाकाशम्। आ-मर्य्यादया तत्संयोगेऽपि स्व-कीय-स्वकीयरूपेऽवस्थानतः सर्वथा तत्स्वरूपत्वाप्राप्तिलक्ष-णया काशन्ते स्वभावलाभेनावस्थितिकरणेन च दीप्यन्ते पदार्थसार्था यत्र तदाकाशमिति। अथवा-अभिविधिना सर्वात्मना तत्संयोगानुभवलक्षणेन काशन्ते दीप्यन्त पदार्था यत्र तदाकाशम्। अनुओ० ९७।
सर्वद्रव्यस्वभावानाकाशयति-आदीपयति तेषां स्वभावलाभेऽ वस्थानदानादित्याकाशम्। आङ्-मर्य्यादाऽभि-विधिवाची, तत्र मर्य्यादायाम्-आकाशे भवन्तोऽपि भावाः स्वात्मन्येवासते नाकाशतां यान्तीत्येवं तेषामात्मसादकरणाद् अभिविधौ तु-सर्वभावव्यापनादाकाशमिति। ठा०२ ठा०१ उ०।
लोकालोकव्याप्यनन्त-प्रदेशात्मकाऽमूर्तद्रव्यविशेषे, अनुओ०।
आकाशं तु जीवादिपदार्थानामाधारान्यथानुपपत्तेरस्तीति श्रद्धे-यम्। न च धर्म्माधर्म्मास्तिकायावेव तदाधारौ भविष्यत इति वक्तव्यं, तयोस्तद्गति-स्थितिसाधकत्वेनोक्तत्वात्, न चान्यसाध्यं कार्यमन्यः प्रसाधयत्यतिप्रसङ्गादिति। अनुओ०।
'जीवानां पुद्गलानां च, धर्माधर्मास्तिकाययोः। बादराणां घटा-दीनामाकाशमवकाशदम्। आव०४ अ०।

आगासग- त्रि० *[आकाशग]*
स्वनामख्याते भूतविशेषे, पन्न०१ पद०।

आगासगमा- स्त्री० *[आकाशगमा]*
गमनं गमः आकाशेन गमो यस्याः सा आकाशगमा। विद्या-विशेषे, आव० म० १ अ०।

आगासगय-१ त्रि० *[आकाशक]*
प्रकाशके, सम० ३४ सम०।

आगासगय-२ त्रि० *[आकाशगत]*
व्योमवर्त्तिनि, सम० ३४ सम०। उव०
'आगासागएणं चक्केणं आगासगएणं छत्तेणं' आकाशवर्त्तिना चक्रेण। उव०।

आगासगामि- त्रि० *[आकाशगामिन्]*
आकाशगे पक्ष्यादौ, आचा०।
आगासगामिणो पाणा पाणे किलेसंति' अपरे त्वाकाशगामिनः -पक्षिण इत्येवं सर्वेऽपि प्राणाः-प्राणिनोऽपरान् प्राणिन आहाराद्यर्थं मत्सरादिना वा क्लेशयन्ति-उपतापयन्ति। आचा० १ श्रु०६ अ०१ उ०।
सम्प्राप्ताकाशगमन -लब्धिषु, चतुर्विधदेवनिकायविद्याधर-वायुषु च। 'आगासगामि य पुढोसिया जे' ये केचनाऽऽ-काशगामिनः-संप्राप्तगमनलब्धयश्चतुर्विधदेवनिकायविद्याधर-पक्षिवायवः। सूय०१ श्रु०१२ अ०।

आगासत्थिकाय- पुं० *[आकाशास्तिकाय]*
असन्तयश्चेहप्रदेशास्तेषां कायः-सङ्घातः 'गणकायनिकाए खंधे वग्गे तहेव रासी य' इति वचनात्, अस्तिकायः; प्रदेशसंघात इत्यर्थः। पन्न० १ पद०। सम०। उत्त०।
आकाशं च तदस्तिकायश्चेत्याकाशास्तिकायः। पन्न० १ पद०। जीवा०।
लोकालोकव्याप्यनन्तप्र-देशात्मकामूर्त्तद्रव्यविशेषे, अनुओ०।

आगासत्थिकायदेस- पुं० *[आकाशास्तिकायदेश]*
आकाशास्तिकायस्य बुद्धिकल्पिते द्व्यादिप्रदेशात्मके विभागे, पन्न० १ पद०। जीवा०।
अस्यारूप्यजीवत्वम्–'आगासे तस्स देसे य, तप्पएसे य आहिए आकाशस्य देशः कतमो विभागः आकाशास्तिकायदेश इत्यष्टमो भेदोऽरूप्यजीवस्य। उत्त० ३६ अ०।

आगासत्थिकायप्पएस- पुं० *[आकाशास्तिकायप्रदेश]*
आकाशास्तिकायस्य निर्विभागे भागे, पन्न० १ पद०। जीवा०।
अस्यारूप्यजीवत्वम्। आगासे तस्स देसे य, तप्पएसे य आहिए तस्याकाशास्तिकायस्य निरंशो देशस्तत्प्रदेश आकाशास्तिकायप्रदेश इति नवमो भेदोऽरूप्यजीवस्येति। उत्त० ३६ अ०

आगासथिग्गल- न० *[आकाशथिग्गल]*
शरत्कालिके मेघविनिर्मुक्ते आकाशखण्डे। कृष्णमणिवर्णनमाधिकृत्य–'आगासथिग्गलेइ वा' आकाशथिग्गलं-शरदि मेघविनिर्मुक्तमाकाशखण्डं तद्धि कृष्णमतीव प्रतिभातीति तदुपादानम्। जीवा० ३ प्रति० ४ अधि० १ उ०। जंबू। आव० म०।

आगासपइट्ठिय- त्रि० *[आकाशप्रतिष्ठित]*
आकाशं-व्योम तत्र प्रतिष्ठितो-व्यवस्थितआकाशप्रतिष्ठितः। आकाशव्यवस्थिते, ठा० ३ ठा०१ उ०। भग०।
'तप्पइट्ठिओ लोगो'तत्प्रतिष्ठितो लोकस्तत्-इत्यनेनाकाशपरामर्शस्तस्मिन्नाकाशे प्रतिष्ठितस्तत्प्रतिष्ठितः; प्रकर्षेण स्थितवानित्यर्थः। दश० १ अ०।

आगासपंचम- पुं० *[आकाशपञ्चम]*
आकाशं-सुषिरलक्षणम्। तत्पञ्चमं येषां तानि। पृथिव्यादिके पञ्चमहाभूते, सूय०। 'पुढवी आउ तेऊ, वाउ आगासपंचमा' सूय० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

आगासपय- न० *[आकाशपद०]*
सिद्धश्रेणिकपरिकर्मश्रुतभेदे, सम०।

आगासप्पएस- पुं० *[आकाशप्रदेश]*
आकाशस्य निर्विभागे भागे, पन्न०१ पद०।
षोडशाकाशप्रदेशाः। सूय० १ श्रु० १ अ०१ उ०।

आगासफलिह(फालिय)- पुं० *[आकाशस्फटिक]*
आकाशमिव यदत्यन्तमच्छं-स्फाटकमाकाशस्फटिकम्। सम० ३४ सम०।
अति-स्वच्छे स्फटिकविशेषे। आकाशस्फटिकमतिस्वच्छं स्फटिकविशेषस्तन्मयेनोपलक्ष्यत इति गम्यम्। भग०१ श० १ उ०। जंबू। रा०।

आगासफालियसरिसप्पह-त्रि० *[आकाशस्फटिकसदृशप्रभ]*
आकाशस्फटिकयोराकाशरूपस्फटिकस्य वा सदृशी प्रभा येषां तानि तथा। आकाशस्फटिकतुल्ये, उव०।

आगासफालियामय- त्रि० *[आकाशस्फटिकमय]*
अतिस्वच्छस्फटिकविशेषमये, भग०१ श० १ उ०।
आकाशमिव यदत्यन्तमच्छं स्फटिकं तन्मयं सिंहासनं सपादपीठम्, (सिंहासनेनेति)। सम० ३४ सम०। रा०। उव०।

आगासमग्ग- पुं० *[आकाशमार्ग]*
द्रव्यमार्गभेदे, सूय० १ श्रु० ११ अ०।
आकाशमार्गो विद्याधरादीनाम्। सूय० १ श्रु०११ अ०।

आगासातिवाइ- पुं० *[आकाशतिपातिन्]*
आकाशम् व्योम अतिपततीति। आकाशगामिविद्याप्रभावात् पादलेपादिप्रभावाद्वा आकाशमतिकामति, आकाशाद्वा हिरण्यवृष्ट्यादिकमिष्टमनिष्टं वा अतिशयेन पातयतीत्येवंशीले च। उव० १५ सूय०।

आगासातिवाइ- पुं० *[आकाशादिवादिन्]*
अमूर्त्तानामपि पदार्थानां साधनसमर्थवादिनि, उव०।
अप्पेगइया विउलमइविउव्विणिड्ढिपत्ता चारणा विज्जाहरा आगासातिवाइणो आगासातिवाइ'त्ति -आकाशव्योमातिपतन्ति-अतिक्रामन्ति। आकाशगामिविद्याप्रभावात् पादलेपादिप्रभावाद्वा आकाशाद्वा हिरण्यवृष्ट्यादिकमिष्टमनिष्ट वा अतिशयेन पातयन्तीत्येवंशीला आकाशातिपातिनः। आकाशादिवादिनो वा। अमूर्त्तानामपि पदार्थानां साधनसमर्थवादिन इति भावः। उव०।

आगासिउं- अव्य० *[आक्रष्टुम्]*
हठात्समाकृष्यात्मनः समीपमानेतुमित्यर्थे, विशे०।

आगासिय- त्रि० *[आकर्षित]*
आकृष्टे, उत्पाटिते, उव०।

आगासिय- त्रि० *[आकाशित]*
आकाशम्-अम्बरम् इतः-प्राप्तः। आकाशं गते, आकाशम्-अम्बरमिताभ्यां-प्राप्ताभ्याम्, आकर्षिताभ्यां वा; आकृष्टाभ्याम्-उत्पाटिताभ्यामित्यर्थः। उव०।

आघं- त्रि० *[आख्यातवत्]*
कथयितरि, सूय० ।
आघं'ति-आख्यातवान् । सूय०१ श्रु० १० अ० ।
सूत्रकृतांगे प्रथमश्रुतस्कंधे दशमाध्ययननाम । सूय०

आघअज्झयण- न० *[आख्यातवदध्ययन]*
सूत्रकृताङ्गप्रथमश्रुतस्कन्धस्य समाध्ययनापरनामधेये दशमेऽध्ययने, सूय० ।
निर्युक्तिकृदाह–'आयाणपदेणाऽऽघं, गोणं णामं पुणो समाहि त्ति' आदीयते-गुह्यंत प्रथममादौ यत्तदादानम् आदानं च तत्पदं च सुवन्तं तिङन्तं वा तदादानपदं तेनाऽऽघन्ति नामास्याध्ययनस्य यस्मादध्यानादाविदं । सूय० १ श्रु० १० अ० ।

आघंसण- न० *[आघर्षण]*
ईषत् घर्षणे, 'आघंसेज्ज वा' ईषत्पुनः पुनर्वा घर्षयेद् । आचा० २ श्रु०१ चू० २ अ० १ उ० ।

आघवइत्ता– त्रि० *[धर्म्ममाख्याय]*
आख्याय सामान्यतो यथा कार्यो धर्म्मः । ठा० ।

आघवत्ता- त्रि० *[आख्यातृ]*
आख्यायके (प्रज्ञापके) ठा०४ ठा०४ उ० ।

आघवण-१ न० *[आख्यान]*
सामान्यविशेषाभ्यां कथने, आघविज्जंति प्राकृतशैल्याआख्यायन्ते सामान्य-विशेषाभ्यां कथ्यन्ते इत्यर्थः । सम० । आव० ।
आख्यापने, सामान्यविशेषरूपेण कथने, 'दुवालसंगं गणिपिडगं आघवेइ' सामान्यविशेषरूपत आख्यापयतीति । ठा० १० ठा० ३ उ० ।

आघवण-२ न० *[आग्रहण]*
आदाने, अनुओ० ।

आघवण-३ न० *[आग्राहण]* आदापने, भग०९ श० ३१ उ० ।

आघवण-४ न० *[अर्थापन]*
प्रतिपादनतः पूजाप्रापणे, भग० । 'केवलिपण्णत्तं धम्मं आघवेज्ज वा' आग्राहयेच्छिष्यानर्थापयेद्वा प्रतिपादनतः पूजां प्रापयेदिति । भग० ९ श० ३१ उ० ।

आघावणा- स्त्री० *[आख्यापना]*
आख्याने, उपा० । 'बहूहिं आघवणाहि य' 'आघवणाहि य' त्ति-आख्यानैः । उपा०७ अ० ।
तच्च सामान्यतः प्रतिपादनम्–'आघवणाहि य' आख्यापनाभिश्चसामान्यतः प्रतिपादनैः । नाया० १ श्रु० १ अ० । निसि० । भग० ।

आघवित्तए- अव्य० *[आख्यातुम्]*
भणितुमित्यर्थे, अंत०१ श्रु० ३ वर्ग०८ अ० । भग० ।

आघविय-१ त्रि० *[आख्यात]*
'भगवया महावीरेणं आघविए' 'आघविए' त्ति-आर्षत्वादाख्यात इति । उत्त० २९ अ० ।

आघविय-२ त्रि० *[आगृहीत]*
आदत्ते, 'आवस्सए त्ति पयं आघवियं पन्नवियं परूवियं' गच्छा०२ अधि० ।
'आघवियं' ति-प्राकृतशैल्या छान्दसत्वाच्च गुरोः सकाशादागृहीतम् । अनुओ० ।

आघविय-३ त्रि० *[आग्राहित]*
आदापित्ते, भग०९ श० ३१ उ० ।

आघविय-४ त्रि० *[अर्थापित]*
प्रतिपादनेन पूजां प्रापिते, 'केवलि-पण्णत्तं धम्मं आघवेज्ज वा' आग्राहयेच्छि-ष्यान्, अर्थापयेद्वा-प्रतिपादनतः पूजां प्रापयेद् । भग०९ श० ३१ उ० ।

आघवेमाण- त्रि० *[आख्यात्]*
कथयति, आव० ३ अ० ।

आघसंत- त्रि० *[आघर्षण]*
ईषद्घर्षणं कुर्वति, निसि०१७ उ० ।

आघसावण- न० *[आघर्षण]*
ईषद्घर्षणे, निसि० ।
जे भिक्खू णिग्गंथे णिग्गंथस्स दंते अण्णउत्थिएण वा गारित्थिएण वा आघसावेज्ज वा पघसावेज्ज वा आघसंतं वा पघसंतं वा साइज्जइ । निसि० १७ उ० ।

आघाण- न० *[आख्यान]*
कथने, आचा०
-ज्ञानी आख्याति-आचष्टे । आचा०१ श्रु० ४ अ० २ उ०

आघाय- त्रि० *[आख्यात]*
आघायं तु सोच्चा' आख्यातमेवैतत् कुशीलविपाकादिकं श्रुत्वा निशम्येति । आचा०१ श्रु०६ अ०४ उ० ।
आशये च । न० । 'आघायं पुण एगेसिं' नियतिवादिनां पुनरेकेषामेतदाख्यातम्, अत्र च–'अविवक्षित-कर्मका अपि अकर्मका भवन्तीति' ख्यातेर्घातोर्भावे निष्ठा-प्रत्ययस्तद्योगे कर्त्तरि षष्ठी; ततश्चायमर्थः-तैर्नियतिवादिभिः पुनरिदमाख्यातं; तेषामयमाशय इत्यर्थः । सूय०१ श्रु०१ अ०२ उ० ।

आघाय- पुं० *[आघात]*
आहन्यन्ते अपनयन्ति विनाश्यन्ते प्राणिनां दशप्रकारा आपे प्राणा यस्मिन् स आघातः । मरणे, सूय०१ श्रु०९ अ० ।

आघायकिच्च- न० *[आघातकृत्य]*
अग्निसंस्कारजलाञ्जलिप्रदानपितृपिण्डादिकेमरणकृत्ये,सूय० ।

आघायण- न० *[आघातन]*
तत्थ णं महं एगं आघातणं पासंति' 'आघायणं ति-वधस्थानम्। नाया०१ श्रु०९ अ०।
आघायणपांडदुवारसंपाविया' आघातनस्य वध्यभूमिमण्डलस्य प्रतिद्वारं संप्रापिता। पण्हा०३ अ०।
आघायणंति जत्थ वा महासंगाममया बहू।आव०चू० ४ अ० । आव०

आचेलक्क- त्रि० *[आचेलक्य]*
न विद्यते चेलं-वस्त्रं यस्य सः-अचेलकस्तस्य भाव आचेलक्यम्। विगतवस्त्रत्वे, कल्प०१ अधि० १ ।

आचोक्ख- पुं० *[आचोक्ष]*
अष्टमे पिशाचनिकाये, पन्न० १ पद०।

आजम्म- अव्य० *[आजन्मन्]*
यावज्जीवमित्यर्थे, 'वसिज्ज तत्थ आजम्मं, गोयमा ! संजए मुणी' आजन्म-जीवित-कालमभिव्याप्य; यावज्जीवमित्यर्थः। गच्छा० १ अधि०।

आजवंजवीभाव- पुं० *[आजवंजवीभाव]*
पुनः पुनर्गमनागमने, 'आरंभसत्ता पकरंति संगं' संगाच्च पुनरपि संसार-आजवंजवीभावरूपः।आचा०१ श्रु०१अ०७ उ०
मरणाद्-आयुः क्षयलक्षणान्मुच्यते आयुषो बन्धनाभावात्, यदि वा-आजवंजवीभावात्, आवीचि-मरणाद्वा सर्व एव संसारो मरणं तस्मात्प्रमुच्यते आचा० १ श्रु० ३ अ०२ उ०।

आजाइ- स्त्री० *[आजाति]*
आजन-नमाजातिः। स्था० १० ठा० ३ उ०।
आइण्णाऽऽजाइ' आजायन्ते तस्यामित्याजातिः। आचा०१ श्रु०१ अ०१ उ०।
आजननमाजातिः। सम्मूर्छतगर्भोपपाततो जन्म। ठा० १० ठा० ३ उ०।
आजातिः- ततश्च्युतस्य मनुष्यजन्म। ठा० ८ ठा० ३ उ०।
आजायन्ते तस्यामित्याजातिः, साअपि चतुर्द्धा-व्यतिरिक्ता, मनुष्यादिजातिः, भावाऽऽजातिस्तु, ज्ञानाद्याचारप्रसूतरयमेव ग्रन्थ इति। आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

आजाइ- स्त्री० *[आयाति]*
आगतौ, आजातिर्जन्म। आयातिः-आगतिः।ठा०३ ठा० ३ उ०
आयातिः-गर्भान्निष्क्रमः। स्था ०२ ठा० ३ उ०।

आजीव- पुं० *[आजीव]*
आसमन्ताज्जीवन्त्यनेनेति आजीवः। सूय०१ श्रु०१ ३ अ०।
आजीविकायाम्, वव०१ उ०।
आत्मवर्त्तनोपाय, सूय० १ श्रु० १ ३ अ०।

आजीवग-१ पुं० *[आजीवक]*
श्रमणभेदे। आचा०।

आजीवग-२ पुं० *[आजीवग]*
आ-समन्ताज्जीवन्त्यनेनेत्याजीवः-अर्थनिचयस्तं गच्छति-आश्रयत्यसौ-आजीवगः। अर्थमदे, सूय०।
'आजीवगं चेव चउत्थमाहु, से पंडिए उत्तमपोग्गले से' आ समन्ताज्जीवन्त्यनेनेत्याजीवोऽर्थनिचयस्तं गच्छत्याश्रयत्यसौ आवाजीगः-अर्थमदस्तं च चतुर्थं नामयेत् चशब्दाच्छेषानपि मदान्नामयेत् तन्नामनाच्चासौ पण्डितः- तत्त्ववेत्ता भवति। सूय० १ श्रु० १ ३ अ०।

आजीवण- न० *[आजीवन]*
जात्याद्याजीवनेनोत्पादिते आहारशय्यादिके, वणीमगाऽऽजीवणनिकाए' आजीवनं यदाहारशय्यादिकं जात्याद्याजीवनेनोत्पादितम्। वव० ३ उ०।

आजीवणापिंड- पुं० *[आजीवनापिण्ड]*
उत्पादनादोषविशेषस्पष्टे जातिकुलगणकर्मशिल्पैरात्मनो गृहस्थस्य च तुल्यरूपताख्यापनने लब्धजीवनापिण्डे, जीत०।

आजीवपिंड- पुं० *[आजीवपिण्ड]*
जातिकुलगणकर्मशिल्पादिप्रधानेभ्य आत्मनस्तद्गुणत्वारोपणं भिक्षार्थमाजीवपिण्ड इत्युक्तलक्षणे उत्पादनादोषभदे,आचा०।

आजीववित्तिया- स्त्री० *[आजीववृत्तिता]*
जातिकुलगणकर्मशिल्पानामाजीवनमाजीवस्तेन वृत्तिस्तदभाव आजीववृत्तिता। जात्याद्याजीवनेनात्मपालनायाम्, 'जा य आजीववित्तिया' इयं चानाचरिता। दश० ३ अ०।

आजीवि- पुं० *[आजीविन्]*
गोशालकशिष्ये, उपा० १ अ०।

आजीविय- पुं० *[आजीविक]*
नाग्न्यधारिणि पाखण्डिविशेषे, अविवेकिलोकतो लब्धिपूजाख्यात्यादिभिस्तपश्चरणादीन्याजीवति, भग०१ श० २ उ०।
श्रमणभेदे, आचा०२ श्रु०२ चू०१ अ०१ उ०। ठा०।
ते च गोशलकशिष्याः ठा० ४ ठा०२ उ० उपा०
गोशालकप्रवर्त्तिता आजीविकाः पाखण्डिनः। नं०।
'आजीवियाणं' पाखण्डिविशेषाणां नाग्न्यधारिणां, गोशालक शिष्याणामित्यन्ते। आजीवन्ति वा ये अविवेकिलोकतो लब्धि-पूजाख्यात्यादिभिस्तश्चरणादीनि ते आजिविकास्तित्वेनाऽऽजीविका अतस्तेषाम्, भग०१ श० २ उ०।

आजीवियभय- न० *[आजीविकाभय]*
निर्द्धनः कथं दुर्भिक्षादावात्मानं धारयिष्यामीत्येवंरूपे भयभेदे, आव०४ अ०।

आजीवियसमय- पुं० *[आजीविकसमय]*

गोशालकसिद्धान्ते, भग०।

आजीवियसमयस्स णं अयमट्ठे पण्णत्ते, अक्खीणपडिभोइणो सव्वे सत्ता से हंता छेत्ता भेत्ता लुंपित्ता विलुंपित्ता उद्दवइत्ता आहारमाहरेंति। भग०८ श० ५ उ०।

गोशालकासिद्धान्तस्य 'अयमट्ठे' त्तिइदमभिधेयम्-अक्षीणम् अक्षीणायुष्कम्-अप्रासुकं परिभुज्यत इत्येवंशीला अक्षीणपरिभोगिनः, अथवा–इन्प्रत्ययस्य स्वार्थिकत्वादक्षीणपरिभोगाः, अनपगताहाराभोगा सक्तयः इत्यर्थः, सर्वे सत्त्वाः असंयताः सर्वे प्राणिनो यद्येवं ततः किमित्याह–'से हंते'त्यादि, 'से'त्ति-ततः। 'हन्ते'त्ति-हत्वा लगुडादिनाऽभ्यवहार्यं प्राणिजातं छित्त्वा-असिपुत्रिकादिना द्विधा कृत्वा 'भित्त्वा' शलादिना भिन्नं कृत्वा 'लुप्त्वा' पक्ष्मादिलोपनेन 'विलुप्य' त्वचो विलोपनेन 'अपद्राव्य' विनाश्य आहारमाहारयन्ति। भग०८ श० ५ उ०।

आजीवियसुत्त- न० *[आजीविक*]*

गोशालकप्रवर्त्तितपाखण्ड*, सम०।

आजीवियसुत्तपरिवाडीए' गोशालकप्रवर्त्तितपाखण्ड परिपाट्या । सम०।

आजीवियादोस- पुं० *[आजीविकादोष]*

चतुर्थे उत्पादनादोषे, उत्त०

यदा गृहस्थस्य ज्ञातिं कुलं ज्ञात्वा आत्मीयमपि साधुस्तमेव ज्ञातिं तदेव कुलं स्वकीयं प्रकाश्याऽऽहारं गृह्णाति तदाऽऽजीविकादोषश्चतुर्थः। उत्त० २४ अ०।

आजीवियोपासग- पुं० *[आजीविकोपासक]*

आजीविकागोशालक-शिष्यास्तेषामुपासक आजीवोपासकः। उत्त०२४ अ०।

गोशालकशिष्यश्रावके, भग०।

आजुत्त- त्रि० *[आयुक्त]*

अप्रमत्ते, 'अच्चत्थं जुत्तो आजुत्तो वा' अप्रमत्त इत्यर्थः। निसि०१ उ०।

आडंबर- पुं० *[आडंबर]*

पटहे, 'आडम्बरो धबइयं' ठा०७ ठा० ३ उ०। अनुओ०। यक्षे, 'पाणाडंबरे अरुद्दे पाणत्ति मायगा तेसिं आडम्बरो जक्खो हरिमिक्को वि भणंतीति। आव० ४ अ०। आव० चू०। यक्षायतने, आडम्बरे-आडम्बरयक्षायतने, वव०७ उ०

आडहण- न० *[आदहन]*

आ-समन्ताद्दहने, मुखे विकाशं कृत्वा स्थूलं बृहत्तप्तायोगोलादिकं प्रक्षिपन्त आसमन्ताद्दहन्ति। सूय० १ श्रु० ५ अ० २ उ०

आडोव- पुं० *[आटोप]*

आडम्बरे च। उपा० २ अ०।

स्फारतायाम्, नाया०१ श्रु०१ अ०।

आढई- स्त्री० *[आढकी]*

गुच्छात्मकं वनस्पतिभेदे, पन्न० १ पद०।

आढकी, गुच्छविशेषः। आचा० ५७।

आढग- पुं० *[आढक]*

चतुष्प्रस्थात्मके धान्यप्रमाणविशेषे, अनुओ०।

चतुर्भिः प्रस्थैराढकः। तं०।

'तंदुलाणाऽऽढयं कलमा' तन्दुलानां कलमा इति प्राकृतशैल्या कलमानाम् आढकम्-चतुःप्रस्थप्रमाणम्। आव० म०१ अ०। 'आढकं तंडुलाणं सिट्ठं ति'। आव०चू० १ अ०।

आढत्त- त्रि० *[आरब्ध]*

आरब्ध 'सा दाउं आढत्ता'। सा संघाटं दातुं प्रवृत्ता; परावर्तयितुं, व्याख्यातुं च; प्रवृत्तेत्यर्थः। वव० ५ उ०।

आढाइत्ता- अव्य० *[आदृत्य]*

नाद्रियते तत्रार्थेऽनादरवान् भवति।भग०९श० ३३ उ०।ठा०।

आढायमाण- त्रि० *[आद्रियमाण]*

आदरक्रिययाविषयीक्रियमाणे, जीवा० ३ प्रति०४ अधि०।

परम्-अत्यर्थमाद्रियमाणः इति अत्यर्थमादरवान्। आचा०१ श्रु०८ अ०१ उ०।

आढिय- त्रि० *[आदृत]*

आदर-क्रिया विषयीकृते, जीवा० ३ प्रति०४ अधि०।

आदरे, न०। आव० ३ अ०।

आण- पुं० *[आण(न)]*

उच्छ्वासक्रियायाम्, पन्न०७ पद०।

आणंतरिय- न० *[आनन्तर्य्य]*

अनुक्रमे, 'आणंतरियं णाम-आणंतरियंति वा अणुपरिवाडि त्ति वा अणुक्कमेत्ति वा एगट्ठा' आव०चू०१ अ०।

आणंद-१ पुं० *[आनन्द]*

चित्ताह्लादे, उव०।

सुखे, ठा० ३ ठा०४ उ०।

हर्षे, दश० २ चू०।

अभिलषितार्थावाप्तिजन्ये मानसे विकारे, 'के आणंदे' अभिलषितार्थावाप्तावानन्दः। आचा०१ श्रु० ३ अ० ३ उ०।

आणंद-२ पुं० *[आनन्द]*

अहोरात्रभवे त्रिंशन्मुहूर्त्तान्तर्गते स्वनामख्याते षोडशे मुहूर्त्ते, ज्यो०२ पाहु० । कल्प०। जंबू। चंद०

गणनया एकादशो मुहूर्त्त आनन्दः सम० ३० सम०।

आणंद-३ पुं० *[आनन्द]*
स्वनामख्याते षष्ठे बलदेवे, सम०

आणंद-४ पुं० *[आनन्द]*
स्वनामख्याते शीतलजिनस्य प्रथमशेष्ये च। सम०।

आणंद-५ पुं० *[आनन्द]*
भगवत ऋषभदेवस्य शतपुत्रान्तर्गते स्वनामख्याते पुत्रे, कल्प०१ अधि०७ क्षण।

आणंद-६ पुं० *[आनन्द]*
स्वनामख्याते भगवतो महावीरस्यान्तेवासिनि, ठा० १० ठा० ३ उ०।
'समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी आणंदे णामं थेरे' भग०१५ श० ।

आणंद-७ पुं० *[आनन्द]*
धरणस्य नागेन्द्रस्य नागराजस्य स्वनामख्याते स्थानिका-धिपतौ, ठा०५ ठा०१ उ०।

आणंद-८ पुं० *[आनन्द]*
गन्धमादनवक्षस्कारपर्वतस्थे स्वनामख्याते देवे, जंबू ४ वक्ष०।

आणंद-९ पुं० *[आनन्द]*
पुष्करवरद्वीपार्द्धस्थितमानुषोत्तरपर्वतस्थे स्वनामख्याते सुवर्ण कुमारे, जीवा०।

आणंद-१० पुं० *[आनन्द]*
स्वनामख्याते पितृसेनकृष्णाङ्गजे, तद्वक्तव्यता प्रतिबद्धे निरयावलिकोपाङ्गे द्वितीय-वर्गस्य कल्पावतंसिकाभिधस्य नवमेऽध्ययने च। नि०१ श्रु०२ वर्ग०९ अ०।

आणंद-११ पुं० *[आनन्द]*
वाणिजग्रामस्थे स्वनामख्याते श्रावके, उपा०१ अ०। नि०। संथा०। आव० म०१ अ०। भग०।
आनन्दाभिधानोपासकवक्तव्यता प्रतिबद्धमध्ययनमानन्दः। उपा० ३ अ०।
आनन्दो वाणिजग्रामाभिधाननगरवासीमहर्द्धिको गृहप-तिर्महावीरेण बोधित एकादशोपासकप्रतिमां कृत्वोत्पन्नावधि-ज्ञानो मासिक्या संलेखनया सौधर्ममगमदिति वक्तव्यता प्रति-बद्धे उपासकदशायाः प्रथमेऽध्ययने च। ठा०१० ठा० ३ उ०

आणंदअंसुपाय- पुं० *[आनन्दाऽश्रुपात]*
हर्षाश्रुमोक्षणे, आनन्दाश्रुपातम् अहो आराधितमनेनेति हर्षा-श्रुतिमोक्षणम्। दश० २ चू०।

आणंदकूड- न० *[आनन्दकूट]*
आनन्दनाम्नो देवस्य कूटमानन्दकूटम्। गन्धमादनवक्षस्कार-पर्वतस्थे कूटभेदे, जंबू४ वक्ष०।

आणंदज्जयण-१ न० *[आनन्दाध्ययन]*
आनन्दवक्तव्यताप्रतिबद्धे उपासकदशायाः प्रथमेऽध्ययने, उपा० १ अ०, ठा०।

आणंदज्जयण-२ न० *[आनन्दाध्ययन]*
अनुत्तरोपपातिकदशायाः सप्तमेऽध्ययने, ठा०१० ठा० ३ उ०।

आणंदज्जयण-३ न० *[आनन्दाध्ययन]*
निरयावलिकोपाङ्गद्वितीयवर्गस्य कल्पावतंसिकाभिधस्य नवमे ऽध्ययने च। कल्प० वर्ग०२ अ०।

आणंदण-१ न० *[आनन्दन]*
भगवत ऋषभदेवस्य शतपुत्रान्तर्गतं स्वनामख्याते पुत्रे, कल्प०१ अधि ०७ क्षण।

आणंदण-२ न० *[आनन्दन]*
वक्षस्कारपर्वतस्थे स्वनामख्याते देवे च। ठा०७ ठा० ३ उ०।

आणंदणकूड- न० *[आनन्दनकूट]*
गन्धमादनवक्षस्कारपर्वतस्थे स्वनामख्याते कूटभेदे, ठा० ७ ठा० ३ उ०।

आणंदपुर- न० *[आनन्दपुर]*
स्वनामख्याते नगरे, आनंदपुरं नगरं जितारि राया। बुह०४ उ० वीरात्त्रिनन्दाङ्क शरद्यचीकरत्त्वच्चैत्यपूते ध्रुवसेनभूपतिः। यस्मि-न्महैः संसदि कल्पवाचनामाद्यां तदानन्दपुरं न कः स्तुते'। कल्प० १ अधि० ६ क्षण।

आणंदरक्खिय- पुं० *[आनन्दरक्षित]*
स्वनामख्याते स्थविरे,। भग० २ श० ४ उ०।

आणंदहिययभाव- पुं० *[आनन्दहृदयभाव]*
आनन्दलक्षणे भावे, आनन्द-लक्षणो यो भावस्तस्य नन्दकराः- वृद्धिकरा ये ते तथा। पण्हा० ४ अ०।

आणंदा- स्त्री० *[आनन्दा]*
पौरस्त्यायां स्वनामख्यातायां दिक्कुमार्य्याम्, आव०म० १ अ० जीवा०। जंबू । ठा०। आव०चू०। आव०।
लवणद्वीपस्थपौरस्त्यां जनकपर्वतस्थायां स्वनामख्यातायां नन्दापुष्करिण्याम्, ठा० ४ ठा० २ उ०।

आणंदिय- त्रि० *[आनन्दित]*
प्रमोदं प्राप्ते, जंबू ३ वक्ष०।
स्फीतीभूते, । आव०म० १ अ०। जीवा०। रा०।
ईषन्मुखसौम्यतादिभावैस्यसमृद्धिमुपगते, हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए उव०।

आणग्गहण- न० *[आणग्रहण]*
प्राणापानयोग्यपुद्गलोपादाने, 'समयं आणग्गहणं' समकं च प्राणापानग्रहणं-प्राणापानयोग्यपुद्गलोपादानम् ।प्रज्ञा० १ पद०

आणट्ठाकिइ- त्रि० *[आज्ञार्थाकृति]*

आज्ञाऽऽगमोऽर्थशब्दस्य हेतुवचनस्यापि दर्शनादर्थोहेतुरस्याः सा तथाविद्याऽऽकृतिरर्थान्मुनिवेषात्मिका यत्र तदाज्ञार्थाकृति। उत्त०।

मुनिवेषाकृतिमति, उत्त०।

आज्ञार्थाकृति यथाभवत्येवं प्राव्राजी-दिति। उत्त० १८ अ०।

आणण- न० *[आनन]*

कुंडलउज्जोइयाऽऽणणे' कुण्डलाभ्यामुद्योतितम् आननं-मुखं यस्य स तथेति। जंबू ३ वक्ष०। तं०। रा०।

आणत्त- त्रि० *[आज्ञप्त]*

आदिष्टे, कृतादेशे,। पण्हा० ३ अ०। निसि०। आव०।

आणत्त- न० *[अन्यत्व]*

परस्परं भिन्नत्वे, 'तेसिं णिज्जरापोग्गलाणं किं आणत्तं वा' । पन्न० १५ पद० १ उ०।

आणत्ति- स्त्री० *[आज्ञप्ति]*

आदेशे, 'आणत्तियं पच्चप्पिणह' आज्ञप्तिम्-आदेशं, प्रत्यर्पयता नाया०१ श्रु०१ अ०। पन्न०।

आणत्तिकिंकर- पुं० *[आज्ञप्तिकिङ्कर]*

यथादेशकारिणि, 'आणत्ति-किंकरेहिं' आज्ञप्तिकिंकरैर्यथादेश-कारिकिंकुर्वाणैः पण्हा० ३ अ०।

आणत्तिया- स्त्री० *[आज्ञप्तिका]*

आज्ञायाम्, 'आणत्तिअं पच्चप्पिणह' आज्ञाप्तिकाम्-आज्ञां प्रत्यर्प्य-सम्पाद्यः, मम निवेदयंत्यथः। उव०।

'एतमाणत्तिअं खिप्पमेव पच्चप्पिणाहिइ' एतामाज्ञाप्तिकां क्षिप्रं प्रर्त्यपयतीति। जंबू ३ वक्ष०।

आणप्प- त्रि० *[आज्ञाप्य]*

आज्ञापनीये, सूय०। 'आणप्पा हवंति दासा वा' स्त्रीणाम्पुरुषाः स्ववशीकृता दासा इव-क्रयक्रीता इव आज्ञाप्या-आज्ञापनीया भवन्ति। सूय० १ श्रु०४ अ०२ उ०।

आणमणी- स्त्री० *[आज्ञापनी]*

असत्यामृषाभाषाभेद, आज्ञापनी कार्य्ये प्रवर्तनी (परस्य प्रवर्त्तनं-यथेदं कुर्विति)। भग० १० श० ३ उ०। पन्न०।

आणय-१ त्रि० *[आनत]*

विमानविशेषे, अनुओ०।

सकलविमानप्रधानावतंसकविमानविशेषोपलक्षित आनतः। कल्पभेदे, ऊर्ध्वदेवलोकभेदे, अनुओ०।

स च वैमानिकदेवलोकः। सम०।

नवमदेवलोकनाम। पन्न०।

एकोनविंशतिसागरोपमस्थितिकं विमानम्। सम०

आणय-२ त्रि० *[आनत]*

आनते भवा आनताः। कल्पोपगवैमानिक-देवभेदे, 'आणया' । उत्त० ३६ अ०।

आणयण- न० *[आनयन]*

आनीयतेऽनेनेत्यानयनम्-आनयनसाधने, । उत्त० ३६ अ०।

आणयणप्पओग- पुं० *[आनयनप्रयोग]*

आनयने विवक्षितक्षेत्राद्बहिर्वर्त्तमानस्य सचेतनादिद्रव्यस्य विवक्षितक्षेत्रप्रापणे प्रयोगः आनयनप्रयोगः। देशावकाशिक-दिगतस्यातिचारभेदे, स च स्वयं गमने व्रतभङ्गभयादन्यस्य संदेशकादिना व्यापारणम्। उपा०।

आणवण-१ न० *[आज्ञापन]*

आदेशे, ठा० २ ठा० १ उ०।

प्रतिबोधने, 'आगमेत्ता आणवेज्जा' आगम्य ज्ञात्वा तं गृहपति-माज्ञापयेत्प्रतिवोधयेदिति। आचा०१ श्रु०८ अ०४ उ०।

प्रवर्त्तने, आज्ञापर्यान्त-प्रवर्त्तयन्ति स्ववशं ज्ञात्वा कर्म-करवादाज्ञां कारयन्ति। सूय०१ श्रु०४ अ०१ उ०।

आणवण-२ न० *[आनायन]*

प्रापणे, ठा०२ ठा०१ उ०।

आणवणिया- स्त्री० *[आज्ञापनकी]*

आज्ञापनस्यादेशनस्येयमाज्ञापनमेवेत्याज्ञापनी सैवाज्ञापनिका तज्जः कर्मबन्ध आदेशनमेवेति, आनायनं वा। आनायनी-क्रियाभेदे, ठा० २ ठा० १ उ०।

विंशतिक्रियामध्ये द्वादशी क्रिया। आव०।

कार्ये परस्य प्रवर्त्तनं यथेदं कुर्विति भाषा। पन्न० ६५३।

आणा- स्त्री० *[आज्ञा]*

अनुष्ठाने। विशे०।

आदेशे, आदेशश्च निकृष्टस्य भृत्यादेः कृत्यादौ प्रवृत्त्यर्थो व्या-पारभेदः। नाया० १ श्रु०१ अ०।

'आणाउव-वायवयणनिद्देसे चिट्ठंति' आज्ञा-कर्त्तव्यमेवेदमि-त्याद्यादेशः। उपपातः-सेवा। वचनम्-अभियोगपूर्वक आदेशः निर्देशः-प्रश्निते कार्ये नियतार्थमुत्तरम्। भग० ३ श० १ उ०।

विधिविषयक आदेश आज्ञा। ठा०७ ठा० ३ उ०।

आज्ञायोगेषु प्रवर्त्तनालक्षणा। ठा०५ ठा०२ उ०।

आदेशनस्येयमाज्ञापनमेव वेत्याज्ञापनी सैवाज्ञापनिका, तज्जः कर्म्मबन्धः, आदेशनमेव वेति, आनायनं वा आनायनी। ठा०

मौनीन्द्रवचनम्। आचा०।

तीर्थकरगणधरोपदेशः। दश०।

ज्ञानाद्यासेवारूपजिनोपदेशः। भग०।

दुवालसंगं गणिपिडगं। निसि० ।

आगमः। सूय०। आव०। उत्त०।
आज्ञा-हिताहितप्राप्तिपरिहाररूपतया सर्वज्ञोपदेशः। आचा०।
गूढार्थपदैः अगीतार्थस्य पुरतो देशान्तरस्थगीतार्थनिवेदनाय गीतार्थो यदतिचारनिवेदनं करोति सा। ठा०।
सर्वज्ञ वचनात्मिका। पन्न०।
कर्त्तव्यमेवेदमित्याद्यादेशः। भग०।
आङिति स्वस्वभावावस्थानात्मिकया मर्यादयाऽभिव्याप्त्या वा ज्ञायन्तेऽर्था अनयेति, भगवदभिहितागमरूपा। उत्त०।
उपदेशः। सूय०
यथोक्ताज्ञापरिपालना। नन्दी०।

आणाईसर- पुं० *[आज्ञेश्वर]*
आज्ञया आज्ञाया वा ईश्वर आज्ञेश्वरः। जीवा० ३ प्रति०४ अधि०। आव० म०।
आज्ञाप्रधाने ईश्वरे, जंबू १ वक्ष०। उव०।

आणाईसरसेणावच्च- न० *[आज्ञेश्वरसेनापत्य]*
आज्ञाया ईश्वर आज्ञेश्वरः।जीवा० ३ प्रति०३अधि०।आव० म० सेनायाः पतिः सेनापतिः आज्ञेश्वरश्चासौ सेनापतिश्च आज्ञेश्वर-सेनापतिस्तस्य कर्म आज्ञेश्वरसेनापत्यम्। जीवा० ३ प्रति०४।
आज्ञाप्रधानो यः सेनापतिः-सैन्यनायकः तस्य भावः कर्म वा आज्ञेश्वर-सेनापत्यम्। उव०।
स्वसैन्यं प्रत्यद्भुते आज्ञाप्राधान्ये, जीवा० ३ प्रति०४ अधि०।
आज्ञेश्वरसेनापत्यम्, आज्ञाप्रधानस्य सतो यत् सेनापत्यम्। भग० १५४।

आणाकंखिन- पुं० *[आज्ञाकाङ्क्षिन्]*
आज्ञामाकाङ्क्षितुं शीलमस्येत्याज्ञाकाङ्क्षी। सर्वज्ञोपदेशानुष्ठा-यिनि, आचा०।
'इह आणाकंखी पंडिए' इह-अस्मिन् मौनीन्द्रे प्रवचने व्यव-स्थितः सन् आज्ञां-तीर्थकृतोपदेशमाकाङ्क्षितुं शीलमस्येत्याज्ञा-काङ्क्षी आगमानुसारप्रवृत्तिकः कश्चैवंभूतः पण्डितः-सदसद्विच-क्रज्ञः। आचा०१ श्रु०५ अ० ३ उ०।

आणाखंडण- न० *[आज्ञाखण्डन]*
आज्ञाभङ्गे, 'आणा नो खंडेज्जा, आणाभंगे कओ सुहो'। महा०४ अ०।

आणागिज्ज- त्रि० *[आज्ञाग्राह्य]*
आगमविनिश्चये।
आज्ञा-आगमस्तद्ग्राह्यस्तद्विनिश्चेयोऽर्थोऽनागतातिक्रान्तप्रत्या-ख्यानादिराज्ञयैव-आगमेनैवासौ कथयितव्य। यद्वा-सामान्येनैव आज्ञाग्राह्योऽर्थः- सौधर्मादिः, आज्ञयैवासौ कथयितव्यो; न दृष्टान्तेन तस्य तत्र वस्तुतोऽसम्भवात्। आव० ६ अ०

आणाणिदेस- पुं० *[आज्ञानिर्देश]*
भगवतभिहितागमस्योत्सर्गापवादाभ्यामिदमित्थं विधेयमिदम् इत्थं चेत्येवमात्मकेप्रतिपादने, उत्त० १ अ०।
आज्ञा–भगवदभिहितागमरूपा तस्या निर्देशः–उत्सर्गापवादा-भ्यां प्रतिपादनम्। उत्त० १ अ०।

आणाणिद्देसयर-१ त्रि० *[आज्ञानिर्देशकर]*
भगवदभिहितागमप्रतिपादनकरणशीले, भगवदभिहितागमा-नुलोमानुष्ठायिनि च। उत्त० १ अ०।

आणाणिद्देसयर-२ त्रि० *[आज्ञानिर्देशतर]*
गुरुवचनस्येद्मित्थमेवं करोमीति निश्चयाभिधानन भवाम्भोधे-स्तरणशीले, उत्त० १ अ०

आणाणिद्देसयर-३ पुं० *[आज्ञाऽनिर्देशकर]*
आज्ञाविराधके, उत्त०।
अविनीतशिष्यमधिकृत्य 'आणाऽनिद्देसकरे स शिष्योऽविनीत इत्युच्यते य आज्ञायाः-तीर्थकरवाक्यस्य, गुरोर्वाक्यस्य चाऽ-निर्देशकरः-अप्रमाणकर्त्ता आज्ञाविराधकः। उत्त० १ अ०।

आणाऽणुग- त्रि० *[आज्ञाऽनुग]*
आज्ञामनुगच्छति, अनुओ०।

आणापरिणामग- पुं० *[आज्ञापरिणामक]*
यदाज्ञाप्यते तत्करोति तत्कारणान्न पृच्छति;-किमर्थमेतदिति किंत्वाज्ञयैव कर्त्तव्यतया श्रद्दधातीत्येवंलक्षणे परिणामकभेदे, वव० १० उ०।

आणापाणु- पुं० *[आनप्राण]*
कालविशेषे, जीवा० ३ प्रति० ४। अनुओ०। ठा०। नाया०।
उच्छ्वासनिःश्वासकालः, संख्यातावलिकाप्रमाणाः। ठा०।

आणामिय- त्रि० *[आनामित]*
ईषन्नामिते, २ अ०। तं०। पण्हा०। जीवा०।
आनामितम्- ईषन्नामितं यच्चापंधनुस्तद्वद्विरे- शोभने कृष्ण चिकुर राजिसुसंस्थिते कुत्रापिकृष्णा भ्रूराजिसुसंस्थिते संगते आयते-दीर्घे सुजाते-सुनिष्पन्ने भुवौ येषां ते। तं०। पण्हा०।
आनामितम्-इषन्नामितम्-आरोपितमिति भावः,
यच्चापंधनुः तद्वत् रुचिरे-संस्थानविशेषभावतो रमणीये तनू-तनुः श्लक्ष्ण-परिमितबालपङ्क्यात्मकत्वात् कृष्णे-परमकालिमोपेत स्निग्धे-स्निग्धच्छाये भ्रुवौ येषां ते आनामित चापरुचिरतनुकृष्ण- स्निग्धभ्रूकाः। जीवा० ३ प्रति० ४ अधि० २ उ०।
आनामितम्-ईषन्नामितं यच्चापंधनुस्तद्वद् ललिता च-विलास-वती संवेल्लिता च-वेल्लन्ती संकोचिता वा अग्रशुण्डा-शुण्डाग्रं यस्य तत्तथा। उपा० २ अ०।

आणारुइ- स्त्री० *[आज्ञारुचि]*
आज्ञा- व्याख्यानं; निर्युक्त्यादि, तत्र तया वा रुचिः श्रद्धानम् सा आज्ञारुचिः। ठा० ४ ठा० १ उ०। भग०।
निर्युक्त्यादेस्तत्त्वश्रद्धाने, गच्छा० १ अधि०। उव०।
आणारुईतित्थगराणं आणं पसंसति'। आव०चू० ४ अ०१ ।
तदात्मके तृतीये सरागसम्यग्दर्शिनि ।ठा०१०ठा०३उ०। उत्त०
रागद्वेषपरहितस्य पुंस आज्ञयैव धर्मानुष्ठानगतारुचिराज्ञा-रुचिः। तृतीये सम्यग्दर्शनभेदे, आज्ञा-सर्वज्ञ-वचनात्मिका तया रुचिर्यस्य सः। ठा० १० ठा० ३ उ०। उत्त०।
यो हि प्रतनुरागद्वेषमिथ्याज्ञानतयाऽऽचार्य्याऽऽदीनामाज्ञैव कुग्रहाभावाज्जीवादितयेति रोचयते मानुषादिवत् स आज्ञा-रुचिः। ठा० १० ठा० ३ उ०।
आज्ञा–सूत्रव्याख्यानं निर्युक्त्यादिश्रद्धानम्। उव०।

आणावट्टि- त्रि० *[आज्ञावर्त्तिन्]*
भगवत्प्रणीतवचनानुसारिणि, । आचा० ।

आणाववहार- पुं० *[आज्ञाव्यवहार]*
व्यवहारभेदे। वव०।

आणाविजय- पुं० *[आज्ञाविचय]*
आ-अभिविधिना ज्ञायन्तेऽर्थायया सा-प्रवचनं; सा विचीयते-निर्णीयते; पर्य्यालोच्यते वा यस्मिंस्तदाज्ञाविचयं-धर्म्मध्यानम् इति, प्राकृतत्वेन-विजयमिति। ठा० ४ ठा० १ उ०।
आज्ञा-जिनप्रवचनं तस्या विचयो-निर्णयो यत्र तदाज्ञाविचयम्, प्राकृतत्वात्-आणाविजयम्। उव०। गच्छा०। भग०।
आज्ञा वा विजीयतेअधिगमद्वारेण परिचितीक्रियते यस्मिन्नि-त्याज्ञाविजयम्। ठा० ४ ठा० १ उ०।
आज्ञागुणानुचिन्तनात्मकेधर्मध्यानभेदे,उव० ।गच्छा०। भग०
प्रवचन-पर्यालोचनविषयमाज्ञालोचनविषयंधर्मध्यानम् ।ठा०।

आणावेतव्य- त्रि० *[आज्ञापयितव्य]*
आदेशनीये, आचा०।

आणासिद्ध- त्रि० *[आज्ञासिद्ध]*
आप्तवचनसिद्धे, सूय०।
'पुराण मानवो धर्मः, साङ्गो वेदश्चिकित्सितम्। आज्ञासिद्धानि चत्वारि, न हन्तव्यानि हेतुभिः। सूय०१ श्रु० ३ अ० ३ उ०।

आणिज्जंत- त्रि० *[आनीयमान]*
प्राप्यमाणे, 'णिज्जंताऽऽणिज्जंतो' 'आणिज्जंतो'त्ति-गृहपतिः गृहादानीयमानो वा। बुह०३ उ०।

आणील- पुं० *[आनील]*
ईषदर्थे, सम०।
ईषन्नीलवर्णे, सामस्त्येन नीलवर्णे च। आणीलं च वत्थं रया-वेहि। वस्त्रम्-अम्बरं परिधानार्थं गुलिकादिना रञ्जय आनीलम्-ईषन्नीलं सामस्त्येन नीलं भवति। सूय०१ श्रु०४ अ०२ उ०।

आणुकंपिय- त्रि० *[आनुकम्पिक]*
अनुकम्पया चरतीत्यानुकम्पिकः। भग० १५ श० ।
कृपावति, भग० ३ श० १ उ०। प्रति०।

आणुगामिय- त्रि० *[आनुगामिक]*
गच्छन्तं पुरुषम् आसमन्तादनुगच्छत्येवंशीलः आनुगामि, आनुगाम्येवानुगामिकं अथवा-अनुगमः प्रयोजनं यस्य तदानु-गामिकम्। अनुशतिकादिपाठादुभयपदवृद्धिः। आव० म० १ अ०। नं०। ठा०।
अनुगमनशीलः। आव० ।
आणुगामियं ति वेमि' आनुगामिकं तदार्जितपुण्यानुगमनाद्। आचा०१ श्रु०८ अ०५ उ०।
देशान्तरगतमपि ज्ञानिनं यदनुगच्छति लोचनवदिति तदेवा-नुगामिकम् । ठा०।
'से एगईओ आणुगामियभावं पडिसंधायं' आनुगामुकभावं प्रतिसंधाय-सहगन्तृभावेनानुकूल्यं प्रतिपद्य ।सूय०२ श्रु०२ अ०

आणुगामियत्ता- स्त्री० *[आनुगामिकता]*
परम्पराशुभानुबन्ध, 'आणुगामियत्ताए भविस्सइ' आनुगामि-कत्वायः शुभानुबन्धायेत्यर्थः। भग०९ श० ३३ उ०।
आणुगामियत्ताए अब्भुट्ठेत्ता भवति आनुगामिकतायै-परम्परा-शुभानुबन्धायेति। दशा०४ अ०।
भवपरम्परासु, सानुबन्धसुखे च। आणुगामियत्ताए भविस्सइ। आनुगामिकत्वाय-भवपरम्परासु सानुबन्धसुखाय भविष्यति। दशा० १० अ०। नि०।

आणुधम्मिय- त्रि० *[आनुधार्मिक]*
अन्यैरपि तद्धार्मिकैस्समाचीर्णे, आचा०।
भगवतो महावीरस्य विहारसमये इन्द्रप्रक्षिप्तवस्त्रधारणम् अधिकृत्य-'एवं खु आणुधम्मियं तस्स'। एतद्वस्त्रावधारणं तस्य भगवतोऽनुपश्चाद्धार्मिकमानुधार्मिकमवेत्यपरैरपि तीर्थकृद्भिः समाचीर्णमित्यर्थः। आचा०१ श्रु० ९ अ० १ उ०।

आणुपुव्व- न० *[आणुपूर्व्य]*
पूर्वस्य पश्चादनुपूर्व तस्य भावः इत्यर्थे ।उत्त० १ अ०। अनुओ०
क्रमे, उव०।
परिपाट्याम्, नाया० १ श्रु०१ अ०।
विशिष्टरचनायाम्, सूय०२ श्रु०१ अ०।
क्रमेण नीचैर्नीचैस्तरभावरूपः। जीवा०।

आणुपुव्वट्ठिय- त्रि० *[आनुपूर्व्यास्थित]*
विशिष्टरचनया स्थिते, सूय० २ श्रु०१ अ०।

आणुपुव्वसुजाय- त्रि० *[आनुपूर्व्यसुजात]*

परिपाट्या सुष्ठुजाते। तथा च वृक्षवर्णनमुपक्रम्य-आनुपूर्व्येण-मूलादिपरिपाट्या सुष्ठु जाता रुचिराः वृत्तभावं च परिणता ये ते तथा। नाया० १ श्रु०१ अ०।

आनुपूर्व्यामूलादिपरिपाट्या जन्मदोषरहितं यथा भवति एवं जात आनुपूर्वी-सुजातः। रा०। जंबू।

तथा च ह्रदवर्णनमुपक्रम्य आनुपूर्व्येणपरिपाट्या सुष्ठु जाता वप्राः-तटा यत्र स तथा गम्भीरम्-अगाधं शीतलं जलं यत्र स । नाया०१ श्रु०४ अ०।

आनुपूर्व्येक्रमेण वर्द्धमाना हीयमाना वा इति गम्यम्, सुसंहता-सुष्ठु अविरला अङ्गुल्यः पादाग्रावयवा यस्य स तथा। उव०।

आणुपुव्विग- त्रि० *[आनुपूर्वीग]*

आनुपूर्वीक्रमस्तं गच्छतीत्यानुपूर्वीगः। क्रमवति, । आचा० १ श्रु० ६ अ०१ उ०।

'आणुपुव्विगमा एसो पव्वज्जासुत्तअत्थकरणं च'। आचा०१ श्रु० ८ अ० १ उ०।

आणुपुव्विगंठिय- त्रि० *[आनुपूर्वीग्रन्थित]*

परिपाट्या गुम्फिते, भग०।

अन्ययूथिकानधिकृत्य-आनुपूर्व्या-परिपाट्या ग्रन्थिता-गुम्फिता आद्युचितग्रन्थीनामादौ विधानादन्तोचितानां च क्रमेणान्त एव करणाद्। भग० ५ श० ३ उ०।

आणुपुव्विणाम- न० *[आनुपूर्वीनामन्]*

वृषभनासिकान्यस्तरज्जुसंस्थानीयाः कर्मसंहत्या विशिष्टं स्थानं प्राप्यते असौ यथा चोर्द्धोत्तमाङ्गाधरश्चरणादिरूपो नियमतः शरीरविशेषो भवति सा अनुपूर्वीति। आव० १ अ०।

नामकर्मभेदे, यदुदयादन्तराले गतो जीवो याति तदानुपूर्वी-नाम। सम० ४२ सम०।

तच्चतुर्विधम्- नारकानुपूर्वीनाम १,

तिर्यगानुपूर्वीनाम २,

मनुष्यानुपुर्वीनाम ३,

देवानुपूर्वीनाम ४। सम० ४२ सम०।

आणुपुव्विविहारि- पुं० *[आनुपूर्वीविहारिन्]*

प्रव्रज्यदिक्रमण विहारिणि, आचा०।

आणुपुव्वी- स्त्री० *[आनुपूर्वी]*

पूर्वस्य पश्चादनुपूर्वं तस्य भावः इत्यर्थे क्रमे, परिपाट्याम्, उत्त०१ अ०। आचा०। रा०। विशे०। जंबू०।

आनुपूर्वी, अनुक्रमः, अनुपरिपाटीति पर्य्याया; त्र्यादिव-स्तुसंघा इत्यर्थः। अनुओ०।

आनुपूर्व्याश्रमणधर्मप्रतिपत्त्यादिलक्षणया प्राणिषु यथाशक्त्या सम्यक् यतः संयतः। सूय०१ श्रु०२ अ० ३ उ०।

आनुपूर्व्या-प्रव्रज्ययादिक्रमेण। आचा० १ श्रु० ८ अ० ८ उ०।

विशिष्टरचनायाम्, सूय० २ श्रु०१ अ०।

तदात्मक शास्त्रीयोपक्रमभेदे, प्रकारान्तरेण शास्त्रभावो-पक्रमभेदे च। अनुओ०।

शिष्यप्रशिष्यपरम्परात्मिका। उत्त० ।

क्रमेण मरणकालं पत्तस्स आणुणुव्वी। निसि०।

यदुदयादन्तरालगतौ जीवो याति तदानुपूर्वीनाम। सम०।

आतंक- पु० *[आतङ्क]*

कृच्छ्रजीवने, (दुःखे) आचा०१ , श्रु०१ , अ०७ उ०।

नरकादिदुःखे च। आचा०१ श्रु० ३ अ०२ उ०।

तच्च द्विविधम शारीरं, मानसं च। तत्राद्यम् कटुकक्षारशस्त्र-गण्डलूतादिसमुत्थम्, मानसं प्रियविप्रयोगाऽप्रियसंप्रयोगे प्सि-तालाभदारिद्र्य-दौर्मनस्यादिकृतम्। आचा० १ श्रु० १ अ० ७ उ० ।

यदि वा-आतङ्को द्वेधाद्रव्यभावभेदात्। रोगे, ठा० ५ ठा० ३ उ०। उत्त० । अनुओ० ।

आङिति सर्वात्मप्रदेशाऽभिव्याप्त्या तङ्कयन्ति कृच्छ्रजीवितमा-त्मानं कुर्वन्तीत्यातङ्काः।सद्योघातिनि रोगविशेषे उत्त०१० अ०।

आतङ्को-ज्वरादिः सद्यो घाती रोगः। उत्त० ।

'आसुघाई आतंको' आव० ४ अ० । ठा० । आव० चू०। जीवा०। उत्त०। रा०। आव० म०।

आतङ्कारोगपरीपहाःस्पृशन्ति। उत्त०२१ अ०।

आतङ्क-कृच्छ्रजीवितकारी ज्वरादिकः। भग० १६ श० २ उ०।

आतङ्का-आशुजीवितापहारिणः शूलादयोव्याधिविशेषाः स्पृ-शन्ति-अभिभवन्ति पीडयन्ति आचा०१ श्रु०५ अ०२ उ०। उत्त०। भग०। नाया०। सूय०। ठा०।

आतङ्कः कृच्छ्रजीवितकारी सद्योघाती शुलादिः ठा० ३ ठा० १ उ०। नाया०। पण्हा०१

आतङ्का:-सद्योघातिनः। शुलादिक रोगाः। संथा०। भग०।

आतङ्कः सद्योघाती विशूचिकादिको रोगस्तस्य गृहिणो धर्मबन्धुरहितस्य वधाय-विनाशाय भवति। दश० १ चू०।

आशुजीवितापहारी शूलादिकः। सूय०। आचा०।

आतंकदंसि- पु० *[आतङ्कदर्शिन]*

'तकि' कृच्छ्रजीवने आतङ्कनमातङ्कः कच्छ्रजीवनंदुःखं, तच्च द्विविधम् शारीरं, मानसं च। तत्राद्यं कटुकक्षारशस्त्रगण्ड-लूतादिसमुत्थम्, मानसं प्रियसंप्रयोगेप्सितालाभदारिद्र्यदौर्म-नस्यादिकृतम् एतदुभयमातङ्कं पश्यति तच्छीलश्चेत्यातङ्कदर्शी। अवश्यमेतदुभयमपि दुःखम-प्यापततीत्येवं ज्ञातरि, आचा०।

आतंकसंपओगसंपउत्त- त्रि० *[आतङ्कप्रयोगसंप्रयुक्त]*
आतङ्कोरोगस्तस्य सम्प्रयोग:-संबंधस्तेन संप्रयुक्तः सबन्धो यः स तथा। आतङ्कसंबद्धे, 'आतंकसंपओगसंपउत्ते तस्स विप्पओगे सति समण्णागए यावि भवइ ।' ठा०४ ठा०१ उ०। गच्छा०। उव०।
(अयं चार्त-ध्यानस्य तृतीयो भेद:),

आतंकि- पु० *[आतङ्किन्]*
रोगिणि, ठा० ५ ठा० ३ उ०।

आतंचणिया- स्त्री० *[आतंचनिका]*
कुम्भकारभाजने, भग०।
आयंचणिओदएणं गाताइं परिसिंचमाण विहरइ।
'आयंच-णिओदएणं' ति- इह आतञ्चनिकोदकं-कुंभकारस्य भाजने स्थितं तेमनाय मृन्मिश्रं जलं तेन। भग० १५ श० ।

आतंतकर- पुं० *[आत्मान्तकर]*
आत्मनोऽन्तम् अवसानं भवस्य करातीत्यात्मान्तकर:। प्रत्येक-बुद्धादिके, ठा० ४ ठा० २ उ०।
धर्म्मदेशनानासेवकः, प्रत्येकबुद्धादि: ।ठा० ।
आत्मनौऽन्तं-मरणं करोतीत्यात्मान्तकर:। आत्मवधके, ठा० ४ ठा० २ उ०।
'आयंतकरे णाममेगे णो परंतकरं' ठा० ४ ठा० २ उ०।

आतंतम- पुं० *[आत्मतम]*
आत्मानं तमयतिखेदयतीत्यात्मतम:। आचार्यादिकेआत्मखेद-यितरि, ठा०।
आत्मैव तम:-अज्ञाने; क्रोधो वा यस्य स आत्मतमा:। अज्ञानात्मनि, क्रोधात्मना च। ठा०।
'आयंतमे नाममेगे णो परंतमे' ठा० ४ ठा० २ उ०।

आतंदम- पुं० *[आत्मदम]*
आत्मानं दमयति-शमवस्तं करोति-शिक्षयति, वेत्यात्मदम:। आचार्य्ये, ठा०।
अश्वदमकादौ च। ठा०४ ठा०२ उ०।

आतंव- त्रि० *[आताम्र]*
ईषद्रक्ते, जंबू २ वक्ष०। उव०।
आताम्रा:-ईषद्रक्तास्तलिना: -प्रतला: शुचय:-पवित्रा रुचिरा दीप्ता स्निग्धा-अरूक्षा नखा: कररुहा: येषां ते आताम्रतलिन-शुचिरुचिरस्निग्धनखा:। जीवा० ३ प्रति०४० अधि०२ उ०।

आतंवज्झयण- न० *[आताम्राऽध्ययन]*
सूर्य्यस्याग्रमहिष्या आताम्रया वक्तव्यताप्रसिद्धे ज्ञाताधर्मकथाया द्वितीयश्रुतस्कन्धसप्तमवर्गस्तय द्वितीयऽध्ययने, नाया० २ श्रु० ४ वर्ग०१ अ०।

आतंभारे- त्रि० *[आत्मम्भरि]*
आत्मानं विभर्त्ति सं०।
स्वोदरमात्रपूरके। आत्मानं विभर्ति पुष्णातीति आत्मम्भरि:। स्वार्थकारके, ठा०।
आयंभरे णाममेगे नो परंभरे, आत्मम्भरि: ।ठा०४ ठा० ३ उ०।

आतकम्म- त्रि० *[आत्मकर्मन्]*
आत्मन:-स्वस्य कर्त्तव्ये कार्य्ये, ज्ञानावरणादिके आत्मकृत-कर्मणि, भग० २० श० १० उ०।

आतगवेसय- त्रि० *[आत्मगवेषक]*
आत्मानं कर्म्ममलापहारेण शुद्धं गवेषयतीत्यात्मगवेषक:। उत्त०१५ अ०।
आत्मानं कर्मविगमाच्छुद्धस्वरूपं गवेषयति-कथमयमित्थंभूतो भवेदित्यन्वेषयते य: स आत्मगवेषक:। कर्म्मविगमाच्छुद्ध-स्वरूपस्यात्मनोऽन्वेषके, उत्त० १५ अ०।
'सहिए आयगवेसए स भिक्खू' उत्त० १५ अ०।

आतगय- त्रि० *[आत्मगत]*
आत्मनि गतमात्मगतम्। आत्मगे, सूय०।

आतगुत्त- त्रि० *[आत्मगुप्त]*
आत्मा-शरीरम् आत्मशब्दस्य शरीरवचनस्यापि दर्शनात्, उक्तं हि– 'धर्मधृत्यग्निधीन्द्वर्कत्वकृतत्वस्वार्थदेहिषु।
शीलाऽनिलमनोयत्नैकवीर्येष्वात्मन: स्मृति:।।' इति
तेन गुप्त आत्मगुप्तो न यतस्तत: करचरणादिविक्षेपकृत्, इतस्तत: करचरणाऽविक्षेपके यद्वा-गुप्तो रक्षितोऽसंयमस्थाने-भ्य आत्मा येन स तथा। उत्त० १५ अ०।
असंयमस्थानेभ्यो रक्षितात्मानि, आत्मा गुप्तो यस्य स आत्मगुप्त:। सूय० श्रु० २ अ०।
मनोवाक्कायैरात्मा गुप्तो यस्य स: आत्मगुप्त:। सूय० १ श्रु० ७ अ० ।
मनोवाक्कायगुप्ते, सूय०१ श्रु०११ अ०।
इन्द्रिय नोइन्द्रियात्मना गुप्त आत्मगुप्त: ।आचा०१श्रु०३अ०३उ०
आत्मनामनोवाक्कायरूपेण गुप्त आत्मगुप्त: ।सूय०१ श्रु०११ अ० मनोवाक्कायात्मना गुप्ते
'आयगुत्ते सयाधीरे।'आयगुत्ते सया दंते'। सूय० १ श्रु० ११अ०

आतगुत्त- त्रि० *[गुप्तात्मन्]* (गुप्त:) असंयमस्थानेभ्यो रक्षित आत्मा येन स गुप्तात्मा प्राकृतत्वाद्विपर्य्यय:। असंयमस्थानेभ्यो रक्षि-तात्मनि, उत्त० १५ अ०।

आतछट्ठवाइ- पु० *[आत्मषष्ठवादिन्]*
आत्मा षष्ठो येषां तान्यात्मष्ठानि भूतानि विद्यन्त इत्येवं वादिनि सांख्यादौ सूय०।

आतजस- न० *[आत्मयशस्]*
आत्मसंबन्धिनि यशसि, यशोहेतुभूते संयमे च। भग०।
'जीवो किं आयजसेणं उववज्जंति' आयजसेणं'त्ति-आत्मनः संबन्धि यशो यशोहेतुत्वाद्यशः-संयम आत्मयशस्तेन (भग०) आत्मयशः-आत्मसंयममुपजीवन्ति आश्रयन्ति; विदधतीत्यर्थः । भग० ४१ श० ।

आतजोगि- पुं० *[आत्मयोगिन्]*
आत्मनो योगः कुशलमनः प्रवृत्तिरूप आत्मयोगः स यस्यास्ति। सदा धर्मध्यानावस्थिते सूय० २० श्रु०२ अ०।

आतट्ठ- पुं० *[आत्मार्थ]*
आत्महिते, 'आयट्ठं' आचा०१ श्रु०२० अ०१ उ०।
आत्मनोऽर्थ आत्मार्थः।
ज्ञानदर्शनचारित्रेषु, आत्मने हितम् प्रयोजनमात्मार्थम्। चरित्रानुष्ठाने, आचा० १ श्रु०२ अ०१ उ०
आत्मनोऽर्थ आत्मार्थः, स च ज्ञानदर्शनचारित्रात्मकः, आत्मने हितं–प्रयोजनमात्मार्थं, चारित्रानुष्ठानमेव, आयतः–अपर्यवसानान्मोक्षः स एवार्थः। आयत्तः–मोक्षः, अर्थः–प्रयोजनं यस्य। आचा०।

आततट्ठ- पुं० *[आयतार्थ]*
आयतः अपर्य्यवसानान्मोक्ष एव स चासावर्थश्चायतार्थः। मोक्षात्मकेप्रयोजने, आयतोमोक्षः अर्थः-प्रयोजनं यस्य सः। मोक्षप्रयोजनकेदर्शनादिके, आचा० १ श्रु०२ अ०१ उ०।
आत्मनिमित्ते 'अप्पणट्ठा परट्ठा वा' आत्मार्थमात्मनिमित्तम्। दश० ९ अ०२ उ०।
ज्ञानादिरूपं स्वकार्यम्। बुह०।

आतट्ठि- पु० *[आत्मार्थिन्]*
आत्मनोऽर्थः आत्मार्थः स विद्यते यस्य स तथा। आत्मवति, यो ह्यान्यमपायेभ्यो रक्षति स आत्मार्थी-आत्मवानित्युच्यते। सूय० २० श्रु० २ अ०।

आतनिप्फेडय- पुं० *[आत्मनिस्फोटक]*
आत्मानं सम्यग्दर्शनादिकेनानुष्ठानेन संसारचारकान्निस्सारके सूय०।
'आयनिप्फडए आयाणामेणं पडिसाहरेज्जासि' आत्मानं सम्यग् दर्शनादिकेनानुष्ठानेन संसारचारकान्निस्सरियतीति। सूय० २ श्रु० २ अ०।

आतण्ण- पुं० *[आत्मज्ञ]*
आत्मज्ञानिनि सूय०।

आततंत- त्रि० *[आत्मतन्त्र]*
आत्मायत्ते, ठा०४ ठा०२ उ०।

आततंतकर- पुं० *[आत्मतन्त्रकर]*
आत्मतन्त्रः सन् कार्य्याणि करोतीत्यात्मतन्त्रः। आत्मायत्ते जिनादौ, आत्मतन्त्रमात्मात्मायत्तं धनम्-गच्छादि करोतीत्यात्म-तन्त्रकरः। आत्माऽऽयत्तस्य धनस्य गच्छादिकस्य कारके च। ठा० ४ ठा० २ उ०।

आततत्त- न० *[आत्मतत्त्व]*
ज्ञानदर्शनचारित्रात्मक तत्त्व च। परमार्थदृशां ज्ञानदर्शन-चारित्रात्मकमात्मतत्त्वं विहायान्यत्सर्वं शरीराद्यपि पराक्यमम् एवेति। आचा०।

आततरग- पुं० *[आत्मतरक]*
आत्माने केवलं तारयतीत्यात्मतराः, स्वार्थिककप्रत्ययविधानात् आत्मतरकाः। वव०।
प्रायश्चित्तार्हे पुरुषविशेषे वव०।
ये पुनस्तपोबलिष्ठा वैयावृत्त्यलब्धिहीनास्ते तप एव यथोक्त रूपं कुर्वन्ति न वैयावृत्त्यमाचार्य्यादीनामित्यात्मानं केवलं तारयन्ती त्यात्मतराः, आत्मतरकाः। वव० १ उ०।

आततुला- स्त्री० *[आत्मतुला]*
आत्मौपम्ये, सूय०२ श्रु०२ अ०।
आत्मतुल्यतायाम् सूय०१ श्रु०२ अ० ३ उ०।

आतत्त- न० *[आत्मत्व]*
आत्मनो भावे, आत्मधर्मे।

आतदंड- पु० *[आत्मदण्ड]*
आत्मानं दण्डयतीत्यात्मदण्डः।
आत्मन उपघातके, 'बीयाइ अस्संजय आयदण्डे', असंयतो-गृहस्थः, प्रव्रजितो वा तत्कर्म-कारी गृहस्था एव।
स च हरितच्छेदविधाय्यात्मानं दण्डयति इत्यात्मदण्डः।
स हि परमार्थतः परोपघातेनात्मानमेवोपहन्ति। सूय० १ श्रु० ७ अ०।
एतेण काएण य आयदण्डे'। यथैभिः कायैः-समारभ्यमाणैः, पीड्यमानैरात्मा दण्ड्यते; तत्समारम्भादात्मदण्डो भवतीत्यर्थः । सूय०१ श्रु०७ अ०।
'णिस्सिय-आयदण्डा' आत्मैव दण्डयतीतिः दण्डो येषां ते भवन्त्यात्मदण्डा असदाचारप्रवृत्तेरिति। सूय० २ श्रु० ६ अ०।

आतदण्डसमायार- त्रि० *[आत्मदण्डसमाचार]*
आत्मा दण्ड्यतेहितात् भ्रश्यते येन स आत्मदण्डः समाचारः अनुष्ठानं येषामनार्य्याणां ते। आत्महितानुष्ठातरि, सूय०१ श्रु०२ अ०१ उ०।

आतदरिस- पुं० *[आत्मदर्श]*
आत्मनो दर्शने, आत्मसाक्षात्कारे, आव०।

आयपइट्ठिते– आत्मप्रतिष्ठितः,

आत्मना वा परत्राक्रोशादिना प्रतिष्ठितो जनित आत्मप्रतिष्ठितः । ठा० १ ठा० ।

आत्मापराधेन-ऐहिकामुष्मिक-अपायदर्शनादात्मविषयः । ठा० १ ठा० ।

आत्मन्येव प्रतिष्ठितः । पन्न० ।

आतपसंसा- स्त्री० *[आत्मप्रसंसा]*

आत्मस्तुतौ । अथाऽसावाचार्यगुणानां शतांऽशे वर्तते शतग्रह-णमुपलक्षणं सहस्रांऽशादेरप्यधो वर्तते इति 'यो' ह्यस्य हेतुम् भोजननिमित्तमपरवस्त्रादिनिमित्तं वा आत्मगुणान् परेणा लापयेद्भाणयेत् असावप्यार्यगुणानां सहस्रांशे वर्त्तते । किमङ्ग पुनर्यः स्वत एवाऽऽत्मप्रशंसां विदधातीति । सूय०१ श्रु०७ अ०

आतप्पओग- पुं० *[आत्मप्रयोग]*

आत्मव्यापारे, 'आयप्पओगेणं उववज्जंति, नो परप्पओगेणं उववज्जंति' भग० २० श० १० उ० ।

आतप्पओगणिव्वत्तिय- त्रि० *[आत्मप्रयोगनिर्वर्तित]*

'आयप्पओग-णिव्वत्तिए' । आत्मनः प्रयोगेण-मनःप्रभृति-व्यापारेण निर्वत्तितं निष्पादितं यत्तत्तथा । आत्मनो मनःप्रभृति-व्यापारेण निष्पादिते, भग० १६ श० १ उ० ।

आतप्पवाय- न० *[आत्मप्रवाद]*

आत्मानं जीवमनेकधा नयमतभेदेन यत्प्रवदति तदात्मप्रवा-दम् । नं० ।

यत्राऽऽत्माजीवोऽनेकनयैः प्रोद्यते तदात्मप्रवादम् । सम० १४ सम० ।

आत्माऽनेकधा यत्र नयदर्शनैर्वर्ण्यते तदात्मप्रवादम् । पूर्वगत-श्रुतविशेषे, सम०

तस्य पदप्रमाणं षड् विंशतिपदकोट्यः । नं० । सम० ।

सप्तमपूर्वम् । ठा० ।

आतप्पियसंबंधणसंयोग- पु० *[आत्मार्पितसम्बन्धनसंयोग]*

संयोग-भेदे, उत्त० १ अ० ।

आतबल- न० *[आत्मबल]*

आत्मनो बलम् शुक्त्युपचय-आत्मबलम् । आत्मनः शुक्त्युपचये, आचा०१ श्रु० २ अ० २ उ० ।

आतभाव- पुं० *[आत्मभाव]*

अनादिभवाभ्यस्ते मिथ्यात्वादिके विषयगृध्नुतायाम्, आत्म-भावः-अनादिभवाभ्यस्तो मिथ्यात्वादिस्तमपनयेत् ।

यदि वा-आत्मभावो-विषयगृध्नुता, अतस्तमपनयेद् । सूय० १ श्रु ० १३ अ०

स्वाभिप्राये च०भग०२ श० ५ उ० ।

आतभाववंकणया- स्त्री० *[आत्मभाववङ्कनता]*

आत्मभावस्याऽप्रशस्तस्य वङ्कनता-वक्रीकरणं प्रशस्ततत्त्वोप दर्शनतात्मभाववङ्कनता । मायाप्रत्ययिकाक्रियाभेदे, वङ्कनानां च बहुत्वविवक्षायां भावप्रत्ययो न विरुद्धः सा च क्रिया-व्यापारत्वात् । ठा० २ ठा० १ उ० ।

अप्पणो चियं भावं गूहति नियडिमंतो उज्जगभावं दरिसेइ संजमादिसिढिलोवा करणफला जो डोमं दरिसेइ ।आव०४ अ०

आतभाववत्तव्वया- स्त्री० *[आत्मभाववक्तव्यता]*

आत्मभाव एव स्वाभिप्राय एव न वस्तुतत्त्वं वक्तव्यो-वाच्योऽभिमानाद् येषां ते आत्मभाववक्तव्यास्तेषां भाव आत्मभाववक्तव्यता । अहं-मानितायाम् । भग०२ श० ५ उ० ।

नैवात्मभाववक्तव्यतयाऽयमर्थः न वयमहंमानितयैव ब्रूमः; अपि तु-परमार्थ एवायमेवंविधः इति । भग०२ श० ५ उ० ।

आतरक्ख- त्रि० *[आत्मरक्ष]*

अङ्गरक्षके, उव० ।

आत्मानं रागद्वेषादेरकृत्योद्भवकूपाद्वा रक्षन्तीत्यात्मरक्षाः । राग-द्वेषादेरकृत्याच्चात्मनो रक्षके, ठा० ।

आतरक्खि- त्रि० *[आत्मरक्षिन्]*

आत्मानं रक्षत्यपायेभ्यः-कुगतिगमनादिभ्य इत्येवंशीलः आत्म-रक्षी । कुगतिगमनादिभ्य आत्मनो रक्षणशीले, उत्त० ४ अ० ।

आतरक्खिय- त्रि० *[आत्मरक्षित]*

आत्माऽपोयेभ्योदुर्गतिगमनादिभ्यो रक्षितो येन स तथा। दुर्गतिगमनहेतुनिबन्धनात्सावद्यानुष्ठानान्निवृत्ते,सूय० २ श्रु० २ 'आयपरक्कमे आयरक्खिए' दुर्गतिगमनहेतुनिबन्धनस्य साव-द्यानुष्ठानस्य निवृत्तत्वाद् । सूय० २, श्रु०२ अ० ।

आतवं- त्रि० *[आत्मवत्]*

आत्मा ज्ञानादिकोऽस्याऽस्ति इत्यात्मवान्, ज्ञानादिमति, आचा० १ श्रु० ३ अ० ।

आतव- पुं० *[आतप]*

आ-समन्तात्तपति संतापयति जगदित्यातपः । उत्त० १ अ० ।

आतप । उद्द्योते, स चोद्योतो यद्यपि लोक भेदेन प्रसिद्धो यथा, सूर्य्यगत आतपः, चंद्रगतः प्रकाश इति । तथा-प्यातपशब्दः चन्द्रप्रभायामपि वर्त्तते, । सूर० ३ पाहु० ।

आतप इति वा । आतप आदित्यस्येति । ठा०२ ठा०४ उ० ।

घर्मे, उत्त० २ अ० ।

उष्णेन परितापना । वव०८ उ० ।

आतप्यते-पीड्यते शरीरमनेनेत्यातपः । उत्त० २ अ० ।

स्वनामख्याते अहोरात्र भवे चतुर्विंशतितमे मुहूर्त्ते च, सम० ३० । चंद० । सूर०

आतवणिवाय- पुं० *[आतपनिपात]*
आतपस्य-धर्मस्य नितरां पातो निपातः। धर्मस्य नितराम्पाते, उत्त०।

आतवतत्त- त्रि० *[आतपतप्त]*
धर्मतप्ते, 'आतवतत्ते वहे अहवे' ।आयवतत्तं अप्पोदगं अवहं घेप्पंति। असइ आयवतत्तं वहं घिप्पति। निसि०।
आतपतप्तं पयः। भग०।

आतववं- त्रि० *[आतपवत्]*
अहोरात्रभवे स्वनामख्याते चतुर्विंशेमुहूर्ते, । जंबू ७ वक्ष०। कल्प०

आतवस- त्रि० *[आत्मवश]*
सव्वत्थेसु विमुत्तो, साहू सव्वत्थ होइ अप्पवसो, सर्वार्थेषु विमुक्तः-सर्वपदार्थेषु ममतारहितः साधुः मोक्षसाधकः सर्वत्रात्मवशो भवति; न कुत्रापि परवशः।गच्छा० २अधि०

आतवाभा– स्त्री० *[आतपाभा]*
सूर्यज्योतिषेन्द्रस्य द्वितीया अग्रमहिषी। जीवा०३८५। भग० ।

आतवाल- त्रि० *[आत्मपाल]*
आत्मानमेव पालयतीत्यात्मपालः। आत्मनः पालके, नाया० १ श्रु० १ अ०।

आतवालोय- पुं० *[आतपालोक]*
हुतवहतापदर्शने, नाया०।
आतवालोयमहंततुंबइयपुण्णकण्णे'। नाया० १ श्रु०१ अ०।

आतवायपत्त- त्रि० *[आत्मवादप्राप्त]*
आत्मन उपयोगलक्षणस्य जीवस्यासंख्येयप्रदेशात्मकस्य संकोचविकाशभाजः स्वकृतफलभुजः प्रत्येकसाधारणतया व्यवस्थितस्य द्रव्यपर्य्यायतया नित्यानित्याद्यनन्तधर्मात्मकस्य वा वाद आत्मवादस्तं प्राप्त आत्मवादप्राप्तः। सम्यग् यथावस्थितात्मस्वतत्त्ववेदिनि, सूय० १ श्रु० १६ अ०।

आतवि- त्रि० *[आत्मविद्]*
आत्मानं श्वभ्रादिपतनरक्षणद्वारेण वेत्तीत्यात्मवित्। आत्मनो रक्षके, आचा० १ श्रु० ३ अ०१० उ०।
आत्मानं यथार्थरूपेण वेत्ति, आत्मस्वरूपज्ञे, आत्मानं स्वपक्षं वेत्ति। स्वपक्षज्ञातरि। आव०।

आतवीरिय- न० *[आत्मवीर्य]*
वीर्यभेदे, निसि०।
आयविरियं दुविहं-विओगावीरियं च, अविओगावीरियं च। विओगायवी-रियं जहा–संसारावत्थस्स जीवस्स मणमादिजोगा वियोगजा भवन्ति, अविओगाऽऽयवीरियं पुण-उवओगो असंखेज्जा पप्प एसत्तणं। निसि० १ उ०।

आतविसोही- स्त्री० *[आत्मविशुद्धि]*
उत्कालिकश्रुतविशेषे, नं०।
आत्मनो-जीवस्यालोचना प्रायश्चित्तप्रतिपत्ति-प्रभृतिप्रकारेण विशुद्धिः कर्मविगमनलक्षणा प्रतिपाद्यते यस्यां ग्रन्थपद्धतौ सा आत्मविशुद्धिः। नं०।

आतवेयावच्चकर- त्रि० *[आत्मवैयावृत्यकर]*
अलसे, विसम्भोगिके च। ठा०।

आतसंचेयणिज्ज- पुं० *[आत्मसंचेतनीय]*
आत्मना संचेत्यन्ते-क्रियन्त इत्यात्मसंचेतनीयाः। ठा०४ ठा० ४
उपसर्गभेदे, ठा० ४ ठा०४ उ०।

आतसंयमोवाय- पुं० *[आत्मसंयममोपाय]*
संयमनं संयम आत्मनः संयम आत्मसंयमस्तद्रुपायः। आत्मसंयमनोपाये, दश० ।
उक्तं च–'तस्यात्मा संयतो यो हि, सदाचारे रतस्सदा। स एव धृतिमान् धर्मस्तस्यैव च जिनो हितः'। दश० १ अ०।

आतसंवेयण- न० *[आत्मसंवेदन]*
द्रव्योपसर्गभेदे, सूय०।

आतसंवेयणिज्ज- पुं० *[आत्मसंवेदनीय]*
आत्मना क्रियन्त इत्यात्मसंवेदनीयाः। द्रव्योपसर्गभेदे, आव० चू० १ अ०।

आतसक्खि- त्रि० *[आत्मसाक्षिन्]*
आत्मा-स्वजीवः स्वस्वसंचितप्रत्यक्षविरतिपरिणामपरिणतः साक्षी यत्र तदात्मसाक्षिकम्। स्वजीवसाक्षिके, आव०।

आतसत्तम- त्रि० *[आत्मसप्तम]*
आत्मना सप्तमः सप्तानां पूरण आत्मा वा सप्तमो यस्यासावात्मसप्तमः। सप्तानां पूरण आत्मा यस्य। तस्मिन्, ठा०।
'मल्लीणं अरहा अप्पसत्तमे मुंडे भवित्ता' ठा०७ ठा० ३ उ०।

आतसमया- स्त्री० *[आत्मसमता]*
आत्मौपम्ये, आचा०।

आतसमोयार- पुं० *[आत्मसमवतार]*
ज्ञशरीरभव्यशरीरव्यतिरिक्तद्रव्यसमवतारभेदे, अनुओ०।

आतसरीरखेत्तोगाढ- त्रि० *[आत्मशरीरक्षेत्रावगाढ]*
स्वशरीरक्षेत्रव्यवस्थिते, भग०।
'आयसरीरखेत्तोगाढे पोग्गले अत्तमायाए आहारेन्ति' स्वशरीरे व्यवस्थितानित्यर्थः भग० ६ श० १० उ०।

आतसाय- न० *[आत्मसात]*
आत्मसुखे, सूय०।
अभूवन् भवन्ति भविष्यन्तीति भूतानि-प्राणिनस्तानि आत्मसुखार्थं हिनस्तिव्यापादयति। सूय०१ श्रु०७० अ०।

आतसायाणुगामि- पुं० *[आत्मसातानुगामिन्]*
स्वसुखलिप्सौ, सूय०।
हंता छेत्ता पगब्भित्ता, आयसायाणुगामिणो।।५।।
आत्मसातानुगामिनः-स्वसुखलिप्सवः। सूय०१ श्रु० ८ अ०।

आतसुह- न० *[आत्मसुख]*
शरीरसुखे सूय०।
आत्मसुखम्प्रतीत्य-स्वस्य शरीरसुखकृते।सूय०१श्रु०५अ०१ उ०

आतसोहि- स्त्री० *[आत्मशुद्धि]*
कर्मक्षयोपशमक्षये च। आत्मशुध्याकर्मक्षयोपशमक्षयलक्षण-याऽऽयतयोगं-सुप्रणिहितमनोवाक्कायात्मकं विधाय। आचा०१ श्रु० ९ अ० ४ उ०।

आतहित- त्रि० *[आत्महित]*
स्वहिते, 'आयहियाए सण्णिसेज्जाओ'। आत्महिताय स्वहितं मन्यमानाः। सूय०१ श्रु०४ अ०१ उ०।
शरीराय हिते, 'आयट्ठीणं आयहिताणं' आत्महितानां हितमिव हितम् आत्महितं च शरीरे आत्मनि च भवति। तत्र शरीरे हिताऽहितं पथ्याऽपथ्याहारादिकम्। आत्मनि तु हिंसादि-प्रवृत्तिनिवृत्ती। अथवा–आत्मनो हितानी त्रीणि त्रिषष्ठानि पाखण्डिकशतानि तदपनयनं तदस्ति येषां ते आत्महिताः। दशा०५० अ०।
अहिताचाराश्च चौरादयः, अयं त्वात्महित ऐहिकामुष्मिका-पायभीरुत्वाद्। सूय०२ श्रु०२ अ०।

आयहेउ- पुं० *[आत्महेतु]*
आत्मनिमित्ते, दश० ।
आत्महेतोः-आत्मनिमित्तम्। दश० १० अ०।
'केई पुरिसे आयहेउं वा णाइहेउं वा' आत्मनिमित्तम्-आत्मार्थम्। सूय० २ श्रु० २ अ०।

आता-१ स्त्री० *[आत्मन्]*
स्वस्मिन्, 'आयाए एगंतमंतं अवक्कामंति' 'आयाए' त्ति-आत्मना; स्वयमित्यर्थः। भग० ३ श० २ उ०।
आत्मा-जीवः। आचा० । आत्मा, रूपं। नं० ।
अतति–सततमवगच्छति 'अतो धातोर्गत्यर्थत्वाद्गत्यर्थानां च ज्ञानार्थत्वादनवरतं जानातीति निपातनादात्मा–जीवः उपयोग लक्षणत्वादस्य सिद्धसंसार्यवस्थाद्वयेऽप्युपयोगभावेन सतताव-बोधभावात्, अतति–सततं गच्छति स्वकीयान् ज्ञानादि पर्या-यानित्यात्मा, संसार्यपेक्षयानानागतिषु सततगमनात् मुक्तापे-क्षया च भूततद्भावत्वादात्मेति। ठा०१०।

आता-२ स्त्री० *[आत्मन्]*
द्वादशशते आत्मभेदनिरूपणार्थो दशमोद्देशकः। भग०।

आताणुकंपय- त्रि० *[आत्मानुकम्पक]*
आत्मानमेवानर्थपरिहारद्वारेणानुकम्पते शुभानुष्ठानेन सद्गति-गामिनं विधत्ते इत्यात्मानुकम्पकः। सूय० २ श्रु०२ अ०।
आत्महितप्रवृत्ते, प्रत्येकबुद्धे जिनकल्पिकेच। ठा०।
आत्मानुकम्पकः आत्महितप्रवृत्तः प्रत्येकबुद्धो जिनकल्पिको वा परानपेक्षो वा निर्घृणः। ठा० ४ ठा० ४ उ०।

आताणुसासण- न० *[आत्मानुशासन]*
आत्मनोऽनुशास्तौ, सूय०।

आताब- पुं० *[आताप]*
ईषत्तापे आचा०।
'णो खलु मे कप्पति अगणिकायं उज्जालित्तए वा पज्जालित्तए वा कायं आयाबेत्तए वा पयाबेत्तए वा'। कायम्-शरीरम् ईषत्तापयितुं वा प्रकर्षेण तापयितुं प्रतापयितुं वा। आचा०१ श्रु० ८ अ० ३ उ०

आताबग- पुं० *[आतापक]*
आतापयत्यातापनां शीतातपादिसहन-रूपां करोतीत्यातापकः। ठा० ५ ठा० २ उ०।
आतापनाग्राहिणि परतीर्थिकभेदे, सूय० २ श्रु० २ अ०।

आताबण- न० *[आतापन]*
सकृदीषद्वा तापने, सकृदीषद्वा तापनमातापनम्। दश० ४ अ० शीतादिभिः शरीरस्य सन्तापने च। ठा० ३ ठा० ३ उ०।

आताबणया- स्त्री० *[आतापनता]*
आतापनानां शीतादिभिः शरीरस्य संतापनानां भावः आतापनता। शीतातपादेः सहने, ठा० ३ ठा० ३ उ०।

आताबणा- स्त्री० *[आतापना]*
शीतादिसहनात्मकेतपोभेदे; आव० म० १ अ०
आतापयति-आतापनाम्-शीता-ऽऽतपादिसहनरूपाम्। ठा० ५ ठा० १ उ०।

आताबि- पुं० *[आतापिन्]*
आतापयति-आतापनां शीतातपादिसहनरूपां करोतीत्यातापी। शीतादिसहनकर्तरि, ठा० ४ ठा० ३ उ०।
वस्त्रादेरातपे दातरि च। कल्प० ३ अधि०९ क्षण।

आताबित्तए- अव्य० *[आतापयितुम्]*
आतपे दातुमित्यर्थे, आतापयितुमेकवारमातपे दातुं, प्रतापयितुं पुनः पुनरातपे दातुमिच्छति। कल्प० ३ अधि० ९ क्षण।

आताविया- अव्य० *[आतापयित्वा]*
आतापनां कृत्वत्यर्थे आचा०२ श्रु०१ चू०२ अ० ३ उ०।

आतावेमाण- त्रि० *[आतापयत्]*
आतापनां कुर्वति, आव० म०१ अ०।

आताभिणिवेस- पुं० *[आत्माभिनिवेश]*
आत्मनोऽभिनिवेशे, यावच्चात्माभिनिवेशस्तावदेव संसारः।नं०

आताभिसित्त- पुं० *[आत्माभिषिक्त]*
निजबलेन राज्याभिषिक्ते भरतादौ, वव०।

आतालिज्जंत- त्रि० *[आताड्यमान]*
आ-समन्तात् ताड्यमाने। आव० चू०१ अ०।

आतावाइ- पुं० *[आत्मवादिन्]*
आत्मानं वदितुं शीलमस्येति। आचा०१ श्रु०१ अ०१ उ०।
यथावस्थितात्मवादिनि, आचा० १ श्रु० ५ अ० ६ उ०।

आताहम्म- न० *[आत्मघ्न]*
आत्मा हन्यते तेषु तेषु यातनास्थानेषु येन तदात्मघ्नम्।

आताहिगरणवत्तिय- त्रि० *[आत्माधिकरणप्रत्यय]*
आत्मनोऽधिकरणानि आत्माधिकरणानि तान्येव प्रत्ययः-कारणं यत्र क्रियाकरणे तदात्माधिकरणप्रत्ययम्। आत्माधिकरण-कारणके 'आयाहिगरणवत्तियं च णं तस्स नो इरियावहिया किरिया कज्जइ, संपराइया किरिया कज्जइ। भग०७श०१ उ०

आताहिगरणि- पु० *[आत्माधिकरणिन्]*
अधिकरणी कृष्यादिमान् आत्मनाऽधिकरणी आत्माधिकरणी।
आत्मना कृष्यादिमति, भग०१६ श० १ उ०।
आत्माजीवोऽधिकरणानिहलशकटादीनि कषायाश्रयभूतानि यस्य सन्ति सोऽधिकरणी। भग० ७ श० १ उ०।

आताहिय- त्रि० *[आत्महित]*
आत्मोपकारके, आचा०।
'परलोकविरुद्धानि, कुर्णानं दूरतस्त्यजेत्। आत्मानं यो न सन्धत्ते, सोऽन्यस्मै स्यात्कथं हितः, आचा०१ श्रु०६ अ०४ उ०।

आताण- न० *[आजिन]*
मूषिकादिचर्मनिष्पन्ने वस्त्रे, आचा०।
आजिनानि मूषिकादिचर्म्मनिष्पन्नानि।आचा०१श्रु०५अ०१ उ०

आतीकय- त्रि० *[आत्मीकृत]*
आत्मना गाढतरमागृहीते आत्मप्रदेशैस्तुलग्नतोयवन्मिश्रीभूते, विशे०। आव० म०।

आतीय- त्रि० *[आतीत]*
आ-समन्तादतीव इतः-ज्ञातः। समन्तादतीव ज्ञाते, सामस्त्ये-नातिक्रान्ते, समन्तादतीव गते च। आचा० १ श्रु०८ अ०६ उ०
आ-समन्तादतीव इतो-गतोऽनाद्यनन्ते संसारे आतीतः न आतीतोऽनातीतः, अनात्तो वा संशयो येन स तथा; संसारार्णवपारगामीत्यर्थः। आचा० १ श्रु०८ अ०७ उ०।

आतीयट्ठ- त्रि० *[आतीतार्थ]*
आ-समन्तादतिशयेन ज्ञात-जीवादिपदार्थे, सामस्त्येनातिक्रान्तार्थे उपरतव्यापारे, आ-समन्तादतीव इताः-ज्ञाताः परिच्छि-न्ना जीवादयोऽर्था येन सोऽयमतीतार्थः। आदत्तार्थे वा। यदि वा-अतीताः सामस्त्येनातिक्रान्ता अर्थाः-प्रयोजनानि यस्य स तथा; उपरतव्यापार इत्यर्थः। आचा०१ श्रु०८ अ०६ उ०।

आतुर- त्रि० *[आतुर]*
ईषदर्थे, आ। आत-उरच्। कार्य्याऽक्षमे वाच०। विह्वले, उत्त० ३२ अ०।

आत्त- त्रि० *[आदत्त]*
गृहीते अनुओ०।
'आत्तएणं सरीरसमुस्सएणं जिणदिट्ठेणं भावेणं,आत्तेन आदत्तेन वा गृहीतेन प्राकृतशैलीवशादात्मीयेन वा। अनुओ०।

आत्ततर- त्रि० *[आत्ततर]*
अतिशयेन आत्तो-गृहीतः आत्ततरः। यत्नेनाध्यवसिते, आचा० १ श्रु० ८ अ० ८ उ०।

आदंस- पुं० *[आदरिस-आदर्श]*
आ-समन्ताद् दृश्यते आत्मा यस्मिन् स आदर्शः। सूय०१ श्रु०४ अ०२ उ०।
दर्प्पणे, रा०।
'आदंसंग च पयच्छाहि'। सूय० १ श्रु० ४ अ० २ उ०।
चक्षुरिन्द्रियजज्ञाने च। अनुओ०।

आदंसग- पुं० *[आदरिसग-आदसग-आदर्शक]*
आसमन्ताद् दृश्यते आत्मा यस्मिन् स आदर्शः। स एवा-दर्शकः। दर्प्पणे, सूय०१ श्रु०४ अ०२ उ०। रा०।
आदर्शकः–दर्पणः। उत्त० ६५०।

आदंसघरग- न० *[आदर्शगृहक]*
आदर्शनये गृहे, रा०।
'आदंसघरगा सव्वरयणामया' आदर्श-गृहकाणि आदर्शमया-नीव गृहाणि। रा०। जंबू। जीवा०।
भरतकेवलज्ञानस्थानम्। पन्न० २०।

आदंसतल- न० *[आदर्शतल]*
दर्प्पणतले उव०।

आदंसतलोवम-त्रि० *[आदर्श तलोपम]*
आदर्शो-दर्प्पणस्तस्य तलं तेन समतयोपमा यस्य आदर्शतलोपमः। आदर्शतलवत्समे, रा०।

आदंसमंडल- न० *[आदर्श-मण्डल]*
आदर्श इव मण्डलमस्य। आदर्शाकारमण्डलयुक्ते सर्पभेदे, आदर्शो मण्डलमिव। मण्डलाकारे दर्पणे, जंबू १ वक्ष०।

आदंसमुह- पुं० *[आदर्शमुख]*
स्वनामख्याते अन्तरद्वीपभेदे, जीवा० ३ प्रति० ३ अधि०।

आदंसलिवि- स्त्री० *[आदर्श-लिपि]*
ब्राह्मलिपर्लेख्यविधानभेदे, सम० १ ८ सम० ।

आदर- पुं० *[आदर]*
सत्कारे, स्थान० ६ ठा० ३ उ० ।
'तं पुरिसं आयरेण रक्खेह । आव० म०१ अ० ।
उचितकृत्यकरणे, नाया० १ श्रु०१ अ० ।

आदरण- न० *[आदरण]*
अभ्युपगमे, भग०१२ श० ५ उ० ।

आदरणया- स्त्री० *[आदरणता]*
अभ्युपगमे, 'आयरणय' त्ति-यतो मायाविशेषादादरणमभ्युपगमं कस्यापि वस्तुनः करोत्यसावादरणम्, आचरणं वा परप्रतारणाय विविधिक्रियाणामाचरणम् । भग० १२ श० ५ उ० ।

आदरतर- पुं० *[आदरतर]*
अत्यादरे, दश० । अत्यादरेण राध्यन्ति । दश० १ अ० ।

आदहण- न० *[आदहन]*
दाहे, हिंसायाम्, कुत्सने च ।आ-समन्ताद्दहने,सूय०२श्रु०१अ०

आदाण- नं० *[आदान]*
ग्रहणे । पण्हा० ३ अ० । उव० । आव० चू० । उत्त० । ठा० । विशे० ।
आहरेत्-आददीतः गृह्णीयादित्यर्थः । सूय० १० श्रु० ८ अ० ।
दण्ड्यन्ते-व्यापाद्यन्ते प्राणिनो येन स दण्डस्तस्य सम्यगादानंग्रहणम्-समादानम् । आचा० १ श्रु०२ अ०२ उ० ।
स्वीकरणे ठा० ३ ठा० ३ उ० ।
'सयमाइयंति अन्ने वि, आदियावेंति अन्नं पि आयतंतं समणुजाणंति' स्वयम्-आत्मना सावद्यमनुष्ठानमाददते स्वीकुर्विन्ति अन्यान्यप्यादापयन्ति ग्राहयन्ति अन्यमप्यादानपरिग्रहं स्वकुर्वन्तं समनुजानन्ति । सूय०२ श्रु०१ अ० ।
आदीयते–स्वीक्रियतेऽष्टप्रकारं कर्म येन तत्, कषायाः, परिग्रहः, सावद्यानुष्ठानं वा । सूय० ।
आदीयत इत्यादानाम् परिग्राह्ये वस्तुनि, ठा० ४ ठा०१ उ० ।
(बहिद्धादाणं)– बहिर्द्धा–मैथुनम् आदानं च–परिग्रहः, परिग्राह्यं वा वस्तु धर्मोपकरणाद् बहिः । ठा० ।
आदीयते-ठाह्यत इत्यादानम् । धनधान्यादिकेपरिग्रहे, आव० ४ अ० । कल्प० । ठा० ।
मोक्षार्थिनाऽऽ–दीयते–गृह्यत इति, संयमः । सूय० ।
आदीयत इति, धनम् । आव० । निशी० ।
कारणम् । निसि० ।
प्रभवः, प्रसूतिः । निसि० ।
ग्रहणम् । आव० ८२२ ।

आदाणअट्ठि- पुं० *[आदानाऽर्थिन्]*
मोक्षार्थिनाऽऽदीयते इत्यादानम्-सम्यक्ज्ञानादिकं तेनार्थः स एवार्थः आदानार्थः स विद्यते यस्यासावादानार्थी । सम्यक्ज्ञानादिप्रयोजनवति, । सूय०१ श्रु०१४ अ० ।

आदाणगुत्त- त्रि० *[आदानगुप्त]*
संयमगुप्ते, मनोवाक्कायै, कर्मणि गुप्ते च । सूय० ।
मोक्षार्थिनाऽऽदीयते-गृह्यत इत्यादानं संयमस्तेन तस्मिन्वा सति गुप्तः, यदि वा-मिथ्यात्वादिनाऽऽदीयते इत्यादानम्-अष्टप्रकारकं कर्म तस्मिन्नादातव्ये मनोवाक्कायैर्गुप्तः समितश्च । सूय०१ श्रु०१ ३ अ०
इन्द्रियैर्गुप्ते च । आदानैः-इन्द्रियैर्गुप्तः । बुह० ३ उ० ।

आदाणणिक्खेवदुगुंछय- त्रि० *[आदाननिक्षेपजुगुप्सक]*
आदाननिक्षेपै-पात्रादेर्ठाहणमोक्षौ आगमप्रतिसिद्धौ जुगुप्सति-न करोतीति आदाननिक्षेपजुगुप्सकः । आव० ४ अ० ।

आदाणनिरुद्ध- त्रि० *[निरुद्धाऽऽदान]*
निरुद्धेन्द्रिये, 'आयाणनिरुद्धाओ' आदानानि-इन्द्रियाणि निरुद्धानि यस्यां सा निरुद्धाऽऽदाना, बुह० १ उ० ३ ।

आदाणपय- न० *[आदानपद०]*
आदीयते-गृह्यते प्रथमम्-आदौ यत्तदादानम् आदानञ्च तत्पदं च सुबन्तं तिङन्तं वा तदादानपदम् । सूय० १ श्रु० १५ अ० ।
शास्त्रस्याध्ययनोद्देशकादेश्चादिपदे, अनुओ० ।
येषामादानपदेनाऽभिधानं तन्मतेनादौ यत्पदं तदादानपदम् । सूय० १ श्रु० १५ अ० । उत्त० ।

आदाणफलिह- पु० *[आदानपरिघ]*
आदीयते द्वारस्थगनार्थं गृह्यत इत्यादानः । स चासौ परिघश्चादानपरिघः । द्वारस्थगनार्थं ग्राह्यायामर्गलायाम्, जंबू २ वक्ष० । जीवा० ।
आदीयते इत्यादानम्-आदेयो-रम्यो यः परिघः–अर्गला स आदानपरिघः । रम्यायामगर्लायाम्, पण्हा० ४ अ० ।

आदाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिइ- स्त्री० *[आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणासमिति]*
आदाने-ग्रहणे भाण्डमात्राया उपकरणमात्राया, भाण्डस्य वा, वस्त्राद्युपकरणस्य मृण्मयादिपात्रस्य च साधुभाजनविशेषस्य निक्षेपणायां च समितिः
सुप्रत्युपेक्षित-सुप्रमार्जितक्रमेणेति आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणासमितिः । समितिभेदे, सूय० । ठा० ।
भाण्डमात्रे, आदाननिक्षेपविषया सुन्दरचेष्टा । ठा०५ ठा० ३ ।
जं वत्थ–पायसंथारगफलगपीढगकारणट्ठा गहनिक्खेवकरणं पडिलेहिय पमज्जिय सा । निसि० ।

आदाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिय- त्रि० *[आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणा-समित]*

'आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिए', आदानेन ग्रहणेन सह भाण्डमात्रा या-उपकरण-परिच्छदस्य या निक्षेपणान्यास: तस्यां समितो यः स तथा। आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणासमितौ सम्यक् प्रवृत्ते, भग० २ श० १ उ०।

आदाणनिक्खिवणअणाभोगकिरिया– स्त्री० *[आदान निक्षेपणाना-भोगक्रिया]*

रजोहरणेनाप्रमार्ज्य पात्रचीवरादीनामादानं निक्षेपं वा करोति सा। आव० ।

आदाणभय- न० *[आदानभय]*

आदीयत इत्यादानं-घनं तदर्थं चौरादिभ्यो यद् भयं तदादा-नभयम्। आव० ४ अ०। ठा०।

धनस्य चौरादिभ्यो यद्भयम्, धनहरणभयं। आव०।

भयस्थानभेदे, सम० ७ सम०। निसि०।

आदान-भयम् -आदानं पुण्यार्थमपुण्यार्थं वा परेण राजादिना वितरितग्रामनगरभूखण्डादेः स्वीकरणं तदेव भयम् आदान-भयम् मा कञ्चनपराधमवाप्य तद् ग्रहीष्यति। आव०

द्रव्यमाश्रित्य भयम्। पण्हा०।

आदाणभरिय- न० *[आदानभृत]*

आग्रहणभृत्ते, उपा०

आदाणभरियंसि कडाहयंसि' आदानम्-आद्रहणं यदुदकतैला-दिकमन्यतरद्रव्यपाकायाऽग्नावुत्ताप्यत्तद्भृते उपा० ३ अ०।

आदाणया- स्त्री० *[आदानता]*

ग्रहणतायाम्, इह च ताप्रययः स्वार्थिकः। प्राकृतत्वेन आदानादीनां भावविवक्षया वा। ठा० २० ठा० २ उ०।

आदाणवंत- त्रि० *[आदानवत्]*

मोक्षार्थमादीयत इत्यादानम् सम्यग्-दर्शनज्ञानचारित्ररूपं तद्विद्यते यस्यासावादानवान् सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रवति साधौ सूय०।

'आयाणवन्तं समुदाहरेज्जा' । सूय० २ श्रु० ६ अ०।

आदाणसोयगढिय- त्रि० *[आदानश्रोतोगृद्ध]*

आदीयते कर्मानेनेति आदानं-दुष्प्रणिहितमिन्द्रियमादानं च श्रोतश्चादानश्रोतः। आचा० १ श्रु० ९ अ० १ उ०

आदीयते-सावद्यानुष्ठानेन स्वीक्रियते इत्यादानं कर्म संसार बीजभूतं तस्य श्रोतांसि इन्द्रियविषया मिथ्यात्वाविरति-प्रमादकषाययोगा वा 'तेषु गृद्धः'-अध्युपपन्नः। आचा०१ श्रु०४ अ० ३ उ०।

'आदानश्रोतस्यध्युपपन्ने, आचा०।

आदाणिज्ज- त्रि० *[आदानीय]*

आदीयते उपादीयते इत्यादानीयः। उपादेये, ठा० ६ ठा० ३ उ०। सम०।

ग्राह्, आचा०।

स वीराणां मार्गं प्रतिपन्नः मांसशोणितयोरपनेता मुमुक्षूणामा-दानीयो-ग्राह्य आदेयवचनश्च व्याख्यातः।आचा०१श्रु०४अ०३

आदीयन्ते-गृह्यन्ते सर्वभावा अनेनेत्यादानीयम्। श्रुते, भोगाङ्, द्विपदचतुष्पदधनधान्यहिरण्यादिके आचा०१ श्रु०२ अ०३ उ०

आदीयते इत्यादानीयम्। आचा०१ श्रु०६ अ०२ उ०।

सूत्रकृताङ्गस्य पञ्चदशाध्ययनम्। सूय०।

आदाणिज्जज्जयण- न० *[आदानीयाध्ययन]*

मोक्षार्थिनाऽशेषकर्मक्षयार्थं यज्ज्ञानादिकमादीयते-तदत्र प्रति-पाद्यत इति कृत्वाऽऽदानीयमिति नाम संवृत्तम्। *कृताङ्गस्य स्वनामख्याते पञ्चदशेऽध्ययने, सूय० १ श्रु० १५ अ०।

आदाणीय- त्रि० *[आदानीय]*

उपादेये, । ठा० ६ ठा० ३ उ० । सूय०।

आदाय- अव्य० *[आदाय]*

गृहीत्वेत्यर्थे, सूय० १ श्रु० ३ अ०४ उ०।

'इमं च धम्ममादाय, कासवेण पवेइयं' आदाय-उपादाय आचार्य्योपदेशेन गृहीत्वेति।सूय० १ श्रु० ३अ० ३उ०। आचा० प्राप्येत्यर्थे, विपाकं-स्वानुष्ठानस्य आदाय-प्राप्य विवेकमिति वा क्वचित् पाठस्तद्विपाकं-विवेकं चादाय-गृहीत्वा। सूय०१ श्रु०४ अ०१ उ०।

अङ्गीकृत्येत्यर्थे, उत्त० २ अ०।

स्वीकृत्येत्यर्थे, उत्त० २ अ०।

अवगम्येत्यर्थे आदाय-अवगम्यैकान्तमपक्रामेत्। आदाने, पुं०। आचा० २ श्रु० १ चू० १ अ० ६ उ०।

आदाहिणपयाहिण- त्रि० *[आदक्षिणप्रदक्षिण]*

आदक्षिणात्-दक्षिण-हस्तादारभ्य प्रदक्षिणः परितो-भ्राम्यतो-दक्षिण एव आदक्षिण-प्रदक्षिणः। रा०।

आदक्षिणाद्-दक्षिणपार्श्वादारभ्य प्रदक्षिणो-दक्षिणपार्श्ववर्ती आदक्षिणप्रदक्षिणः। विपा० १ श्रु०१ अ०।

दक्षिणपार्श्वादारभ्य परितो भ्राम्यतो दक्षिणपार्श्ववर्तिनि भग०।

आदक्षिणाद्-दक्षिणहस्तादारभ्य प्रदक्षिणः-परितो भ्राम्यतो दक्षिण एव आदक्षिणप्रदक्षिणोऽतस्तं करोती-ति। भग० १ श० १ उ०। नि०। उव०।

'आयाहिणं पयाहिणं करेंति' आ-सर्वतः समन्तात्-परिभ्रमतां दक्षिणमेव जन्मभवनं यथा भवति एवं प्रदक्षिणं कुर्वन्ति। आव० म० १ अ०। जंबू०।

आदाहिणपयाहिणा- स्त्री० *[आदक्षिणप्रदक्षिणा]*
आदक्षिणतः-पार्श्वात्प्रदक्षिणा पार्श्वभ्रमणमादक्षिणप्रदक्षिणा। ठा० १ ठा०।
दक्षिणपार्श्वादारभ्य परिभ्रमणतो दक्षिणपार्श्वप्राप्तौ निसि०। आयाहिणपयाहिणं करेइ। त्रिः कृत्वः- त्रीन् वारान् आदक्षिण-प्रदक्षिणां दक्षिणपार्श्वादारभ्य परिभ्रमणतो दक्षिणपार्श्वप्राप्तिः आदक्षिणप्रदक्षिणा तां करोति। निर० (१ वर्ग०) १ अ०।

आदिच्च-१ पु० *[आदित्य]*
कृष्णराज्यवकाशान्तरस्थलोकान्तिकसंज्ञकार्चिर्मालिविमानस्थे, लोकान्तिकदेवविशेषे, भग० ६ श० ५ उ०।

आदिच्च-२ पु० *[आदित्य]*
समयावलिकादीनामादौ भवे, । सूर्यसंवत्सरः सूर० २० पाहु०

आदिच्च-३ पु० *[आदित्य]*
सूर्ये, आव० ४ अ०।
आदित्यो हि सर्वजगत्प्रतीतो जगत्प्रदीपकल्पो दिवसादिकाल-विभागकारी (सूय०)।
आगोपालाङ्गनादिप्रतीतः समस्तान्धकारक्षयकारी कमलाकरो-द्घाटनपटीयान् आदित्योद्गमः प्रत्यहे भवन्नुपलक्ष्यते। सूय०१ श्रु०१२ अ०।

आदिच्छा- स्त्री० *[आदित्सा]*
आदातुमिच्छायाम्, आव० ६ उ०।

आदिम- त्रि० *[आदिम]*
अग्रिमे, बुह०।
आवश्यकादयः कृताङ्गं यावत् ये आगमग्रन्थास्तेषु ये पदार्था अभिधेयास्ते आदिमा भावाः उच्यन्ते। बुह० १ उ० १ ।

आदियावण- न० *[आदापन]*
ग्राहणायाम्, सूय०।
स्वयम्-आत्मना सावद्यमनुष्ठानमाददते स्वीकुर्वन्ति, 'अन्यान्य-प्यादापयन्ति-ग्राहयन्ति।' सूय०२ श्रु०१ अ०।

आदीण- त्रि० *[आदीन]*
आ-समन्ताद्दीनः आदीनः। सूय०१ श्रु०५ अ०१ उ०।
समन्तात्करुणास्पदे, सूय० १ श्रु० १० अ०।

आदीणभोइ- पुं० *[आदीनभोजिन्]*
पतितपिण्डोपजीविनि, आदीनभोज्यपि पापं करोतीति। स कदाचिच्छोभनमाहारमलभमानोऽल्पत्वादार्त्तरौद्रध्यानोपगतो-ऽप्यधः सप्तम्यामप्युत्पद्येत। तद्यथा–असाविव राजगृहनगरो-त्सवनिर्गतजनसमूहो वैभारगिरिशिलापातनोद्यतः स दैवात्स्वयं पतितः पिण्डोपजीवीति तदेवमादीननभोज्यपि पिण्डोलकादि-वज्जनः पापं कर्म करोति। सूय०१ श्रु०१० अ०।

आदीणवित्ति- त्रि० *[आदीनवृत्ति]*
आ-समन्ताद्दीना-करुणास्पदा वृत्तिः-अनुष्ठानं यस्य। एवंभूते, आ-समन्ताद्दीना-करुणास्पदा वृत्तिरनुष्ठानं यस्य कृपण-वनीपकादेः स भवत्यादीनवृत्तिरेवंभूतोऽपि पापं कर्म करोति। सूय०१ श्रु० १० अ०।

आदीणिय- त्रि० *[आदीनिक]*
आ-समन्ताद्दीनमादीनं तद्विद्यते यस्मिन्स आदीनिकः। अत्यन्तदीनसत्त्वाश्रये, सूय० १ श्रु०५ अ०१ उ०।

आधरिसिय- त्रि० *[आधर्षित]*
तेण भणियं जो चंडमेहं दूयं आधरिसेइ त्ति।आव० म०१ अ० आहरिसिओ दूओ संभंतेण नियत्तिओ आव० म०१ अ०।

आधा- स्त्री० *[आधा]*
आधानमाधा। साधुनिमित्तं चेतसः प्रणिधाने पिंड०। पण्हा०। दशा०। गच्छा०। बुह०।
करणे, उत्त० ५ अ०।
आधीयतेऽस्यामित्याधा। आश्रये पिंड०।
आश्रय आधार इत्यनर्थान्तरमिति। पिंड०।

आधाकम्म- न० *[आधाकर्म]*
आधानम् आधा। साधुनिमित्तं चेतसा प्रणिधानम्। यथा– अमुकस्य साधोः कारणेन मया भक्तादि पचनीयमिति, आधायाः कर्मपाकादिक्रिया- आधाकर्म तद्योगात् भक्ताद्य-प्याधाकर्म। इह दोषाभिधानप्रक्रमेऽपि यद्दोषवतोऽभिधानं तद्दोषवतोरभेदविवक्षया द्रष्टव्यम्। पिंड०। गच्छा०।

आधाकम्मिय- त्रि० *[आधाकर्म्मिक]*
साधूनामेवार्थाय कारिते भक्तादौ, बुह० १ उ०।

आधाण- न० *[आधान]*
स्थापने आव०।
सर्वगुणाधानम्-अशेषगुणस्थानम्। आव०४ अ०।

आधाय- अव्य० *[आधाय]*
कृत्वेत्यर्थे, उत्त०५ अ०। स्थापयित्वेत्यर्थे।

आधि- पुं० *[आधि]*
आधीयते-अभिनिवेश्यते प्रतीकाराय मनोऽनेन। आधीनाम्– मनः पीडानाम्। भग० १ श० १ उ०१ ।

आधुणिय- त्रि० *[आधुनिक]*
अष्टाशीतिग्रहाणामन्यतमे स्वनामख्याते ग्रहे, जंबू। सूर० २० पाहु० । चंद० २० पाहु० ।

आधेवच्च- न० *[आधिपत्य]*
अधिपतेः कर्म्माधिपत्यम्। रक्षायाम्,जीवा० ३ प्रति०४ १ उ०, आव०म०। पन्न०। भग०। कल्प०। नाया०। विपा०। जंबू०

आधोधिय-पुं० *[आधोऽवधिक]*
नियतक्षेत्रविषयाऽवधिज्ञानिनि, भग० ।

आप- पुं० *[आप]*
व्याप्तौ, आपः व्याप्तिः। भग० १ श० ६ उ०।

आपइ- स्त्री० *[आपद्]*
आपदो-विपदः। उत्त०७ अ०।
आवई चउव्विहा- दव्वखेत्तकालभावाऽऽवई। दव्वाऽऽवई-दव्वं दुल्लहं। खेत्ताऽऽवई-वोच्छिन्नमंडबाई। कालाऽऽवई-ओमाई। भावाऽऽवई-गुरुगिलाणाई। द्रव्यक्षेत्र-कालभावैस्तत्र -द्रव्यापत्-कल्पनीयाशना-दिद्रव्यदुर्लभता १ , क्षेत्राऽऽपत्-प्रत्यासन्नग्रामनगरादिरहितमल्पं च क्षेत्रम् २, कालाऽऽपद् दुष्कालादि ३, भावाऽऽपद् ग्लान-त्वादि ४। जीत०।
द्रव्याऽऽपत्-प्रासुकादिद्रव्यालाभः, क्षेत्राऽऽपत्कान्तारक्षेत्रप-तितत्वं, कालाऽऽपत्-दुर्भिक्षकालप्राप्तिः भावापत्-ग्लानत्वम् इति। प्रतिषेवणायाः पञ्चमे भेदे, भग० २५श० ७उ०।
आपत्सु द्रव्यादिभेदेन चतुर्विधासु, तत्र द्रव्यतः-प्रासुकद्रव्यं दुर्लभं, क्षेत्रतोऽध्वप्रतिपन्नता, कालतो दुर्भिक्षं, भावतो-ग्लानत्वमिति। उक्तं च–'दव्वाइअलंभे पुण चउव्विहा आवया होइ' इति। ठा०१० ठा० ३ उ०। वव०। निसि०। आव०चू०।
प्रशस्तयोगसंग्रहाय साधुनाऽऽपत्सुद्रव्यादिभेदासु, दृढधर्मता कार्य्या सुवरां तासु दृढधर्म्मिणा भाव्यमित्यर्थः।सम०३२ सम०

आपगा- स्त्री० *[आपगा]*
आपेन-जलसमूहेन गच्छतिवहतिड। नद्याम्, दश० ।

आपडण- न० *[आपतन]*
आगमने, प्राप्तौ, ज्ञाने प्रस्खलने च। ओह० ३१२ ।
आवडणं विसमखाणुकंटेसु', विषमे वा स्थाणौ वा आपतनं-प्रस्खलनं भवति। बुह०१ उ० ३ ।
आपतनं नाम-यद् भूमिमसंप्राप्तस्य संप्राप्तस्य वा जानुकूर्परा-भ्यां प्रस्खलनम्। बुह०२ उ०१ ।
आवडणं-पक्खलणं तं पुण भूमिअसंपत्तो संपत्तो वा जाणुकोप्परेहिं। निसि० १ उ०।

आपडिय- त्रि० *[आपतित]*
आस्फालिते च। आपतितौ-भित्तौ आस्फालितौ।उत्त०२५ अ०

आपण- पु० *[आपण]*
आपण्यन्ते-विक्रीणन्त्यत्र आपणः। पणितानि-भाण्डानि तत्प्र-धानाः-आपणाः-हट्टाः। उव०। भग०। आव० म०। कल्प०। पण्हा०। । विशे०। नाया०।
वीथ्याम् न०। दश० ५ अ०१ उ०।
पण्यस्थाने,पण्हा० ३ अ०।

आपणगिह- न० *[आपणगृह]*
आपणमध्यवर्त्तिगृहे, बुह०।

आपणवीहि- स्त्री० *[आपणवीथि]*
रत्याविशेषे, आव० म०१ अ० । रा०। जीवा०।
हट्टमार्गे, दशा०१ अ०। जीवा० नाया०।
आपणवीथयश्च हट्ट-मार्गाः। कल्प०१ अधि० ५ क्षण।

आपण्ण- त्रि० *[आपन्न]*
आश्रिते, । सूय० १ श्रु०१ अ०१ उ०। अनुओ०।
उत्पन्ने, नाया० १ श्रु०२ अ० ।
प्राप्ते, 'जो जाहे आवन्नो', आव०४ अ०।
आवण्णो प्राप्त उच्यते। निसि० १ उ०।
आपन्नाः-प्राप्ताः। उत्त० १ अ०।
व्याप्ते, निसि०।

आपण्णपरिहार- पु० *[आपन्नपरिहार]*
भावपरिहारभेदे, निसि०।

आपण्णसत्ता- स्त्री० *[आपन्नसत्त्वा]*
आपन्नः-उत्पन्नः सत्त्वो-जीवो गर्भे यस्याः।नाया०१ श्रु०२ अ०

आपत्ति- स्त्री० *[आपत्ति]*
आपादने, वव०।
आपत्तिः-प्रायश्चित्तस्याऽऽपादनम्। वव०१ उ०१ ।

आपत्तिसुत्त- न० *[आपत्ति]*
शिष्यगतप्रतिसेवनाद्वारेणाऽऽपन्नप्रायश्चित्तभिधायिनि, निसि०।
प्रतिसेवनायां सत्यां प्रायश्चित्तापत्तिः स्यात् इत्यापत्ति सूत्राण्यु-च्यन्ते-जे भिक्खू बहुसो मासियं पडिसेवित्ता आलोइज्जा (१) बहुसो वि, बहुसो, वि बहुसो पंच पडिसेवित्ता आलोइज्जा (२) इति प्रत्येक-बहुस सूत्रम्, जे भिक्खू मासियं वा दो मासियं, तेमासियं, च (३) इत्यादि सकलसंयोग*म्, जे भिक्खू बहुसो मासियं बहुसो दो मासियं बहुसो तेमासियम् (४) इत्यादि बहुसंयोग सूत्रम्, एतत्सूत्रचतुष्टयमेतावता ग्रन्थेन सूत्रोपात्तं व्याख्यानम्। निसि० २० उ०।

आपय- त्रि० *[आपद्द]*
आपदं ददातीत्यापद्दः रोगादिके पुरुषादिके च। आतु०।

आपसरीरअणवकंखवत्तिया- स्त्री० *[आत्मशरीरानवकाङ्क्षाप्रत्यया]*
अचवकाङ्क्षाप्रत्ययक्रियाभेदे, ठा०।
तत्रात्मशरीरानवकाङ्गाक्षाप्रत्यया सा स्वशरीरक्षतिकारिकर्म्माणि कुर्वतः क्रिया भवति। ठा० २ ठा० १ उ०।

आपाग- पु० *[आपाक]*
कुम्भकारेस्यापाकोभाण्डपचनस्थानम्, कवेल्लुकानि प्रतीतानि तेषामापाकः प्रतीत एव। ठा०८ ठा० ३ उ०।

आपाय- पु० *[आपात]*
अतर्कितागमने, आपतनमापातः। प्रथममीलके। ठा० ४ ठा० १ उ०।
तत्प्रथमतया संसर्गे भग०।

आपायभद्दय- पुं० *[आपातभद्रक]*
आपातनमापातः- प्रथममीलक-स्तत्र भद्रको-भद्रकारी दर्शना-ऽऽलापादिना सुखकरत्वादापात-भद्रकः। प्रथममीलके दर्शना-ऽऽलापादिना सुखकरे, ठा०।
'आवायभद्दए णाममेगे, णो संवासभद्दए। ठा०४ ठा०१ उ०।

आपायावच्च- न० *[आप्राजापत्य]*
अहोरात्रभवे एकोनविंशतितमे स्वनामख्याते मुहूर्त्ते, कल्प०१ अधि० ६ क्षण।

आपुच्छणा- स्त्री० *[आप्रच्छना]*
प्रश्नकरणे, भग०।
'आपुच्छण' त्ति-भर्तुरापृच्छा-'इच्छामि णं तुब्भेहिं अब्भणु-न्नाया' इत्यादिकां। विपा०८ अ०।
सा च कर्तुमभीष्टे कार्यो प्रवर्तमानेन गुरोः काय्या–भगवन्! अहमिदं करोमीति। आव०चू०। जीत०। गच्छा०। अनुओ०। तृतीया आपृच्छना यतो हि श्वासोच्छ्वासादिकं त्यक्त्वा अपरं सर्वं कार्यं गुरोः पृच्छां विना न कार्यम् तस्मादेषा आप्रच्छना। उत्त०२६ अ०।
'आपुच्छणा सयंकरणे' स्वयम् आत्मना कार्याणां करणे गुरोः आप्रच्छना कर्त्तव्या, न च गुरौ सति स्वबुद्धयैव गुरुम् अनापृच्छ्य कार्यं कर्तव्यमिति भावः। उत्त०२६ अ०।
आङिति-सकलकृत्याभिव्याप्त्या प्रच्छना, प्रच्छना-इदमहं कुर्यां न वे त्वेवंरूपा तां स्वयमित्यात्मनः करणं कस्यचिद्वि-वक्षितकार्यस्य निवर्तनं स्वयंकरणम्। तस्मिन्, उत्त० २६ अ०।
उच्छ्वास-निःश्वासौ विहाय सर्वकार्येष्वपि स्वसंबन्धिषु गुरवः पृष्टव्याः, अतः सर्वविषयमपि प्रथमतः प्रच्छनमापृच्छेत्युच्यते तथा च निर्युक्तिकृता सामान्येनैवाभिहितम्–'आपुच्छणा उ कज्जे'त्ति। उत्त० २६ अ०। आव० म०।
आप्रच्छनमापृच्छा, विहारभूमिगमनादिप्रयोजनेषु गुरोः कार्या, समाचार्याः षष्ठभेदः। आव०।

आपुच्छा- स्त्री० *[आपृच्छा]*
आपृच्छनमापृच्छा। समाचारीभेदे, सा च कुर्तुमभीष्टे कार्य्ये प्रवर्तमानेन गुरोः काय्या-अहमिदं करोमीति।आव०म०१ अ०

आपुच्छणिज्ज- त्रि० *[आप्रच्छनीय]*
पृष्टव्ये, भग०१ ८ श० २ उ०।
सकृत्पृष्टव्ये,आप्रच्छनीयः-सकृद् पृष्टव्यः।नाया०१ श्रु०१ अ०

आपूविय- त्रि० *[आपूपिक]*
कर्मजबुद्धेर्दशमे उदाहरणभेदे अपूप-कर्त्तरि, च नं०।

आपूरिय- न० *[आपूरित]*
यस्यापूरणं कृतम्। तस्मिन्, 'पहयदेवदुंदुहिनिनायाऽऽपूरिय-दिसामंडलं' ति। आव० म० १ अ०।

आपूरिमाण- त्रि० *[आपूरयत्]*
आपूरणं कुर्वति, 'सद्देणं तप्पएसे सव्वओ समतां आपूरेमाणे' शब्देन तान् प्रत्यासन्नान् सर्वतो-दिक्षु, समन्ततो–विदिक्षु आपूरयति शत्रन्तस्य साविदं रूपम्। रा०। जीवा०।

आपूरिमाण- त्रि० *[आपूर्य्यमाण]*
सम्यक् पूर्य्यमाणे, ।पण्हा० ३ अ०।

आफोडिय- त्रि० *[आस्फोटित]*
करास्फोटे, पण्हा०।
आफोडियसीहनाया,आस्फोटितं-करास्फोटरूपम्।पण्हा०३ ।

आबबहुल- न० *[आपबहुल]*
रत्नप्रभायाः पृथिव्या अप्बहुले काण्डे, सम०।

आबाह- न० *[आबाध]*
मानसपीडायाम्, 'आवाहे च भये वा' आबाधं नाम-मानसी पीडा। बुह० १ उ० ३ ।
जन्मजरामरणक्षुत्पिपासादिका आबाधा।ठा०४८८।

आभंकर-१ पुं० *[आभङ्कर]*
स्वनामख्याते महाग्रहे, सूर० २० पाहु० ७ । कल्प०। चंद०।
सप्ततितमग्रहनाम। ठा०।
अष्टषष्टितमग्रहनाम। जम्बू०।

आभंकर-२ पुं० *[आभङ्कर]*
सनत्कुमारकल्पे त्रिसागरस्थितिकं विमानं। सम०।

आभरण- न० *[आभरण]*
भूषणे, ठा०८ ठा० ३ उ०। सूर०। आव० म०। उव०।
ललितानि-शोभमानानि कृतानि न्यस्तान्याभरणानि-सारभूष-णानि यस्य स तथा। तं०।
'आभरणभूसणविराइयमंगुवंगं' आभरणानि-अङ्गपारधेयानि ग्रैवेयककङ्कणादीनि। कल्प०१ अधि०२ क्षण।
आभरणैः–कुण्डलमुकुटहारादिभिः। उत्त० २२ अ०।
आभरणानि-वस्त्राणि। वव०५ उ०।
आभरणप्रधाने च। 'आभरणाणि वा' सूय० १ श्रु० ।
आभरणानि-आभरण-प्रधानानि। आचा० २ श्रु० १ चू० ५ अ० १ उ०।

आभरणचङ्गेरी– स्त्री० *[आभरणचङ्गेरी]*
देवछन्दके पूजोपकरणम्। जीवा० २३४।

आभरणचित्त- त्रि० *[आभरणचित्र]*
आभरणैश्चित्राणिविचित्राण्याभरणचित्राणि। आभरणैर्विचित्रे, जीवा० ३ प्रति०२ उ०१ ४७

आभरणजहट्ठाणविविहपरिहाण- न० *[आभरणयथास्थानविविध-परिधान]* आभरणानां यथास्थानं विविधरूपेण परिधान-लक्षणे द्वाषष्टितमे कलाभेदे, कल्प० १० अ०७ क्षण

आभरणप्पिय- पुं० *[आभरणप्रिय]*
पुरुषभेदे, बुह०।

आभरणवासा– स्त्री० आभरणवर्षा,
आभूषणवर्षणम्। भग० १९७।

आभरणविचित्त- त्रि० *[आभरणविचित्र]*
आभरणविभूषिते, आचा०
आभरण-विचित्राणिगिरिविडकादिविभूषितानि। आचा० २ श्रु० १ चू० ५ अ० १ उ० १ । निसि० ।

आभरणविधि- पुं० *[आभरणविधि]*
आभरणं-कटकादि तस्य विधिः -भेदाः आभरणविधिः। आभरण प्रकारेषु, बुह० १ उ० ३ ।
कलाभेदे, निसि० ९ उ०। सम०। नाया०। जंबू। आभरणविहिपरिमाणं करेइ' उपभोगविधिविशेषःउपा०१ अ०

आभरणविभूसिय- त्रि० *[आभरणविभूषित]*
आभरणालंकृते 'आभरणविभूसियाणि वा' ।आचा० २ श्रु० ५ अ० १ उ०

आभव- अव्य० *[आभव]*
आजन्मेत्यर्थे आसंसारमित्यर्थे, च। आभवम्-आजन्म, आसं-सारं वा भावक्रियं निर्वाणसाधकमाराधयति। आव०।

आभवंताहिगार- पुं० *[आभवदधिकार]*
व्यवहारभेदे, पंच०भा०।
'ववहारो होई दुविहो, पच्छिले आभवंते य' पंच०भा०१ कल्प०।
व्यवहर्तव्यभेदे च । वव० १० उ०।
आभवद्व्यवहाराधिकारे, वव०।

आभव्व- त्रि० *[आभाव्य]*
समंताद्भवितुं योग्ये, वव०।
एते ते अनन्तरोदिताः चिन्हं विमार्गयन्तः सन्तः अभिधारयन्तं यान्ति-अभिधारयत आभाव्या भवन्ति, शेषेषु पुनरनभिधारयत्सु आचार्यः-श्रुतगुरुस्वामी भवति। शेषा अनभिधारयन्तः श्रुतगुरोराभाव्या भवन्ति इत्यर्थः। उत्तं च– 'जइ ते अभिधारंती, पडिच्छंते पडिच्छगस्सेव। अह नो अभिधारंती, सुयगुरुणो तो उ आभव्वा'।। वव० ४ उ०।

आभा- स्त्री० *[आभा]*
प्रभायाम्, पण्हा०४ अ० ।
छायायाम्, प्रतिभासः। जीवा० ३ प्रति० १ उ०।
शोभायाम्, कान्तौ, आव०
आकारः। पन्न० ८०।

आभासइ– आभासयति,
समन्ततः सर्वासु दिक्षु अवभासयति। जीवा० ३१२।

आभासिय-१ पुं० *[आभाषिक]*
म्लेच्छजातिभेदे, पन्न० १ पद०। पण्हा०।

आभासिय-२ त्रि० *[आभाषित]*
परस्परकथिते, नि० १ श्रु० ३ वर्ग० ३ अ०।

आभासिय-३ पुं० *[आभाषिक]*
आभाषिकद्वीपजे मनुष्ये, जीवा० ३ प्रति० ३, १ उ०। ठा०।
अन्तरद्वीपिकमनुष्यस्त्रीभेदे च। जीवा० २ प्रति०।

आभासिय-४ पुं० *[आभाषिक]*
विवक्षितभाषामजानानः। आव०।

आभासियदीव- पु० *[आभाषिकद्वीप]*।
अन्तरद्वीपभेदे, पन्न०
स च हिमवतः पर्वतस्य पर्य्यन्तादारभ्य दक्षिणपूर्वस्यां दिशि त्रीणि योजनशतानि लवणसमुद्रमवगाह्य द्वितीयदंष्ट्राया उपरि एकोरुकद्वीपप्रमाण आभासिकनामा द्वीपो वर्तते। पन्न०१ पद०। ठा०। नं०।

आभिओग- पुं० *[आभियोग्य]*
अभियोगं-व्यापारणमर्हन्तीत्याभियोग्याः। ठा०४ ठा०४ उ०।
आ-समन्तात् आभिमुख्येन युज्यन्ते-प्रेष्यकर्मसु व्यापार्य्यन्त इत्याभियोग्या अभियोगिकाः। रा०।
किंकरे, किंकरस्थानीये देवविशेषे च। ठा० ४ ठा० ४ उ०। रा०।
अभिमुखं कर्मणि युज्यते-व्यापार्य्यते इत्याभियोग्यस्तस्य भावः कर्म वा आभियोग्यम्। जीवा० ३ प्रति०४ अधि०२ उ०।
अभियोग आज्ञाप्रदान-लक्षणोऽस्यास्तीत्यामियोगी तद्भावः आभियोग्यम्। दश० ९ अ० २ उ०।
कर्मकमरभावे, दश० ९ अ०२ उ० ।
कर्मकरकर्मणि च। जीवा० ३ प्रति०४ अधि०२ उ०।
आभियोग्यं कर्मकरभावमित्यर्थः, उपस्थिताः प्राप्ताः। दश० ९ अ० २ उ० ।

आभियोगता- स्त्री० *[आभियोग्यता]*
अभियोगं व्यापारणमर्हन्तीत्याभियोग्याः– किंकरदेवविशेषाः तद्भावस्तत्ता। किंकरस्थानीयदेवविशेषत्वे, ठा०।

आभिओगपण्णत्ति- स्त्री० *[आभियोगप्रज्ञप्ति]*
विद्याधरसम्बन्धिनि विद्याभेदे, 'संकामणि आभियोगपण्णत्ति गमणीथं भणीसु य बहुसु विज्जाहरीसु विज्जासु विस्सुयजसे' । नाया०१ श्रु०१६ अ० ।

आभिओगसेढीय– स्त्री० *[आभियोग्यश्रेणय:]*
शक्रलोकपालप्रेष्यकर्मकारिणो व्यन्तरविशेषास्तेषामावासभूते श्रेण्यौ । जम्बू० ७५ ।

आभिओगि- पुं० *[अभियोगिन्]*
अभियोगआज्ञाप्रदानलक्षणोऽस्यास्तीत्याभियोगी । कर्मकरे, दश० ९ अ० ।

आभिओगिय-१ पुं० *[आभियोगिक]*
आभिमुख्येन योजनम् अभियोग: प्रेष्यकर्मसु व्यापार्य-माणत्वम् । अभियोगेन जीवन्तीत्याभियोगिका:, 'चेतनादे-र्जीवति' । इकणप्रत्यय: । कर्मकरे, रा० ।
आभियोग:- पारवश्यं प्रयोजनं येषां ते आभियोगिका: । विपा० १ श्रु० २ अ० ।
पराभिभवहेतौ, चूर्णादिके च । 'आभिओगिए'त्ति-पराभि-भवहेतुरिति । नाया० १ श्रु० १४ अ० ।
अभियोजनमभियोग: प्रेष्यकर्म्मणि व्यापार्य्यमाणत्वमिति भाव: । अभियोगे नियुक्ता आभियोगिका: । देवविशेषे, जीवा० ३ प्रति०४ अधि० २ उ० । रा० ।
अभियोगे–प्रेष्यकर्म्मणि व्यापार्यमाणत्वे नियुक्ता: । जीवा० ।

आभिओगिय-२ त्रि० *[आभियोगित]*
वशीकरणयन्त्रमन्त्राभिसंस्कृते, आव० ।
आभियोगितेशीकरणाय मन्त्राभिसंस्कृते गृहीते ।आव०४ अ० ।
विद्यामन्त्रादौ च । 'आभिओगेहि य आभिओगिता' अभियोगश्च द्वेधा । विपा० १ श्रु० २ अ० ।

आभिओगियभावणा- स्त्री० *[आभियोगिकभावना]*
आभियोग:- पारवश्यं प्रयोजनं येषां ते आभियोगिका: । सैव भावना आभियोगिकभावना । भावनाभेदे गच्छा० ।

आभिओग्ग– न० *[आभियोग्यम्]*
वशीकरणादि द्रव्यतो द्रव्य–संयोगजनितं, भावतो विद्याम-न्त्रादि जनितम्, बलात्कारो वा । पण्हा० ३८ ।
आभियोग:–कार्मणम् । बुह० ।

आभिग्गहिय- त्रि० *[आभिग्रहिक]*
अभिगृह्यत इत्यभिग्रह: अभिग्रहेण निर्वृत्त आभिग्रहिक:-कायोत्सर्गस्तदव्यतिरेकात्तत्कर्त्ताप्याभिग्रहिक: ।
अभिग्रहनिर्वृत्ते कायोत्सर्गादौ, अभिग्रहनिर्वृत्त-कायोत्सर्गादि-कारिणि च । आव०
ऊर्ध्वं प्रबल: श्वास उच्छ्वास: तं 'न निरुणद्धि' अभिगृह्यत इत्यभिग्रह: अभिग्रहेणनिर्वृत्त आभिग्रहिक: कायोत्सर्गस्तद-व्यतिरेकात्कर्त्ताप्याभिग्रहिको भण्यते, असावप्याऽभिग्रहिक कायोत्सर्गकार्य्यपीत्यर्थ: । किं पुनश्चेष्टाकायोत्सर्गकारी स तु सुतरां न निरुणद्धीत्यर्थ: । आव०५ अ० ।
आभिग्रहिको जिनकल्पिकादि: । सूय०१ श्रु०२, अ०२ उ०

आभिणिबोहिय– न० *[आभिनिबोधिक]*
अभिमुखो–योग्यदेशावस्थितवस्त्वपेक्षया नियत:–स्वस्वविषय परिच्छेदकतयाऽवबोध:–अवगमोऽभिनिबोध:, स एवाभिनि-बोधिकम् । उत्त० ।
अर्थाभिमुखो नियत:–प्रतिनियतस्वरूपो बोधोबोध–विशेष:, अभिबुध्यतेऽस्माद् अस्मिन् वेति । पन्न० ।
आभिनिबोधिकम्–मतिज्ञानम् । आव० ।
आभिमुख्येन निश्चितत्वेनावबुध्यते–संवेदयते आत्मा तदिति, आभिनिबोध:, अवग्रहादिज्ञानं, अथवा आत्मा तेन प्रस्तुत ज्ञानेन तदावरणक्षयोपशमेन वा करणभूतेन घटादि वस्त्व-भिनिबुध्यते, तस्माद् वा प्रकृतज्ञानात् क्षयोपशमाद्वाऽभिनि-बुध्यते, तस्मिन् वाऽधिकृतज्ञाने, क्षयोपशमे वा सत्यभिनि-बुध्यतेऽवगच्छतीत्यभिनिबोधो ज्ञानम्, क्षयोपशमो वा, सो वा 'अभिणिबुज्झए'त्ति, अथवाऽभिनिबुध्यते वस्त्वभिगच्छतीत्य-भिनिबोध:, स एवाभिनिबोधिकम्, अभिनिबुध्यते वस्त्वसौ इत्यभिनिबोध: स एवाभिनिबोधिकम् । अनुओ० २ ।

आभिणिबोहियणाण- न० *[आभिनिबोधिकज्ञान]*
अर्थाभिमुखोऽवि-पर्य्ययरूपत्वान्नियतोऽसंशयरूपत्वाद् बोध:-संवेदनमभिनिबोध: स एव स्वार्थिकेकप्रत्ययोपादानादाभि-निबोधिकम्, ज्ञातिर्ज्ञायते अनेनेति वा ज्ञानम् आभिनिबोधिकं च तज्ज्ञानं चेत्याभिनिबोधिकज्ञानम्; इन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तो बोध इति । ज्ञानभेदे, भग० ८ श० २ उ० । ठा० ।
इन्द्रियपञ्चकमनोनिमित्तो बोध: । अनुओ० २ ।
अर्थाभिमुखो नियतो बोध:, अभिनिबोधे भवं तेन वा निर्वृत्तं तन्मयं तत्प्रयोजनं वा, अथवा अभिनिबुध्यते तत्, अथवा अभिनिबुध्यतेऽनेनास्माद्वा अस्मिन् वा तत् तदावरणकर्म–क्षयोपशम इति भावार्थ: । आव० ७ ।

आभिणिबोहियनाणलद्धि- स्त्री० *[आभिनिबोधिकज्ञानलब्धि]*
आभिनिबोधिज्ञानम्-मतिज्ञानम् तस्य लब्धि:-योग्यता । आभिनिबोधिकज्ञानयोग्यतायाम्, 'आभिणिबोहियणाणलद्धी जाव खवोअसमिआ' स्वस्वावरणकर्मक्षयोपशमसाध्यत्वात् क्षायोपशमिकी । अनुओ० ।

आभिणिबोहियनाणसागरोवओग- पुं० *[आभिनिबोधिकज्ञानसाका-रोपयोग]*

अर्थाभिमुखो नियतः-प्रतिनियतस्वरूपो बोधोबोध-विशेषः अभिनिबोधः अभिनिबोध एवाभिनिबोधिकम्। अभिनिबुध्यते अस्मादस्मिन्वेति अभिनिबोधः-तदावरणकर्मक्षयोपशमस्तेन निर्वृत्तमाभिनिबोधिकम्, तच्च तज्ज्ञानं च आभिनिबोधक-ज्ञानम्, इन्द्रियमनोनिमित्तो योग्यप्रदेशाऽवस्थितवस्तुविषयः स्फुटप्रतिभासोः बोधविशेष इत्यर्थः, च चासौ साकारोपयोगश्च आभिनिबोधिकज्ञानसाकारोपयोगः। साकारोपयोगविशेषे, पन्न० २९, पद०।

आभियोगिय–१ पुं० *[आभियोगिक]*

अभियोगभावनाभावितत्वेनाभियोगिकदेवेषूत्पन्ना अभियोग-वर्तिनः। भग० १९०।

आभियोगिय–१ पुं० *[आभियोगिक]*

अभियोजनं–विद्यामन्त्रादिभिः परेषां वशीकरणादि येषां ते। पन्न० १० पद०।

आभियोगी– पुं० *[आभियोगा]*

किङ्करस्थानीयदेवविशेषास्तेषामियमाभियोगी।बुह०।

आभियोग्याः–आभिमुख्येन युज्यन्ते–प्रेष्यकर्म्मणि व्यपार्यन्त इत्याभियोग्याः, किङ्कर–स्थानीयदेवविशेषाः।बुह०।

आभिसेक्क- त्रि० *[आभिषेक्य]*

अभिषेकमर्हति आभिषेक्यम्। अभिषेकाऽर्हे, उव०।

अभिषेकयोग्यं, राजपरिधेयम्। जम्बू०।

आभीर- पुं० *[आभीर]*

शूद्रजातिभेदे, सूय० १ श्रु० ९ अ० ।

गोपे, सङ्कीर्ण-जातिभेदे, स हि अल्पभीतिहेतोरप्यधिकं विभेतीति तस्य तथा तदिदं गृहाण। उद्धटः स च संकीर्णवर्णः। देशभेदे, तद्देशवासिनि, तद्देशराजे च। वव०।

आभीरविसय- पुं० *[आभीरविषय]*

देशभेदे, 'आभीरविसये कण्हा बेण्णानाम नई तस्स कूल बंभद्दीवो तत्थ पञ्च, तावसा परिवसंति। निसि० १३ उ०। पिंड०। आव० म०। आव० चू०।

'एवं सो भगवं विहरंतो ततो आभीरविसयं गओ' आव०चू०१ अ०। आव०१ अ०९ ।

आभीरविषयः, देशनाम। आव० । निशी०।

आभीरसाहु- पुं० *[आभीरसाधु]*

आभीरपुत्रे स्वनामख्याते साधौ, उत्त०२ अ०।

आभीरवंचग- त्रि० *[आभीरीवञ्चक]*

आभीर्या वञ्चनकारके वणिजि, उत्त०।

आभोइत्ता- अव्य० *[आभोगयित्वा]*

आभोगयित्वा-ज्ञात्वा निश्शेषमतिचारम्। दश० ५ अ०।

आभोएमाण- त्रि० *[आभोगयत्]*

अवलोकयति, कल्प० १ अधि०१ । सूय०।

आभोग- पुं० *[आभोग]*

आभोगनमाभोगः। उपयोगविशेषे आव० ४ अ०।

आभोगः-उपयोगः। जनेनाऽज्ञाताः स्थितास्ततो रात्रावाऽऽ-भोगम्-उपयोगं कुर्वते; तूष्णीका औसत इत्यर्थः।बुह०३ उ०।

ज्ञाने, 'आभोगणिव्वत्तिए' ठा० ४ ठा० १ उ०।

संज्ञाः–आभोगः। ठा० १० ठा०।

आभोगे जाणंतेण जो अइयारो कओ पुणो तस्स आव०४ अ० ज्ञानपूर्वकेव्यापारे, आतु० १।

परिस्फुटबुद्धौ, 'परिस्फुडबुद्धीए वि' चूर्णिः। आभोगेनापि-परिस्फुटबुद्ध्यापिः अविस्मृत्याऽपीत्यर्थः जीत०।

'अण्णत्थ अणाभोगेणं' आभोजनमाभोगः-आभोगोऽत्यन्तवि-स्मृतिरित्यर्थः तेन अनाभोगं मुक्त्वेत्यर्थः। आव० ६ अ०। विस्तारे, नाया० १ श्रु० १ अ०।

आभोजनमाभोगः 'भुज' पालनाभ्यवहारयोः मर्य्यादया अभि-विधिना वा भोगनंपालनमाभोगः। प्रतिलेखनायाम्, ओह०।

आभोगंझाण- न० *[आभोगध्यान]*

आभोगोज्ञानपूर्वको व्यापारस्तस्य ध्यानम्। ज्ञानपूर्वकव्यापार-स्य ध्याने, ब्राह्मणनयनाभिप्रायेण फलान्यपि मृद्नतो ब्रह्म-दत्तस्येव। आतु०।

आभोगण- न० *[आभोगन]*

आभोग्यतेऽऽनेनेति आभोगनम्।अर्थावग्रहसमयसमन्तरमेव। सद्भुतार्थविशेषाऽभिमुखे आलोचने, नं० ३१ ।

उपयोगविशेषे, आव० ४ अ०

आभोगणया- स्त्री० *[आभोगनता]*

आभोग्यतेऽनेनेत्याभागनम्-अर्थावग्रहसमयसमनन्तरमेव सद् भूतार्थविशेषाभिमुखलोचनम् तस्य भावः आभोगनता। ईहायाम् नं० ३१ ।

आभोगणिव्वत्तिय- त्रि० *[आभोगनिर्वर्तित]*

आभोगो-ज्ञानम् तेन निर्वर्तितः। ज्ञानेन कृत क्रोधादो, यज्जानन् कोपविपाकादि रुष्यति। वैमानिकक्रोधविशेषे, ठा० ४ ठा० १ उ०।

आभोगबउस- पु० *[आभोगबकुश]*

आभोगः साधूनामकृत्यम् एतच्छरीरोपकरण-विभूषणमित्येवं ज्ञानम्, तत्प्रधानो बकुश आभोगबकुशः। बकुशभेदे, भग० २५ श० ६ उ० ।

आभोगिणी- स्त्री० *[आभोगिनी]*
विद्याभेदे, बुह०। आभोगिनी नाम विद्या, सा भण्यते–या परिजपिता सती मानसं परिच्छेदमुत्पादयति। बुह० ३ उ०। निसि०।

आम-१ अव्य० *[आम]*
आमशब्दोऽनुमतौ, सम्मतमेतदस्माकं सर्वमिति । वव० १ उ० 'आमं ति अणुमयत्थे' आमं इत्यनुमतार्थे इति। 'आमं' ति एतदभ्युपगम्यत एवास्माभिः। निसि० १० उ० ।
अनुमतार्थद्योतकमव्ययम्। बुह०।
स्वीकारेऽव्ययम्। आव०।

आम-२ अव्य० *[आम]*
अपक्व, विशे०।
आमम्-अपक्वम्। ठा०। आव० म०१ अ०।
आमम्- अपक्वरसम्। पण्हा० ६०।
अपरिणतम्। पिण्ड० ६५ ।
अविशोधिकोटिः। बुह०।
आमं णाम जं अपोलियं अग्गिणा ण पक्कंति, अण्णेण वा केणइ पगारेण न पक्कं–णिज्जीवं। निसि० ।
जओ तेहिं उग्गमादिदोसेहिं घेप्पमाणेहिं चारित्तं अविपक्कं अपज्जत्तं आमं भवति तेण ते आमं भण्णति, शब्दमात्रोच्चारणम् सरडीभूतं जो वरिसतायुपुरिसो वरिससतं अंतरे मरंतो आमो भण्णति। निसि० ।
असत्थपरिणयं, सचित्तं। दश० ।
अशस्त्रोपहतम्। आचा०। दश० ।
अजीर्णम्, असिद्धां, सचेतनाम् अपरिणतं, अपक्वम्। दश०।

आम-३ पुं० *[आम]*
पुरुषस्तु आमः–वयःश्रुताभ्यामव्यक्तः। ठा० ४ ठा० १ उ०।

आमइ- पुं० *[आमयिन्]*
आमयो रोगः स येषां विद्यते ते आमयिनः। रोगिणि, वव०।

आमंतण- न० *[आमन्त्रण]*
प्रच्छन्ने, आचा०।
अनापृच्छ्य प्रमादितया परिष्ठापयेत्। आचा०२ श्रु०१ चू०१ अ०९ उ०।
आचार्य्येण स्वगणस्यस्वगच्छस्याऽऽमन्त्रणं प्रच्छन्नं कर्त्तव्यम्। वव०१ उ०।
आमन्त्रणं च प्रत्यक्षस्य गुरोः, तदभावे परोक्षस्यापि बुद्धया प्रत्यक्षीकृतस्य भवति, गुरोश्चाभिमुखीकरणेन सर्वो धर्मः गुरुपादमूले तदभावे स्थापनासमक्षं कृतः फलवानिति।
। आव० १ अ०

आमंतणी- स्त्री० *[आमन्त्रणी]*
असत्यामृषाभाषाभेदे, संथा०७।
आमन्त्रणी–हे देवदत्त इत्यादिरूपा। एष हि प्रागुक्तभाषात्रयविलक्षणत्वान्न सत्या, न मृषा, नापिसत्यामृषा, केवल व्यवहारमात्रप्रवृत्तिहेतुरित्यसत्यामृषा एव, भावना कार्य्या। दश०।
विभक्तिभेदे च। अष्टमी संबुद्धिः-आमन्त्रणी भवेत्; आमन्त्रणार्थे विधीयत इत्यर्थः। अनुओ०। ठा०।
असत्यामृषाभाषायाः प्रथमो भेदः। दश०।
हे देवदत्त ! इत्यादिरूपा भाषा। पन्न०। भग०।

आमंतिय- त्रि० *[आमन्त्रित]*
परिभाषितायां सम्बोधनार्थे प्रथमायां विभक्तौ, नं०।
आमन्त्रितः, सम्भाषितः, पृष्ठो वा। उत्त०।

आमंतिय- अव्य० *[आमन्त्र्य]*
स्त्रियो हि स्वभावेनैवाऽकर्त्तव्यप्रवणाः, साधुनामन्त्र्यथाऽहममुकस्यां वेलायां भवदन्तिकमागमिष्यामीत्येवं संकेतं ग्राहयित्वा (सूय०)
भर्तारम् आमन्त्र्य-आपृच्छ्य अहमिहाऽऽयाता। सूय०१ श्रु०४ अ०१ उ०।

आमंतेमाण- त्रि० *[आमन्त्रयत्]*
आपृच्छति, आचा०। 'पुमं आमंतेमाणे आमंतिते वा' आचा० २ श्रु० १ चू० ४ अ० ३ उ०।

आमग- त्रि० *[आमक]*
अपक्वे, भग० १५ श० १ उ० ।
आमकमल्लकभूता-अपक्वशरावकल्पा जलसंपर्के क्षणेन विलयनात्। नाया०१ श्रु०९ अ०।
अशस्त्रोपहते च। दश० ।
आमकम्-अशस्त्रोपहतम्। दश० ८ अ०२ उ०। आचा०।
आमकं-सचित्तम्। दश० ३ अ०।

आमगंध- न० *[आमगन्ध]*
आमं च गन्धश्च आमगन्धम्। अविशुद्धकोट्यन्तर्गतेषु आधाकर्मादिषु, आचा०।
'सव्वाऽऽमगंधं परिण्णाय णिरामगंधो परिव्वए' सर्वञ्च तदामगन्धञ्च सर्वाऽऽमगन्धं, सर्वशब्दः प्रकार कात्स्न्र्येऽत्र गृह्यते; न द्रव्यकात्स्न्र्ये, आमम्-अपरिशुद्धं, गन्धग्रहणेन तु पूर्तिर्गृह्यते।
ननु च पूतिद्रव्यस्याप्यशुद्धत्वादामशब्देनैवोपादानत्किमर्थं भेदेनोपादानामिति ? सत्यम्, अशुद्धसामान्याद् गृह्यते, किंतुपूतिग्रहणेनेह आधाकर्माद्यविशुद्धकोटिरुपात्ता, तस्याश्च गुरुतरत्वात्प्राधान्यख्यापनार्थं पुनरुपादानं, ततश्चायमर्थः–गन्ध-

ग्रहणेन-आत्मकर्म १ , औद्देशिकत्रिकं २, पूतिकर्म्म ३, मिश्रजातं ४, बादरप्राभृतिका ५, अध्यवपूरक ६ श्चैते षड्डुद्गमदोषा अविशुद्धकोट्यन्तर्गता गृहीताः शेषास्त्रयो विशुद्धकोट्यन्तर्भूता आमग्रहणेनोपात्ता द्रष्टव्या इति, सर्वशब्दस्य च प्रकारकार्त्स्न्याभिधायकत्वाद्यद्येन केनचित्प्र-कारेण आमम्–अपरिशुद्धं पूतिर्वा भवति तत्सर्वं ज्ञपरिज्ञया ज्ञात्वा प्रत्याख्यानपरिज्ञया निरामगन्धः निर्गतावामगन्धौ यस्मात् स तथा परिव्रजेत्–मोक्षमार्गे ज्ञानदर्शनचारित्राख्ये परिः-समन्ताद् गच्छेत्; संयमानुष्ठानं सम्यगनुपालयेदिति यावत्। आचा०१ श्रु०२ अ०५ उ०।

आमज्जण- न० *[आमार्जन]*

सकृत् कर्दमादिशोधने, आचा०।

नैव सकृदामृज्यान्नाऽपि पुनः पुनः प्रमृज्यात्; कर्दमादि शोधयेदित्यर्थः। आचा०२ श्रु०१ चू०१ अ०५ उ०।

'आमज्जेज्ज वा पमज्जेज्ज वा आमज्जंतं वा पमज्जंतं वा साइज्जइ' । निसि०१७ उ०।

'आमज्जावेज्ज वा पमज्जावेज्ज वा आमज्जावंतं वा पमज्जावंतं वा साइज्जइ', निसि०१७ उ०।

आमज्जमाण- त्रि० *[आमार्जयत्]*

सकृत् हस्तादिना। शोधयति, निसि०।

'आमज्जंतं वा पमज्जंतं वा साइज्जइ' निसि० ३ उ०।

आमार्जयत्-सकृत् हस्तादिना शोधयन्। आचा० २ श्रु० १ चू० १ अ० ७ उ०।

आमट्ठ त्रि० *[आमृष्ट]*

विपर्यासीकृतम्, परामट्ठ। ओघ० १९२।

तेजःप्रकर्षारोपणाय मनःशिलादिना समन्तात्पराकृष्टम्। उत्त०

आमडाग- न० *[आमडाग]*

अर्द्धपक्के, अपक्के च। अरणिकतण्डुलीयकादिके, आचा०।

'सेज्जं पुण जाणेज्जा आमडागं वा'। 'आमडागं वा' इति-आमपत्रम्–अरणिकतण्डु-लीयकादि तच्चार्द्धपक्कम् ,अपक्कम्वा । आचा० २श्रु ० १ अ० ८ उ०

आमतर- त्रि० *[आपतर]*

अतिशयेन प्रापके, रा०।

द्रष्ट्रीणां मनांसि आप्नुवन्ति-आत्मवशतां नयन्तीति मनआपः ततः प्रकर्षविवक्षायां तरप्रत्ययः प्राकृतत्वाच्च पकारस्य मकारे मणामतरा इति भवति। रा०।

आममल्लगरूव- त्रि० *[आममल्लकरूप]*

अपक्वशरावतुल्ये, तं०।

अपक्वशरावतुल्ये शरीरे निर्वेदं वैराग्यं व्रजता तं०।

आममहुर- न० *[आममधुर]*

आममिव मधुरमाममधुरम्। ईषन्मधुरे फले, 'आमे नामं एगे आममहुरे' । ठा० ४ ठा० १ उ०।

आमय- पुं० *[आमय]*

आमं-रोगं, रोगे, अनामयः निरामयः। वव० १ उ०।

आमयकरणी- स्त्री० *[आमयकरणी]*

विद्याभेदे, सूय० २ श्रु० २ अ० ।

आमयभाव- पु० *[आमयभाव]*

रोगोत्पत्तौ, दश० ।

निरामयामयभावात् निरामयस्य रोगस्याऽऽमयभावाद्रोगोत्पत्तेः उपलक्षणं चैतत्साऽऽमयनिरामयभावस्य तथा चैव वक्तार उपलभ्यन्तेपूर्वे निरामयोऽहमासं, सम्प्रति साऽऽमयो जातः। दश० ४ अ०।

आमयि- त्रि० *[आमयिन्]*

रोगिणि, वव०।

ज्ञात्वा त्रिविधा वातादिजन्य रोगयोगतस्त्रिप्रकारा आमयो-रोगः स येषां विद्यते, ते आमयिनः। वव० १ उ०।

'आमइणं'ति-आमती-रोगत्तो, आमती जस्स अत्थि सो आमती मणुस्सो भण्णति। निसि० २० उ०।

आमरणंतदोस- पुं० *[आमरणान्तदोष]*

मरणमेवान्तो मरणान्तः आमरणान्तात्- आमरणान्तमसंजाता-ऽनुतापस्य कालसौकरिकादेरिव या हिंसादिप्रवृत्तिः सैव दोष आमरणान्तदोषः रौद्रध्यानस्य लक्षणभेदे, भग०।

'आमरणंतदोसे' भग० २५श० ७उ०। ठा०। गच्छा०। उव०।

'नानाविहाऽमरणदोसा' महदापद्गतोऽपि स्वतः महदापद्गतेऽपि च परे आमरणादसंजाताऽनुताप, कालसौकरिकवत्, अपि तु-असमाप्तानुतापानुशय पर इत्यामरणदोष इति। आव० १ अ०।

आमरणन्तदोसो जथा पव्वतराई; परिगिलायमाणस्स वि आगतपच्चादेसस्स थोवो वि पच्छाणुताओ न भवति, अवि मरणकालेऽवि जस्स कालसोयरियस्सेव न ताओ उवरतो भवति, एस आमरणन्तदोसो। आव० चू० १ अ०१ ।

आमरणान्तदोषः– आमरणान्तमसंजातानुपातस्य हिंसादिषु प्रवृत्तिः सैव दोषः, ठा० १९०।

आमलईकीडा- स्त्री० *[आमलकीक्रीडा]*

क्रीडाभेदे, तथा च भवगतो महावीरस्य वर्णकमधिकृत्य-समानवयोभिः कुमारैः सह क्रीडां कुर्वाणः आमलकी-क्रीडानिमित्तं पुराद् बहिर्जगाम, तत्र च कुमारा वृक्षारोहणा-दिप्रकारेण क्रीडन्ति स्म। कल्प०१ अधि०५ क्षण।

आमलकप्पा- स्त्री० *[आगलकल्पा]*
स्वनामख्यातायां नगर्य्याम् विशे०।
आमलकल्पायां नगर्य्यां गतः, तत्र च मित्रश्रीनाम्ना श्रावकेण कूरपिउडादिना-कूरसित्थादिदानेन प्रतिबोधित इत्यर्थः। विशे०। आव०। कल्प०। आव०चू०। आव० म०। आव०। उत्त०। रा०।
'इहेव जंबूदीवे दीवे भारहे वासे आमलकप्पा-नामं नयरी होत्था।' नाया० २ श्रु० १ अ०।

आमल- पुं० *[आमल]*
बहुबीजकेवृक्षभेदे, 'आमलपाणगं वा आचा० २ श्रु० १ चू० १ अ० ७ उ०।

आमलग-१ पुं० *[आमरक]*
सामस्त्येन मार्य्याम् ठा०१० ठा०।
तदर्थप्रतिबद्धे कर्मविपाकदशाया नवमेऽध्ययने । नं०। ठा०।

आमलग-२ त्रि० *[आमलक]*
बहुबीजकेवृक्षभेदे, जीवा०१ प्रति० । पन्न०। आचा०। ठा०।
'तत्थ णं आमलगा पक्खित्ता' । अनुओ०।
धात्रीफले च। नं०।
आमलकानि-धात्रीफलानि। सूय०१ श्रु०४ अ०२ उ०।
फलविशेषः। पिण्ड०। दश०।

आमलपाणग न० *[आमलपानक]*
फलविशेषप्रक्षालनजलं। आचा०।

आमलगमहुर- त्रि० *[आमलकमधुर]*
आमलकमिव मधुरं यद्यन्यत् आमलकमेव वा मधुरमाम-लकमधुरम्।
ईषन्मधुरे, ठा० ४ ठा० ३ उ० २ ।

आमलगमहुरफलसमाण- पुं० *[आमलगकमधुरफलसमान]*
ईषदुपशमादिगुणलक्षणमाधुर्य्यवति पुरुषभेदे, । ठा० ४ ठा० ३ उ० ।

आमलगरस- पुं० *[आमलकरस]*
धात्रीफलरसे, सूय० १ श्रु० ८ अ०।

आमलगरसिय- त्रि० *[आमलकरसित]*
आमलकरससंसृष्टे, विपा०।
आमलकरससंसृष्टा-नीति। विपा०१ श्रु०८ अ०।

आमाघाओ– अमाघातः
अमारीपटहः। आव०।

आमाऽभिभूय- त्रि० *[आमाऽभिभूत]*
अपक्करसेनाभिभूते, विपा०।
आमेनअपक्करसेन विपा०।

आमिस- न० *[आमिष]*
ढङ्कैः ढङ्कैश्च पक्षिविशेषैरन्यैश्च मांसवशार्थिभिर्मत्स्यबन्धादिभिः। सूय०१, श्रु०१ अ० ३ उ०।
आहारे, मांसादिके, ठा० ४ ठा० ४ उ०। नाया०।
'जं इच्छसि घेत्तुं जे, पुव्विं तं आमिसेण गिण्हाहि। आमिस-पासनिबद्धो, काहिइ कज्जं अकज्जं वा।।१ ।।' सूय०१ श्रु०४ अ०१ उ०।
अभिष्वङ्गहेतौ, धनधान्यादिके च। उत्त०।
'अकिंचणा उज्जुकडा निरामिसा, निष्क्रान्ता आमिषात्-विष-यादिपदार्थात् इति निरामिषा-विषयादयः पदार्थो हि विषया जीवानां गृद्धिहेतुत्वादामिषोपमाः एतस्मादहं निर्विषया सती। उत्त० १४ अ०।
आमिषाद्–गृद्धि–हेतोरभिलषितविषयादेः। उत्त० ।

आमिसत्थि- त्रि० *[आमिषार्थिन्]*
आमिषम्-मांसादिकम् अर्थयतः-प्रार्थयतः। मांसादि प्रार्थयि-तरि , नाया० १ श्रु० ४ अ०।

आमिसप्पिय- त्रि० *[आमिषप्रिय]*
कङ्कपक्षिणि, मांसाभिलाषिणि च। वल्लभमांसादिके, नाया० १ श्रु० ४ अ० ।

आमिसलोल- त्रि० *[आमिषलोल]*
आमिषलम्पटे, नाया०१ श्रु०४ अ० ।

आमिसाऽऽवत्त- पुं० *[आमिषाऽऽवर्त्त]*
आमिषं-मांसादि तदर्थमावर्तः शकुनिकादीनामामिषावर्तः। आवर्तभेदे, ठा० ४ ठा० ४ उ०।

आमिसाऽऽहार- त्रि० *[आमिषाऽऽहार]*
मांसादिभोजिनि नाया० १ श्रु० ४ अ०।

आमुट्ठ- त्रि० *[आमृष्ट]*
आधर्षिते, आमर्दिते च। विपर्यासीकृते च। ओह०।

आमुसंत-१ त्रि० *[आमृशत्]*
सकृदीषद् वा स्पृशति, दश० ४ अ०।
आमृशन्, स्पृशन्। दश०। आचा०।

आमुसंत-२ *[आमृशता]* भगवत्पादारविन्दं करयुगलादिना स्पृशता। आचा०१ श्रु०१ अ०१ उ०। ठा०।

आमुसमाण- त्रि० *[आमृशत्]*
ईषत् स्पृशति, भग०।
आमृशन्; ईषत्स्पृशन्नित्यर्थः। भग० ८ श० ३ उ०।

आमेट्टघर- न० *[आमेष्टकागृह]*
अपक्वेष्टकागृहे, वव०। आमा-अपक्वास्ताभिरिष्टकाभिः कृतं गृहम्–आमेष्टकागृहम्। वव०४ उ०।

आमेल - पुं० *[आपीड]*

शेखरके, नाया०१ श्रु० १६ अ०१ ।

'आमेल' त्ति आपीडशब्दस्य प्राकृतलक्षणवशत आपीडः-शेखरकः। पन्न० २ पद०। जीवा०।

आविद्धस्तिलक आमेलश्च शेखरको यकाभिस्ता आविद्ध-तिलकाऽऽमेलास्तासाम्। रा०।

आमेलग- पुं० *[आपीडक]*

शेखरके, भग०।

'आमेल'त्ति आपीडः शेखरः। भग०८ श० ३ ३० नाया०।

आमेलकः-आपीडः, शेखरक इत्यर्थः, जीवा० ३ प्रति०१ उ०

आपीडः-शेखर एव स्तनप्रस्तावाच्चञ्चुकस्तत्प्रधानौ आमेलकौ वा परस्परमीषत्संबद्धौ। नाया० १ श्रु० १ अ०।

गृहबहिर्निस्सृतकाष्ठे च आपीडकमात्रे, त्रि०। आव०।

आमेलग- त्रि० *[आमेलक]*

परस्परमीषत्सम्बद्धे, नाया०१ श्रु०१ अ० ।

आमेलग- पुं० *[आमोडक]*

पुष्पोन्मिश्रे बालबन्धविशेषे, आमोडकः- पुष्पोन्मिश्रो बालबन्ध विशेषः उत्त० ३ अ०।

आमोक्ख- पुं० *[आमोक्ष]*

आमुच्यतेऽस्मिन्नित्यामोक्षणं वा आमोक्षः परित्यागे, आचा०१ श्रु०१ अ०१ उ०।

अशेषकर्मक्षये सूय०।

आमोक्षाय अशेषकर्मक्षयप्राप्तिं यावत्। सूय० १ श्रु० ३ अ० ३ उ०।

अशेषकर्मक्षयसाधके आचारे, आचा०।

तथा चाचारैकार्थिकानधिकृत्यआमोक्षस्य निक्षेपो नामादिस्तत्र व्यतिरिक्तो, निगडादेः भावामोक्षः कर्माष्टकोद्वेष्टनमशेषमेतत् साधकश्चायमेवाचारः इति। आचा० १ श्रु० १ अ० १ उ०।

आमोग- पुं० *[आमोक]*

कचवरपुञ्जे, नं०।

आमोकानि-कचवरपुञ्जाः। आचा० १ श्रु० ७ अ० २ उ०।

आमोडग- न० *[आमोडक]*

आतोद्यभेदे, 'मुच्छिज्जंताणं आमोडगाणं' आव०चू० १ अ०।

आमोस- पुं० *[आमर्श]*

आमर्शनमामर्शः। परामर्शे, नाया० १ श्रु०८ अ० ।

संस्पर्शे, पण्हा० १ अ०, सूय०।

आमोस- पुं० *[आमर्ष]*

आमर्षणमामर्षः संस्पर्शे, विशे०। आव० म०।

अप्रमृज्य करेण स्पर्शने, जाग्रतोऽतिचारभेदे च। आव०।

'आमोसे ससरक्खामोसे'अविधिनैव आमर्षणमामर्षः, अप्रमृज्य करेण स्पर्शनमित्यर्थः।

तस्मिन् सरजस्कामर्षे सति, सह पृथिव्यादिरजसा यद्वस्तु स्पृष्टं तत्संस्पर्श इत्यर्थः। आव० ४ अ०

आमोसग- पुं० *[आमोषक]*

आमुष्णातीत्यामोषकः। चौरे, ठा०५ ठा०२ उ०।

'आमोसगा संपिंडिया गच्छेज्जा' आमोषकाः स्तेनाः। आचा० २ श्रु० १ चू० ३ अ० ३ उ०।

'तत्थ खलु विहरंसि बहवे आमोसगा वत्थपडियाए संपिंडिया गच्छेज्जा',आमोषकाः-चौराः आचा०२श्रु० १चू० ५अ० २उ०

आमोसहि- पुं० *[आमर्षौषधि]*

आमर्शो हि हस्तादिना स्पर्शः ओषधिर्यस्य स आमर्शौषधिः। गच्छा०२ अधि०।

आमर्षणमामर्षः-संस्पर्शनमित्यर्थः। स एवौषधिर्यस्यासावाम-र्षोषधिः करादिसंस्पर्शमात्रादेव व्याध्यपनयनसमर्थः लब्धिल-ब्धिमतोरभेदोपचारात्साधुरेवामर्षौषधरित्यर्थः। विशे० ७७९। आव० म०।

लब्धिभेदे सूय०। उव०।

यत्प्रभावात्स्वहस्तपादाद्यवयवपरामर्शमात्रेणैवात्मनः,परस्य वा सर्वेऽपि रोगाः प्रणश्यन्ति स आमर्शौषधिः।

आमोसहिणाम रोगाभिभूतं अत्ताणं परं वा जवे वि तिगिच्छामि त्ति संचिंतेऊण आसुरति तं तक्खणा चेव ववगयरोगातंकं करेति त्ति। सा य अमोसहिलद्धी। सरीरेगदेसे वा सव्वसरीरे वा समुपज्जति त्ति एवमेसा आमोसहि त्ति भण्णति।

आव०चू० १ अ०।

आमोसहिपत्त- त्रि० *[आमर्षौषधिप्राप्त]*

आमर्शः-संस्पर्शः स एवौषधिः-सर्वरोगापहारित्वात् तत्तपश्चरण प्रभावो लब्मिविशेषस्तां प्राप्ता ये ते तथा। आमर्शौषधि लब्धि-विशेषप्राप्ते, पण्हा०।

'आमोसहिपत्तेहिं' पण्हा० १ अ०।

आय- पुं० *[आय]*

आगच्छतीत्यायः द्रव्यादेर्लाभे, सूय० १श्रु ० १०अ०। उत्त०। आव० म०। नाया०। आतु०। दश० । विशे०।

'आयस्स-लाभस्य हेतोः-कारणात्। सूय० १ श्रु० ६ अ०।

आयः ! प्राप्तिर्लाभ इत्यनार्थन्तरम्। अनुओ०। निसि०।

आयो-नाम पार्श्वस्थादेः पार्श्वान्निष्प्रत्यूहसंयमपालनादिको लाभः। बुह० ३ उ०।

कर्माश्रवलक्षणम्। सूय० ।

इष्टफलम्। भग० ।

आगच्छतीत्यायोद्रव्यादेर्लाभस्तन्निमित्तापादितेऽष्टप्रकारककर्म लाभे च। आगच्छतीत्यायोद्रव्यादेर्लाभः तन्निमित्तापादितोऽष्टप्रकार-कर्मलाभः तमिहास्मिन् संसारे असंयमजीवितार्थी; भोगप्रधानजीवितार्थीत्यर्थः। यदि वा- आजीविकाभयात् द्रव्य संचयं न कुर्यात्। सूय० १ श्रु०१० अ०।

आयम्-कर्माश्रवलक्षणं न कुर्य्याद्। सूय० १ श्रु० १० अ० ३।

उपादाने, हेतौ च। विशेष० १२२९।

आयो-लाभः। प्राप्तिर्ज्ञानादीनामस्मादित्यायः। विशे० ६९१ । ओघनिष्पन्ननिक्षेपेण सामान्यतः अङ्गाध्ययनोद्देशकादिकेश्रुतौ, अनुओ० १५४।

आयइ- स्त्री० *[आयति]*

आगामिकाले, 'बुह०। वव०।

'से तत्थ मुच्छिए वाले, आयइं नाऽवबुज्भइ'। दश० १ चू०। तत्र तेषु भोगेषु मूर्च्छितो-गृद्धो बालः आयतिम्-आगमिकालं नाऽवबुद्ध्यते-न सम्यगवगच्छति। दश० १ चू०।

आगामिकालविषयायां महत्यामास्थायाम्, वव०।

'जुवराजंमि उ ठविए, एयाओ बंधंति आयतिं तत्थ'। आयतिम्-आगामिकालविषयां महतीमास्थां बन्धन्ति।वव०४ उ०।

सन्ततौ, बुह०।

राजसुतदीक्षामधिकृत्य-'आयती इड्ढिमं-तपूया य'। आयतिश्च-सन्ततिरमीषामेतेन अविच्छिन्ना भविष्यतीति। बुह० ३ उ०।

आयइत्ता- अव्य० *[आदाय]*

गृहीत्वेत्यर्थे, सूय० १ श्रु० १२ अ०।

आयइसंपगासण- न० *[आयतिसम्प्रकाशन]*

चतुर्थे सामभेदे, ठा०

चतुर्थं सामभेदमाधिकृत्य-'आयत्याः सम्प्रकाशनम्' अस्मिन्नेवङ्कृते इदमावयोर्भविष्यतीत्याशायोजनम् आयतिसम्प्रकाशन् ठा० ३ ठा० ३ उ०।

आयंगुल- न० *[आत्माङ्गुल]*

आत्मनोऽङ्गुलमात्माङ्गुलम्। आत्माऽङ्गुलप्रमाणभेदे, आव०।

पुरुषात्मसम्बन्धि आत्माङ्गुलम्। अनुओ० ।

अङ्गुलस्य प्रथमभेदः। पन्न० ।

आयंत- त्रि० *[आचान्त]*

गृहीताचमने, रा०। भग०।

शौचार्थं कृतजलस्पर्शे, पुप्फि० १ (३ वर्ग०) ३ अ०। उव०।

'आयंते चोक्खे परमसुइभूये' 'आयंते' इति नवानामपि श्रोतसां शुद्धोदक-प्रक्षालने-नाचान्तो गृहीताऽऽचमनः। रा०। आचान्तौ-शुद्धोदकेन कृताऽऽचमनौ।कल्प० १ अधि०५ क्षण० । नाया० भग०।

आयामाऽम्ल- न०

आयामम् अवश्रावणम्, अवश्रावणम् काञ्जिकम् बुह०१ उ०। अवस्यामे, आचा० २ श्रु० १ चू० १ अ० ७ उ० । गच्छा० २ अधि०।

आयंबिलपच्चक्खाण- न० *[आचामाम्लप्रत्याख्यान]*

प्रत्याख्यानभेदे । आव० ६ अ०।

आयंबिलपाउग्ग- त्रि० *[आचामाम्लप्रायोग्य]*

ओदनादिसत्के कूरादौ आव० ६ अ०।

कूरविहाणाणि। आव० ।

आयंबिलवड्ढमाण- न० *[आचामाम्लवर्द्धमान]*

तपोविशेषे, उव०। अंत०

'आयंबिलवड्ढमाणं तवोकम्मं पडिवण्णा' ।

यत्र चतुर्थं कृत्वा आयामाम्लं क्रियते, पुनश्चतुर्थं, पुनर्द्धे आयामाम्ले, पुनश्चतुर्थं, पुनस्त्रीणि आयामाम्लानि, एवं यावच्चतुर्थ शतं चाऽऽयामाम्लानां क्रियते इति,

इह च शतं चतुर्थानां तथा पञ्चसहस्राणि पञ्चाशदधिकानि ५०५०, आयामाम्लानां भवन्तीति। उव०।

आयंबिलिय- पु० *[आचामाम्लिक]*

आचामाम्लं समयप्रसिद्धं तेन चरतीत्याचामाम्लिकः। ठा० ५ ठा० १ उ०।

आचामाम्लसहिते, 'आयंबिलमणायंबिले,आयंबिलगा, अणायंबिलंगा य। अणायंबिलगा, आयंबिलगविरहिया' इति आव० ६ अ०।

आचाम्लम् ओदनकुल्माषादि तेन चरतीत्याचाम्लिकः। साधुभेदे, सूय० २ श्रु० २ अ०।

आयग- न० *[आजक]*

अजानां समूहः। छागसमूहे, ।

अजापक्ष्मनिष्पन्ने वस्त्रादौ, 'आयाणि वा'

क्वचिद्देशविशेषे अजाः सूक्ष्मरोमवत्यो भवन्ति तत्पक्ष्मनिष्पन्नान्याजकानि भवन्ति। आचा० २ श्रु० १ चू० ५ अ० १ उ०।

आयचरित्त- त्रि० *[आयचरित्र]*

आयभूतं निरतिचारतया चारित्रं यस्य स आयचरित्रः। दृढचरित्रे, संथा० ३६ ।

आयचरित्त- त्रि० *[आत्तचरित्र]*

गृहीतचारित्रे 'आयचरित्तो करेइ, सामण्णं । आयभूतं-निरतिचारतया चारित्रं यस्य स आयचरित्रो दृढचारित्रत्वात् प्राकृतत्वात्-आत्तचारित्रो-गृहीत चारित्रः करोति-पालयति श्रामण्यं-श्रमणभावम्। संथा०।

आयट्ठ- पुं० *[आयतार्थ]*

आयतः अपर्य्यवसानान्मोक्ष एव, सचासावर्थक्षायतार्थः। मोक्षरूपेऽर्थः। आयतो-मोक्षः अर्थः-प्रयोजनं यस्य दर्शनादि-त्रयस्य तत्तथा। दर्शनादित्रये च। आचा०१ श्रु० १ अ० २ उ०।

आयट्ठ- पुं० *[आत्मार्थ]*

आत्मनोऽर्थः आत्मार्थः स च ज्ञानदर्शनचारित्रात्मकः, अन्यस्त्वनर्थ एव, अथवा-आत्मने हितं-प्रयोजनमात्मार्थं, तच्च चारित्रानुष्ठानमेव चारित्रानुष्ठाने, आचा०१ श्रु०२ अ०१ उ०।

आयत्तः—मोक्षः, अर्थः—प्रयोजनं यस्य। आचा० ११०।

आत्महितं। आचा० १०९।

ज्ञानादिरूपं स्वकार्यम्।बुह० ७१ ।

आयत- *[आयत]*

दीर्घे, उव०। आव० म०। अनुओ०। उत्त०। ठा०।

आयामवति,पण्हा० ३ अ०।

'गिरिवरे वा निसहोऽऽययाणं, रुयए व सेट्ठे वलयाऽऽययाणं' यया निषधो गिरिवरो गिरीणामायतानां मध्ये जम्बूद्वीपेऽन्येषु वा द्वीपेषु दैर्घ्येण श्रेष्ठः-प्रधानः तथा वलयाऽऽयतानां मध्ये रुचकः पर्वतोऽन्येभ्यो वलयायतत्वेन। सूय०१ श्रु०६ अ०।

आयतो-मोक्षोऽपर्य्यवसिताऽवस्थानत्वात्। सूय० १ श्रु०८ अ०

आयतोऽपर्यवसानान्मोक्ष एव। आचा०१ श्रु०२ अ०१ उ०७१

आयतो-दीर्घसर्वकाल भवनान्मोक्षः। सूय०१ श्रु०२ अ० ३

आत्मनि सूय०।

आयतः-आत्मनोऽनाद्यनन्तत्वात् स प्रियो येषां ते तथा सर्वेऽपि प्राणिनः प्रियात्मानः। आचा०१ श्रु०२ अ० ३ उ०।

आङ्अभिविधौ, सामस्त्येन यतः-आयतः। आचा० १ श्रु० ८ अ० ८ उ० ।

संयते, 'आयतजोगताए सेवित्था'आचा०१ श्रु०९ अ०४ उ०।

आकृष्टे, यत्नवति च। भग०।

कर्ण यावदायतः-आकृष्टः कर्णाऽऽयतः आयतंप्रयत्नवद् यथा भवतीत्येवं कर्णायतः। भग०१ श० ८ उ०।

संस्थानभेदे च। ठा०१ ठा०। उत्त०।

आयतकण्णायय- त्रि० *[आयतकर्णायत]*

कर्णं यावदायतः-आकृष्टः कर्णायतः, आयतः आयतम् (वा)-प्रयत्नवद् यथा भवतीत्येवं कर्णायतः। आयतकर्णायतः। प्रयत्नेन कर्णपर्य्यन्तमाकृष्टे, 'आययकण्णाययं उसुं आयामेत्ता चिट्ठइ' । भग०१ श० ८ उ०।

सामान्येन कर्णपर्य्यन्तमाकृष्टे च। 'आय-यकण्णाययं उसुं करेइ' आयतः-आकृष्टः सामान्येन स एव कर्णायतः आकर्णमाकृष्टः आयतकर्णाय-तस्तम्। भग० ७ श० ९ उ०।

आयतचक्खु- त्रि० *[आयत्तचक्षुष्]*

आयतं-दीर्घमैहिकामुष्मिकाऽ-पायदर्शि चक्षुः-ज्ञानं यस्य स आयतचक्षुः। ऐहिकामुष्मिका-ऽपायदर्शिज्ञानोपेते, आचा० १ श्रु० २ अ० ५ उ०।

आयत्तचरित्त- न० *[आयतचरित्र]*

आयतं-चरित्रं सम्यक् चरित्रं मोक्षमार्गप्रसाधकम्। मोक्षमार्ग-प्रसाधके चरित्रे, सूय०।

'आदाणीयम्मि आयतचरित्तं'। सूय०१ श्रु०१ अ०

आयतजोग- पुं० *[आयतयोग]*

आयतः-संयतो योगोमनोवाक्कायलक्षणः, आयतश्चासौ योग-श्चायतयोगः। ज्ञानचतुष्टयेन सम्यग् योगप्रणिधाने, आचा०।

'आयतजोगताए सेवित्था'। आचा० १ श्रु० ९ अ० ४ उ०।

'सयमेव अभिसमागम्म आयय-जोगमायसोहिए' आयत-योगम्-सुप्रणिहितं, मनोवाक्कायात्मकं विधाय। आचा० १ श्रु० ९ अ० ४ उ०।

आयतट्ठ- पुं० *[आयतार्थ]*

आयतः-अपर्य्यवसानान्मोक्ष एव स चासावर्थश्चायतार्थः। मोक्षरूपेऽर्थे, आयतः-मोक्षः अर्थः-प्रयोजनं यस्य दर्शना-दित्रयस्य तत्तथा। दर्शनादित्रये, 'आयतट्ठं समं समणुवासेज्जा' आयतः-अपर्य्यवसानान्मोक्ष एव स चासावर्थश्चायतार्थोऽतस्तं, यदि वा-आयतो मोक्षः-अर्थःप्रयोजनं यस्य दर्शनादित्रयस्य तत्तथा। आचा० १ श्रु० २ अ० २ उ०।

आयतट्ठि- पुं० *[आयतार्थिन्]*

मोक्षार्थिनि, दश० ५ अ० २ उ० १५ ।

आयतट्ठित- पुं० *[आयतार्थिक]*

आयतो-दीर्घःसर्वकालभवनान्मोक्षस्तेनार्थिकस्तदभिलाषी। मोक्षाभिलाषिणि सूय०।

'आयपरे परमायतट्ठिए'।।१ ५।। सूय०१ श्रु०१ अ०२ उ०।

आयतण- न० *[आयतन]*

गृहे, 'सव्वओ सहाऽऽययणं' आयतनंगृहम्। तं०।

गुणाऽऽश्रये, पण्हा० १ अ०।

'इच्चेयं विमोहाऽऽयतणं' विगतमोहानामायतनम्-आश्रयः। आचा० १ श्रु० ८ अ० ४ उ०।

स्थाने, संथा०। आचा०। निसि०।

'दस्सुगाऽऽयतणाणि' दस्यूनां चौराणामायतनानि-स्थानानि। आचा० २ श्रु० १ चू० ३ अ०१ उ०।

'एयाइं आयतणाइं' एतानि स्त्र्यादीन्यायतनानि-उपभोगा-स्पदभूतानि वर्त्तन्ते। आचा०।

देवादिवन्दनस्थाने, । पण्हा०१ अ०

'नयरस्स पुव्वेण जक्खस्स आययणं कयं' आव०म०।
'भगवतो निव्वाणं गयस्स आययणं काराविय भरहो अवज्ज-मागओ कालेण य अप्पसोगो जाओ' आव० म० १ अ०४ ।
देवकुलपार्श्वापवरके च। आयतनानि-देवकुलपार्श्वापवरकाः। दशा०१ श्रु०१० अ० आचा०।
भावश्रावकस्य शीलवत्स्वरूपं द्वितीयलक्षणं व्याख्यानयन्नाह– 'आययणं खु निसेवइ' आयतनं-धार्मिकजनमीलनस्थानम्, उक्तं च ओघनि०।
कर्मोपादानस्थाने, आचा०।
'इच्चेयाइं आयतणाइं'। इत्येतानिपूर्वोक्तान्यायतनानि कर्मो-पादानस्थानानि। आचा० १ श्रु० १ चू० १ अ० ११ उ०।
'कम्मायणेहिं' कर्मणां ज्ञानवरणादीनाम् आयतनानि-आदानानि वा; बन्धहेतव इत्यर्थः। अंत० ६ वर्ग०१५ अ०।
आङभिविधौ समस्तपापारम्भेभ्य आत्मा आयत्यते-आनियम्यते तस्मिन् कुशलानुष्ठाने वा यत्नत्वात् क्रियते इत्यायतनम्। ज्ञानादित्रये, आचा०।
'इक्कायतणयस्स इह विप्पमुक्कस्स नऽत्थि मग्गे विरतस्स' आचा० १ श्रु० ५ अ० २ उ०।
आयतनं द्विधा-द्रव्यतो, भावतश्च। तत्र द्रव्यतो–जिनगृहादि, भावतस्तु–ज्ञानदर्शनचारित्रधराः साध्वादयः। ओह०।

आयतणाइ- न०*[आयतनानि]*
दोषरहितस्थानानि, वसतिगतानि, संस्तारकगतानि ।आचा०।
कर्मोपादानस्थानानि। आचा० ।
उपभोगास्पदभूतानि। आचा०।
दोषस्थानानि। आचा० ३८६।
बन्धहेतवः।ठा०३५१।

आयततर- त्रि०*[आयततर]*
'आयतरे सिया' आङभिविधौ सामस्त्येन यत् आयतः अयमनयोरतिशयेनायत आयततरः। यत्नेनाध्यवसिते, आचा० १ श्रु० ८ अ० ८ उ०।

आयतसंठाण- न०*[आयतसंस्थान]*
संस्थानभेदे, आयतम्-दीर्घं यथा दण्डस्येति। उत्त० १ अ० ।

आयतसंठाणपरिणय- त्रि०*[आयतसंस्थानपरिणत]*
आयतसंस्थानभाजि, पन्न०।
'आयतसंठाणपरिणया' आयत-संस्थापरिणता दण्डादिवत्। पन्न० १ पद०।

आयपइट्ठिय- त्रि०*[आत्मप्रतिष्ठित]*
स्वरूपप्रतिष्ठिते, 'आयपइट्ठिया' ठा० ३ ठा० ३ उ०।
क्रोधभेदे, ठा० २ ठा० ४ उ०।

आयपण्ण- त्रि०*[आगतप्रज्ञ]*
आगता-उत्पन्ना प्रज्ञा यस्यासावागत-प्रज्ञः। संजातकर्त्तव्याऽ-कर्त्तव्यविवेके, सूय०।
'समितीसु गुत्तीसु य आयपण्णे'। सूय०१ श्रु० १४ अ०।

आयमण- न०*[आचमन]*
निर्लेपने, निर्लेपनम्। बुह० १ उ० ३ ।
आयमणं-णिल्लेवणं। निसि०४ उ०।
पुरीषोत्सर्गानन्तरं शौचकरणे च। पिंड०।
'तिहिं आयमणं अदूरम्मि'। ओह० ३१७ ।

आयममाण- त्रि०*[आचमत्]*
आचमनं कुर्वति, ठा० ५ ठा० २ उ० ।४१४ सूय०।

आयमिणी- स्त्री०*[आयमिनी]*
विद्याभेदे, सूय०।
'आयमिणीं एवमाइआओ विज्जाओ अन्नस्स हेउं पउंजंति' सूय० २ श्रु० २ उ०।

आयरंत- त्रि०*[आचरत्]*
अङ्गीकुर्वति, उत्त०।
'तमायरंतो ववहारं' । कुर्वति, उत्त० १ , अ० ४२ ।
विदधति च। उत्त०।
नाचरेत्-नाभिदध्यात् (उत्त० १ अ०)
न समाचरेत् न विदध्यादिति संबन्धः। सूय०२ श्रु०५ अ०।

आयरक्ख- पुं०*[आत्मरक्ष]* आत्मरक्षके, ठा०।

आयरक्खिय- त्रि०*[आयरक्षित]*
आयो वा- ज्ञानादिलाभो रक्षितोऽनेनेत्यायरक्षितः। ज्ञानादि-लाभस्य रक्षके, उत्तव। उत्त० २ अ०।

आयरण- न०*[आचरण]*
अनुष्ठाने, ठा०।
आचरणमाचारः। ठा० ८ ठा०।
विधाने सूय०।

आयरण- न०*[आदरण]*
मायाविशेषात्कस्यापि वस्तुनोऽभ्युपगमे, भग०१२ श०५ उ०।

आयरणकप्प- पुं०*[आचरणकल्प]*
उत्सर्गाऽपवादयोः स्वस्थाने सेवनाकर्तव्यतायाम्, निसि०।

आयरणया- स्त्री०*[आदरणता]*
यतो मायाविशेषादादरणम्-अभ्युपगमं कस्यापि वस्तुनः करो-त्यसावादरणम्, आदरणता। मायाविशेषे, आचरणताऽप्यत्रैत। भग० १२ श० ५ उ०।

आयरिय- पुं०*[आचारिक]*
स्वकीयमतोद्भवानुष्ठानसमूहे, उत्त०।

आयरिय- न० *[आचरित]*

आचरणे, उत्त० ।

आचरणमाचरितम्। तत्तत् क्रियाकलापः। उत्त०६ अ०९।

आसेवने, उव०४० ।

'अवज्झाणायरिअं' आचरितः-आसेवितः। उपा० १ अ०।

आयरिय-१ पुं० *[आचार्य्य]*

आचर्य्यते असावाचार्य्यः सूत्रार्थावगमार्थं ममुक्षुभिरासेव्यते इत्यर्थः। आव०४ अ०। दशा०।

'आयरियाणं' आ-मर्य्यादया तद्विषयविनयरूपया चर्य्यन्ते-सेव्यन्ते जिनशासनार्थोपदेशकतया तदाकाङ्क्षिभिरित्याचार्य्याः। आव० म० ।

आङित्यभिव्याप्त्या मर्यादया वा स्वयं पञ्चविधाचारं चरत्या-चरयति वा परान्, आचर्यते वा, मुक्त्यर्थिभिरासेव्यत इति। उत्त० ३७।

आ–मर्यादया वा चारो–विहार आचारः तत्र यः स्वयंकरणात् प्रभाषणात्प्रदर्शनाच्च साधुः सः । भग०।

शिल्पोपदेशदाता। भग०। औप०।

अनुयोगाचार्यः। उत्त०। वव०।

अनुयोगधरः। आचा० ।

सपरसिद्धंतपरूवगो। निसि०

आचार्यः। पन्न०।

आयरिय-२ पुं० *[आर्य]*

आरात् हेयधर्मेभ्यो याताः प्राप्ता उपादेयधर्म्मैरित्यार्य्याः। । पन्न० पद०१ ।

आराहरे याता गताः सर्वहेयधर्मेभ्य इत्यार्य्याः। सूय० १ श्रु० ३ अ०।

आराद् यातः पापकर्म्मेभ्य इति। भग० ९०।

आराद्यातं सर्वकुयुक्तिभ्य इत्यार्यं–तत्त्वं तत्। उत्त०।

आर्यम्–आर्याणां कर्त्तव्यं आचार्यं वा, मुमुक्षुणा यदाचरणीयं ज्ञानदर्शनचारित्रम्। सूय० १८४।

आयरिय-३ पुं० *[आचरित]*

आचरितम्, आसेवितं। आव०।

आचरणमाचरितं तत्तक्रियाकलापः। उत्त०।

आयरियउवज्झाय- पुं० *[आचार्य्योपाध्याय]*

आचार्य्यसहित उपाध्याय आचार्य्योपाध्यायः। भग० २३२।

आचार्य्य उपाध्यायश्चेत्यर्थः आचार्य्यश्च स एवोपाध्यायः आचार्य्योपाध्यायः आचार्य्यरूपे उपाध्याये, स हि केषां चिदाचार्य्यः केषांचिद् उपाध्याय इति। वव० ३ उ०।

आचार्येवोपाध्यायः। निसि० ।

आयरियखेत्त- न० *[आर्यक्षेत्र]*

अर्द्धषड्विंशतिजनपदोपलक्षिते राजगृहमगधादिके, सूय०१ श्रु० ५ अ०।।

आयरियट्ठाण- न० *[आर्यस्थान]*

सर्वतो विरत्यादौ, संयमस्थाने 'जासा सव्वतोविरई एसट्ठाणे अणारंभट्ठाणे आरिए', तत्र चेयं विरतिः सम्यक्त्वापूर्विका सावद्यारम्भान्निवृत्तिः सावद्यानुष्ठानरहितत्वात् संयमस्थानम् तत्रचैतत्स्थानमार्यस्थानम्। सूय० २ श्रु० २ अ०।

आयरियदंसि- पुं० *[आर्य्यदर्शिन्]*

आर्य्यं प्रगुणं न्यायोपपन्नं पश्यति तच्छीलश्चेत्यार्यदर्शी। न्यायोपपन्नदर्शिनि, आचा०२ अ०५ उ०।

आयरियदेस-पुं० *[आर्यदेश]*

मगधाद्यर्द्धषड्विंशतिजनपदेषु, आर्यदेशसमुत्पन्नः शुद्धजाति-कुलान्वितः आव०।

आयरियधम्म- पुं० *[आर्यधर्म]*

आर्यस्य धर्मः। सदाचारे श्रुतचारित्ररूपे धर्मे च (वेइज्ज णिज्जरापेही आरियं धम्ममणुत्तरं०) आरद्धेययधर्मेमर्यो यात इत्यार्यस्तं धर्म्म श्रुत चारित्ररूपमिति उत्त० २ अ०।।

आयरियपएसिय- त्रि० *[आर्यप्रदेति]*

तीर्थकरप्रणीते, एवं से धम्मे आयरियपएसिए।आचा० १ श्रु० ६ अ० ४ उ०।

आयरियपण्ण- पुं० *[आर्यप्रज्ञ]*

आर्या प्रज्ञा यस्य स आर्यप्रज्ञः। श्रुतविशेषितमतौ, आचा० १ श्रु० २ अ० ५ उ०।

आयरियपरिभावि- त्रि० *[आचार्य्यपरिभाविन्]*

आचार्य्यपरिभवकर्त्तरि। बुह०। निसि०।

आयरियभासिय- न० *[आचार्य्यभाषित]*

प्रश्नव्याकरणदशायाश्चतुर्थेऽध्ययने, ठा०१० ठा०।।

आयरियमग्ग- पुं० *[आर्य्यमार्ग]*

आराद् यातः सर्वहेयधर्मेभ्य इत्यार्यो मार्गो निर्दोषः। पापलेश्याऽसम्पृक्ते मार्गे, (आरियं मग्गं असंपत्ता) सूय०२ श्रु०१ अ०।।

सदनुष्ठानरूपे मार्गे, जैनेन्द्रशासन-प्रतिपादिते मोक्षमार्गे च सूय०१ श्रु० ३ अ०।

(जे तत्थ आरिअं मग्गं परमं च समाहिए)सूय० २श्रु० ३ अ०

आयरियविज्जा- स्त्री० *[आचार्यविद्या]*

द्वाचत्वारिंशत्तमे पुरुष कला-भेदे, कल्प०।।

आयरियविप्पडिवत्ति- न० *[आचार्य्यविप्रतिपत्ति]*

बंधदशायाः पञ्चमेऽध्ययने, ठा०१० ठा०।

आयरियवेयावच्च- न० *[आचार्य्यवैयावृत्य]*
आचार्यस्य वैयावृत्यं भक्तपानादिभिरुपष्टम्भः।
वैयावृत्यभेदे, उव०।

आयरियव्व- त्रि० *[आचरितव्य]*
अनुष्ठये। (जं जम्मि होइ काले, आयरियव्वं स कालमायारो)।
निसि० १ उ०।।

आयरियव्वेय- पुं० *[आर्य्यवेद]*
तीर्थकरस्तुतिरूपे, श्रावकधर्मप्रतिपादके च वेदे, आर्यान् वेदान् कृतवाँश्च स भरत एव तत्स्वाध्यायनिमित्तमिति तीर्थकरस्तुति- रूपान् श्रावकधर्मप्रतिपादकाँश्च अनार्य्यास्तु पश्चात्सुलभा याज्ञ- वल्क्यादिभिः कृता इति० आव० २ अ०। आव० म० २ अ०।

आयारियादेस- पुं० *[आचार्यदेश]*
आचार्य्यकथने, (आयरियदेसावाहारिण्ण अत्थेण) आचार्य्या- देशात् आचार्य्यकथनात् अवधारितेनेति। वव० ३ उ०।

आयसभायण- न० *[आयसभाजन]*
लोहभाजने, (तोयमिव ना लियाए, तत्तायसभायणेदरत्थवा) तप्तं च तदायसभाजनं च लोहभाजनमिति०। आव०४ अ०।

आयाइ- स्त्री० *[आजाति]*
आजननमाजातिः सम्मूर्छनगर्भोपपाततो जन्मनि, ठा०१० ठा० आजायतेऽस्यामित्याजातिः मनुष्यादिजातौ। तथा चाचाराङ्गे आचारैकार्थकानाधिकृत्य इदानीमाजातिराजायंते तस्यामित्या- जातिः। साऽपि चतुर्द्धा व्यतिरिक्ता मनुष्यादिजातिः भावाजा- तिस्तु ज्ञानाद्याचारप्रस्तुतोऽयमेवाचार इति।आचा०१अ०१ उ०

आयाइ- स्त्री० *[आयाति]*
आगमने-स्थानान्तरगमने च (आयातिर्वा गतिरिति) ठा० ३
आयातिर्गर्भान्निष्क्रम इति ठा०२
उत्तरकाले च दशा०।।

आयाइट्ठाण- न० *[आजातिस्थान]*
आजननमाजातिः सम्मूर्छनगर्भोपपाततो जन्म तस्याः स्थानम्। संसारे, ठा० १० ठा०।

आयाइट्ठाण- न० *[आयातिस्थान]*
उत्तरकालस्य स्थाने (आयातिट्ठाणं सम्मत्तं) आयाइट्ठाणेति आयतिर्नाम उत्तरकालस्तस्य स्थानं पदमिति। दशा०।

आयाइट्ठाणज्झयण- न० *[आजातिस्थानाध्ययन]*
आजननमाजातिः सम्मूर्छनगर्भोपपाततो जन्म तस्याः स्थानं सं सारस्तत्सनिदानस्य भवतीत्येवमर्थप्रतिपादनपरमाजातिस्थान- मुच्यत इति। आचारदशाया नवमेऽध्ययने। ठा० १० ठा०।।

आयागर- पुं० *[अयआकर]*
लोहाकरे। अयआकरो लोहाकरो यत्र लोहं ध्मायत ठा० ८ ।

आयाम- न० *[आचाम]*
अवस्रावणे पानकभेदे 'आयाममवस्त्रावणमिति'। बुह० । आव० ६ अ०। आव० म० । पिंड०। ठा० ३ ठा० । (आयामंवासोवीरंवासुद्धवियडंवा तहप्पगारं-पाणगजातं पुव्वा- मेव आलोएज्जा) आयामाम्लमवश्यानमिति आचा०श्रु०१ चू०

आयाम- पुं० *[आयाम]*
दैर्घ्ये, ठा०२ ठा०। निसि०उ०।आव० म०। रा०। जीवा०। 'आयामेणं दुवेयणं तीसे वाहाओ अण्णवट्ठित्ताओ भवति' आयामश्चदक्षिणेत्तरायततया प्रतिपत्तव्यो विष्कम्भः पूर्वापरा- यततयोति। सूर० ४ प्रा०।

आयामग- न० *[आचामक]*
आयाममेवायामकम् अवस्रावणके पानकभेदे-(आयामगं चेव जवोदगं च) आयामकं धान्यस्यावस्रावणम्। उत्त० १५ अ०।

आयामसित्थभोइ- त्रि० *[आचामसिक्थभोजिन्]*
अवस्रावणगतसिक्थभोक्तरि, तथा चौपपातिके, 'रसपरित्याग- भेदानधिकृत्य- आयामसित्थभोइत्ति' उव०।

आयामेइत्ता- अव्य० *[आचम्य]*
आचमनं कृत्वेत्यर्थे, (परमण्णेणं माहणे आयामेत्था) आमेत्थत्ति, आचामितवान् तद्भोजन दानद्वारेणोच्छिष्टता- सम्पादनेन तच्छुद्ध्यर्थमाचमनं कारितवान् भोजितवानिति तात्पर्य्यम् भग० १५ श० १ उ०।
माहणे आयामइआयामेइत्ता स उत्तरोट्ठं मुंडं करेइ, भग० १५ श० १ उ०।

आयार-१ पुं० *[आचार]*
द्वादशाङ्ग्याः प्रथमेऽङ्गे । सम०।
आचार प्रतिपादको ग्रन्थोऽप्याचारः । सम०।
द्वादशानमप्यङ्गानां प्रथममङ्गमम् आचा० १ श्रु० १ अ० उ०

आयार-२ पुं० *[आचार]*
मर्य्यादायां चरणं चारः मर्य्यादया कालनियमादिलक्षणया चार आचारः आव० म०।।
आचारो ज्ञानाचारादिः पञ्चधा आ मर्य्यादया वा चारो-विहार आचारः । भग० १ श० १ उ०। दशा० । विशे० ।
'आमज्जायावयणो, चरणं चारोत्तितीए आयारो। सोहोइ नाणदंसण, चरित्ततववीरियवियप्पो'। आनुष्ठाने ठा०४ ठा०।
आचारणमाचारोऽनुष्ठानमिति, सूय० २ श्रु०५ अ०।
आचारो -मोक्षार्थमनुष्ठानविशेष, इति० आचा० १ अ० ३ उ०
आचारो ज्ञानादिविषयमनुष्ठानमिति नाया०।
आचारः श्रुतज्ञानादिविषयमनुष्ठानं कालाध्यनादीनि । भग० २ श० १ उ० ।

आचरणीये आचारे । आव० ।
आचर्य्यते गुणविवृद्धये इत्याचारः । आचारः साधुसमाचार इति। ठा० २ ठा० ।
आचारोलोचाऽस्नानादिसुष्टुक्रियारूप इति। ठा०४ ठा० दशा० आयारे चेव भावतेणेय।। आचारे साधुसामाचार्य्या विषये इति।पण्हा० अ०।
आचारस्तत्परिहरणपरिष्ठापनरूप इति। ठा० ७ ठा०।
आचारः शास्त्रविहितो व्यवहार इति। गच्छा०।। आतु०।
आचरणमाचारः। आचर्य्यते इति वाऽऽचारः। पूर्वपुरुषाचरिते ज्ञानाद्यासेवनविधौ, नं०।
शिष्टाचारतो ज्ञानाद्यासेवनविधिरिति। । अनुओ०।
साध्वाचरितो ज्ञानाद्यासेवनविधिरिति भावार्थः। सम०।।

आयारउवगच्छण- न० *[आचारोपगमन]*
मायाकरणरूपे योगे, आयारोवगयशब्दे कथा। आव०४ अ०।

आयारंग- न० *[आचारंग]*
द्वादशाङ्ग्याः प्रथमेऽङ्गे । सम०।

आयारंगचूला- स्त्री० *[आचाराङ्गचूडा]*
आचाराङ्गस्य द्वितीयेऽग्रश्रुतस्कन्धे प्रथमाचारचूलेति आचा०।

आयारकुसल- पुं० *[आचारकुशल]*
आचारेण ज्ञानाद्याचारेण कर्म-कुशलः कर्मोच्छेदकः आचार-विषये सम्यक् परिज्ञानवति, आचारे ज्ञातव्ये प्रयोक्तव्ये वा कुशलो दक्ष आचारकुशलः। आचारज्ञाने आचारप्रयोगे वा दक्षे, च। वव० ३ उ० ।

आयारक्खेवणी- स्त्री० *[आचारक्षेपणी]*
आचारो लोचाऽस्नानादिस्तत्प्रकाशनेनाक्षेपणी आचाराक्षेपणी। आक्षेपणी-कथाभेदे। ठा० ४ ठा०।।

आयारगोयर- पुं० *[आचारगोचर]*
आचारो मोक्षार्थमनुष्ठानविशेषस्तस्य गोचरो विषय आचार-गोचरः आचा० १ श्रु० ७ अ० १ उ०।
आचारः साधुसमाचारस्तस्य गोचरो विषयो व्रतषट्कादिरा-चारगोचरः साधुसमाचारविषये, व्रतषट्कादिके, आचारश्च ज्ञानादि विषयः पञ्चधा गोचरश्च भिक्षाचर्य्येत्याचारगोचरं ज्ञानाचारादिके, भिक्षाचर्य्यायां च। न०।
सेहं आचारगोयरं ग्रहणयाए अब्भुट्ठेयव्वं भवइ ठा० ८ ठा० इह विभक्तिविपरिणामादाचारगोचरस्य ग्रहणतायां शिक्षण शैक्षमाचारगोचरं ग्राहयितुमित्यर्थः।। ठा० ८ ठा०।

आयारग्ग- न० *[आचाराग्र]*
आचारांगस्य द्वितीये श्रुतस्कंधे तद्वक्त-व्यताऽचारांगटीकायाम्। (आचारमेरोर्गदितस्यलेशतः, प्रवच्मिचच्छेषिकचूलिकागतां। प्रारिप्सितेऽर्थे गुण वान् कृती सदा, जायेत निः शेषमशेषि-तक्रियः १)
उक्तो नवब्रह्मचर्याध्ययनात्मक आचारश्रुतस्कंधः सांप्रतं द्वितीयोग्रश्रुतस्कंधः समारभ्यते। अस्य चायमभिसंबंधः उक्तम् प्राचारपरिमाण प्रतिपादयता तद्यथा (णवबंभचेरमइओ-अट्ठारसपयसहस्सिओ वेओ हवइ य स पंचचूलो बहु २ अयरो-पयग्गेणं) तत्राद्ये श्रुतस्कंधे नवब्रह्मचर्याध्ययनानि प्रतिपा-दितानि तेषु च न समस्तोऽपिविवक्षितोऽर्थोऽभिहितोऽपि संक्षेपतोऽतोऽभिहितार्थाभिधानाय संक्षेपोक्तस्य च प्रपंचाय तदग्रभृताश्चतस्रश्चूडा उक्ताः अनुक्त-संग्रहिकाः प्रतिपाद्यन्ते।

आयारचूला- स्त्री० *[आचारचूला]*
उक्तशेषानुवादिनी चूडा आचारस्य चूला आचार चूला। आचाराग्रे आचारांगस्य द्वितीयेऽग्रश्रुतस्कंधे, आचा०अ०१ उ० आचाराग्राणि चूलिका इति आचा०।
आचारांगस्यद्वितीयेग्रश्रुतस्कंधे पञ्चचूडाः सप्ताध्ययनात्मिका द्वितीया सत्तसत्तिकया तृतीया भावना चतुर्थी विमुक्तिः पञ्चमी निशोथाध्ययनमिति। आचा०अ०१ उ०१ ।।
एतश्चाचारश्रुतस्कंधस्य नवभ्यो ब्रह्मचर्याध्ययनेभ्यो निर्व्यूढा इति आचाराग्रशब्दे। आचा० ।

आयारचूलिया- स्त्री० *[आचारचूलिका]*
आचारचूलायाम्, आयारस्सणं भगवओ सचूलीयागस्स पञ्चा-सीइ उद्देसणकाला सम० ८५ सम०।।
आचारांगस्य विमुक्त्यभिधाने सर्वांतिमेऽध्ययने, च तिण्हं गमिपिडगाणं, आयारचूलियावज्जाणं सत्तावन्नं अज्झयणा प० सम० ५७ सम०।।
आचारस्य श्रुतस्कंधद्वयरूपस्य प्रथमाङ्गस्य चूलिका सर्वान्तिम-ध्ययनं विमुक्त्यभिधानमाचारचूलिका तद्वर्जानामिति सम० ।

आयारटीगा- स्त्री० *[आचारटीका]*
शीलंगाचार्य्यविरचितायामाचारांगव्याख्यायाम्,
तथाचाचारांगटीकायाम् आचारटीकाकरणे। 'आचारशास्त्रं सुविनिश्चितं यथा, जगाद वीरो जगते हिताय यः। तथैव किञ्चिद्वदतः स एव मे, पुनातु धीमान् विनयार्पिता गिरः।। शस्त्रपरिज्ञाविवरण, मतिबहुगहनञ्चगन्धहस्तिकृतं। तस्मात् सुखबोधार्थं, गृण्हाम्यहमञ्जसा सारम्। आचा०अ०१ उ०१ ।

आयारट्ठ- त्रि० *[आचारस्थ]*
आचारे स्थित आचारस्थः ज्ञानाचारादि-पंचविधाचारयुक्ते।। 'नाणंमि दंसणंमिय, तवे चरित्तेय समणसारमि। न च एत्ति जो ठवेउं, अप्पाणं गणं न गणहारी। एसगणहरमेरा, आयार-त्था-णवण्णिता सुत्ते'। पंच०भा०।।

एसा गणधरमेरोर्मर्य्यादा सीमा इत्यर्थः (आयारट्ठाणंति पंचविहे आयारे जुत्ताणं) आचारे स्थित आचारस्थः तेषां वर्णिता स्तत्र प्रणीता इत्यर्थः। पं०चू०।।

आयारणिज्जुत्ति- स्त्री० *[आचारनिर्युक्ति]*

निर्युक्तानां सूत्रेऽभिधेय तथा व्यवस्थापितानामर्यानां युक्तिर्घटना विशिष्टा योजना निर्युक्तियुक्तिरेतस्मिंश्च वाच्ये युक्तशब्दलोपान्निर्युक्तिरित्युच्यते। सम० १ सम०

आचारस्य निर्युक्तिराचारनिर्युक्तिः। आचार सूत्रार्थानां विशिष्टयोजनायाम्, तथात्य समवायांगे। आचारांगमधिकृत्य 'संखेज्जाओणिज्जुत्तिओ' सम०१ सम०।

आचारांग निर्युक्तिश्च भद्रबाहुस्वामिना रचिता।। तथाचारांगटीकायां भद्रबाहुस्वामिनमधिकृत्य। स च पूर्वमावश्यक निर्युक्तिं विधाय पश्चादाचारांगनिर्युक्तिं चक्रे तथाचोक्तं (आवस्सयस्स दस कालियस्स तह उत्तरज्झयमायारत्ति) आचा० १ श्रु० अ० १ उ०१ ।

आयारतेण- त्रि० *[आचारस्तेन]*

विशिष्टाचारवत्तुल्यरूपे 'आयार-भावतेणेय कुव्वइ देवकिव्विसं दश० अ०५ उ०२।।

आयारदंसण– न० *[आचारदर्शनम्]*

प्रत्युपेक्षणादिक्रियादर्शनम्। आव० ४४८।

आयारदशा- स्त्री० *[आचारदशा]*

आचरणमाचारो ज्ञानादिविषयः पंचधा। आचारप्रतिपादनपरा दशा आचारदशा। दशाभेदे, दशाध्ययनात्मिका-आचारदशा दशाश्रुतस्कंध इति या रूढेति ठा० १० ठा० ।

अङ्गदशा। अण्हावि हु उ बासगा, दिण्ण तेण्णतु विसेसो। आयारदशा तुइमो, जेणेत्थं वण्हिया यारो। पंच०भा०। आचारदशानामध्ययनविभागमाह। ठा०१० ठा०।

आयारपकप्प- पुं० *[आचारप्रकल्प]*

आचार एवाचार प्रकल्पः क्रिया आचारक्रियायाम्,आव०४ अ०

आयरणं आयारो सो य पञ्चविहो– णाणदंसणचरित्ततव-वीरियायारो य, तस्य पकरिसेणं कप्पणा–सप्तभेद प्ररूपणे त्यर्थः। निसि० ४।

आचार–प्रथमाङ्गं तस्य प्रकल्पः–अध्ययनविशेषो निशीथ–मित्यपराभिधानं, आचारस्य वा–साध्वाचारस्य ज्ञानादिवि–षयस्य प्रकल्पो व्यवस्थापनमित्याचारप्रकल्पः। सम०। उत्त०। प्रत्याख्यानपूर्वस्य विशतितमं प्राभृतं। आचा०।

आयारपकप्पधर- पुं० *[आचारप्रकल्पधर]*

निशीथाध्ययनधारिणि। गच्छा०१ ।

निशीथाध्ययनसूत्रार्थधरे, च वव० ३ उ० । पंच०चू०।

आयारपकप्पिय- पुं० *[आचारप्रकल्पिक]*

आचारप्रकल्पाऽभिधानाध्ययनधारिणि, वव०५ उ०।

आयारपणिहि- पुं० *[आचारप्रणिधि]*

आचारप्रणिधाने तत्प्रतिपादके दशवैकालिकस्य स्वनामख्यातेऽष्टमेऽध्ययने, च। दश० ८ अ०।

आयारपण्णत्तिधर- पुं० *[आचारप्रज्ञप्तिधर]*

आचारधरे, प्रज्ञप्तिधरे, च। दश० ८ अ०

आयारपत्त- त्रि० *[आचारप्राप्त]*

ब्रह्मव्रताद्याचाराऽपन्ने, तथा च तण्डुलवैकालिके। स्त्रियोऽधिकृत्य (दूषणं आयारपत्ताणं दूषणं कलंकः केषां आचार-प्राप्तानां ब्रह्मव्रताद्याचारापन्नानामिति। तं०।

आयारपभासण त्रि० *[आचारप्रभाषण]*

कालनियमाद्याचारव्याख्यानम्। आव० ४४८।

आयारपरक्कम- पुं० *[आचारपराक्रम]*

आचारे ज्ञानादौ पराक्रमः प्रवृत्तिबलं यस्य स आचारपराक्रमः। ज्ञानाद्याचारप्रवृत्तिबलो-पेते, दश० चू०२।

आयारफल– त्रि० आचारफल

मुक्तिलक्षणम् । उत्त० ।

आयारभंडग- न० *[आचारभंडक]*

पात्रपटलरजोहरणादिके। सव्वोवगरणमाया य साहू आयार-भंडगेण समं आचारभंडकपात्रम् ओह०।

आचारभाण्डकं–पात्रकम्। ओह०।

आयारभंडसेवि- पुं० *[आचारभाण्डसेविन्]*

आचारः शास्त्रविहितो व्यवहारस्तेन भाण्डमुपकरणमाचार-भाण्डम् तत्सेवितुं शीलं यस्य स आचारभाण्डसेवी। शास्त्र-विहितव्यवहारेणोपकरणसेविनि, अणायारभंडसेवी जन्ममरण अणुबन्धाणि आतु०।

आयारमट्ठ- त्रि० *[आचारार्थ]*

ज्ञानाद्याचारनिमित्ते । दश० अ०९ उ० ३ ।

आचारार्थं ज्ञानाद्याचारनिमित्तं विनयमुक्तलक्षणं प्रयुंक्ते करोतीति। दश०।

आयारवं- त्रि० *[आचारवत्]*

ज्ञानाऽऽसेवनाभ्यां पञ्चप्रकाराऽऽचारवति, । ठा० ८ ठा० ।

ज्ञानासेवनाभ्यां ज्ञानादिपञ्चप्रकाराचारयुक्ते, अयं हि गुणत्वेन श्रद्धेयवाक्यो भवति बुह०। भग० श० २५ उ० ७।

आचारवंतो ज्ञानाद्याचारसमन्विता इति दश० ९ अ० ३ उ०

आयारविणय- पुं० *[आचारविनय]*

आचारो व्रतिनां समाचारः स एव विनीयते अपनीयते कर्म्माऽनेनेतिविनय आचारविनयः विनयभेदे। दशा०

आयारसंवया- स्त्री० *[आचारसंपत्]*
आचारणमाचारोऽनुष्ठानम् तद्विषया स एव वा सम्पद्विभू-तिस्तस्य वा सम्पत् सम्पत्तिः प्राप्तिराचारसम्पत् ठा० ८ ठा० आचारो नाम प्रथममंगं तस्मिन् अधीते दशविधश्रमणधर्मो ज्ञातो भवति तस्मादाचा-राङ्गं यो भणति *तोऽर्थतः सम्पद्युक्तो भवति यः स आचार-सम्पत् । दश० अ०१ । उत्त०अ०१ ।
गणिसम्पत् भेदे। आचारसम्पच्चतुर्धा। संयमध्रुवयोगयुक्ता १ असंपग्रहः २ अनियतवृत्तिः ३ वृद्धशीलता ४ चेति। तत्र संयमश्चरणं तस्मिन् ध्रुवोनित्यो योगः समाधिस्तद्युक्तबा कोऽर्थः समंतोपयुक्ता १ असंपग्रहः समंतात् प्रकर्षेण जात्यादि प्रकृत लक्षणेन ग्रहणमात्मनोऽवधारणं सम्प्रग्रहस्तदभावोऽसंप्रग्रहो जात्याद्यनुत्सिक्ततेत्यर्थः २ अनियतवृत्तिरनियतविहाररूपाऽत्र वृद्धशीलता वपुषि मनसि च निभृतस्वभावता निर्विकारतेति यावत् । ठा० ८ ठा० । दश० ।

आयारसत्थ- न० *[आचारशास्त्र]*
आचाराङ्गे आचा० १ श्रु० १ अ० ।

आयारसमाहि- पु० *[आचारसमाधि]*
समाधि भेदे आचारसमाधिमाह। दशवैकालिके अ०९ उ०४। चतुर्थं विनयसमाधिस्थानम्। दश०।

आयारसुय- न० *[आचारश्रुत]*
आचारश्च श्रुतं च आचारश्रुतं द्वन्द्वैकद्भावः। आचारश्रुत-समाहारे। सूय० २ श्रु० ५ अ०।।

आयारसुयखंध- पुं० *[आचारश्रुतस्कंध]*
आचारांगस्य नवब्रह्मचर्याध्ययनामक आचारश्रुतस्कन्ध इति। आचाराङ्गार्द्धे आचा० २श्रु ० १ अ० ।

आयाराणुओग- पुं० *[आचारानुयोग]*
आचारस्यानुयोगोऽनुयोगः सूत्राध्ययनात्पश्चादर्थ कथनम्। आचाराङ्गस्यार्थकथने आचाराङ्गस्य सूत्राध्ययनात्पश्चादर्थ-कथने च । आचा० २श्रु ० १ अ० ।
(आचाराणुयोगे) अणोर्वालधीयसः सूत्रस्य महतार्थेन योगोऽ-नुयोगः। आचाराङ्गस्य महतार्थेन योगे च आचा०।

आयारोवगय- त्रि० *[आचारोपगत]*
चतुर्दशे योगसङ्ग्रहे। आयार विणययोवगएत्ति द्वारद्वयम्। आचारोपगतः स्यान्नमायां कुर्यादित्यर्थः। विनयोपगतः स्यान्नमानं कुर्यादित्यर्थ। सम० ३२ सम०।

आयास- पुं० *[आयास]*
पीडा। ओह०।
मनःप्रभृतीनां खेदः, परिग्रहस्य चतुर्विंशतितमंनाम। पण्हा०। लोहमयम्। भग० ।
खेदे। चिन्तायास निचि विपुलसालो चिन्ताश्च चिन्तनानि आयासाश्चमनः प्रभृतीनां खेदास्तएव पाठान्तरेण चिन्ताश-तान्येव निचिता निरन्तरा विपुला विस्तीर्णा शाला शाखायस्य सतयेति पण्हा० ५ अ०।

आयासलिवि- स्त्री० *[आयासलिपि]*
ब्राह्यालिपेरष्टादशसुलेख्यविधानेषुपञ्चदशे लेख्यविधाने पन्न० पद० १ ।

आयाहिणं पयाहिणं– आदक्षिणप्रदक्षिणः,
आदक्षिणात्–दक्षिणहस्तादारभ्य प्रदक्षिणः–परितो भ्राम्यतो दक्षिण एव। सूर्य० ६। आव० १२४। जम्बू० १७। भग० ।

आर- पुं० *[आर]*
परभावापेक्षया इहभवेप्रव्रज्यापेक्षया गृहस्थत्वे मोक्षापेक्षया संसारे च सूय०१ श्रु० २ अ०
तन्मार्गे प्रपन्नस्त्वमपि कथं ज्ञास्यसि आरमिह भवं कुतो वा परं परलोकं यदि वा आरमिति गृहस्थत्वं परमिति प्रव्रज्या पर्यायम्। अथवा आरमिति ससारं। परमिति मोक्षं एवं भूतश्चान्योऽप्युभयभ्रष्टः (वेहसित्ति) अन्तराल उभयाभावतः स्वकृतः कर्मभिः कृत्यते पीड्यत इति। परलोकापेक्षया इहलोके नरकाद्येपेक्षया मनुष्यलोके च (लोग विदिता आरं पारं च सव्वं पभूवारिय सव्ववारं) सूय० १ श्रु० ६ अ०।
संसारः। बुह०।
इहभवः, गृहस्थत्वम्, संसारो वा । सूय०।
इहलोकाख्यं मनुष्यलोकं वा। सूय०।

आरओ- अव्य० *[आरतस्]*
इहलोके सूय० १ श्रु० ८ अ० ।

आरंभ - पुं० *[आरम्भ]*
प्रथमोत्पत्तौ (ओहिन्नाणारम्भो परिनिट्ठाणं च तं जेसु) येष्य-वधि) ज्ञानस्याऽरंभः प्रथमोत्पत्तिलक्षण इति। विशे०
(काऊण पञ्चमंगलमारंभोहोई सुत्तस्स) आव० म०।
हिंसादिकेसावद्यानुष्ठाने। सूय० १ श्रु० २ अ० । आचा० १३ अ० ७ उ० ।
जीवोपघातः,उपद्रवणं, सामान्येन वाऽऽश्रवद्वारप्रवृत्तिः। भग०
श्रावकस्याष्टमी प्रतिमा। आव०।
सावद्यानुष्ठानम्। आचा०।
पृथिव्याद्युपमर्दनं। ठा० ।
द्रव्योत्पादनव्यापाराः। उत्त० ।

आरंभकड- त्रि० *[आरंभकृत्]* (आरम्भेण कृते) आरंभकडेति वा सावज्जकडेत्ति वा पयत्तकडेत्ति वा (आरंभकृतमेतत् सावद्य-कृतमेतत्) प्रयत्नकृतमेतदिति।। आचा०अ०४ उ०१ ।

आरंभकरण- न० *[आरम्भकरण]*

व्यापारकरणे (हिंसालीय-अदत्ता-दाणमेहुणपरिग्गहारंभकरण-कारावणाणुमोदण-अट्ठविह-अणिट्ठकम्मपिंडितगुरु-भारक्कन्त दुग्ग-जलोघ-दूरनिबोलिज्जमाण-उम्मग्ग-निमग्गदुल्लहत्तलं) हिंसालीकादत्तादानमैथुनपरिग्रहलक्षणा ये आरम्भा व्यापारा: तेषां यानि करणकारणानुमोदननिति। पण्हा० ३ अ० ।

आरम्भणमारम्भः पृथिव्याद्युपमर्दनन्तस्य कृतिः करणम् स एव वा करणमित्यारम्भकरणम् करणभेदे ठा० ३ ठा०।

आरंभकहा- स्त्री० *[आरंभकथा]*

तित्तिरादीनामियत्तां तत्रोपयोग इत्यारंभकया विकथाभेदे सा च भक्तकथायास्तृतीयो भेद इति ।ठा० ४ ठा०।

छागतित्तिरमहिषारण्यकादिका हता अत्रेति प्रशंसनं द्वेषणं वा। भक्तकथायास्तृतीयभेदः। आव० ।

आरंभकिरिया- स्त्री० *[आरंभक्रिया]*

क्रियाभेदे आरंभक्रिया द्विविधा जीवारंभक्रिया अजीवा-रंभक्रिया तत्र जीवारंभक्रिया जीवानारभत्ते अजीवारम्भक्रिया अजीवानारभत इति। आव०चू०।

आरंभज्झाण- न० *[आरंभध्यान]*

आरम्भः परोपद्रवस्तस्यध्यानम् परोपद्रवध्याने (आरंभझाणे) आरंभः परोपद्रवस्तस्यध्यानम् कुरुडोल्कुरूडयोरिव द्वीपायनस्य एव वा तस्मिन् इति। आतु०।

आरंभग- त्रि० *[आरम्भक]*

सावद्यारम्भप्रवृत्ते आचाराङ्ग पंचमाध्ययनप्रथमोद्देश-कस्योद्देशार्थमधिकृत्य निर्युक्तौ, हिंसगविसयारंभो एगचरोत्ति न मुणि पढमगंमि।। आचा० १ अ० ५ उ०

हिनस्तीति हिंसक आरम्भणमारम्भो विषयाणामारम्भोऽस्येति विषयारम्भकः व्यधिकरणस्याऽपि गमकत्वात्समाभः ण्वुल-न्तस्य वा याजकादिदर्शनात्समासो विषयाणामारम्भको विषय यारंभक इति हिंसकश्च विषयारम्भश्चेति विगृह्य समाहारद्वंद्वः प्राकृतत्वात् पुल्लिंङ्गता अयमर्थो हिंसकः प्राणिनां विषयारम्भकश्च विषयार्थं सावद्यारम्भप्रवृत्तश्च न मुनिस्तथा विषयार्थमेक एव चरत्येकचरः स च न मुनिरित्येतदधिकारत्रयं प्रथमोद्देशके।। आचा० ५ अ० १ उ०।

सावद्यानुष्ठाने पुं० आरम्भगं चेव परिग्गहं च अविउस्सिया णिस्सिय आयदंडा आरम्भं सावद्यानुष्ठानमिति। सूय० २ श्रु० ६ अ०।

आरंभजीविन्- पुं० *[आरम्भजीविन्]*

आरम्भः सावद्यानुष्ठानं प्रमत्तयोगो वा तेन जीवितुं शीलम् एषामित्यारम्भजीविनः।सावद्यानुष्ठानप्रवते,आचा०५अ०१उ०

आरंभट्ठाण- न० *[आरम्भस्थान]*

सावद्यारंभाश्रये सूय०

असाहू तत्र पूर्वोक्तेषु येयं सर्वात्मना सर्वस्मात् अविरतिर्विरति परिणामाभावः। एतत्स्थानं सावद्यारम्भस्थानमाश्रयस्तदाश्रित्य सर्वाण्यपि कार्याणि क्रियंते यत एवमत एतदनार्यस्थान निःशूकतया यत्किंचनकारित्वाद्यावदसर्वदुःखप्रक्षीणमार्गोऽयं तथैकांतमिथ्यारूपो साधुरिति आरम्भ एव स्थानम् वस्तुआरंभस्थानम् प्रमत्तयोगलक्षणे वस्तुनि तथा च स्थानाङ्गे।। ठा० १० ठा०।

आरंभट्ठि- पुं० *[आरम्भार्थिन्]*

सावद्यारंभप्रवृत्ते, आरंभट्ठी अणुवयमाणे हण पाणे धायमाणे हणओ यावि समणुजाणमाणे ।आचा० ६ अ० ४ उ०।

आरम्भणिस्सिय- त्रि० *[आरम्भनिश्रित]*

आरम्भे हिंसादिके सावद्या-नुष्ठानरूपे निश्चयेन श्रिताः सम्बद्धा अध्युपपन्ना आरम्भनि-श्रिताः हिंसादिकसावद्यानुष्ठानेऽध्युपपन्ने (जे इह आरम्भणि-स्सिया सूय०श्रु०१ अ०२।। जे य आरम्भणिणिस्सया) ये चान्ये वर्णापसदानानारूपसावद्यारम्भ निश्रिता यंत्रपीडन निर्लांछनकर्माङ्गारदाहादिभिः क्रियाविशेषै जीवोपमर्द्दकारिण इति।। सूय०श्रु०१ अ०९।।

आरंभदोस- पुं० *[आरम्भदोष]*

क्रियाफले (पागोवजीविणोत्तिय लिप्पंतारंभदोसेणं) पाकोपजीविन इति कृत्वा लिप्यंते आरम्भदोषेणाहारक्रिया करणपलेनेच्यर्त्छइति। दश० १ अ०।

आरम्भपरिण्णाय- पुं० *[आरम्भपरिज्ञात]*

आरम्भः पृथिव्याद्युपमर्दन लक्षणः परिज्ञातस्तथैव प्रेंत्याख्यातो येन-सावारम्भपरिज्ञातः श्राद्धः अष्टम्या उपासकप्रतिमयोपेते श्राद्धे तथा च समवायाङ्गे। अष्टमी मुपासकप्रतिमामधिकृत्य (आरंभ-परिण्णाए) ।सम० ११ ।

आरंभः पृथिव्याद्युपमर्दनलक्षणः परिज्ञातस्तथैवप्रतया ख्यातो येनासावारंभपरिज्ञातः श्राद्धोऽष्टमीप्रतिमेति। सम०।

आरम्भपसत्त- त्रि० *[आरंभप्रसक्त]*

आरम्भेषु पृथिव्याद्युपमर्द्दनेषु प्रसक्तस्तत्परः आरम्भतत्परे गच्छा० २ ।।

आरंभय- त्रि० *[आरम्भज]*

आरम्भः सावद्यक्रियानुष्ठानं तस्माज्जातमारम्भजं सावद्यक्रिया-नुष्ठानेन जाते।। आचा० ३ अ० १ उ०

आरम्भः सावद्यक्रियानुष्ठानम् तस्माज्जातमारम्भजं किंतत् दुःखं तत्कारणं वा कर्म इदमिति प्रत्यक्ष गोचरापन्न मशेषारम्भप्रवृत्त प्राणिगणानुभूयमानमित्येतत् ज्ञात्वा परिच्छिद्य निरारम्भो

भूत्वाऽऽत्महिते जागृहि सावद्यक्रियानुष्ठानमारम्भजं किं तत्–दुःखमिदमिति सकलप्राणिप्रत्यक्षं तथा हि कृषिसेवा वाणिज्याद्यारम्भप्रवृत्तो यच्छारीरमानसंदुःख मनुभवति तद्वा चामगोचर इत्यतः प्रत्यक्षाभिधायिनेदमुक्तमितिरूपप्रदर्शने इत्येतदनुभवसिद्धं दुःखं ज्ञात्वा मृताचार्य्यधर्म्मविद ऋजवश्च भवन्तीति (पाणाइवाए दुविहे पण्णते तंजहा संकप्पओअ १ आरंभओअ २) आव० ।।

आरंभाज्जातस्तत्रारम्भो हलदंतो-लूखलादिखनन सूनाप्रकारस्तस्माच्छंखचंदनक पिपिलिका-धान्यगृहकारिकादि संघट्टन परितापापद्रावण लक्षण इति। आव०।

आरंभरय- त्रि० *[आरंभरत]*
सावद्यानुष्ठानरते।

आरंभवज्जय- त्रि० *[आरंभवर्जक]*
आरंभपरिहारके०वंचैका दशसूपासक प्रतिमास्वष्टमी प्रतिमेति पण्हा० ५ अ०।

आरंभविणय- पुं० *[आरंभविनय]*
आरंभविनय आरंभाभावः सविद्यते येषामिति मत्वर्थीयः आरंभाभाववति। आचा० ४ अ० २ उ० ।

आरंभसंभिय- त्रि० *[आरंभसंभृत]*
आरंभैः संभृता आरंभसंभृता आरंभपुष्टे। आरंभ सभिया कामा नते दुःखविनोयगाः।आरंभैः सम्यक्भृता आरंभपुष्टा आरंभाश्च जीवोपमर्दकारिणोऽतो नते काम संभृताः आरंभनिश्रिताः परगृहनिविष्टाः दुःखयतीति दुःखमष्टप्रकारं कर्म तद्विमोचकाभवंति तस्याऽपनेतारो भवंतीत्यर्थः। सूय० १ श्रु० ९ अ०।

आरंभसच्च- त्रि० *[आरंभसत्य]*
आरंभोजीवोपद्यातस्तद्विषयं सत्य मारंभसत्यं आरंभविषये सत्ये भग० ८ श० १ उ० ।

आरंभसच्चमगप्पओग- पुं० *[आरंभसत्यमनः प्रयोग]*
आरंभो जीवोपघातस्तद्विषयं सत्यमारभसत्यं तद्विषयो यो मनः प्रयोगः आरंभ सत्यविषयक मनः प्रयोगे भग० ८ श०१ उ०

आरंभसच्चमणप्पओगपरिणय-त्रि० *[आरंभसत्यमनःप्रयोग परिणत]*
आरंभो जीवोपघातस्तद्विषयं सत्यमारंभसत्यं तद्विषयो यो मनः प्रयोगस्तेनपरिणंत यत्तत् तया आरंभसत्यविषयक मनःप्रयोगपरिणते द्रव्यादो (जइसच्चमणप्पओग परिणए किं आरंभ सच्चमणप्पओग परिणए अणारंभसच्चमणप्पओग परिणए) भग० ८ श० १ उ० ।।

आरंभसत्त- त्रि० *[आरंभसक्त]*
आरंभे सावद्यानुष्ठानरूपे सक्तो लग्नः आरंभलग्ने। सूय० १ श्रु० १ अ०।

आरंभसमारंभ- पुं० *[आरंभसमारंभ]*
आरभ्यंते विनाश्यंते इत्यारंभाः जीवास्तेषां समारम्भ उपमर्द्दः अथवा आरंभः कृष्यादि व्यापा-रस्तेन समारंभो जीवोपमर्द्दः अथवाऽरंभो जीवाना मुपद्रवणं तेन सह आरंभः परितापन मित्यारंभः समारम्भः जीवोपमर्द्दः कृष्यादिव्यापारेण जीवोपमर्द्दे परितापसहित जीवानामुपद्रवेण च प्राणवधे च तथा च प्रश्नव्याकरणे प्राणवधस्य गौणनामा-न्यधिकृत्य आरंभः समारंभः प्राणवधस्थ पर्यायः इति पण्हा०। १ अ० ।

आरंभा–जीवास्तेषां समा–रंभः–उपमर्दः, अथवा आरंभः–कृष्यादिव्यापारस्तेन समा–रंभो जीवोपमर्दः, अथवा आरंभो–जीवानामुपद्रवणं तेन सह समारंभः, परितापनमिति वा, प्राणवधस्यैकादशपर्यायः। पण्हा० ५।

आरंभि- पुं० *[आरंभिन्]*
पापारंभान्वेषिणि। सूय० १ श्रु० ९ अ०

आरंभिया- स्त्री० *[आरंभिकी]*
आरंभः पृथिव्याद्युपमर्द्दः स प्रयोजनं कारणं यस्याः साऽऽरंभिकी। ठा० २ ठा०
क्रियाभेदे- भग० १ श० २ उ० ।

आरंभोवरय- त्रि० *[आरम्भोपरत]*
सावद्यानुष्ठानादुपरते। आचा० ५ अ० ५ उ० ।

आरक्ख- पुं० *[आरक्ष]*
राज्ञामात्मरक्षक, ठा० ३ ठा० ।

आरक्खिय- पुं० *[आरक्षिक]*
कोट्टपाल। बुह०।

आरग- पुं० *[आरक]*
आक्षेपे वव० १ उ०।

आरगय- त्रि० *[आरगत]*
आरद्भातस्थिते (आरगयाइं सद्दाइं सुणेइ नो परगयाइं) आराद्भागस्थितानिन्द्रियगोचरानित्यर्थः। भग०५ श० ४ उ०।

आरण- पुं० *[आरण]*
सकलविमान प्रधानारणावतंसकभिधान विमान विशेषोपलक्षित आरणः। अनुओ०।
कल्पभेदे, सम० ।
कल्पोपग वैमानिक देवलोकभेदे, विशे०
(आरणाअच्चुयाचेवइइकप्पो वग्गंसुरा) । उत्त० २२ अ०। पन्न० २ पद०।
कल्पोपगैकादशवैमानिकभेदः। पन्न०।

आरनाल- न० *[आरनाल]*
सौवीरे पानकभेदे। आचा० १ अ० ७ उ०

आरण्णय-१ न० *[आरण्यक]*
आवश्यके लौकिकं श्रुतमधिकृत्य लौकिकत्वारण्यकादि दृष्टव्यमिति। आव० म०।

आरण्णय-२ त्रि० *[आरण्यग]*
आरण्यं गछंतीत्यारण्यगाः आरण्यगंतरि। निसि०

आराण्णय-३ पुं० *[आरण्यक]*
अरण्ये वसत्याण्यकः कंदमूल फलाहारे तापसे। दशा०अ०१०
अरण्ये वसंत्यारण्यकास्ते च कन्दमूल-फलाहारास्सतः केवन वृक्षमूले वसंतिति सूय०२ श्रु० २ अ०।
अरण्येभवाआरण्यकाः तीर्थिकविशेषे। सूय० २ श्रु० २ अ०

आराण्णय-४ पुं० *[आरण्णिक]*
अरण्ये चरंत्यारण्यकाः कंदमूलफलाशिनि तापसादौ सूय० २ श्रु० २ अ०।

आराण्णय-५ पुं० *[आरण्यक]*
लौकिकश्रुतम्। आव०।

आरत- पुं० *[आरक्त]*
आरक्त मीषद्रक्तमिति आचा० २ अ० ३ उ०।

आरभंत- त्रि० *[आरभमाण]*
आरंभं कुर्वति आइमिउ आरभंता० आरभमाणा। ठा०७ ठा०।
संघट्टंता रभन्तीय आरभमाणा तानेव षट्कायान् विनाशयं-तीति०। पिंड०।

आरभड- न० *[आरभट]*
नाट्यभेदे ठा० ४ ठा०
अष्टाविंशतिमे नाट्य विधिभेदे च आरभटं नाम अष्टाविंशति-तममिति। रा०।

आरभडभसोल- न० *[आरभटभसोल]*
नाट्यविधिभेदेआरभट भसोलं नाम त्रिंशत्तममिति। राज०। आव० म०।

आरभडा- स्त्री० *[आरभटा]*
प्रमादप्रतिलेखनाभेदे (आरभडासम्पद्दा वज्जेयव्वाय मोसली तइया) आरभटा विधेर्विपरीतकरणं १ त्वरित २ पृथक् ३ नवीनवस्त्रग्रहण एषा प्रथमा प्रसाद प्रतिलेखनेति। ठा०६।
आरभटा वितथ करणरूपा अथवा त्वरितं सर्वमारभमाणस्या-थवा प्रत्युपेक्षिता एवैकत्र यदन्यान्यवस्त्रग्रहणं सा आरभटा सा च वर्जनीया सदोषत्वात् इति० (वित्तहकरणे च तुरियं अण्णं अण्णं च गिण्हआरभडा) वितथं विपरीतं यत्करणं तदारभटा-शब्दे नोच्यते साचारभटा प्रत्युपेक्षणा न कार्या इत्यर्थः। वा विकल्पेनेयं चारभटोच्यते यदुत त्वरितमाकुलं यदन्यान्यवस्त्र-ग्रहणं तदारभटा शब्देनोच्यते। उव०।

आरभिय- न० *[आरभित]*
नाट्यविधिभेदे (अप्पेइयादेवा आरभियं णट्टविहिं उपदंसेइ) रा०।

आरय- त्रि० *[आरत]*
उपरते विरतेचः। सूय० १ श्रु० ४ अ०।
अपगते। सूय० १ श्रु० १५ अ०।

आरयमेहुण- त्रि० *[आरतमैथुन]*
आरतमुपरतं मैथुनं कामाभिलाषो यस्यासा वा रतमैथुनः। सूय० १ श्रु० ४ अ०।
(दढे आरय मेहुणे) आरतमुपरतमपगतं मैथुनं यस्य स आरत मैथुनोऽपगतेच्छामदनकामाभावाच्चसंयमे दृढोसौ भवतीति। सूय० १ श्रु० १५ अ०।।

आरब- पुं० *[आरब]*
म्लेच्छदेशभेदे जंबू०।

आरबग- पुं० *[आरबक]*
आरबदेशोद्भवे म्लेच्छविशेषे। जंबू०।

आरसंत- त्रि० *[आरसत्]*
विलपति आरसंतोसु भेरवमतिभीषणं शब्दंरसन् वलपन्निति उत्त० १५ अ०।

आरसिय- न० *[आरसित]*
आरटिते इमेणं दारएणं जायमेत्तेणं चेव महया २ सद्देणं विघुट्ठे विसरे आरसिए तएणं एयस्स दारगस्स आरसिय सद्दें सोच्चा णिसम्म हस्थिणाउरे बहवे नयरे गोरूवा जाव भीया
। विपा० २ अ०।
महया २ तिच्चि आरसित्ति महता चिच्ची त्येवं चीत्कारेणेत्यर्थः आरसित मारटितं छिज्जंति सुभ-गवया आरसियन्ति। आव० म० १ अ०।

आरा- स्त्री० *[आरा]*
तत्ताहिं आराहिं नियोजयन्ति सूय० १ श्रु० १ अ० ।
तप्ताभिराराभिः पीड्यमानास्तप्त त्रपुपानादिके कर्मणि नियो-ज्यन्ते व्यापार्यन्त इति। सूय० १ श्रु० ५ अ०।

आराम- पुं० *[आराम]*
आरम्यतेऽत्र आ रम् आधारे घञ् आगत्या गत्य भोगपुरुषा। वरतरुणीभिः सहयत्र रमन्ते क्रीडंति स आरामो नगरात् नादिदूरवर्ती क्रीडाश्रयस्तरुखण्डः। राज०।
माधवी लताद्युपेते दम्पति रमणाश्रये वनविशेषे पण्हा० ४ ।
(आरामुज्जाणमणाभिरामपरिमण्डियस्स) आरामै र्दम्पति रति-स्थानलता गृहोपेतवनविशेषै रिति । पण्हा० ३ अ० ।
विविधपुष्पजात्युपशोभितः। ठा०।

तत्र रमणीयतातिशयेन स्त्रीपुरुषमिथुनानि यत्र आरमन्ति स विविधपुष्पजात्युपशोभित आरामः। अनुओ० २४।
रतिः। आचा०।
आरमन्ति यस्मिन्माधवीलतादिके दम्पत्यादीनि स आरामः। भग० २३८।
दम्पत्यादीनि येष्वारमन्ति ते। अनुओ०।
आरमन्ति–यस्मिन् माधवीलतागृहादौ दम्पत्यादीनि क्रीडन्ति इति। पुष्पप्रधानवम् । उव० ३।
आगत्य रमन्तेऽत्र माधवीलतागृहादिषु दम्पत्य इति सः। जीवा० ।
दम्पतिरमणस्थानभूतमाधवीलतादिगृहयुक्तः। पण्हा०
माधवीलताद्युपेतो दम्पतिरमणाश्रयो वनविशेषः। पण्हा०

आरामगय- त्रि० *[आरामगत]*
आरामो विविधपुष्पजात्युपशोभितस्तत्रगते आरामगयं वा ठा० ५ ठा० ।

आरामागार- न० *[आरामागार]*
आरामेऽगारं गृह मारामागारं आराममध्यगृहे (आरामागारे सु वा) आराममध्यगृहाण्यारामागाराणीति आचा०
आगंतगारे आरामगारे समणेउभीतेण उवेति- वासं आरामेगारमागारमिति सूय० २ श्रु० ६ अ० ।

आरामिय- त्रि० *[आरामिक]*
आरामे तद्रक्षणे नियुक्तः ठक् उद्यानपाले, मालिके, (आरामिउ पढइ) आव० म०।
सायअण्णया आरामियेण गहिया निसि० १ उ०। ठा० ४ ठा०

आराहग- पुं० *[आराधक]*
निष्पादके, उव०।
आराधयति सम्यक् पालयति बोधिमित्याराधकः। रा०।
ज्ञानाद्याराधनवति०। बुह०८।
आराधकोज्ञानादीनामाराधयितेति० भग० ३ श० १ उ० ।
मोक्ष-मार्गस्याराधकः शुद्ध इत्यर्थ० भग० ८ श० ६ उ०।
आराधका उत्तमार्थ साधकाः। आतु०।
आराधको ज्ञानाद्याराधनकर्तेति। ओह०।

आराहण- *[आराधन]*
आ सामस्त्येन राध्यते साध्यते पर्य्यन्तक्रियाऽनेनेत्याराधनमनशनम् अनशने, संथा०।

आराहणपडागा- स्त्री० *[आराधनपताका]*
आराधनरूपपताकायाम् । संथा०।

आराहणय- पुं० *[आराधनक]*
संस्तारके, संथा०।

आराहणया- स्त्री० *[आराधनता]*
संस्तारके, एस किलाराहणया आ सामस्त्येन राध्यते साध्यते पर्य्यन्तक्रियाऽनेनेत्याराधनमनशनम् तस्य भाव आराधनता आराधनमेव वा आराधनका स्वार्थिकप्रत्ययोपादानादाराधनका अयमर्थः एष संस्तारक आराधनता आराधनका वा चारित्रधर्मोत्यापनकल्पा इति संथा०।

आराहणा- स्त्री० *[आराधना]*
आराधनमाराधना ज्ञानादिवस्तुनोऽनुकूलवर्तित्वम् निरतिचार ज्ञानाद्यासेवायाम् । ठा० २ ठा० ।
आराधना ज्ञानादिगुणानां विशेषतः पालनेति० । उव० ।
(आराहणागुणाणं) (अपच्छिममारणंतिय संलेहणा जोसणा राहणाय) आरोधनाऽखण्डकालस्य करणमित्यर्थः। आव०।
उत्तमार्थ प्रतिपत्तौ । आतु०।
सम्यगासेवना। उत्त०।

आराहणी- स्त्री० *[आराहणी]*
आराध्यतेपरलोकापीडया यथावदभिधीयते वस्त्वनयत्याराधनी, द्रव्यभावभाषाभेदे दश० ७ अ०।

आराहणोवउत्त- त्रि० *[आराधनोपयुक्त]*
आराधनया उत्तमार्थप्रतिपत्त्या आराधनायां वा उपयुक्त उद्यतः सावधान आराधनोपयुक्तः आराधनयोपयुक्ते, आराधनायाम् उपयुक्ते च (आराहणोवउत्ते विततो आराहगो होइ) आतु०।

आराहिता- अव्य० *[आराध्य]*
सेवनं कृत्वेत्यर्थे, (आराहिता आणाए अनुपालइत्ता) आराध्य यथोक्तोत्सर्गापवादनयविज्ञानेन सेवनं कृत्वेति- उत्त० २९ अ० सम्पाद्येत्यर्थे, कल्प०।।

आराहिय- *[आराधित]*
सम्यक्पालितति। आतु०। सम०।
परितोषं प्रापिते- (आराहितो रज्जसपट्टबंधं कासीयराया उदुवक्खस्स) आराधितः केनाऽपि गुणविशेषेण परितोषं प्रापित इति- बुह०
(हरिणगमेसिं देवं भत्ति बहुमाणेणं आराहिया) आव० म०
निष्ठां नीते,अहिंसालक्षणं प्रथमं संवरद्वारमधिकृत्य आराधितमेभिरेवप्रकारैर्निष्टांनींतमिति- पण्हा० ६अ०
(आराहिया विभवइ) एभिरेव प्रकारैः सम्पूर्णनिष्ठां नीता भवतीति, ठा० ७ ठा०
(आराहियं पयारेहिं सम्ममेएहिं निट्ठवियं) आराधितञ्चैव एभिरेव प्रकारेर्निष्ठां नीतमिति०। उपा० १ अ०
आराहियनाणदंसणचारित्तजोगनिस्सल्लसुद्धसिद्धालयमग्गभिमुहाणं, । सम०। निसि० १ । आचा० ।

आराहियचरणया– त्रि० *[आराधितचरणता]*

चरणप्रतिपत्तिसमयादारभ्य मरणान्तं यावन्निरतिचारतया तस्य पालना। भग०।

आराहियसंजम- त्रि० *[आराधितसंयम]*

परिपालितसंयमे । सम०।

आरिय- त्रि० *[आरित]*

आरितो आयरित्तो सेवि तो वा एगट्ठं ति आव०चू०।

आकारिते० आरिओ आगारिओ स्सरिओ वा एगट्ठंति आव०।

आरियदंस त्रि० *[आर्यदर्शी]*

आर्यं–प्रगुणं न्यायोपपन्नं पश्यति तच्छीलश्चेति आर्यदर्शी–पृथक्प्रहेणकश्यामाशनादिसंकल्परहितः। आचा० १३१।

आरुग्ग- न० *[आरोग्य]*

अरोगस्य भावः रोगशून्यत्वे, रोगाभावे, उत्त०अ०२७।

आरियपदेसिय– त्रि० *[आर्यप्रदेशित]*

तीर्थंकरप्रणीतः। आचा०।

आरुग्गबोहिलाभ- पुं० *[आरोग्यबोधिलाभ]*

आरोग्याय बोधिलाभ आरोग्यबोधिलाभः आव०।

अरोगस्य भाव आरोग्यं सिद्धत्वं तदर्थं बोधिलाभः अर्हत्प्रणीत धर्मप्राप्तिरारोग्यबोधिलाभः। मोक्षायार्हत्प्रणीतधर्मप्राप्तौ,आव०

आरुस्स- अव्य० *[आरुष्य]*

कोपं कृत्वेत्यर्थे, सूय० १ श्रु० ५ अ०

आरुप्य क्रोधं कृत्वेति सूय० १ श्रु० ५ अ०।

आरुह- *[आरुह]*

चडति वलग्गति आरुहत्तित्ति एगट्ठं । निसि० १८ उ० ।

आरुहमाण- त्रि० *[आरोहयत्]* आरोहणं कुर्वति आरुहमाणे वा ओरुहमाणे वा ठा०ठा०५।

आरूढ- त्रि० *[आरूढ]*

आश्रिते । विशे०।

आरूढ आश्रित इति आव०चू०

आरूढेपाउपाहिंव पिंड०।

अध्यासित उत्त०२२ अ०।

आरुढे पाउयाहिं– त्रि० *[आरुढः पादुकयोः]*

काष्ठमयोपानहोः, एषणायां नवमदायकदोषः। पिण्ड०।

आरूढहत्यारोह- पुं० *[आरूढहस्त्यारोह]*

आरूढमहामात्रे (आरूढहत्थारोहे) आरूढा हस्त्यारोहा महामात्रा येषु ते तथा। विपा० २ अ०।

आरुवणा– स्त्री० *[आरोपणा]*

यत्रैकस्मिन्प्रायश्चित्तेऽन्यदप्यारोप्यते। पण्हा०।

आचारप्रकल्पस्याष्टाविंशतितमो भेदः। आव०।

आरेगा- स्त्री० *[आरेका]*

शंकायाम् (विजहित्तु विसोत्तियं) आचा०

विहाय परित्यज्य विस्रोतसिकां शंकां सा च द्विधा सर्वशंका देशशंका यत्र तत्र सर्वशंका किमस्त्यार्हतो मार्गो न वेति। देश शंका तु किं विद्यन्तेऽप्कायादयो जीवा विशेष्य प्रवचनेऽभिहितत्वात् स्पष्टचेतनात्मलिङ्गाभावान्न विद्यन्ते इति चेत्येवमादि-कामारेकां विहाय सम्पूर्णाननगारगुणाननुपालयेत् आचा०। अ० १ उ० २।

आरोवणा- स्त्री० *[आरोपणा]*

आरोप्यतइत्यारोपणा। प्रायश्चित्तभेदे, वव०।

आरोप्यते इति आरोपणा। प्रायश्चित्तानामुपर्युपर्यारोपण यावत् षण्मासाः परतो वर्द्धमानस्वामितीर्थे आरोपणायाः प्रति-षेधात्।। वव० १ उ०।

आरोपणमेकापराधप्रायश्चित्ते पुनः पुन आसेवनेन विजातीय प्रायश्चित्ताध्यारोपणम्। ठा०।

प्ररूपणायाः प्रथमभेदः। आव०।

परस्परावधारणम्। आव० ।

चडावना (मायाप्रत्ययमधिकप्रायश्चित्तम्)। स्था०।

आचाराङ्गस्याष्टाविंशतितममध्ययनम्। उत्त० ।

आरोवणापायच्छित्त- न० *[आरोपणाप्रायश्चित्त]*

आरोपणमेकापराधप्रायश्चित्ते पुनःपुनरासेवनेन विजातीय प्राय-श्चित्ताद्यारोपणमारोपणा यता पञ्चरात्रिन्दिवं प्रायश्चित्तमापन्नः पुन स्तत्सेवने दश-रात्रिन्दिवं पुनः पंचदशरात्रिदिवमेवं यावत् षड्मासान् ततस्तस्याधिकं तपो देयं न भवत्यपि तु शेषतपांसि तु तत्रैवान्त-र्भावनीयानि इह तीर्थे षएमासान्तत्वात्तपस इति। वव० १ उ०।

प्रायश्चित्तभेदः। वव०।

आरोस- पुं० *[आरोष]*

म्लेच्छजातिभेदे पण्हा अ०१ ।।

आरोह- पुं० *[आरोह]*

आरोहो दिग्धत्तं) वव० ५ उ०। उत्त० १ अ० दशा०।

उचितदैर्ध्ये ठा० ७ ठा०।

उच्छ्रये आरोहो नाम शरीरेण नातिदैर्घ्यं नातिह्रस्वता अथवा आरोहः शरीरोच्छ्राय इति- बुह०।

आरोहइयव्व- त्रि० *[आरोहयितव्य]*

आरोपणीये, वव०१ उ०।

आरोहग- त्रि० *[आरोहक]*

हस्तिपके (वरपुरिसारोहगपंपउत्ताणं अट्ठसयं गयाणं) तत्रारो-हका हस्तिपकाः उव०।।

आरोहपरिणाह- पुं० *[आरोहपरिणाह]*
शरीरस्याऽरोहसमः परिणाहः। शरीरोपसम्पद्‌भेदे, वव०५ उ०
आरोहपरीणाहो, आरोहो नाम शरीरेण नातिदैर्घ्यं नातिह्रस्वता परिणाहो नातिस्थौल्यं नातिदुर्बलता अथवा आरोहः शरीरोच्छ्रयः परिणाहो बाह्वोर्विष्कंभ एतौ द्वावपि तुल्यौ न हीनाधिकप्रमाणविति। बृह०।
आरोहो दीर्घत्वं परिणाहो विष्कंभो विशालता तत्र यावताऽरोहस्तावान् यदि विष्कभो भवति तदा एषा उपसंपत् आरोहपरिणाहे ज्ञातव्या। वव० ५ उ० ।

आरोहपरिणाहजुत्तता- स्त्री० *[आरोहपरिणाहयुक्तता]*
आराहो दैर्घ्यं परिणाहो विस्तरः ताभ्यां तुल्याभ्यां युक्तता आरोहपरिणाह-युक्तता। शरीरसम्पद्‌भेदे, उत्त० १ अ० ।
आरोहपरिणाहयुक्तता उचितदेर्ध्यविस्तारता इति ठा०४ ठा० ।

आरोहपरिणाहसंपण्ण- पुं० *[आरोहपरिणाहसम्पन्न]*
शरीरसम्पद्भेदे। आरोहपरिणाहसपण्णे यावि भवइ, इह चारोहो दैर्घ्यं परिणाहो विस्तारस्ताभ्या सम्पणः चापि शब्दावन्यांगसुन्दरत्वख्यापकाविति यन उच्यते लौकिकेरेपि यत्राकृतिस्तत्र गुणा वसन्तीति। दशा०।

आलइय- न० *[आलिंगित]*
आरोपिते उपा० २ अ०।
आविद्धे जीवा० ४ प्र०।
परिहिते, कल्प०।

आलइयमालमउड- त्रि० *[आलगितमालमुकुट]*
आलगितमालमारो-पितस्रक् मुकुटो यस्य स तथा तस्मिन् उपा० २ अ० ।
आलगितो यथास्थानं परिहितो मालामुकुटा येन स तथा तस्मिन् कल्प० ।
मालाच मुकुटश्च मालामुकुटं आलगि तमाविद्धं मालामुकुटं येन स आलगितमालामुकुटः। आविद्धमालामुकुटे, । जीवा० ४ प्र० ।
आलगितमालामुकुटः कृतकएठे मालः आविद्धशिरसि मुकुट इति भावः। आव० म०। भग० ३ श० २ उ०।

आलंकारियसभा- स्त्री० *[आलंकारिकसभा]*
चमरचंचा-राजधानीस्थे सभाविशेषे, आलंकारिका यस्यामलंक्रियत इति ठा० ५ ठा०।

आलंद- न० *[आलन्द]*
कालविशेषे, तत्रोदकार्द्रः करो यावता शुष्यति तत आरभ्योत्कृष्टतः पंचरात्रिदिवानि यावत्कालोऽत्र समयपरिभाषय लंदमित्युच्यते। विशे०।

आलंबण- त्रि० *[आलम्बन]*
आलम्ब्यतेऽवष्टभ्यते दुर्गपर्वतादिस्थानमधिरोढुकामैरित्यालम्बनं ।आश्रये आलम्बनं चाश्रयोऽवष्टंब आधार इति। आतु०।
(आलंबणेण केणइ) आलम्बन इत्यालम्बनम् प्रपतनाघारणस्थान् तेनांलबनेन केनचिदिति आव०।
आलंबन-माधारभूतं तं०।
आलम्बनं हस्ताद्याधारः। गच्छा० १ अधि० ।
(जमणेगत्थालंबणमपज्जुदासपारकुचियं चित्तं) यच्चित्तं यन्मनोऽनेकार्यालम्बनमनेकार्थप्रतिभासांदोलितमिति विशे०।
आलंबनं द्विधा द्रव्यतो गर्तादौ निमज्जतो रज्वादि। भावतः संसारगर्तायां निपततां ज्ञानादि। बृह०। निसि० १ उ० ।
आलंविज्जति जं तमालंबणं दुविहं दव्वे वल्लि वियाणाइ भावे य णाणादि। निसि०।
आलम्ब्यन्ते आश्रीयन्ते तान्याल्मबनानि। उव० ।
आश्रयणीये, आलम्बनादाश्रयणीयादिति। ठा० ३ ठा० ।
यान्यालम्बन्यन्ते तान्यालम्बनानि भग० २५ श० ७ उ०
कारणे । निसि०उ०।
कारणमालंबणं मोत्त, कारणं नामालंबनम् आव०म०१अ०
(सपच्चवाएण निरालंबणेणं, निष्कारणे न प्रत्यपायसंभवे वा त्राणायालंबनीयवस्तुवर्जितेनेति नाया०अ० ९।
आलंब्यत इत्यालम्बनम्। प्रवृत्तिनिमित्ते, आव०।
आलम्ब्यते निश्चलङ्क्रियते मनो येनेत्यालम्बनम् उत्त० २४ अ०।
प्रयोजने, (आलंबणे य काले मग्गे जयणाए चेव परिसुद्धं) आचा० २ अ० ३ उ० । निसि० १० उ० ।
आलंबणेत्यादितः प्रवचनसंघगच्छाचार्यादिप्रयोजनम् आचा०
पुष्टालम्बनस्य मूलगुणप्रतिसेवने न दोषः बृह०।
प्रवृत्तिनिमित्तं शुभमध्यवसानम्। आव० ।
रज्वादिवदापद्‌गर्तादिनिस्तारकत्वादालम्बनम्। भग०।
आश्रयणीयं गच्छकुडुं–बकादि। ठा०।

आलंबणबाहा– स्त्री० *[अवलम्बनबाहा]*
द्वयोः पार्श्वयोरवलम्बनाश्रयभूता भित्तयः। जंबू ।

आलंबणभूय-त्रि० *[आलम्बनभूत]*
आलम्बनसदृशे, (आलंबणभूए) आलंबनं रज्वादि तद्वदापद् गर्तादिनिस्तारकत्वादालंबनम्। नाया० १ अ०।

आलंबमाण- त्रि० *[आलम्बमान]*
बाह्वादौ गृहीत्वा धायति, देशतः करेण गृह्णाति च। बृह०।

आलंभिय- न० *[आलम्भिक]*
स्वनामख्याते नगरे, यत्र चुल्लशतको गृहपतिरासीत् स्थानांगे चुल्लशतकमधिकृत्य ठा० १ ठा० । भग० ११ श० ।

आलम्भि कायां नगर्यां यत्प्ररूपितं तत्प्रतिपादक उद्देशको ऽप्यालंभिक इत्युच्यते। ततोऽसौ द्वादशः भगवत्या एकादश शतकस्य द्वादशे उद्देशे च। भग० ११ श० १२ उ० ।

आलंभिया- स्त्री० *[आलम्भिका]*

स्वनामख्यातायां नगर्याम् भग० ११ श० १ उ०

नगरीविशेषः, वीरस्य सप्तमवर्षारात्रस्थानम्। आव० म०।

कल्प ०। आव०चू०।

आलग्ग त्रि० *[आलग्न]*

अधृतिमापन्नः, कातरः। आव० ८००।

आलत्त- त्रि० *[आलप्त]*

आभाषिते, (आलत्ते वाहिते), आलप्तोनाम आर्य ! किं तव वर्त्तत इत्येवमाभाषित इति बुह०।

आलप्तः संभाषित इति। वव० २ उ०।

शब्दिते, ततश्चालप्ताः शब्दिता वा तृष्णिंभावं भजन्ते०। आचा० ६ अ० ४ उ०।

आलपने० न०) आलप्तमालपनम्० वव० १० उ०।

आलवंत्त- त्रि० *[आलपत्]*

ईषद्वदति, (आलंवते लंबते वा) आलपति सति ईषद् वदति सति० उत्त० १ अ० ।

आलपनं कुर्वति, च (आलवंताणं मुरयाणं नंदिमुइंगाणं) मुरजमृदंगनंदिमृदंगानामालपनम्। राज०। आव०चू०।।

आलय- पुं० *[आलय]*

आश्रये, ठा० ३ ठा० । ठा० २ ठा०२ । जंबू०। जीवा०

आवासे० ओह०।

गृहे, तं०।

स्थाने० विशे०

आलयं देव शत्रूणां सुघोरं खाण्डवं वनम् आव०।

आलीयंते साधवोऽत्रेत्यालयः बुह०।

वसतौ, ठा० २ ठा०। आव०चू०।

(आलएणं विहारेणं) आलयो वसतिः आव०।

आलयेन स्त्रीषंडादिरहितवसतिसेवनेन, उपाश्रये, कल्प०।

आलयविन्नाण- *[आलयविज्ञान]*

बौद्धपरिभाषितेक्षणिकविज्ञाने, आव०।

आलयविज्ञानं-ज्ञानसंततिः। सूय० ।

आलस्स- न० *[आलस्य]*

अलसस्य भावः-अनुद्यमने उत्त० १ अ०।

औदासीन्ये प्रमादो यत्र आलस्यमौदासीन्यं च हेतुषु आलस्यं च हेतुषु समाधिसाधनेष्वादौसीन्यं माध्यस्थं न तु पक्षपातः। आव० म०।

आलाव- पुं० *[आलाप]*

आङ ईषदर्थत्वादीषल्लपनमालापः ठा० ५ ठा०

असकृत्संभाषण, च (आलावं वा संलावं वा) आलापः संभाषणं संलापस्तदेव पुनः पुनः भग० ३ श० १ उ०।

आलावत्ति सकृज्जल्पं सलाववत्तिमुहुर्मुहुर्जल्पं० । भग० ५ श० ४ उ०।

ईषत्प्रथमतया वा जल्पने, चतुर्भिश्च स्थानैर्निर्ग्रन्थस्य निर्ग्रन्थ्या सममालापे न दोषः।। तथाच स्थानाङ्गे ठा० ४।

आलावग- पुं० *[आलापक]*

उच्चारणविधौ (एवमिक्केक्के आलावगा भणियव्वा) चत्तारि आलावगा, ठा० ६ ठा०।

आलावण- न० *[आलापन]*

परस्पर कथोपकथने, आभाषणे, आलापशब्देऽस्य प्रवृत्तिहेतुत्वमुक्तम् स्यादाभाषणमालाप इत्यमरः। स्वस्तिवाचने, च (मंगलालापनैर्होमैः) आव०।

संभाषणे, बुह०।

सकृत्संभाषणे आव०।

भाणने० आलापयेद् भाणयेत्० सूय० १ श्रु०८ अ०।

आलाप्यते आलोपनं क्रियते एभिरित्यालापनानि० रज्वादौ० भग० ८ श० ९ उ०।

आलावणबंध- पुं० *[आलापनबन्ध]*

आलाप्यते आलीनं क्रियते एभिरिति आलापनानि रज्वादीनि तैर्बन्धस्तृणादीनामालापनबन्धः। बन्धभेदे० । भग० ८ श० ९ उ०।

आलि- पुं० *[आलि]*

वनस्पतिविशेषे। जीवा० ३ प्रति०।

आलीकदल्यौ वनस्पतिविशेषौ० नाया० ३ अ०।

आलिग- पुं० *[आलिङ्ग]*

मुरजनामके, वाद्यविशेषे, रा०

आलिंगोमृतमयो मुरजः जीवा० ३ प्रति०

उतालिज्जताणं आलिगाण, रा०

(आलिंग पुक्खरेइ वा) आलिंग्य वाद्यत इत्यालिंगो मुरजवाद्यविशेषस्तस्य पुष्करं चर्मपुटं तत् किलात्यंतसममिति तेनोपमा क्रियते इति० । आव०म० १ अ० । जंबू।

आलिङ्ग्य- त्रि०

मुरजनामके वाद्यविशेषे, पु० (अलिंगपुक्खरे इव) आलिंग्यो नाम यो वादकेन मुरज आलिंग्य वाद्यते हृदि धृत्वा वाद्यते इत्यर्थः।। आलिंग्यो मुरजोवाद्यविशेषः।। एष यकारान्तः शब्दः। जीवा० प्रति० ३।

आलिंगण- न० [आलिङ्गन]
ईषत्स्पर्शने० निसि० १ उ०, दश० ६ अ०।
सम्प्राप्तकामस्य दशमो भेदः। दश०।

आलिंगकसंठित– न० [आलिङ्गसंस्थित]
आवलिकाबाह्यस्य चतुर्दशं संस्थानम्। जीवा० ।

आलिंगणवट्टि- स्त्री० [आलिङ्गनवर्त्ति]
शरीरप्रमाणे उपधाने (तारिसगंसि सयणिज्जंसि सालिंगण वट्टिए) सहालिंगन वर्त्या शरीरप्रमाणेनोपधानेन यत्तत्तथा– सूर० २० पाहु०। जीवा० ३ प्रति०। भग० ११ श० ११ उ०। नाया० १ अ०।
पुरुषप्रमाणं पार्श्वमुपधान। बुह०।

आलिंगणवट्टिया- स्त्री० [आलिङ्गनवर्त्तिका]
शरीरप्रमाणे दीर्घे, गण्डोपधोन, आलिंगनवर्त्तिका नाम शरीर-प्रमाणं दीर्घगण्डोपधानम्। कल्प०।
जाणुकोप्परादिसु जा दिज्जति सा। निशी० ६१ अ।

आलिंगणि– स्त्री० [आलिङ्गनि]
अप्रतिलेखितदूष्यपञ्चके चतुर्थो भेदः। आव०।

आलिंगपुक्खर- न० [आलिंगपुष्कर]
मुरजमुखे, भग० २ श० ८ उ०
मुरजमुखपुटे, च ।भग० ६ श० ७ उ० । जंबू०। आव० म० १ अ०। रा०।

आलिंपत- त्रि० [आलिंपत्]
आलेपं कुर्वति (आलिंपंतं वा विलिंपंतं वा साइज्जइ) । निसि० ३ उ० ।

आलिंपावंत- त्रि० [आलेपयत्]
आलेपं कारयति (अन्नयरेण वा आलेवणजाएणं आलिंपावंतं वा) निसि० १७ उ०।

आलिधरग- न० [आलिगृहक]
आलिर्वनस्पतिविशेषः तन्मयानि गृहकाणि। आलिमये गृहे, रा०।
वनस्पतिविशेषस्तन्मयं गृहकम्। जीवा०।

आलिट्ठमणालिट्ठ– न० [आलिष्टानाश्लिष्टम्]
कृतिकर्मणि चतुर्भङ्गभिन्नः सप्तविंशतितमो दोषः। आव० ।

आलित्त- त्रि० [आदीप्त]
समंततो दीप्ते० 'जह आलित्ते गेहे, कोइ पसुत्तं नरं तु बोहेज्जा'
आसमन्ततो दीप्ते गृहे, । वव० ३ उ० । अंत ०५ ।
अभिविधिना ज्वलिते, भग० २ श० १ उ०
प्रदीपन, न० कोटिमघरे वसंते आलित्तंमि वि न डज्झई त्तेणे आदीप्तेऽपिप्रदीपनकऽपि न दह्यते इति-वव० ४ उ०।

आलिद्ध-त्रि० [आदिग्ध]
लग्न,(अत्थेगइया पुढवीकाइया आलिद्धा) आदिग्धाः शिलायां शिलापुत्रके च लग्ना इति भग० १९ श० ३ उ०।

आलिद्धमणालिद्धवंदण- न० [आश्लिष्टानाश्लिष्टवन्दन]
सप्तविंशे वन्दनकदोषे, तच्च (आलिद्धमणालिद्धेरयहरसीसे य होइ चउभंगो) बुह०।
अश्लिष्टमनाश्लिष्टं चेति पदद्वयमाश्रित्य रजोहरणशिरसो विषये चतुर्भंगिका भवति। सा च अहोकायं काय इत्याद्यावर्तकान्ते संभवति।
रजोहरणं कराभ्यामाश्लिष्यति शिरश्चेत्येको १
रजोहरणं श्लिष्यति न शिर इति द्वितीयः २
शिरः श्लिष्यति न रजोहरणमिति तृतीयो ३
न रजोहरणं न शिरः श्लिष्यति ४ इति चतुर्थो भंग
इति अत्राऽऽद्योभंगः शुद्धः। शेषभंगत्रये आश्लिष्टदोष-दुष्टप्रकृतवंदनमवतरति।आव०।आव०चू०२ अ०

आलिवग- त्रि० [आदीपक]
आदीपयत्यन्यगृहमग्निना।
अग्निदातरि नाया० २ अ०

आलिवण- न० [आदीपन]
ग्रामादिप्रदीपने (आलीवणे हि य) व्याकुललोकानां मोषणार्थं ग्रामादिप्रदीपनैः। विपा० १ अ० ।

आलिसंदग- पुं० [आलिसन्दक]
धान्यविशेषे दशा०। भग०।
(आलसंदग त्ति) चपलकाः जंबू०
चवलकप्रकाराः चवलका एवान्ये। भग०श० ६ उ०७।

आलिहमाण- त्रि० [आलिखत्]
विन्यस्यति, (आलिहमाणे २ अणुप्पविसइ) आलिखन् २ विन्यस्यन् २ अनुप्रविशति।। जंबू०।
ईषत्सकृद्वाऽऽकर्षन्। भग०।

आलिहिज्जमाण- त्रि० [आलिख्यमान]
विन्यस्यमाने, (मंडलेहिं आलिहिज्जमाणेहिं) जंबू०।

आलिहित्ता– आलिख्य,
आकारकरणेन कृत्वा अन्तर्वर्णकादिभरणेन पूर्णानि कृत्वा।
जम्बू० १९२।

आलीढ- त्रि० [आलीढ]
तत्र दक्षिणमूरुमग्रतो मुखं कृत्वा वाममूरुं पश्चान्मुखं प्रासार-यति। अंतराबद्ध्रयोरपि पादयोः पंचपदोः ततो वामहस्तेन धनुर्गृहीत्वा दक्षिणहस्तेन प्रत्यंचामाकर्षति तत् आलिढम्। वव० १ उ०। आव०म० १ अ०। आव० चू०। उत्त० १ अ०।

आलीण- त्रि० *[आलीन]*
आलिंगिते, कल्प० सुश्लिष्टे, नाया०अ०२।
किंचिल्लग्रे, च । जंबू०।
आलीनौ मस्तकभितौ किंचिल्लग्नौ नतु टप्परौ प्रमाणयुक्तौ स्वप्रमाणो-पेतौ श्रवणौ कर्णौ येषां ते । जंबू०।
(आलीणे मद्दए विलीणा आलीनः सर्वगुणैरालिंगितः। कल्प० गुरुसमाश्रितः, संलीनो वा। भग०।

आलीवग– आदीपिकः,
गृहादिप्रदीपनककारी। पण्हा० ४६।

आलीणगुत्त- त्रि० *[आलीनगुप्त]*
आङ् मर्य्यादयेन्द्रियरोधादिकया लीन आलीनो गुप्तो मनो-वाक्कायकर्मभिः कूर्मवत्संवृतगात्रः। आलीनश्चासौ गुप्तश्चालीन गुप्तः। इन्द्रियरोधादियुते मनोवाक्कायकर्मभिर्गुप्ते, कूर्मवत्संवृत गात्रे, च आचा० ३ अ० २ उ०
(आलीणगुत्तोपरिव्वए) आलीनो गुप्तश्च परिव्रजेत् ।आचा०।

आलु- पुं० *[आलु]*
आचाराङ्गदीपिकायाम्। द्वात्रिंशदनंतकाय वनस्पति जीवान-धिकृत्य(आलू तह पिंडालू बत्तीसं जाणिउं अणंताइं)। आचा० १ अ० ३ उ०।

आलुई- स्त्री० *[आलकी]*
वल्लीभेदे। आचा० १ अ० ५ उ०।

आलुंचण- न० *[आलुंचन]*
उत्पाटने, केशादेर्बन्धराहित्ये, ग्रहणे।। आव०।।

आलुंप- त्रि० *[आलुम्ब]*
आसमंताल्लुंपतीत्यालुंपः धनापहारके, आलुंपे सहसाकारे। स हि लोभाभिभतान्तः करणोऽपगतकर्तव्याकर्तव्यविवेकोऽर्थ-लोभै कदत्तदृष्टिरैहिकामुष्मिकविपाककारिणीर्निलाञ्छनगल कर्तनचौर्य्यादिकाःक्रिया करोति।(आलुंपह विलुंपह) आलुंपत वस्त्रादिकं विलुंपत् सर्वस्वापहारेण। आचा० २ अ० १० उ०।

आलुग- पुं० *[आलुक]*
(तरुणगएलालुयत्ति वा) आलुकं कन्दविशेष। तच्चानेकप्रकार मिति विशेषपरिग्रहार्थं एलालुकमित्युक्तम्। अनुत्त० १ अ० । साधारणशरीर-बादरवनस्पतिकानधिकृत्य (साहारण-सरीरा अणोगहाते पकित्तिया आलुए मूलए चेव सिंगवरे तहेव य) । उत्त० ३६ अ०। भग० ७ श० २ उ०। पन्न० १० पद०। जीवा० १ प्रति०।

आलूण- त्रि०लू०क्त० *[आलून]*
ईषच्छिन्ने, सम्यक्छिन्ने, च तेनामरवधूहस्तैः सदयालून-पल्लवाः कुमार०। विशीर्णे, । आव० म०।

आलेवण- न० *[आलेपन]*
सकृल्लेपने, निसि० १२ उ०
ईषल्लेपने, ।बुह०।
दिवागृहीतगोमयै रात्रौ व्रणाद्यालेपननिषेधो। निसि०।

आलेवणजाय- न० *[आलेपनजात]*
आलेपनप्रकारे, (आलेवणजाएणं आलिंपेज्ज वा विलिंपेज्ज वा) निसि० ३ उ०।

आलेह- पुं० *[आलेख]*
सम्यक्लेखने, आधारे, चित्रे, ।आव० म०प्र०।
आलेखः, चित्रम्। जम्बू० ३२।

आलोइय- त्रि० *[आलोकित]*
(आलोइयं इंगियमेव नच्चा) आलोकितं निरीक्षितमिति।। दश० ९ अ० ३ उ०।
आलोइयपाणभोयणभोई से निग्गंथे आलोकितं प्रत्युपेक्षित-मशनादिभोक्तव्यं तदकरणे दोषसंभवात् । आचा० ७ अ० २ उ०।
ईषद्दृष्टा, समन्तादृद्दृष्टा। उत्त०।

आलोचित- त्रि० *[आ-लुचु०णिच्-क्त]*
निवेदिते।। भग० २ श० १ उ०।
(आलोइयंमि आराहणा अणालोइए भयणा) आलोचिते गुरोरपराधजाले निवेदिते। आव०।
आलोचनावति च। भग० ७ श० २ उ०।

आलोइयपडिक्कंत- त्रि० *[आलोचितप्रतिक्रान्त]*
आलोचितं गुरूणां निवेदितं यदतिचारजातं तत् प्रतिक्रान्तम् अकरणविषयी कृतं येनासावालोचितप्रतिक्रान्तः तस्मिन् आलोचित्तश्चासा वा लोचनादानात्प्रतिक्रान्तश्च मिथ्यादुष्कृत दानादालोचितप्रतिक्रांतः। भग० २ श० १ उ०।

आलोएमाण- त्रि० *[आलोकयत्]*
पश्यति आचा० ५ अ०।

आलोय- पुं० *[आलोक]*
आलोक्यतेऽनेन । दश० २ उ०। आव०।
(आलोओ उज्जोओ दित्तीभासापहा पयासो य) नाया०१० अ० चक्षुर्दर्शनपथे। ओघ०।

आलोयग- त्रि० *[आलोचक]*
आलोचना कारक। आलोचनाया योग्या आलोचका आलो-चना शब्दे।। वव० १ उ०।

आलोचयल- त्रि० *[आलोकचल]*
आलोकनमालोकस्तस्मिन्नालोके चलमालोकचलं दर्शनलालसे आलोअचलं चक्खुं मणुव्वतं दुक्करं थिरं काउं। आव०।

आलोयण- न० *[आलोकन]*
दर्शने । आचा० ३ अ० ५ उ० ५ । दश० ४ अ०।
निरीक्षणे।। आव०।
निरूपणे। ओह०।
प्रकाशके,पण्हा० ६ अ०।

आलोयण-१ न० *[आलोचन]*
विचारणे, (पुव्वामेव आलोएज्जा) आलोचयेद्विचारयेत्।। आचा० ३ अ० ५ उ०।
आलोचयेद्दत्तावधानो भवेदित्यर्थः। आचा० २श्रु० १अ० ६उ०
सामान्यवस्तुग्राहि- ज्ञानविशेष, सामान्यवस्तुग्राहिज्ञानमालोचनम् च। तद्वक्तव्यताऽर्थावग्रहवक्तव्यताऽवसरेऽवग्रह शब्दे आङ्मर्य्यादायां लोचृदर्शने मर्य्यादयाऽलोचनं दर्शनमालोचनम् । निसि० २० उ०।
निवेदने, उपदर्शने, च आलोयणदायणं च दाऊणं आलोचनं तथा गृहीतभक्तपाननिवेदनं तयोरेवोपदर्शनञ्च, पण्हा० ६अ०।
आलोएहि गुरुभ्यो निवेदयति। उपा० ३ अ०। ठा०३ ठा०।
आलोइत्तए आलोचयितुं गुरवे अपराधान्निवेदयितुं ।ठा०२ ठा०
सकृत् अनेकशः प्रलोकनम्। निशी०।

आलोयण-२ न० *[आलोचन]*
यथागृहीतभक्तपाननिवेदनम्। पण्हा०।
प्रयोजनतो हस्तशताद्बहिर्गमनागमनादौ गुरोर्विकटना, मिथ्या-दुष्कृतं च । आव० ७६४।
एकादशी गुर्वाशातना। आव० ७२५।
गुरोः पुरतो वचसा प्रकटीकरणम्। वव० ।ठा०।

आलोयणभायण- न० *[आलोकनभाजन]*
प्रकाशमुखे भाजने।। पण्हा० ६ अ०।
आलोके–प्रकाशे नान्धकारे पिपीलिकावालादीनामनुप–लम्भात्, तथा भाजने–पात्रे, पात्रं विना जलादिसम्पतित–सत्त्वादर्शनादिति। पण्हा० ।

आलोयणा- स्त्री० *[आलोचना]*
आङ्मर्य्यादायाम् सा च मर्यादा इयम्।।
जह बालो जंपंतो, कज्जमकज्जं च उज्जुयं भणइ।
तं तह आलोइज्जा, मायामयविप्पमुक्को उ।।
अनया मर्यादया लोचृदर्शने चुरादित्वाण्णिच् लोचनालोचनं प्रकटीकरणम् आलोचना गुरोः पुरतो वचसा प्रकाशनम्। वव० १० उ०। जीत०।
आङिति–सकलदोषाभिव्याप्त्या–लोचना–आत्मदोषाणां गुरु पुरतः प्रकाशना। उत्त०।
योगसङ्ग्रहे प्रथमो योगः। आव०।

आलोयणाणय- पुं० *[आलोचनानय]*
आभिमुख्येन गुरोरात्मदोषप्रकाशनमालोचना स एव नयः। आलोचनायाः नय भेदे, तद्वक्तव्यता (सामाइय) शब्दे । विशे० । आव०चू० २ अ०।

आलोयणारिह- न० *[आलोचनार्ह]*
आ मर्य्यादया 'जह बालो जंपंतो, कज्जमकज्जं' च उज्जुओ भणइ। तं तह आलोइज्जा, मायामयविप्पमुक्कोय इत्येवंरूप-याऽऽलोचनं गुरोः पुरतः प्रकाशनं तावन्मात्रेणैव यस्य पापस्य शुद्धिस्तदालोचनार्हं तद् विशोधिकं प्रायश्चित्तमप्युपचारादा-लोचनार्हम्। जीत० । वव० १ उ०।
आलोचनां गुरुनिवेदनां विशुद्धये यदर्हत्यतिचारजातं तदाऽऽ-लोचनार्हन्तद्विशोधकमालोचनालक्षणं प्रायश्चित्तमप्युपचारादा-लोचनार्हम्, । गच्छा०। औप० ।
प्रायश्चित्तभेदे। आलोचनार्हं यद्गुरुनिवेदनया शुद्ध्यतीति । ठा० ३ ठा० । भग० २५ श० ७ उ० ।
आलोचना गुरुनिवेदनम्। तथैव यच्छुद्धयत्य तिचारजातं तत्र तदर्हत्वादालोचनार्हम्। तच्छुद्ध्यर्थे यत्प्रायश्चित्त तद्प्यालोच-नार्हन्तच्चालोचनैव ठा० १० ठा०।
निवेदना तल्लक्षणां शुद्धिं यदर्हत्यतिचारजातं तद्। भग० ।

आलोयणाविहिसुत्त- न० *[आलोचनाविधि]*
शिष्यनिवेदित-प्रायश्चित्त-पर्य्यालोचनविषय-प्रायश्चित्त-अभि-धायिनि सूत्रे आलोचनाविधिसुत्ता नाम गुरुं शिष्येण गुरोः निवेदिते गुरुणा प्रायश्चित्त-पर्य्यालोचना-विषयाणि प्रायश्चित्त-अभिधायिनि । निसि० २ उ० ।

आलोयणाणुलोम न० *[आलोचनानुलोम्यम्]*
पूर्वं लघवः आलो–च्यन्ते पश्चाद् गुरवः। आव० ७८१।

आलोयदरिसणिज्ज- त्रि० *[आलोकदर्शनीय]*
आलोकं दृष्टिगोचर यावद् दृश्यतेऽत्युच्चत्वेन यः स आलोक दर्शनीयः । भग० ९ श० ३३ उ० ।
आलोके दृष्टिविषये क्षेत्रे स्थितोऽत्युच्चतथा दृश्यते यः स आलोकदर्शनीयः अत्युच्चतया यावद्दृष्टिगोचरं दृश्यमाने । नाया० १ अ० ।
आलोकं दृष्टिपच्छं यावद् दृश्यते अत्युच्चैस्त्वेन या सा आलोकदर्शनीयेति उव०
नात्युच्चतया आलोकमात्र एव दर्शनीये मङ्गल्यत्वात् प्रस्थान-समये द्रष्टु योग्ये, च। दरिसणरइय आलोयदरिसणिज्जा।
आलोके बहिःप्रस्थानसमयभाविनि दर्शनीया द्रष्टुं योग्या मंग-ल्यत्वात् अन्ये त्वा हुरालोके दर्शनीया न पुनरत्युच्चा आलोक-दर्शनीयति रा०।

आवन्तिअज्झयण- न० *[आवन्त्यध्ययन]*
आचाराङ्गस्य नवब्रह्मचर्य्याध्ययनान्तर्गते लोकसाराख्ये पञ्चमेऽध्ययने। आवंतीत्या चारस्य पञ्चमाध्ययनम् तत्र ह्यादावेवा-वंतीत्यालापका विद्यते इत्यादानपदेनैतन्नाम। अनुओ०।
आवंतीति आद्यपदेन नामान्तरण तु लोकसार इति ।ठा० १ ठा०। सम०। आव० ।
आदीयते प्रथममेव गृह्यत इत्यादानम्। तच्च तत्पदं चादानपदम् तेन करण भूते नावंतीत्येत प्रामाध्ययनादावा-वंतीशब्दस्योच्चारणात् आचा० अ०५ उ०१ ।।

आवकह- प्रवव० *[यावत्कथ]*
यावज्जीवमित्यर्थे, आवकहं भगवं समित्तासि। यावत्कथमिति यावज्जीवम्, आचा० ९ अ० ४ उ०।

आवकहा- स्त्री० *[यावत्कथा]*
यावती यत्परिमाणा कथा मनुष्योऽयं देवदत्तादिर्वाऽयमिति व्यपदेशलक्षणा यावत्कथा यावज्जीवे जत्थवियणं आवकहाए चिट्ठइ ।ठा० ४ ठा० ।
से पारए आवकहाए यावत्कथं यावज्जीवमित्यर्थः। आचा० ९ अ० ४ उ० ।
जे आवकहा समाहिए कियंतं कालं यावत् कथा देवदत्तो यज्ञदत्त इति कथा यावदिति सूय० १ श्रु० २ अ०

आवकहिय- त्रि० *[यावत्कथिक]*
यावज्जीविक। यावत्कथिकानीति सकृद्‌गृहीतानि यावत् जीवमपि भावनीयानीति। आव०।
सामयिकभेदेतच्च मध्यमवैदहकतीर्थकरतीर्थान्तर्गतसाधूनाम् अवसेयम्। तेषामुपस्थापनाया अभावात्। बुह० ११ ।
आत्मनः कथां यावद्यदास्ते तद्यावत्कथं यावज्जीवमित्यर्थः। यावत्कथमेव यावत्कथिकम् ।सामायिकचरित्रगुणप्रमाण भेदे। एतच्च भरतैरावतेष्वाद्यचरमवर्जमध्यमतीर्थकरसाधूनां महा-विदेहयतीनां च संभवति। अनुओ०।
यावत्कथस्य भाविव्यपदेशान्तर-अभावात् यावज्जीविकस्य सामायिकस्याऽतिस्तत्वात् यावत्कथिकः। सामायिक संयत भेदे। स च मध्यमजिनमहाविदेहजिनसम्बन्धिसाधुः। भग० २५ श० ७ उ०।
प्रतिक्रमणभेदे च ठा०।।
यावत्काथकं यावज्जीविक महाव्रतभक्तपरिज्ञानादिरूपं प्रतिक्र-मणत्वं चाऽस्य निवृत्तिलक्षणाऽन्वर्थयोगादिति। आव०।
प्रव्रज्याप्रतिपत्तिकालादारभ्याप्राणोपरमात् तच्च भरतैरावत भाविमध्यद्वाविंशतितीर्थकरतीर्थान्तरगतानां विदेहतीर्थान्तर-गतानां च साधूनामवसेयम्। पन्न० ।

आवज्जण- न० *[आवर्जन]*
उपयोगे व्यापारे, च केवलिसमुद्घातगन्तुमनसा केवलिना कर्त-व्यमावर्जीकरणमधिकृत्य तदर्थ समुद्घातकरणार्थमादौ केव-लिन उपयागो मया अधुनेदं कर्त्तव्यमित्येवंरूप उदयावलि-कायां कर्म्मप्रक्षेपरूपो व्यापारोवाऽऽवर्जनमुच्यते। विशे०।
अभिमुखीकरण, आव०चू०।

आवज्जिय- त्रि० *[आवर्जित]*
अभिमुखे, आव०चू०

आवज्जियकरण- न० *[आवर्जितकरण]*
अभिमुखीकरणे। केवलिसमुद्घातात्पूर्वं कर्तव्ये केवलिनोव्या-पारविशेषे च । आव०चू० ।
तेषामप्यावर्जितशब्दस्याऽतिमुखपर्यायवाचित्वात् आवर्जितक-रणसिद्धिः कथमावर्ज्जितमनुष्यवत् यथा लोकेद्दष्टमेतदाव-ज्जितो मनुष्योभिमुखीकृत इति तथा च सिद्धान्तः। सिद्धपर्या-यपरिणामाभिमुखीकरणं यत्तदावर्जितकरणं येन कारणेन परिणत आत्मा नियमात् सिद्धतत्पर्यायपरिणामाभिमुखो भव-तीत्यर्थः। आव०चू० ।

आवज्जीकरण- न० *[आवर्जीकरण]*
समुद्घातकरणार्थमादौ केवलिन उपयोगो मया अधुनेदं कर्तव्यमित्येवं उदयावलिकायां कर्म्म-प्रक्षेपरूपो व्यापारो वा आवर्जनमुच्यते। तथा भूतस्य करणमावर्जीकरणम् केवलि-समुद्घातात्पूर्वं केवलिना कर्तव्ये व्यापार भेदे, विशे०।
आवर्जितः–अभिमुखीकृतः मोक्षगमनं प्रत्यभिमुखीकृतस्य करणं–क्रिया शुभयोगव्यापारः। पन्न०।
अन्तर्मौहूर्त्तिकं उदीरणावलिकायां कर्मप्रक्षेपव्यापार ।ठा०।

आवट्ट- पुं० *[आवर्त]*
आवर्तनमावर्तः स च समुद्रादेश्चक्रविशेषणांचेति। ठा० ४ ठा०। नाया० १ अ० । आव० म०।
आवर्तयति प्राणिनं भ्रामयतीत्यावर्तः। सूय० १ श्रु० ३ अ० । आव०।
जलादीनां परिभ्रमणे आचा० १ अ० ५ उ०
आवर्त आवर्तनं परिभ्रमणमिति नाया० १ अ०
मोहावत्तं महाभीमं। मोहोमोहनीयं कर्म्म तदेव तत्र विशिष्ट भ्रमिजनकत्वादावर्तो यस्मिन्स तथा विवस्तमिति । आव०। ठा० ४ ठा०।
संसारः। आचा०।

आवट्टकूड- न० *[आवर्तकूड]*
महाविदेहस्थनलिनकूटवक्षस्कारपर्वतस्थे स्वनामख्याते कूटे, । जंबू०।

आवट्टण- *[आवर्तन]*
विलयने, (आवट्टती तत्थ असाहुकम्मा) आवर्तते विलीयंते इति।। सूय० १ श्रु० ५ अ०।
पीडने, आवर्त्यते पीड्यते दुःखभाग् भवतीति ।सूय० १ श्रु० १ अ० ।
आकंपने (कहणाउट्टणआगमणपुच्छणा दीवणा य कज्जस्स) आवर्तनमाकंपनं राज्ञो भक्तीभवनम् वव० ९ उ०।
परिभ्रमणम् ।सूर्य०।

आवट्टणपेढिया- स्त्री० *[आवर्तनपीठिका]* इंद्रकीलिकानिवेश स्थाने, आवर्तनपीठिका यत्रेन्द्रकीलके निवेश्यत इति जीवा० ३ प्र० (वइरामयीतो आवत्तणपेढिआउ) आवर्तनपीठिका नाम यत्रेन्द्रकीलका उत्तं च विजयद्वारचिन्तायाम् जीवाभिगममूल टीकाकारेण 'आवर्तनपीठिका यत्रेन्द्रकीलको भवतीति' ।।राज०। जीवा०जंबू।।

आवट्टायंत- त्रि० *[आवर्तायमान]*
आवर्त कुर्वाणे भग० ११ श० ११ उ०।
प्रदक्षिणं भ्रमति, च कल्प०।
आवत्तायंतवट्टतडियविमलसरिसनयणं। आवर्तं कुर्वाण तद्वद् ये वृत्ते च तडिदिव विमले च सदृशे च परस्परेण ते लोचने यस्य स तथा ।तं०। भग०११ श० ११ उ०।
आवर्तायमानं प्रदक्षिणं भ्रमन् एवंविधं यत् प्रवरकनक तद्वत् वृत्ते (तडियविमलत्ति) विमला या तडित् विद्युत् तत्सदृशे नयने लोचने यस्य स तथा तम्। कल्प०।

आवड न० *[आवर्त्त]*
मणीनां लक्षणः। जीवा०।

आवडिय–१ न० *[अवकोटित]*
अधस्तादामोटितानि। उत्त०।

आवडिय–२ न० *[आपतित]*
आपतितः। आव०।
आस्फालितः। आव०।

आवण न० आपण
आपणः, हट्टः। भग०। पण्हा० ।
वीथिः। दश० । जम्बू० । अनुयो० ।
आपणः, पण्यस्थानम्। पण्हा०।

आवणवीहि पुं० *[आपणवीथि]*
हट्टमार्गः, रथ्याविशेषः। जीवा०।

आवणाइ– त्रि० *[आयतनानि]*
आपतनानि वा उपभोगार्थमागमनानि। जम्बू०।

आवरण- न० *[आवरण]*
आ मर्य्यादया वृणोतीत्त्यावरणम्। ठा० ४ ठा०।
अंगरक्षकादिके, ।नाया० ८ अ०।
कवचादिके ।उत्त० ३ अ०।
(जाणावरणपहरणे) आवरणं कवचादि आव००
आवरणए कवचादी सूय० १ श्रु० ८ अ०।
आवरणानां सन्नाहानाम् ठा०९ ठा०।।
आवरणानां कंकटानाम् श० १६ अ०।
स्फुरकादिके आवरणानि च स्फुरकादीनि। उव०।
फलादिके, आचा० १ अ० ५ उ०।
आव्रियते आकाशमनेनेत्यावरणम् प्रसादनगरादिके, ।ठा० ९ ठा०।
स्थगने, बुह० १ उ०।
ईषद्वरणे आवरिज्जइ वा णिवारइज्जइ वा आवरिज्जइति इषद् व्रियत। भग० ९ श० ३३ उ०।
आवरणम्, स्फुरकादि। पण्हा०।
आव्रियते आकाशमनेनेति, भवनप्रासादनगरादि तल्लक्षण-शास्त्रम्। ठा० ४५१।
आवरणे–प्रच्छादनपटे। जम्बू०

आवरणसत्थ- न० *[आवरणशास्त्र]*
आव्रियते आकाशमनेत्यावरणम्। भवनप्रासादनगरादि तल्लक्षणं शास्त्रमपि तथा वस्तु विद्यात्मके पापश्रुतभेदे, ठा०९ ठा०

आवरणावरणपविभत्ति- न० *[आवरणावरणप्रविभक्ति]*
नाट्यविधिभेदे। चंदावरणपविभत्तिं च सूरावरणपविभत्तिं च आवरणा वरणपविभत्तिं णामं दिव्यं णट्टविहं उवदंसेइ।।
चन्द्रावरणप्रविभक्तिसूर्य्यावरणप्रविभक्तियुक्तमावरणावरण प्रविभक्तिसर्य्यावरणप्रविभक्तिनामकमष्टमं नाट्यविधिमुपदर्शयन्ति। रा०।

आवरणी- स्त्री० *[आवरणी]*
आवरणकारिण्याम् विद्यायाम्, नाया० १६ अ०।

आवरिज्जमाण- त्रि० *[आव्रियमाण]*
स्वल्पमाने, (आवरिज्जमाणावा आवरिज्जमाणत्ति) स्वल्पमानानि भग० १५ श० १ उ०।

आवरित्ता- अव्य० *[आवृत्य]*
आवरण कृत्वेत्यर्थे (आवरित्ता चिट्ठइ) ठा०।।

आवरिय- त्रि० *[आवृत्त]*
(आवरिओ कम्मेहि) आवृत्तःप्रच्छादितः निसि० १ उ०
(आवरिया विरणमुहे) आवृत्ता अपि सन्नद्धसन्नाहा। अपि वव० १ उ०।

आवरिसण- न० *[आवर्षण]*

उदकादिना छटकप्रदाने। समज्जणआवरिसण उवलेवणसुहुम दीएवए चेव।आवर्षणमुदकेन छटकप्रदानमिति बुह० १उ० । आवरिसणं पाणिएण उप्फासण निसि० २ उ०।

(उवलेवणसम्मज्जणा वरिसण) आवर्षणं गन्धोदकादिनेति गच्छा० २ अधि० अनुओ०।

उदगादि आवरिसणं उदकेनादिशब्दाद् घृतेन तैलेन वाऽऽव-र्षणं करोति बुह० ४ उ०।।

समन्ताद्वर्षण (आवरिसिज्जा)

आसमन्ताद्वर्षेत्। रा०।

आवरिहिय- त्रि० *[आवर्हित]*

उत्पाटिते, उन्मूलिते, आव०।

आवलण- न० *[आवलन]*

मोटन (गलगवलावलणमारणाणि) गलस्य कण्ठस्य गवलस्य श्रृंगस्याऽवलनं च मोटनम् पण्हा० १।

आवलि- स्त्री० *[आवलि]*

पङ्क्तौ विशे० अनुत्त० १ अ०

(कोंचावलीइ वा हारावलीइ वा वलयावलीइ वा) आव-लिपदोपादानं वर्णोत्कट्य प्रतिपादनार्थम्। जंबू।

आवलिय- त्रि० *[आवलित]*

आमोटिते। (अणच्चावियंओवलियं) अवलितं यथात्मनो वस्त्र-स्य च वलितमिति मोटनं न भवतीति। उत्त० २६ अ०।।

आवलियणिवाय- पुं० *[आवलिकानिपात]*

आवलिकया क्रमेण निपातः संपात आवलिकानिपातः क्रमेण संपाते। ताजोगेति व पुस्स आवलि(त)याणिवाते आहितेति वदेज्जा ताइति। आस्तां तावदन्यकथनीय सम्प्रत्येतावत्कथ्यते योग इति। वस्तुनो नक्षवजातस्य (आवलिकानिवायोति) आवलिकया क्रमेण निपातश्चन्द्रसूर्य्यैः सह संपात आख्यातो मयेति वदेत् सूर० १० पाहु० । चंद० १० ।

आवलियपविट्ठ- त्रि० *[आवलिकाप्रविष्ट]*

आवलिकासु श्रेणिसु प्रविष्टा व्यवस्थिता आवलिकाप्रविष्टाः श्रेण्या व्यवस्थिते, जीवा० ३ प्रति०।

आवलियपविभत्ति- न० *[आवलिकाप्रविभक्ति]*

दिव्ये नाट्याविधि-भेदे।

चन्द्रवलिप्रविभक्ति सूर्य्यावलिप्रविभक्ति, वलयावलि प्रवि-भक्ति हंसावलिप्रविभक्त्येकावलिप्रविभक्ति, तारावलि-प्रविभक्ति, मुक्तावलिप्रविभक्ति, कनकावलिप्रविभक्ति, रत्नावलि प्रविभक्त्या नितथात्मकमावलिप्रविभक्ति नाम पञ्चमं नाट्यविधिमुपदर्शयन्ति रा०।

आवलियबाहिर- त्रि० *[आवलिकाबाह्य]*

इतस्ततो विप्रकीर्णे, अन्न यद्वक्तव्यन्तद् (आवलियापविट्ठ) शब्दे उक्तम् जीवा० ४ प्र०।

आवलिया- स्त्री० *[आवलिका]*

पङ्क्तौ बुह० ३ उ०।

आवलिका पङ्क्तिरभिधीयते। आलीश्रेण्यावली पङ्क्तिरिति वचनात् भ्रमरावली भ्रमरपङ्क्तिः। रा०

एकान्ते स्थितानां विच्छिन्नायाम्मण्डल्यां च। या विच्छिन्ना एकान्ते भवति मण्डली सा आवलिका या पुनः स्वस्थान एव सा मण्डली। वव० ४ उ०।

असंख्यातसमयमाना। स्था०।

आवलिका, श्रेणिः। जीवा० ।

असंख्येयसमयसंघातोपलक्षितः कालः। आव०।

असङ्ख्यातसमयात्मिका। भग०।

असङ्ख्येयसमयसमुदा–यिका। सूर्य०।

आवसंत- त्रि० *[आवसत्]*

आवासं कुर्वति।।

(सुयंमे आउसंतेणं भगवया एवमक्खायं) सुयमे आउसंतणंति मयेत्यस्य विशेषणात्तत आङिति गुरुदर्शितमर्यादया वसता अनेन तत्त्वतो गुरुमर्यादावर्तित्वरूपत्वात् गुरुकुलवासस्य तद्विधा नमथत उक्त ज्ञानादि हेतुत्वात् ठा०१ ठा०

आगारमावसद्भिः सेवमानैः आचा० ५ अ० ३ उ०।

आवसह- पुं० *[आवसथ]*

आवसत्यत्र आवस अथच् गृहे, सूय०२ श्रु०२ अ०।।

आवसथं गृहमिति सूय०१ श्रु०४ अ०।

आश्रये, (आवसहं वासमुस्सिणामि) आवसथं वा युष्मदाश्रयं समुच्छृणोमि आचा० ७ अ० २ उ०।

परिव्राजकाश्रये उटजाकारे गृहे, आवसथः परिव्राजकाश्रय इति पण्हा० १ अ०।

आवसथास्तापसाश्रया उटजादयः। दशा, परिव्रा-जकमठः भग०२ श० १ उ०

केचनावसेषूटजा कारेषु गृहेषु वंसतीति सूय०२ श्रु०२ अ०

आवसहिय- पुं० *[आवसथिक]*

आवसथो गृहं तेन च रंतीत्यावसथिकः। सूय० १ श्रु० १ अ०

आवसथास्तापसाश्रया उठजादयस्तत्रवसत्तीत्यावसथिकाः।। दशा०

तीर्थिकविशेषे सूय०२ श्रु० ७ अ०

आवसथिकाः केचनावसथेषूटजाकारेषु गृहेषु वसतीति सूय०२ श्रु०२ अ०।

आवस्सय-१ पुं० *[आपाश्रय]*

आमर्यादयाऽभिविधिना वा गुणानामापाश्रय आधार इदमित्या-पाश्रयः। सामायिकादिके आवश्यके।

विशेषावश्यके आवश्यकपर्यायनामान्यधिकृत्य। आवस्सयं अवस्सकरणिज्जं धुवनिग्गहे विसोहीय।

आमर्यादयाऽभिविधिना वा गुणानामापाश्रय आधार इदमि-त्यापाश्रयं गुणाधार इत्यर्थः। विशे०।

आवस्सय-२ न० *[आवश्यक]*

अवश्यं भाव आवश्यकं द्वन्द्वमनोज्ञादिभ्यश्चेति मनोज्ञादेरधि-कृतत्वाद्वुञ्। आव०चू० २ अ०।

अवश्यं कर्तव्यं आवश्यकं–कायिकाव्युत्सर्गरूपम्। ओह० ।

कायिकोच्चारादि। ओह० ८७।

प्रतिक्रमणम्। ओघ०।

सामायिकादि षडध्ययनकलापः। अनुओ० ७।

अवश्यं कर्म्म आवश्यकं अवश्य-कर्तव्यक्रियानुष्ठाने। नं०।

आवस्सगपरिसुद्धीय, होंति भिक्खुस्स लिङ्गाइं।

आवश्यकपरिशुद्धिश्चावश्यं करणीययोगनिरतिचारतेति। दश० १० अ० । आव०। । अनुओ०। । ठा० १० ठा०।

नियमात्कर्तव्यो, आवश्यकानि नियमत एव करणीयानीति आव० ४ अ०।

अवश्यंभावित्वाद्वाच्यत्वाद्वाश्यकं ठा० ४ ठा० अनुओ०।

श्रमणादिभिरवश्यं क्रियत इति, ज्ञानादिगुणा मोक्षो वा आ–समन्ताद् वश्यः क्रियतेऽनेन, आ–समन्ताद्वश्या इन्द्रिय कषा-यादिभावशत्रवो येषां ते तथा, तैरेव क्रियते यत् तत्। अनुओ०

दोषत्यागलक्षणमवनतादिकम्। आव०।

मूलगुणोत्तरगुणानुष्ठानलक्षणः। आव०।

आवस्सय-३ न० *[आवश्यक]*

समग्रस्याऽपिगुणग्रामस्याऽवासकमित्यावश्यकम्। अनुओ०।

सामायिकादिके। ठा० २ ठा०।।

आवस्सय-४ न० *[आवासक]*

गुणशून्यमात्मान मासमंताद्वासयति गुणैरित्यावासकम्सामा-यिकादिके। गच्छा० २ अधि०

अथवा आऽऽवस्सयंति प्राकृतशैल्याऽऽवासकम्।। गुणशून्य-मात्मानं गुणैरावासयतीत्यावासकम्। गुणसान्निद्यमात्मनः करोतीति।। आव० म० १ अ०। अनुओ०।

अवश्यं कर्तव्यमावश्यकं, वा गुणानामावश्यमात्मानं करोती त्यावश्यकं, यथा अन्तं करोतीत्यन्तकः, अथवा गुणशून्यामा-त्मानमावासयति गुणैरित्यावासकम्। आव० ५१।

आवस्सयकरण- न० *[आवश्यककरण]*

केवलिसमुद्घातात्पूर्वं केव-लिना क्रियमाणे व्यापारभेदे, शब्दा ते स्वोपात्तमनुप्यायुषोतः प्रक्षयवशाद्भुक्तस्याऽन्तर्मुहूर्ते शेषे सिध्यत्पर्यायाभि मुखा अवश्यकरणमिति प्रश्ने प्रदर्श्यते। अन्वर्थत्वादवश्यकारणसंज्ञायाः भास्करवत् अवश्यकरणीय-त्वादवश्यकरणं कुर्वतीति। कथमिदमावश्यकरणमिति कथम् इदमत्वर्थेति दर्श्यते।

अर्थमनुगता या संज्ञा सान्वर्था। अर्थमंगीकृत्य प्रवर्तत इत्यर्थः। कथमिह यथा भास्करसंज्ञा अन्वर्था। कथमन्वर्थाभासं करो-तीति भास्कर इति यो भासनार्थमंगीकृत्य प्रवर्तत इत्यर्थः। तथावश्यककरणमिति इयं संज्ञा अन्वर्था कच्छमिति चेत् ब्रूमहे। अवश्यकं क्रियत इत्यावश्यकरणं इति। योऽवश्यकर-णार्थोऽवश्यकर्त्तव्यतार्थमंगीकृत्य प्रवर्तते यस्मात्तस्मात्सर्वकेव-लिभिः सिद्धयद्भिरवश्यं क्रियमाणत्वादवश्यकरण मित्यर्थ संज्ञासिद्धिरथवावश्यं भाव आवश्यकं द्वंद्व मनोज्ञादिभ्यश्चेति मनोज्ञादिरधिकृतत्वात् बुद्धिसत्यावश्यक सिद्धिः।

आवश्यकं करणं आवश्यककरणं।

कुतः लोके दृष्टत्वाद् मल्लस्य कक्षाबंधकरणवत् तथा मल्लोयुयुत्सुनाबध्वाशाटकं युध्यते। स हि प्रथममेव शाटकेन कक्षं बध्वा अतः परं कृतावश्यकं कक्षाबंधकरणं योद्धुमारभेत्। तथांतरर्मुहूर्तायः शेषेण केवलिभावसिद्धता प्रथममेवेदं करणं अवश्यं कर्त्तव्यमित्यावश्यककरणमिति आव०चू० २ अ०।

आवस्सयटीगा- स्त्री० *[आवश्यकटीका]*

हरिभद्रस्वामिविरचितायामावश्यकवृत्तौ, आव०६ अ०।।

आवस्सयणिज्जुत्ति- स्त्री० *[आवश्यकनिर्युक्ति]*

भद्रबाहुस्वामिविरचिते आवश्यक व्याख्याने। तथा चाऽव-श्यकनिर्युक्तिं विवृण्वन् मलयगिरिराह। आव०म० १ अ०।

आवस्सयपरिसुद्धि- स्त्री० *[आवश्यकपरिशुद्धि]*

अवश्यंकरणीययोग-निरतिचारतायाम्। आवश्ययपरिसुद्धीय, होंति भिक्खुस्स लिंगाइं।आवश्यक परिशुद्धिश्चावश्यं करणीय योगनिरतिचारता च भवति भिक्षोर्भावसाधोर्लिंगानीति। दश० १० अ०।

आवस्सयवइरित्त- न० *[आवश्यकव्यतिरिक्त]*

अंगबाह्ये श्रुतभेदे। नं०। आव०म०

आवस्सयवित्ति- स्त्री० *[आवश्यकवृत्ति]*

आवश्यकविवरणे आव० म०प्र० १ अ०।

आवस्सयसुयक्खंध- पुं० *[आवश्यकश्रुतस्कंध]*

षण्णांश्रुतविशेषाणां स्कंधः श्रुतस्कंधः। आवश्यकं च तत् श्रुतस्कंधश्चावश्यक श्रुतस्कंधः। स्वनामख्याते श्रुत। विशे०।

आवस्सयाणुओग- पुं० *[आवश्यकानुयोग]*
आवश्यकव्याख्याने, अनुओ०। आव०चू० १ अ०। विशे०।

आवस्सिता- स्त्री० *[आवश्यिकी]*
चतुर्थी सामाचारी। ठा०।

आवस्सिया- स्त्री० *[आवश्यिकी]*
अवश्यं कर्तव्यमावश्यकम् तत्र भवाऽऽवश्यिकी अनुओ०।
अवश्यंकर्तव्यैयोगेर्निष्पन्नाऽऽवश्यकी ठा० १० ठा०।
अवश्यं कर्तव्यैश्चरणकरणयोगैर्निर्वृत्ताऽऽवश्यकी। आव० ३ अ०। जीत०।
अवश्यकर्त्तव्यैश्च्चरणकरणयोगैर्निर्वृता। आव०। बुह०।
अप्रमत्तत्वेनावश्यकर्त्तव्यव्यापारे भवाऽऽवश्यकी उत्त०२६ अ०
आवश्यकेषु अप्रमत्ततयाऽवश्यकर्त्तव्यव्यापारेषु सत्सु भवाऽऽवश्यिकी गच्छा० २ अ०
सामाचारीभेदे, (पढमा) आवस्सिया नामं उत्त० २६ अ०।
प्रथमा सामाचारी आवश्यकी नाम्नी यतः उपाश्रयात् निर्गच्छन् साधुरावश्यकीति वदति उपाश्रयात् बहि र्निःसरणं चावश्यकीं विना न स्यात् तेन आवश्यकीति प्रथमा सामाचारी ज्ञानाद्यालंबनेनोपाश्रयात् बहिरवश्यं गमने समुपस्थितेऽवश्यंकर्तव्यमिदमतोगच्छाम्यहमित्येवं गुरुं प्रतिनिवेदनाऽऽवश्यकीति हृदयम्। अनुओ०। बुह०१ उ०। ठा०।
आवश्यकी, क्वचिद्बहिर्गमनकार्ये समुत्पन्नेऽवश्यंगन्तव्यमिति-भणनम्। बुह०।

आवह- पुं० *[आवह]*
नापि तपसा पूजनं सत्कार मावहेत् न पूजनसत्कारनिमित्तं तपः कुर्य्यादित्यर्थः सूय०७ अ०

आवाडा पुं० *[आपाता]*
आपाता इति नाम्ना किराताः। जम्बू०।

आवातभद्दत पुं० *[आपातभद्रक]*
प्रथममीलके दर्शनालापादिना भद्रकारी। ठा०।

आवाय– पुं० *[आपात]*
तत्प्रथमतया संसर्गः। भग०।
आभिमुख्येन समवायः। आव० ।
अभ्यागमः। ओघ०।

आवावकहा- स्त्री० *[आवापकथा]*
विकथाभेदे व्याख्या भत्तकहा शब्दे । ठा०।
आवापकथा, ईयद्द्रव्या शाकघृतादिश्चात्रोपयुक्ता इत्यादि प्रशंसनं द्वेषणं वा, भक्तकथायाः प्रथमभेदः। आव०।
शाकघृतादीन्येतावन्ति तस्यां रसवत्यामुपयुज्यन्त इत्येवंरूपा कथा आवापकथा।ठा० २०९।

आवास-१ न० *[आवश्य]*
आवश्यके वव० १ उ०।

आवास-२ पुं० *[आवास]*
आवसन्ति येषु ते आवासाः भग०१ श० ४ उ०
आश्रये- । ठा०।
जेसिं ते आवासा-येषां देवानां ते निधय आवासा आश्रया इति । ठा० ९ ठा० ।
आवसंत्यस्मिन्नित्यावासः मनुष्यादिभवे मनुष्यादिशरीरे च 'अणिच्चमावासमुवेतिजंतुणा आवसंत्यस्मिन्नित्यावासो मनुष्यादिभवस्तच्छरीरं वा तमनित्यं उपसामीप्येन यंति गच्छंति जंतवः प्राणिन इति आचा०।
नरका वासाः नरकावासशब्दे। अथासुराद्यावासविषयमभिलाषं दर्शयति। सम०।
देववासस्थानम्। जम्बू० ।

आवासपव्वय- पुं० *[आवासपर्वत]*
निवासभूते पर्वते, (गोथूभस्स णं आवासपव्वयस्स) सम०।

आवासय- न० *[आवासक]*
आसमन्तात् ज्ञानादिगुणैः शून्यं जीवं वासयति तैर्युक्तं करोतीत्यावासकम् सामायिकादिके, विशे०।
आवासो नीडमावास एवावासकः नीडे, पु० वासगगयं तु षोसति वासगगयंति प्राकृतत्वादाद्याकारस्य लोपः आवासो नीडमावास एवावासकः। वव०१ उ०
(सावासगापविउं मन्नमाणं) स्वकीयादावासकात्स्वनीडात्, सूय० १ श्रु० १४ अ०।

आवाह- पुं० *[आवाह]*
आहूयंते स्वजनास्तांबूलदानाय यत्र स आवाहः। विवाहात् पूर्वं ताम्बूलदानोत्सवे, जीवा० ३ प्रति०।
अभिनवपरिणीतस्य वधूवरस्यानयने। पण्हा० ९ अ०।
वध्वा वरगृहानयने, च पण्हा० ९ अ०।

आवाहविहारवरकहा- स्त्री० *[आवाहविवाहावरकथा]*
आवाह विवाहप्रधानायां परिणेतृकथानां, (आवाहविवाहवरकहावि)आवाहोऽभिनवपरिणीतस्य वधूवरस्याऽनयनं विवाहश्च पाणिग्रहणं तत्प्रधानां या वरकथा परिणेतृकथा आवाहविवाहवरा वा या कथा सा तथा सापि न कथयित व्येतिप्रक्रमः। पण्हा० ९ अ०।

आविइ-१ स्त्री० *[आविची]*
अविचदेशोद्भवायाम्– । रा०।

आविइ-२ स्त्री० *[आविची]*
अनुसमयम्–प्रतिक्षणमं। भग० ६२५।

आवीईमरण त्रि० आवीचिमरण

आ–समन्ताद्वीचय इव वीचयः–आयुर्दलिक–विच्युतिलक्षणा अवस्था यस्मिंस्तदावीचि, अथवा वीचिः–विच्छेदस्तदभावाद् आवीचि, दीर्घत्वं तु प्राकृतत्वात्तदेवंभूतं मरणमावीचिमरणं–प्रतिक्षणमायुर्द्रव्यविचटनलक्षणम्। सम० ३३।

सप्तदशमरणभेदे प्रथमः। उत्त० २३०।

आ–समन्ताद्वीचयः–प्रतिसमयमनुभूय– मानायुषोऽपरापरा-युर्दलिकोदयात्पूर्वपूर्वायुर्दलिकविच्युतिलक्षणाऽवस्था यस्मिन् तदावीचिकं, अथवाऽविद्यमाना वीचिः–विच्छेदो यत्र तदवी-चिकं अवीचिकमेवाविचिकं तच्च तन्मरणं चेत्यावीचिकमरणम् । भग० ६२४।

आविंचइत्ता- अव्य० *[आविध्य]*

परिधायेत्यर्थे (पालंबं वा सुवण्ण-सुत्तं वा अविधेज्ज वा पिणिंधेज्ज वा) आचा० ६ अ० ३ उ०।

आविक्कम्म- न० *[आविष्कर्मन्]* न०-

प्रगटक्रियायाम् । ठा० ९ ठा० कल्प०।

आविट्ठ- त्रि० *[आविष्ट]*

अधिष्ठिते, ठा० ५ ठा०।

प्रविष्टे, केतने मत्स्यबंधने प्रविष्टा निर्गतिकाः। सूय० १ श्रु० ३ अ०।

युक्ते, च सम० ३ सम०।।

आविद्ध- त्रि० *[आविद्ध]*

छिद्रिते, क्षिप्ते च (नश्यतीषुर्यथाऽऽविद्धः) मनु–वाच, परिहिते, कल्प औप०

(आविद्धमणिसुवण्णे) आविद्धानि परिहितानि मणिसुवर्णानि येन सः। तं०। उव०।

आविद्धानि परिहितानि मणिसुवर्णानि लक्षणया मणिसुवर्णानि सुवर्णमयादिभूषणानि येन स तथा तस्मिन्। कल्प०।

(आविद्धवग्घारियमल्लदामकलाव) परिहितप्रलंबपुष्पमाला-समूहे। नाया० २ अ०।

परिहितम्। जम्बू० ।

शिरस्यारोपणेन आविद्धः। भग० १९३।

समन्तात्ताडितः। उत्त० ४९५।

आविद्धवीरवलय- त्रि० *[आविद्धवीरवलय]*

आविद्धानि वीर वलयानि वीरत्वगर्वसूचकानि वलयानि येन तथा तस्मिन् सुभटोहि यदि क्वचिदन्योऽप्यस्ति वीरव्रतधारी तदाऽऽसौ मां विजित्य मोचयत्वेतानि वलयानीति स्पर्द्धयन् यानि कटकानि परिद-धाति तानि वीरवलयानीत्युच्यन्ते। उव० ।कल्प० ।नाया० १ अ०।

आविल- त्रि० *[आविल]*

आकुले, (कलुसाविलचेयसे) । सम० सूय०।

अस्वच्छे, आविलमविमलमस्वच्छमिति जीवा० ३ प्रति०।

अनाविलोऽकलुषो रागद्वेषासंपृक्ततथा मलरहितोऽनाकुलो वा विषयाप्रवृत्तेः–स्वच्छचेता इति । सूय० १ श्रु० १५ अ०।

आविलप्पा- पुं० *[आविलात्मन्]*

आकुलात्मनि, (अभयं करे भिक्खु अणाविलप्पा) अनाविलो विषयकषायैरनाकुल आत्मा यस्या-सावनाविलात्मा। सूय०१ श्रु० १७ अ०।

आवीइमरण- न० *[आवीचिमरण]*

आसमन्ताद्वीचय इव वीचय आयुर्दलिकविच्युतिलक्षणा अवस्था यस्मिंस्तदावीचि अथवा वीचिर्विच्छेदस्तदमावाद-वीचिः दीर्घत्वं तु प्राकृतत्वात्तदेवं भूतं मरणमावीचिमरणम्। प्रतिक्षणमायुर्द्रव्यविचटनलक्षणे मरणभेदे, सम०१७ सम०।

आवीकम्म- न० *[आविष्कर्मन्]*

प्रगटकर्मणि, कल्प०।।

आवेढिय- त्रि० *[आवेष्टित]*

सकृद्वेष्टिते, ठा० १० ठा० ।

सर्वतोवेष्टिते, भग० १६ श० ६ उ०।

सव्वओ समंतात् आवेढिय परिवेढियं–आवेढियंति सकृदा-वेष्टितम् परिवेढियं ति असकृदिति ठा०।

आवेढियंति अभिविधिना चेष्टितं सर्वत इत्यर्थः परिवेढियंति पुनः पुनरित्यर्थः। भग०।

आवेढियपरिवेढिय- त्रि० *[आवेष्टितपरिवेष्टित]*

गाढतरं संवेल्लिते। पन्न० १५ पद०।

आवेत- त्रि०

छन्ने प्रदेशे कुड्येऽवष्टभ्य ऊर्ध्वीकृते। वव० १ उ०।।

आस-१ पुं० *[अश्व]*

अश्नुते व्याप्नोति मार्गम्–घोटक नाया० १७ अ०। अनुओ०।।

अश्वस्तुरगं इति । उव०।।

वाल्हीकादिदेशोत्पन्ने जात्यश्वे दश० ६ अ०।

जात्या आशुगमनशीला अश्वाः–शेषा घोटकाः जीवा० ३ प्र०।

आस-२ पुं० *[आश]*

अशनमाशः। भोजने । आव० म० १ अ०।

(सामासाए पायरासाए) प्रातरशनं प्रातराशः प्रत्यूष स्येव भोजनमिति सूय० २ श्रु०१ अ०।

आसंग- पुं० *[आसंग]*

अभिष्वङ्ग, स्वरूपम्, गार्ध्ये, । सूय० १ श्रु० ३ अ० ।

रोगे आचा० ५ अ० ३ उ० ।।

आसंदय- न० *[असन्दक]*

आसनविशेषे, (आसनमासनकादीत्ति) आचा० १ अ०५ उ०।

पल्यङ्कः। आव० ।

आसंदिया-स्त्री० *[आसंदिका]*

मंचिकायाम्-(आसंदियं च न वसुत्तं) आसंदिकां मंचिकाम् सूय० १ श्रु० ४ अ०।

आसंदी- स्त्री० *[आसन्दी]*

मंचके, सूय० २ श्रु०१ अ०

(आसंदी पलियंके य)आसंदीत्यासनविशेष।सूय०१ श्रु०९ अ०

मञ्चिका। पिण्ड०।

उपवेशनयोग्या मञ्चिका। सूय०। दश०।

उपवेशनार्हमासनम्। दश।

आसंबर- पुं० *[आशाम्बर]*

दिगंबरे जैनसाधुभेदे, एतेन यदाहुराशाम्बराः न स्त्रीणां निर्वाणमिति तदपास्तम् इति। नं०।

आसंसप्पओग- पुं० *[आशंसाप्रयोग]*

आशंसप्पओगो नाम निदान-करणम् इति। निसि० १ उ०।

आसंसा- स्त्री० *[आशंसा]*

आशंसनमाशंसा-अभिलाषे,। आव० ६ अ०।

आशंसनमाशंसा-इच्छायाम्, ठा०

आशंसनमाशंसा-अप्राप्तप्रापणाभिलाषे, आचा०२ अ०उ०२।

आसंसाविप्पमुक्क- त्रि० *[आशंसाविप्रमुक्त]*

इहलोकाद्यपेक्षया विप्रमुक्ते, । आव०।

आसंसि- त्रि० *[आशंसिन्]*

(धिइजुत्तो अणासंसी) अनाशंसी श्रोतृभ्यो न वस्त्राद्याकाङ्क्षति–आचा०१ उ०।।

आसक्खंध- पुं० *[अश्वस्कंध]*

हयग्रीवायाम्, ठा० २ ठा०।

आसक्खंघसंठित पुं० *[अश्वस्कंधसंस्थित]*

अश्विनीनक्षत्रसंस्थानः। सूर्य० १३०।

उभयोरपि पार्श्वयोः पञ्चनवतियोजनसहस्रपर्यन्तेऽश्वस्कन्धस्य इवोन्नततया षोडशयोजनसहस्रप्रमाणोच्चैस्त्वयोः शिखायाभावात्। जीवा० ३२५।

आसकण्ण- पुं० *[अश्वकर्ण]*

अश्वमुखद्वीपात्परतोंऽतरद्वीपभेदे, ठा०४ ठा०।

सप्तदशान्तरद्वीपः। जीवा०।

आसण- न० *[आसन]*

आस्यते उपविश्यतेऽस्मिन्नित्यासनम्।

आतापनास्थान,उत्त० २ अ०।

वसत्यादि, सूय० १ श्रु०२ अ०।

स्थाने, उत्त० १ अ० १ उ०।

आस्यते स्थीयतेऽस्मिन्निति शय्यायां आचा० २ अ०५ उ०।

आसन्दकादिविष्टरं, आस्यते–स्थीयतेऽस्मिन्निति वाऽऽसनं-शय्या। आचा०।

पीठफलकादिआव० ४ अ०। ठा० ९ ठा०। निसि० १ उ० सम० २० सम०। आव०५ अ०।

आधार-लक्षणे धर्म्मास्तिकायादीनां लोकाकाशादिके, । आव० १ अ० ।

उपवेशन योग्यनिषद्यादिके, बुह० ३ अ०।

विष्टर, पण्हा० १ अ०।

हंसासनादिके, जीवा० ३ प्रति०। भग० १ श० ११ उ०।

उपवेशने, ठा० ९ ठा०। उत्त० ६०९।

सिंहासनादि। पण्हा०।

अपवादगृहीतं पीठकादि। दश०।

आसनप्रदानं, गुर्वादीनां समागतानां पीठकाद्युपनयनम्। वव० २ उ०।

आसणअणुप्पदाण– न० *[आसननानुप्रदानम्]*

स्थानात्स्थानं सञ्चारणम्। दश०।

आसणअभिग्गह- पुं० *[आसनाभिग्रह]*

तिष्ठत एव गुरोरादरेणासनानयनपूर्वके अत्रोपविशत इति भणने दर्शनविनयभेदे, । सम०९१ सम०। निसि० २ उ०।

आसणगय- त्रि० *[आसनगत]*

स्वस्थाने स्थिते, उत्त०।

आसनासीने उत्त०।

आसणत्थ- त्रि० *[आसनस्थ]*

उत्कृटकागोदोहिकावीरासनाद्यवस्थे, आचा० १ श्रु० ९ अ०।

(आसणत्थो पढिउमारवाहेति) निसि० १ उ०।

आसनस्थं, निषद्यागतम्। आव०।

आसणपयाण- न० *[आसनप्रदान]*

आसनदानमात्रे दर्शनविनय रूपे विनयभेदे,गच्छा०। निसि०।

आसणाणुप्पयाण- न० *[आसनानुप्रदान]*

गौरवमाश्रित्यासनस्य स्थानान्तरसंचारणे, भग० १४ श०३ उ० । ठा० ७ ठा०।

आसण्ण- त्रि० *[आसन्न]*

निकटवर्तिनि, ।उत्त० १अ० ।ठा० ।आव०म० ।बुह० ।आव०।

'उज्जेणीए नयरीए आसन्नोणडाणं गामा' आव० म०।।

आसण्णलद्धपइभ- त्रि० *[आसन्नलब्धप्रतिभ]*

परतीर्थीकादीनामुत्तरदानसमर्थे, गच्छा० १ अधि०।

आसण्णसिद्धिय- त्रि० *[आसन्नसिद्धिक]*
समासन्नीभूतनिवृत्तिके, पंच०

आसत्त- त्रि० *[आसक्त]*
भूमिलग्ने, नाया०
भूमौ संवासे नं०।
आ–अवाङ् अधोभूमौ सक्त आसक्तः, इति भूमौ लग्नः । पन्न०। जीवा० ।
भूमौ सम्बद्धः। उव० ५।

आसत्ति- स्त्री० *[आसक्ति]*
योगिपरिभाषितेऽर्थे नाया०
भेदे ठा०
धनादावासङ्गः, परिग्रहस्यैकोनत्रिशत्तमं नाम। पण्हा०।

आसत्तोसत्त- त्रि० *[आसक्तोत्सक्त]*
आ अवाङ् अधोभूमौ सक्त आसक्तो भूमौ लग्न इत्यर्थः ऊर्ध्वं सक्तउत्सक्तः भूमौ उल्लोचने उपरि च संबद्धे जीवा०।

आसत्थ- पुं०न० *[अश्वत्थ]*
पिप्पले, । निसि० । सम०।
असुरकुमारचैत्यवृक्षः। ठा०।
अनंतजिनचैत्यवृक्षविशेषः। सम०।

आसत्थ- त्रि० *[आश्वस्त]*
मार्गजनितश्रमापनयनेनाश्वत्थतामुपगते, । कल्प० । भग०११ श० उ०११
मनागांश्वसिते । उव० । ओघ० ।

आसदेत्ता- अव्य० *[आस्वाद्य]*
आस्वादनं कृत्वेत्यर्थे (सद्दफरिस रस-रूवगन्धे आसदेत्ताभवइ) ठा० ७ ठा०।

आसधर- पुं० *[अश्वधर]*
अश्वधारकपुरुषे, येऽश्वान् धारयन्ति। उव० ।

आसपुरा- स्त्री० *[अश्वपुरा]*
पद्मविजये पुरीयुगले, ठा०
(दो आसपु-राओ) ठा० ८ ठा०।
धातकीखंडे विदेहविशेषस्य राजधानी।ठा०।

आसम- पुं० *[आश्रम]*
तापसावसयोपलक्षिते आश्रयविशेषे, । वव०। जीवा०। प्रथमस्तापसादिभिरावासितः पश्चादपरोऽपिलोकस्तत्र गत्वा वसति । बुह०। निसि०। पन्न०। उव०। आचा०। अनुओ०।
तीर्थस्थान, ठा०। आचा०
आश्रमः, तापसादिनिवासः। पण्हा०।
व्रतग्रहणादिरूपः। दश०।

आसमद्दग- त्रि० *[अश्वमर्दक]*
घोटकानां मर्दनाधिकारिणि पुरुषे नाया०।

आसमपय- न० *[आश्रमपद०]*
तापसाश्रमोपलक्षिते स्थाने । उत्त०।
(कणकखलं नाम आसमपदं) आव० म०।
पार्श्वनाथदीक्षास्थानम् । आव० ।

आसमाण- त्रि० *[आसीन]*
निषण्णे, (अजयं आसमाणोय पाण भूयाहिहिंसइं) आसीनो निषण्णतयाऽनुपयुक्त आकुंचनादि भावेन। दश०४ अ०।

आसमित- पुं० *[अश्वमित्र]*
सामुच्छेदानां निह्नवानां धर्माचार्ये, योहि महागिरिशिष्यस्य कौंडिन्याभिधानस्य शिष्यो मिथिलायां नगर्यां लक्ष्मीगृहे चैत्ये अनुप्रवादाभिधाने पूर्वे नैपुणिके वस्तुनि छिन्नच्छेदनाय वक्तव्यतायां (पडुप्पन्नसमया नेरइया वोच्छिज्जिस्सन्ति एवं जाव वैमाणियत्ति एवं वितियाइ समए सुवत्तव्व) मित्येवं रूपमालापकमधीयानो मिथ्यात्वमुपगतः सामुच्छेदिक निह्न-वान् प्रावर्तयत् इति समुच्छेदिकशब्दो विवृत्यर्थिनाऽन्वे ष्टव्यः । ठा० ७ ठा०। उत्त०१ अ० । विशे०।
चतुर्थनिह्नवनाम। स्था०।

आसमुह- पुं० *[अश्वमुख]*
आदर्शमुखद्वीपस्य परतोंऽतरद्वीपे, तत्स्थे मनुष्ये च अन्तरद्वीपशब्दे विवृत्तिः उत्त० ३६ अ०। ठा० ४ ठा०
त्रयोदशान्तरद्वीपः। पन्न०। जीवा०।

आसय-१ त्रि० *[आशक]*
भोजिनि, आचा० ५ अ०४ उ०।
आशय स्वकीयदर्शनाभ्युपगमे, सूय०१ श्रु०१ अ०।
अभिप्राये, सूय०१ श्रु०१ ५।

आसय-२ पुं० *[आश्रय]*
आश्रयतीत्याश्रयः धूमबलाकादौ हेतौ, अनुओ०
प्रत्यये, आचा०१ अ०।
आलये, ठा० ३ ठा०।
भजनीये, नाया० १० अ०।।

आसय-३ न० *[आस्यक]*
मुखे, दश० ५ अ०। जीवा०। आचा०
आस्येन मुखेन दश०।

आसयंत- त्रि० *[आश्रयत्]*
गृण्हति, विशे०
ईषद्भजमाने भग० १३ श० ६ उ०
आश्रयणीयं वस्तु० भग० ११ श० ११ उ०।।

आसरयण- न० *[अश्वरत्न]*

चक्रवर्तिनोऽश्वोत्कृष्टे, यक्षसहस्राधिष्ठितेऽश्वे, सम०१४ सम०।
भरतस्य कमलामेलं नामेणं आसरयणं सेणावईक्कमेणं सम-भिरूढे। जंबू० । आव० चू० १ । सम०। ठा० ९ ठा०। पन्न० १९ पद०।

आसरह- पुं० *[अश्वरथ]*

अश्वप्रधानो रथोऽश्वरथः नाया० १ अ०
अश्वयुक्तोरथोऽश्वरथः। अश्वेन युक्ते रथे, (चाउग्घंट आसरयणं दुड्ढे) निसि० १३ अ०।

आसराय- पुं० *[अश्वराज]*

अणहिलपट्टननगरे जाते पौरपाटकुल मण्डने गुर्जरधराधिपत्तौ।
अणहिल्ल वाड्यपट्टणे य पोरबाल कुलमंडणा आसराय कुमरदेविलणया गुज्जरधराहिवई। प्रधानेऽश्वे, ठा०५ गच्छा०।

आसव-१ पुं० *[आसव]*

अप्कायतेजस्कायपवनवनस्पतिकायादि पिण्डरूपे। पिंड०।
मूलदलखर्जूरसारनिष्पन्ने, । पन्न० ।
पत्रादिवासकद्रव्यभेदादनेकप्रकारे निर्याससारे, जीवा०
मादकरसे, कुसुमोत्पन्ने मद्ये उत्त०।
चंद्रहासादिके, रा०। जीवा०। जम्बू०। निशी०।
आसवः, मद्यम्। उत्त०।
पुष्पप्रसवमद्यम्। उत्त०।
पत्रादिविशेषेण व्यतिरिक्त आसवः। पन्न० ३६४।
जलप्रवेशस्थानम्। वव० ।

आसव-२ *[आश्रव]*

आ-श्रवति यत् क्षरति जलं यैस्ते आश्रवाः सूक्ष्म रंध्रेषु भग०।
आश्रवति प्रविशति कर्म्म येन स आश्रव। सूय०।
आश्रवन्ति–प्रविशन्ति कर्म्माण्यात्मनीत्याश्रवः–कर्म्मबन्धहेतुः इतिभावः, स चेन्द्रियकषायाव्रतक्रियायोगरूपः। ठा० ।
अष्टप्रकारकं कर्म्म येन स। आव०।
कर्मबन्धस्थानानि। आचा०।
आश्रीयते उपार्ज्यते कर्म्म एभिः इत्याश्रवाः। उत्त०।
प्राणातिपात मृषावादादत्तादानमैयथुनमिथ्यात्वादिषु। आव०।
परिग्रह लक्षणेषु वा०। आचा०। रा०।
विषयकषायीदकेषु । आचा०। उव०। सू०।
कर्म्मप्रदेशद्वाररूपेषु। सूय०
पापोपादानकारणेषु। गच्छा०। उव०।
पापोपादानस्थानानि। आचा०।
उपादानहेतवो हिंसादयः। उत्त०।
सूक्ष्मरन्ध्रम्। भग० ८३।

रागे-आसवे आश्रवंति प्रविशन्ति येन कर्म्माण्यात्मनीति आश्रवाः कर्म्महेतुरिति भावः (एगे आसवे) ठा० ।
आश्रवः–इन्द्रियजयादिरूपः परमार्थपेशलः कायवाङ्ग–नोव्यापारः। दश०।
कर्मबन्धहेतुर्मिथ्यात्वादिः। आव०।
शुभाशुभकर्मादानहेतुः। ठा०।
आश्रवंति प्रतिशंति येन कडर्माण्यात्मनीति आश्रवः कर्म्मबन्ध-हेतुरितिभावः। सर्वेन्द्रियकषाया व्रतक्रियायोगरूपक्रमेण पंच-चतुः पंचपंचविंशतिभेदः। उक्तञ्च। इन्द्रिय ५ कसाय ४ अव्वय ५ किरिया २५ पण चउ अपंच पणवीसा। जोगतिए-णेव भवे आसो भेयाउ वाया लत्ति। तदेवमयं द्विचत्वारिंशति-द्विधोऽथवा द्विविधो द्रव्यभावभेदात्तत्र द्रव्याश्रवो यज्जलान्तर-गतनावादौ तथाविधपरिणामेन छिद्रैर्जलप्रवेशनाभावा आश्रव-स्तु यज्जीवानाम्यंचेन्द्रिवयादिछिद्रवतः कर्म्मजलसंचय इति सावाश्रव सामान्यादेक एवेति। सम०। ठा०। आचा०।
जे आसवाते परिस्सवा। आचा०।
य इति सामान्य निर्देश आश्रवत्यष्टप्रकारं कर्म्म यैरारंभैस्ते आश्रवाः परिसमन्तात् श्रवति गलति यैरनुष्ठानविशेषैस्ते परि-श्रवाः य एवाश्रवाः कर्मबन्धस्थानानि तएवपरिश्रवाः।। कर्म-निर्जरास्पदानीदमुक्तं भवति। यानीतरजनाचरितानि स्रगंगना-दीनी सुखकारणतया तानि कर्मबन्धहेतुत्वादाश्रवाः पुनस्ता-न्येव तत्वविदां विषय सुखपराङ्मुखानां निस्सारतया संसार-सरणिदेश्यानीनि कृत्वा वैराग्यजनकान्यतः परिश्रवा निर्जरा-स्थानानि आश्रवतीत्याश्रवः कर्मबन्धके आचा०५ अ०६ उ०।
आश्रवति तान् शोभनत्वेनाशोभनत्वे वा गृह्णातीत्याश्रवाः।
सूय ०१ श्रु० १४ अ०
आ समन्तात् श्रृण्वंति गृण्हती गुरुवचनमाकर्णयंतीत्याश्रवाः उत्त० १ अ०
गुरुवचने स्थिते। आश्रवो वचने स्थित इति उत्त०१ अ०।

आसवदार- न० *[आश्रवद्वार]*

आस्रवणं जीवतडागे कर्मजलस्य संगलनमाश्रवः कर्मबन्धनम् इत्यर्थः। तस्य द्वाराणीव द्वाराणि उपाया आश्रवद्वाराणि । ठा० ५ ठा०।
कर्मोपादानोपायेषु मिथ्यात्वादिषु। सम०१ सम०।
आश्रवद्वारम्, कर्मबन्धद्वारम्। आव०।

आसवमाण- त्रि० *[आस्रवत्]*

शनैः प्रस्रवति(उदयं आसवमाणं पेहारा) आचा० ४अ०१ उ०

आसवर- पुं० *[अश्ववर]*

अश्वानां मध्ये प्रधाने-उव०। भग० ९ श० ३३ उ०।

आसववुच्छेय न० *[आश्रवव्यवच्छेद]*
कर्मबन्धद्वारस्थगनेन संवरणेनेत्यर्थः। आव०।

आसवसक्ति- स्त्री० *[आस्रवसक्तिन्]*
आस्रवा हिंसादयस्तेषु सक्तं संगं आस्रवसक्तं तद्विद्यते यस्य आस्रवसक्ती हिंसाद्यनुषंगवति आचा० ५ अ० १ उ०।

आसवार- पुं० *[अश्ववार]*
अश्वारूढपुरुषे । भग०९ श० ३३ उ०।
ततो आसवारेण दिट्ठो । आव० म०।।

आसवोदगा- स्त्री० *[आसवोदक]*
आसवमिय चंद्रहासादिपसमासवमिवोदकं यासां ताः आसवोदकाः। आसवमिष्टोदकासु वापीषु। जीवा० ३ प्रति०। रा०।

आससेण- पुं० *[अश्वसेन]*
चतुर्दशे महाग्रहे । जंबू० । कल्प०।
पार्श्वजिन-पितरि, । सम०। कल्प०।
भरतक्षेत्रेऽवसर्पिण्यां जातस्य चतर्थचक्रिणः पितरि, सम०। आव०।

आसा- स्त्री० *[आशा]*
वांछयाम्, नाया० १ अ० तं०।
इच्छाविशेषे पण्हा०।
भोगाकांक्षायाम्। आसं च छंदं च ठिगिंव धीरे आचा०। आहारोपकरणगणस्वजनशरीराद्यनभिष्वंगरूपायामिच्छायाम्। अनुओ०।
अप्राप्तार्थानां प्राप्तिसंभावनायाम् उव०।
परसत्ववस्तुप्राप्त्यभिलाषे। आतु०।

आसाई-१ स्त्री० *[आश्वयुजी]*
अश्वयुगश्विनी तस्यां भवाऽश्वायुजो। आश्विनेयमासभाविन्याममायां पूर्णिमायां। जंबू०।

आसाई-२ त्रि० *[आस्वादयत्]*
इक्ष्वादेरिव ईषत्स्वादयति बहु त्यजति च । आचा० कल्प०।

आसाएनाण- त्रि० *[आशातयत्]*
आशातनां कुर्वति। ठा० ४ ठा०।

आसागह- पुं० *[आशाग्रह]*
चित्तव्याक्षेपकारित्वात् ग्रहतुल्यवांछायाम्। । आचा०।

आसाढ-१ पुं० *[आषाढ]*
आषाढी पूर्णिमा यत्र मासे स आषाढः। आषाढी पूर्णिमा घटिते मासे। आषाढे मासे सकृत् कर्कसंक्रांतौ उत्कर्षतोऽष्टादशमुहूर्त्तो दिवसो भवति। सम० १८ सम०।

आसाढ–२ पुं० *[आषाढ]*
तृतीय निह्नवनाम। यस्मादव्यक्ता उत्पन्नाः। आव०। ठा०।

आसाढग पुं० *[आषाढग]*
तृणभेदः। भग० ८०२।

आसाढपाडिवया-स्त्री० *[आषाढप्रतिपत्]*
आषाढपूर्णमास्या अनन्तरा प्रतिपदाषाढप्रतिपत्। श्रावणकृष्ण प्रतिपदि, ठा०४ ठा०।।

आसाढभूइ- पुं० *[आषाढभूति]*
धर्मरुचिसूरिशिष्ये, पिण्ड०।
देशभाषानेपथ्यादिविपर्ययकरणे दृष्टांतः। सूय०।
दर्शनपरीषहभग्नः। मरण०। वव० ।

आसाढा- स्त्री० *[आषाढा]*
नक्षत्रभेदे (दो आसाढा) । ठा० २ ठा०।
द्वे आषाढे पूर्वाषाढा उत्तराषाढा च- । ठा०।

आसाढायरिय- पुं० *[आषाढाचार्य]*
अव्यक्तिकनिन्हवाचार्ये उव०।
चेल्लयसुरेण थिरीकया आयरिया। वव०।

आसाढी- स्त्री० *[आषाढी]*
आषाढानक्षत्रयुक्ता पूर्णमासी आषाढी आषाढमासभाविन्यां पूणमायाम्- । आव०। सूर०। चंद०।

आसापास- पुं० *[आशापाश]*
इच्छाविशेषरूपे बन्धने आसापासपडिबद्धपाणा०। आशा इच्छाविशेषः सैव पाशो बन्धनं तेन प्रतिबद्धाः संरुद्धा निर्य्यान्ति इति गम्यं प्राणा येषां ते तच्छा। पण्हा० ३ अ० ।

आसाय- पुं० *[आस्वाद]*
आ ईषदपि अ इति न स्वादः आस्वाद मनागस्वादे रसनेन्द्रियजन्ये ज्ञाने। आस्वाद्यतेऽनेनेति कृत्वा यत्प्रकर्षाद्विव्यरससंविदुजायतेतस्मिश्च। नाया०। विशे०।
अभिलाषे आचा० ८ अ०।

आसायए– धा० *[आशातयति]*
कदर्थयति। दश०।

आसायण–१ *[आशातक]*
पाराञ्चिकः। ठा०।

आसायण-२ न० *[आशातन]*
आ समन्ताच्छातयति मुक्तिमार्गाद् भ्रंशयति इत्याशातनम् अनन्तानुबन्धिकषायवेदने। विशे०।

आसायणसील– पुं० *[आशातनाशील]*
शातयति–विनाशयति–इत्याशातना तस्यां शीलं–तत्करण स्वभावात्मकमस्येत्य–त्याशातनाशीलः। उत्त०।

आसायणा- स्त्री० *[आशातना]*
विनयभ्रंशेषु आव०।

ज्ञानादिगुणा आ सामस्त्येन शात्यन्ते अपध्वस्यन्ते याभिस्ता आशातनाः ठा० ।

आसामस्त्येन शात्यन्ते–अपध्वस्यन्ते यकामिस्ता आशातना–रत्नाधिकविषयाविनयरूपाः पुरतोगमनादिकाः। ठा० ।

प्रतिषिद्धकरणेषु। आव०चू० ।

लघुतापादनेषु। दश० । आतु० ।

स्वसम्यग्दर्शनादिभावापह्रासरूपा। दश० ।

आशातना ज्ञानदेवगुर्वादीनां जघन्यादिभेदाः त्रिविधाः तत्र ज्ञानस्य, तत्र जघन्या ज्ञानाशातना ज्ञानोपकरणस्थ निष्ठी-वनस्पर्शेऽतिकस्थे, च। तस्मिन्नधोवातनिसर्गो-हीनाधिकाक्षरोच्चार इत्यादिका १

मध्यमा आकालिकं निरुपधानतपो वाऽध्ययनं भ्रांत्यान्यथार्थ-कल्पनं ज्ञानोपकरणस्य प्रमादात्पादादिस्पर्शा भूपातनं चेत्या-दिरूपा २

उत्कृष्टत्वेनाक्षरमार्जनं उपर्युपवेशनशयनादिज्ञानोपकरणेंऽति-कस्थे उच्चारादिकरणं ज्ञानस्य ज्ञानिनां वा निंदा प्रत्यनीक-तोपघातकरणमुत्सूत्रभाषणं चेत्यादिस्वरूपा ३

जघन्या देवाशातना वासकुंपिकाद्यास्फालनश्वांसवस्त्रांचलादि-स्पर्शाद्या १

मध्यमा शरीराद्यशुद्ध्या पूजनं प्रतिमाभूनिपातनं चेत्याद्या २

उत्कृष्टा प्रतिमायाश्वरणश्लेष्मस्वेदादिस्पर्शनभंगजननावहेलना आद्या च। श्रुताशातना फलमुवहाणशब्दे महा० ।

प्रवचनाशातक आचार्यः। महा० ५ अध्य० ।

ज्ञानाद्यायस्य शातना। आव० ।

आयः- सम्यग्दर्शनाद्यवाप्तिलक्षणस्तस्य, शातनाः–खण्डनं, निरुक्तादाशातनाः। सम० ५९।

आसायणिज्ज- त्रि० *[आश्वादनीय]*

कर्तर्यनीयः। पन्न० जीवा०

ईषत्स्वादयोग्ये, दशा० जंबू० ।

आसायवडिया-स्त्री० *[आस्वादप्रतिज्ञा]*

विषयभोगप्रतिज्ञायाम्। आचा० ।

आसारेंत- त्रि० *[आसारयत्]*

ईषत्स्वस्थानत्याजनेनसारयति, । नाया० ।

आसालय– पुं० *[आशालक]*,

अवष्टम्भसमन्वित आसनविशेषः। दश० ।

आसालिय- पुं० *[आशालिक]*

उरःपरिसर्पस्थलचरपंचेन्द्रिय तिर्यग्भेदे, । पन्न०। सम०

आसाविणी- स्त्री० *[आस्राविणी]*

शतच्छिद्रायाम्। सूय० १ श्रु० ११ अ० ।

आसास- पुं० *[आश्वास]*

आश्वासन्त्यस्मिन्नित्याश्वासो नामादिव्यतिरिक्तो द्रव्यतो यानपात्र द्वीपादौ भावतो ज्ञानादौ आचारांगे । आचा० ।

धीरो भव अहं ते सर्वमपि वैयावृत्त्यं करिष्ये-इत्यादि रूपे प्राणिनामाश्वासने, । बुह० पण्हा० ।

विश्रामे, भारं वहत आश्वासाः ठा० ।

आसासंकरसमुब्भव- न० *[आश्वासांकुरसमुद्भव]*

आश्वास एवांकुर-प्ररोहस्तस्य समुद्भव उत्पत्तिर्यस्मात्तदाश्वासां-कुरसमुद्भवम् ग्लानस्याश्वासप्ररोहबीजे। बुह० १ उ० ।

आसासदीव- पु० *[आश्वासद्वीप]*

आश्वास्यतेऽस्मिन्निति आश्वासः स चासौ द्वीपश्चाश्वासद्वीपः यदिवा आश्वसनमाश्वासः आश्वासाय द्वीप आश्वासद्वीपः। नदीसमुद्रबहुमध्यप्रदेशे, भिन्नबोधिस्थादयो यमवाप्याश्वासंति तस्मिन्द्रव्यद्वीपविशेषे, स च द्विधा सन्दीनोऽसदीनश्च । आचा० ६ अ० ३ उ० ।

आकुलितजनस्वस्थकारको द्वीपविशेषः। उत्त० ।

आसित्त-१ पुं० *[आसिक्त]*

स्त्रीशरीरावसक्ते, 'नपुंसकविशेषे, स च मोहोत्कटतया मेहनं योनावनुप्रवेश्य नित्यमास्ते । बुह० ४ उ० । पंच० भा० । पंच०चू० ।

जस्स पुण अवच्चं उप्पज्जति सो। निशी० ।

आसित्त-२ न० *[आसिक्त]*

आसेचनं, ईषदुदकच्छट्टकः। पण्हा० ।

उदकच्छटम्। जीवा० २४६।

निष्काशनम्। बुह० ।

आसिय- त्रि० *[आश्विक]*

अश्वस्वामिनि, ४ वव० ।।

आसियावण- न० *[आश्रितापन]*

अपहरणे बुह०१ उ० ।

निष्काशयि-तुमासादने। वव०१ वव०

स्तैन्ये, बुह०४ उ० ।

आसियावाय- पुं० *[आशीर्वाद]*

बहुपुत्रो बहुधनो बहुधर्मो दीर्घायुस्त्वं भूया इत्यभीष्टोक्तौ, आसियावायवियागरेज्जा-सूय० १ श्रु० १४ अ० ।

आसी- स्त्री० *[आशी]*

सर्पदंष्ट्रायाम् विशे० । ठा० ४ ठा० ।

आसीण- त्रि० *[आसीन]*

उपविष्टे। पण्हा० १ अ० ।

आसिते। आव० २ अ० ।

आसीविस- पुं० *[आशीविष]*
आश्यो द्रंष्ट्रास्तासु विषं यस्य सः। आसीदाढातग्गयमहाविसा आसीविसा इति। दंष्ट्राविषे दर्वीकरसर्पभेदे। पन्न० १ पद०। जीवा० १ प्रति०
नाग, पण्हा०१ अ०। ठा० ४ ठा०
आशीविष इवाशीविषः यथा हि तमत्यन्तमवजानानो मृत्यु मेवाप्नोति एवमेतमपि मुनिमवजानानानामवश्यंभावि मरणम्। आशीविषलब्धिमति शापानुग्रहसमर्थे। उत्त० १२ अ०

आसीविसत्त- न० *[आशीविषत्व]*
शापानुग्रहसामर्थ्ये-ठा० ५ ठा०।

आसीविसभावणा- स्त्री० *[आशीविषभावना]*
आशीविषत्वं पूर्वोक्त-स्वरूपं भाव्यते प्रतिपाद्यते यासु ग्रन्थपद्धतिषु ता आशीविष-भावना अंगवाह्यकालिकश्रुतभेदे। आशीविषभावनायां पिटिकायामाशीविषत्वलब्धेर्यथा समाचरणैराशीविषतयाकर्म बध्यते वव० १ उ०।

आसीविसलद्धि- स्त्री० *[आशीविषलब्धि]*
तपश्चरणमाहात्म्याद्, गुणादितरतोपि वा।। आशीविषसमर्थाः स्युर्निग्रहेऽनुग्रहेऽपि च । गच्छा०।
इत्युक्तस्वरूपे निग्रहाऽनुग्रहसामर्थ्ये० गच्छा० । आव०चू०१ ।

आसु- अव्य० *[आशु]*
शीघ्रे, विशे०। निसि० आव०। सूय०
क्षिप्रे सूय० १ श्रु०४ अ०।
स्वल्पकाले । आव०।

आसुक्कार- पु० *[आशुकार]*
करणकारः अचित्तीकरणं गृह्यतेआशु शीघ्रं कार आशुकारः। मारणे,। तद्धेतुत्वादहिविषविसूचिकादौ, । आव०। मरणावसरे च। आतु०।

आसुक्कारोवगय- त्रि० *[आशुकारोपगत]*
आशुकारेण शूलादिनो परतः कालगत आशुकारोपगतः। शूलादिना मृते। वव० ४ उ० ।

आसुपण्ण- पु० *[आशुप्रज्ञ]*
आशु शीघ्रं कार्य्याकार्येषु प्रवृत्तिनिवृत्तिरूपा प्रज्ञा मतिर्यस्य स आशुप्रज्ञः । उत्त०।
क्षिप्रप्रज्ञे। सूय० १ श्रु० १४ अ०।
पटुबुद्धौ। सदसदविवेकविकले। सूय० २ श्रु० १ अ० ।
सर्वत्र सदोपयोगादच्छद्मस्थे० सूय०१ श्रु०६ अ०।
मानसाऽपर्य्यालोच्यैव पदार्थपरिच्छित्तिविधायके।सूय० १ श्रु० ६ अ०।
केवलज्ञानिनि उत्पन्नदिव्यज्ञाने सूय०१ श्रु०६ अ०।।

आसुयर- त्रि० *[आशुचर]*
शीघ्रसंचरणशीले- । विशे०।

आसुर- न० *[आसुर]*
असुरकुमारभावे, उत्त०।
असुरभावना जनितेऽनुष्ठाने, ठा०

आसुरता- स्त्री० *[आसुरता]*
आसुरभावे० ठा०।

आसुरि-१ स्त्री० *[आसुरी]*
असुरा भवनपतिदेवविशेषास्तेषामियमासुरी येष्वनुष्ठानेषु वर्त्तमानोऽसुरत्वं जनयति तैरात्मनो वासने । बुह० उव० ठा०।

आसुरि-२ पु० *[असुरि]*
सांख्याचार्यकपिलप्रथमशिष्ये, यदाह आसुरिः विविक्ते दकपरिणतौ भोगोऽस्य कथ्यते। ठा०। आव०म०। आव०चू०।

आसुरिय-१ पु० *[आसुरिक]*
असुराणां चण्डकोपेन चरन्तीति आसुरिकाः। प्राक्संयतभवे कृतचण्डकोपेषु, असुरत्वेनोत्पन्नेषु। आतु०।
असुराणामियमासुरीया। उत्त० ।

आसुरिय-२ न० *[आसुर्य]*
असुरभावे, पण्हा०।

आसुरुत्त- त्रि० *[आसुरुप्त]*
आशु शीघ्रं रुप्तः कोपोदयाद्विमूढो रुप् लुप् विमोहने इति वचनात्। भग० ७ श० ९ उ०।
शीघ्रं कोप-विमूढबुद्धौ, भग० ६ श० १ उ० ।
स्फुरितकोपलिंगे। नाया० २ अ० । जंबू०।

आसुरुत्त- त्रि० *[आसुरोक्त]*
आसुरमसुरत्ककोपेन दारुणत्वात् उक्तं भणितं यस्य स आसुरोक्तः। असुरसदृशकोपेन दीर्घ शब्दकारिणि, निसि०।

आसुरुत्त- त्रि० *[आशुरुष्ट]*
आशुशीघ्रं रुष्टः क्रोधेन विमोहितो यः सः निसि०
कोपेन विमोहिते, विपा० ९ अ०।
कुपिते विपा०।
क्रुद्धे नाया० १६ अ०।

आसूणि- न० *[आशूनि]*
येनाशूनः सन् आ समन्ताच्छूनीभवति बलवानुपजायते तदाशूनीत्युच्यते। घृतपानादौ आहारविशेषे रसायनक्रियायां, च । सूय० १ अ०६।
आसूणिमक्खिरागं च गिद्धुवज्जायकम्मगं, सूय०।

आसूणिय- त्रि० *[आशूनित]*
ईषच्छूनीकृते- पण्हा०।

आसेवण- न० *[आसेवन]*
सम्यक्पालने। मैथुनक्रियायाम्। दश०।

आसेवणसिक्खा स्त्री० *[आसेवनशिक्षा]*
प्रत्युपेक्षणादिक्रियोपदेशः। उत्त०।
शिक्षाद्वितीयभेदः। नन्दी०।
सामाचारी–शिक्षणम्। बुह०।
प्रत्युपेक्षणादिक्रियारूपोऽभ्यासः। आव० ।

आसेवणा- स्त्री० *[आसेवना]*
अभ्यासे, आव०चू०
यथावस्थितसूत्रानुष्ठाने। सूय० १ श्रु० १४ अ०।

आसेविय- त्रि० *[आसेवित]*
सकृत्करणात् । नाया० । आचा० ।

आसोअ- पुं० *[अश्वयुज्]*
आश्विनमासे, । ज्यो० ।

आसोत्थ- पु० *[अस्वत्थ]*
बहुबीजकवृक्षविशेषे, पण्हा०।

आहच्च- अव्य० *[आहत्य]*
सहसा इत्यस्य । आचा० ।
कदाचिदित्यस्य वार्थे । भग० । निसि० ४ उ०। वव०। आचा०। उत्त० ।
ढौकित्वा आचा०।
उपेत्य। आचा०।।
व्यवस्थाप्य। सूय० २ श्रु० १ अ० । सूय०।
परिभाज्य। परिभागीकृत्यइत्यस्येवार्थे, आचा०
सबले आहत्य दीयमानं स्वस्थानात्साध्वर्थमभिमुखदानमानीय, दशा०।

आहच्चा- स्त्री० *[आहत्वा]*
आहनने, प्राहारे। निसि०।

आहट्ट- पुं० *[आहत्त]*
प्रेहलिकायां, बुह०।।

आहट्ट- अव्य० *[आहृत्य]*
व्यवस्थाप्य अपाहृत्य वेत्यर्थे। सूय०
अभिहडं आहुट्ट देसियं। सूय०श्रु०२ अ०१ ।

आहड- त्रि० *[आहृत]*
साध्वर्थं यद् गृहस्थेन नीयते तदाहृतम्० सूय० १श्रु० ५अ०।
आनीते, । आव० । आचा० ।
प्राहणके- । बुह० २ उ०।
आहृतं द्विधा स्वग्रामाहृतं परग्रामाहृतं। सप्रत्यवायमप्रत्यवायं चेत्याद्यभ्याहृत शब्दे। जीत० ।निसि०। वव०।

आहडिया- स्त्री० *[आहृतिका]*
प्राहणके-। बुह० २ उ०।

आहत्तहिय- न० *[याथात्म्य]*
यथातथाभावो याथातथ्यम् धर्म मार्ग-समवसरणाख्याध्ययने तत्रोक्तार्थे-तत्त्वे सत्तानुगतसम्यक्त्वे-चारित्रे, च- सूय०
यथावस्थितेऽच्छे। सूय० १ श्रु० । आव० १ ।
परमार्थेन परमार्थचिंतायां सम्यग्ज्ञानादि। सूय०१श्रु०१३ अ०
तत्प्रतिपादके त्रयोदशे सूत्रकृताध्ययने। सम० २३ सम०।
सूत्रकृतांगे त्रयोदशाध्ययनम्। सम० ।

आहय-१ न० *[आख्यात]*
आख्यानकप्रतिबद्ध ।पन्न० ।जीवा० ।ठा० ।आव०म०। भग०।
आख्यानकप्रतिबद्धं यन्नाट्यं तेन युक्तं तद्गीतम्। ठा०।
आख्यानकप्रतिबद्धं, आस्फालितं वा। उव० ७४।

आहय–२ न० *[आहत]*
लक्षणया लिखितम्। जम्बू० ।

आहरत्त- त्रि० *[आनयत्]*
आनयति, । दश०।

आहरण- न० *[आहरण]*
व्यवस्थापने, । आचा०।
स्वीकरणे । आचा० ।
आनयने । सूय० २ श्रु० २ अ०। आचा० ।
आदाने, ग्रहणे, सूय०१ श्रु० ८ अ०।

आहरण- न० *[उदाहरण]*
उदाह्रियते प्राबल्येन गृह्यतेऽनेनदार्ष्टान्ति-कोऽर्थ इत्युदाहरणम् साध्यसाधनान्वयप्रदर्शने दृष्टान्ते, आव० म०। विशे०।
आ–अभिविधिना ह्रियते–प्रतीतौ नीयते अप्रतीतोऽर्थोऽनेनेति। ठा०२५४।

आहरणतद्देश- पुं० *[आहरणतद्देश]*
तस्य देशस्तद्देशः स चासावुपचारादाहरणं चेति प्राकृतत्वादाहरणशब्दस्यपूर्वनिपाते। आहरणतद्देशः। दृष्टान्तार्थदेशेनैव दार्ष्टान्तिकस्यार्थ स्योपनयनं क्रियते तत्तद्देशे उदाहरणमिति-यथा-चन्द्र इवमुखमस्या इति। इह हि चन्द्रे सौम्यत्वलक्षणेनैव देशेन मुखस्योपनयननानिष्टेन नयन-नासावर्जितत्वं कलंकादिना। ठा० ४ ठा०।

आहरणतद्दोस- पु० *[आहरणतद्दोष]*
तथा तस्यैवाहरण तद्देशस्यैवाहरणस्य संबन्धी साक्षात्प्रसंगसंपन्नो वा दोषस्तद्दोषः स चासौ धर्मे धर्मिण उपचारदाहरणं चेति प्राकृतत्वेन पूर्वनिपातादाहरणतद्दोषः। अथवा तस्याऽऽहरणस्य दोषो यस्मिंस्तत्तथा। दुर्हेतु भेदे, ठा० ४ ठा०

इह साध्य साधन कैवल्यं नाम दृष्टांतदोषो यच्चासत्यादिवचनरूपं तद्दोषाहरणं यथा सर्वथाहमसत्यं परिहरामि गुरुमस्तककर्त्तनवदिति, यद्वा। साध्यसिद्धिं कुर्वदपि दोषान्तरमुपनयति तदपि तदेव यथा सत्यं धर्म्ममिच्छंति लौकिकमुनयोऽपि 'वरं कूपशताद्वापी वरं वापीशतात् ऋतुः। वरं क्रतुशतात्पुत्रः सत्यं पुत्रशताद्वरमिति'।१ । वचनवकृनारदवदिति अनेन च श्रोतुः पुत्रक्रतुप्रभृतिषु प्रायः संसारकारणेषु धर्म्मप्रतीतिराहितेति आहरणतद्दोषतेति यथा वा बुद्धिमता केनापि कृतमिदं जगत्सन्निवेशविशेषत्वात् घटवत् स चेश्वर इति अनेन हि स बुद्धिमान् कुंभकारतुल्योपीश्वरः सिध्यतीति ईश्वरश्च स विवक्षित इति, ठा० ४ ठा०।

आहरिज्जमाण- त्रि० *[आह्रियमाण]*

खाद्यमाने पुद्गल आहारे अभ्य-वह्रियमाणे, ठा० १० ठा०।

आहारतया जीवेन गृह्यमाणे। ठा० ३ ठा०।

आहरित्तए- अव्य० *[आहर्त्तुम्]*

अदनं कर्त्तुमित्यर्थे। तं०।

आहरिसिय- त्रि० *[आधर्षित]*

भर्त्सिते, आव० म०।

आहव्वणी- स्त्री० *[आर्थवणी]*

स्वाभिधानायां सद्योऽनर्थकारिण्यां विद्यायाम् । सूय० ५ श्रु० २ अ०।

आहार- पुं० *[आधार]*

अधिकरणे, । विशे० । आव०चू० १ अ०। अनुओ०।

आहार- पुं० *[आहार]*

आहरणमाहारः ग्रहणे, । कल्प०।

भोजने, । पण्हा० ।

आहारएसणा- स्त्री० *[आहारैषणा]*

आहारस्य एषणा ग्रहणाद् गवेषणादिग्रहणस्तदर्थसूचकत्वात् आहारैषणा। द्रुमपुष्पिका नामनि दशवैकालिकस्य प्रथमे अध्ययने, । दश० १ अ०।

आहारओ- अव्य० *[आहारतस्]*

आहारमाश्रित्येत्यर्थे, 'आहारओ पंचकवज्जणेण' आहार माश्रित्य पञ्चकं वर्जयन्ति। 'लसणं पलांडुः करभीक्षीरं गोमांसं मद्यं चेत्येतत्पंचकवर्जनेन मोक्षं वदन्ति।' सूय०१ श्रु०७ अ०।

आहारग- न० *[आहारक]*

चतुर्दशपूर्वविदाऽऽहियते गृह्यते इत्याहारकमथवाऽऽहियन्ते गृह्यन्ते केवलिनः समीपे सूक्ष्म जीवादयः पदार्था अनेनेत्याहारकम्। अनुओ० । विशे०। ठा०।

शरीरभेदे, । सम०।

आहारगलद्धि- स्त्री० *[आहारकलब्धि]*

आहारकशरीरकरण शक्तौ, आहारकशरीरं च हस्तप्रमाणम् एकस्मिन् भवे, द्विः संसारे च चतुः कृत्वस्तीर्थकरस्फीतिदर्शनार्थं चतुर्मासाः। गच्छा० २ अधि०।

आहारसमुग्घाय- पुं० *[आहारकसमुद्घात]*

आहारके प्रारम्भमाणे समुद्घात आहारकसमुद्घातः। आव०। चतुर्दशपूर्वविद आहारकलब्धिमंत क्वचित्संदेहापगमाय तीर्थकरांतिकगमनार्थमाहारकशरीरं समुपादा तुं बहिरात्मप्रदेशप्रवेशे, आचा०।

आहारकसमुद्घातस्तु जीवप्रदेशान् शरीरादेर्बहिर्निष्क्रम्य वाहल्यमात्रमायामतश्चसंख्येयानि योजनानि दण्ड निसृजति निसृज्य च यथा स्थूलानाहारकशरीरनामकर्मपुद्गलान् शातयति । ठा० ७ ठा०। पन्न०।

आहारगसरीरकायप्पओग- पुं० *[आहारकशरीरकायप्रयोग]*

आहारकशरीरनिवृत्तेः प्रधानेऽङ्गे। भग० ८ श० १ उ०।

आहारगुत्त- त्रि० *[आहारगुत्त]*

अनतिमात्राऽस्निग्धाहारभोजिनि, आव०४ अ०। सूय०।।

आहारणीइ- स्त्री० *[आहारनीति]*

संस्कृताहारभक्षणप्रकारे, ऋषभस्वामिनो गृहावासात् पूर्वम् असंस्कृताहारेण आसन् ते च तदा ऋषभस्वामिनाऽन्नाहारिणः कृताः इति उसभशब्दे उक्तं। आव० चू०।।

आहारणीहार- पुं० *[आहारनिहार]*

विसर्जने, विड्विसर्जने, निसि० २ उ०।।

आहारपइण्णा- स्त्री० *[आहारपरिज्ञा]*

आहारस्य परिज्ञाप्ररूपक। सूय० २ श्रु० २ अ० ।ठा०७ ठा०। आव०। पण्हा० २ अ०।

आहारपच्चक्खाण- न० *[आहारप्रत्याख्यान]*

सदोषाहारपरिहारे, तत्फलं यथा।।

आहारपच्चक्खाणेणं भंते ! जीवे किं जणयइ ? आहारपच्चक्खाणेणं जीवियासंसप्पओगं वेच्छिंदइ जीविया संसप्पओगं वोच्छिंदित्ता जीवे आहारमंतरेण न संकिलिस्सइ।उत्त०२९अ०

आहारपज्जत्ति- स्त्री० *[आहरपर्याप्ति]*

यथा बाह्यमाहारमादाय खलरसरूपतया परिणमयति साऽऽहारपर्याप्तिः। जीवा० १ प्रति०। नं० ।पन्न०१ पद०।

पर्याप्तिर्नाम शक्तिस्तत्र यथा शक्त्या करणभूतया भुक्तमाहारं खलरसरूपं च या करोति सा। बुह० १ उ०।

आहारपूइ- स्त्री० *[आहारपूति]*

(असिवे ओमोयरिए, रायदुट्ठे भए व गेलन्ने। अद्धाण रोहए वा गहणं आहारपूइए,इत्युक्तक्षणायामाहारशुद्धौ, निसि०१ उ०

आहारपोसह- पुं० *[आहारपोषध]*

आहारः प्रतीतस्तद्विषय स्तन्निमित्तं पोषधश्चाहारपोषधः। आहारविशेषत्यागे, 'आहारपोसहो दुविहो, देसे सव्वे य देसे स अमुगाविगति आयंबिल एक्कंसि वा दो वा १ सव्वे चउविहोत्ति आहारो अहोरत्तं पच्चक्खा' आव० ६ अ०।

आहारसण्णा- स्त्री० *[आहारसंज्ञा]*

क्षुद्वेदनीयोदयात्कावलिकाद्याहारार्थं पुद्गलोपादानक्रियैव संज्ञा- यतेऽनया तस्या नित्याहारसंज्ञा ।भग०७ श० ८ उ०। ठा०१०

अभिलाषश्च ममैवंरूपं वस्तु पुष्टिकारि तद्यदीदमवाप्यते ततः समीचीनं भवतीत्येवं शब्दार्थोल्लेखानुबद्धः स्वपुष्टिनिमित्तभूत प्रतिनियत वस्तु प्राप्त्यध्यवसायरूपः।जीवा० १। पन्न०७ उ०

आहारिज्जमाण- त्रि० *[आह्रियमाण]*

संगृह्यमाणे, अभ्यवह्रियमाणे च, भग० १ श० उ०।

खाद्यमाने, ठा० १० ठा०।

आहारिज्जस्समाण- त्रि० *[आहरिष्यमाण]*

अनागते काले आहारं करिष्यमाणे भग० १ श०

आहारित- त्रि० *[आहारित]*

भुक्ते, तं०।

आहारत्वेन गृहीते, अनुओ०

आहारेमाण- त्रि० *[आहारयत्]*

अभ्यवहरति, ठा०६ ठा०। आचा०।

आहारेसणा- स्त्री० *[आहारैषणा]*

अभ्यवहरगवेषणायां । दश० १ अ० ।

आहारोवचय- त्रि० *[आहारोपचय]*

आहारेणोपचयोऽस्य। आहारोपचिते, आचा०७ अ० २ उ०।

आहारोवचिय- त्रि० *[आहारोपचित]*

आहाररूपतया संचितेषु, भग० १६ श० २ उ०।

आहावणा- स्त्री० *[आभावना]*

उद्देशमात्रे अपरिगणनायाम् पिंड०।।

आहि- पुं० *[आधि]*

मनःपीडायां। भग०१ श० १ उ०।

आहिंडग- पुं० *[आहिण्डक]*

भ्रमणशीले गच्छनिर्गतसाधौ, उव०।

एके उपदेशहिंडका अपरे अनुपदेशहिंडका एवमेतत् द्विधा अहिंडका मुणितव्यास्तत्र उवदेसन्ति। देशदर्शनार्थं द्वादश वर्षाणि यः पर्यटति स सूत्रार्थो गृहीत्वा एति उपदेशहिंडका अनुपदेशेत्वमी भवंति उव०। वव०।

आहिदेविय- न० *[आधिदैविक]*

यक्षराक्षसग्रहाद्यावेशहेतुके दुःखादौ, ठा०।

आहिमोतिय- न० *[आधिभौतिक]*

मनुष्यपशुपक्षिमृगसरी सृपस्थावरनिमित्ते दुःखादौ, ठा०।

आहिय- त्रि० *[आख्यात]*

प्रतिपादिते, कथिते। सूय० १ श्रु०। ठा० अनुओ०।

आख्यानकप्रतिबद्धे, सूर०।

आहिय- त्रि० *[आहित]*

प्रवचन ऋषिभाषितादौ आत्मनि वा व्यवस्थिते ।सूय०।

व्यवस्थापितै, । ठा०४ ठा० ।

निवेशिते, जंबू। ढौकिते, अनुष्ठिते। सूय०।

प्रयोगविश्रसाभ्यां स्वकर्मपरिणत्या वा जनिते। आचा०।

आहियग्गि- पुं० *[आहिताग्नि]*

कृतावसथादिब्राह्मणे, दश० अ०९ उ०१ ।

अग्निं गृहीत्वा ऋषभचितायां स्थापितवन्तस्तेन कारणे- नाहिताग्नयः आव० म०।

आहियविसेसत्त- न० *[आहितविशेषत्व]*

सत्यवचनातिशये, सम०।

आहुणिय- पुं० *[आधुनिक]*

अष्टाशीतेर्महाग्रहाणां पंचमे। ठा०५ ठा०। कल्प०। जंबू।

आहेण- न० *[आहेण]*

विवाहोत्तरं वधूप्रवेशे वरगृहे क्रियमाणे भोजने। आचा० २ श्रु० १ अ० ४ उ०।

आहेवच्च- न० *[आधिपत्य]*

अधिपतेः कर्माधिपत्यम्-रक्षार्थम् जंबू। कल्प०। सम०। भग०। पन्न०। आव०। भग०। नाया०। विशे०।

स्वामितायाम्। ठा०७ गच्छा०।

तदाश्रितलोकेभ्यः आधिक्येन तेष्ववस्थायित्वे, उव०।।

आहोहिय- पुं० *[आधोऽवधिकः]*

नियतक्षेत्रयित्वेविषयावधिज्ञा-निनि। भग० ७ श० ७ उ०। सम० । पन्न०।

आ-कारादि शब्द-परिभाषाः समाप्ताः

आगम परिभाषा कोषः
भाग-१ परिसमाप्तः

[1] મૂળ આગમ સાહિત્ય (૧ થી ૩)કુલ બુક્સ– ૧૪૯, કુલપાના 7864				
		1/1– આગમ મૂળ પ્રિન્ટેડ બુક્સ– [49]		
ક્રમ	ફાઈલનં.	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
1	9727	आगम ०१ आयारो अंगसुत्त ०१ मूलं	130	
2	9728	आगम ०२ सूयगडो अंगसुत्त ०२ मूलं	122	
3	9729	आगम ०३ ठाणं अंगसुत्त ०३ मूलं	170	
4	9730	आगम ०४ समवाओ अंगसुत्त ०४ मूलं	82	
5	9731	आगम ०५ विवाहपन्नत्ती अंगसुत्त ०५ मूलं	514	
6	9732	आगम ०६ नायाधम्मकहाओ अंगसुत्त ०६ मूलं	182	
7	9733	आगम ०७ उवासगदसाओ अंगसुत्त ०७ मूलं	74	
8	9734	आगम ०८ अंतगडदसाओ अंगसुत्त ०८ मूलं	42	
9	9735	आगम ०९ अनुत्तरववाइदसाओ अंगसुत्त ०९ मूलं	18	
10	9736	आगम १० पण्हावगराणं अंगसुत्त १० मूलं	42	
11	9737	आगम ११ विवागसूयं अंगसुत्त ११ मूलं	50	
12	9738	आगम १२ उववाइयं उवांगगसुत्त ०१ मूलं	50	
13	9739	आगम १३ राइपसेनीयं उवांगगसुत्त ०२ मूलं	74	
14	9740	आगम १४ जीवाजीवाभिगम उवांगगसुत्त ०३ मूलं	162	
15	9741	आगम १५ पन्नवण्णा उवांगगसुत्त ०४ मूलं	210	
16	9742	आगम १६ सूरपन्नत्ती उवांगगसुत्त ०५ मूलं	74	
17	9743	आगम १७ चंदपन्नत्ती उवांगगसुत्त ०६ मूलं	74	
18	9744	आगम १८ जम्बूद्वीपपन्नत्ती उवांगगसुत्त ०७ मूलं	130	
19	9745	आगम १९ निरयावलीयानम उवांगगसुत्त ०८ मूलं	22	
20	9746	आगम २० कप्पवडिंसानम् उवांगगसुत्त ०९ मूलं	14	
21	9747	आगम २१ पूप्फियाम् उवांगगसुत्त १० मूलं	22	
22	9748	आगम २२ पूप्फचूलियाम् उवांगगसुत्त ११ मूलं	14	
23	9749	आगम २३ वण्हिदसाणं उवांगगसुत्त १२ मूलं	14	
24	9750	आगम २४ चउसरणं पइण्णसुत्त ०१ मूलं	14	
25	9751	आगम २५ आउरपच्चक्खाण पइण्णसुत्त ०२ मूलं	18	
26	9752	आगम २६ महापच्चक्खाण पइण्णसुत्त ०३ मूलं	22	
27	9753	आगम २७ भत्तपरिन्न पइण्णसुत्त ०४ मूलं	22	
28	9754	आगम २८ तंदुलवेयालीयम् पइण्णसुत्त ०५ मूलं	26	
29	9755	आगम २९ संथारग पइण्णसुत्त ०६ मूलं	18	
30	9756	आगम ३०ए गच्छायारपइण्णसुत्त ०७ए मूलं	20	
31	9757	आगम ३०बी चंदवेज्झयम्पइण्णसुत्त ०७बी मूलं	22	
32	9758	आगम ३१ गणिविज्जा पइण्णसुत्त ०८ मूलं	18	
33	9759	आगम ३२ देविंदत्थओ पइण्णसुत्त ०९ मूलं	30	
		આગમ મૂળ પ્રિન્ટેડ ચાલુ...		

		પાછલા પાનેથી આગમ મૂળ પ્રિન્ટેડ ચાલુ		
ક્રમ	ફાઈલનં	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
34	9760	आगम ३३ए मरणसमाहि पइण्णसुत्त १०ए मूलं	52	
35	9761	आगम ३३बी विरत्थव चउसरणं पइण्णसुत्त १०बी मूलं	16	
36	9762	आगम ३४ निसिह छेयसुत्त ०१ मूलं	90	
37	9763	आगम ३५ बृहत्कप्पो छेयसुत्त ०२ मूलं	26	
38	9764	आगम ३६ ववहार छेयसुत्त ०३ मूलं	38	
39	9765	आगम ३७ दसासूयक्खंध छेयसुत्त ०४ मूलं	34	
40	9766	आगम ३८ए जीयकप्पो छेयसुत्त ०५ए मूलं	21	
41	9767	आगम ३८बी पंचकप्पभाष छेयसुत्त ०५बी मूलं	164	
42	9768	आगम ३९ महानिसिह छेयसुत्त ०६ मूलं	154	
43	9769	आगम ४० आवस्सयं मूलसुत्त ०१ मूलं	22	
44	9770	आगम ४१ए पिंडनिज्जुत्ती मूलसुत्त ०२ए मूलं	78	
45	9771	आगम ४१बी ओहनिज्जुत्ती मूलसुत्त ०२बी मूलं	52	
46	9772	आगम ४२ दसवेयालीयं मूलसुत्त ०३ मूलं	46	
47	9773	आगम ४३ उत्तराज्झयणम् मूलसुत्त ०४ मूलं	114	
48	9774	आगम ४४ नंदिसूयं चूलिकासुत्त ०१ मूलं	34	
49	9775	आगम ४५ अनुओगदारं चूलिकासुत्त ०२ मूलं	74	
	1/1– આગમ મૂળ પ્રિન્ટેડ કુલ બુક્સ– 49 કુલપાના 3510		03,510	
		1/2– આગમ મૂળ નેટ– [47]		
ક્રમ	ફાઈલનં	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
50	3701	आगम ०१ आयारो पढमं अंगसुत्तं मूलं नेट	103	
51	3703	आगम ०२ सूयगडो बीइअं अंगसुत्तं मूलं नेट	85	
52	3705	आगम ०३ ठाणं तइअं अंगसुत्तं मूलं नेट	141	
53	3707	आगम ०४ समवाओ चउत्थं अंगसुत्तं मूलं नेट	81	
54	3709	आगम ०५ भगवई पंचमं अंगसुत्तं मूलं नेट	565	
55	3711	आगम ०६ नायाधम्मकहाओ षष्ठं अंगसुत्तं मूलं नेट	159	
56	3713	आगम ०७ उवासगदसाओ सत्तम अंगसुत्तं मूलं नेट	34	
57	3715	आगम ०८ अंतगडद्साओ अट्ठम अंगसुत्तं मूलं नेट	31	
58	3717	आगम ०९ अनुत्तरोववाइदसाओ नवम अंगसुत्तं मूलं नेट	10	
59	3719	आगम १० पण्हावागरणं दसमं अंगसुत्तं मूलं नेट	35	
60	3721	आगम ११ विवागसूयं एक्कारसमं अंगसुत्तं मूलं नेट	42	
61	3723	आगम १२ उववाइयं पढमं उवंगसुत्तं मूलं नेट	38	
62	3725	आगम १३ रायपसेणियं बिइअं उवंगसुत्तं मूलं नेट	62	
63	3727	आगम १४ जीवाजीवाभिगम तइयं उवंगसुत्तं मूलं नेट	152	
64	3729	आगम १५ पन्नवणा चउत्थं उवंगसुत्तं मूलं नेट	202	
		આગમ મૂળ નેટ ચાલુ...		

		પાછલા પાનેથી આગમ મૂળ નેટ ચાલુ		
ક્રમ	ફાઈલનં	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
65	3731	आगम १६ सूरपन्नत्ति पंचमं उवंगसुत्तं मूलं नेट	66	
66	3733	आगम १७ चंदपन्नत्ति छट्ठं उवंगसुत्तं मूलं नेट	66	
67	3735	आगम १८ जंबुदीवपन्नत्ति सत्तम उवंगसुत्तं मूलं नेट	122	
68	3737	आगम १९ निरयावलियाणं अट्ठमं उवंगसुत्तं मूलं नेट	15	
69	3739	आगम २० कप्पवडिंसियाणं नवमं उवंगसुत्तं मूलं नेट	4	
70	3741	आगम २१ पुप्फियाणं दसमं उवंगसुत्तं मूलं नेट	15	
71	3743	आगम २२ पूप्फचूलियाणं एक्कारसमं उवंगसुत्तं मूलं नेट	5	
72	3745	आगम २३ वण्हिदसाणं बारसमं उवंगसुत्तं मूलं नेट	6	
73	3747	आगम २४ चउसरणं पढमं पइण्णयं मूलं नेट	6	
74	3749	आगम २५ आउरपच्चक्खाणं बिइयं पइण्णयं मूलं नेट	7	
75	3751	आगम २६ महापच्चक्खाणं तइयं पइण्णयं मूलं नेट	11	
76	3753	आगम २७ भत्तपरिन्ना चउत्थं पइण्णयं मूलं नेट	13	
77	3755	आगम २८ तंदुलवेयालीयम् पंचमं पइण्णयं मूलं नेट	17	
78	3757	आगम २९ संथारगं छट्ठं पइण्णयं मूलं नेट	10	
79	3759	आगम ३०/१ गच्छायारो सत्तमं पइण्णयं मूलं नेट	11	
80	3760	आगम ३०/२ चंदावेज्झयं सत्तमं पइण्णयं मूलं नेट	16	
81	3761	आगम ३१ गणिविज्जा अट्ठमं पइण्णयं मूलं नेट	8	
82	3763	आगम ३२ देविंदत्थओ नवमं पइण्णयं मूलं नेट	21	
83	3765	आगम ३३/१ मरणसमाहिं दसमं पइण्णयं मूलं नेट	42	
84	3766	आगम ३३/२ वीरत्थव दसमं पइण्णयं मूलं नेट	6	
85	3767	आगम ३४ निसीहं पढमं छेयसुत्तं मूलं नेट	85	
86	3769	आगम ३५ बृहत्कप्पो बिइयं छेयसुत्तं मूलं नेट	19	
87	3771	आगम ३६ ववहारो तइयं छेयसुत्तं मूलं नेट	30	
88	3773	आगम ३७ दसासुयक्खंधं चउत्थं छेयसुत्तं मूलं नेट	27	
89	3775	आगम ३८ जीयकप्पो पंचमं छेयसुत्तं मूलं नेट	9	
90	3777	आगम ३९ महानिसीहं छट्ठं छेयसुत्तं मूलं नेट	153	
91	3779	आगम ४० आवस्सयं पढममं मूलसूत्तं मूलं नेट	12	
92	3781	आगम ४१ पिंडनिज्जुत्ति बीइअं मूलसूत्तं मूलं नेट	45	
93	3783	आगम ४२ दसवेयालियं तइअं मूलसूत्तं मूलं नेट	39	
94	3785	आगम ४३ उत्तरज्झयणं चउत्थं मूलसूत्तं मूलं नेट	112	
95	3787	आगम ४४ नंदिसूयं पढमा चूलिया मूलं नेट	26	
96	3789	आगम ४५ अनुओगदाराइं बिइया चूलिया मूलं नेट	68	
	1/2– આગમ મૂળ નેટ કુલ બુક્સ– 47 કુલપાના 2832		02,832	

		1/3- આગમ મંજુષા નેટ – [53]		
ક્રમ	ફાઈલનં	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
97	3901	आगम मंजूषा 01 अंगसुत्तम मूल 01 आयारो	38	
98	3902	आगम मंजूषा 02 अंगसुत्तम मूल 02 सूयगडो	39	
99	3903	आगम मंजूषा 03 अंगसुत्तम मूल 03 ठाणं	62	
100	3904	आगम मंजूषा 04 अंगसुत्तम मूल 04 समवाओ	30	
101	3905	आगम मंजूषा 05 अंगसुत्तम मूल 05 भगवई	248	
102	3906	आगम मंजूषा 06 अंगसुत्तम मूल 06 नायाधम्मकहाओ	85	
103	3907	आगम मंजूषा 07 अंगसुत्तम मूल 07 उवासगादसाओ	19	
104	3908	आगम मंजूषा 08 अंगसुत्तम मूल 08 अंतगडदसाओ	15	
105	3909	आगम मंजूषा 09 अंगसुत्तम मूल 09 अनुत्तरोववाइयदसाओ	6	
106	3910	आगम मंजूषा 10 अंगसुत्तम मूल 10 पण्हावागरणं	22	
107	3911	आगम मंजूषा 11 अंगसुत्तम मूल 11 विवागसूयं	21	
108	3912	आगम मंजूषा 12 उवांगसुत्तम मूल 01 उववाइअं	19	
109	3913	आगम मंजूषा 13 उवांगसुत्तम मूल 02 रायप्पसेणियं	33	
110	3914	आगम मंजूषा 14 उवांगसुत्तम मूल 03 जीवाजीवाभिगमं	76	
111	3915	आगम मंजूषा 15 उवांगसुत्तम मूल 04 पन्नवणा	107	
112	3916	आगम मंजूषा 16 उवांगसुत्तम मूल 05 सूरपन्नत्ति	38	
113	3917	आगम मंजूषा 17 उवांगसुत्तम मूल 06 चंदपन्नत्ति	26	
114	3918	आगम मंजूषा 18 उवांगसुत्तम मूल 07 जम्बुद्दीवपन्नत्ति	60	
115	3919	आगम मंजूषा 19 उवांगसुत्तम मूल 08 निरयावलियाणं	9	
116	3920	आगम मंजूषा 20 उवांगसुत्तम मूल 09 कप्पवडिंसियाणं	3	
117	3921	आगम मंजूषा 21 उवांगसुत्तम मूल 10 पुप्फियाणं	9	
118	3922	आगम मंजूषा 22 उवांगगसुत्तम मूल 11 पुप्फचूलियाणं	4	
119	3923	आगम मंजूषा 23 उवांगसुत्तम मूल 12 वण्हिदसाणं	5	
120	3924	आगम मंजूषा 24 पइन्नगसुत्तम मूल 01 चउसरणं	4	
121	3925	आगम मंजूषा 25 पइन्नगसुत्तम मूल 02 आउरपच्चक्खाणं	4	
122	3926	आगम मंजूषा 26 पइन्नगसुत्तम मूल 03 महापच्चक्खाणं	6	
123	3927	आगम मंजूषा 27 पइन्नगसुत्तम मूल 04 भत्तपरिण्णा	6	
124	3928	आगम मंजूषा 28 पइन्नगसुत्तम मूल 05 तंदुलवेयालियं	10	
125	3929	आगम मंजूषा 29 पइन्नगसुत्तम मूल 06 संस्तारकं	5	
126	3930	आगम मंजूषा 30 पइन्नगसुत्तम मूल 07 गच्छायारो	6	
127	3931	आगम मंजूषा 31 पइन्नगसुत्तम मूल 08 गणिविज्जा	4	
128	3932	आगम मंजूषा 32 पइन्नगसुत्तम मूल 09 देविंदत्थओ	9	
129	3933	आगम मंजूषा 33 पइन्नगसुत्तम मूल 10 मरणसमाहि	16	
130	3934	आगम मंजूषा 34 छेयसुत्तम मूल 01 निसीहं	15	
		આગમ મંજુષા નેટ ચાલુ...		

		પાછલા પાનેથી આગમ મંજુષા નેટ ચાલુ...		
ક્રમ	ફાઈલનં	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
131	3935	आगम मंजूषा 35 छेयसुत्तम मूल 02 बृहत्कप्पो	11	
132	3936	आगम मंजूषा 36 छेयसुत्तम मूल 03 ववहारो	14	
133	3937	आगम मंजूषा 37 छेयसुत्तम मूल 04 दसासूयक्खंधो	14	
134	3938	आगम मंजूषा 38 ए छेयसुत्तम मूल 05 ए जीयकप्पो	56	
135	3939	आगम मंजूषा 38 बी छेयसुत्तम मूल 05 बी पंचकप्प भासं	53	
136	3940	आगम मंजूषा 39 छेयसुत्तम मूल 06 महानिसीहं	63	
137	3941	आगम मंजूषा 40 मूलसुत्तम मूल 01 आवस्सयं निज्जुत्तिसहियं	47	
138	3942	आगम मंजूषा 41 ए मूलसुत्तम मूल 02 ए ओहनिज्जुत्ति	25	
139	3943	आगम मंजूषा 41 बी मूलसुत्तम मूल 02 बी पिंडनिज्जुत्ति	18	
140	3944	आगम मंजूषा 42 मूलसुत्तम मूल 03 दसवेयालियं	15	
141	3945	आगम मंजूषा 43 मूलसुत्तम मूल 04 उत्तरज्झयणं	31	
142	3946	आगम मंजूषा 44 चूलिकासुत्तम मूल 01 नंदीसूयं	13	
143	3947	आगम मंजूषा 45 चूलिकासुत्तम मूलं 02 अनुओगदारं	32	
144	3948	आगम मंजूषा मूल कप्पसूयं	22	
145	3949	आगम मंजूषा एन 01 आयारो निज्जुत्ति	10	
146	3950	आगम मंजूषा एन 02 सूयगडो निज्जुत्ति	8	
147	3951	आगम मंजूषा एन 37 दसासूयक्खंधं निज्जुत्ति	6	
148	3952	आगम मंजूषा एन 42 दसवेयालिय निज्जुत्ति	11	
149	3953	आगम मंजूषा एन 43 उत्तरज्झयणं निज्जुत्ति	14	
	1/3– આગમમંજુષા–કુલ બુક્સ–53, કુલપાના– 1522		01,522	
				0,07,864
	[2] આગમ અનુવાદ(૪ થી ૯)કુલ બુક્સ–175, કુલપાના 23180			
	2/1 આગમ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ નેટ [49] અથવા પ્રિન્ટેડ [15]			
ક્રમ	ફાઈલનં	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
150	35601	આગમદીપ ૦૧ આયારો ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	120	
151	35602	આગમદીપ ૦૨ સુયગડો ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	104	
152	35603	આગમદીપ ૦૩ ઠાણં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	140	
153	35604	આગમદીપ ૦૪ સમવાઓ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	088	
154	35605	આગમદીપ ૦૫ ભગવઈ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ–1	240	
155	35606	આગમદીપ ૦૫ ભગવઈ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ–2	240	
156	35607	આગમદીપ ૦૬ નાયધમ્મકહાઓ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	144	
157	35608	આગમદીપ ૦૭ ઉવાસગદસાઓ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	040	
158	35609	આગમદીપ ૦૮ અન્તગડદસાઓ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	040	
159	35610	આગમદીપ ૦૯ અનુત્તરોવવાઈદસાઓ ગુજરાતી અનુ.	016	
	આગમગુજરાતી ભાવાનુવાદ નેટ 49 અથવા પ્રિન્ટેડ 15 ચાલુ..			

	પાછલા પાનેથી આગમગુજરાતી ભાવાનુવાદ નેટ 49 અથવા પ્રિન્ટેડ 15 ચાલુ..			
ક્રમ	ફાઈલનં	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
160	35611	આગમદીપ ૧૦ પણ્હાવગરાણમ્ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	160	
161	35612	આગમદીપ ૧૧ વિવાગસૂયમ્ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	161	
162	35613	આગમદીપ ૧૨ ઉવવાઇયમ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	162	
163	35614	આગમદીપ ૧૩ રાઈપસેણીયમ્ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	163	
164	35615	આગમદીપ ૧૪ જીવાજીવાભિગમ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	164	
165	35616	આગમદીપ ૧૫ પન્નવણા ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	165	
166	35617	આગમદીપ ૧૬ સૂરપન્નત્તિ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	166	
167	35618	આગમદીપ ૧૭ ચંદપન્નત્તિ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	167	
168	35619	આગમદીપ ૧૮ જમ્બુદ્ધીપપન્નત્તિ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	168	
169	35620	આગમદીપ ૧૯ નિરયાવલીયાણં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	169	
170	35621	આગમદીપ ૨૦ કપ્પવડિંસિયાણં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	170	
171	35622	આગમદીપ ૨૧ પુપ્ફિયાણમં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	171	
172	35623	આગમદીપ ૨૨ પુપ્ફચૂલિયાણં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	172	
173	35624	આગમદીપ ૨૩ વણ્હિદસાણં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	173	
174	35625	આગમદીપ ૨૪ ચઉસરણં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	174	
175	35626	આગમદીપ ૨૫ આઉરપચ્ચક્ખાણં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	175	
176	35627	આગમદીપ ૨૬ મહાપચ્ચક્ખાણં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	176	
177	35628	આગમદીપ ૨૭ ભત્તપરિણ્ણા ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	177	
178	35629	આગમદીપ ૨૮ તંદુલવેયાલીયં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	178	
179	35630	આગમદીપ ૨૯ સંથારગં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	179	
180	35631	આગમદીપ ૩૦ એ ગચ્છાચારો ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	180	
181	35632	આગમદીપ ૩૦ બી ચંદાવેજ્ઝયં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	181	
182	35633	આગમદીપ ૩૧ ગણિવિજ્ઝા ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	182	
183	35634	આગમદીપ ૩૨ દેવીંદત્થઓ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	183	
184	35635	આગમદીપ ૩૩ બી વીરત્થઓ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	184	
185	35636	આગમદીપ ૩૪ નિસીહિં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	185	
186	35637	આગમદીપ ૩૫ બુહત્કપ્પો ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	186	
187	35638	આગમદીપ ૩૬ વવહારો ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	187	
188	35639	આગમદીપ ૩૭ દસાસૂયક્ખંધં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	188	
189	35640	આગમદીપ ૩૮ એ જિયકપ્પો ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	189	
190	35641	આગમદીપ ૩૯ મહાનિસીહીં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	190	
191	35642	આગમદીપ ૪૦ આવસ્સયં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	191	
192	35643	આગમદીપ ૪૧ એ ઓહનિજ્જુત્તિ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	192	
193	35644	આગમદીપ ૪૧ બી પિણ્ડનિજ્જુત્તિ ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	193	
	આગમગુજરાતી ભાવાનુવાદ નેટ 49 અથવા પ્રિન્ટેડ 15 ચાલુ..			

	પાછલા પાનેથી આગમગુજરાતી ભાવાનુવાદ નેટ 49 અથવા પ્રિન્ટેડ 15 ચાલુ..			
ક્રમ	ફાઈલનં	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
194	35645	આગમદીપ ૪૨ દસવેયાલિયં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	048	
195	35646	આગમદીપ ૪૩ ઉત્તરજ્ઝયણં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	136	
196	35647	આગમદીપ ૪૪ નંદીસૂત્તં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	048	
197	35648	આગમદીપ ૪૫ અનુઓગદારં ગુજરાતી ભાવાનુવાદ	112	
198	35649	કલ્પ(બારસા) સૂત્ર મૂળ	106	
2/1-આગમગુજરાતીભાવાનુવાદ કુલબુક્સ-49 નેટ અથવા પ્રિન્ટેડ15 કુલપાના			03,450	
		2/2 આગમ હિન્દી અનુવાદ નેટ [48]		
ક્રમ	ફાઈલનં	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
199	34667	आगम ०१ आचारांग सूत्र हिन्दी अनुवाद	126	
200	34668	आगम ०२ सूत्रकृतांग सूत्र हिन्दी अनुवाद	114	
201	34669	आगम ०३ स्थानांग सूत्र हिन्दी अनुवाद	158	
202	34670	आगम ०४ समवायांग सूत्र हिन्दी अनुवाद	96	
203	34671	आगम ०५ भगवती सूत्र भाग ०१ हिन्दी अनुवाद	250	
204	34672	आगम ०५ भगवती सूत्र भाग ०२ हिन्दी अनुवाद	254	
205	34673	आगम ०६ ज्ञाताधर्म सूत्र हिन्दी अनुवाद	162	
206	34674	आगम ०७ उपासकदशा सूत्र हिन्दी अनुवाद	33	
207	34675	आगम ०८ अन्तकृद्दशा सूत्र हिन्दी अनुवाद	35	
208	34676	आगम ०९ अनुत्तरोपपातिक सूत्र हिन्दी अनुवाद	13	
209	34677	आगम १० प्रश्नव्याकरण सूत्र हिन्दी अनुवाद	54	
210	34678	आगम ११ विपाक सूत्र हिन्दी अनुवाद	52	
211	34679	आगम १२ औपपातिक सूत्र हिन्दी अनुवाद	40	
212	34680	आगम १३ राजप्रश्नीय सूत्र हिन्दी अनुवाद	62	
213	34681	आगम १४ जीवाजीवाभिगम सूत्र हिन्दी अनुवाद	136	
214	34682	आगम १५ प्रज्ञापना सूत्र हिन्दी अनुवाद	181	
215	34683	आगम १६ सूर्यप्रज्ञप्ति सूत्र हिन्दी अनुवाद	51	
216	34684	आगम १७ चन्द्रप्रज्ञप्ति सूत्र हिन्दी अनुवाद	52	
217	34685	आगम १८ जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र हिन्दी अनुवाद	105	
218	34686	आगम १९ निरयावलिका सूत्र हिन्दी अनुवाद	17	
219	34687	आगम २० कल्पवतंसिका सूत्र हिन्दी अनुवाद	7	
220	34688	आगम २१ पुष्पिका सूत्र हिन्दी अनुवाद	21	
221	34689	आगम २२ पुष्पचूलिका सूत्र हिन्दी अनुवाद	7	
222	34690	आगम २३ वृष्णिदशा सूत्र हिन्दी अनुवाद	9	
223	34691	आगम २४ चतुशरण सूत्र हिन्दी अनुवाद	11	
		આગમ હિન્દી અનુવાદ નેટ ચાલુ..		

		પાછલા પાનેથી આગમ હિન્દી અનુવાદ નેટ ચાલુ..		
ક્રમ	ફાઈલનં	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
224	34692	आगम २५ आतुरप्रत्याख्यान सूत्र हिन्दी अनुवाद	12	
225	34693	आगम २६ महाप्रत्याख्यान सूत्र हिन्दी अनुवाद	16	
226	34694	आगम २७ भक्तपरिज्ञा सूत्र हिन्दी अनुवाद	20	
227	34695	आगम २८ तंदुलवैचारिक सूत्र हिन्दी अनुवाद	22	
228	34696	आगम २९ संस्तारक सूत्र हिन्दी अनुवाद	16	
229	34697	आगम ३० १ गच्छाचार सूत्र हिन्दी अनुवाद	16	
230	34698	आगम ३० २ चंदावेज्झया सूत्र हिन्दी अनुवाद	19	
231	34699	आगम ३१ गणिविद्या सूत्र हिन्दी अनुवाद	9	
232	34700	आगम ३२ देवेन्द्रस्तव सूत्र हिन्दी अनुवाद	22	
233	34701	आगम ३३ वीरस्तव सूत्र हिन्दी अनुवाद	10	
234	34702	आगम ३४ निशिथ सूत्र हिन्दी अनुवाद	51	
235	34703	आगम ३५ बृहत् कल्प सूत्र हिन्दी अनुवाद	20	
236	34704	आगम ३६ व्यवहार सूत्र हिन्दी अनुवाद	28	
237	34705	आगम ३७ दशाश्रुतस्कंध सूत्र हिन्दी अनुवाद	30	
238	34706	आगम ३८ जीतकल्प सूत्र हिन्दी अनुवाद	15	
239	34707	आगम ३९ महानिशिथ सूत्र हिन्दी अनुवाद	151	
240	34708	आगम ४० आवश्यक सूत्र हिन्दी अनुवाद	19	
241	34709	आगम ४१ १ ओघनिर्युक्ति सूत्र हिन्दी अनुवाद	48	
242	34710	आगम ४१ २ पिंडनिर्युक्ति सूत्र हिन्दी अनुवाद	56	
243	34711	आगम ४२ दशवैकालिक सूत्र हिन्दी अनुवाद	48	
244	34712	आगम ४३ उत्तराध्ययन हिन्दी अनुवाद	128	
245	34713	आगम ४४ नंदिसूत्र हिन्दी अनुवाद	28	
246	34714	आगम ४५ अनुयोगद्वार सूत्र हिन्दी अनुवाद	68	
	2/2- આગમ હિન્દી અનુવાદ કુલ બુક્સ -48, કુલપાના 2898		02,898	
		2/3 આગમ દીપ પ્રિન્ટેડ [7] ગુજરાતી અનુવાદ		
ક્રમ	ફાઈલનં	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
247	5054	આગમદીપ આગમ ૦૧ થી ૦૪ ગુજરાતી અનુવાદ ભાગ ૧	468	
248	5055	આગમદીપ આગમ ૦૫ ગુજરાતી અનુવાદ ભાગ ૨	532	
249	5056	આગમદીપ આગમ ૦૬ થી ૧૩ ગુજરાતી અનુવાદ ભાગ ૩	434	
250	5057	આગમદીપ આગમ ૧૪ થી ૧૫ ગુજરાતી અનુવાદ ભાગ ૪	420	
251	5058	આગમદીપ આગમ ૧૬ થી ૨૩ ગુજરાતી અનુવાદ ભાગ ૫	316	
252	5059	આગમદીપ આગમ ૨૪ થી ૩૯ ગુજરાતી અનુવાદ ભાગ ૬	396	
253	5060	આગમદીપ આગમ ૪૦ થી ૪૫ ગુજરાતી અનુવાદ ભાગ ૭	396	
2/3- આગમદીપ પ્રિન્ટેડ ગુજ.અનુવાદ કુલબુક્સ –7, કુલપાના 2962			02,962	

		2/4 આગમ ઈંગ્લીશઅનુવાદ net [11]		
ક્રમ	ફાઈલનં.	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
254	6815	Antkruddasha Sutra English Translation	62	
255	6817	Anuttaropapatikdasha Sutra Eng.Translati.	22	
256	6821	Vipak Sutra English Translation	71	
257	6837	Niryavalika Sutra English Translation	25	
258	6839	Kalpvatansika Sutra English Translation	8	
259	6841	Pushpika Sutra English Translation	28	
260	6843	Pushpchulika Sutra English Translation	8	
261	6845	Vrushnidasa Sutra English Translation	10	
262	6859	Gachchhachar Sutra Engl. Translation	15	
263	6865	Veerstava Sutra English Translation	8	
264	6887	Nandi Sutra English Translation	153	
	2/4- આગમ ઈંગ્લીશ અનુવાદ નેટ કુલ બુક્સ -11 કુલપાના 410		00,410	
		2/5 આગમ સટીક ગુજરાતી અનુવાદ પ્રિન્ટેડ [48]		
ક્રમ	ફાઈલનં.	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
265	9034	આગમ ૦૧ આચારાંગ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	516	
266	9035	આગમ ૦૨ સુત્રકૃતાંગ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	484	
267	9036	આગમ ૦૩ સ્થાનાંગ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	676	
268	9037	આગમ ૦૪ સમવાયાંગ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	242	
269	9038	આગમ ૦૫ ભગવતી સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	1138	
270	9039	આગમ ૦૬ જ્ઞાતાધર્મકથાંગ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	290	
271	9040	આગમ ૦૭ ઉપાસકદશાંગ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	72	
272	9041	આગમ ૦૮ અંતકૃદ્દશાંગ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	38	
273	9042	આગમ ૦૯ અનુત્તરોપપાતિક સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	20	
274	9043	આગમ ૧૦ પ્રશ્નવ્યાકરણાંગ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	162	
275	9044	આગમ ૧૧ વિપાક સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	92	
276	9045	આગમ ૧૨ ઔપપાતિક સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	128	
277	9046	આગમ ૧૩ રાઈપસેણીય સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	166	
278	9047	આગમ ૧૪ જીવાજીવાભિગમ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	486	
279	9048	આગમ ૧૫ પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	660	
280	9049	આગમ ૧૬ સૂર્યપ્રજ્ઞપ્તિ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	446	
281	9050	આગમ ૧૭ ચંદ્રપ્રજ્ઞપ્તિ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	36	
282	9051	આગમ ૧૮ જમ્બુદ્વીપપ્રજ્ઞપ્તિ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	628	
		આગમ સટીક ગુજરાતી અનુવાદ પ્રિન્ટેડ ચાલુ		

	પાછલા પાનેથી આગમસટીકગુજરાતીઅનુવાદ અથવા પ્રિન્ટેડ ચાલુ			
ક્રમ	ફાઈલનં.	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
283	9052	આગમ ૧૯ નિરયાવલિકા સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	52	
284	9053	આગમ ૨૦ કલ્પવતંસિકા સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	36	
285	9054	આગમ ૨૧ પુષ્પિકા સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	50	
286	9055	આગમ ૨૨ પુષ્પચૂલિકા સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	36	
287	9056	આગમ ૨૩ વૃષ્ણિદશા સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	38	
288	9057	આગમ ૨૪ ચતુશરણ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	40	
289	9058	આગમ ૨૫ આતુરપ્રત્યાખ્યાન આચારાંગ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી	44	
290	9059	આગમ ૨૬ મહાપ્રત્યાખ્યાન સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	40	
291	9060	આગમ ૨૭ ભક્તપરિજ્ઞા સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	40	
292	9061	આગમ ૨૮ તંદુલવૈચારિક સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	84	
293	9062	આગમ ૨૯ સંસ્તારક સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	48	
294	9063	આગમ ૩૦ એ ગચ્છાચાર સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	74	
295	9064	આગમ ૩૦ બી ચંદ્રવેધ્યક સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	48	
296	9065	આગમ ૩૧ ગણિવિદ્યા સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	40	
297	9066	આગમ ૩૨ દેવેન્દ્રસ્તવ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	54	
298	9068	આગમ 33 બી વીરસ્તવ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	38	
299	9069	આગમ ૩૪ નિશીથ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	87	
300	9070	આગમ ૩૫ બૃહત્ કલ્પ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	27	
301	9071	આગમ ૩૬ વ્યવહાર સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	54	
302	9072	આગમ ૩૭ દશાશ્રુતસ્કન્ધ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	68	
303	9073	આગમ ૩૮ એ જિતકલ્પ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	36	
304	9075	આગમ ૩૯ મહાનિશીથ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	210	
305	9076	આગમ ૪૦ આવશ્યક મૂલ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	932	
306	9077	આગમ ૪૧ એ ઓઘનિર્યુક્તિ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	76	
307	9078	આગમ ૪૧ બી પિણ્ડનિર્યુક્તિ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	184	
308	9079	આગમ ૪૨ દશવૈકાલિક સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	240	
309	9080	આગમ ૪૩ ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	680	
310	9081	આગમ ૪૪ નન્દિ સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	224	
311	9082	આગમ ૪૫ અનુયોગદ્વાર સૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	272	
312	9084	કલ્પ સૂત્ર મૂલ ગુજરાતી અનુવાદ	208	
	2/5- આગમસટીકગુજરાતીઅનુવાદ પ્રિન્ટેડ બુક્સ 48 પાના 10340		10340	

		2/6 આગમ હિન્દી અનુવાદ અથવા પ્રિન્ટેડ બુક્સ [12]		
ક્રમ	ફાઈલનં	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
313	9779	आगम सूत्र हिन्दी अनुवाद भाग-१	257	
314	9780	आगम सूत्र हिन्दी अनुवाद भाग-२	274	
315	9781	आगम सूत्र हिन्दी अनुवाद भाग-३	290	
316	9782	आगम सूत्र हिन्दी अनुवाद भाग-४	306	
317	9783	आगम सूत्र हिन्दी अनुवाद भाग-५	274	
318	9784	आगम सूत्र हिन्दी अनुवाद भाग-६	274	
319	9785	आगम सूत्र हिन्दी अनुवाद भाग-७	242	
320	9786	आगम सूत्र हिन्दी अनुवाद भाग-८	242	
321	9787	आगम सूत्र हिन्दी अनुवाद भाग-९	225	
322	9788	आगम सूत्र हिन्दी अनुवाद भाग-१०	242	
323	9789	आगम सूत्र हिन्दी अनुवाद भाग-११	242	
324	9790	आगम सूत्र हिन्दी अनुवाद भाग-१२	242	
	2/6- આગમ હિન્દી અનુવાદ પ્રિન્ટેડ બુક્સ 12 પાના 3110		03,110	
				0,23,170

[3] આગમ વિવેચન સાહિત્ય (૧૦થી૧૬) કુલબુક્સ 171, કુલપાના 60884				
		3/1 આગમ સૂત્ર સટીકં પ્રિન્ટેડ બુક્સ [46]		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
325	3335	आगम सूत्र सटीक ०१ आचार अंगसूत्र ०१	468	
326	3336	आगम सूत्र सटीक ०२ सूत्रकृत अंगसूत्र ०२	484	
327	3337	आगम सूत्र सटीक ०३ स्थान अंगसूत्र ०३	596	
328	3338	आगम सूत्र सटीक ०४ समवाय अंगसूत्र ०४	204	
329	3339	आगम सूत्र सटीक ०५ भगवती अंगसूत्र ०५	1096	
330	3340	आगम सूत्र सटीक ०६ ज्ञाताधर्मकथा अंगसूत्र ०६	280	
331	3341	आगम सूत्र सटीक ०७ उपासकदशा अंगसूत्र ०७	80	
332	3342	आगम सूत्र सटीक ०८ अन्तकृद्दशा अंगसूत्र ०८	58	
333	3343	आगम सूत्र सटीक ०९ अनुत्तरोपपातिकदशा अंगसूत्र ०९	34	
334	3344	आगम सूत्र सटीक १० प्रश्नव्याकरण अंगसूत्र १०	192	
335	3345	आगम सूत्र सटीक ११ विपाकश्रुत अंगसूत्र ११	86	
336	3346	आगम सूत्र सटीक १२ औपपातिक उपांगसूत्र ०१	150	
337	3347	आगम सूत्र सटीक १३ राजप्रश्निय उपांगसूत्र ०२	184	
338	3348	आगम सूत्र सटीक १४ जीवाजीवाभिगम उपांगसूत्र ०३	532	
339	3349	आगम सूत्र सटीक १५ प्रज्ञापना उपांगसूत्र ०४	664	
340	3350	आगम सूत्र सटीक १६ सूर्यप्रज्ञप्ति उपांगसूत्र ०५	336	
		આગમ સૂત્ર સટીક પ્રિન્ટેડ ચાલુ..		

		પાછલા પાનેથી આગમ સૂત્ર સટીક પ્રિન્ટેડ ચાલુ.		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
341	3351	आगम सूत्र सटीक १७ चन्द्रप्रज्ञप्ति उपांगसूत्र ०६	28	
342	3352	आगम सूत्र सटीक १८ जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति उपांगसूत्र ०७	564	
343	3353	आगम सूत्र सटीक १९ निरयावलिका उपांगसूत्र ०८	46	
344	3354	आगम सूत्र सटीक २० कल्पवतंसिका उपांगसूत्र ०९	27	
345	3355	आगम सूत्र सटीक २१ पुष्पिका उपांगसूत्र १०	44	
346	3356	आगम सूत्र सटीक २२ पुष्पचूलिका उपांगसूत्र ११	27	
347	3357	आगम सूत्र सटीक २३ वृष्णिदशा उपांगसूत्र १२	29	
348	3358	आगम सूत्र सटीक २४ चतुशरण पइण्णसूत्र ०१	45	
349	3359	आगम सूत्र सटीक २५ आतुरप्रत्याख्यान पइण्णसूत्र ०२	38	
350	3360	आगम सूत्र सटीक २६ महाप्रत्याख्यान पइण्णसूत्र ०३	41	
351	3361	आगम सूत्र सटीक २७ भक्तपरिज्ञा पइण्णसूत्र ०४	45	
352	3362	आगम सूत्र सटीक २८ तंदुलवैचारिक पइण्णसूत्र ०५	88	
353	3363	आगम सूत्र सटीक २९ संस्तारक पइण्णसूत्र ०६	38	
354	3364	आगम सूत्र सटीक ३० गच्छाचार पइण्णसूत्र ०७	74	
355	3366	आगम सूत्र सटीक ३१ गणिविद्या पइण्णसूत्र ०८	35	
356	3367	आगम सूत्र सटीक ३२ देवेन्द्रस्तव पइण्णसूत्र ०९	60	
357	3368	आगम सूत्र सटीक ३३ मरणसमाधि पइण्णसूत्र १०	103	
358	3370	आगम सूत्र सटीक ३४ निशीथ छेदसूत्र ०१	1372	
359	3371	आगम सूत्र सटीक ३५ बृहतकल्प छेदसूत्र ०२	1500	
360	3372	आगम सूत्र सटीक ३६ व्यवहार छेदसूत्र ०३	1046	
361	3373	आगम सूत्र सटीक ३७ दशाश्रुतस्कन्ध छेदसूत्र ०४	110	
362	3374	आगम सूत्र सटीक ३८ जितकल्प छेदसूत्र ०५	56	
363	3376	आगम सूत्र सटीक ३९ महानिशीथ छेदसूत्र ०६	170	
364	3377	आगम सूत्र सटीक ४० आवश्यक मूलसूत्र ०१	808	
365	3378	आगम सूत्र सटीक ४१ए ओघनिर्युक्ति मूलसूत्र 2ए	256	
366	3379	आगम सूत्र सटीक ४१बी पिण्डनिर्युक्ति मूलसूत्र 2बी	202	
367	3380	आगम सूत्र सटीक ४२ दशवैकालिक मूलसूत्र ०३	284	
368	3381	आगम सूत्र सटीक ४३ उत्तराध्ययन मूलसूत्र ०४	704	
369	3382	आगम सूत्र सटीक ४४ नन्दि चूलिकासूत्र ०१	265	
370	3383	आगम सूत्र सटीक ४५ अनुयोगद्वार चूलिकासूत्र ०२	257	
	3/1- આગમ સૂત્ર સટીકં પ્રિન્ટેડ બુક્સ 46 પાના 13806		13,806	

		3/2 આગમ મૂલ એવં વૃત્તિ–1 નેટ બુક્સ [51]		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
371	4101	आगम ०१ आचार मूलम् एवं वृत्ती	871	
372	4102	आगम ०२ सूत्रकृत मूलम् एवं वृत्ती	860	
373	4103	आगम ०३ स्थान मूलम् एवं वृत्ती	1059	
374	4104	आगम ०४ समवाय मूलम् एवं वृत्ती	324	
375	4105	आगम ०५ भगवती मूलम् एवं वृत्ती	1967	
376	4106	आगम ०६ ज्ञाताधर्मकथा मूलम् एवं वृत्ती	512	
377	4107	आगम ०७ उपासकदशा मूलम् एवं वृत्ती	113	
378	4108	आगम ०८ अन्तकृद्दशा मूलम् एवं वृत्ती	69	
379	4109	आगम ०९ अनुत्तरोपपातिकदशा मूलम् एवं वृत्ती	21	
380	4110	आगम १० प्रश्नव्याकरणम् मूलम् एवं वृत्ती	335	
381	4111	आगम ११ विपाकश्रुत मूलम् एवं वृत्ती	132	
382	4112	आगम १२ औपपातिक मूलम् एवं वृत्ती	244	
383	4113	आगम १३ राजप्रश्नीय मूलम् एवं वृत्ती	304	
384	4114	आगम १४ जीवाजीवाभिगम मूलम् एवं वृत्ती	938	
385	4115	आगम १५ प्रज्ञापना मूलम् एवं वृत्ती	1227	
386	4116	आगम १६ सूर्यप्रज्ञप्ति मूलम् एवं वृत्ती	600	
387	4117	आगम १७ चंद्रप्रज्ञप्ति मूलम् एवं वृत्ती	602	
388	4118	आगम १८ जम्बुद्वीप प्रज्ञप्ति मूलम् एवं वृत्ती	1097	
389	4119	आगम १९ निरयावलिका मूलम् एवं वृत्ती	42	
390	4120	आगम २० कल्पवतंसिका मूलम् एवं वृत्ती	9	
391	4121	आगम २१ पुष्पिका मूलम् एवं वृत्ती	36	
392	4122	आगम २२ पुष्पचूलिका मूलम् एवं वृत्ती	9	
393	4123	आगम २३ वृष्णिदशा मूलम् एवं वृत्ती	13	
394	4124	आगम २४ चतुशरण मूलम् एवं छाया	14	
395	4149	आगम २४ चतुशरण मूलम् एवं वृत्ती	45	
396	4125	आगम २५ आतुरप्रत्याख्यान मूलम् एवं छाया	17	
397	4126	आगम २६ महाप्रत्याख्यान मूलम् एवं छाया	24	
398	4127	आगम २७ भक्तपरिज्ञा मूलम् एवं छाया	29	
399	4128	आगम २८ तन्दुलवैचारिक मूलम् एवं छाया	49	
400	4150	आगम २८ तंदुलवैचारिक मूलम् एवं वृत्ति	117	
401	4129	आगम २९ संस्तारक मूलम् एवं छाया	21	
402	4130	आगम ३० गच्छाचार मूलम् एवं छाया	24	
403	4151	आगम ३० गच्छाचार मूलम् एवं वृत्ति	91	
404	4131	आगम ३१ गणिविद्या मूलम् एवं छाया	16	
		આગમ મૂળ + વૃત્તિ-1 નેટ ચાલુ..		

		પાછલા પાનેથી આગમ મૂળ + વૃત્તિ-1 ચાલુ.		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
405	4132	आगम ३२ देवेन्द्रस्तव मूलम् एवं छाया	46	
406	4133	आगम ३३ मरणसमाधि मूलम् एवं छाया	98	
407	4134	आगम ३४ निशिथ मूलम् एव	18	
408	4135	आगम ३५ बृहत् कल्प मूलम् एव	14	
409	4136	आगम ३६ व्यवहार मूलम् एव	17	
410	4137	आगम ३७ दशा श्रुतस्कंध मूलम् एव	17	
411	4138	आगम ३८ ए जितकल्प मूलम् एवं भाष्य	59	
412	4139	आगम ३८ बी पंचकल्प भाष्य एव	56	
413	4140	आगम ३९ महानिशिथ मूलम् एव	66	
414	4141	आगम ४० आवश्यक मूलम् एवं वृत्ति	1736	
415	4142	आगम ४१ १ ओघनिर्युक्ति मूलम् एवं वृत्ति	459	
416	4143	आगम ४१ २ पिंडनिर्युक्ति मूलम् एवं वृत्ति	364	
417	4144	आगम ४२ दशवैकालिक मूलम् एवं वृत्ति	577	
418	4145	आगम ४३ उत्तराध्ययनानि मूलम् एवं वृत्ति	1428	
419	4146	आगम ४४ नंदिसूत्र मूलम् एवं वृत्ति	514	
420	4147	आगम ४५ अनुयोगद्वार मूलम् एवं वृत्ति	547	
421	4148	कल्प बारसा सूत्र	145	
	3/2- આગમસૂત્ર મૂલ એવં વૃત્તિ બુક્સ-1, 51 પાના 17992		17,992	
		3/3 આગમ મૂલ એવં વૃત્તિ-2 બુક્સ [9]		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
422	6211	आगम 05 भगवती दानशेखरीय वृत्ति अंग सूत्र 5 भाग 01	312	
423	6212	आगम 05 भगवती दानशेखरीय वृत्ति अंग सूत्र 5 भाग 02	305	
424	7201	आगम 40 आवश्यक मलयगिरि वृत्ति मूल सूत्र 1 भाग 01	307	
425	7202	आगम 40 आवश्यक मलयगिरि वृत्ति मूल सूत्र 1 भाग 02	325	
426	7203	आगम 40 आवश्यक मलयगिरि वृत्ति मूल सूत्र 1 भाग 03	316	
427	7204	आगम 40 आवश्यक मलयगिरि वृत्ति मूल सूत्र 1 भाग 04	327	
428	7205	आगम 44 नन्दिसूत्र हारिभद्रिय वृत्ति	124	
429	7206	आगम 45 अनुयोगद्वार हारिभद्रिय वृत्ति	133	
430	7209	कल्पसूत्र सुबोधिका वृत्ति	411	
	3/3- આગમસૂત્ર મૂલ એવં વૃત્તિ -2, બુક્સ 9 પાના 2560		02,560	

		3/4–આગમ ચૂર્ણિ સાહિત્ય બુક્સ [9]		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
431	6201	आगम ०१ आचार चूर्णि:	388	
432	6202	आगम ०२ सूत्रकृत चूर्णि:	472	
433	6203	आगम 40 आवश्यक चूर्णि: 01	310	
434	6203	आगम 40 आवश्यक चूर्णि: 02	320	
435	6204	आगम 40 आवश्यक चूर्णि: 03	332	
436	6205	आगम 42 दशवैकालिक चूर्णि:	387	
437	6206	आगम 43 उत्तराध्ययनानि चूर्णि:	291	
438	6207	आगम 44 नन्दिसूत्र चूर्णि:	70	
439	6208	आगम 45 अनुयोगद्वार सूत्र चूर्णि:	98	
	3/4– આગમચૂર્ણિ સાહિત્ય પ્રિન્ટ બુક્સ 9 પાના 2667		02,667	
		3/5–સવૃતિકઆગમસૂત્રાણિ પ્રિન્ટેડ બુક્સ [40]		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
440	35001	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 01	314	
441	35002	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 02	586	
442	35003	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 03	498	
443	35004	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 04	392	
444	35005	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 05	594	
445	35006	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 06	494	
446	35007	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 07	338	
447	35008	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 08	592	
448	35009	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 09	552	
449	35010	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 10	514	
450	35011	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 11	384	
451	35012	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 12	522	
452	35013	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 13	538	
453	35014	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 14	384	
454	35015	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 15	314	
455	35016	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 16	480	
456	35017	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 17	488	
457	35018	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 18	426	
458	35019	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 19	514	
459	35020	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 20	336	
460	35021	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 21	610	
		સવૃત્તિક આગમ સૂત્રાણિ પ્રિન્ટેડ ચાલુ..		

		પાછલા પાનેથી સવૃત્તિક આગમ સૂત્રાણિ પ્રિન્ટેડ ચાલુ..		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	
461	35022	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 22	614	
462	35023	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 23	376	
463	35024	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 24	426	
464	35025	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 25	344	
465	35026	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 26	312	
466	35027	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 27	330	
467	35028	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 28	466	
468	35029	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 29	442	
469	35030	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 30	464	
470	35031	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 35	426	
471	35032	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 36	472	
472	35033	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 37	376	
473	35034	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 31	590	
474	35035	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 32	522	
475	35036	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 33	482	
476	35037	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 34	466	
477	35038	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 38	528	
478	35039	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 39	560	
479	35040	सवृत्तिक आगम सुत्ताणि 1 भाग 40	394	
	3/5–સવૃત્તિક આગમસૂત્રાણી 1 પ્રિન્ટ બુક્સ 9 પાના 18460		18,460	
		3/6–સવૃતિક આગમ સૂત્રાણિ–2 પ્રિન્ટેડ બુક્સ [8]		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	
480	35061	सवृतिक आगम सूत्राणि 2 भगवती मूल एवं वृत्ति आगम 5 भाग 1	320	
481	35062	सवृतिक आगम सूत्राणि 2 भगवती मूल एवं वृत्ति आगम 5 भाग 2	318	
482	35063	सवृतिक आगम सूत्राणि 2 आवश्यक निर्यूक्ति एवं वृत्ति आगम 40	318	
483	35064	सवृतिक आगम सूत्राणि 2 04 आवश्यक निर्यूक्ति एवं वृत्ति आगम	336	
484	35065	सवृतिक आगम सूत्राणि 2 05 आवश्यक निर्यूक्ति एवं वृत्ति आगम	328	
485	35066	सवृतिक आगम सूत्राणि 2 06 आवश्यक निर्यूक्ति एवं वृत्ति आगम	336	
486	35067	सवृतिक आगम सूत्राणि 2 07 नन्दि एवं अनुयोगद्वार वृत्ति:	270	
487	35068	सवृतिक आगम सूत्राणि 2 कल्पसूत्रम् मूल एवं वृत्ति	422	
	3/6–સવૃત્તિક આગમ સૂત્રાણી 2, પ્રિન્ટેડ બુક્સ 8 પાના 2648		02,648	

		3/7 સચૂર્ણિક આગમ સુત્તાણિ, પ્રિન્ટેડ બુક્સ [૮]		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	
488	35051	सचूर्णिक आगम सुत्ताणि 01	400	
489	35052	सचूर्णिक आगम सुत्ताणि 01	486	
490	35053	सचूर्णिक आगम सुत्ताणि 04	320	
491	35054	सचूर्णिक आगम सुत्ताणि 05	328	
492	35055	सचूर्णिक आगम सुत्ताणि 06	344	
493	35056	सचूर्णिक आगम सुत्ताणि 06	398	
494	35057	सचूर्णिक आगम सुत्ताणि 07	302	
495	35058	सचूर्णिक आगम सुत्ताणि 08	176	
	3/7–સચૂર્ણિક આગમ સુત્તાણિ પ્રિન્ટેડ બુક્સ 8 પાના 2754		02,754	
				0,60,884
[4] આગમ કોષ સાહિત્ય(૧૭ થી૨૧) કુલ બુક્સ 16 કુલપાના 5506				
		4/1 આગમ સદ્દ કોસો, પ્રિન્ટેડ બુક્સ [4]		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
496	16024	आगमसद्दकोसो भाग- १	546	
497	16025	आगमसद्दकोसो भाग- २	562	
498	16026	आगमसद्दकोसो भाग-३	546	
499	16027	आगमसद्दकोसो भाग- ४	530	
		4/1– આગમ સદ્દકોસો પ્રિન્ટેડ બુક્સ 4 પાના 2184	02,184	
500	16094	4/2 आगम कहा व नाम कोसो प्रिन्टेड बूक [1]	208	
		4/3 આગમ સાગર કોષ: નેટ બુક્સ [5]		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
501	16133	आगम–सागर–कोश: भाग–१	238	
502	16134	आगम–सागर–कोश: भाग–२	200	
503	16135	आगम–सागर–कोश: भाग–३	272	
504	16136	आगम–सागर–कोश: भाग–४	246	
505	16137	आगम–सागर–कोश: भाग–५	170	
	4/3- આગમ સાગર કોષ: નેટ બુક્સ 5 પાના 1126		01,126	
		4/4 આગમબૃહત્ નામકોષ: પ્રિન્ટેડ બુક્સ [2]		
506	35091	આગમ બૃહત્ નામ કોષ: ભાગ– ૧	250	
507	35092	આગમ બૃહત્ નામ કોષ: ભાગ– ૨	250	
	4/3- આગમ સાગર કોષ: નેટ બુક્સ 5 પાના 1126		01,126	

		4/5 આગમ શબ્દાદિ સંગ્રહ: પ્રિન્ટેડ બુક્સ [4]		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
508	34455	आगम शब्दादि संग्रह (प्राकृत, संस्कृत, गुजराती) भाग 01	368	
509	34456	आगम शब्दादि संग्रह (प्राकृत, संस्कृत, गुजराती) भाग 02	392	
510	34457	आगम शब्दादि संग्रह (प्राकृत, संस्कृत, गुजराती) भाग 03	392	
511	34458	आगम शब्दादि संग्रह (प्राकृत, संस्कृत, गुजराती) भाग 04	336	
	4/5– આગમ શબ્દાદિ સંગ્રહ: પ્રિન્ટેડ બુક્સ 4 પાના 1488		01,488	
				05,506
		[5] આગમ અનુક્રમ સાહિત્ય(૨૨થી૩૦) કુલ બુક્સ ૯		
		5/1 આગમવિષયાનુક્રમ,પ્રિન્ટ/નેટ બુક્સ [2]		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
512	8040	આગમ વિષય દર્શન	382	
513	9143	આગમ વિષય અનુક્રમ	344	
	5/1– આગમવિષયાનુક્રમ પ્રિન્ટ/નેટ બુક્સ 2 પાના 726		00,726	
		5/2 આગમ સટીક વિષયાનુક્રમ, નેટ બુક્સ [4]		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
514	7213	अंग सूत्र विषयानुक्रम	179	
515	7214	उपांग सूत्र विषयानुक्रम	108	
516	7214	प्रकिर्णक सूत्र विषयानुक्रम	18	
517	7215	नन्दि आदि सप्त सूत्र विषयानुक्रम	123	
	5/2- આગમ સટીક વિષયાનુક્રમ નેટ બુક્સ 4 પાના 428		00,428	
		5/3 આગમ સૂત્ર–ગાથા અનુક્રમ, નેટ બુક્સ [3]		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
518	7210	अंग सूत्र गाथादी अकारादि क्रम	148	
519	7211	उपांग प्रकिर्णक सूत्र गाथादि अकारादि क्रम	79	
520	7212	नन्दि आदि सूत्र गाथादि अकारादि क्रम	197	
	5/3– આગમ સૂત્ર–ગાથા અનુક્રમ નેટ 3 બુક્સ પાના 424		00,424	
				01,578
		[6] આગમ અન્ય સાહિત્ય(૩૧થી૪૪)કુલ બુક્સ 14		
		6/1 આગમ સંબંધી લેખ નેટ બુક્સ [3]		
521	24971	આગમના પ્રખર વ્યાખ્યાતાઓ	28	
522	24971	આગમકાલીન શ્રાવક–શ્રાવિકા_જીવન અને કવન	36	
523	35150	આગમ–યાત્રા	4	
	6/1- આગમ સંબંધી લેખ પ્રિન્ટેડ 3 બુક્સ પાના 68		00,068	

		6/2 આગમ કથાનુયોગ પ્રિન્ટેડ બુક્સ [6]		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
524	5008	આગમ કથાનુયોગ ગુજરાતી ભાગ ૦૧	386	
525	5009	આગમ કથાનુયોગ ગુજરાતી ભાગ ૦૨	370	
526	5010	આગમ કથાનુયોગ ગુજરાતી ભાગ ૦૩	434	
527	5011	આગમ કથાનુયોગ ગુજરાતી ભાગ ૦૪	386	
528	5012	આગમ કથાનુયોગ ગુજરાતી ભાગ ૦૫	322	
529	5013	આગમ કથાનુયોગ ગુજરાતી ભાગ ૦૬	274	
		6/2– આગમ કથાનુયોગ પ્રિન્ટેડ 6 બુક્સ પાના 2172	02,172	
		6/3 આગમ સંબંધિ અન્યસાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ [4]		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
530	35073	आगम सूत्र-गाथा आदि अकारादि	431	
531	35074	आगम सूत्र लघु बृहत् विषयानुक्रम	439	
532	35071	आगमीय सुक्तावलि आदि	96	
533	35072	प्रत्येकबुद्ध भाषितानी ऋषिभाषितसूत्राणि मूलं	78	
534	35100	આગમ સંક્ષિપ્ત પરીચય	96	
		6/4 આગમ પૂજન સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ [1]		
535	5163	૪૫ આગમ મહાપૂજન વિધિ	00,068	
				03,352
	કુલ આગમ સાહિત્ય બુક્સ 535, કુલ પેજીસ 1,02,550			
		આગમ સિવાયનું અન્ય સાહિત્ય		
	7/1 તત્ત્વાભ્યાસ સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ–13 કુલ પેજ 2090			
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
536	5030	તત્ત્વાર્થ સૂત્ર પ્રબોધ ટીકા અધ્યાય ૦૧	254	
537	5031	તત્ત્વાર્થાધિગમ સૂત્ર અભિનવ ટીકા અધ્યાય ૦૧	174	
538	5032	તત્ત્વાર્થાધિગમ સૂત્ર અભિનવ ટીકા અધ્યાય ૦૨	194	
539	5033	તત્ત્વાર્થાધિગમ સૂત્ર અભિનવ ટીકા અધ્યાય ૦૩	170	
540	5034	તત્ત્વાર્થાધિગમ સૂત્ર અભિનવ ટીકા અધ્યાય ૦૪	186	
541	5035	તત્ત્વાર્થાધિગમ સૂત્ર અભિનવ ટીકા અધ્યાય ૦૫	194	
542	5036	તત્ત્વાર્થાધિગમ સૂત્ર અભિનવ ટીકા અધ્યાય ૦૬	178	
543	5037	તત્ત્વાર્થાધિગમ સૂત્ર અભિનવ ટીકા અધ્યાય ૦૭	170	
544	5038	તત્ત્વાર્થાધિગમ સૂત્ર અભિનવ ટીકા અધ્યાય ૦૮	154	
		તત્ત્વાભ્યાસ સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ ચાલુ..		

		પાછલાપાનેથી તત્ત્વાભ્યાસ સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ ચાલુ..		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
545	5039	તત્ત્વાર્થાધિગમ સૂત્ર અભિનવ ટીકા અધ્યાય ૦૯	202	
546	5040	તત્ત્વાર્થાધિગમ સૂત્ર અભિનવ ટીકા અધ્યાય ૧૦	82	
547	5041	તત્ત્વાર્થ સૂત્રના આગમ આધાર સ્થાનો	118	
548	31008	**तत्त्वार्थ सूत्र के ८४ प्रकाशनों संबंधी डीवीडी की माहिती**	14	
	7/1 –તત્ત્વાભ્યાસ સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ 13 બુક્સ પાના 2090		02,090	
	7/2 સૂત્રાભ્યાસ સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ 6 પાના 1480			
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
549	8042	પંડીત વિરવિજયજી જૈન એજ્યુકેશનલ સર્ટીફીકેટ કોર્સ	174	
550	8043	પ્રતિક્રમણસૂત્ર અભિનવ વિવેચન ભાગ ૧	321	
551	8044	પ્રતિક્રમણસૂત્ર અભિનવ વિવેચન ભાગ ૨	322	
552	8045	પ્રતિક્રમણસૂત્ર અભિનવ વિવેચન ભાગ ૩	305	
553	8046	પ્રતિક્રમણસૂત્ર અભિનવ વિવેચન ભાગ ૪	306	
554	35075	શ્રમણ જ્ઞાન–કૌશલ્ય અભિયાન (કક્ષા– ૧ થી ૧૫)	52	
		7/2 સૂત્રાભ્યાસ સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ ૬ પાના 1480	01,480	
		7/3 વ્યાકરણ સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ 5 પાના 1048		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
555	5135	અભિનવ હેમ લઘુ પ્રક્રિયા ભાગ ૦૧	256	
556	5136	અભિનવ હેમ લઘુ પ્રક્રિયા ભાગ ૦૨	200	
557	5137	અભિનવ હેમ લઘુ પ્રક્રિયા ભાગ ૦૩	310	
558	5138	અભિનવ હેમ લઘુ પ્રક્રિયા ભાગ ૦૪	254	
559	3632	**कृदन्तमाला**	28	
		7/3 વ્યાકરણ સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ 5 પાના 1048	01,048	
		7/4 વ્યાખ્યાન સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ 5 પાના 1300		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
560	9105	અભિનવ ઉપદેશ પ્રાસાદ વ્યાખ્યાનો ભાગ ૦૧	364	
561	9106	અભિનવ ઉપદેશ પ્રાસાદ વ્યાખ્યાનો ભાગ ૦૨	402	
562	9107	અભિનવ ઉપદેશ પ્રાસાદ વ્યાખ્યાનો ભાગ ૦૩	354	
563	9108	અભિનવ ઉપદેશ પ્રાસાદ વ્યાખ્યાનો ભાગ ૦૪	98	
564	9207	લઘુ વ્યાખ્યાન સંગ્રહ કારણ કે તે સાધુ હતા	82	
		7/4 વ્યાખ્યાન સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ 5 પાના 1300	1300	

		7/5 જિનભક્તિ સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ 9 પાના 1196		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
565	5165	વિતરાગ સ્તુતિ સઞ્ચય ૧૧૫૧ સ્તુતિ	222	565
566	5166	સિદ્ધાચલનો સાથી ભાવયાત્રા સહિત	102	566
567	5170	શત્રુંજય ભક્તિ	50	567
568	5176	ચૈત્ય પરિપાટી	56	568
569	3631	**शत्रुंजय भक्ति**	50	569
570	5133	ચૈત્યવંદન માળા	362	570
571	3633	**चैत्यवन्दन संग्रह तीर्थ जिन विशेष**	146	571
572	3634	**चैत्यवन्दन पर्वमाला**	98	572
573	3635	**चैत्यवन्दन चौविसी**	110	573
		7/5 જિનભક્તિ સાહિત્ય પ્રિન્ટ બુક્સ 9 પાના 1196	01,196	
		7/6 વિધિ સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ 3 પાના 256		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
574	5161	દીક્ષા યોગાદિ વિધી	86	
575	5162	વિધિ સંગ્રહ	154	
576	5183	સાધુ સાધ્વી કાળધર્મ વિધિ	16	
		7/6 વિધિ સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ 3 પાના 256	00,256	
		7/7 આરાધના સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ 4 પાના 534		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
577	5134	સમાધિમરણ	366	
578	5182	સાધુ સાધ્વી અંતિમ આરાધના	18	
579	5168	શ્રાવક અંતિમ આરાધના	50	
580	35381	સમાધિ મૃત્યુનું મેનેજમેન્ટ	100	
		7/7 આરાધના સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ 4 પાના 534	00,534	
		7/8 પરિચય સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ 3 પાના 136		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
581	35151	સાહિત્ય–યાત્રા ફોલ્ડર 1 થી 31 નો પરિચય	36	
582	31012	દીપરત્નસાગરની 585 સાહિત્ય કૃતિયો_word_2017	60	
583	35152	દીપરત્નસાગરની 585 સાહિત્ય કૃતિયો_Excl_2017	40	
		7/8 પરિચય સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ 3 પાના 136	00,136	
		7/9 પૂજન સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ–1 પાના		
584	5163	પાર્શ્વ પદ્માવતી મહાપૂજન વિધિ	68	

		7/10 તીર્થંકર સંક્ષિપ્ત દર્શન પ્રિન્ટેડ બુક્સ 25 પાના 680		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
585	35101	ભગવંત ઋષભ પરિચય	18	
586	35102	ભગવંત અજિતપરિચય	18	
587	35103	ભગવંત સંભવ પરિચય	18	
588	35104	ભગવંત અભિનંદન પરિચય	18	
589	35105	ભગવંત સુમતિ પરિચય	18	
590	35106	ભગવંત પદ્મપ્રભ પરિચય	18	
591	35107	ભગવંત સુપાર્શ્વ પરિચય	18	
592	35108	ભગવંત ચંદ્રપ્રભ પરિચય	18	
593	35109	ભગવંત સુવિધિ પરિચય	18	
594	35110	ભગવંત શીતલ પરિચય	18	
595	35111	ભગવંત શ્રેયાંસ પરિચય	18	
596	35112	ભગવંત વાસુપૂજ્ય પરિચય	18	
597	35113	ભગવંત વિમલ પરિચય	18	
598	35114	ભગવંત અનંત પરિચય	18	
599	35115	ભગવંત ધર્મ પરિચય	18	
600	35116	ભગવંત શાંતિ પરિચય	18	
601	35117	ભગવંત કુંથુ પરિચય	18	
602	35118	ભગવંત અર પરિચય	18	
603	35119	ભગવંત મલ્લિ પરિચય	18	
604	35120	ભગવંત મુનિસુવ્રત પરિચય	18	
605	35121	ભગવંત નમિ પરિચય	18	
606	35122	ભગવંત નેમિ પરિચય	18	
607	35123	ભગવંત પાર્શ્વ પરિચય	18	
608	35124	ભગવંત વર્ધમાન પરિચય	18	
609	34662	૨૪ તીર્થંકર પરિચય ૧૮૫ દ્વારોમાં	248	
		7/10 તીર્થંકર સંક્ષિપ્ત દર્શન બુક્સ 25 પાના 680	00,680	
		7/11 પ્રકીર્ણ સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ 4 પાના 246		
ક્રમ	ફાઈલ	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
610	05164	ચોઘડિયા તથા હોરાની કાયમી સમય દર્શિકા	66	
611	05169	અમદાવાદના જિનમંદિર ઉપાશ્ર આદિ ડિરેક્ટરી	128	
612	05159	શ્રાવકના બાર વ્રત તથા અન્ય નિયમો	16	
613	00560	અભિનવ જૈન પંચાંગ	36	
		7/11 પ્રકીર્ણ સાહિત્ય પ્રિન્ટેડ બુક્સ 4 પાના 286	00,246	

	7/12 દીપરત્નસાગરનાલઘુશોધનિબંધ નેટબુક્સ 2 પાના 106			
ક્રમ	ફાઈલનં	પુસ્તકનું નામ	કુલપાના	કુલપાના
614	249713	આગમકાલીન શ્રાવક–શ્રાવિકા_જીવન અને કવન	70	
615	249547	શ્રુત ઉપાસકો અને સાહિત્ય સર્જન	36	
		7/12 દીપરત્નસાગરનાલઘુશોધનિબંધ બુક્સ 2 પાના	00,106	

મુનિ દીપરત્નસાગરજી દ્વારા [31/12/2020 સુધીમાં] થયેલ સાહિત્ય કાર્ય

આગમ સાહિત્ય	બુક્સ 535	કુલ પેજ	1,02,460
આગમેતર સાહિત્ય	બુક્સ 80	કુલ પેજ	0,09,140
કુલ સાહિત્ય નિર્માણ	બુક્સ 615	કુલ પેજ	1,11,600

+ 'તત્ત્વાર્થ સૂત્ર'ના એક વિશિષ્ટ સંકલનની DVD કુલ પેજ 27,930

અમારા સાહિત્યનો વિસ્તાર કુલપાના 1,39,530

એક લાખ ઓગણચાલીશ હજાર પાંચસો ત્રીશ પાના

મુનિ દીપરત્નસાગર વિશે અન્ય લેખક દ્વારા લખાયેલ મહત્ત્વના 5 આર્ટીકલ્સ

ક્રમ	લેખનું નામ	મેગેઝીન	લેખક
૧	જૈન ધર્મના મોબાઈલ એન્સાઈક્લોપીડિયા–દીપરત્નસાગર	ચિત્રલેખા	શ્રી પાર્થિવ વોરા
૨	પ્રાચીન મુનિઓની ઉજળી પરંપરાનું તેજસ્વી અનુસંધાન	પ્રબુદ્ધજીવન	ડો. બીપીન આશર
૩	જાણ્યું છતાં અજાણ્યું – 'દીપરત્નસાગર મહારાજ	ગુજરાતસમાચાર	ડો. કુમારપાળ દેસાઈ
૪	વિશ્વમાં સૌ પ્રથમ જૈન આગમનો ગુજરાતી અનુવાદ	દિવ્ય ભાસ્કર	પ્રો. વિજય આશર
૫	જૈન જ્ઞાનસાગરના મોંઘેરા રત્ન 'દીપરત્નસાગરજી	સાગરનું ઝવેરાત	આ૦ હર્ષસાગરસૂરિજી

1/1/2021 થી આરંભ થઇ ગયું છે 'આગમનું એક વિરાટ કાર્ય'

" आगम परिभाषा कोष: "

आप कौन से भागमे क्या देखोगे ?

भाग	'आगम-परिभाषा-कोष:'	वर्ण	पृष्ठांक
०१	'आगम परिभाषा कोष:' भाग- १	अ, आ	०,००१ से ०,३३६
०२	'आगम परिभाषा कोष:' भाग- २	उ, ए, ओ,	०,३३७ से ०,०००
०३			
०४			
०५			
०६			
०७			
०८			
०९			

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

बाल ब्रह्मचारी श्री नेमिनाथाय नम:

पूज्य आनन्द-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर-गुरूभ्यो नम:

[१] आगम-परिभाषा-कोष:

आगम शब्दादि परिचय-१ (वर्ण- अ, आ)

'વેબ સાઈટ:– (1) www.jainelibrary.org (2) deepratnasagar.in

ઈમેલ એડ્રેસ:– jainmunideepratnasagar@gmail.com મોબાઈલ 09825967397